U.P. Series

सामाजिक विज्ञान

पाठ्यपुस्तक का सम्पूर्ण हल

कक्षा– 10

PREMIER PUBLISHING HOUSE
New Delhi Muzaffarnagar

सामाजिक विज्ञान-10

अनुभाग– **1:** ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक विरासत

इकाई-1 (क) : आधुनिक विश्व में वैचारिक क्रान्ति

1 पुनर्जागरण

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 13 व 14 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 14 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. पुनर्जागरण से क्या तात्पर्य है? इसके उदय के लिए उत्तरदायी किन्हीं दो कारणों का उल्लेख कीजिए।

उ०– अज्ञानता के गहन अंधकार में सोई मानवता का नींद से जागकर नवीन परिवर्तनों के पथ पर आगे बढ़ना ही पुनर्जागरण कहलाता है। मानव मात्र ने स्वर्ग और नरक की छाया से निकलकर वैज्ञानिक दृष्टिकोण से मानवतावादी परिप्रेक्ष्य में सोचना प्रारंभ कर दिया। इसी विचारधारा ने उसकी सभ्यता को पुनर्जन्म देकर जागृत किया। **एडगर स्वेन** के शब्दों में **''पुनर्जागरण वह बौद्धिक परिवर्तन हैं, जो मध्ययुग से आधुनिक युग के प्रारंभ में दृष्टिगोचर होता है।''**

पुनर्जागरण के दो उत्तरदायी कारण निम्नलिखित हैं–

(i) **धर्म-युद्ध–** धर्म प्रचार और तीर्थ स्थानों को लेकर तुर्कों और ईसाइयों में जो धर्म-युद्ध हुए, उनसे उत्पन्न नवीनतम विचारों ने पुनर्जागरण को जन्म दिया।

(ii) **ईसाई विद्वानों का इटली में प्रवेश–** 1433 ई० में तुर्कों ने जैसे ही 'कुस्तुन्तुनिया' पर अधिकार जमाया, ईसाई विद्वान अपनी विज्ञान की पुस्तकों और प्रतिभा के साथ इटली पहुँच गए। इटली की अनुकूल परिस्थितियों ने पुनर्जागरण को अंकुरित, पल्लवित होने और फलने का अवसर दे दिया।

2. इटली में पुनर्जागरण के उदय के लिए उत्तरदायी तीन कारण स्पष्ट कीजिए।

उ०– इटली में पुनर्जागरण के उदय के लिए उत्तरदायी तीन कारण निम्नलिखित हैं–

(i) **धर्म-युद्ध–** धर्म प्रचार और तीर्थ स्थानों को लेकर तुर्कों और ईसाइयों में जो धर्म-युद्ध हुए, उनसे उत्पन्न नवीनतम विचारों ने पुनर्जागरण को जन्म दिया।

(ii) **ईसाई विद्वानों का इटली में प्रवेश–** 1433 ई० में तुर्कों ने जैसे ही 'कुस्तुन्तुनिया' पर अधिकार जमाया, ईसाई विद्वान अपनी विज्ञान की पुस्तकों और प्रतिभा के साथ इटली पहुँच गए। इटली की अनुकूल परिस्थितियों ने पुनर्जागरण को अंकुरित, पल्लवित होने और फलने का अवसर दे दिया।

(iii) **नवीन आविष्कारों की शृंखला–** वैज्ञानिकों ने नए-नए आविष्कारों की शृंखला प्रस्तुत की और नवीन विचारों का सृजन कर पुनर्जागरण को विकसित होने का पूर्ण अवसर प्रदान किया।

3. पुनर्जागरण के यूरोप के जनजीवन पर पड़ने वाले तीन प्रभाव लिखिए।

उ०– पुनर्जागरण के यूरोप के जनजीवन पर पड़ने वाले तीन प्रभाव निम्नलिखित हैं–

(i) **आर्थिक और व्यापारिक क्षेत्र में प्रगति–** पुनर्जागरण ने वणिकवाद को जन्म देकर तत्कालीन जनमानस को विदेशी व्यापार तथा औद्योगिक विकास के माध्यम से आर्थिक और औद्योगिक क्षेत्र में प्रगति करने का स्वर्णिम अवसर प्रदान कर दिया।

(ii) **सामाजिक कुरीतियों का अंत–** पुनर्जागरण ने सामंतवाद, कुरीतियों, अंधविश्वासों और पाखंडों का अंत करके समाज को इन दोषों से निर्मल बना दिया।

(iii) **धार्मिक क्षेत्र में सुधार–** मार्टिन लूथर किंग ने पोप और गिरजाघर के विरुद्ध 'प्रोटेस्टेंट धर्म सुधार आंदोलन' चलाकर धर्म को आडंबरों और अतार्किक बंधनों से मुक्त कर दिया।

4. छापेखाने का आविष्कार किसने किया? छापे खाने के दो प्रभाव लिखिए।

उ०– जर्मनी निवासी गुटेनबर्ग ने सन् 1465 ई० में छापेखाने का आविष्कार किया। छापेखाने के आविष्कार ने ज्ञान का प्रकाश फैलाकर, पुनर्जागरण का मार्ग प्रशस्त किया।

5. पुनर्जागरण की परिभाषा लिखते हुए उसकी दो विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

उ०– **पुनर्जागरण–** नेहरू जी के अनुसार अज्ञानता के अंधकार को छोड़कर, जैसे ही विद्या का फिर से उदय हुआ– मानव मूल्यों और सभ्यता का पुनर्जन्म हो गया,

पुनर्जागरण की दो विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) सामंतवाद और पुरानी सामाजिक मान्यताओं की समाप्ति।

(ii) धर्म को त्यागकर सामाजिक और वैज्ञानिक विषयों पर अधिक चिंतन।

6. पुनर्जागरणकालीन तीन वैज्ञानिकों के नाम उनके योगदान सहित लिखिए।

उ०– पुनर्जागरणकालीन तीन वैज्ञानिक व उनके योगदान निम्नलिखित हैं–

(i) **गैलीलियो–** इटली के वैज्ञानिक थे, उन्होंने दूरबीन (टेलीस्कोप)का आविष्कार किया था।

(ii) **मार्को पालो–** यह इटली के वैज्ञानिक थे, उन्होंने दिक्सूचक यंत्र का आविष्कार किया।

(iii) **न्यूटन–** न्यूटन इंग्लैंड के वैज्ञानिक थे, उन्होंने गुरूत्वाकर्षण का सिद्धांत प्रतिपादित किया।

7. कला और साहित्य के क्षेत्र में पुनर्जागरणकालीन तीन उपलब्धियाँ लिखिए।

उ०– पुनर्जागरण काल में साहित्यकारों एवं चित्रकारों ने नवीन दृष्टिकोण को लेकर प्रगतिशील और क्रांतिकारी साहित्य की रचना करके पुनर्जागरण में महत्वपूर्ण योगदान दिया। **शेक्सपीयर** की **'मर्चेंट ऑफ वेनिस'** तथा **'जूलियस सीजर' दाँते** की **'डिवाइन कॉमेडी'** चित्रकार **लियोनार्दो-द-विंची** की **'मोनालिसा'** तथा **'द लास्ट सपर'** उपलब्धियाँ हैं।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. पुनर्जागरण से क्या तात्पर्य है? पुनर्जागरण के उदय के लिए उत्तरदायी चार कारणों का वर्णन कीजिए।

उ०– **पुनर्जागरण का अर्थ–** पुनर्जागरण अर्थात् रिनेसाँ, जिसे पुनर्जन्म का पर्यायवाची कहा जाता है, अज्ञानता के अंधकार में डूबी हुई मानवता के ज्ञान-विज्ञान के महासागर में डुबकी लगाने को कहा जाता है। समूचा यूरोप जो आज सभ्यता, प्रगति और विकास के क्षेत्र में अगुआ बना हुआ है, अज्ञानता और अशिक्षा के घने अंधकार में डूबा हुआ था। इतिहास साक्षी है कि 1300 ई० से 1500 ई० के मध्य जो नवीनतम् बौद्धिक क्रांति हुई उसे पुनर्जागरण कहा जाने लगा। "पुनर्जागरण से आशय मानव जाति की उस अविकसित अवस्था से है, जिससे जागृत होकर उसने सभ्यता और प्रगति के पथ पर आगे बढ़ना प्रारंभ कर दिया।" अज्ञानता के गहन अंधकार में सोई मानवता का नींद से जागकर नवीन परिवर्तनों के पथ पर आगे बढ़ना ही पुनर्जागरण था। समूची मानवता धर्म के ठेकेदारों के शोषण और अन्याय से कराह रही थी। ऐसे में बौद्धिक क्रांति का जो चक्र चला उसने मानवता को पुनर्जागरण के विश्व में पहुँचा दिया। मानव मात्र ने स्वर्ग और नरक की छाया से निकलकर वैज्ञानिक दृष्टिकोण से मानवतावादी परिप्रेक्ष्य में सोचना प्रारंभ कर दिया। इसी विचार धारा ने उसकी सभ्यता को पुनर्जन्म देकर जागृत कर दिया। **एडगर स्वेन** के शब्दों में, "पुनर्जागरण वह बौद्धिक परिवर्तन है, जो मध्ययुग से आधुनिक युग के प्रारंभ में दृष्टिगोचर होता है।" रूढ़िवादी और अज्ञानी मानव ने जब अशिक्षा और अंधविश्वासों की रात्रि का त्याग कर क्रांतिकारी परिवर्तनों के प्रभात में प्रवेश किया, बस वही पल मानव सभ्यता के पुनर्जागरण का काल बन गया।

पुनर्जागरण का उदय– पुनर्जागरण अनायास ही नहीं हो गया, उसे जन्म देने और विकसित करने के लिए अनेक कारण उत्तरदायी थे, जो निम्नलिखित हैं–

(i) **धर्म-युद्ध–** धर्म प्रचार और तीर्थ स्थानों को लेकर तुर्कों और ईसाइयों में जो धर्म-युद्ध हुए, उनसे उत्पन्न नवीनतम विचारों ने पुनर्जागरण को जन्म दिया।

(ii) ईसाई विद्वानों का इटली में प्रवेश– 1433 ई० में तुर्कों ने जैसे ही 'कुस्तुन्तुनिया' पर अधिकार जमाया, ईसाई विद्वान अपनी विज्ञान की पुस्तकों और प्रतिभा के साथ इटली पहुँच गए। इटली की अनुकूल परिस्थितियों ने पुनर्जागरण को अंकुरित, पल्लवित होने और फलने का अवसर दे दिया।

(iii) नवीन धार्मिक मान्यताओं का उदय– जब यूरोप के लोग तुर्कों और ईसाइयों के संपर्क में आए तो उन्होंने अपनी सड़ी-गली धार्मिक मान्यताओं को त्यागकर नवीन धार्मिक मान्यताएँ ग्रहणकर पुनर्जागरण के रथ को आगे बढ़ा दिया।

(iv) छापेखाने का आविष्कार– 1465 ई० में जर्मनी निवासी **गुटेनबर्ग** ने छापेखाने का आविष्कार किया और 1476 ई० में इग्लैंड के **विलियम कैक्सटन** का छापाखाना खोलने का पथ प्रशस्त किया। छपी हुई पुस्तकों ने ज्ञान का प्रकाश फैलाकर पुनर्जागरण को आगे बढ़ने का मार्ग दिखा दिया।

(v) भौगोलिक खोज यात्राएँ– यूरोप के साहसी नाविकों ने नए-नए देशों की भौगोलिक खोज यात्राएँ कर वहाँ पुनर्जागरण को पैर जमाने का अवसर दे दिया।

(vi) नवीन आविष्कारों की शृंखला– इस काल में वैज्ञानिकों ने नए-नए आविष्कारों की शृंखला प्रस्तुत की और नवीन विचारों का सृजन कर पुनर्जागरण को विकसित होने का पूर्ण अवसर प्रदान कर दिया।

(vii) साहित्यिक विकास– इस काल में साहित्यकारों ने नवीन दृष्टिकोण को लेकर प्रगतिशील और क्रांतिकारी साहित्य की रचना करके पुनर्जागरण को जन्म देने में बड़ा सहयोग दिया।

(viii) कलाओं का प्रभाव– यह काल ललित कलाओं के चरम विकास का काल था। चित्रकला, मूर्तिकला तथा संगीतकला ने अपने प्रभावों से पुनर्जागरण को जन्म देने में अभूतपूर्व भूमिका निभाई।

(ix) मानवतावाद का बोलबाला– साहित्यकारों और कलाकारों ने मानवतावाद पर अधिक बल दिया। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से मानवतावाद और राष्ट्रवाद का दिग्दर्शन करके पुनर्जागरण को जन्म ही नहीं अपितु, उसे बढ़ावा भी दिया।

2. पुनर्जागरण की परिभाषा लिखते हुए उसकी चार प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

उ०– **पुनर्जागरण की परिभाषाएँ–** पुनर्जागरण को गहराई से समझने के लिए उसकी परिभाषाओं का अनुशीलन करना आवश्यक है। विभिन्न विद्वानों ने पुनर्जागरण को निम्नलिखित रूपों में परिभाषित किया है–

धर्म के ठेकेदारों से मुक्त होने के शांतिपूर्ण प्रयासों का नाम ही पुनर्जागरण है। –डेविड

धर्म को अपनी बपौती मानने वाले पारंपरिक लोगों से मानवता ने शांतिपूर्ण ढंग से जैसे ही मुक्ति पाई और उसने स्वयं को फिर से जागा हुआ पाया; उसे ही डेविड महोदय ने 'पुनर्जागरण' का नाम दिया।

पुनर्जागरण वास्तव में विद्या का पुनर्जन्म था, जिसमें कला, साहित्य और यूरोपीय भाषाओं की उन्नति हुई।

–पं० जवाहर लाल नेहरू

नेहरू जी के अनुसार अज्ञानता के अंधकार को छोड़कर, जैसे ही विद्या का फिर से उदय हुआ– मानव मूल्यों और सभ्यता का पुनर्जन्म हो गया, जिसे इतिहासकारों ने पुनर्जागरण नाम दिया।

पुनर्जागरण का आशय उन सभी महत्वपूर्ण परिवर्तनों से है, जो मध्यकालीन युग के अंत में तथा आधुनिक काल के प्रारंभ से दृष्टिगोचर होते हैं। –शेविल

शेविल के अनुसार पुनर्जागरण नवीन परिवर्तनों, दृष्टिकोणों, शिक्षा तथा विज्ञान के रथ पर सवार होकर मध्यकाल के ऊबड़-खाबड़ मार्ग को पार करता हुआ आधुनिक युग के द्वार में प्रवेश कर पुष्ट बन गया।

पुनर्जागरण ने अचेतन सभ्यता और संस्कृति पर जमी हुई समय की धुंध को हटाकर जब नवचेतना और जीवन का संचार कर मानवता का जयघोष किया– इतिहास में वही पुनर्जागरण का अध्याय बन गया।

पुनर्जागरण की विशेषताएँ– पुनर्जागरण को उसकी निम्नलिखित विशिष्टताओं से पहचाना जा सकता है–

(i) सामंतवाद और पुरानी सामाजिक मान्यताओं की समाप्ति।

(ii) धर्म को त्यागकर सामाजिक और वैज्ञानिक विषयों पर अधिक चिंतन।

(iii) रूढ़ियों और अंधविश्वासों के स्थान पर स्वतंत्र चिंतन को प्राथमिकता।

(iv) लैटिन और यूनानी भाषाओं की अपेक्षा स्थानीय भाषाओं के विकास पर बल।

(v) आलोचनात्मक और गवेषणात्मक प्रवृत्ति का उदय।
(vi) साहित्य, कला और विज्ञान की उन्नति।
(vii) मानवतावाद का जयघोष।
(viii) तार्किक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रचलन।
(ix) स्वर्ग-नरक के स्थान पर इस लोक को सुधारने पर बल।
(x) ईश्वर के स्थान पर मानव को अधिक महत्व।

3. यूरोप के धर्म, समाज और आर्थिक जीवन पर पुनर्जागरण के प्रभावों को स्पष्ट कीजिए।

उ०– **पुनर्जागरण के परिणाम और प्रभाव–** पुनर्जागरण ने तत्कालीन यूरोप के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन को गहराई तक प्रभावित किया। "पुनर्जागरण ने यूरोप में धार्मिक विश्वासों, चिंतन और सामाजिक जीवन-शैली की कायापलट कर दी। इसने धार्मिक संकीर्णता और अंधविश्वासों की बेड़ियों में जकड़े मानव को मध्ययुग से आधुनिक युग में प्रवेश दिला दिया।" पुनर्जागरण के प्रभावों को निम्नवत् स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) आर्थिक और व्यापारिक क्षेत्र में प्रगति– पुनर्जागरण ने वणिकवाद को जन्म देकर तत्कालीन जनमानस को विदेशी व्यापार तथा औद्योगिक विकास के माध्यम से आर्थिक और औद्योगिक क्षेत्र में प्रगति करने का स्वर्णिम अवसर प्रदान कर दिया।

(ii) सामाजिक कुरीतियों का अंत– पुनर्जागरण ने सामंतवाद, कुरीतियों, अंधविश्वासों और पाखंडों का अंत करके समाज को इन दोषों से निर्मल बना दिया।

(iii) धार्मिक क्षेत्र में सुधार– मार्टिन लूथर किंग ने पोप और गिरजाघर के विरुद्ध 'प्रोटेस्टेंट धर्म सुधार आंदोलन' चलाकर धर्म को आडंबरों और अतार्किक बंधनों से मुक्त कर दिया।

(iv) राजनीतिक जीवन में परिवर्तन– पुनर्जागरण ने सामंतवाद और निरंकुश राजतंत्रों को पतन के गर्त में धकेलकर प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था को अपने पैर फैलाने का अवसर दिया।

(v) भाषा और साहित्य का विकास– पुनर्जागरण ने साहित्यकारों और भाषाविदों को नई-नई क्रांतिकारी रचनाएँ सृजित करने का प्रोत्साहन देकर भाषा और साहित्य को चरम सीमा तक विकास करने का अवसर दिया।

(vi) कलाओं का विकास– पुनर्जागरण काल में चित्रकला, मूर्तिकला और स्थापत्यकला का सर्वाधिक विकास हुआ। इस काल की अद्वितीय कलाकृतियों ने ललित कलाओं को विकास के पंख लगाकर उड़ने के लिए विवश कर दिया।

(vii) राष्ट्रवाद का विकास– पुनर्जागरण ने सामंतवाद को समूल नष्ट करके यूरोप में राष्ट्रवाद की जो धारा प्रवाहित की, उसने समूचे जनमानस में राष्ट्रवाद का संचार कर दिया। प्रत्येक राष्ट्र के नागरिक राष्ट्रवादी सत्ता की स्थापना का सपना संजोने लगे।

(viii) नवीन युग का सूत्रपात– पुनर्जागरण ने यूरोप के सभी क्षेत्रों में नवीनता की धारा प्रवाहित करके उसे समूचे विश्व का नेतृत्व सौंप दिया।

4. ''पुनर्जागरण यूरोप के लोगों के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन को गहराई तक प्रभावित किया।'' इस कथन की तर्क देकर, पुष्टि कीजिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

5. पुनर्जागरण का महत्व स्पष्ट कीजिए।

उ०– **पुनर्जागरण का महत्व–** पुनर्जागरण विश्व इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना और बौद्धिक क्रांति के रूप में घटी अद्वितीय प्रगति की एक श्रृंखला है। "पुनर्जागरण के कारण यूरोप के जनजीवन ने प्राचीन परंपराओं, शोषण और अंधविश्वासों के केंचुल को त्यागकर वैज्ञानिक दृष्टिकोण, सुखद जनजीवन और श्रेष्ठ धार्मिक विश्वासों का आवरण धारण किया।" आत्मगौरव और मानवतावाद ने अब मानव को सत्ताधारियों की अनुचित आज्ञाओं की अवहेलना करने का साहस दिया। **शासित** वर्ग तर्क और आलोचना की कसौटी पर कसकर जीवन को आगे बढ़ाने लगा। धार्मिक ग्रंथों ने आस्थाओं को बदल दिया, जबकि दर्शन और इतिहास ने प्रशासनिक व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन ला दिए। प्रोटेस्टेंट नामक नया धर्म रूपी फल पुनर्जागरण रूपी वृक्ष की ही उपज है।

पुर्नजागरण सचमूच वर्तमान युग के आरंभ का प्रधान विषय है। साइयों के अनुसार यह मनुष्यों के मस्तिष्क में परिवर्तन से उत्पन्न हुआ है। अब यह व्यापक रूप से मान्य है कि सामाजिक और आर्थिक मूल्यों ने व्यक्ति की जीवन धारा को मोड़ते हुए इटली जर्मनी में एक नए और शक्तिशाली मध्यवृत्त वर्ग को जन्म दिया और इस प्रकार बौद्धिक जीवन में एक क्रान्ति पैदा की।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

2 धर्म-सुधार आंदोलन– खोजें एवं आविष्कार

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 20 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 21 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. धर्म-सुधार आंदोलन से क्या तात्पर्य है? धर्म-सुधार आंदोलनों के लिए उत्तरदायी दो कारण लिखिए।

उ०– **धर्म-सुधार आंदोलन** सोलहवीं शताब्दी में यूरोप में शासन अशक्त था, धर्म का स्वरूप धुँधला पड़ गया था तथा धर्म और सत्ता दोनों पर पोप और चर्च का अधिकार हो चुका था। "चर्च और पोप के अत्याचारों और अन्यायों के विरुद्ध धर्म-सुधार की जो धारा प्रवाहित हुई, उसे यूरोप में धर्म-सुधार आंदोलन कहा गया।" यूरोप में धर्म और सत्ता पर कुंडली मारकर बैठे पादरियों ने भ्रष्ट तरीकों से धन कमाकर विलासिता और अनैतकिता की राह पकड़ ली। अत: वहाँ का जनसामान्य धर्म की दलदल और राज-सत्ता के पंजों में फँसकर कराह रहा था। ऐसे घोर दु:ख के काल में धर्म सुधारक उन्हें त्राणकर्ता दिखाई पड़े। "यूरोप में धर्म का यही सुधारवादी आंदोलन धर्म-सुधार आंदोलन के नाम से इतिहास के पृष्ठों में अंकित हो गया।"

धर्म-सुधार आंदोलन के लिए उत्तरदायी दो कारण निम्न प्रकार हैं–

(i) चर्च में व्याप्त भ्रष्टाचार (ii) पोप की स्वेच्छाचारिता

2. कोलंबस और वास्कोडिगामा कौन थे? उनके एक-एक कार्य पर प्रकाश डालिए।

उ०– **कोलंबस–** कोलंबस जेनोआ का एक साहसी नाविक था, जिसने उत्तरी अमेरिका की खोज की।

वास्कोडिगामा– वास्कोडिगामा पुर्तगाल का साहसी नागरिक था, जिसने समुद्री मार्ग से सन् 1498 ई में भारत की खोज की।

3. भौगोलिक खोज यात्राओं के लिए उत्तरदायी दो कारण लिखिए।

उ०– भौगोलिक खोज यात्राओं के लिए उत्तरदायी दो कारण निम्नलिखित हैं–

(i) जिज्ञासा– मनुष्य नए स्थानों को जानने तथा उनका परिचय प्राप्त करने की प्राकृतिक जिज्ञासा रखता ह। इसी जिज्ञासा से भौगोलिक खोज-यात्राओं का श्रीगणेश हुआ।

(ii) कुतुबनुमा का आविष्कार– मार्को पोला ने कुतबनुमा दिशासूचक यंत्र का आविष्कार किया। जिसने दिशाओं का ज्ञान कराकर समुद्री यात्राओं को निर्विध बना दिया, अत: नाविक खोज यात्रा पर निकल पड़े।

4. भौगोलिक खोज-यात्राओं के दो प्रभाव लिखिए।

उ०– भौगोलिक खोज-यात्राओं के दो प्रभाव निम्नलिखित हैं-

(i) भौगोलिक खोज-यात्राओं ने अनेक नए-नए देशों और क्षेत्रों को समूचे विश्व से परिचित करा दिया।

(ii) भौगोलिक खोज-यात्राओं के परिणामस्वरूप यूरोप में नवीन सभ्यता और संस्कृति का उदय हुआ।

5. भौगोलिक खोज-यात्राओं ने व्यापार तथा साम्राज्य विस्तार के क्षेत्र में क्या योगदान दिया?

उ०– भौगोलिक खोज-यात्राओं ने व्यापार को कई गुना बढ़ाकर धन कमाने का रास्ता दिखाया तथा यूरोपीय शक्तियों को साम्राज्य बढ़ाने तथा उपनिवेश स्थापित करने का अवसर प्रदान किया।

6. मार्टिन लूथर कौन था? वह क्यों प्रसिद्ध था?

उ०– मार्टिन लूथर जर्मन के भिक्षु, धर्मशास्त्री, विश्वविद्यालय में प्राध्यापक, पादरी एवं चर्च-सुधारक थे। वे पोप और चर्च के विरूद्ध प्रोटेस्ट आंदोलन चलाने के लिए प्रसिद्ध हैं। यह आंदोलन ऐसा धर्म सुधारवादी आंदोलन था, जिसे यूरोप की जनता का भरपूर सहयोग मिला।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. धर्म-सुधार आंदोलन क्या था? इसे चलाने का श्रेय किसे है? इस आंदोलन के लिए उत्तरदायी चार कारण लिखिए।

उ०– धर्म-सुधार आंदोलन सोलहवीं शताब्दी में यूरोप में शासन अशक्त था, धर्म का स्वरूप धुँधला पड़ गया था तथा धर्म और सत्ता दोनों पर पोप और चर्च का अधिकार हो चुका था। "चर्च और पोप के अत्याचारों और अन्यायों के विरुद्ध धर्म-सुधार की जो धारा प्रवाहित हुई, उसे यूरोप में धर्म-सुधार आंदोलन कहा गया।" यूरोप में धर्म और सत्ता पर कुंडली मारकर बैठे पादरियों ने भ्रष्ट तरीकों से धन कमाकर विलासिता और अनैतिकता की राह पकड़ ली। अत: वहाँ का जनसामान्य धर्म की दलदल और राज-सत्ता के पंजों में फँसकर कराह रहा था। ऐसे घोर दु:ख के काल में धर्म सुधारक उन्हें त्राणकर्ता दिखाई पड़े। "यूरोप में धर्म का यही सुधारवादी आंदोलन धर्म-सुधार आंदोलन के नाम से इतिहास के पृष्ठों में अंकित हो गया।"

सोलहवीं शताब्दी में धर्म, दर्शन और आस्था के क्षेत्र में छाई अज्ञानता और अनैतिकता की धुँध को हटाने के लिए जो क्रांतिकारी प्रयास किए गए, उन्हें धर्म-सुधार आंदोलन कहकर संबोधित किया गया। "यह वह संकटकाल था, जब चर्च और पोप के विरुद्ध आवाज उठाने मात्र पर ही व्यक्ति को जीवित जलाकर मार दिया जाता था।" ऐसे ही घने अंधकार के समय जर्मनी के **मार्टिन लूथर** नामक पादरी ने क्रांति की चिंगारी बनकर धर्म-सुधार का झंडा उठाया। उसने डटकर पोप और चर्च के विरुद्ध प्रोटेस्ट (संघर्ष) किया, अत: उसका आंदोलन **प्रोटेस्टेंट आंदोलन** बन गया। यह एक ऐसा धर्म सुधारवादी आंदोलन था, जिसे यूरोप की जनता का भरपूर सहयोग मिला। अत: यूरोप में धर्म के क्षेत्र में व्याप्त अनैतिकता, अन्याय और शोषण की बदली छँट गई और वहाँ प्रोटेस्टेंट नामक नए धर्म का सूरज उदित हुआ। मार्टिन लूथर के जिस महान कार्य ने उसे प्रसिद्ध कर दिया, उस नए धर्म की विधिवत् घोषणा 1530 ई० में की गई। इस प्रकार यूरोप की धर्मप्रिय जनता को कैथोलिक धर्म से मुक्ति मिल गई। धर्म-सुधार आंदोलन पर प्रसिद्ध विचारक **फिशर** ने अपनी लेखनी से इन विचारों को प्रकट किया, "16 वीं शताब्दी की उस धार्मिक क्रांति को धर्म-सुधार आंदोलन कहा जाता है, जिसके फलस्वरूप यूरोप के अनेक देशों ने कैथोलिक चर्च से अपना संबंध समाप्त कर लिया था।" इस आंदोलन ने ईसाइयों में जहाँ नैतिकता का बीजारोपण किया, वहीं पोप की सत्ता और चर्च के अन्यायों पर नियंत्रण लगा दिया। मार्टिन लूथर के बाद फ्रांस के **जॉन काल्विन** ने इस आंदोलन को सक्रियता प्रदान की।

धर्म–सुधार आंदोलन के उदय– धर्म-सुधार आंदोलन का उदय धर्म सुधारकों के अंत:करण की आवाज के साथ हुआ। धर्म के विकृत स्वरूप से उनकी आंदोलन के रूप में प्रवाहित होने लगी। धर्म-सुधार आंदोलन के लिए अग्रलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) **चर्च में व्याप्त भ्रष्टाचार–** चर्च, सत्तासंपन्न बनकर भ्रष्टाचार और अनैतिकता की दलदल में आकंठ डूब गया था, अत: उसके विरोध में धर्म-सुधार आंदोलन का सूत्रपात हुआ।

(ii) **पोप की स्वेच्छाचारिता–** पोप सर्वशक्तिसंपन्न बनकर स्वेच्छाचारी और विलासी बन गया था। उसकी स्वेच्छाचारिता से बचने के लिए धर्म-सुधार का क्रांतिकारी आंदोलन प्रारंभ हो गया।

(iii) **शासकों की लालसाएँ–** चर्च की संपत्तियों का अधिग्रहण करने के लिए शासकों की बढ़ती लालसाओं और महत्वाकांक्षाओं ने धर्म-सुधार आंदोलन की अग्नि में घी का काम किया।

(iv) **पुनर्जागरण का प्रभाव–** पुनर्जागरण के प्रभाव ने लोगों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करके उन्हें धर्म-सुधार के लिए प्रेरित किया।

(v) **सुधरे हुए धर्म की आवश्यकता–** चर्च, पादरियों और शासकों की बढ़ती हुई बुराइयों ने लोगों के समक्ष एक नए एवं सुधरे हुए धर्म की आवश्यकता प्रस्तुत की, जिसका नया अवतार धर्म-सुधार से ही आ सकता था।

(vi) **राष्ट्रीयता का विकास–** यूरोप में राष्ट्रवाद का शंखनाद होते ही राष्ट्रीयता की स्वरलहरी फूट निकली। लोगों ने धर्म-सुधार के आलोक में राष्ट्र को अधिक महत्व देना प्रारंभ कर दिया।

(vii) **प्रगतिशील विचारों का विकास–** पुनर्जागरण ने जनसामान्य को तर्क और प्रगतिशीलता का गुण देकर उनमें प्रगतिशील विचारों का बीजारोपण कर दिया, जिसने उन्हें शुद्ध, सात्विक और निर्मल धर्म स्वीकार करने की प्रेरणा दी।

(viii) **आर्थिक शोषण–** चर्च और पादरियों द्वारा वसूला जाने वाला कर और समस्त धन रोम चला जाता था। संपन्न पादरी करों से मुक्त थे। इस आर्थिक शोषण से मुक्ति पाने की राह, धर्म-सुधार आंदोलन के रूप में प्रकट हुई।

2. धर्म-सुधार आंदोलन के तत्कालीन समाज पर क्या प्रभाव पड़े?

उ०– **धर्म-सुधार आंदोलन के परिणाम (प्रभाव)–** धर्म-सुधार आंदोलन ने यूरोप के समाज, धर्म, राजनीति एवं संस्कृति को गहराई तक प्रभावित किया। उसके प्रभाव निम्नलिखित थे–

(i) **प्रोटेस्टेंट धर्म का उदय–** धर्म-सुधार आंदोलन ने यूरोप के लोगों को प्रोटेस्टेंट धर्म के रूप में एक नया धर्म प्रदान कर दिया।

(ii) **कैथोलिक धर्म में सुधार–** धर्म-सुधार आंदोलन ने कैथोलिक धर्म में आ गई बुराइयों का अंत कर दिया।

(iii) **धार्मिक सहिष्णुता पर बल–** धर्म-सुधार आंदोलनों से ईसाई धर्म का पालन करने वाले देशों की एकता नष्ट हो गई। इससे धार्मिक सहिष्णुता और नैतिक मूल्यों का बोलबाला हो गया।

(iv) **पूँजीवाद का उदय–** उद्योग, व्यापार तथा व्यावसायिक नगरों का विकास होने से यूरोपीय देशों में पूँजीवाद का उदय हो गया।

(v) **चर्च पर राजा का आधिपत्य–** धर्म-सुधार आंदोलन ने चर्च और पादरियों के अधिकारों को सीमित करके चर्च पर राजा के आधिपत्य को स्थापित करने का पथ प्रशस्त कर दिया।

(vi) **आधुनिक युग का शुभारंभ–** धर्म-सुधार आंदोलन के कारण मध्य युग के सूर्य का अवसान होने के साथ ही आधुनिक युग के सूर्य का उदय हो गया और विश्व ने नवीन प्रगतिशील युग में प्रवेश किया।

(vii) **धार्मिक ग्रंथों का अनुवाद–** बाइबिल का कई अन्य भाषाओं में अनुवाद होने के साथ ही अन्य धार्मिक ग्रंथों के अनुवाद का क्रम चल निकला, जिससे धर्म का प्रचार-प्रसार तीव्रता से हुआ।

3. भौगोलिक यात्राएँ क्या थीं? उन्हें करने के पीछे उत्तरदायी चार कारण लिखिए।

उ०– **भौगोलिक खोज-यात्राएँ–** पुनर्जागरण ने नए-नए वैज्ञानिक आविष्कार देकर उद्योग और व्यवसायों को फूलने-फलने का मौका दिया, अत: पूँजीपतियों, शासकों और धर्म प्रचारकों में यश और सोना कमाने की होड़ लग गई। निर्धन और निर्बल देश, धर्म प्रचार के साथ-साथ यश और सोना कमाने के लिए अनुकूल सिद्ध हो सकते थे। अत: साहसी नाविकों ने शासकों से आर्थिक सहयोग लेकर अपने-अपने दल-बल के साथ नए क्षेत्रों की भौगोलिक खोज करने के लिए लंबी-लंबी यात्राएँ करनी प्रारंभ कर दीं। "इतिहास में नवजागरण काल भौगोलिक खोज-यात्राओं के काल के नाम से प्रसिद्ध है।" इस काल में पुर्तगाल, स्पेन, इंग्लैंड, फ्रांस तथा जर्मनी देशों के नाविकों ने अपनी साहसपूर्ण भौगोलिक खोज-यात्राओं से अनजाने समुद्री मार्ग खोजकर नए-नए देशों से संसार को परिचित कराया।

भौगोलिक खोज-यात्राओं के कारण– भौगोलिक खोज-यात्राओं के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) **कुतुबनमा का आविष्कार–** मार्को पोलो ने कुतुबनुमा यंत्र के माध्यम से दिशाओं का ज्ञान कराकर समुद्री यात्राओं को निर्विध बना दिया, अत: नाविक खोज यात्राओं पर निकल पड़े।

(ii) **मार्को पोलो की यात्रा–** मार्को पोलो ने वेनिस से चीन तक की यात्रा करके अपने लेखों से नाविकों के हृदयों में नई भौगोलिक खोज-यात्राएँ करने की महत्वाकांक्षाएँ जगा दीं।

(iii) **पृथ्वी के गोल होने का प्रमाण–** भूगोलविदों ने पृथ्वी के गोल होने का प्रमाण देकर साहसी नाविकों के हृदयों से अज्ञात भय को भगा दिया। अब वे लंबी समुद्री यात्राओं पर निकल पड़े।

(iv) **जिज्ञासा–** मनुष्य नए स्थानों को जानने तथा उनका परिचय प्राप्त करने की प्राकृतिक जिज्ञासा रखता है। इसी जिज्ञासा ने भौगोलिक खोज-यात्राओं का श्रीगणेश किया।

(v) **धन कमाने की लालसा–** यूरोपीय व्यापारी विदेशों में जाकर धन कमाना चाहते थे, अत: उन्होंने नाविकों को खोत्र-यात्राओं के लिए आर्थिक मदद देकर प्रेरित किया।

4. भौगोलिक खोज-यात्राओं के विश्व पर पड़ने वाले छ: प्रभावों को स्पष्ट कीजिए।

उ०– **भौगोलिक खोज-यात्राओं के परिणाम–** भौगोलिक खोज-यात्राओं ने समुद्री मार्गों का पता देकर अपरिचित स्थानों की सभ्यता और संस्कृति से समूचे विश्व को परिचित कराया। इस कार्य में कुतुबनुमा और दूरबीन नामक यंत्रों ने बड़ी सहायता की। **कैपलर** और **कॉपरनिकस** ने ग्रहों और पृथ्वी के संबंध में अपने सिद्धांत प्रस्तुत कर नाविकों का मार्गदर्शन किया। भौगोलिक खोज-यात्राओं के उल्लेखनीय परिणाम निम्नलिखित थे–

(i) भौगोलिक खोज-यात्राओं ने अनेक नए-नए देशों और क्षेत्रों को समूचे विश्व से परिचित करा दिया।

(ii) भौगोलिक खोज-यात्राओं के परिणामस्वरूप यूरोप में नवीन सभ्यता और संस्कृति का उदय हो गया।

(iii) भौगोलिक खोज-यात्राएँ धर्म प्रचार करने तथा सोना और यश कमाने का साधन बनकर उदित हुईं।

(iv) भौगोलिक खोज-यात्राओं ने यूरोपीय शक्तियों को साम्राज्य बढ़ाने तथा उपनिवेश स्थापित करने का स्वर्णिम अवसर प्रदान किया।

(v) भौगोलिक खोज-यात्राओं ने नाविकों के लिए पूरे विश्व के समुद्री मार्ग सुलभ करा दिए।

(vi) भौगोलिक खोज-यात्राओं ने व्यापार को कई गुना बढ़ाकर धन कमाने का रास्ता दिखा दिया।

(vii) भौगोलिक खोज-यात्राओं ने भारत को महासागरीय मार्ग द्वारा सीधा यूरोप से जोड़ दिया।

(viii) भौगोलिक खोज-यात्राओं ने लोगों को इस सत्य से भी परिचित कराया कि महासागर, जो महाद्वीपों को पृथक करते हैं, यात्राओं द्वारा उन्हें जोड़ भी देते हैं।

भौगोलिक खोज-यात्राओं ने समूचे विश्व को परस्पर जोड़ने, औद्योगिक और व्यापारिक विकास करने तथा सभ्यता और संस्कृति को समूचे विश्व में अपने पंख फैलाकर विचरण करने का स्वर्णिम अवसर प्रदान कर दिया। धर्म-सुधार आंदोलनों और भौगोलिक खोज-यात्राओं ने एक नए आध्यात्मिक एवं आर्थिक युग का सूत्रपात कर दिया।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

3 औद्योगिक क्रांति एवं उसका प्रभाव

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 26 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 26 व 27 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. औद्योगिक क्रांति क्या है? उसके लिए उत्तरदायी दो कारण क्या हैं?

उ०– **औद्योगिक क्रांति का परिचय–** विकास और प्रगति का चक्र सदैव गतिमान बना रहता है। आदिमानव ने जैसे ही आधुनिक युग में प्रवेश किया, वह कृषक के साथ-साथ उद्यमी भी बन गया। प्रारंभ में कुटीर शिल्प खोजे गए; परंतु जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ वस्तुओं की माँग बढ़ी और शिल्पी धीरे-धीरे उद्यमी बन गए। श्रम, पूँजी और मशीनों ने हाथ से किए जाने वाले उत्पादन को यंत्रीकरण के साथ जोड़ दिया। उत्पादन का यही व्यावसायिक यंत्रीकरण औद्योगिक क्रांति के रूप में अवतरित हुआ। उत्पादन की तकनीक, प्रविधियों और संगठन में जो आमूलचूल परिवर्तन उत्पन्न हुए, वे सब औद्योगिक क्रांति के प्रतिफल थे। दूसरे शब्दों में, "औद्योगिक क्षेत्र में जो तकनीकी और तीव्र परिवर्तन हुए उन्हें औद्योगिक क्रांति के रूप में पहचाना गया।" औद्योगिक क्रांति ने उद्योग और औद्योगिक व्यवस्था को क्रांतिकारी रूप में परिवर्तित कर डाला। उद्योगों से अधिक से अधिक धन कमाने की प्रवृत्ति ने औद्योगिक क्रांति के चक्र को और भी तीव्रतर कर दिया। वैज्ञानिक आविष्कारों ने मशीनों को, मशीनों ने उत्पादन की नवीनतम प्रविधियों को और नवीनतम प्रविधियों ने औद्योगिक उत्पादन को व्यावसायिक बना दिया। मशीनें आईं, पूँजी आई, पूँजीपति व श्रमिक आए और इन सबके परिणामस्वरूप आया पूँजीवाद। औद्योगिक क्रांति वास्तव में ऐसी शिल्पक्रांति थी, जिसने औद्योगीकरण के विशाल भवन का निर्माण कर डाला। लोहे ने मशीनों को और मशीनों ने औद्योगिक क्रांति को जन्म दिया। मशीनों ने उत्पादन प्रक्रिया में आश्चर्यजनक व आमूलचूल परिवर्तन करके औद्योगिक क्रांति को विकसित कर डाला। औद्योगिक क्रांति ने पूँजीपतियों को उत्पादन की प्राचीन दोषपूर्ण पद्धति का त्याग करने तथा मशीनों और नवीनतम तकनीक से अधिक उत्पादन कर अधिक लाभ कमाने के पथ पर अग्रसर कर दिया।

2. औद्योगिक क्रांति इंग्लैंड में ही क्यों हुई? कोई तीन कारण बताइए।

उ०– **औद्योगिक क्रांति और इंग्लैंड–** औद्योगिक क्रांति की फसल उपजाने के लिए इंग्लैंड की भूमि तथा परिवेश बहुत सहायक

सिद्ध हुए। इस देश की अनुकूल परिस्थितियों में औद्योगिक क्रांति की फसलें शीघ्र ही लहलहा उठीं। इंग्लैंड में सर्वप्रथम औद्योगिक क्रांति का उदय निम्नलिखित कारणों से हुआ–

(i) इंग्लैंड को अपने उपनिवेशों से सरलता से कच्चा माल मिलने लगा और माल वहाँ के बाजारों में खपने लगा।

(ii) इंग्लैंड में नई-नई मशीनों का आविष्कार सबसे पहले होने के कारण इसी धरती पर औद्योगीकरण ने सबसे पहले अपने नेत्र खोले।

(iii) इंग्लैंड में कोयले व लोहे के अपार भण्डार थे।

3. औद्योगिक क्रांति की परिभाषा लिखते हुए उसकी दो विशेषताएँ लिखिए।

उ०– **औद्योगिक क्रांति की परिभाषाएँ–** औद्योगिक क्रांति का वास्तविक अर्थ एवं स्वरूप उसकी परिभाषाओं के माध्यम से जान सकते हैं। विभिन्न विद्वानों ने औद्योगिक क्रांति की परिभाषाएँ निम्नलिखित ढंग से प्रस्तुत की हैं–

"औद्योगिक क्रांति मूलत: वह प्रक्रिया थी, जिसके द्वारा दस्तकारी के स्थान पर मशीनों का प्रयोग प्रारंभ हुआ।

–जोसेफ रीथर

"औद्योगिक पद्धति तथा काम करने वाले व्यक्तियों की स्थिति में होने वाले महान परिवर्तनों को औद्योगिक क्रांति कहा जाता है।" **–एडवर्ड**

"औद्योगिक क्रांति औद्योगिक प्रणाली में परिवर्तन थी, जिसमें हस्तशिल्प के स्थान पर शक्तिचालित यंत्रों से काम लिया जाने लगा।" **–आर्नोल्ड टॉयनबी**

"हस्तशिल्प को मशीनों, यंत्रों तथा तकनीकी द्वारा स्थानापन्न कर औद्योगिक संगठन को बदलने की संपूर्ण प्रक्रिया को औद्योगिक क्रांति कहा जाता है।" **–अज्ञात**

औद्योगिक क्रांति ने मानवीय श्रम को भुलाकर मशीनी श्रम को महत्व देना प्रारंभ कर दिया, जिससे उत्पादन के समस्त साधन पूँजीपतियों के अधिकार में पहुँच गए।

औद्योगिक क्रांति की दो विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) कुटीर उद्योगों एवं हस्तशिल्पों का विनाश।

(ii) मशीनों, चालक शक्ति तथा यंत्रों का महत्व।

4. औद्योगिक क्रांति ने किस प्रकार उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद को जन्म दिया।

उ०– औद्योगिक क्रांति के बाद इंग्लैंड विश्व का प्रथम देश था जिसने कच्चे माल की प्राप्ति तथा अपने उत्पादन की बिक्री के लिए विश्व की मंडियों पर अधिकार कर धीरे-धीरे अनेक देशों में अपने उपनिवेश स्थापित कर लिए। बाद में 19वीं शताब्दी में फ्रांस, जर्मनी, अमेरिका तथा जापान का भी संसार की औद्योगिक शक्तियों के रूप में उत्थान हुआ। इन देशों ने भी इंग्लैंड की भांति विश्व के अन्य देशों में अपने उपनिवेश स्थापित करना शुरू कर दिया। औद्योगिक क्रांति के कारण पूँजीवाद का विकास हुआ। पूँजीवाद के अंतर्गत अमीर ओर गरीब की खाई चौड़ी होती गई और मिल-मालिकों द्वारा श्रमिकों के शोषण में वृद्धि होती गई। इससे श्रमिकों में असंतोष बढ़ता गया जिसके फलस्वरूप साम्राज्यवाद का जन्म हुआ।

5. औद्योगिक क्रांति से होने वाले तीन प्रमुख लाभों का वर्णन कीजिए।

उ०– औद्योगिक क्रांति से होने वाले तीन प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं–

(i) मशीनों ने असंभव कार्यों को संभव बना दिया।

(ii) मशीनों के प्रयोग से अपरिचित धन, श्रम और समय की बचत होने लगी।

(iii) औद्योगिक क्रांति ने वैज्ञानिक अनुसंधानों को बढ़ावा देकर नए-नए आविष्कार करने की परंपरा स्थापित की।

6. औद्योगिक क्रांति के तीन प्रमुख प्रभावों को स्पष्ट कीजिए।

उ०– औद्योगिक क्रांति के तीन प्रमुख प्रभाव निम्नलिखित हैं–

(i) कारखानों में उत्पादन बड़े पैमाने पर आरंभ हो गया।

(ii) समाज पूँजीपति वर्ग एवं श्रमिक वर्ग के रूप में विभक्त हो गया।

(iii) पूँजीपति राजनीति के माध्यम से अपने स्वार्थ पूरा करने लगे।

7. औद्योगिक क्रांति के प्रसार पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

उ०– इंग्लैंड से शुरू हुई औद्योगिक क्रांति यूरोपीय देशों से होते हुए फ्रांस, इटली तथा जर्मनी देशों तक पहुँच गई। नेपोलियन बोनापार्ट और राजा फिलिप के प्रयासों से औद्योगिक क्रांति खूब फलीभूत हुई। बिस्मार्क ने जर्मनी का एकीकरण कर यहाँ औद्योगिक क्रांति खूब फलीभूत हुई। बिस्मार्क ने जर्मनी का एकीकरण कर यहाँ विकास की नींव रखी। जर्मनी के वैज्ञानिकों ने छापेखाने तथा नई-नई मशीनों का आविष्कार करके औद्योगिक क्रांति के विकास के पंख लगा दिए। इटली के पूँजीपतियों ने औद्योगिक क्रांति में सक्रिय सहयोग देकर अपने देश में औद्योगिक विकास की धारा प्रवाहित की। यूरोप के बाद औद्योगिक क्रांति का प्रसार अमेरिका में हुआ। यहाँ के पूँजीपतियों ने उद्योंगो की स्थापना कर औद्योगिक क्रांति का स्वागत किया। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के गठन के बाद इस देश ने औद्योगिकरण की सीमाओं को लांघकर विश्व का सबसे बड़ा औद्योगिक राष्ट्र और आर्थिक शक्ति बन गया। यूरोपीय देशों के आर्थिक विकास से प्रभावित होकर रूस के जार अलेक्जेंडर ने अपने देश में औद्योगिक विकास का निर्णय लिया। सन् 1917 में रूस की क्रांति के बाद देश में औद्योगिक क्रांति को लागू किया गया। धीरे-धीरे रूस साम्यवादी गुट का नेता और सबसे संपन्न राष्ट्र के रूप में विकसित हो गया।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. औद्योगिक क्रांति का अर्थ और परिभाषा लिखते हुए इसकी तीन विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

उ०– भौगोलिक खोज-यात्राओं के दो प्रभाव निम्नलिखित हैं–

औद्योगिक क्रांति का परिचय– विकास और प्रगति का चक्र सदैव गतिमान बना रहता है। आदिमानव ने जैसे ही आधुनिक युग में प्रवेश किया, वह कृषक के साथ-साथ उद्यमी भी बन गया। प्रारंभ में कुटीर शिल्प खोजे गए; परंतु जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ वस्तुओं की माँग बढ़ी और शिल्पी धीरे-धीरे उद्यमी बन गए। श्रम, पूँजी और मशीनों ने हाथ से किए जाने वाले उत्पादन को यंत्रीकरण के साथ जोड़ दिया। उत्पादन का यही व्यावसायिक यंत्रीकरण औद्योगिक क्रांति के रूप में अवतरित हुआ। उत्पादन की तकनीक, प्रविधियों और संगठन में जो आमूलचूल परिवर्तन उत्पन्न हुए, वे सब औद्योगिक क्रांति के प्रतिफल थे। दूसरे शब्दों में, "औद्योगिक क्षेत्र में जो तकनीकी और तीव्र परिवर्तन हुए उन्हें औद्योगिक क्रांति के रूप में पहचाना गया।'' औद्योगिक क्रांति ने उद्योग और औद्योगिक व्यवस्था को क्रांतिकारी रूप में परिवर्तित कर डाला। उद्योगों से अधिक से अधिक धन कमाने की प्रवृत्ति ने औद्योगिक क्रांति के चक्र को और भी तीव्रतर कर दिया। वैज्ञानिक आविष्कारों ने मशीनों को, मशीनों ने उत्पादन की नवीनतम प्रविधियों को और नवीनतम प्रविधियों ने औद्योगिक उत्पादन को व्यावसायिक बना दिया। मशीनें आईं, पूँजी आई, पूँजीपति व श्रमिक आए और इन सबके परिणामस्वरूप आया पूँजीवाद। औद्योगिक क्रांति वास्तव में ऐसी शिल्पक्रांति थी, जिसने औद्योगीकरण के विशाल भवन का निर्माण कर डाला। लोहे ने मशीनों को और मशीनों ने औद्योगिक क्रांति को जन्म दिया। मशीनों ने उत्पादन प्रक्रिया में आश्चर्यजनक व आमूलचूल परिवर्तन करके औद्योगिक क्रांति को विकसित कर डाला। औद्योगिक क्रांति ने पूँजीपतियों के उत्पादन की प्राचीन दोषपूर्ण पद्धति का त्याग करने तथा मशीनों और नवीनतम तकनीक से अधिक उत्पादन कर अधिक लाभ कमाने के पथ पर अग्रसर कर दिया।

औद्योगिक क्रांति की परिभाषाएँ– औद्योगिक क्रांति का वास्तविक अर्थ एवं स्वरूप उसकी परिभाषाओं के माध्यम से जान सकते हैं। विभिन्न विद्वानों ने औद्योगिक क्रांति की परिभाषाएँ निम्नलिखित ढंग से प्रस्तुत की हैं–

"औद्योगिक क्रांति मूलत: वह प्रक्रिया थी, जिसके द्वारा दस्तकारी के स्थान पर मशीनों का प्रयोग प्रारंभ हुआ।"

–जोसेफ रीथर

"औद्योगिक पद्धति तथा काम करने वाले व्यक्तियों की स्थिति में होने वाले महान परिवर्तनों को औद्योगिक क्रांति कहा जाता है।" **–एडवर्ड**

"औद्योगिक क्रांति औद्योगिक प्रणाली में परिवर्तन थी, जिसमें हस्तशिल्प के स्थान पर शक्तिचालित यंत्रों से काम लिया जाने लगा।" **–आर्नोल्ड टॉयनबी**

"हस्तशिल्प को मशीनों, यंत्रों तथा तकनीकी द्वारा स्थानापन्न कर औद्योगिक संगठन को बदलने की संपूर्ण प्रक्रिया को औद्योगिक क्रांति कहा जाता है।" **–अज्ञात**

औद्योगिक क्रांति की विशेषताएँ– औद्योगिक क्रांति की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) कुटीर उद्योगों एवं हस्तशिल्पों का विनाश।

(ii) मशीनों, चालक शक्ति तथा यंत्रों का महत्व।

(iii) पुरानी उत्पादन विधियों को छोड़कर नवीनतम प्रविधियों का प्रचलन।

(iv) कारखानों में कच्चे माल, श्रम एवं पूँजी का महत्व बढ़ जाना।

(v) औद्योगिक उत्पादन का पैमाना बढ़ जाना।

(vi) उत्पादन का लक्ष्य अधिक लाभ कमाना बन जाना।

(vii) समाज में पूँजीपति एवं श्रमिक वर्ग उत्पन्न हो जाना।

(viii) शोषण, अन्याय तथा संघर्ष का वातावरण बन जाना।

2. औद्योगिक क्रांति को जन्म देने वाले 6 कारण स्पष्ट कीजिए।

उ०– **औद्योगिक क्रांति को जन्म देने वाले कारण–** इंग्लैंड को औद्योगिक क्रांति का जनक कहा जाता है। यहीं से औद्योगिक क्रांति यूरोप तथा विश्व के अन्य देशों में फैली। औद्योगिक क्रांति को जन्म देने वाले प्रमुख कारण निम्नलिखित थे–

(i) भौगोलिक खोज-यात्राएँ– भौगोलिक खोज-यात्राओं ने कच्चे माल तथा सस्ते श्रम की उपलब्धता को बढ़ावा देकर और माल बेचकर धन कमाने का आकर्षण बढ़ाकर औद्योगिक क्रांति को जन्म दिया।

(ii) लोहा और कोयला उपलब्ध होना– लोहा, मशीनों और यंत्रों के निर्माण का आधार बना, जबकि कोयले ने ऊर्जा के रूप में उन्हें चलाकर औद्योगिक क्रांति को जन्म दिया।

(iii) वैज्ञानिक आविष्कारों की शृंखला– औद्योगिक क्रांति और वैज्ञानिक आविष्कारों का गंगा-जमुनी संगम था। नए-नए आविष्कारों ने औद्योगीकरण तथा व्यावसायिक उत्पादन में योगदान देकर औद्योगिक क्रांति को जन्म ही नहीं दिया, वरन् उसे आगे भी बढ़ाया।

(iv) पूँजी की सुलभता– पूँजी औद्योगीकरण का आधार है। पूँजीपतियों ने अधिक लाभ कमाने के आकर्षण में पर्याप्त पूँजी का निवेश कर औद्योगिक क्रांति को जन्म देकर उसकी प्रगति के स्वर्णिम अवसर जुटा दिए।

(v) परिवहन के साधनों का विकास– परिवहन तंत्र के फैलते जाल ने उद्योगों की स्थापना में सहयोग देकर, औद्योगिक क्रांति को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

(vi) उपनिवेशों की स्थापना– यूरोप की विस्तारवादी शक्तियों ने एशिया तथा अफ्रीका के निर्धन तथा पिछड़े देशों में उपनिवेश स्थापित करके कच्चे माल, श्रम तथा संसाधन ही नहीं जुटाए, वरन् अपने उत्पाद बेचकर खूब धन कमाया, जिससे औद्योगिक क्रांति की गति और भी तेज होती चली गई।

(vii) यश और धन कमाने की लालसा– यूरोपीय शक्तियाँ उपनिवेशों में अपना धर्म फैलाकर यश तथा तैयार माल बेचकर, धन कमाने में जुट गईं। उनकी इस महत्वाकांक्षा ने औद्योगिक क्रांति को सफल बना दिया।

(viii) कृषि-क्रांति– यूरोपीय देशों के किसानों ने कृषि का यंत्रीकरण करके कृषि-क्रांति को जन्म दिया। कृषि के क्षेत्र में बढ़ती मशीनों की माँग ने औद्योगिक क्रांति को जन्म दिया।

3. औद्योगिक क्रांति के समय हुए तीन आविष्कारों का परिचय दीजिए।

उ०– **औद्योगिक क्रांति के आविष्कारों का परिचय–** औद्योगिक क्रांति वैज्ञानिक आविष्कारों के विकास का स्वर्णिम काल थी। इस काल में जिन वैज्ञानिक आविष्कारों की शृंखला आई, उनकी झलक निम्नलिखित है–

(i) फ्लाइंग शटल– फ्लाइंग शटल नामक मशीन ने वस्त्र उद्योग में एक क्रांति ला दी। 1733 ई० में **जॉन के** नामक अंग्रेज ने फ्लाइंग शटल के रूप में ऐसी मशीन का आविष्कार किया, जो कम समय और परिश्रम में पहले से चार गुना वस्त्र बुन सकती थी। फ्लाइंग शटल बुनकरों के लिए वरदान सिद्ध हुई।

(ii) स्पिनिंग जैनी– स्पिनिंग जैनी कपास से सूत कातने वाली मशीन थी, जिसका निर्माण 1765-66 ई० में **जेम्स हरग्रीव्ज** नामक वैज्ञानिक ने किया था। आठ तकुओं से युक्त स्पिनिंग जैनी एक बार में आठ व्यक्तियों के बराबर सूत कात सकती थी।

(iii) वाटर फ्रेम– स्पिनिंग जैनी द्वारा काता हुआ सूत कच्चा होने के कारण कपड़ा बुनने में बाधा डालता था। अत: **रिचर्ड आर्कराइट** ने 1769 ई० में इस कठिनाई का निवारण करने हेतु वाटर फ्रेम नामक मशीन का आविष्कार किया। यह मशीन पक्का धागा बुनने में सक्षम थी। यह मशीन पानी की शक्ति से संचालित की जाती थी। अत: इसे वाटर फ्रेम नाम दिया गया।

4. यूरोप के सामाजिक तथा आर्थिक जीवन पर औद्योगिक क्रांति के प्रभावों को स्पष्ट कीजिए।

उ०– भौगोलिक खोज-यात्राओं के दो प्रभाव निम्नलिखित हैं–

औद्योगिक क्रांति ने यूरोप के विभिन्न देशों के समूचे जीवन को ही पाविर्तित कर डाला। इस क्रांति के अच्छे व बुरे दोनों प्रकार के प्रभाव पड़े। इसके प्रभावों का संक्षिप्त विवरण नीचे प्रस्तुत है–

(i) नगरों का विकास– औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप नए-नए नगरों की स्थापना हुई तथा पुराने नगरों का विकास हुआ। बड़े-बड़े उद्योगों की स्थापना के कारण नगरों में जनसंख्या तेजी से बढ़ती गई जिससे वहाँ अनके समस्याएँ उत्पन्न हो गईं। नगरों में एक ओर तो दैनिक जनजीवन में हलचलें बढ़ गईं जबकि दूसरी ओर जन-सुविधाओं का अभाव हो गया। शहरों में प्रदूषण बढ़ने लगा।

(ii) नए वर्गों का उदय तथा परस्पर संघर्ष– औद्योगिक क्रांति के कारण समाज पूँजीपति और श्रमिक इन दो वर्गों में बट गया। पूँजीपति श्रमिकों से अधिक काम लेकर किन्तु उन्हें कम मजदूरी देकर उनका शोषण करते थे। फलस्वरूप दोनों वर्गों में संघर्ष प्रारंभ हो गया। इस वर्ग-संघर्ष के कारण हड़ताल तथा तालाबंदी की घटनाएँ होने लगीं।

(iii) श्रमिकों की दयनीय दशा– औद्योगिक पूँजीवाद के साथ श्रमिकों का शोषण प्रारंभ हो गया। मजदूरों को कम मजदूरी पर अस्वस्थ वातावरण में 18 घंटे तक काम करना पड़ता था। मजदूरों के जीवन तथा जीविका की सुरक्षा का कोई प्रबंध नहीं था। उनके बीमार अथवा दुर्घटनाग्रस्त होने पर मालिक उन्हें काम से हटा देते थे।

(iv) स्त्रियों और बच्चों का शोषण– अधिकाधिक लाभ कमाने के लालच में मालिकों ने स्त्रियों और बच्चों को भी काम पर लगा लिया। किन्तु पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों और बच्चों को कम मजदूरी दी जाती थी। बच्चों के नींद के झोंकें में मशीन में फंसकर कट जाने की घटनाएँ होती रहतीं थीं। चिमनी साफ करने के लिए बच्चों का ब्रुश की भांति प्रयोग किया जाता था। बाद में कुछ सरकारों ने स्त्रियों और बच्चों से कारखानों में काम लेने पर रोक लगा दी।

(v) गन्दी बस्तियों में वृद्धि– औद्योगिक नगरों में कारखानों के पास योजनारहित श्रम बस्तियों का निर्माण होता गया। ऐसी बस्तियों में बेढंगे मकान बनते गए जिनमें जल-निकास तथा सफाई की कोई उचित व्यवस्था नहीं थी। फलस्वरूप ये बस्तियाँ बीमारी और गंदगी के केन्द्र बन गईं।

(iv) नैतिक मूल्यों का पतन– गाँवों से आने वाले श्रमिकों को नगरों में एकाकी जीवन बिताने के लिए बाध्य होना पड़ा जिससे पारिवारिक विघटन प्रारंभ हो गया। फिर मजदूर मनोरंजन तथा विनोद के अभाव में मदिरा, जुआ तथा अश्लील साहित्य के शिकार हो गए।

आर्थिक प्रभाव– औद्योगिक क्रांति के आर्थिक जीवन पर निम्न प्रमुख प्रभाव पड़े–

(i) उत्पादन में वृद्धि– औद्योगिक क्रांति के कारण बड़े-बड़े कारखानों की स्थापना हुई जिनमें भारी मशीनों द्वारा कम लागत पर विभिन्न वस्तुओं का विशाल स्तर पर उत्पादन किया गया।

(ii) पूँजीवाद का विकास– उत्पादन में निरन्तर वृद्धि के कारण उद्योगपतियों के लाभ बढ़ते गए। उनके पास विशाल मात्रा में पूँजी इकठ्ठी होती गई जिससे ये नए-नए कारखाने खोलते गए। फलस्वरूप पूँजीवाद का विकास तथा विस्तार होता गया।

(iii) उपनिवेशवाद का जन्म– औद्योगिक क्रांति के बाद इंग्लैण्ड विश्व का प्रथम देश था जिसने कच्चे माल की प्राप्ति तथा अपने अतिरिक्त उत्पादन की बिक्री के लिए विश्व की मण्डियों (राष्ट्रों) पर अपना अधिकार कर लिया। धीरे-धीरे इंग्लैण्ड ने अनेक देशों में अपने उपनिवेश स्थापित कर लिए। बाद में 19वीं शताब्दी में फ्रांस, जर्मनी, अमेरिका तथा जापान का भी संसार की औद्योगिक शक्तियों के रूप में उत्थान हुआ। इन देशों ने भी इंग्लैण्ड की भाँति विश्व के विभिन्न भागों में अपने माल के लिए मण्डियों की तलाश शुरू कर दी। इसके परिणामस्वरूप विश्व के प्रमुख औद्योगिक देशों में सुदूर के महाद्वीपों में अपने उपनिवेश स्थापित करने के लिए संघर्ष चल पड़ा।

(iv) जीवन-स्तर में वृद्धि– एक ओर उत्पादन में वृद्धि से समाज में आजीविका के नए स्रोत खुल गए जिससे श्रमिकों की आय में वृद्धि हुई। दूसरी ओर श्रमिकों को उपभोग के लिए नाना प्रकार की वस्तुएँ मिलने लगीं। फलत: श्रमिकों के जीवन स्तर में सुधार होता गया।

(v) कृषि का विकास– औद्योगिक क्रांति के कारण कृषि-यन्त्रों, कृषि की तकनीक तथा विधियों में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए जिससे कृषि-उत्पादन में कई गुना वृद्धि हुई। फलस्वरूप कृषकों की दशा में सुधार हुआ।

(vi) परिवहन के साधनों का विकास– औद्योगिक क्रांति के कारण रेल, सड़क तथा जल परिवहन के साधनों का बहुत अधिक विकास हुआ। फलस्वरूप उद्योग, वाणिज्य तथा व्यापार का बहुत अधिक विकास तथा विस्तार हुआ।

(vii) कुटीर व लघु उद्योगों का विनाश– बडे-बड़े उद्योगों की स्थापना के कारण कुटीर व लघु उद्योगों का महत्व घटता गया जिस कारण इनका पतन हो गया।

(viii) **आय का असमान वितरण–** औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप पूँजी थोड़े व्यक्तियों के हाथ में संचित होने लगी क्योंकि कारखानों के लाभ से मिल-मालिक और अधिक धनी होते गए। विशाल धन अर्जित करने के कारण उनका जीवन विलासितापूर्ण होता गया। दूसरी ओर असंख्य मजदूर थे जो कम मजदूरी मिलने के कारण गरीबी का जीवन व्यतीत कर रहे थे।

(ix) **समाजवाद का उदय–** संपूर्ण विश्व में समाजवादी विचारधारा का उदय औद्योगिक क्रांति के कारण ही हुआ। इस क्रांति ने पूँजीवाद का विकास किया। पूँजीवाद ने समाज को दो वर्गों में बाँट दिया- धनी पूँजीपति तथा निर्धन श्रमिक। मिल-मालिकों द्वारा शोषण के कारण श्रमिकों में असंतोष फैलता गया। श्रमिकों में यह भावना बलवती हो गई कि उनके जीवन में आमूल परिवर्तन के लिए समाजवादी व्यवस्था आवश्यक है।

5. औद्योगिक क्रांति के विश्व को होने वाले 6 लाभों का वर्णन कीजिए।

उ०– औद्योगिक क्रांति यूरोप में प्रारंभ हुई थी किन्तु इसने विश्व के सभी देशों को प्रभावित किया। इस क्रांति से संपूर्ण विश्व को निम्न लाभ प्राप्त हुए–

(i) **औद्योगीकरण तथा नगरीकरण–** औद्योगीकरण क्रांति के कारण कुछ राष्ट्रों का तीव्रता से औद्योगीकरण हुआ जिससे वहाँ नए-नए नगर बसाए गए तथा पुराने नगरों का विकास तथा विस्तार हुआ।

(ii) **उत्पादन-क्षमता में वृद्धि–** नई-नई मशीनों का आविष्कार हुआ जिससे वस्तुओं का कम लागत पर अधिक मात्रा में उत्पादन होने लगा। इससे अनेक उद्योगों की उत्पादन-क्षमता कई गुना गढ़ गई।

(iii) **नवीन उत्पादन-प्रणालियों का विकास–** औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप विभिन्न देशों ने उत्पादन की नई तकनीक तथा विधियों की खोज कर डाली जिससे उत्पादन में असाधारण वृद्धि हुई।

(iv) **वैज्ञानिक प्रगति–** अनेक देशों ने नए-नए वैज्ञानिक आविष्कार किए। बाद में इन आविष्कारों से विश्व के अन्य देश भी लाभान्वित हुए।

(v) **दैनिक सुख-सुविधाओं में वृद्धि–** औद्योगीकरण के कारण नाना प्रकार की वस्तुओं का अधिक मात्रा में उत्पादन होने से लोगों को दैनिक उपयोग की वस्तुएँ आसानी से उपलब्ध होने लगीं।

(vi) **परिवहन के साधनों का विकास–** औद्योगिक क्रांति से यातायात के विभिन्न साधनों का तेजी से विकास हुआ। इससे एक तो उद्योग, व्यापार तथा वाणिज्य के क्षेत्र में आश्चर्यजनक प्रगति हुई। दूसरे, मनुष्य तथा माल का आवागमन शीघ्रता तथा सुगमता से होने लगा। फिर संचार तथा परिवहन के साधनों ने दूर-दूर फैले देशों में परस्पर संपर्क स्थापित कर दिया।

(vii) **कृषि का विकास–** औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप कृषि के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। यंत्रीकरण, रासायनिक उर्वरक, उन्नत बीजों तथा कीटनाशक दवाइयों के प्रयोग से खाद्यान्नों के उत्पादन में कई गुना वृद्धि हुई।

(viii) **शिक्षा का प्रसार–** औद्योगिक क्रांति के कारण औद्योगिक राष्ट्रों में शिक्षा के स्तर में सुधार हुआ। वहाँ से शिक्षा का अन्य देशों में प्रसार हुआ। शिक्षा ने लोगों के दृष्टिकोण, ज्ञान तथा रहन-सहन में भारी परिवर्तन कर दिया।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई-1 (ख) : राजनीतिक क्रांतियाँ

4 क्रांतियों का सामान्य परिचय

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 32 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 32 व 33 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. इंग्लैंड के इतिहास में रक्तहीन क्रांति किस प्रकार एक युगांतरकारी घटना थी?

उ०– विश्व के इतिहास में क्रांति का नवीन अध्याय प्रारंभ करने का श्रेय इंग्लैंड की क्रांति को जाता है। इस संदर्भ में **रैम्जे म्योर** महोदय का यह कथन एकदम सटीक प्रतीत होता है, "सन् 1688 ई० की क्रांति केवल इंग्लैंड के इतिहास की ही नहीं वरन् यूरोप के इतिहास की महत्वपूर्ण घटना थी।" इंग्लैंड का शासक **जेम्स द्वितीय** एक निरकुंश शासक था। अत: इंग्लैंड की जनता ने राजा की निरंकुशता और अन्यायों के विरुद्ध 1688 ई० में क्रांति का बिगुल बजा दिया। यह क्रांति-व्यवस्था-परिवर्तन में सफल हुई। इंग्लैंड की धरती पर रक्त की एक भी बूँद बहाए बिना क्रांतिकारी, आततायी शासक की निरंकुशता से मुक्ति पा गए, अत: "इंग्लैंड की क्रांति इतिहास में रक्तहीन क्रांति या गौरवपूर्ण क्रांति के नामों से अंकित की गई।" इस शानदार क्रांति ने इंग्लैंड में राजतंत्र का अंत करके, सत्ता संसद के हाथों में सौंप दी। राजा के दैवी अधिकारों का अंत हो गया और सत्ता पर संसद का अधिकार हो गया। इंग्लैंड की संसदीय व्यवस्था की सफलता से प्रभावित होकर विश्वभर में संसद की स्थापना की जाने लगी। इस प्रकार इंग्लैंड की क्रांति इतिहास की एक युगांतरकारी घटना बन गई।

2. गौरवमयी (रक्तहीन) क्रांति के विषय में आप क्या जानते हैं?

उ०– उत्तर के लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

3. इंग्लैंड में क्रांति कब हुई? इसके लिए उत्तरदायी दो कारण कौन से हैं?

उ०– इंग्लैंड में क्रांति सन् 1688 ई० में हुई। इसके लिए उत्तरदायी दो कारण निम्नलिखित हैं-

(i) जेम्स द्वितीय की निरंकुशता, अन्याय और विलासी जीवन से दुखी होकर इंग्लैंड की जनता क्रांति करने को विवश हो गई।

(ii) राजा ने जनसामान्य पर अनेक धार्मिक बाध्यताएँ थोप दी, अत: जनसामान्य उनसे बचने के लिए क्रांति का सहारा लेने के लिए विवश हो गया।

4. अमेरिका की क्रांति कब हुई? उसके दो प्रमुख परिणाम क्या हुए?

उ०– अमेरिका की क्रांति सन् 1765 ई० में हुई। इस क्रांति के दो प्रमुख परिणाम निम्नलिखित हैं–

(i) संयुक्त राज्य अमेरिका का उदय– अमेरिका की क्रांति की सबसे महत्वपूर्ण देन विश्व-रंगमंच पर संयुक्त राज्य अमेरिका का उदय था। यह देश धीरे-धीरे आर्थिक, व्यावसायिक तथा सैनिक दृष्टि से 'विश्व का डंडे वाला बड़ा पुलिसमैन' बन गया।

(ii) लिखित संविधान– अमेरिका की क्रांति की सफलता के बाद यहाँ विश्व का प्रथम लिखित संविधान लागू किया गया, जो समूचे विश्व के लिए अनुकरणीय वरदान बन गया।

5. बोस्टन टी-पार्टी किस देश में हुई? इस घटना की मुख्य विशेषताएँ क्या थीं?

उ०– बोस्टन टी-पार्टी की घटना सन् 1773 में अमेरिका में हुई। यह अमेरिका के स्वतंत्रता संग्राम की प्रमुख घटना है।
इंग्लैंड की संसद में उपनिवेशों का एक भी प्रतिनिधि नहीं था। संसद ने 1765 ई० में स्टांप एक्ट लागू कर दिया। इसके अनुसार उपनिवेशवासियों को व्यापारिक सौदों पर कर देना अनिवार्य था, साथ ही न्यायालयों के प्रपत्रों पर स्टाम्प लगाना आवश्यक कर दिया गया। उपनिवेशों के लोगों ने इस एक्ट के विरोध में "प्रतिनिधित्व नहीं तो कर नहीं" का नारा लगाया। इसी संदर्भ में 1773 ई० में ब्रिटिश जहाज चाय की पेटियाँ लेकर बोस्टन के बंदरगाह पर पहुँचे, वहाँ क्रांतिकारी रेडइंडियंस कुलियों की पोशाक में पेटियाँ उतारने के लिए जहाजों पर चढ़ गए और विरोधस्वरूप उन्होंने चाय की सभी पेटियाँ समुद्र में फेंक दीं। अमेरिका के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में यही घटना 'बोस्टन टी-पार्टी' के नाम से प्रसिद्ध हो गई। बाद में सरकार ने उपनिवेशवासियों को दंडित करने के उद्देश्य से बोस्टन का बंदरगाह ही बंद कर दिया। "बोस्टन टी-पार्टी से पूर्व दिया गया नारा अमेरिका के स्वाधीनता संग्राम का प्रतिनिधि नारा बन गया और बोस्टन टी पार्टी की घटना ने क्रांति की ज्वाला में घी का काम किया।"

6. जॉर्ज वाशिंगटन कौन था? अमेरिका के स्वतंत्रता संग्राम में उसकी भूमिका क्या थी?

उ०– जॉर्ज वाशिंगटन संयुक्त राज्य अमेरिका का प्रथम राष्ट्रपति था। अमेरिका के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में जॉर्ज वाशिंगटन का नाम स्वर्णिम अक्षरों में चमकता रहेगा। 20 वर्ष की आयु में सेना में भर्ती होकर यह महान सेनानी, सेना का सर्वोच्च अधिकारी बना। सन् 1765 में उसने स्टाम्प एक्ट का विरोध करते हुए क्रांति में सक्रिय भूमिका निभाई और जनता ने उन्हें वर्जीनिया का विधायक चुना। यह महान सेनापति राष्ट्रप्रेम और आत्मविश्वास से ओत-प्रोत था। उन्हीं के नेतृत्व में सेना ने स्वतंत्रता संग्राम में विजय पाई और अमेरिका को स्वतंत्रता दिलाई।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. इंग्लैंड की क्रांति के प्रमुख कारणों का वर्णन कीजिए।

उ०– **इंग्लैंड की क्रांति के कारण–** इंग्लैंड में क्रांति का विस्फोट अचानक ही नहीं हुआ, वरन् इसके लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) जेम्स द्वितीय की निरंकुशता, अन्याय और विलासी जीवन से दु:खी होकर इंग्लैंड की जनता क्रांति करने को विवश हो गई।

(ii) जेम्स द्वितीय कैथोलिक धर्म के अनुयायियों का हित करते हुए प्रोटेस्टेंट धर्म के अनुयायियों को हानि पहुँचा रहा था।

(iii) जेम्स द्वितीय ने कैथोलिक अधिकारियों की नियुक्ति को वैधानिक बनाने के लिए कोर्ट ऑफ हाई कमीशन नियुक्त कर जनता को आंदोलित कर दिया।

(iv) राजा ने 1687 ई० में टेस्ट एक्ट तथा कैलेरेंडन एक्ट रद्द करके जनता के आक्रोश को बढ़ा दिया।

(v) राजा ने जनसामान्य पर अनेक धार्मिक बाध्यताएँ थोप दीं, अत: जनसामान्य उनसे बचने के लिए क्रांति का सहारा लेने के लिए विवश हो गया।

(vi) राजा ने कैंटरबरी के आर्क बिशप सहित छ: अन्य पादरियों पर राजद्रोह का अपराध लगा दिया, जिससे जनता के हृदयों में क्रांति की ज्वाला भड़क उठी।

(vii) राजमहल से राजा के पुत्र का जन्म होने का समाचार आते ही, पुराने तथा नए राजा से छुटकारा पाने को जनता आंदोलित हो उठी।

2. इंग्लैंड की क्रांति को 'गौरवपूर्ण क्रांति' की संज्ञा क्यों दी गई? इसके प्रमुख परिणामों का वर्णन कीजिए।

उ०– **इंग्लैंड की क्रांति–** विश्व के इतिहास में क्रांति का नवीन अध्याय प्रारंभ करने का श्रेय इंग्लैंड की क्रांति को जाता है। इस संदर्भ में **रैम्जे म्योर** महोदय का यह कथन एकदम सटीक प्रतीत होता है, "सन् 1688 ई० की क्रांति केवल इंग्लैंड के इतिहास की ही नहीं वरन् यूरोप के इतिहास की महत्वपूर्ण घटना थी।" इंग्लैंड का शासक **जेम्स द्वितीय** एक निरकुंश शासक था। अत: इंग्लैंड की जनता ने राजा की निरंकुशता और अन्यायों के विरुद्ध 1688 ई० में क्रांति का बिगुल बजा दिया। यह क्रांति-व्यवस्था-परिवर्तन में सफल हुई। इंग्लैंड की धरती पर रक्त की एक भी बूँद बहाए बिना क्रांतिकारी, आततायी शासक की निरंकुशता से मुक्ति पा गए, अत: "इंग्लैंड की क्रांति इतिहास में रक्तहीन क्रांति या गौरवपूर्ण क्रांति के नामों से अंकित की गई।" इस शानदार क्रांति ने इंग्लैंड में राजतंत्र का अंत करके, सत्ता संसद के हाथों में सौंप दी। राजा के दैवी अधिकारों का अंत हो गया और सत्ता पर संसद का अधिकार हो गया। इंग्लैंड की संसदीय व्यवस्था की सफलता से प्रभावित होकर विश्वभर में संसद की स्थापना की जाने लगी। इस प्रकार इंग्लैंड की क्रांति इतिहास की एक युगांतरकारी घटना बन गई।

इंग्लैंड की क्रांति के परिणाम– इंग्लैंड की रक्तहीन क्रांति बहुत प्रभावी थी। उसके परिणाम निम्नवत् रहे–

(i) राजा और संसद के झगड़ों का अंत– इंग्लैंड की क्रांति ने संसद को शक्ति प्रदान कर जनता और राजा के मध्य चले आ रहे झगड़ों का अंत कर दिया।

(ii) राजा के अधिकारों पर अंकुश– इंग्लैंड में राजा दैवीय अधिकारों से युक्त माना जाता था। क्रांति की सफलता के फलस्वरूप राजा के अधिकारों पर अंकुश लग गया।

(iii) संसद की सत्ता की स्थापना– इंग्लैंड की क्रांति ने वहाँ की संसद को सर्वोच्च सत्ता सौंपकर उसे सर्वशक्ति-संपन्न बना दिया।

(iv) राजा की निरंकुशता से मुक्ति– इंग्लैंड की क्रांति की सफलता ने इंग्लैंड की जनता को राजा की निरंकुशता से सदैव के लिए मुक्ति दिला दी।

(v) न्यायपालिका की स्वतंत्रता को महत्व– इंग्लैंड की क्रांति ने वहाँ स्वतंत्र न्यायपालिका की स्थापना कर उसकी स्वतंत्रता को विश्वभर के लिए महत्वपूर्ण बना दिया।

(vi) इंग्लैंड का सर्वांगीण विकास– इंग्लैंड की गौरवपूर्ण क्रांति की सफलता ने इंग्लैंड के सर्वांगीण विकास के द्वार खोल दिए।

(vii) क्रांतियों का मार्गदर्शन– इंग्लैंड की क्रांति ने अमेरिका की क्रांति के साथ-साथ यूरोप की क्रांतियों का भी मार्गदर्शन किया। इन देशों के नागरिकों ने इस क्रांति से प्रोत्साहन पाकर क्रांति करने का मार्ग चुन लिया।

इस क्रांति के प्रभाव को **रैम्जे म्योर** ने इस प्रकार अभिव्यक्ति दी है, "1688 ई० की रक्तहीन क्रांति इंग्लैंड के संसदीय इतिहास में मील का पत्थर सिद्ध हुई।" इस क्रांति ने इंग्लैंड की संसद को विश्व की संसदों की जननी बना दिया।

3. अमेरिका की क्रांति के प्रमुख कारणों पर प्रकाश डालिए।

उ०– अमेरिका की क्रांति– क्रिस्टोफर कोलंबस ने लंबी समुद्री यात्रा कर 1492 ई० में नई दुनिया की खोज करके समस्त विश्व को अमेरिका से परिचित करवाया। वहाँ के प्राकृतिक संसाधनों के शोषण के आकर्षण में ब्रिटेन से अंग्रेज अमेरिका पहुँचने लगे और उन्होंने अपने 13 उपनिवेश स्थापित कर लिए। प्राकृतिक संसाधनों के विदोहन और मानवीय संसाधनों के शोषण ने अंग्रेजों को समृद्ध बना दिया। उनके जीवन का लक्ष्य अफ्रीका से लाए गए दासों से कृषि कार्य कराकर अमेरिका के संसाधनों से पूँजी और शक्ति का संचय करना था। अमेरिका में कमाया गया धन धीरे-धीरे इंग्लैंड की तिजौरी में जाकर संचित होने लगा। उपनिवेशों के निवासी अंग्रेजों के अन्याय, अत्याचार और शोषण से दबकर कुलबुलाने लगे। उनके ह्रदयों में धूर्त अंग्रेजों से छुटकारा पाने की लालसाएँ हिलोरें मारने लगीं। स्वतंत्रता पाने की यही लालसाएँ धीरे-धीरे उनके ह्रदयों में असंतोष बनकर सुलगने लगीं। अंग्रेजों के अत्याचार और अन्याय बढ़ने से उनके धैर्य का बाँध टूटने लगा, जो एक दिन क्रांति की सूनामी बनकर उफन पड़ा।

1765 ई० में अमेरिका की जनता ने इंग्लैंड की सरकार के विरुद्ध क्रांति का झंडा उठा लिया। अमेरिका के स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व **जॉर्ज वाशिंगटन** ने किया। एक लंबे संघर्ष के बाद क्रांतिकारियों को अपने लक्ष्य में सफलता मिली और 4 जुलाई 1776 ई० को अमेरिका में स्वतंत्रता का सूर्य उदित हुआ।

अमेरिका की क्रांति के कारण– अमेरिका की क्रांति के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) पक्षपातपूर्ण कठोर कानून– अंग्रेज सरकार ने उपनिवेशवासियों के लिए पक्षपातपूर्ण और कठोर कानून बनाकर, उन्हें आंदोलन करने के लिए कटिबद्ध कर दिया।

(ii) अन्यायी शासन– अंग्रेजों की शासन पद्धति अन्याय और शोषण पर आधारित थी। शासन का लक्ष्य उपनिवेशवासियों का शोषण और अपना हित करना था। अत: जनसामान्य ऐसे अन्यायी शासन के विरुद्ध क्रांति के लिए तत्पर हो गया।

(iii) बोस्टन टी-पार्टी– इंग्लैंड की संसद में उपनिवेशों का एक भी प्रतिनिधि नहीं था। संसद ने 1765 ई० में स्टांप एक्ट लागू कर दिया। इसके अनुसार उपनिवेशवासियों को व्यापारिक सौदों पर कर देना अनिवार्य था, साथ ही न्यायालयों के प्रपत्रों पर स्टांप लगाना आवश्यक कर दिया गया। उपनिवेशों के लोगों ने इस एक्ट के विरोध में "प्रतिनिधित्व नहीं तो कर नहीं" का नारा लगाया। इसी संदर्भ में 1773 ई० में ब्रिटिश जहाज चाय की पेटियाँ लेकर बोस्टन के बंदरगाह पर पहुँचे, वहाँ क्रांतिकारी रेडइंडियंस कुलियों की पोशाक में पेटियाँ उतारने के लिए जहाजों पर चढ़ गए और विरोधस्वरूप उन्होंने चाय की सभी पेटियाँ समुद्र में फेंक दीं। अमेरिका के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में यही घटना 'बोस्टन टी-पार्टी' के नाम से प्रसिद्ध हो गई। बाद में सरकार ने उपनिवेशवासियों को दंडित करने के उद्देश्य से बोस्टन का बंदरगाह ही बंद कर दिया। "बोस्टन टी-पार्टी से पूर्व दिया गया नारा अमेरिका के स्वाधीनता संग्राम का प्रतिनिधि नारा बन गया और बोस्टन टी पार्टी की घटना ने क्रांति की ज्वाला में घी का काम किया।"

(iv) दार्शनिकों का योगदान– अमेरिका की क्रांति को सफल बनाने में **जैफरसन, टॉमस पेन, जॉन मिल्टन** तथा **जॉन लॉक** आदि लेखकों और दार्शनिकों ने बड़ा योगदान दिया। उनके विचारों से प्रेरित होकर उपनिवेशों के निवासी तन, मन और धन के साथ क्रांति की गतिविधियों से साथ जुड़ गए।

(v) पेरिस संधि एवं नवीन संविधान का निर्माण– लंबे और कठोर संघर्ष के बाद अंग्रेज सरकार ने क्रांतिकारियों के साथ 1783 ई० में **पेरिस संधि** की, जिसके परिणामस्वरूप विश्व मानचित्र पर संयुक्त राज्य अमेरिका नामक नए देश का चित्र उभरा। 1789 ई० में अमेरिका में नवीन लिखित संविधान बना।

4. अमेरिका की क्रांति की उपलब्धियों का वर्णन कीजिए।

उ०– अमेरिका की क्रांति की उपलब्धियाँ– अमेरिका की क्रांति की उपलब्धियों को **वीयर्ड** महोदय के इन शब्दों के आलोक में ठीक से समझा जा सकता है, "अमेरिका की क्रांति उपनिवेशवाद के विरुद्ध खुला संघर्ष था।" इसीलिए यह क्रांति विश्व इतिहास की एक अविस्मरणीय घटना बनकर उभरी। अमेरिका की क्रांति ने समूचे विश्व को प्रेरणा ही नहीं दी, वरन् एक अनूठे ढंग से उसका नेतृत्व भी किया। इस क्रांति के प्रमुख प्रभाव निम्नलिखित रहे–

(i) **संयुक्त राज्य अमेरिका का उदय–** अमेरिका की क्रांति की सबसे महत्वपूर्ण देन विश्व-रंगमंच पर संयुक्त राज्य अमेरिका का उदय था। यह देश धीरे-धीरे आर्थिक, व्यावसायिक तथा सैनिक दृष्टि से 'विश्व का डंडे वाला बड़ा पुलिसमैन' बन गया।

(ii) **लिखित संविधान–** अमेरिका की क्रांति की सफलता के बाद यहाँ विश्व का प्रथम लिखित संविधान लागू किया गया, जो समूचे विश्व के लिए अनुकरणीय वरदान बन गया।

(iii) **गणतंत्रीय व्यवस्था–** अमेरिका की क्रांति ने समूचे विश्व को गणतंत्र और गणतंत्रणीय शासन-व्यवस्था का अमूल्य उपहार दिया।

(iv) **उपनिवेशवाद पर कठोर आघात–** अमेरिका की क्रांति की सफलता ने अमेरिका के 13 अंग्रेजी उपनिवेशों का अंत कर समूचे विश्व में उपनिवेशवाद पर कठोर आघात किया, जिसके फलस्वरूप उपनिवेशों को स्वतंत्रता का मधुर फल चखने को मिला।

(v) **भावी क्रांतियों के लिए प्रेरणा स्रोत–** अमेरिका की क्रांति फ्रांस तथा रूस की क्रांतियों के लिए प्रेरणा स्रोत ओर मार्गदर्शक बन गई।

(vi) **संघीय शासन-प्रणाली की स्थापना–** अमेरिका की क्रांति की सफलता के पश्चात संयुक्त राज्य अमेरिका में संघीय शासन प्रणाली की स्थापना करके समूचे विश्व के समक्ष यह आदर्श प्रस्तुत किया गया।

(vii) **दास प्रथा का उन्मूलन–** संयुक्त राज्य अमेरिका में दास प्रथा का प्रचलन था, जिसे बाद में अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन ने कठोर संघर्ष करके समाप्त कर दिया। यह कार्य समूचे विश्व के लिए प्रेरणा स्रोत बन गया।

(viii) **संयुक्त राज्य अमेरिका का शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में उदय–** अमेरिका की क्रांति की सफलता के फलस्वरूप जो संयुक्त राज्य अमेरिका एक नया देश बना, वह धीरे-धीरे आर्थिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्रों में चरम विकास करके 'विश्वशक्ति' के रूप में अवतरित हुआ।

अमेरिका की क्रांति के प्रभाव को प्रसिद्ध विद्वान **हेज** ने इन शब्दों में व्यक्त किया है, "अमेरिका की क्रांति ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद की महाद्वीपीय व्यवस्था पर घातक प्रहार ही नहीं किया, वरन् यूरोप में निरंकुशवाद के विनाश का मार्ग खोल दिया।" इस क्रांति ने समूचे विश्व को प्रजातंत्र का प्रसाद दिया। अब्राहम लिंकन के शब्द, "जनता का शासन, जनता द्वारा, जनता के लिए" प्रजातंत्र का मूलमंत्र बन गए हैं।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

5 फ्रांसीसी क्रांति-कारण तथा परिणाम

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 37 व 38 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 38 व 39 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. फ्रांसीसी क्रांति का तत्कालीन कारण क्या था?

उ०– फ्रांसीसी क्रांति का तत्कालीन कारण वहाँ के तत्कालीन शासक लुई सोलहवाँ और उसकी महारानी की निरंकुशता, अन्याय, अयोग्यता और विलासिता थी।

2. ''प्रत्येक क्रांति कुछ दार्शनिकों के विचारों से प्रभावित होती है।'' इस कथन की पुष्टि में दो क्रांतियों और उनसे संबंधित दार्शनिकों का उल्लेख कीजिए?

उ०– किसी भी क्रांति को जन्म देने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका दार्शनिक और साहित्यकारों की होती है। दार्शनिक अपने

विचारों से और साहित्यकार अपने साहित्य से क्रांति का आह्वान करते हैं और जनसमूह उनसे प्रभावित होकर क्रांति का शंखनाद कर देते हैं।

अमेरिका की क्रांति को सफल बनाने में जैफरसन्, टॉमसपेन, जॉन मिल्टन आदि लेखकों और दार्शनिकों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनके विचारों से प्रेरित होकर उपनिवेशों के निवासी तन, मन और धन से क्रांति की गतिविधियों के साथ जुड़ गए।

फ्रांसीसी क्रांति का अग्रदूत फ्रांस का महान दार्शनिक रूसो था। उसका मत था कि ''मनुष्य स्वतंत्र रूप से जन्मा है, परंतु वर्तमान में उसे अनेक बेड़ियों में जकड़ रखा है।'' रूसो ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'सोसल कॉन्ट्रेक्ट' में क्रांतिकारी विचारों से जनमानस में प्रेरणा जगाकर उन्हें क्रांतिकारी गतिविधियों से जोड़ा। इस प्रकार फ्रांस की राजनीति में रूसों व अन्य दार्शनिकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

3. फ्रांस की क्रांति में दार्शनिकों के योगदान का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

उ०– इंग्लैंड में क्रांति सन् 1688 ई० में हुई। इसके लिए उत्तरदायी दो कारण निम्नलिखित हैं–

(i) फ्रांस की क्रांति में रूसो के योगदान– इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या-2 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

(ii) फ्रांस की क्रांति में मॉण्टेस्क्यू का योगदान– मॉण्टेस्क्यू एक प्रतिभाशाली विचारक और राजनीति का विश्लेषक था। उसने 'दि स्पिरिट ऑफ लॉज' नामक पुस्तक की रचना की। उसका मत था, "सामाजिक आवश्यकताओं का उपभोग करने का अधिकार सभी को है। इनके लिए संघर्ष करना चाहिए।" उसने लोकतंत्र की स्थापना पर बल देकर क्रांतिकारियों का मार्गदर्शन किया। वह अधिकार पाने का पक्षधर बनकर क्रांतिदूत बन गया।

(iii) फ्रांस की क्रांति में वाल्टेयर का योगदान– वाल्टेयर फ्रांस का एक प्रसिद्ध दार्शनिक एवं ख्याति-प्राप्त लेखक था। उसने राजतंत्र और निरंकुश शासन को उखाड़ फेंकने के लिए क्रांति करने को प्रेरित किया। उसके इन विचारों ने क्रांति को जन्म देने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उसने कलम की धार से क्रांति की अग्नि को प्रज्वलित किया।

4. फ्रांस की क्रांति के तीन महत्व बताइए?

उ०– फ्रांस की क्रांति विश्व इतिहास की एक महान घटना थी। इसके तीन महत्व निम्नलिखित हैं–

(i) फ्रांस की क्रांति के फलस्वरूप यूरोप में निरंकुश शासन का लगभग अंत हो गया।

(ii) इस क्रांति की देखा-देख यूरोप के अन्य देशों में भी क्रांतियाँ हुईं।

(iii) यूरोपीय देशों में लोकतांत्रिक सिद्धांतों का प्रसार हुआ।

5. फ्रांस में 14 जुलाई राष्ट्रीय पर्व के रूप में क्यों मनाई जाती है?

उ०– फ्रांस में क्रांतिकारियों ने 14 जुलाई, 1789 ई० को बस्तील की जेल के फाटक तोड़कर सभी कैदियों को मुक्त कर दिया था जिससे क्रांति तेजी से शहरों, कस्बों और गाँवों में फैल गई। यह घटना फ्रांस में निरंकुश शासन के पतन की शृंखला की पहली कड़ी थी क्योंकि उन दिनों बस्तील की जेल राजा के अत्याचार और निरंकुशता की प्रतीक थी। इसीलिए 14 जुलाई को, बस्तील के दुर्ग के पतन के कारण, फ्रांस में प्रतिवर्ष राष्ट्रीय पर्व के रूप में मनाया जाता है।

6. नेपोलियल बोनापार्ट कौन था? वह क्यों प्रसिद्ध हुआ?

उ०– नेपोलियन बोनापार्ट फ्रांस की क्रांति की ही देन था। क्रांति की अवधि में ही उसने शक्ति, कौशल और अनुभव का संचय किया। वह फ्रांस की सेना का सेनापति बन गया। 1799 ई० में उसने सेना की डायरेक्टरी को भंग कर दिया और स्वयं फ्रांस का तानाशाह बन गया। नेपोलियन ने अपनी प्रतिभा के बल पर फ्रांस को यूरोप का समृद्ध और शक्तिसंपन्न राष्ट्र बना दिया। 1804 ई० में वह फ्रांस का सम्राट बना। उसने फ्रांस को सैन्यशक्ति की दृष्टि से शक्तिसंपन्न बना लिया था। यही कारण था कि उसकी सेनाओं ने 1805 ई० में आस्ट्रिया को, 1806 ई० में प्रशा को तथा 1807 ई० में रूस को धूल चटा दी। उसने व्यापार निषेध नियम लागू करके इंग्लैंड पर निशाना साधा। किन्तु मित्र राष्ट्रों की सेनाओं ने उसे 1813 ई० में **लिपजिंग** में तथा बाद में 1815 ई० में **वाटर लू** में अंतिम रूप से पराजित कर दिया। 5 मई, 1821 ई० में सेंट हेलना द्वीप पर उसका स्वर्गवास हो गया।

7. बास्तील दुर्ग का पतन कब हुआ? इसका क्या परिणाम निकला?

उ०– बास्तील के दुर्ग में फ्रांस के राजनीतिक बंदियों को रखा जाता था। यह दुर्ग राजा के अत्याचारों का केन्द्र बन गया था। पेरिस की क्रांतिकारी जनता ने एकत्रित होकर बास्तील के दुर्ग पर आक्रमण कर दिया और वहाँ के सभी हथियार लूटकर, कैदियों को मुक्त कराकर दुर्ग को तोड़ दिया। यह घटना 14 जुलाई, 1789 ई० में घटी। इस प्रकार फ्रांस में बास्तील के दुर्ग के पतन के साथ ही फ्रांस को स्वतन्त्रता मिली।

8. टेनिस कोर्ट की शपथ का संबंध किस क्रांति से था। इसका क्या परिणाम हुआ?

उ०– टेनिस कोर्ट की शपथ का संबंध फ्रांसीसी क्रांति से था। फ्रांस की संसद में तीन सदनों की व्यवस्थाएँ थीं। तीनों सदनों के सदस्य पृथक-पृथक भवनों में सभाएँ करते थे।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. फ्रांसीसी क्रांति के कारणों की विवेचना कीजिए।

उ०– **फ्रांस की क्रांति के कारण–** फ्रांस की क्रांति अचानक ही नहीं हो गई। फ्रांस की सड़ी-गली, पुरातन और दोषपूर्ण राजनीतिक व्यवस्था से त्रस्त जनता में जो जनाक्रोश धधक रहा था, वह निम्नलिखित कारणों से जनक्रांति बनकर भड़क उठा–

(i) राजनीतिक कारण– फ्रांस की क्रांति निरंकुशता और राजतंत्र शासन-व्यवस्था के कारण उत्पन्न हुई। इसे जन्म देने में निम्नलिखित राजनीतिक कारण उत्तरदायी थे–

(क) राजा की निरंकुशता और स्वेच्छाचारिता– फ्रांस का राजा निरंकुश और स्वेच्छाचारी था, अत: उसके अन्याय और शोषण से मुक्ति पाने के लिए जनता ने क्रांति का सहारा ले लिया।

(ख) पादरी वर्ग एवं कुलीन वर्ग की विलासिता– फ्रांस की जनता करों के बोझ से दबकर रोटी पाने के लिए बिलख रही थी; जबकि शासक वर्ग वैभवपूर्ण जीवन जी रहा था। फ्रांस की दु:खी जनता ने उनकी विलासिता से बचने के लिए क्रांति का मार्ग चुन लिया।

(ग) शासन की पक्षपातपूर्ण नीति– फ्रांस के शासन की नींव पक्षपात पर टिकी थी। वहाँ समाज का उच्च वर्ग करों से मुक्त था और आनंदपूर्वक जी रहा था; जबकि निम्नवर्ग करों के बोझ में सिर से पैर तक दबा हुआ दयनीय जीवन जीने को विवश था। शासन का यही पक्षपातपूर्ण व्यवहार फ्रांस में जनक्रांति का कारण बना।

(घ) सैन्य अंसतोष– फ्रांस के शासकों को अनेक युद्ध लड़ने पड़े, जिससे सैनिकों में भारी असंतोष फैल गया था। सैनिक शांति स्थापित करवाने के उद्देश्य से क्रांतिकारियों के सहयोगी बन गए।

(ii) सामाजिक कारण– फ्रांस का तत्कालीन समाज वर्ग-भेद के दोषों से ग्रसित था, अत: फ्रांस की क्रांति भड़काने में निम्नलिखित सामाजिक कारणों ने अपना योगदान दिया–

(क) वर्ग-संघर्ष– फ्रांस का उच्चवर्ग सुखी और विलासी जीवन जी रहा था। पादरी वर्ग और कुलीन वर्ग विशेषाधिकारों से संपन्न था; जबकि जनसाधारण वर्ग कर, ऋण, शोषण तथा अभावों से ग्रसित था। जनसाधारण वर्ग ने इन सबसे मुक्ति पाने के लिए क्रांति का पथ चुन लिया।

(ख) बेरोजगारी– फ्रांस में सर्वत्र बेरोजगारी का साम्राज्य था। जनसाधारण बेरोजगारी और कृषि की हीन दशा से जूझ रहा था। उसने इन सबसे छुटकारा पाने के लिए क्रांति का बिगुल बजा दिया।

(ग) शोषण और अन्याय– फ्रांस का पादरी और कुलीन वर्ग अपने भोग-विलासों के लिए अधिक कर लगाकर जनसाधारण वर्ग के साथ अन्याय और शोषण करने में जुटा था। अत: जनसामान्य ने शोषण और अन्याय से बचाव का एकमात्र मार्ग क्रांति को बना लिया।

(घ) पुरातन सामाजिक व्यवस्था– फ्रांस के समाज में प्राचीन सामांतवादी, पुरोहितवादी और कुलीनतंत्रवादी सड़ी-गली व्यवस्था चली आ रही थी, जिससे बचने के लिए जनसाधारण वर्ग क्रांति करने के लिए विवश हो गया।

(iii) आर्थिक कारण– कहावत है कि क्रांति के बीज देश की अर्थव्यवस्था में छुपे होते हैं। यह कहावत फ्रांस की क्रांति पर एकदम चरितार्थ होती है। फ्रांस की तत्कालीन डाँवाँडोल आर्थिक दशा ने निम्नलिखित कारणों से क्रांति का विस्फोट कराया–

(क) धन का दुरुपयोग– फ्रांस के शासक, सामंत और पादरी जनता के गाढ़े पसीने की कमाई को विलासिता में उड़ा रहे थे, अत: जनता ने उस दुरुपयोग को रोकने के लिए क्रांति का मार्ग अपना लिया।

(ख) धन का असमान वितरण– फ्रांस में पादरी और कुलीन वर्ग समृद्ध था; जबकि जनसाधरण वर्ग एक-एक पैसे के लिए तरस रहा था। समाज में धन के इस असमान वितरण ने क्रांति को और भी निकट ला दिया।

(ग) निर्धनता– फ्रांस में राजकोष रिक्त था, बेरोजगारी और कृषि की हीन दशा के कारण सर्वत्र निर्धनता व्याप्त थी, अत: फ्रांस की जनता ने दु:खी होकर क्रांति का मंत्र फूँक दिया।

(घ) कृषकों का अंसतोष– फ्रांस के सामंत कृषकों का शोषण करने में जुटे थे। वे उनसे उनकी उपज का 35%

तक लगान बलपूर्वक वसूलते थे, जिससे उनकी निर्धनता ने उन्हें असंतोष के भावों से भर दिया। बस, भूखा किसान क्रांति के हवन-कुंड में अपने सहयोग की आहुति देने में जुट गया।

(iv) **फ्रांस के दार्शनिकों की प्रेरणा–** कहावत है कि प्रत्येक क्रांति में महान दार्शनिकों की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण होती है। यह कहावत फ्रांस की क्रांति पर एकदम सटीक उतरती है। फ्रांस के निम्नलिखित दार्शनिकों ने क्रांतिकारियों को प्रेरित किया–

(क) **रूसो–** रूसो फ्रांस का महान दार्शनिक था। उसका मत था कि "मनुष्य स्वतंत्र रूप में जन्मा है; परंतु वर्तमान में उसे अनेक बेड़ियों में जकड़ रखा है।" रूसो ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'सोशल कॉन्ट्रेक्ट' (सामाजिक समझौता) में क्रांतिकारी विचारों से क्रांतिकारियों में प्रेरणा जगाई, जिससे जनमानस स्वतंत्रता पाने के लिए क्रांति के साथ जुड़ गया। अत: फ्रांस की क्रांति में रूसो एवं अन्य दार्शनिकों ने अग्नि में घी का कार्य किया।

(ख) **मॉण्टेस्क्यू–** मॉण्टेस्क्यू एक प्रतिभाशाली विचारक और राजनीति का विश्लेषक था। उसने 'दि स्पिरिट ऑफ लॉज' नामक पुस्तक की रचना की। उसका मत था, "सामाजिक आवश्यकताओं का उपभोग करने का अधिकार सभी को है। इनके लिए संघर्ष करना चाहिए।" उसने लोकतंत्र की स्थापना पर बल देकर क्रांतिकारियों का मार्गदर्शन किया। वह अधिकार पाने का पक्षधर बनकर क्रांतिदूत बन गया।

(ग) **वाल्टेयर–** वाल्टेयर फ्रांस का एक प्रसिद्ध दार्शनिक एवं ख्याति-प्राप्त लेखक था। उसने राजतंत्र और निरंकुश शासन को उखाड़ फेंकने के लिए क्रांति करने को प्रेरित किया। उसके इन विचारों ने क्रांति को जन्म देने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उसने कलम की धार से क्रांति की अग्नि को प्रज्वलित किया।

(v) **अन्य कारण–** फ्रांस की क्रांति में कुछ घटनाओं का विशेष महत्व है। उनके बारे में जाने बिना फ्रांस की क्रांति की पृष्ठभूमि को समझना कठिन ही नहीं, असंभव भी है। फ्रांस की क्रांति के लिए निम्नलिखित तत्कालीन घटनाएँ भी उत्तरदायी थीं–

(क) टेनिस कोर्ट की शपथ
(ख) राष्ट्रीय महासभा का अधिवेशन
(ग) बास्तील दुर्ग का पतन

(क) **टेनिस कोर्ट की शपथ–** फ्रांस की संसद(स्टेट्स जनरल) में तीन सदन थे। 6 मई, 1789 ई० को **लुई सोलहवें** तथा उसके वित्तमंत्री **नेकर** ने तीनों सदनों के सदस्यों को पृथक-पृथक भवनों में सभाएँ करने की व्यवस्थाएँ दीं। तृतीय सदन का नेतृत्व **मीराबों** के हाथों में था, जहाँ उसने क्रांति करने की घोषणा कर दी।

20 जून, 1789 ई० को जब तृतीय सदन के सदस्य सभाभवन पहुँचे तो उसे बंद पाया। सम्राट और विशेष वर्ग के लोग सभा होने देना नहीं चाहते थे। इसलिए तृतीय सदन के सदस्य निकट ही स्थित 'टेनिस कोर्ट' के भवन में एकत्र हो गए। इस भवन में सभा करके इसे **राष्ट्रीय अधिवेशन** घोषित कर दिया गया तथा नया संविधान बनाने की कार्यवाही प्रारंभ कर दी गई। इस सभाभवन में मीराबों की अध्यक्षता में यह शपथ ली गई, "हम यहाँ से उस समय तक नहीं हटेंगे, जब तक हम देश के लिए संविधान का निर्माण नहीं कर लेते, भले ही हमारे विरुद्ध संगीनों से ही क्यों न काम लिया जाए।" यह घटना फ्रांस के इतिहास में 'टेनिस कोर्ट की शपथ' के नाम से विख्यात है। टेनिस कोर्ट की शपथ की यह घटना फ्रांस के स्वतंत्रता संग्राम की प्रथम चिंगारी थी, अत: सम्राट ने विवश होकर एक सप्ताह बाद ही 'राष्ट्रीय असेंबली' को मान्यता दे दी।

(ख) **राष्ट्रीय महासभा का अधिवेशन–** 27 जून, 1789 ई० में राष्ट्रीय महासभा का अधिवेशन हुआ, जिसने स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व की स्थापना के लिए 20 सितंबर, 1791 ई० तक महान कार्य किए। उसी ने क्रांति को सफल बनाया और फ्रांस को नया संविधान दिया।

(ग) **बास्तील दुर्ग का पतन–** बास्तील की जेल में फ्रांस के राजनीतिक बंदियों को रखा जाता था। यह दुर्ग राजा के अत्याचारों का प्रतीक बन गया था। पेरिस की जनता क्रांतिकारियों के साथ जुलूस बनाकर जा रही थी। राजा ने वित्त मंत्री नेकर को जैसे ही बरखास्त किया– अफवाह फैल गई कि सम्राट बल प्रयोग कर जुलूस को रोकेगा। अत: जुलूस में एकत्र लोगों ने हथियार लेकर बास्तील की जेल को तोड़ दिया और सभी हथियार लूटकर, कैदियों को मुक्त कर दिया। 14 जुलाई, 1789 ई० में घटी यह घटना निरंकुश शासन पर पहला प्रहार था। इसीलिए प्रतिवर्ष 14 जुलाई को फ्रांस का स्वतंत्रता दिवस मनाया जाने लगा।

2. फ्रांसीसी क्रांति के परिणामों को स्पष्ट कीजिए।

उ०– **फ्रांस की क्रांति के परिणाम–** फ्रांस की क्रांति को विश्व-इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना के रूप में याद किया जाता है। इस क्रांति के निम्नलिखित परिणाम हुए–

(i) फ्रांस की क्रांति ने फ्रांस और उसके समाज में चली आ रही विकृत पुरातन व्यवस्था को समाप्त कर दिया।
(ii) फ्रांस की क्रांति ने वहाँ के जनसाधारण वर्ग को निरंकुशता और शोषण से मुक्ति दिला दी।
(iii) फ्रांस की क्रांति ने समूचे विश्व में स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे के आदर्शों का जयघोष कर दिया।
(iv) फ्रांस की क्रांति ने मानव अधिकारों की घोषणा कर शोषित मानवता के घावों को भर दिया।
(v) फ्रांस की क्रांति की सफलता रूस की क्रांति की प्रेरणा स्रोत बन गई।
(vi) फ्रांस की क्रांति यूरोप में राष्ट्रीयता का विकास करने में बड़ी सहायक सिद्ध हुई।
(vii) फ्रांस की क्रांति ने राजतंत्र व्यवस्था को गहरी कब्र में दबाकर साम्यवाद को फूलने-फलने का अवसर दिया।
(viii) फ्रांसीसी क्रांति कृषि-विकास, औद्योगीकरण तथा व्यापार के विस्तार में मील का पत्थर सिद्ध हुई।
(ix) फ्रांस की क्रांति ने धर्मनिरपेक्षता के साथ-साथ संप्रभुता के सिद्धांत का भी पथ प्रशस्त किया।
(x) फ्रांसीसी-क्रांति ने फ्रांस में साहित्य, शिक्षा, विज्ञान और सैन्य-बल को गौरवपूर्ण बनाने में बड़ा योगदान दिया।

3. बास्तील दुर्ग के क्या कारण थे? इसके क्या परिणाम हुए?

उ०– उत्तर के लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या-7 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

4. टेनिस कोर्ट की शपथ तथा बास्तील के दुर्ग के पतन की घटनाओं के सन्दर्भ में फ्रांस की क्रांति का विवरण दीजिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

5. फ्रांस की क्रांति के प्रभावों का विश्लेषण कीजिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-2 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

6 रूसी क्रांति– कारण तथा परिणाम

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 48 व 49 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 44 व 45 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. रूस में क्रांति कब हुई? उसके नायक कौन थे? उसका योगदान स्पष्ट कीजिए।

उ०– रूस में सन् 1917 ई० को क्रांति हुई। इस क्रांति का नायक लेनिन था। लेनिन का पूरा नाम ब्लादिमिर इलिच यूलियनाव था। वह निकोलाई लेनिन के नाम से प्रसिद्ध था। लेनिन रूस का प्रसिद्ध राजनीतिक विचारक और क्रांतिकारी था। वह कार्ल मार्क्स के समाजवादी विचारों से बहुत प्रभावित था। उसने रूस के जारों के निरंकुश तथा अत्याचारी शासन का घोर विरोध किया तथा जनता में समाजवादी विचारों का जमकर प्रचार किया। सन् 1917 में रूसी क्रांति के सफल हो जाने पर लेनिन के नेतृत्व में 'पीपुल्स कमीसार्स को कौंसिल' नामक नई समाजवादी सरकार का गठन किया। इस प्रकार लेनिन का रूस की क्रांति में अद्वितीय योगदान रहा।

2. रूस में 22 फरवरी, 1905 ई० की घटना खूनी रविवार क्यों कहलाती है? यह घटना भारत के किस हत्याकांड का स्मरण कराती है और क्यों?

उ०– रूस में जार (सम्राट) पूरी निरंकुशता के साथ शासन करते थे। उनके अधिकारी साधारण जनता पर अनेक प्रकार के

अत्याचार करते थे। जार के निरंकुश शासन के विरोध में 22 जनवरी, 1905 ई० रविवार को सेन्ट पीटरबर्ग के मजदूर जार के सामने अपनी मांगें पेश करने गए। उनकी कठिनाइयाँ सुनी तक नहीं गईं। जार की आज्ञा से सैनिकों ने उन पर गोलियाँ चला दीं। राजमहल के सामने लाशों का ढ़ेर लग गया। यह घटना रविवार को घटी थी, इसलिए रूस के इतिहास में इसे 'खूनी रविवार' के नाम से जाना जाता है। इस घटना के बाद ही रूस में प्रथम क्रांति प्रारंभ हो गई। यह घटना भारत के जलियाँवाला बाग हत्याकांड का स्मरण कराती है क्योंकि जलियाँवाला बाग हत्याकांड में रूस की खूनी रविवार घटना की तरह हजारों निर्दोष एवं निहत्थे लोगों को गोलियों से भून दिया गया था।

3. रूस की क्रांति के देश पर क्या प्रभाव पड़े? किन्ही दो प्रभावों का उल्लेख कीजिए।

उ०– रूस की क्रांति 20वीं शताब्दी के इतिहास की एक युगांतरकारी घटना थी। इस क्रांति ने पूँजीवाद को पतन के गर्त में धकेलकर रूस में वास्तविक समाजवाद की स्थापना की। रूस की क्रांति के दो प्रमुख प्रभाव निम्नलिखित हैं–

(i) रूस की क्रांति ने रूस में शताब्दियों से चली आ रही जार शासकों की स्वेच्छाचारिता और निरंकुशता का अंत कर दिया।

(ii) रूस की क्रांति के फलस्वरूप रूस में शिक्षा, विज्ञान और सांस्कृतिक क्षेत्रों में बहुत प्रगति हुई।

4. रूस की क्रांति के परिणाम किस प्रकार दूरगामी और युगांतरकारी थे?

उ०– रूस की क्रांति एक युगांतरकारी घटना थी क्योंकि रूस की क्रांति ने यूरोप के राजनीतिक मानचित्र में आमूलचूल परिवर्तन करके एक नवीन विचारधारा को विकसित किया। इस क्रांति द्वारा समाजवाद को बढ़ावा देने से विश्व के अनेक देशों में मैत्री, एकता तथा भाईचारा पनपने से अंतर्राष्ट्रीयता का भाव जागृत हो गया तथा किसानों और श्रमिकों को सामंतों और पूँजीपतियों के शोषण से मुक्त करा दिया। अत: हम कह सकते है कि रूस की क्रांति के परिणाम दूरगामी और युगांतरकारी थे।

5. रूस की क्रांति के दो प्रमुख कारण क्या थे?

उ०– 1905 ई० की क्रांति की असफलता ने रूस की जनता को स्वतंत्रता पाने के लिए जागरूक बना दिया। रूस में जनाक्रोश भीतर ही भीतर धधक रहा था, जो 1917 ई० की क्रांति के रूप में अचानक आग का गोला बनकर फट गया। इस क्रांति के लिए दो प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

(i) जार की निरंकुशता– निकोलस द्वितीय ने पिछले जार शासकों से भी अधिक निरंकुशता दिखाई, अत: जनता ने उसकी निरंकुशता से बचने के लिए क्रांति का मार्ग चुन लिया।

(ii) जार की अयोग्यता– निकोलस द्वितीय में राजनीति और कूटनीति का अभाव था। रूस की जनता ने उसकी अयोग्यता और दैवी सिद्धांतों से सुरक्षा पाने के लिए क्रांति करना उचित समझा।

6. रूसी क्रांतिकारियों के कोई तीन उद्देश्य लिखिए।

उ०– रूसी क्रांतिकारियों के तीन उद्देश्य निम्न प्रकार हैं–

(i) रूसी क्रांतिकारी जनता को राजतंत्र और सामंतवाद के शोषण से मुक्त करना चाहते थे।

(ii) क्रांतिकारी रूस को निकोलस द्वितीय की साम्राज्यवादी नीतियों से मुक्ति दिलाकर वहाँ शांति स्थापित करना चाहते थे।

(iii) क्रांतिकारियों का लक्ष्य किसानों को भूमि का स्वामी बनाना था।

7. 1917 ई० की क्रांति के कारण रूस में कौन-कौन से तीन परिवर्तन हुए?

उ०– 1917 ई० की क्रांति के कारण रूस में हुए तीन परिवर्तन निम्नलिखित हैं–

(i) जार शासकों की निरंकुशता का अंत हो गया।

(ii) पूँजीवादी व्यवस्था का अंत और समाजवाद की स्थापना।

(iii) रूस की क्रांति ने किसानों और श्रमिकों को सामंतों और पूँजीपतियों के शोषण से मुक्त कर दिया।

8. रूस के झंडे का रंग कैसा है? इस पर बना हथौड़ा और हँसिया किसका प्रतीक है?

उ०– रूस की क्रांति के बाद सरकार ने राष्ट्रीय झंडे का रंग लाल कर दिया, जिस पर हथौड़ा और हँसिया बना हुआ है, लाल रंग क्रांति का प्रतीक है। हँसिया किसानों का तथा हथौड़ा श्रमिकों का प्रतीक है। इस प्रकार रूस का राष्ट्रीय झंडा समाजवादी सिद्धांतों, समानता और एकता का प्रतीक है।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. 1917 ई० की रूस की क्रांति के क्या कारण थे?

उ०– रूस में 1917 ई0 में हुई क्रांति के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) **जार की निरंकुशता–** निकोलस द्वितीय ने पिछले जार शासकों से भी अधिक निरंकुशता दिखाई, अत: जनता ने उसकी निरंकुशता से बचने के लिए क्रांति का मार्ग चुन लिया।

(ii) **जार की अयोग्यता–** निकोलस द्वितीय में राजनीति और कूटनीति का अभाव था। रूस की जनता ने उसकी अयोग्यता और दैवी सिद्धांतों से सुरक्षा पाने के लिए क्रांति करना उचित समझा।

(iii) **किसानों की दयनीय दशा–** रूस में अधिकतर लोग खेती कर जीवन-व्यापन कर रहे थे, किंतु उनकी दशा अत्यंत दयनीय थी। निर्धन किसान रोटी और कपड़े से भी वंचित थे। अत: कृषकों ने जार के विरुद्ध क्रांति का हल्ला बोल दिया।

(iv) **मजदूरों की हीन दशा–** रूस में मजदूरों को सर्वहारा वर्ग कहा जाता था। यह वर्ग निर्धनता, भुखमरी और असंतोष से जूझ रहा था, अत: दु:खों से बचने के लिए मजदूर वर्ग क्रांतिकारियों के साथ जुड़ गया।

(v) **खूनी रविवार की घटना–** रूस में 1905 ई० में घटी खूनी रविवार की जनसंहार की घटना ने रूस की क्रांति को जन्म देने में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

(vi) **दार्शनिकों का प्रभाव–** रूस में **कार्ल मार्क्स, टालस्टाय, तुर्गनेव** तथा **दोस्तोवस्की** आदि विचारकों तथा लेखकों ने समाजवाद का प्रचार और अराजकता का विरोध कर जनता में जागृति पैदा करके क्रांति की अग्नि को भड़काया।

(vii) **प्रथम विश्वयुद्ध–** रूस ने मित्र देशों के साथ प्रथम विश्वयुद्ध में सक्रिय भूमिका निभाई। उसके असंख्य सैनिक इस युद्ध में मारे गए तथा राष्ट्र को भारी क्षति उठानी पड़ी। इसीलिए रूस की जनता के साथ-साथ सैनिक भी क्रांति करने के लिए कटिबद्ध हो उठे।

(viii) **शोचनीय आर्थिक दशा–** रूस की जनता युद्धों में पराजय, खेती की खराब दशा, करों के भार तथा उद्योगों की असंतोषजनक दशा के कारण आर्थिक दृष्टि से टूट चुकी थी। जनता ने इन सभी समस्याओं का हल ढूँढ़ने के लिए क्रांति करना ठीक समझा।

2. रूस की क्रांति के परिणामों की व्याख्या कीजिए।

उ०– **रूस की क्रांति के परिणाम–** रूस की क्रांति 20 वीं शताब्दी के इतिहास की एक युगांतरकारी घटना थी। इस क्रांति ने पूँजीवाद को पतन के गर्त में धकेलकर रूस में वास्तविक समाजवाद की स्थापना की। इसीलिए कहा जाता है, "1917 ई० की रूस की क्रांति साम्यवादियों की अद्भुत संगठन-क्षमता का सफल प्रदर्शन थी।" रूस की क्रांति के प्रमुख परिणामों (प्रभावों) को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है–

(i) रूस की क्रांति ने रूस में शताब्दियों से चली आ रही जार शासकों की स्वेच्छाचारिता और निरंकुशता का अंत कर दिया।

(ii) रूस की क्रांति ने किसानों और श्रमिकों को सामंतों और पूँजीपतियों के शोषण से मुक्त कर दिया।

(iii) रूस की क्रांति ने रूस से पूँजीवादी व्यवस्था को जड़ से उखाड़कर समाजवाद के जनक **कार्ल मार्क्स** के सामाजिक सिद्धांतों को समाजवाद के रूप में प्रतिस्थापित कर दिया।

(iv) रूस के कर्णधारों ने क्रांति के बाद आर्थिक नियोजन को अपनाकर तथा आर्थिक विकास के नए-नए मार्ग खोलकर अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बना दिया।

(v) रूस की क्रांति के फलस्वरूप रूस में शिक्षा, विज्ञान और सांस्कृतिक क्षेत्रों में बहुत प्रगति हुई।

(vi) रूस की सरकार ने प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग जनहित और जनकल्याण के कार्यों में करना प्रारंभ कर दिया।

(vii) रूस सामाजिक, आर्थिक, औद्योगिक, शैक्षिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में प्रगति करते हुए 1932 ई० में **सोवियत संघ** के रूप में विश्वशक्ति बनकर उभर आया।

(viii) क्रांति के बाद वोल्शेविक दल ने 18 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के लोगों को मताधिकार दे दिया।

(ix) क्रांति के बाद सरकार ने राष्ट्रीय झंडे का रंग लाल कर दिया, जिस पर हँसिया तथा हथौड़ा बना था।

(x) हँसिया किसानों की सत्ता तथा हथौड़ा श्रमिकों की सत्ता का प्रतीक चिह्न बन गया।

(xi) रूस की क्रांति ने एशिया और अफ्रीका के शोषित लोगों में नई चेतना जगा दी, जिस कारण उन्होंने यूरोपीय उपनिवेशों से मुक्ति पाने के लिए संघर्ष छेड़ दिया।

(xii) रूसी क्रांति द्वारा समाजवाद को बढ़ावा देने से विश्व के अनेक देशों में मैत्री, एकता तथा भाईचारा पनपने से अंतर्राष्ट्रीयता का भाव जागृत हो गया।

रूस की क्रांति एक युगांतरकारी घटना थी क्योंकि, "रूस की क्रांति ने यूरोप के राजनीतिक मानचित्र में आमूलचूल परिवर्तन करके एक नवीन विचारधारा विकसित कर दी।" विश्वभर में लाल रंग का ध्वज क्रांति का प्रतीक ही बन गया।

3. रूस की क्रांति के परिणाम किस प्रकार और युगांतरकारी सिद्ध हुए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उततरीय प्रश्न संख्या-2 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई-1 (ग) : राष्ट्रवाद का विकास एवं विश्वयुद्ध

7 यूरोप में राष्ट्रवाद का विकास

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 51 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 51 व 52 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. राष्ट्रवाद से आपका क्या आशय है? यूरोप में राष्ट्रवाद के उदय के दो प्रमुख कारण लिखिए।

उ०– राष्ट्रवाद आंग्ल भाषा के **नेशनेलिटी** शब्द का हिंदी रूपांतरण है, जो जन्म तथा जाति का बोधक है। अत: राष्ट्रवाद राष्ट्रीयता की भावनात्मक एकता का सूचक है। राष्ट्रीयता का भाव ही एक भौगोलिक क्षेत्र में निवास करने वाले लोगों को राजनीतिक संगठन में बाँधता है। राष्ट्रीयता एक देश में रहने वाले लोगों को अपने राष्ट्र के प्रति वफादार बने रहने की प्रेरणा देती है। दूसरे शब्दों में, ''राष्ट्रवाद वह मनोवैज्ञानिक भाव है, जो व्यक्तिवाद को भुलाकर राष्ट्र के प्रति समर्पित होने की आस्था जागृत करता है।''

यूरोप में राष्ट्रवाद की प्रथम झलक फ्रांसीसी क्रांति के साथ ही दिखाई पड़ी। इस क्रांति ने यूरोप के लोगों में एक साझी विरासत का भाव जगाकर, उन्हें संघर्ष की कड़ी के साथ संबद्ध कर दिया। यूरोप में राष्ट्रवाद के उदय के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) यूरोप में पुनर्जागरण ने सामंतवाद को समाप्त कर लोगों को राजनीतिक एवं धार्मिक एकता का रस चखाकर, उन्हें राष्ट्रवाद के धागों से बाँध दिया।

(ii) यूरोप में धर्म-सुधार आंदोलनों ने मानवतावाद का भाव जगाकर समूचे यूरोपवासियों में राष्ट्रीयता का भाव जगा दिया।

2. ''इटली का एकीकरण सीढ़ीयाँ चढ़ता हुआ अपने लक्ष्य पर पहुँचा।'' कथन को स्पष्ट कीजिए।

उ०– 1848 ई० के पश्चात इटली के एकीकरण की समस्या उग्र रूप धारण कर चुकी थी। इटली के एकीकरण में मैजिनी, गैरीबाल्डी तथा काउंट काबूर ने महत्वपूर्ण भूमिका बनाई। मैजिनी ने इटली की स्वतंत्रता और एकता के लिए जीवनभर संघर्ष किया। 'युवा इटली' नामक संस्था का गठन करके नवयुवकों को इटली की स्वतंत्रता के लिए मर-मिटने को तैयार किया। गैरीबाल्डी ने मैजिनी के सहयोग से इटली में गणतंत्र की स्थापना और एकीकरण का प्रयास करता रहा तथा उसने 30 हजार स्वयंसेवकों की सेना बनाई। 1852 ई० में विक्टर इमैनुअल ने काउंट काबूर को प्रधानमंत्री बनाकर इटली के एकीकरण की बागडोर उसके हाथों में सौंप दी। उसने कूटनीति का जाल फैलाकर इटली के एकीकरण में बाधक आस्ट्रिया को बाहर का रास्ता दिखाया। 2 जून, 1871 ई० को इटली के एकीकरण की समस्या का हल हुआ। इस प्रकार मैजिनी, गैरीबाल्डी तथा काउंट काबूर के निरंतर प्रयासों से इटली का एकीकरण धीरे-धीरे सीढ़ीयाँ चढ़ता हुआ अपने लक्ष्य पर पहुँचा।

3. इटली के एकीकरण में मैजिनी की भूमिका की समीक्षा कीजिए।

उ०– **मैजिनी** इटली का राष्ट्रीय सपूत था। इटली की दुर्दशा ने उसके अंत:करण को झकझोर दिया। अत: वह कार्बोनेरी संस्था के माध्यम से स्वतंत्रता संग्राम से जैसे ही जुड़ा, 1830 ई० में जेल में ठूँस दिया गया। उसने 'युवा इटली' नामक संस्था का गठन करके, नवयुवकों को इटली की स्वतंत्रता के लिए मर मिटने को तैयार कर लिया। मैजिनी विलक्षण प्रतिभा, सूझ-बूझ, लेखन शैली का स्वामी और प्रखर प्रवक्ता था। उसका मत था कि आस्ट्रिया को इटली से खदेड़कर ही एकीकरण का लक्ष्य पाया जा सकता है। उसने जीवनभर इटली की एकता के लिए संघर्ष किया। उसका कहना था, "जनता अपनी प्रभुसत्ता गणतंत्र के माध्यम से ही पूर्णरूपेण व्यक्त कर सकती है।" उसके प्रेरणा देने वाले ये शब्द इटली के जनमानस में क्रांति की ज्वाला भड़काने में सफल सिद्ध हुए।

4. आस्ट्रिया-प्रशा युद्ध के लिए कौन-कौन से कारण उत्तरदायी थे?

उत्तर- सन् 1866 ई० में प्रशा और इटली के मध्य संधि हुई कि इटली युद्ध में प्रशा का साथ देगा जिसके बदले बिस्मार्क ने युद्ध में सफल होने के पश्चात इटली को वेनेशिया देने का वादा किया। इस संधि से आस्ट्रिया बड़ा चिंतित हुआ। अत: आस्ट्रिया और प्रशा के मध्य युद्ध की तैयारी तीव्र गति से शुरू हो गई।

5. जर्मनी के एकीकरण में बिस्मार्क के योगदान पर प्रकाश डालिए।

उत्तर- विस्मार्क जर्मनी के महान सेनानियों, कूटनीतिज्ञों और निर्माणकर्ताओं में अग्रणी था। उसने उच्चकोटि के सैन्यबल, एकता, राष्ट्रवाद और कूटनीतिक चालों से जर्मनी का एकीकरण करके उसे नवजीवन प्रदान किया। जर्मनी की भावी पीढ़ियाँ उसके इस महान कार्य के लिए युगों-युगों तक उसे श्रद्धा-सुमन चढ़ाती रहेंगी। उसे जर्मनी के एकीकरण का कर्णधार और यूरोपीय राजनीति का सूत्रधार कहा गया है।

1858 ई० में प्रशा के सम्राट के अस्वस्थ हो जाने पर संसद ने शासन का भार उसके भाई **विलियम** को सौंप दिया। विलियम ने **विस्मार्क** को प्रशा का चांसलर (प्रधानमंत्री) नियुक्त कर दिया। अब जर्मनी के एकीकरण का अधिकतम भार **विस्मार्क** के कंधों पर आ गया। विस्मार्क ने सैन्यशक्ति को बढ़ाकर जर्मनी के एकीकरण की तैयारी जोर-शोर के साथ प्रारंभ कर दी। वह एक साहसी और कूटनीतिक व्यक्ति था, अत: उसने अंतर्राष्ट्रीय परिवेश को अपने अनुकूल ढालकर इस महान कार्य के लिए प्रयत्न प्रारंभ कर दिए। उसके दृढ़ निश्चय और कठोर नीति की झलक उसके इन शब्दों से मिल जाती है– "भाषणों और बहुमत के आधार पर आज के सभी प्रश्न नहीं सुलझ सकते, पर वह रक्त और लोहे के आधार पर सुलझ सकते हैं।" विस्मार्क ने 'रक्त और लोहे' की नीति का अनुपालन करते हुए तीन युद्धों डेनमार्क से युद्ध, आस्ट्रिया से युद्ध तथा फ्रांस-प्रशा युद्ध के माध्यम से अपने लक्ष्य को प्राप्त किया।

6. राष्ट्रवाद के यूरोप पर तीन प्रभाव स्पष्ट कीजिए।

उ०– **यूरोप में राष्ट्रवाद का प्रभाव (परिणाम)–** यूरोप में उपजा राष्ट्रवाद न केवल यूरोप की वरन् विश्व की राजनीति को प्रभावित करने में सफल रहा। यूरोप में इसके मुख्य रूप से निम्न प्रभाव परिलक्षित होते हैं–

(i) राष्ट्रवाद ने यूरोपवासियों में राष्ट्र के प्रति श्रद्धा और आस्था को बढ़ाया।

(ii) राष्ट्रवाद ने जर्मनी में नाजीवाद का बीज बो दिया, जो बाद में द्वितीय विश्वयुद्ध का कारण बन गया।

(iii) राष्ट्रवाद की चाशनी में पगे यूरोपीय राष्ट्रों ने अपनी भाषा, संस्कृति तथा परंपराओं को एक-दूसरे से श्रेष्ठ समझने का मोह पाल लिया।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. यूरोपियन राष्ट्रवाद से आप क्या समझते हैं? यूरोप में इसके उदय होने के चार कारण लिखिए।

उ०– राष्ट्रवाद वो मनोवैज्ञानिक भाव है, जो व्यक्तिवाद को भुलाकर राष्ट्र के प्रति समर्पित होने की आस्था जाग्रत करता है।

यूरोप में राष्ट्रवाद एक ऐसे राजनीतिक सिद्धांत के रूप में उभरा जिसका इतिहास रचने में महत्वपूर्ण योगदान है। राष्ट्रवाद कई चरणों से गुजर चुका है। 19वीं शताब्दी के यूरोप में इसने कई छोटी-छोटी रियासतों के एकीकरण से वृहत्तर राष्ट्र की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। जर्मनी और इटली का गठन, एकीकरण एवं सुदृढीकरण इसी प्रक्रिया से हुआ था। राष्ट्रवाद बड़े-बड़े साम्राज्यों के उत्थान एवं पतन के लिए उत्तरदायी रहा है। यूरोप में 20वीं शताब्दी के आरंभ में ऑस्ट्रिया, हंगरी और रूसी साम्राज्य तथा अफ्रीका में ब्रिटेन, फ्रांस, हॉलैंड और पुर्तगाल साम्राज्य के विघटन के मूल में राष्ट्रवाद ही था। भारत तथा

अन्य उपनिवेशों के औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्र होने के लिए किये गये संघर्ष भी राष्ट्रवादी संघर्ष थे। ये संघर्ष विदेशी नियंत्रण से स्वतंत्र राष्ट्र स्थापित करने की आकांक्षा से प्रेरित थे।

उन्नीसवीं सदी के दौरान राष्ट्रवाद एक ऐसी ताकत बनकर उभरा जिसने यूरोप के राजनीतिक एवं मानसिक जगत में भारी परिवर्तन ला दिया। इस समय यूरोप में ऐसी गतिविधियाँ एवं विचार विकसित हो रहे थे जिनमें स्पष्ट रूप से परिभाषित क्षेत्र पर प्रभुसत्ता एक केंद्रीय शक्ति की थी जहाँ लोगों में एक साझा पहचान का भाव एवं साझा इतिहास या विरासत की भावना थी। साझेपन की यह भावना अनन्त काल से नहीं थी, यह संघर्षों एवं नेताओं तथा आम लोंगो की सरगर्मियों से निर्मित हुई थी।

यूरोप में राष्ट्रीयता (राष्ट्रवाद) के उदय के कारण– यूरोप में राष्ट्रवाद की प्रथम झलक फ्रांसीसी क्रांति के साथ ही दिखाई पड़ी। इस क्रांति ने यूरोप के लोगों में एक साझी विरासत का भाव जगाकर, उन्हें संघर्ष की कड़ी के साथ संबद्ध कर दिया। यूरोप में राष्ट्रवाद के उदय के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) यूरोप में पुनर्जागरण ने सामंतवाद को समाप्त कर लोगों को राजनीतिक एवं धार्मिक एकता का रस चखाकर, उन्हें राष्ट्रवाद के धागों से बाँध दिया।

(ii) यूरोप में धर्म–सुधार आंदोलनों ने मानवतावाद का भाव जगाकर समूचे यूरोपवासियों में राष्ट्रीयता का भाव जगा दिया।

(iii) भौगोलिक खोजों और व्यावसायिक संबंधों ने देशवासियों को राष्ट्रीयता की डोर से बाँधकर एक बना दिया।

(iv) फ्रांस की क्रांति ने यूरोप में राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक क्रांति का बीजारोपण करके तथा पुरातन व्यवस्था को ध्वस्त करके राष्ट्रीयता की भावना को विकसित कर दिया।

2. इटली के एकीकरण में मैजिनी, काबूर और गैरीबाल्डी के योगदान का वर्णन कीजिए।

उ०– 1848 ई० के पश्चात इटली के एकीकरण की समस्या उग्र रूप धारण कर चुकी थी। इन सबको सक्रिय बनाने में इटली की एकता की आत्मिक शक्ति मैजिनी, इटली के सशक्त बल गैरीबाल्डी तथा इटली की कूटनीति के केंद्र काउंट काबूर ने प्रमुख भूमिका निभाई। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि यही त्रिमूर्ति इटली के एकीकरण का शरीर, आत्मा और मस्तिष्क बनकर प्रकट हुई।

इटली के एकीकरण के लिए प्रयास निरंतर चलते रहे। कहावत है, "इटली का एकीकरण सीढ़ियाँ चढ़ता हुआ अपने लक्ष्य पर पहुँचा।" **मैजिनी, गैरीबाल्डी** तथा **काउंट काबूर** के प्रयासों से उसे लक्षित सफलता प्राप्त हो सकी। आइए उनके प्रयासों और कार्यों पर दृष्टिपात करते हैं–

(i) **मैजिनी** इटली का राष्ट्रीय सपूत था। इटली की दुर्दशा ने उसके अंत:करण को झकझोर दिया। अत: वह कार्बोनेरी संस्था के माध्यम से स्वतंत्रता संग्राम से जैसे ही जुड़ा, 1830 ई० में जेल में ठूँस दिया गया। उसने 'युवा इटली' नामक संस्था का गठन करके, नवयुवकों को इटली की स्वतंत्रता के लिए मर मिटने को तैयार कर लिया। मैजिनी विलक्षण प्रतिभा, सूझ–बूझ, लेखन शैली का स्वामी और प्रखर प्रवक्ता था। उसका मत था कि आस्ट्रिया को इटली से खदेड़कर ही एकीकरण का लक्ष्य पाया जा सकता है। उसने जीवनभर इटली की एकता के लिए संघर्ष किया। उसका कहना था, "जनता अपनी प्रभुसत्ता गणतंत्र के माध्यम से ही पूर्णरूपेण व्यक्त कर सकती है।" उसके प्रेरणा देने वाले ये शब्द इटली के जनमानस में क्रांति की ज्वाला भड़काने में सफल सिद्ध हुए।

(ii) **गैरीबाल्डी** ने 1833 ई० में मैजिनी के सहयोग से इटली में गणतंत्र की स्थापना का प्रयास किया, परंतु उसे बंदी बना लिया गया। 'युवा इटली' के सदस्य के रूप में वह विदेशों में इटली के एकीकरण का प्रयास करने में जुटा रहा। उसने इटली लौटकर लगभग 30 हजार स्वयंसेवकों की सेना बनाई। मैजिनी के रोम चले जाने पर गणराज्य की रक्षा का भार गैरीबाल्डी को सौंप दिया गया, परंतु उसे पराजित होकर अमेरिका जाना पड़ा। अमेरिका से लौटने पर उसका संपर्क काउंट काबूर से हुआ। 1860 ई० में उसने सिसली को स्वतंत्र कराकर नेपल्स पर अधिकार जमा लिया। उसने अपने समस्त विजित क्षेत्रों को **विक्टर इमैनुअल** को सौंप दिया तथा वह अपने घर लौटकर खेती करने में जुट गया।

(iii) **काउंट काबूर** 1848 ई० में पीडमांड की विधानसभा का सदस्य चुना गया। वह देश की स्वतंत्रता और एकीकरण के लिए निरंतर जुटा रहा। 1852 ई० में विक्टर इमैनुअल ने काउंट काबूर को प्रधानमंत्री बनाकर इटली के एकीकरण की बागडोर उसके हाथों में सौंप दी। "काउंट काबूर ने इटली के एकीकरण के लिए राजनीतिक दाँव–पेंच और कूटनीति का सहारा लिया, जो उसकी सफलता का आधार बने।" उसने इटली की समस्या को अंतर्राष्ट्रीय समस्या बनाकर समूचे विश्व का सहयोग और सहानुभूति जुटा ली। उसने इटली की सैन्यशक्ति को बढ़ाया तथा आस्ट्रिया को देश से बाहर

खदेड़ने में फ्रांस का सहयोग प्राप्त किया। उसने कूटनीति का जाल फैलाकर इटली के एकीकरण में बाधक आस्ट्रिया को बाहर का रास्ता दिखा दिया। 7 नवंबर, 1861 ई० में गैरीबाल्डी ने यद्यपि विक्टर इमैनुअल को इटली का राजा घोषित कर दिया; परंतु वेनेशिया और रोम अभी इटली के साम्राज्य से बाहर थे। यह कार्य काबूर ने पूरा किया। उसने 1861 ई० में वेनेशिया और रोम को छोड़कर देशभर के प्रतिनिधियों का सम्मेलन बुलाकर संसद का अधिवेशन आयोजित किया। संसद ने विक्टर इमैनुअल को इटली का सम्राट घोषित कर दिया। इस प्रकार इटली के एकीकरण का प्रश्न 2 जून, 1871 ई० को सदैव-सदैव के लिए हल हो गया। वास्तव में इटली को नवजीवन देने का श्रेय काउंट काबूर को ही दिया जाना चाहिए। निष्कर्ष रूप में यही कहना उचित है कि **मैजिनी, गैरीबाल्डी** और **काउंट काबूर** के प्रयासों ने इटली के मृतप्राय जीवन में एकीकरण की संजीवनी प्रवाहित की। इस कार्य के लिए इतिहासकारों ने काबूर को अधिक महत्व दिया है, क्योंकि उसके प्रयासों के बिना इटली का एकीकरण दीर्घकाल के लिए टल सकता था।

3. जर्मनी का एकीकरण किस प्रकार हुआ? इसमें विस्मार्क ने क्या भूमिका निभाई?

उ०– जर्मनी का एकीकरण– यूरोप में राष्ट्रवाद की द्वितीय परिणति जर्मनी के एकीकरण के रूप में दृष्टिगोचर हुई। नेपोलियन बोनापार्ट के 1815 ई० में वाटर लू में पराजित हो जाने के बाद वियना कांग्रेस ने जर्मनी को फिर से 39 राज्यों में खंड-खंड कर दिया। इन 39 राज्यों के परिसंघ का अध्यक्ष आस्ट्रिया को बनाया गया। जर्मनी के राष्ट्रवादी विचार उसके इस निर्णय से असंतुष्ट हो उठे, अत: जर्मनी में राष्ट्रीय आंदोलन उठ खड़े हुए, जिनका केंद्र और प्रेरणास्रोत जेनेवा विश्वविद्यालय बन गया। "जर्मनी के राष्ट्रवादी क्रांतिकारियों और विद्यार्थियों ने मिलकर **वर्शेनशेप्ट** नामक संगठन बनाकर जर्मनी के एकीकरण के लिए संघर्ष छेड़ दिया।" प्रशा के सम्राट **विलियम प्रथम** ने वर्शेनशेप्ट संगठन को असंवैधानिक घोषित करके प्रेस पर प्रतिबंध लगा दिया। 1848 ई० में जर्मनी के राष्ट्रवादियों ने संविधान का निर्माण करने के लिए सभा बुलाई और प्रशा के शासक **फ्रेडरिक विलियम चतुर्थ** को संपूर्ण जर्मनी का सम्राट चुन दिया; परंतु उसने इस आमंत्रण को स्वीकार नहीं किया। परिणामस्वरूप जर्मनी का एकीकरण खटाई में पड़ गया। बाद में जर्मनी के एकीकरण के लिए निम्नवत् संघर्ष करने पड़े–

1858 ई० में प्रशा के सम्राट के अस्वस्थ हो जाने पर संसद ने शासन का भार उसके भाई **विलियम** को सौंप दिया। विलियम ने **विस्मार्क** को प्रशा का चांसलर (प्रधानमंत्री) नियुक्त कर दिया। अब जर्मनी के एकीकरण का अधिकतम भार **विस्मार्क** के कंधों पर आ गया। विस्मार्क ने सैन्यशक्ति को बढ़ाकर जर्मनी के एकीकरण की तैयारी जोर-शोर के साथ प्रारंभ कर दी। वह एक साहसी और कूटनीतिक व्यक्ति था, अत: उसने अंतर्राष्ट्रीय परिवेश को अपने अनुकूल ढालकर इस महान कार्य के लिए प्रयत्न प्रारंभ कर दिए। उसके दृढ़ निश्चय और कठोर नीति की झलक उसके इन शब्दों से मिल जाती है– "भाषणों और बहुमत के आधार पर आज के सभी प्रश्न नहीं सुलझ सकते, पर वह रक्त और लोहे के आधार पर सुलझ सकते हैं।" विस्मार्क ने 'रक्त और लोहे' की नीति का अनुपालन करते हुए निम्न तीन युद्धों के माध्यम से अपने लक्ष्य को प्राप्त किया।

(i) डेनमार्क से युद्ध– डेनमार्क में स्थित दोनों डचियों को डेनमार्क के राज्य में नहीं मिलाने का समझौता हुआ था। दोनों डचियों में बसी जर्मन जातियाँ इन्हें जर्मनी में मिलाने की पक्षधर थीं। डेनमार्क के शासक की मृत्यु हो जाने पर नए शासक ने **श्लोसविग डची** को डेनमार्क में मिलाने का प्रयास किया और विरोध करने वालों को जेलों में ठूँस दिया। जर्मन जनता इसके विरोध में विद्रोह कर उठी। अत: दोनों डचियों पर जर्मनी की राज्य परिषद् का अधिकार हो गया। विस्मार्क इन दोनों डचियों को प्रशा राज्य में मिलाना चाहता था, अत: उसने आस्ट्रिया के साथ कूटनीतिक संधि करके सेना के बल पर दोनों डचियों को छीन लेने का मन बना लिया। उसने डेनमार्क से युद्ध छेड़ दिया।

यूरोप का कोई देश डेनमार्क का सहयोग नहीं कर सका। डेनमार्क का शासक इस युद्ध में विस्मार्क से हार गया और उसने 30 अक्टूबर, 1864 ई० में प्रशा और आस्ट्रिया से संधि करके दोनों डचियों को प्रशा और आस्ट्रिया को सौंप दिया। बाद में इन दोनों देशों में परस्पर युद्ध छिड़ गया। विस्मार्क आस्ट्रिया के साथ युद्ध करने का सही अवसर खोजने में लग गया।

(ii) आस्ट्रिया से युद्ध– विस्मार्क ने कूटनीति से फ्रांस को तटस्थ बनाकर तथा **सार्डिनिया** को अपने पक्ष में करके 1866 ई० में आस्ट्रिया के साथ युद्ध छेड़ दिया। 7 सप्ताह तक चला यह युद्ध '7 सप्ताह का युद्ध' कहा जाता है। इस युद्ध में आस्ट्रिया के विजयी होने की संभावना देख विस्मार्क ने प्रशा तथा इटली के रूप में दो मोर्चे खोल दिए। 23 अगस्त को विस्मार्क ने आस्ट्रिया से **प्राग की संधि** करके राज्यसंघ का निर्माण करके जर्मनी के एकीकरण की दूसरी सीढ़ी पार कर ली।

(iii) फ्रांस-प्रशा युद्ध– जर्मनी के एकीकरण के मार्ग की सबसे बड़ी बाधा फ्रांस बना हुआ था। अत: विस्मार्क ने आस्ट्रिया को पटखनी देकर अपनी सेनाओं का मुख फ्रांस की ओर मोड़ दिया। नेपोलियन तृतीय फ्रांस की सीमाओं का विस्तार राइन नदी तक करना चाह रहा था। अमेरिका गृहयुद्ध में उलझा था, विस्मार्क ने चतुराई से इटली को अपने पक्ष में कर लिया, जबकि स्पेन का सिंहासन रिक्त पड़ा था। इन्हीं समस्त परिस्थितियों का लाभ उठाने के लिए विस्मार्क ने 15 जुलाई, 1870 ई० को फ्रांस के विरुद्ध मोर्चा खोल दिया। इस समय जर्मनी की शक्तिशाली सेना का साथ दक्षिण की चारों रियासतें दे रही थीं। 1 सितंबर, 1870 ई० को **सेडान** के मैदान में फ्रांस की सेनाएँ बुरी तरह पराजित हो गईं। नेपोलियन तृतीय को 84000 सैनिकों के साथ समर्पण करना पड़ा। इस प्रकार विस्मार्क ने 18 जनवरी, 1871 ई० में वर्साय के राजमहल में जर्मन के सभी शासकों और सेनानायकों का दरबार आयोजित किया और राजा **विलियम** को जर्मनी का सम्राट घोषित कर 28 जनवरी, 1871 ई० को जर्मनी के एकीकरण का सपना पूरा कर दिया।

विस्मार्क जर्मनी के महान सेनानियों, कूटनीतिज्ञों और निर्माणकर्ताओं में अग्रणी था। उसने उच्चकोटि के सैन्यबल, एकता, राष्ट्रवाद और कूटनीतिक चालों से जर्मनी का एकीकरण करके उसे नवजीवन प्रदान किया। जर्मनी की भावी पीढ़ियाँ उसके इस महान कार्य के लिए युगों-युगों तक उसे श्रद्धा-सुमन चढ़ाती रहेंगी। उसे जर्मनी के एकीकरण का कर्णधार और यूरोपीय राजनीति का सूत्रधार कहा गया है।

4. यूरोप में राष्ट्रवाद के पड़ने वाले प्रभावों की समीक्षा कीजिए।

उ०– **यूरोप में राष्ट्रवाद का प्रभाव (परिणाम)–** यूरोप में उपजा राष्ट्रवाद न केवल यूरोप की वरन् विश्व की राजनीति को प्रभावित करने में सफल रहा। यूरोप में इसके मुख्य रूप से निम्न प्रभाव परिलक्षित होते हैं–

(i) राष्ट्रवाद ने यूरोपवासियों में राष्ट्र के प्रति श्रद्धा और आस्था को बढ़ाया।

(ii) राष्ट्रवाद ने जर्मनी में नाजीवाद का बीज बो दिया, जो बाद में द्वितीय विश्वयुद्ध का कारण बन गया।

(iii) राष्ट्रवाद की चाशनी में पगे यूरोपीय राष्ट्रों ने अपनी भाषा, संस्कृति तथा परंपराओं को एक-दूसरे से श्रेष्ठ समझने का मोह पाल लिया।

(iv) राष्ट्रीयता के रंग में रंगे यूरोपीय राष्ट्रों ने दूसरे राष्ट्रों की उपेक्षा करनी प्रारंभ कर दी।

(v) राष्ट्रवाद से प्रेरित राष्ट्र केवल स्वयं के विकास और समृद्धि बढ़ाने में जुट गए।

(vi) राष्ट्रवाद ने यूरोपीय विस्तारवादी शक्तियों को साम्राज्यवाद का विस्तार करने तथा उपनिवेश स्थापित करने को प्रेरित कर दिया।

(vii) साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद ने पूँजीवाद को जन्म देकर अन्याय और शोषण के द्वार खोल दिए।

(viii) यूरोप के देश सैन्य गुटबंदियाँ करके भारी मात्रा में अस्त्र-शस्त्र एकत्र करने में जुट गए।

(ix) राष्ट्रवाद के कारण यूरोप का राजनीतिक परिवेश तनावपूर्ण हो गया, जो बाद में प्रथम विश्वयुद्ध के महाविनाश के रूप में उद्गारित हुआ।

वास्तव में यूरोप में राष्ट्रवाद ने उग्र राष्ट्रवाद को जन्म देकर समूचे विश्व को दो महायुद्धों की अग्नि में झोंक डाला। राष्ट्रवाद ने सभी यूरोपीय शक्तियों में विश्व के निर्धन तथा दुर्बल राष्ट्रों पर अधिकार जमाने की स्पर्द्धा को बढ़ा दिया। इसी ने देशों को उपनिवेशों की बंदरबाँट के लिए उकसाया।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

8 प्रथम विश्वयुद्ध– कारण एवं परिणाम

<u>अभ्यास</u>

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 58 व 59 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 59 व 60 का अवलोकन कीजिए।

❖ लघुउत्तरीय प्रश्न

1. प्रथम विश्वयुद्ध के लिए उत्तरदायी तीन कारण स्पष्ट कीजिए।

उ०– प्रथम विश्वयुद्ध को जन्म देने के लिए उत्तरदायी तीन कारण निम्नलिखित थे–

(i) **उग्र राष्ट्रवाद–** यूरोप में उपजा राष्ट्रवाद जैसे ही उग्र-राष्ट्रवाद बना, समूचे यूरोप को उसने तनाव और संघर्ष के वातावरण में लाकर खड़ा कर दिया। विभिन्न जातियों, धर्मों एवं संस्कृतियों ने उग्र राष्ट्रवाद का चोला पहनकर प्रथम विश्वयुद्ध का वरण कर लिया।

(ii) **गुटबंदी–** यूरोप इस समय त्रिगुट तथा त्रिराष्ट्रीय मैत्री गुट के रूप में दो विरोधी खेमों में बँट चुका था। इन गुटों में ईर्ष्या, वैर-भाव, घृणा और अविश्वास इतना बढ़ गया था कि अंत में उसने युद्ध का रूप ही धारण कर लिया।

(iii) **सैनिक संगठन–** इस समय यूरोप का प्रत्येक राष्ट्र सैन्य संधियों तथा अस्त्र-शस्त्रो का ढ़ेर एकत्र करने में लगा था। युद्धपोत के निर्माण तथा अस्त्र-शस्त्र एकत्र करने की प्रतिस्पर्द्धाओं ने प्रथम विश्वयुद्ध के लिए अनुकूल वातवरण उत्पन्न कर दिया।

2. प्रथम विश्वयुद्ध के क्या प्रभाव हुए? किहीं तीन का संदर्भ दीजिए।

उ०– प्रथम विश्वयुद्ध बीसवीं शताब्दी के इतिहास की एक भयंकर तथा उल्लेखनीय घटना थी। इस भीषण और विनाशकारी युद्ध में 36 देशों के लगभग 6 करोड़ 50 लाख सैनिक-असैनिक लड़े। प्रथम विश्वयुद्ध के तीन प्रभावों को निम्न बिंदुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है–

(i) **जन-धन का विनाश–** प्रथम विश्वयुद्ध में 1 करोड़ 50 लाख लोग मारे गए तथा 2 करोड़ से अधिक घायल हुए। 70 लाख व्यक्ति ऐसे थे, जो अपंग हो चुके थे। इस युद्ध में 1 खरब तथा 67 अरब डॉलर पानी की तरह बह गए। लगभग 12 अरब डालर की संपत्ति नष्ट हो गई।

(ii) **आर्थिक मंदी–** प्रथम विश्वयुद्ध में अपार धन व्यय होने के कारण अनेक देशों को अपनी मुद्राओं का अवमूल्यन करना पड़ा, जिससे समूचा विश्व भयंकर आर्थिक मंदी की चपेट में आ गया। इससे व्यापार और उद्योग बंद हो गए और बेरोजगारी फैल गई।

(iii) **नए राज्यों की स्थापना–** प्रथम विश्वयुद्ध के उपरांत पेरिस शांति सम्मेलन के निर्णय के अनुसार यूरोप में 8 नए राज्य स्थापित किए गए। सर्बिया, यूगोस्लाविया के नाम से एक विशाल राज्य के रूप में स्थापित हो गया।

3. प्रथम विश्वयुद्ध में अमेरिका कब और क्यों शामिल हुआ?

उ०– प्रथम विश्वयुद्ध में अमेरिका 6 अप्रैल, 1917 ई० को शामिल हुआ। अमेरिका का प्रथम विश्वयुद्ध में शामिल होने का मुख्य उद्‌देश्य मित्र राष्ट्रों के संसाधनों और शक्ति को बढ़ाकर जर्मनी को पराजित करना था।

4. वर्साय की संधि की तीन प्रमुख व्यवस्थाएँ बताइए।

उ०– प्रथम विश्वयुद्ध में हुए विनाश के लिए मित्र-राष्ट्रों ने जर्मनी को उत्तरदायी ठहराया। अत: 28 जून, 1919 ई० में जर्मनी और मित्र-राष्ट्रों के मध्य वर्साय की संधि हुई। इस संधि की तीन तीन प्रमुख व्यवस्थाएँ निम्नलिखित हैं-

(i) जर्मनी की इच्छाओं का सम्मान न करते हुए अल्सास लारेन क्षेत्र फ्रांस को दे दिया गया।

(ii) जर्मनी से युद्धपूर्व के अधिकृत क्षेत्रों को उससे छीन लिया गया।

(iii) जर्मनी को मात्र 1 लाख सैनिक रखने का अधिकार दिया गया। वायुयान और पनडुब्बियाँ रखना उसके लिए प्रतिबंधित कर दिया गया।

5. प्रथम विश्वयुद्ध के बाद स्थायी शांति स्थापित करने के लिए क्या प्रयास किए गए? चौदह सूत्रीय सुझाव किसने दिए?

उ०– प्रथम विश्वयुद्ध के बाद स्थायी शांति स्थापित करने के लिए मित्र राष्ट्रों ने फ्रांस की राजधानी पेरिस नगर में 18 जनवरी, 1919 ई० को एक शांति सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस शांति सममेलन में पराजित राष्ट्रों और रूस को नहीं बुलाया गया तथा उन पर 6 संधियाँ थोपी गईं, जिसमें एक वर्साय की संधि भी थी। पेरिस शांति सम्मेलन में अमेरिका के राष्ट्रपति बुडरो विल्सन ने एक चौदह सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया, जिसके आधार पर विश्व शांति की स्थापना करने वाली एक महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय संस्था लीग ऑफ नेशन्स की स्थापना की गई।

6. प्रथम विश्वयुद्ध में जर्मनी की पराजय के तीन प्रमुख कारण लिखिए।

उ०– प्रथम विश्वयुद्ध में जर्मनी की पराजय के तीन प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

(i) लंबे समय तक मित्र राष्ट्रों के साथ उलझे रहने के कारण जर्मनी के पास संसाधनों का अभाव हो गया था, जिससे उसे पराजय का मुख देखना पड़ा।

(ii) जर्मनी की फ्रांस और रूस को दो माह में धूल चटाने की योजना थी, परंतु उसकी इस योजना के असफल होने से उसे पराजय की ओर बढ़ा दिया।

(iii) अमेरिका ने धन-जन ओर अस्त्र-शस्त्रों से मित्र राष्ट्रों का सहयोग करके जर्मनी की पराजय के लिए जाल बुन दिया।

7. लीग ऑफ नेशन्स की असफलता के तीन प्रमुख कारण स्पष्ट कीजिए।

उ०– प्रथम विश्वयुद्ध के बाद अंतर्राष्ट्रीय शांति के लिए लीग ऑफ नेशन्स नामक संगठन की स्थापना की गई, जो अपने उद्देश्यों को पूरा करने में असफल रहा।

(i) संयुक्त राज्य अमेरिका, जो लीग ऑफ नेशन्स का जन्मदाता था, इसका सदस्य नहीं। इस कारण इसके प्रति लोगों की आस्था कम हो गई।

(ii) लीग ऑफ नेशन्स के शक्तिशाली सदस्यों इंग्लैंड और फ्रांस ने अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए लीग के नियमों का पालन नहीं किया।

(iii) लीग ऑफ नेशन्स के पास सैनिक शक्ति का अभाव था, अत: यह किसी भी राष्ट्र की मनमानी रोकने मे असफल रहा।

8. लीग ऑफ नेशन्स के तीन महत्व बताइए।

उ०– लीग ऑफ नेशन्स के तीन महत्व निम्नलिखित हैं–

(i) लीग ऑफ नेशन्स ने अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के विचार को उन्नत किया।

(ii) अल्पसंख्यकों के हितों को संरक्षण देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

(iii) लीग ऑफ नेशन्स की नींव पर संयुक्त राष्ट्र संघ जैसी प्रभावी संस्था की आधारशिला रखी गई।

9. प्रथम विश्वयुद्ध कब प्रारंभ हुआ और कब समाप्त हो गया? उसकी ऐसी दो विशेषताओं का उल्लेख कीजिए, जो पिछले युद्धों से भिन्न हों।

उ०– प्रथम विश्वयुद्ध 28 जुलाई, 1914 से प्रारंभ हुआ और 11 नवम्बर, 1918 ई० को जर्मनी की पराजय के साथ समाप्त हुआ। प्रथम विश्व युद्ध की दो विशेषताएँ हैं–

(i) प्रथम विश्वयुद्ध एक छोटी सी घटना से प्रारंभ होकर महाविनाशक युद्ध बन गया।

(ii) इस युद्ध में सैनिकों के साथ-साथ गैर-सैनिक भी लड़े तथा इस युद्ध में वायुयान, टैंक, पनडुब्बियों तथा यू बोटों का प्रयोग खुलकर किया गया।

10. लीग ऑफ नेशन्स की स्थापना कब और कहाँ की गई? इसके दो मुख्य उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।

उ०– लीग ऑफ नेशन्स की स्थापना 10 जनवरी, 1920 ई० में स्विट्जरलैंड देश के जेनेवा नगर में हुई। इसके दो प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

(i) अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से शांति और सुरक्षा को प्रोत्साहन देना।

(ii) विश्व में नि:शस्त्रीकरण के लिए प्रयास करना।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. प्रथम विश्वयुद्ध के लिए उत्तरदायी कारणों की समीक्षा कीजिए।

उ०– **प्रथम विश्वयुद्ध के कारण–** प्रथम विश्वयुद्ध को जन्म देने के लिए उत्तरदायी कारण निम्नलिखित थे–

(i) उग्र राष्ट्रवाद– यूरोप में उपजा राष्ट्रवाद जैसे ही उग्र-राष्ट्रवाद बना, समूचे यूरोप को उसने तनाव और संघर्ष के वातावरण में लाकर खड़ा कर दिया। विभिन्न जातियों, धर्मों एवं संस्कृतियों ने उग्र राष्ट्रवाद का चोला पहनकर प्रथम विश्वयुद्ध का वरण कर लिया।

(ii) गुटबंदी– यूरोप इस समय त्रिगुट तथा त्रिराष्ट्रीय मैत्री गुट के रूप में दो विरोधी खेमों में बँट चुका था। इन गुटों में ईर्ष्या, बैर-भाव, घृणा और अविश्वास इतना बढ़ गया था कि अंत में उसने युद्ध का रूप ही धारण कर लिया।?

(iii) सैनिक संगठन– इस समय यूरोप का प्रत्येक राष्ट्र सैन्य संधियों तथा अस्त्र-शस्त्रों का ढेर एकत्र करने में लगा था। युद्धपोतों के निर्माण तथा अस्त्र-शस्त्र एकत्र करने की प्रतिस्पर्द्धाओं ने प्रथम विश्वयुद्ध के लिए अनुकूल वातावरण उत्पन्न कर दिया।

(iv) साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद– इस समय यूरोपीय विस्तारवादी शक्तियाँ एशिया तथा अफ्रीका में अपने साम्राज्य को बढ़ाने तथा नए-नए उपनिवेश स्थापित करने में लगी थीं। उपनिवेशवाद की इसी बंदरबाँट में परस्पर स्वार्थ टकराने के कारण प्रथम विश्वयुद्ध का विस्फोट हो गया।

(v) जर्मनी का उत्थान– जर्मनी एक शक्तिशाली सैन्यशक्ति बनकर उभर चुका था। अत: वह फ्रांस का शोषण कर रहा था। जर्मनी निरंतर साम्राज्य विस्तार की ताक में जुटा था। जर्मनी की इस महत्वाकांक्षा से फ्रांस, इंग्लैंड तथा रूस भयभीत हो उठे और उनमें टकराव होते ही प्रथम विश्वयुद्ध छिड़ गया।

(vi) बाल्कन समस्या– बाल्कन प्रायद्वीप की समस्या यूरोप का ज्वालामुखी बन चुकी थी, जो कभी-भी युद्ध के रूप में फट सकती थी। बाल्कन प्रायद्वीप में शक्तिशाली राज्यों की महत्वाकांक्षाएँ टकराती रहती थीं। बाल्कन समस्या के कारण यूरोपीय शक्तियों में तलवारें खींची हुई थीं। यहाँ जन्मी परस्पर शत्रुताएँ राष्ट्रों को प्रथम विश्वयुद्ध तक खींच कर ले गईं।

(vii) अंतर्राष्ट्रीय संस्था का अभाव– इस समय संयुक्त राष्ट्र संघ जैसी कोई अंतर्राष्ट्रीय संस्था नहीं थी, जो तनाव और संघर्ष को बढ़ावा देने वाली शक्तियों पर नियंत्रण लगाती। अत: राष्ट्रों की बढ़ती स्वेच्छाचारिता, दंभ, पाखंड तथा झूठे प्रचारों ने प्रथम विश्वयुद्ध को संभव बना दिया।

(viii) तात्कालिक कारण– 28 जून, 1914 ई० में आस्ट्रिया के राजकुमार तथा उसकी पत्नी की हत्या बोसानिया की राजधानी सेराजेवो में कर दी गई। आस्ट्रिया ने इसके लिए सर्बिया को उत्तरदायी ठहराकर उसे युद्ध की चुनौती दे डाली। जर्मनी ने आस्ट्रिया का तथा रूस ने सर्बिया का पक्ष लेकर इस छोटी-सी घटना को प्रथम विश्वयुद्ध के रूप में बदल दिया। धीरे-धीरे समूचा विश्व इस महायुद्ध के साथ जुड़ता चला गया और चिंगारी शोला बनकर विनाश मचाने लगी।

2. प्रथम विश्वयुद्ध के परिणामों पर प्रकाश डालिए। स्पष्ट कीजिए कि पराजित राष्ट्रों पर इसका क्या प्रभाव पड़ा।

उ०– **प्रथम विश्वयुद्ध के परिणाम–** प्रथम विश्वयुद्ध बीसवीं शताब्दी के इतिहास की एक भयंकर तथा उल्लेखनीय घटना थी। इस भीषण और विनाशकारी युद्ध में 36 देशों के लगभग 6 करोड़ 50 लाख सैनिक-असैनिक लड़े। प्रथम विश्वयुद्ध के परिणामों को निम्न बिंदुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है–

(i) जन-धन का विनाश– प्रथम विश्वयुद्ध में 1 करोड़ 50 लाख लोग मारे गए तथा 2 करोड़ से अधिक घायल हुए। 70 लाख व्यक्ति ऐसे थे, जो अपंग हो चुके थे। इस युद्ध में 1 खरब तथा 67 अरब डॉलर पानी की तरह बह गए। लगभग 12 अरब डालर की संपत्ति नष्ट हो गई।

(ii) लोकतांत्रिक राज्यों की स्थापना– इस युद्ध के परिणामस्वरूप यूरोप में एकतंत्र शासन-प्रणाली लगभग समाप्त हो गई। रूस में जार निकोलस द्वितीय, जर्मनी में कैसर विलियम द्वितीय, ऑस्ट्रिया में फ्रांसिस द्वितीय तथा टर्की में सुल्तान अब्दुल हमीद द्वितीय को राजगद्दी छोड़नी पड़ी। इन देशों में लोकतान्त्रिक शासन-प्रणाली की स्थापना हुई। इसके अतिरिक्त चेकोस्लोवाकिया, लिथुआनिया, एस्थोनिया, लैटविया और फिनलैण्ड में भी लोकतन्त्र सरकारें स्थापित की गईं।

(iii) नवीन राज्यों का उदय- प्रथम विश्वयुद्ध के बाद पेरिस शांति सम्मेलन के निर्णयानुसार यूरोप में 8 नये राज्य बनाये गए। बाल्टिक प्रदेश में एस्थोनिया, लैटविया, लिथुआनिया तथा फिनलैण्ड राज्य स्थापित हुए। पोलैण्ड तथा चेकोस्लोवाकिया को स्वतंत्र राज्य बनाया गया। सर्बिया, यूगोस्लाविया के नाम से बड़ा राज्य बन गया।

(iv) वर्साय की संधि– प्रथम विश्वयुद्ध के बाद पेरिस शांति सम्मेलन में मित्र-राष्ट्रों ने जर्मनी के साथ वर्साय की संधि की। इस संधि की अपमानजनक शर्तों ने यूरोप में तानाशाही के उदय को प्रोत्साहन दिया और जर्मनी में नाजीवादी तथा इटली में फासीवादी तानाशाही की स्थापना हुई।

(v) महाशक्तियों की स्थिति में परिवर्तन– प्रथम विश्वयुद्ध से पूर्व ब्रिटेन, फ्रांस, रूस और जर्मनी की गणना महाशक्तियों में की जाती थी। इस युद्ध के बाद रूस और जर्मनी, सैनिक तथा आर्थिक दृष्टि से कमजोर हो गये तथा ब्रिटेन व फ्रांस भी अपनी परम्परागत प्रतिष्ठा खो बैठे। विश्व राजनीति में संयुक्त राज्य अमेरिका एक महाशक्ति के रूप में सामने आ गया। एशिया में जापान ने अपनी शक्ति का डंका बजा दिया। सामयवादी नेतृत्व में रूस भी तेजी के साथ शक्तिशाली बनने लगा।

(vi) **अंतर्राष्ट्रीयता का विकास–** इस युद्ध के परिणामस्वरूप अंतर्राष्ट्रीयता की भावना का विकास हुआ। इस भावना के फलस्वरूप अमेरिकी राष्ट्रपति **बुडरो विल्सन** के **चौदह सिद्धान्तों** के आधार भावी युद्धों को रोकने के लिए 10 जनवरी, 1920 ई० को लीग ऑफ नेशन्स नामक एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना हुई।

(vii) **आर्थिक मंदी–** प्रथम विश्वयुद्ध से धन के अपार विनाश ने अनेक देशों को अमेरिका का कर्जदार बना दिया। विभिन्न देशों की मुद्राओं का अवमूल्यन हो जाने से संसार में भयानक आर्थिक मंदी फैल गई। बेकारी बढ़ने लगी तथा व्यापार नष्ट होने से यूरोप की आर्थिक व्यवस्था बिगड़ गई। दिसंबर, 1922 ई० में जर्मनी में मार्क का मूल्य इतना अधिक गिर गया था कि 1 पौण्ड के बदले 34,000 मार्क प्राप्त किए जा सकते थे।

(viii) **समाजवाद की भावना का विकास–** प्रथम विश्वयुद्ध के बाद समाजवाद और साम्यवाद का विकास हुआ, जिसके कारण उद्योग-धन्धों के राष्ट्रीयकरण की आवश्यकता अनुभव की गई। सोवियत रूस के नेतृत्व में अंतर्राष्ट्रीय श्रमिक संगठन की स्थापना हुई। श्रमिकों ने पूँजीपतियों के शोषण के विरुद्ध आंदोलन करना शुरू कर दिया। उसके फलस्वरूप विभिन्न राष्ट्रों की सरकारों ने श्रमिकों को सुविधाएँ देना आरंभ कर दिया।

(ix) **वैज्ञानिक प्रगति–** प्रथम विश्वयुद्ध में अनेक भयंकर तथा नवीनतम अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग किया गया। टैंकों तथा हवाई जहाजों का युद्ध के लिए सर्वप्रथम उपयोग इसी लड़ाई में हुआ। अत: सभी देशों में युद्ध के नवीन अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण की होड़-सी लग गई और विज्ञान का प्रयोग अत्यधिक विध्वंसक अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण के लिए किया जाने लगा।

(x) **सामाजिक परिणाम–** प्रथम विश्वयुद्ध ने विश्व की सामाजिक संरचना को भी प्रभावित किया। इस युद्ध में विश्व की लगभग 87% जनता ने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से भाग लिया। फलस्वरूप कल-कारखानों, उद्योगों, ऑफिसों, सरकारी संस्थानों में पुरूषों का कार्य महिलाओं को सँभालना पड़ा। इससे महिलाओं की स्वतंत्रता तथा अधिकारों में अभूतपूर्व वृद्धि होने लगी। बेकारी और भुखमरी के कारण अनेक सामाजिक कुरीतियाँ बढने लगीं और समाज नैतिकताहीन हो गया।

(xi) **धार्मिक परिणाम–** प्रथम विश्वयुद्ध में भयानक और अपार जनसंहार देखकर मनुष्य का विश्वास ईश्वर पर से उठ गया। रूस में नास्तिकवाद का विकास होने लगा तथा यूरोप में ईसाई धर्म की प्रतिष्ठा गिर गई।

प्रथम विश्वयुद्ध के पराजित देशों पर प्रभाव– प्रथम विश्वयुद्ध के परिणाम बहुत ही भयानक तथा विनाशकारी हुए। विजयी राष्ट्रों को अपमानजनक संधियाँ स्वीकार करने के लिए बाध्य किया और दूसरे विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि तैयार कर दी। प्रथम विश्वयुद्ध का पराजित राष्ट्रों (जर्मनी, ऑस्ट्रिया-हंगरी तथा तुर्की) पर निम्नलिखित प्रभाव पड़ा–

(i) **जर्मनी पर प्रभाव–** प्रथम विश्वयुद्ध में पराजित होने पर जर्मनी को अपमानजनक वर्साय सन्धि पर हस्ताक्षर करने पड़े, जिसके अनुसार अल्सेस-लॉरेन क्षेत्र तथा सार घाटी की कोयला खाने फ्रांस को दे दी गई। जर्मनी की सैन्य-शक्ति को घटा दिया गया। उसके उपनिवेश छीनकर विजेताओं में बाँट दिए गए। उसे 6 अरब 50 करोड़ पौण्ड का युद्ध हर्जाना देने को विवश किया गया।

(ii) **ऑस्ट्रिया-हँगरी पर प्रभाव–** एक संधि के द्वारा ऑस्ट्रिया-हँगरी को पृथक् कर दिया गया। ऑस्ट्रिया को हंगरी, पोलैंड, यूगोस्लाविया तथा चेकोस्लोवाकिया की स्वतंत्रता को मान्यता देने को कहा गया। उसकी सैन्य-शक्ति को क्षीण कर दिया गया तथा उस पर भविष्य में जर्मनी से आर्थिक-राजनीतिक संबंध रखने पर प्रतिबंध लगा दिया गया।

(iii) **तुर्की पर प्रभाव–** तुर्की के विशाल साम्राज्य को छिन्न-भिन्न कर दिया गया फिलीस्तीन तथा मेसोपोटामिया प्रदेश ब्रिटेन को तथा सीरिया प्रदेश फ्रांस को दे दिये गये। तुर्की का अधिकांश भाग यूनान तथा इटली को दे दिया गया।

3. लीग ऑफ नेशन्स की स्थापना के क्या उद्देश्य थे? इसके अंगों का वर्णन कीजिए।

उ०– **लीग ऑफ नेशन्स की स्थापना के उद्देश्य–** लीग ऑफ नेशन्स की स्थापना निम्नलिखित उद्देश्यों को ध्यान में रखकर की गई थी–

(i) अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से शांति और सुरक्षा को प्रोत्साहन देना।

(ii) भविष्य में युद्धों को रोकना।

(iii) विवादों को परस्पर सद्भावना और सौहार्दपूर्ण ढंग से निबटाना।

(iv) सैन्यवाद और साम्राज्यवाद की भावनाओं को कम करना।

(v) विश्व में नि:शस्त्रीकरण के लिए प्रयास करना।

(vi) श्रमिकों की दशा सुधारने के लिए सकारात्मक प्रयास करना।
(vii) जनकल्याण के कार्यक्रमों में सहयोग देना।
(viii) स्त्रियों और बच्चों के क्रय-विक्रय पर रोक लगाना।
(ix) जनसाधारण की दशा में सुधार लाने के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य सिद्धांतों को क्रियान्वित कराना।

लीग ऑफ नेशन्स के अंग– लीग ऑफ नेशन्स की रचना उसके निम्नलिखित अंगों से हुई है–

(i) साधारण सभा (ii) परिषद (iii) सचिवालय
(iv) अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय (v) अंतर्राष्ट्रीय श्रम-संगठन

4. लीग ऑफ नेशन्स की स्थापना कब और कहाँ हुई? इसकी असफलता के लिए कौन-कौन से कारण उत्तरदायी थे?

उ०– लीग ऑफ नेशन्स की स्थापना 10 जनवरी, 1920 ई० में स्विट्जरलैंड देश के जेनेवा नगर में हुई थी। विश्व-शांति स्थापना करने वाली यह एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था थी।

लीग ऑफ नेशन्स की असफलता– मानव सभ्यता का दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि लीग ऑफ नेशन्स जैसी अंतर्राष्ट्रीय संस्था भी असफल हो गई। इस संदर्भ में **हार्डी** का यह कथन है कि– "लीग ऑफ नेशन्स अनाथ बालक की तरह यूरोप के दरवाजे पर छोड़ दी गई।" सत्य ही है। उसकी असफलता के पीछे निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) संयुक्त राज्य अमेरिका, जो लीग ऑफ नेशन्स का जन्मदाता था, इसका सदस्य नहीं बना। इस कारण इसके प्रति लोगों की आस्था कम हो गई।
(ii) लीग ऑफ नेशन्स के शक्तिशाली सदस्यों ने अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए लीग के नियमों का पालन नहीं किया।
(iii) हिटलर ने अपनी तानाशाही नीति अपनाकर इस राष्ट्रसंघ को असफल बना दिया।
(iv) लीग ऑफ नेशन्स के पास सैनिक शक्ति नहीं थी, अत: यह किसी भी राष्ट्र की मनमानी रोकने में असफल रहा।
(v) यूरोपीय देशों ने नि:शस्त्रीकरण के नियमों की अवहेलना करके लीग ऑफ नेशन्स को असफल बनाया।
(vi) प्रथम विश्वयुद्ध के उपरांत विश्व दो गुटों में बँट गया था। ये दोनों गुट परस्पर शत्रुता का व्यवहार करके तुष्टिकरण की नीति अपनाते थे, जिससे लीग ऑफ नेशन्स असफल हो गया।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

9 द्वितीय विश्वयुद्ध– कारण एवं परिणाम

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-64 व 65 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-65 व 66 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. द्वितीय विश्वयुद्ध के तीन प्रमुख कारण लिखिए।

उ०– द्वितीय विश्वयुद्ध के तीन प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

(i) वर्साय की संधि– वर्साय की अपमानजनक संधि में ही द्वितीय विश्वयुद्ध के बीज छिपे हुए थे। जर्मनी ने हिटलर के माध्यम से अपमान का बदला लेने के लिए द्वितीय विश्वयुद्ध को संभव बना दिया।
(ii) नाजीवाद और फासीवाद– जर्मनी के तानाशाह हिटलर ने नाजीवाद के माध्यम से तथा इटली के तानाशाह **मुसोलिनी** ने फासीवाद के माध्यम से उग्र राष्ट्रवाद जगाकर द्वितीय विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि तैयार कर दी।
(iii) नवीन विचारधाराओं का उदय– यूरोप में लोकतंत्र की बढ़ती लोकप्रियता तथा साम्यवादी विचार-धाराओं ने यूरोप के राजनीतिक परिवेश को हिला दिया। उग्र राष्ट्रवाद की उठती प्रबल भावनाओं ने द्वितीय विश्वयुद्ध को निकट ला दिया।

2. द्वितीय विश्वयुद्ध के तीन प्रभावों पर प्रकाश डालिए।

उ०– द्वितीय विश्वयुद्ध के तीन प्रभाव निम्नलिखित हैं–

(i) जन-धन का महाविनाश– द्वितीय विश्वयुद्ध में 5 करोड़ लोग मारे गए तथा करोड़ों घायल हुए। इस युद्ध ने बाल्टिक सागर से काला सागर तक का क्षेत्र नष्ट करके खरबों रुपयों की सम्पत्ति को खाक में मिला दिया।

(ii) साम्राज्यवाद का विनाश– द्वितीय विश्वयुद्ध ने साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद को गहरी कब्रों में दबाकर सदैव के लिए समाप्त कर दिया। इस युद्ध के उपरांत एशिया तथा अफ्रीका के देश धड़ाधड़ स्वतंत्र होते चले गए।

(iii) विश्व का शक्ति-गुटों में विभाजन– द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद समूचा विश्व अमेरिका के नेतृत्व में पूँजीवादी गुट तथा सोवियत संघ के नेतृत्व में साम्यवादीगुट में बँट गया।

3. द्वितीय विश्वयुद्ध में अमेरिका मित्र राष्ट्रों के पक्ष में क्यों शामिल हुआ?

उ०– द्वितीय विश्वयुद्ध में अमेरिका मित्र राष्ट्रों के पक्ष में इसलिए शामिल हुआ क्योंकि वह मित्र राष्ट्रों के संसाधन और शक्ति बढ़ाकर जापान और जर्मनी को पराजित करना चाहता था।

4. संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना कब और कहाँ की गई? इसकी स्थापना के क्या उद्देश्य थे?

उ०– संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना 24 अक्टूबर, 1945 ई० में अमेरिका के सैन फ्रैंसिस्को नगर में हुई। इसकी स्थापना के उद्देश्य निम्नलिखित थे–

(i) भावी युद्ध रोकना तथा अंतर्राष्ट्रीय शांति स्थापित करना।

(ii) मानव अधिकारों की रक्षा करना।

(iii) अंतर्राष्ट्रीय कानून को निभाने की प्रक्रिया जुटाना।

(iv) जीवन स्तर सुधारना और बीमारियों से सुरक्षा करना।

(v) सामाजिक एवं आर्थिक विकास करना।

(vi) अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों को परस्पर बात-चीत द्वारा हल करना।

5. वर्साय की संधि किस प्रकार द्वितीय विश्वयुद्ध के लिए उत्तरदायी थी? कोई तीन तर्क दीजिए।

उ०– वर्साय की संधि ही द्वितीय विश्वयुद्ध का मूल कारण थी। इसके पक्ष में तीन तर्क निम्नलिखित हैं–

(i) वर्साय की अपमानजनक संधि जर्मनी पर बलपूर्वक थोपी गई थी, अत: जर्मनी के हृदय में मित्र-राष्ट्रों के प्रति घृणा का भाव उत्पन्न हो गया।

(ii) यह संधि बदले की भावना का प्रतीक थी, अत: इसने बदला लेने की प्रवृत्ति को जन्म दिया।

(iii) इस संधि ने जर्मनी सैनिक तथा सामुद्रिक शक्ति को नष्ट कर दिया तथा उसकी राष्ट्रीय भावना को इतना कुचल दिया गया था कि जर्मन जनता अपने अपमान का बदला लेने के लिए बैचेन हो उठी थी।

6. हिटलर कौन था? उसकी नीतियों ने किस प्रकार द्वितीय विश्वयुद्ध को प्रभावित किया?

उ०– हिटलर एक प्रसिद्ध जर्मन राजनेता एवं तानाशाह थे। वे 'राष्ट्रीय समाजवादी जर्मन कामगार पार्टी' जिसे 'नाजी पार्टी' के नाम से जाना जाता था के नेता थे। हिटलर सन् 1933 से सन् 1945 ई० तक जर्मनी के शासक रहे। हिटलर को द्वितीय विश्वयुद्ध के लिए सर्वाधिक जिम्मेदार माना जाता है। वर्साय की संधि में मित्र-राष्ट्रों ने जर्मनी के लिए जो अपमान के बीज बोए थे, वे हिटलर की नाजीवादी नीतियों द्वारा अंकुरित होकर द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण बने। हिटलर ने नाजी पार्टी की स्थापना करके जर्मन जनता का पुनरूत्थान करेगी तथा वर्साय की संधि में जर्मनी के अपमान का बदला लेगी। जर्मन की जनता हिटलर की समर्थक बन गई। हिटलर ने सन् 1933 में जर्मन के शासक बनकर वर्साय संधि का उल्लंघन करते हुए जर्मनी का शस्त्रीकरण करना प्रारंभ कर दिया। हिटलर की बढ़ती शक्ति से भयभीत होकर यूरोप के राष्ट्र अपनी सुरक्षा के लिए द्वितीय विश्वयुद्ध की तैयारी में लग गए। इस प्रकार हिटलर ने जर्मनी के अपमान का बदला लेने के लिए द्वितीय विश्वयुद्ध को संभव बना दिया।

7. द्वितीय विश्वयुद्ध में जापान आत्मसमर्पण के लिए क्यों विवश हुआ?

उ०– अमेरिका ने 6 अगस्त 1945 ई० को जापान के समृद्धनगर हिरोशिमा पर पहला अणु बम गिराया। हिरोशिमा की लगभग सारी जनसंख्या मारी गई और नगर का नामोनिशान भी नहीं रहा। 9 अगस्त 1945 ई० को अमेरिका ने जापानी नगर नागासाकी पर अपना दूसरा अणु बम गिराया। इस अणु बम की भयानक तबाही को देखकर जापान का सम्राट भयभीत हो गया ओर उसने

तत्काल ही जापानी सेना को आत्मसमर्पण का आदेश कर दिया। इस प्रकार 14 अगस्त, 1945 ई० को जापान ने बिना किसी शर्त के आत्मसमर्पण कर दिया।

8. संयुक्त राज्य अमेरिका ने जापान के विरूद्ध युद्ध की घोषणा क्यों की? उन दो नगरों के नाम लिखिए, जो अणु बम द्वारा नष्ट कर दिए गए। वे नगर किस देश में हैं।

उ०– जापान सारे एशिया पर अपना प्रभाव स्थापित करना चाहता था। इसलिए 7 दिसंबर, 1941 ई० को जापानी सेना ने अमेरिका के प्रशांत सागर स्थित नौ सैनिक अड्डे पर्ल हार्बर पर भयानक आक्रमण कर दिया। जापान के इस आकस्मिक आक्रमण से अमेरिका का नौसैनिक अड्ड़ा पूरी तरह नष्ट हो गया। जापान के आक्रमण की जबरदस्त प्रतिक्रिया हुई। अत: 11 दिसंबर, 1941 ई० को संयुक्त राष्ट्र अमेरिका ने जापान के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। हिरोशिमा और नागासाकी नगरों को अमेरिका ने अणु बम द्वारा नष्ट कर दिया। ये दोनों नगर जापान देश में हैं।

विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. द्वितीय विश्वयुद्ध के मुख्य कारण क्या थे? विवेचना कीजिए।

उ०– **द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण–** द्वितीय विश्वयुद्ध के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) वर्साय की संधि– वर्साय की अपमानजनक संधि में ही द्वितीय विश्वयुद्ध के बीज छिपे हुए थे। जर्मनी ने हिटलर के माध्यम से अपमान का बदला लेने के लिए द्वितीय विश्वयुद्ध को संभव बना दिया।

(ii) नाजीवाद और फांसीवाद– जर्मनी के तानाशाह हिटलर ने नाजीवाद के माध्यम से तथा इटली के तानाशाह **मुसोलिनी** ने फासीवाद के माध्यम से उग्र राष्ट्रवाद जगाकर द्वितीय विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि तैयार कर दी।

(iii) नवीन विचारधाराओं का उदय– यूरोप में लोकतंत्र की बढ़ती लोकप्रियता तथा साम्यवादी विचार-धाराओं ने यूरोप के राजनीतिक परिवेश को हिला डाला। उग्र राष्ट्रवाद की उठती प्रबल भावनाओं ने द्वितीय विश्वयुद्ध को निकट ला दिया।

(iv) संधियों का उल्लंघन– पेरिस शांति सम्मेलन के माध्यम से मित्र राष्ट्रों ने जो संधियाँ थोपी थीं, जर्मनी ने उनका उल्लंघन करके घातक अस्त्र-शस्त्र, विमान तथा जलयान बनाने प्रारंभ कर दिए थे। उसकी होड़ में इटली, जापान तथा स्पेन भी सैन्य तैयारियों में जुट गए, जिससे तनाव उत्पन्न होने से टकराव होना निश्चित हो गया।

(v) साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्द्धाएँ– यूरोप की विस्तारवादी शक्तियाँ साम्राज्य का विस्तार करने और उपनिवेशों की स्थापना करने में जुटी थीं। जापान और जर्मनी भी अपना साम्राज्य बढ़ाना चाहते थे। साम्राज्यवाद के विस्तार तथा उपनिवेशों की स्थापना की होड़ ने इन राष्ट्रों के स्वार्थों में टकराव लाकर द्वितीय विश्वयुद्ध को जन्म दे दिया।

(vi) गुटबंदियाँ– यूरोप में गुटबंदियाँ प्रारंभ हो चुकी थीं। एक गुट फ्रांस के नेतृत्व में, जबकि दूसरा गुट जर्मनी के नेतृत्व में संगठित हो गया। फ्रांस लोकतंत्र का, जबकि जर्मनी साम्राज्यवाद का समर्थक था। गुटबंदियों ने राष्ट्रों को अविश्वास और शंका से परिपूर्ण करके द्वितीय विश्वयुद्ध के रूप में टकराने के लिए कटिबद्ध कर दिया।

(vii) तृष्टिकरण की नीति– ब्रिटेन और फ्रांस फांसीवादी नीति के प्रति तुष्टिकरण की नीति अपना रहे थे। इंग्लैंड के प्रधानमंत्री **चैम्बरलेन** ने तथा फ्रांस के प्रधानमंत्री **ब्लादियर** ने फासीवादी राक्षस के लिए चेकोस्लोवाकिया को बलिदान कर दिया। यही नीति द्वितीय विश्वयुद्ध के विस्फोट के लिए उत्तरदायी बनी।

(viii) युद्ध के लिए तैयारियाँ– फ्रांस किलेबंदी करके युद्ध के लिए **मैगना लाइन** नामक सुरक्षा पंक्ति बना चुका था, जबकि जर्मनी **सिग फील्ड** लाइन बनाकर युद्ध के लिए तैयार था। इन तैयारियों ने विश्व के अन्य देशों को भी युद्ध के लिए तैयार कर दिया।

(ix) आर्थिक संपन्नता के लिए प्रतिस्पर्द्धाएँ– यूरोपीय राष्ट्र बाजारों की खोज, कच्चे माल तथा श्रम की उपलब्धता आदि के लिए मारामारी कर रहे थे। इटली ऊर्जा संसाधनों को जुटाने में लगा था। जापान औद्योगीकरण की सुविधाएँ जुटा रहा था, अत: इन राष्ट्रों के आर्थिक हितों में टकराव होने से द्वितीय विश्वयुद्ध का परिवेश बन गया।

(x) लीग ऑफ नेशन्स की दुर्बलताएँ– लीग ऑफ नेशन्स के पास आक्रामक देशों को रोकने के लिए सैन्य-शक्ति नहीं थी, अत: वह असहाय बन युद्ध भड़काने वाली शक्तियों के कारनामे निहारता रहा। इस प्रकार लीग ऑफ नेशन्स की दुर्बलताओं के कारण द्वितीय विश्वयुद्ध छिड़ गया।

(xi) द्वितीय विश्वयुद्ध का तात्कालिक कारण– यूरोप में युद्ध का वातावरण तो बन ही चुका था। समूचा यूरोप बारूद के

ढेर पर बैठा हुआ था। बस चिंगारी लगने की ही देर थी, जिसे हिटलर के 1 सितंबर, 1939 ई० को पोलैंड पर आक्रमण ने पूरा कर द्वितीय विश्वयुद्ध की ज्वाला को भड़का दिया। यही छोटी-सी घटना द्वितीय विश्वयुद्ध का कारण बनी।

2. द्वितीय विश्वयुद्ध के परिणामों पर प्रकाश डालिए। इसका क्या तात्कालिक प्रभाव पड़ा?

उ०– **द्वितीय विश्वयुद्ध के परिणाम–** द्वितीय विश्वयुद्ध में अणुबम का स्वाद चखने वाला जापान विश्व का पहला देश था, जहाँ हिरोशिमा और नागासाकी की जनता ने कई पीढ़ियों तक अणुबम के घातक परिणामों को भुगता। द्वितीय विश्वयुद्ध के परिणामों का वर्णन निम्नवत् किया जा सकता है–

(i) **जन-धन का महाविनाश–** द्वितीय विश्वयुद्ध में 5 करोड़ लोग मारे गए तथा करोड़ों घायल हुए। इस युद्ध ने बाल्टिक सागर से काला सागर तक का क्षेत्र नष्ट करके खरबों रुपयों की संपत्ति को खाक में मिला दिया।

(ii) **साम्राज्यवाद का विनाश–** द्वितीय विश्वयुद्ध ने साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद को गहरी कब्रों में दबाकर सदैव के लिए समाप्त कर दिया। इस युद्ध के उपरांत एशिया तथा अफ्रीका के देश धड़ाधड़ स्वतंत्र होते चले गए।

(iii) **विश्व का शक्ति-गुटों में विभाजन–** द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद समूचा विश्व अमेरिका के नेतृत्व में पूँजीवादी गुट तथा सोवियत संघ के नेतृत्व में साम्यवादीगुट में बँट गया।

(iv) **लोकतांत्रिक भावना का विकास–** द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विश्वभर में लोकतंत्र की धारा प्रवाहित हो गई। अधिकांश देशों ने राजतंत्र को त्यागकर लोकतंत्र को अपना लिया।

(v) **जर्मनी का विभाजन–** द्वितीय विश्वयुद्ध के लिए जर्मन जनता को उत्तरदायी मानकर, मित्र राष्ट्रों ने उन्हें दंड देने के लिए जर्मनी को दो भागों में बाँट दिया– बर्लिन में दीवार खींच कर उसके दो टुकड़े कर दिए गए।

(vi) **अस्त्र-शस्त्र एकत्र करने की होड़–** यूरोप के देशों में घातक अस्त्र-शस्त्र एकत्र करने की होड़ लग गई, जिससे शीतयुद्ध और तनाव का वातावरण उत्पन्न हो गया।

(vii) **आर्थिक संकट–** द्वितीय विश्वयुद्ध में संसाधनों का भारी अपव्यय होने के कारण फ्रांस और जर्मनी में आर्थिक संकट उत्पन्न हो गया, जिसका लाभ रूस और अमेरिका ने आर्थिक साम्राज्यवाद का प्रसार करके उठाया।

(viii) **परमाणु अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण–** द्वितीय विश्वयुद्ध में अणुशक्ति के महाविनाशक स्वरूप का पता चलते ही शक्तिसंपन्न राष्ट्र इसका विकास करने में जुट गए। बढ़ते परमाणु शस्त्रों ने विश्वभर में पुन: तनाव बढ़ा दिया।

(ix) **सैनिक गुटबंदियाँ–** द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरांत सामूहिक सुरक्षा की ओट में 'नाटो' तथा 'वार्सापैक्ट' जैसी सैनिक गुटबंदियाँ की गई। इन सैनिक गुटबंदियों ने शांत पर्यावरण को पुन: आंदोलित कर दिया।

(x) **युद्ध के अपराधियों पर मुकदमा–** मित्र-राष्ट्रों ने युद्ध के अपराधियों पर न्यूरेमबर्ग की अदालत में मुकदमा चलाया। इस मुकदमे के फलस्वरूप 426 युद्ध-अपराधियों को फाँसी की सजा दी गयी।

(xi) **संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना–** द्वितीय विश्वयुद्ध में हुए भीषण नरसंहार तथा संपत्ति के अभूतपूर्व विनाश ने विश्व भर के राजनीतिज्ञों को बाध्य किया कि यदि मानव जाति को सुरक्षित रखना है तो युद्धों को रोकना आवश्यक है। अत: संसार की महाशक्तियों ने 24 अक्टूबर, 1945 ई० को एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना की, जो **संयुक्त राष्ट्र संघ** के नाम से आज भी विश्व में शांति तथा मानव जाति की सुरक्षा के लिए प्रयत्नशील है।

3. द्वितीय विश्वयुद्ध के कारणों और परिणामों की विवेचना कीजिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-1 व 2 के उत्तरों का अवलोकन कीजिए।

4. नाजीवाद और फांसीवाद द्वितीय विश्वयुद्ध के लिए किस सीमा तक उत्तरदायी थे।

उ०– प्रथम विश्वयुद्ध के बाद पेरिस के शांति सम्मेलन ने अनेक राज्यों में लोकतंत्र शासन की स्थापना कर दी गई थी, किंतु कुछ समय बाद जर्मनी में नाजीवादी एवं इटली में फासीवादी क्रांतियाँ आरंभ हो गईं। तानाशाही शासन का घृणित रूप नाजीवाद है। हिटलर ने जर्मनी में नाजी दल का गठन किया। इस पार्टी के तानाशाही, विस्तारवादी और आक्रामक सिद्धांत नाजीवाद कहलाए। जर्मनी की आंतरिक उथल-पुथल ने तथा वर्साय की अपमानजनक संधि ने नाजीवाद को विकसित होने का अवसर प्रदान किया। फासीवाद दल की स्थापना इटली के तानाशाही मुसोलिनी ने की थी। यह दल तानाशाही, हिंसा, विस्तारवाद तथा युद्ध का पक्षधर था। अत: इसकी विचारधारा को फासीवाद कहा गया। नाजीवाद और फासीवाद विचारधाराओं ने यूरोप के देशों में खलबली मचा दी। इन विचारधाराओं के संघर्ष के कारण अनेक देशों में राष्ट्रीयता की प्रबल भावनाएँ उत्पन्न हो

गईं। अत: नाजीवाद और फांसीवाद द्वितीय विश्वयुद्ध को संभव बनाने के लिए सर्वाधिक उत्तरदायी थे।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई-2 (क) : आधुनिक भारत

10 भारत में यूरोपीय शक्तियों का आगमन एवं प्रसार

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-70 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-70 व 71 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. भारत में अंग्रेजों की सफलता के तीन कारण लिखिए।

उ०– भारत में अंग्रेजों की सफलता के तीन कारण निम्नलिखित हैं–

(i) अंग्रेज कंपनी की आर्थिक दशा उन्नत होने के कारण अंग्रेजों के पास धन और संसाधन अधिक थे।

(ii) पर्याप्त धन एवं अस्त्र-शस्त्रों के कारण अंग्रेज फ्रांसीसियों से सदैव जीतते रहे।

(iii) अंग्रेज सरकार ईस्ट इंडिया कंपनी को आर्थिक तथा अस्त्र-शस्त्र की मदद देती रहती थी, जिससे उसकी विजय होती थी।

2. भारत में फ्रांसीसियों की असफलता के लिए उत्तरदायी तीन कारण स्पष्ट कीजिए।

उ०– भारत में फ्रांसीसियों की असफलता के तीन कारण निम्नलिखित हैं–

(i) फ्रांसीसी कंपनी फ्रांस की सरकार पर पूरी तरह निर्भर थी। उसे आवश्यकता के समय न तो धन मिलता था और न तुरंत कार्यवाही करने का आदेश, जिससे उसे असफलता का मुख देखना पड़ा।

(ii) फ्रांसीसी कंपनी की आर्थिक दशा खराब थी, जिससे वह सैन्य उपकरण खरीदने में असमर्थ होकर असफल रही।

(iii) फ्रांसीसी कंपनी के अधिकारियों में एकता, सहयोग तथा विश्वास का अभाव था। वे एकमत से निर्णय नहीं कर पाते थे, जिससे उन्हें असफल रहना पड़ता था।

3. प्लासी का युद्ध किन-किन के बीच हुआ? इसके दो प्रमुख प्रभाव लिखिए।

उ०– प्लासी का युद्ध रॉबर्ट क्लाइव और बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला के मध्य सन् 1757 ई० में हुआ। इस युद्ध के दो प्रमुख प्रभाव निम्नलिखित हैं–

(i) इस युद्ध की विजय ने अंग्रेजों को बंगाल का स्वामी बनाकर उनके लिए भारत का भाग्यविधाता बनने के द्वार खोल दिए।

(ii) प्लासी के युद्ध ने फ्रांसीसियों की असफलता के द्वार खोल दिए।

4. बक्सर का युद्ध कब और किसके बीच हुआ? इस युद्ध से अंग्रेजों को कौन-कौन से दो लाभ हुए।

उ०– बक्सर का युद्ध 1764 ई० में बंगाल के नवाब मीरकासिम, अवध के नवाब शुजाउद्दौला तथा अंग्रेजों की सेनाओं के मध्य हुआ। इस युद्ध से अंग्रेजों को निम्नलिखित दो लाभ हुए।

(i) अंग्रेजों के यश और प्रभुत्व में वृद्धि हुई तथा उन्हें उत्तरी भारत में पैर पसारने का अवसर मिला।

(ii) इस युद्ध ने अंग्रेजों को बिहार, उड़ीसा और बंगाल का शासक बना दिया।

5. ईस्ट इंडिया कंपनी का भार त में व्यापार करने के पीछे क्या लक्ष्य था? उसे उसने कैसे पूरा किया?

उ०– ईस्ट इंडिया कंपनी का भारत में व्यापार करने के पीछे लक्ष्य भारत के व्यापार तथा सत्ता पर अपना अधिकार जमाना था। ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत से फ्रांसीसियों को खदेड़ कर तथा देशी रियायतों को जीतकर अपने लक्ष्य को पूरा किया।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. प्लासी और प्लासी के युद्ध ने किस प्रकार भारत में ब्रिटिश शासन की नींव डाली।

उ०– सन् 1756 ई० में सिराजुद्दौला बंगाल का नवाब बना। परन्तु कंपनी उसकी शक्ति को देखते हुए किसी अन्य को नवाब बनाना चाहती थी जो उन्हें व्यापारिक सुविधाएं तथा अन्य रियायतें आसानी से दे सके। परन्तु वे कामयाब न हो सके। सिराजुद्दौला ने कंपनी को किलेबंदी रोकने तथा बकाया राजस्व चुकाने का आदेश दिया। कंपनी के ऐसा न करने पर नवाब ने कलकत्ता (अब कोलकाता) स्थित कंपनी के किले पर कब्जा कर लिया।

कलकत्ता की खबर सुनकर कंपनी के अफसरों ने रॉबर्ट क्लाइव के नेतृत्व में सेनाओं को रवाना कर दिया। आखिरकार सन् 1757 ई0 में प्लासी के मैदान में रॉबर्ट क्लाइव तथा सिराजुद्दौला अपनी-अपनी सेनाओं के साथ आमने-सामने थे।

सिराजुद्दौला को हार का सामना करना पड़ा, जिसका एक बड़ा कारण उसके सेनापति मीरजाफर का षड्यंत्र था। प्लासी के युद्ध में अंग्रेजों की जीत अत्यंत महत्वपूर्ण थी क्योंकि भारत में यह कंपनी की पहली बड़ी जीत थी। इस युद्ध के बाद मीरजाफर को बंगाल का कठपुतली नवाब बनाया गया। इस युद्ध ने ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन को भारत में स्थिरता प्रदान करते हुए ब्रिटिश उपनिवेशवाद का बीजारोपण किया।

बक्सर का युद्ध– जल्दी ही कंपनी को यह एहसास हो गया कि कठपुतली नवाब हमेशा उनका साथ देने वाला नहीं है। अत: जब मीरजाफर कंपनी का विरोध करने लगा तो उसे हटाकर मीरकासिम को नवाब बना दिया गया। परन्तु जब मीरकासिम भी देशहित में स्वतंत्र निर्णय लेने लगा और अंग्रेजों के हित प्रभावित होने लगे तो अंग्रेजों को 1764 ई० में एक दूसरा युद्ध करना पड़ा जिसे 'बक्सर का युद्ध' कहा जाता है। इस युद्ध में एक ओर अंग्रेजों की सेना तथा दूसरी ओर बंगाल के पूर्व नवाब मीरकासिम, अवध के नवाब शुजाउद्दौला तथा मुगल सम्राट शाहआलम की संयुक्त सेनाएँ थीं। इस युद्ध में भी अन्तत: 'हेक्टर मुनरो' के नेतृत्व में अंग्रेजी सेना विजयी हुई। इस युद्ध ने न केवल प्लासी के अपूर्ण कार्य को पूरा किया बल्कि उसने ब्रिटिश कंपनी को एक पूर्ण प्रभुता संपन्न बना दिया।

2. भारत में यूरोप से किन-किन देशों के लोग व्यापार करने आए? उनमें किस देश के लोगों को सफलता मिली और क्यों?

उ०– भारत में यूरोप से आने वाले देशों के व्यापारियों की श्रृंखला निम्नवत् रही–

(i) पुर्तगालियों का आगमन– 17 मई, 1498 ई० में पुर्तगाली नाविक वास्कोडिगामा ने भारत के पश्चिमी सागर तट पर स्थित कालीकट के बंदरगाह पर पहुँचकर अपने देश के व्यापारियों के लिए भारत का समुद्री मार्ग खोज लिया। भारत में सर्वप्रथम आने वाले पुर्तगाली ही थे। उन्होंने व्यापारिक संबंधों का सूत्रपात कर एक नए युग का शुभारंभ किया। भारत में पुर्तगाल की शक्ति की नींव डालने का श्रेय **अलफांसों अल्बुकर्क** को है, जो 1503 ई० में भारत आया। उसने कोचीन में पुर्तगालियों के लिए एक किले का निर्माण करवाया। 1505 ई० में **फ्रांसिस्को डी-अल्मीडा** पुर्तगाली गवर्नर बनकर भारत पहुँचा। उसने भारत-प्रवास की अवधि में पुर्तगाली नौसेना का गठन किया। 1509 ई० में अल्बुकर्क भारत में पुन: पुर्तगाली कार्यों का गवर्नर बनकर आया। उसने गोवा के बंदरगाह पर अधिकार जमाकर, दुर्ग को शक्तिसंपन्न बनाकर व्यापार को बढ़ाने का प्रयास किया। गोवा पुर्तगाली संस्कृति का क्रेंद्र बन गया। पुर्तगालियों ने दीव, दमन, चोल, चेन्नई तथा हुगली में अपनी बस्तियाँ स्थापित कीं। पुर्तगालियों का गोवा, दमन और दीव पर 1961 ई० तक अधिकार बना रहा।

(ii) डचों का आगमन– पुर्तगाल के निवासियों के भारत आगमन से उत्साहित होकर हॉलैंड के निवासी 'डच' भी भारत आए। 1602 ई० में हॉलैंड ने भारत में व्यापार करने के उद्देश्य से 'डच इंडिया कंपनी' की स्थापना की। 1596 ई० में **कार्निलियस ह्यूटमैन** भारत में आने वाला प्रथम डच नागरिक था। डचों ने भारत में आकर मसालों के व्यापार पर अपना एकाधिकार स्थापित कर लिया। दक्षिण भारत में उनका प्रभाव बढ़ गया। उन्होंने सूरत, भड़ौंच, अहमदाबाद, कोचीन, मछलीपट्टनम, चिंसुरा तथा पटना में अपनी व्यापारिक कोठियाँ स्थापित की। डच शीघ्र ही अंग्रेजों तथा फ्रांसीसियों की स्पर्द्धा के शिकार होकर असफल हो गए तथा हारकर भारत से लौट गए।

(iii) अंग्रेजों का आगमन– साम्राज्यवादी महत्वाकांक्षाओं से ओत-प्रोत और विस्तारवादी यूरोपीय शक्तियों में अग्रणी अंग्रेज जाति भारत के प्राकृतिक संसाधनों के साथ गरम मसालों तथा हस्तशिल्प की वस्तुओं का व्यापार करके पर्याप्त धन कमाने के मोह में बंधकर भारत भूमि में आ धमकी। 1600 ई० में **'ईस्ट इंडिया'** कंपनी बनी। विलियम हॉकिंस के नेतृत्व में अंग्रेजों का पहला जहाजी बेड़ा 1608 ई० में भारत पहुँचा। 1613 ई० में अंग्रेजों ने सूरत में अपनी व्यापारिक

कोठी की स्थापना की। 1615 ई० में **सर टॉमस रो** भारत आया और उसने मुगल सम्राट जहाँगीर से भारत में व्यापार करने की अनुमति प्राप्त की। इस अवधि में अंग्रेजों ने अपनी व्यापारिक कोठियाँ सूरत, अहमदाबाद और भड़ौंच में स्थापित कर लीं। 1640 ई० में ईस्ट इंडिया कंपनी ने मद्रास में एक किला स्थापित किया। कंपनी ने बाद में बंगाल तथा कोलकाता में भी व्यापारिक कोठियाँ बनाकर अपनी स्थिति को सुदृढ़ बनाया। ईस्ट इंडिया कंपनी का संघर्ष डचों तथा फ्रांसीसियों से होता रहा। क्योंकि वह भारत के व्यापार और सत्ता पर अपना अधिकार जमाना चाहते थे।

(iv) फ्रांसीसियों का आगमन– भारत-भूमि में प्रवेश करने वाले फ्रांसीसी सबसे बाद में पहुँचे। 1664 ई० में **फ्रैंच ईस्ट इंडिया कंपनी** की स्थापना की गई। भारत पहुँचकर उन्होंने पांडिचेरी और चंद्रनगर में अपनी व्यापारिक कोठियों की स्थापना की। 1742 ई० में **डूप्ले** पांडिचेरी का **गर्वनर** बनकर भारत आया। वह 12 वर्ष तक भारत में फ्रांसीसी प्रभुत्व बढ़ाने में लगा रहा। डूप्ले भारत में फ्रांसीसी राज्य स्थापित करना चाहता था। सूरत और मसुलीपट्टम फ्रांसीसियों के प्रसिद्ध व्यापारिक केंद्र बन चुके थे। भारत में व्यापार के वर्चस्व तथा सत्ता स्थापना को लेकर अंग्रेज और फ्रांसीसी आमने-सामने आ गए। अंग्रेज और फ्रांसीसियों के मध्य सत्ता को लेकर कर्नाटक के तीन युद्ध हुए। 1760 ई० में **वॉडीवाश** के युद्ध में अंग्रेजों ने फ्रांसीसियों को बुरी तरह परास्त किया। 1763 ई० में पेरिस संधि के साथ ही फ्रांसीसियों का प्रभुत्व समाप्त हो गया और भारत में सत्ता स्थापित करने का अवसर अंग्रेजों के पास ही रह गया।

भारत में अंग्रेजों की सफलता के कारण– भारत में व्यापार और सत्ता का जो संघर्ष फ्रांसीसियों और अंग्रेजों के बीच हुआ, उसमें निम्नलिखित कारणों से अंग्रेजों को सफलता प्राप्त हुई–

(i) अंग्रेज कंपनी की आर्थिक दशा उन्नत होने के कारण अंग्रेजों के पास धन और संसाधन अधिक थे।

(ii) पर्याप्त धन तथा अस्त्र-शस्त्रों के कारण अंग्रेज फ्रांसीसियों से सदैव जीतते रहे।

(iii) ईस्ट इंडिया कंपनी सर्वाधिकार रखती थी, अत: उसे परिस्थितियों के अनुरूप निर्णय लेने में कोई भी कठिनाई नहीं होती थी।

(iv) अंग्रेज सरकार ईस्ट इंडिया कंपनी को आर्थिक तथा अस्त्र-शस्त्रों की मदद देती रहती थी, जिससे उसकी विजय होती थी।

(v) अंग्रेज कंपनी के अधिकारियों में परस्पर सहयोग तथा विश्वास बना रहता था, जिससे वे सही निर्णय लेकर अपनी सफलता का मार्ग खोज लेते थे।

2. भारत में व्यापार तथा सत्ता जमाने के संघर्ष में फ्रांसीसियों की असफलता के कारणों की समीक्षा कीजिए।

उ०– फ्रांसीसियों की असफलता के कारण– अंग्रेज और फ्रांसीसियों में साम्राज्यवादी स्पर्द्धाएँ तो पहले से ही चली आ रही थीं, भारत में दोनों ही देश व्यापार और सत्ता पर एकाधिकार जमाना चाहते थे, अत: दोनों के स्वार्थ आपस में टकराने से संघर्ष होना स्वाभाविक था। इस संघर्ष में अंग्रेजों के मुकाबले फ्रांसीसी असफल रहे। फ्रांसीसियों की असफलता के कारणों को निम्नवत् स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) फ्रांसीसी कंपनी फ्रांस की सरकार पर पूरी तरह निर्भर थी। उसे आवश्यकता के समय न तो धन मिलता था और न तुरंत कार्यवाही करने का आदेश, जिससे उसे असफलता का मुख देखना पड़ा।

(ii) फ्रांसीसी कंपनी की आर्थिक दशा खराब थी, जिससे वह सैन्य उपकरण खरीदने में असमर्थ होकर असफल रही।

(iii) फ्रांसीसी कंपनी के अधिकारियों में एकता, सहयोग तथा विश्वास का अभाव था। वे एकमत से निर्णय नहीं कर पाते थे, जिससे उन्हें असफल रहना पड़ता था।

(iv) यूरोप में इंग्लैंड और फ्रांस परस्पर टकराते रहते थे। वहाँ भी फ्रांस पराजित हो जाता था, जिसका प्रभाव भारतीय फ्रांसीसी कंपनी पर भी पड़ता था।

(v) फ्रांसीसियों की नौसैनिक शक्ति अंग्रेजों की अपेक्षा दुर्बल थी, जिसके कारण उन्हें असफलता ही मिलती थी।

(vi) भारत में बंगाल अंग्रेजों के अधिकार में था, जो पर्याप्त आय देकर उन्हें शक्तिसंपन्न बना रहा था। इसके अभाव में फ्रांसीसी दुर्बल रह गए, अत: उन्हें असफलता ही हाथ लगी।

❖ प्रोजेक्ट कार्य

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

11 प्रथम स्वतंत्रता संग्राम– कारण एवं परिणाम

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 77 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 78 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. भारत में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के लिए उत्तरदायी तीन कारण लिखिए।

उ०– भारत में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के लिए उत्तरदायी तीन कारण निम्नलिखित हैं–

(i) डलहौजी ने राज्य-हड़प नीति चलाकर भारतीय राजाओं के सतारा, नागपुर तथा झाँसी राज्यों को ब्रिटिश साम्राज्य में मिलकार, इन्हें आंदोलित कर दिया।

(ii) अंग्रेजों ने कूटनीति का सहारा लेकर भारत के कुटीर उद्योगों को नष्ट करके भारत की अर्थव्यवस्था को चौपट कर दिया, जिससे बेरोजगार हुए कारीगर तथा व्यापारी रूष्ट हो गए।

(iii) अंग्रेज भारतीयों के साथ हीनता का व्यवहार करते थे। उनकी रंग-भेद नीति से भारतीय समाज उनसे रूष्ट हो गया।

2. क्या 1857 ई० की क्रांति वास्तव में एक सैनिक क्रांति थी। स्पष्ट कीजिए।

उ०– 1857 ई० का स्वतंत्रता संग्राम भारत का प्रथम स्वतंत्रता आंदोलन था। 1857 ई० की यह क्रांति केवल सैनिक क्रांति नहीं थी, यद्यपि इसका विस्फोट सैनिक विद्रोह के रूप में हुआ था, जबकि यह शीघ्र ही जन विद्रोह के रूप में परिणित हो गया। वास्तव में भारत का यह एक गौरवमय संग्राम था, जिसमें देश के हिंदू, मुस्लिम, सिक्ख और जैन लोगों ने कंधे से कंधा मिलाकर समान रूप से संघर्ष किया। सैनिक इस संघर्ष में मात्र अपने स्वार्थों के लिए लड़े, जबकि भारत के जन-गण का लक्ष्य भारतमाता को परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त करना तथा विदेशी शासन को भारत भूमि से उखाड़ फेंकना था।

3. 1857 ई० के स्वाधीनता संग्राम में रानी लक्ष्मीबाई के योगदान का उल्लेख कीजिए।

उ०– जब झाँसी के राजा और रानी लक्ष्मीबाई के पति गंगाधर राव नि:स्तान स्वर्ग सिधार गए तब रानी लक्ष्मीबाई दामोदर राव नामक बालक को दत्तक पुत्र के रूप में स्वीकार करके स्वयं उसकी संरक्षिका बनकर झाँसी में शासन करने लगी। **लार्ड डलहौजी** ने रानी के दत्तक पुत्र को अस्वीकार करते हुए राज्य-हड़प नीति के अंतर्गत झाँसी के राज्य को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया। रानी ने सिंह गर्जना कर कहा– "मैं अपनी झाँसी नहीं दूँगी" वह मर्दाने वेश में सेना के साथ अंग्रेजों का सामना करने के लिए मैदान में आ डटी। महारानी लक्ष्मीबाई 1858 ई० में ग्वालियर के किले के सामने अंग्रेजों से लोहा लेते समय शहीद हो गई। भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के क्रांतिकारियों में महारानी लक्ष्मीबाई का नाम विशेष रूप से स्मरण किया जाता है।

4. बेगम हजरत महल कौन थी? देश के स्वतंत्रता संग्राम में उसका योगदान बताइए।

उ०– बेगम हजरत महल अवध के नवाब वाजिद अली शाह की पत्नी थीं। भारत के पहले स्वतंत्रता संग्राम में उन्होंने ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के खिलाफ विद्रोह किया। जब अंग्रेज अधिकारियों ने अवध राज्य को हड़पकर उसके पति को कोलकाता भेज दिया तब बेगम हजरत महल ने अवध की बागडोर को अपने हाथों में ले लिया। वीर और साहसी महिला ने लखनऊ में क्रांतिकारियों का नेतृत्व किया। उन्होंने अपने कौशल और सैन्यबल से लखनऊ से अंग्रेजों का सफाया ही कर दिया। परंतु अंग्रेज जनरल **कैंपबेल** की सेनाओं ने उन्हें देश छोड़ने पर विवश कर दिया।

5. 1857 ई० के स्वतंत्रता संघर्ष की असफलता के क्या कारण थे? किन्हीं तीन का उल्लेख कीजिए।

उ०– 1857 ई० के स्वतंत्रता संघर्ष की असफलता के तीन कारण निम्नलिखित हैं–

(i) यह क्रांति उत्तर भारत के कुछ क्षेत्रों तक ही प्रभावी रही। भारत के संपूर्ण क्षेत्र में प्रभावी न होने से यह असफल रही।

(ii) इस क्रांति में देश की संपूर्ण जनता ने भागीदारी नहीं की, जिससे यह क्रांति असफल हो गई।

(iii) 1857 ई० की क्रांति का कोई एक नेता नहीं था। प्रत्येक क्षेत्र में लोग स्थानीय नेताओं के नेतृत्व में लड़े। एकता तथा संगठन का अभाव रहने से यह क्रांति असफल हो गई।

6. 1857 ई० की क्रांति में किहीं दो क्रांतिकारियों के योगदान का वर्णन कीजिए।

उ०– 1857 ई० की क्रांति में दो क्रांतिकारियों के योगदान निम्नलिखित हैं–

(i) मगल पांडे– वीर मंगल पांडे बैरकपुर छावनी में भारतीय सैनिक था। उसके हृदय में भारतमाता को अंग्रेजों से स्वतंत्र कराने की लालसा थी। उन्हें भारतीय क्रांतिकारियों का अग्रदूत कहा जाता है। 6 अप्रैल, 1857 ई० को छावनी में उन्होंने चर्बी लगे कारतूस को मुँह से खोलने से मना कर दिया, अत: अंग्रेज अधिकारियों ने उन्हें हथियार डाल देने का आदेश दिया। वीर सैनिक ने उत्तेजित होकर दो अंग्रेज अधिकारियों को गोलियों से भून डाला। उन्हें बंदी बनाकर जेल में डाल दिया गया तथा उन पर मुकदमा चलाकर 8 अप्रैल, 1857 ई० को बैरकपुर छावनी में फाँसी पर लटका दिया। मंगल पांडे का यही बलिदान 1857 ई० की क्रांति का मुख्य कारण बन गया।

(ii) बहादुरशाह जफर– भारत के अंतिम मुगल सम्राट को 1857 ई० में क्रांतिकारियों ने पुन: सम्राट घोषित कर क्रांति का नेतृत्व सौंप दिया। दिल्ली का लालकिला क्रांतिकारियों का केंद्र बन गया। बहादुरशाह जफर के नेतृत्व में दिल्ली को अंग्रेजों के प्रभाव से मुक्त करा लिया गया। बाद में बहादुरशाह जफर को बंदी बनाकर रंगून की जेल में डाल दिया गया, जहाँ 1862 ई० में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का यह अग्रदूत स्वर्ग सिधार गया। भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में बहादुरशाह जफर का नाम सदैव गौरव से स्मरण किया जाता रहेगा।

7. 1857 ई० की क्रांति के तीन प्रमुख परिणाम लिखिए।

उ०– 1857 ई० की क्रांति के तीन प्रमुख परिणाम निम्नलिखित हैं–

(i) इंग्लैंड की सरकार ने भारत को कंपनी के शासन से मुक्त करके सीधे ब्रिटिश ताज के अधीन कर दिया।

(ii) महारानी विक्टोरिया ने हड़प नीति तथा गोद निषेध के कानूनों को समाप्त कर दिया।

(iii) भारत में औपनिवेशिक प्रादेशिक विस्तारनीति के स्थान पर आर्थिक शोषण की नीति को लागू कर दिया गया।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. 1857 ई० के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और सैनिक कारणों की विवेचना कीजिए।

उ०– **1857 ई० के स्वतंत्रता संग्राम के कारण–** भारत में जन-भावनाएँ दीर्घकाल से ब्रिटिश शासन के विरुद्ध उमड़-घुमड़ रही थीं, जो उपयुक्त परिस्थितियाँ पाकर 1857 ई० में भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के रूप में विद्रोह की बूँदें बनकर बरस पड़ीं। 1857 ई० के भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम को जन्म देने के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) राजनीतिक कारण– भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम को जन्म देने में निम्नलिखित राजनीतिक कारण उत्तरदायी थे–

(क) डलहौजी ने राज्य-हड़प नीति चलाकर भारतीय राजाओं के सतारा, नागपुर तथा झाँसी राज्यों को ब्रिटिश साम्राज्य में मिलाकर, इन्हें आंदोलित कर दिया।

(ख) डलहौजी ने हैदराबाद तथा अवध के नवाब पर कुशासन का दोषारोपण करके, उन्हें अंग्रेजी साम्राज्य में मिलाकर क्रांति का वातावरण बना दिया।

(ग) डलहौजी ने नाना साहब की पेंशन छीनकर, उन्हें ब्रिटिश शासन का घोर शत्रु बना दिया।

(घ) अंग्रेजी शासन अनैतिक और स्वेच्छाचारी होने के कारण राजनीतिक दृष्टि से भारतीय जनता का विश्वास खो चुका था। अत: इससे बचने के लिए क्रांति के पथ पर चलना उनकी नियति बन गया।

(ii) आर्थिक कारण– भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के लिए निम्नलिखित आर्थिक कारण उत्तरदायी थे–

(क) अंग्रेजों ने कूटनीति का सहारा लेकर भारत के कुटीर उद्योगों को नष्ट करके भारत की अर्थव्यवस्था को चौपट कर दिया, जिससे बेरोजगार हुए कारीगर तथा व्यापारी रुष्ट हो गए।

(ख) अंग्रेजों ने भारत में जमींदारी प्रथा प्रारंभ करके, किसानों के शोषण का मार्ग खोलकर, उन्हें नाराज कर दिया था। अत: उन्होंने क्रांति करने का मन बना लिया।

(ग) अंग्रेज भारत से सस्ते मूल्य पर कच्चा माल इंग्लैंड ले जाते तथा वहाँ से तैयार माल भारत में लाकर बेचते थे। इससे भारतीय उद्योग नष्ट हो गए। अत: भारत का व्यावसायिक वर्ग अंग्रेजों के विरुद्ध उठ खड़ा हुआ।

(घ) भारत में मशीनों का प्रयोग बढ़ने से बेरोजगारों की फौज खड़ी हो गई, जो ब्रिटिश शासन को भारत से उखाड़ फेंकने के लिए कटिबद्ध हो गई।

(iii) सामाजिक कारण– अंग्रेज भारतीय सामाजिक परंपराओं का विरोध ही नहीं उनमें हस्तक्षेप भी करने लगे थे। अत: 1857 ई० के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के लिए निम्नलिखित सामाजिक कारण भी उत्तरदायी बने–

(क) अंग्रेज भारतीयों के साथ हीनता का व्यवहार करते थे। उनकी रंग-भेद की नीति से भारतीय समाज उनसे रुष्ठ हो गया।

(ख) अंग्रेज भारतीयों को **ब्लैक डॉग** या **सुअर** कहकर संबोधित करके, उनका सामाजिक अपमान करते थे, जिससे भारतीय उनके विरुद्ध हो गए।

(ग) अंग्रेज पाश्चात्य सभ्यता में रचे-बसे लोगों को उच्च राजकीय पदों पर नियुक्त करते थे, जबकि क्लर्क का पद भारतीयों को दिया जाता था। यह पक्षपात विद्रोह का कारण बन गया।

(घ) अंगेजों ने आँग्ल भाषा तथा पाश्चात्य सभ्यता के प्रचार-प्रसार पर बल देकर, भारतीय सामाजिक व्यवस्था को नष्ट करने का प्रयास किया। जिससे जन-जन उनके विरुद्ध उठ खड़ा हुआ।

(ङ) भारतीयों द्वारा गाँव-गाँव, नगर-नगर में चपातियाँ बाँटकर तथा सामाजिक जागरण कर क्रांति की अलख जगाई गई, जिससे क्रांति का वातावरण तैयार हो गया।

(iv) सैनिक कारण– भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में भारतीय सैनिकों ने भी बढ़-चढ़कर भागीदारी की। अत: निम्नलिखित सैनिक कारण भी इसके लिए उत्तरदायी थे–

(क) अंग्रेज सेना में उच्च पदों पर अंग्रेज सैनिकों को नियुक्त करते थे। उनके इस पक्षपातपूर्ण व्यवहार से भारतीय सैनिक रुष्ट हो रहे थे।

(ख) भारतीय सैनिकों को अंग्रेज सैनिकों की अपेक्षा कम वेतन दिया जाता था। इस अनैतिक व्यवहार ने भारतीय सैनिकों को आंदोलित कर दिया।

(ग) भारतीय सैनिकों को सेना में सबसे आगे रखा जाता था, जिससे उन्हें जान गँवानी पड़ती थी। अंग्रेजों की यह नीति भारतीय सैनिकों को रुष्ठ बनाएँ हुए थी।

(घ) अंग्रेजों ने गाय और सुअर की चर्बी लगे कारतूस सेना के प्रयोग हेतु बनवाए, जिन्हें मुँह से खोलकर प्रयोग करना पड़ता था। इसे हिंदू तथा मुस्लिम सैनिकों ने धर्म विरुद्ध मानकर क्रांति करने का दृढ़ निश्चय कर लिया।

(ङ) सैनिक छावनियों में 'लाल कमल' बाँटकर क्रांति करने का आह्वान किया गया था, जिससे सैनिकों ने इस क्रांति में जनसाधारण का साथ देने का मन बना लिया।

(v) धार्मिक कारण– अंग्रेजों ने भारत के धार्मिक क्रिया-कलापों में भी हस्तक्षेप करना प्रारंभ कर दिया था, जिसे भारतीय जनता ने अपने धार्मिक विश्वासों का हनन मानकर निम्नलिखित कारणों से क्रांति का मंत्र फूँक दिया–

(क) अंग्रेज मिशनरी भारतीयों को ईसाई धर्म स्वीकार कराने में जुटी थीं। ईसाई धर्म स्वीकार करने वालों को आर्थिक मदद तथा सरकारी नौकरियाँ दी जाती थीं। इस व्यवस्था से भारतीय जनमानस भड़क उठा और उसने क्रांति करने की ठान ली।

(ख) अंग्रेज भारत में अंग्रेजी शिक्षा तथा पाश्चात्य धर्म और संस्कृति का धुँआधार प्रचार करने में जुटे थे। इसे भारतीयों ने अपने धर्म और संस्कृति पर प्रहार मानकर अंग्रेजों के प्रति विद्रोह करने का मन बना लिया।

(ग) डलहौजी ने धार्मिक अयोग्यता नियम पारित करके भारतीय धार्मिक नियमों को उलटकर लोगों को आंदोलन के लिए तैयार कर दिया।

(घ) अंग्रेज हिंदू और मुस्लिम धर्मों की अवहेलना ही नहीं करते थे वरन् वे दोनों को परस्पर लड़ाते भी थे। अत: दोनों धर्मों के अनुयायी इस शासन के विरुद्ध विद्रोह कर उठे।

2. 1857 ई० के स्वतंत्रता संग्राम की असफलताओं के कारणों की विवेचना कीजिए।

उ०– भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम (1857 की क्रांति) की असफलता के कारण– 1857 ई० में भारतवासियों ने संगठित होकर विदेशी सत्ता को उखाड़ फेंकने तथा अंग्रेजों को भारत भूमि से बाहर खदेड़ने के लिए जो गौरवशाली महासंग्राम किया, वह असफल रहा। इसकी असफलता के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) 1857 ई० की क्रांति करने के लिए 31 मई की तिथि निश्चित हुई थी; परंतु उसे 10 मई को ही मेरठ से प्रारंभ कर दिया, जिससे इसे सफलता नहीं मिल सकी।

(ii) यह क्रांति उत्तर भारत के कुछ क्षेत्रों तक ही प्रभावी रही। भारत के संपूर्ण क्षेत्र में प्रभावी न होने से यह असफल रही।

(iii) इस क्रांति में देश की संपूर्ण जनता ने भागीदारी नहीं की, जिससे यह क्रांति असफल हो गई।

(iv) 1857 ई० की क्रांति का कोई एक नेता नहीं था। प्रत्येक क्षेत्र में लोग स्थानीय नेताओं के नेतृत्व में लड़े। एकता तथा संगठन का अभाव रहने से यह क्रांति असफल हो गई।

(v) 1857 ई० की क्रांति किसी एक लक्ष्य को लेकर नहीं लड़ी गई, जिसके कारण यह असफल हो गई।

(vi) इस क्रांति में नवाबों तथा देशी रियासतों के नरेशों ने अंग्रेजों के स्वामिभक्त बनकर, उनका साथ दिया और क्रांति को असफल कर दिया।

(vii) क्रांतिकारियों के पास अस्त्र-शस्त्रों तथा संसाधनों का नितांत अभाव था, जिसके कारण उन्हें तथा क्रांति को असफलता का मुख देखना पड़ा।

(viii) अंग्रेज देश के शासक थे। उनके पास सेना, अस्त्र-शस्त्र तथा संसाधन पर्याप्त मात्रा में थे। इसीलिए वे क्रांति को असफल करने में सफल हो गए।

(ix) अंग्रेजों ने क्रांति को कुचल डालने के लिए लोगों को तोप से उड़वाया, गाँवों को आग से जलाया तथा क्रांतिकारियों को जलती हुई आग में झोंककर भय तथा आतंक फैलाकर क्रांति को असफल बना दिया।

(x) **लार्ड कैनिंग** ने उदारता तथा कूटनीति दिखाकर यह घोषणा कर दी कि जो हथियार डाल देगा उसे क्षमा कर दिया जाएगा। लोगों ने हथियार डालकर क्रांति को असफल बना दिया।

1857 ई० की क्रांति में भारतीय जनता में एकता और सहयोग का अभाव होने से इस महान क्रांति को असफलता का मुख देखना पड़ा। **सर डब्लू रसरन** के अनुसार, "यदि समस्त भारतवासी सर्वतोभाव से अंग्रेजों के विरुद्ध हो गए होते, तो अपने साहस के रहते भी अंग्रेज पूर्णतया नष्ट कर दिए गए होते।"

3. 1857 ई० के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के परिणामों की विवेचना कीजिए।

उ०– भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम (1857 ई० की क्रांति) के परिणाम– ग्राफिन महोदय ने लिखा है, "1857 ई० के संघर्ष से भाग्यशाली घटना शायद भारत के इतिहास में कोई नहीं हुई।" यह एक जन आंदोलन और राष्ट्रीय संघर्ष था। यद्यपि भारत का यह प्रथम स्वतंत्रता संग्राम सफलता का लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सका, फिर भी इसके बड़े दूरगामी और महत्वपूर्ण परिणाम हुए। 1857 ई० की क्रांति के परिणाम निम्नलिखित रहे–

(i) इंग्लैंड की सरकार ने भारत को कंपनी के शासन से मुक्त करके सीधे ब्रिटिश ताज के अधीन कर दिया।

(ii) महारानी विक्टोरिया ने हड़प नीति तथा गोद निषेध के कानूनों को समाप्त कर दिया।

(iii) भारत में अब औपनिवेशिक प्रादेशिक विस्तारनीति के स्थान पर आर्थिक शोषण की नीति को लागू कर दिया गया।

(iv) भारतीय जनमानस में अंग्रेजों के विरुद्ध घृणा तथा द्वेष का भाव जागृत होने से राष्ट्रप्रेम की भावना बलवती हो गई।

(v) भारतीय राजनेताओं का एकमात्र लक्ष्य ब्रिटिश शासन से मुक्ति पाना तथा अंग्रेजों को भारत से बाहर भगाना बन गया।

(vi) 1857 ई० की क्रांति ने हिंदू-मुस्लिम विभेद की खाई को पाटकर, हिंदू-मुस्लिम एकता का नया अध्याय प्रारंभ कर दिया।

(vii) ब्रिटिश शासन ने मुस्लिम तुष्टिकरण की नीति अपनाकर 'फूट डालो शासन करो' के माध्यम से भारत के विभाजन का रास्ता बना दिया।

(viii) उनकी इस नीति ने जातिय भेदभाव को बढ़ा दिया।

(ix) अंग्रेज सेना का पर्नुगठन करने पर विवश हो गए तथा सेना में भारतीय सैनिकों की संख्या कम कर दी गई।

(x) इस क्रांति ने ब्रिटिश को भारी क्षति पहुँचाई और पूरा शासन डाँवाडोल हो गया। भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम ने भारतीय गगन मंडल को अनेक शंकाओं से मुक्त करके संवैधानिक सुधारों के इस युग का सूत्रपात कर दिया। इस आंदोलन ने ब्रिटिश शासन की नींव हिला दी तथा भावी आंदोलनों के लिए पथ प्रशस्त कर दिया।

4. 1857 ई० के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के किहीं चार क्रांतिकारियों का उल्लेख करते हुए उनके द्वारा लिए गए संघर्षों का विवरण दीजिए।

उ०– उत्तर के लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या-3, 4 व 6 के उत्तरों का अवलोकन कीजिए।

5. 1857 ई० के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में महिला क्रांतिकारियों के योगदान का उल्लेख कीजिए।

उ०– 1857 ई० के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में महिला क्रांतिकारियों का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। कुछ प्रमुख क्रांतिकारी महिलाओं का योगदान निम्नलिखित है–

(i) बेगम हजरत महल– भारतीय स्वतंत्रता के प्रथम संग्राम में क्रांतिकारी गतिविधियों में भागीदारी निभाने में महिलाएँ भी पीछे नहीं रहीं। बेगम हजरत महल ऐसी ही क्रांतिकारी महिला थीं। वे अवध राज्य की बेगम थी। इस वीर और साहसी महिला ने लखनऊ में क्रांतिकारियों का नेतृत्व किया। उन्होंने अपने कौशल और सैन्यबल से लखनऊ से अंग्रेजों का सफाया ही कर दिया। परंतु अंग्रेज जनरल **कैंपबेल** की सेनाओं ने उन्हें देश छोड़ने पर विवश कर दिया।

(ii) महारानी लक्ष्मीबाई– महारानी लक्ष्मीबाई का बचपन का नाम मनु था। उनका विवाह झाँसी के राजा गंगाधर राव स हुआ था। राजा गंगाधार राव 1853 ई० में नि:संतान स्वर्ग सिधार गए। महारानी ने दामोदर राव नामक बालक को दत्तक पुत्र के रूप में स्वीकार कर लिया और स्वयं उसकी संरक्षिका बनकर झाँसी में शासन करने लगी। **लार्ड डलहौजी** ने रानी के दत्तक पुत्र को अस्वीकार करते हुए राज्य–हड़प नीति के अंतर्गत झाँसी के राज्य को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया। रानी ने सिंह गर्जना कर कहा– "मैं अपनी झाँसी नहीं दूँगी" वह मर्दाने वेश में सेना के साथ अंग्रेजों का सामना करने के लिए मैदान में आ डटी। महारानी लक्ष्मीबाई 1858 ई० में ग्वालियर के किले के सामने अंग्रेजों से लोहा लेते समय शहीद हो गई। भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के क्रांतिकारियों में महारानी लक्ष्मीबाई का नाम विशेष रूप से स्मरण किया जाता है।

(iii) रानी अवंतिबाई– रानी अवंतिबाई मध्यप्रदेश राज्य की छोटी–सी रियासत रामगढ़ की रानी थी। उन्होंने अंग्रेजी सेना से टक्कर लेने के लिए एक शक्तिशाली सेना का गठन किया। उन्होंने अकेले ही मध्यप्रदेश में क्रांति का संचालन किया और वीरतापूर्वक अंग्रेजों की सेना का मुकाबला किया। उन्होंने प्राण–प्रण से अंग्रेजों के साथ जूझते हुए अंग्रेज सेना के छक्के छुड़ा दिए। दीर्घकाल तक विशाल अंग्रेज सेना का सामना करते हुए क्रांति की यह चिंगारी बुझ गई। उनकी वीरता और बलिदान का आलोक क्रांतिकारियों के पथ को प्रकाशित करता रहेगा।

6. क्या 1857 ई० की क्रांति मात्र एक सैनिक क्रांति थी? अंग्रेजी शासन के विरूद्ध भारतीयों के असंतोष के चार कारण दीजिए।

उ०– भारतवासियों के हृदयों में अंग्रेजी शासन के प्रति जो रोष तथा संताप धीरे–धीरे सुलग रहा था, वह 1857 ई० में जनविद्रोह के रूप में आग बनकर धधक उठा। भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम इतिहास की एक अनुपम घटना थी, क्योंकि भारत के अधिकांश जन–गण इस विद्रोह से जुड़ गए। इतिहासकारों ने भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के स्वरूप को निम्नवत् विविध रूपों में व्यक्त कर अपनी अभिव्यक्तियाँ प्रस्तुत की हैं–

"1857 ई० का भारतीय स्वतंत्रता का प्रथम संग्राम मुख्य रूप से एक सैनिक क्रांति था।" **–सर जॉन लारेन**

"1857 ई० का भारतीय स्वतंत्रता का प्रथम संग्राम एक मुस्लिम षड्यंत्र था।" **–सर जेम्स आउटरम**

"यह केवल एक सैनिक संघर्ष था, जिसका तात्कालिक कारण कारतूस वाली घटना थी।" **–पी०ई० राबर्ट्स**

"यह धर्मांधों का ईसाइयों के विरुद्ध युद्ध था।" **–एल०ई०आर रीज**

"1857 ई० की क्रांति भारत का प्रथम स्वाधीनता संग्राम था।" **–वीर सावरकर**

"1857ई० का स्वतंत्रता संग्राम भारत का प्रथम राष्ट्रीय आंदोलन था।" **–अशोक मेहता**

"1857 ई० का विद्रोह केवल सैनिक विद्रोह नहीं था, यद्यपि इसका विस्फोट सैनिक विद्रोह के रूप में हुआ था, जबकि यह शीघ्र ही जनविद्रोह के रूप में परिणित हो गया।" **–पं० जवाहरलाल नेहरू**

उपर्युक्त अभिव्यक्तियों के विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि 1857 ई० की क्रांति भारत का एक गौरवमय संघर्ष था, जिसमें देश के हिंदू, मुस्लिम, सिक्ख और जैन लोगों ने कंधे से कंधा मिलाकर समान रूप से संघर्ष किया। सैनिक इस संघर्ष में मात्र अपने स्वार्थों के लिए लड़े, जबकि भारत के जन–गण का लक्ष्य भारत माता को परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त कराना तथा विदेशी शासन को भारत–भूमि से उखाड़ फेंकना था। भारत में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध 1857 ई० में भड़की क्रांति भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम थी।

अंग्रेजी शासन के विरूद्ध भारतीयों के असंतोष के कारण- इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के कारणों का उल्लेख कीजिए।

7. प्रथम स्वतंत्रता की असफलता के कारणों पर प्रकाश डालते हुए बताइए कि किस प्रकार उसके परिणाम महत्वपूर्ण एवं दूरगामी थे?

उ०– **प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की असफलता के कारण–** उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 2 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के परिणाम- उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

8. 1857 ई० के भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– सन् 1857 ई० का प्रथम स्वाधीनता संग्राम असफल रहा, तथापि इसके परिणाम बहुत महत्वपूर्ण और दूरगामी हुए। इसके फलस्वरूप भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन का अंत हो गया और भारत पर ब्रिटिश संसद की सम्प्रभुता स्थापित हो गई। **बोर्ड ऑफ कण्ट्रोल** तथा **बोर्ड ऑफ डाइरेक्टर्स** को भंग करके उनके स्थान पर **भारत मंत्री का पद** तथा उसकी काउंसिल की स्थापना कर दी गई। इंग्लैंड की महारानी विक्टोरिया ने सन् 1858 में एक घोषणा की, जिसमें भारतीयों को उदारवादी शासन तथा अनेक प्रकार की सुविधाएँ देने का वचन दिया। भारत में ब्रिटिश सेना के अंतर्गत अंग्रेज सैनिकों की संख्या में वृद्धि कर दी गई। इस क्रांति के फलस्वरूप अंग्रेजों और भारतीयों में कटुता उत्पन्न हो गइ।। अत: अंग्रेज शासकों ने आगे चलकर हिन्दुओं और मुसलमानों को अलग-अलग रखने के लिए **'फूट डालो-शासन करो'** की नीति अपनाई। इस क्रांति के परिणामस्वरूप भारत में राष्ट्रीय जागरण को अत्यधिक प्रोत्साहन मिला। इस क्रांति के बाद भारत में वैधानिक शासन का विकास शुरू हो गया, जो स्वाधीनता प्राप्त करने तथा लोकतंत्र की स्थापना तक निरंतर चलता रहा। इस क्रांति के फलस्वरूप भारतीयों के मन में अपनी स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने की प्रवृत्ति बढ़ने लगी, जिसके फलस्वरूप सन् 1885 में **अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस** के नेतृत्व में राष्ट्रीय आंदोलन का सूत्रपात हुआ, जो स्वाधीनता प्राप्त होने तक निरंतर चलता रहा।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

12 नवजागरण तथा राष्ट्रीयता का विकास

(उदारवादी, अनुदारवादी)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 90 व 91 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 91 व 92 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. उन्नीसवीं शताब्दी के भारतीय पुनर्जागरण से क्या अभिप्राय है?

उ०– **पुनर्जागरण का अर्थ–** सोए हुए व्यक्ति का जागकर चेतन हो जाना और विद्या, विज्ञान तथा धर्म के अनुरूप आचरण करना ही पुनर्जागरण कहा जाता है। पुनर्जागरण का शाब्दिक अर्थ है 'फिर से चेतना ग्रहण करना'। दूसरे शब्दों में, "अज्ञानता, अनैतिकता और अंधविश्वासों को छोड़कर विद्या, विज्ञान एवं धर्म के नवीनतम् सुधरे स्वरूप का आचरण करना ही पुनर्जागरण है।" भारतीय संस्कृति प्राचीन और शाश्वत है। बीच-बीच में बाह्य प्रभावों और समन्वय से समाज, धर्म और संस्कृति के मूल्यों में विकृतियाँ उत्पंन होती रही हैं; अत: सुधार आंदोलनों की छलनी में छानकर उंहें शुद्ध और निर्मल बनाना आवश्यक हो जाता है। 19वीं शताब्दी भारत में बौद्धिक चिंतन तथा समाज और धर्म-सुधार की दृष्टि से बड़ी महत्वपूर्ण मानी जाती है। यह काल भारतीय समाज और धर्म में आई कुरीतियों को दूर कर नई चेतना और सुधारों के द्वारा पुनर्जागरण लाने का साधन बना। भारत के इसी सामाजिक और धार्मिक पुनरुद्धार आंदोलन को पुनर्जागरण और राष्ट्रीयता के विकास का नाम दिया गया। पुनर्जागरण ने भारत के समाज, धर्म, कला और साहित्य को गहराई तक प्रभावित किया। इससे भारत का चहुँमुखी विकास ही नहीं हुआ वरन् वहाँ नवीन चेतना और राष्ट्रभक्ति का स्वर्णिम काल प्रारंभ हुआ।

2. भारत में नवजागरण के द्वारा किस प्रकार समाज-सुधार को प्रोत्साहन मिला?

उ०– उत्तर के लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या-1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

3. गोपाल कृष्ण गोखले और बाल गंगाधर तिलक के विचारों में क्या अंतर है?

उ०– तिलक एवं गोखले दोनों उच्चकोटि के महान देशभक्त एवं राष्ट्रीय नेता थे किंतु दोनों के विचारों में मौलिक अंतर था। **डॉ० पट्टाभि सीतारमैय्या** ने अपने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के इतिहास में तिलक और गोखले की तुलना इस प्रकार की है– तिलक और गोखले दोनों ऊँचे दर्जे के देशभक्त थे। दोनों ने जीवन में भारी त्याग किया था, परंतु उनके स्वभाव एक-दूसरे से बहुत भिन्न थे। यदि हम उस समय की भाषा का प्रयोग करें तो कह सकते हैं कि गोखले नरम विचारों के थे और तिलक गरम विचारों के। गोखले मौजूदा संविधान को मात्र सुधारना चाहते थे लेकिन तिलक उसे नए सिरे से बनाना चाहते थे। गोखले को नौकरशाही के साथ मिलकर कार्य करना था, तिलक को उससे अनिवार्यत: संघर्ष करना था। गोखले जहाँ संभव हो, सहयोग करने तथा जहाँ जरूरी हो, विरोध करने की नीति के पक्षपाती थे। तिलक का झुकाव रूकावट तथा अडंगा डालने की नीति की ओर था। गोखले को प्रशासन तथा उनके सुधार की मुख्य चिंता थी, तिलक के लिए राष्ट्र तथा उसका निर्णय मुख्य था। गोखले का आदर्श था– प्रेम और सेवा, तिलक का आदर्श था– सेवा और कष्ट सहना। गोखले विदेशियों को अपने पक्ष में करने का प्रयत्न करते थे, तिलक का तरीका विदेशियों को देश से हटाना था। गोखले दूसरों की सहायता पर निर्भर करते थे, तिलक अपनी सहायता स्वयं करना चाहते थे। गोखले उच्च वर्ग और शिक्षित लोगों की ओर देखते थे, तिलक सर्वसाधारण या आम जनता की ओर। गोखले का अखाड़ा था– कौंसिल भवन, तिलक का मंच था– गाँव की चौपाल। गोखले अंग्रेजी में लिखते थे, तिलक मराठी में। गोखले का उद्‌देश्य था– स्वशासन, जिसके लिए लोगों को अंग्रेजों द्वारा पेश की गई कसौटी पर खरा उतरकर अपने को योग्य साबित करना था, तिलक का उद्‌देश्य था– स्वराज्य, जो प्रत्येक भारतवासी का जन्मसिद्ध अधिकार था और जिसे वे बिना किसी बाधा की परवाह किए लेकर ही रहेंगे। गोखले अपने समय के साथ थे, जबकि तिलक अपने समय के बहुत आगे।

4. राजाराम मोहन राय के जीवन एवं कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– राजाराम मोहन राय की गणना भारत के महान समाज सुधारकों में की जाती है। उनका जन्म 1772 ई० में बंगाल में हुआ था। उनके पिता का नाम रमाकांत और माता का नाम तारणी देवी था। राजाराम मोहन राय ने अंग्रेजी, अरबी, फारसी तथा संस्कृत भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर रखा था। देश की सेवा करते हुए 27 सितंबर, 1833 ई० में वे स्वर्ग सिधार गए।

राजाराम मोहन राय ने समाज सेवा का कार्य करते हुए भारत में नए युग का सूत्रपात किया। वे आधुनिक भारत के जनक कहे जाते हैं। सतीप्रथा तथा बाल विवाह जैसी कुप्रथाओं को समाज से समाप्त कराने में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा। समाज और धर्म के क्षेत्र में सुधार के लिए राजाराम मोहन राय ने 1828 ई० में कोलकाता में ब्रह्मसमाज की स्थापना की।

5. स्वामी विवेकानंद कौन थे? रामकृष्ण मिशन के दो कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– स्वामी विवेकानंद भारत के प्रसिद्ध विद्वान थे। स्वामी विवेकानंद के बचपन का नाम नरेंद्रनाथ था। इनका जन्म 12 जनवरी, 1863 ई० में कोलकाता में हुआ था। इनके पिता का नाम विश्वनाथ दंत तथा माता का नाम भुवनेश्वरी देवी था। इनके गुरू का नाम रामकृष्ण परमहंस था। विवेकानंद ने 1897 ई० में कोलकाता में रामकृष्ण मिशन की स्थापना कर धार्मिक एवं सामाजिक सुधार आंदोलन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। स्वामी विवेकानंद ने अमेरिका के शिकागो नगर में आयोजित विश्वधर्म सम्मेलन में भाग लेकर संपूर्ण विश्व में भारतीय संस्कृति और हिंदू धर्म का मान बढ़ाया।

रामकृष्ण मिशन के दो कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) मानव जाति की सेवा करना

(ii) देश-विदेश में भारतीय संस्कृति का प्रचार करना।

6. नवजागरण के भारतीय समाज पर पड़ने वाले तीन प्रमुख प्रभावों का वर्णन कीजिए।

उ०– नवजागरण के भारतीय समाज पर पड़ने वाले तीन प्रमुख प्रभाव निम्नलिखित हैं–

(i) नवजागरण के कारण अंधविश्वास और कुरीतियों का अंत होने से भारतीय समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का उदय हुआ।

(ii) वैज्ञानिक दृष्टिकोण ने भारतीय समाज में प्रगतिवाद और विकास की नई धारा को जन्म दिया।

(iii) नवजागरण के कारण समाज सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से प्रबुद्ध बन गया।

7. ब्रह्म समाज का संस्थापक कौन था? ब्रह्म समाज के दो कार्यों पर प्रकाश डालिए।

उ०– ब्रह्म समाज के संस्थापक राजाराम मोहनराय थे। ब्रह्म समाज के दो कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) ब्रह्म समाज ने अंधविश्वास तथा रूढ़िवाद को दूर करते हुए बाल विवाह, सती प्रथा तथा बहु विवाह पर रोक लगाई।

(ii) ब्रह्म समाज ने लाखों हिंदुओं को ईसाई बनने से बचाया।

8. भारत में नवजागरण लाने में किहीं दो शक्तियों के योगदान को स्पष्ट कीजिए।

उ०– भारत में नवजागरण लाने में दो व्यक्तियों के योगदान निम्नलिखित हैं–

(i) राजाराम मोहन राम का योगदान– भारतीय समाज एवं धर्म में व्याप्त बुराईयों को दूर करने के उद्देश्य से राजाराम मोहन राय ने 1828 ई० में ब्रह्म समाज की स्थापना की। इस संस्था के माध्यम से उन्होंने ही सर्वप्रथम देश में नवजागरण का कार्य प्रारंभ करके अनेक सामाजिक तथा धार्मिक सुधार के कार्य किए। सती प्रथा, बाल विवाह, बहु विवाह, जाति प्रथा एवं छुआछूत आदि सामाजिक बुराइयों का उन्होंने जोरदार विरोध किया।

(ii) स्वामी विवेकानंद का योगदान– भारत में नवजागरण लाने के लिए स्वामी विवेकानंद ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। समाज के उत्थान और धर्म सुधार को ध्यान में रखकर स्वामी विवेकानंद ने रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। विवेकानंद ने देशभर में शिक्षा और ज्ञान का प्रकाश फैलाने के लिए रामकृष्ण मिशन के माध्यम से शिक्षण संस्थाएँ स्थापित कीं। इनका भारतीय संस्कृति सभ्यता ओर राष्ट्रीयता के विकास में अद्वितीय योगदान दिया।

9. राष्ट्रीय भावना के विकास में आर्य समाज का क्या योगदान था?

उ०– राष्ट्रीय भावना के विकास में स्वामी दयानंद सरस्वती द्वारा स्थापित आर्य समाज का योगदान निम्न प्रकार है–

(i) दयानंद सरस्वती ने आर्य समाज के माध्यम से भारत में राष्ट्रीयता की ज्योति जगाई।

(ii) स्वदेशी व स्वराज्य का प्रयोग करके लोगों में देश प्रेम और स्वतंत्रता की अलाख जगाई।

(iii) आर्य समाज ने लोगों को हिंदी भाषा के हृदय से अपनाने का संदेश दिया।

(iv) दयानंद सरस्वती ने '*भारत, भारतवासियों के लिए है*' का उद्घोष करके जन-जन में भारत माँ के प्रति अनुराग जगाया।

(v) आर्य समाज ने आर्थिक क्षेत्र में भारत को सबल बनाने के लिए स्वदेशी पर बल दिया।

10. मुस्लिम-सुधार आंदोलन के महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– हिंदू आंदोलनों के प्रतिक्रिया स्वरूप मुस्लिम समाज के आधुनिकरण के लिए भी मुस्लिम सुधार आंदोलन प्रारंभ हुए। इन आंदोलनों ने जहाँ सामाजिक कुरीतियों और धार्मिक अंधविश्वासों को दूर करने में योगदान दिया, वहीं भारतीयों में राष्ट्रीय चेतना के उत्थान में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। बहाबी आंदोलन, अलीगढ़ आंदोलन, अहमदिया आंदोलन, देवबंद आंदोलन आदि द्वारा मुस्लिम समाज को राष्ट्रीय स्तर पर जागरूक बनाया गया।

11. अलीगढ़ एवं अहमदिया आंदोलनों के विषय में संक्षेप में लिखिए।

उ०– **अलीगढ़ आंदोलन–** अलीगढ़ मुस्लिम आंदोलन के प्रणेता **सर सैय्यद अहमद खाँ** थे। वे मुसलमानों को अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से आधुनिक बनाना चाहते थे। इस महान उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने 1875 ई० में अलीगढ़ में **मुस्लिम एंग्लो ओरियंटल कॉलेज** की स्थापना की। कॉलेज के रूप में रोपा गया शिक्षा का यह पौधा कालांतर में अलीगढ़ मुस्लिम यूनीवर्सिटी के रूप में वृक्ष बनकर शिक्षा, विज्ञान और संस्कृति का आलोक फैलाने लगा। सर सैय्यद अहमद खाँ ने अपने इस मुस्लिम-सुधार आंदोलन से मुस्लिम समाज और धर्म में व्याप्त कुरीतियों को दूर किया। अंग्रेजी शिक्षा, ज्ञान, विज्ञान एवं प्रगतिशीलता के लिए मुस्लिम समाज उनका सदैव ऋणी रहेगा, क्योंकि उन्होंने मुस्लिम समाज को रूढ़िवादिता का त्याग कर बदलते विश्व के साथ चलने की प्रेरणा दी।

अहमदिया आंदोलन– अहमदिया आंदोलन के सूत्रधार **मिर्जा गुलाम अहमद** थे। उनके इस आंदोलन का लक्ष्य इस्लाम धर्म को सार्वभौमिक धर्म बनाना था। उनका मत था कि मुसलमानों को प्रगतिशील, औद्योगिक और तकनीकी ज्ञान से युक्त बन जाना चाहिए। मिर्जा गुलाम अहमद साहब ने इस आंदोलन का सूत्रपात 1899 ई० में करके मुसलमानों में राष्ट्रीय चेतना जगाने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

12. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का विभाजन क्यों हुआ? कोई तीन कारण स्पष्ट कीजिए।

उ०– भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के विभाजन के तीन कारण निम्नलिखित हैं-

(i) कांग्रेस विभाजन का मुख्य कारण उसमें दो विरोधी विचारधाराओं उदारवादी एवं उग्रवादी समर्थकों का होना था।

(ii) 1907 में बंगाल-विभाजन के कारण दोनों दलों में मतभेद काफी बढ़ गए थे। उग्र राष्ट्रवादी नेताओं ने अपने समर्थकों के साथ पृथक बैठक कर ब्रिटिश शासन के विरूद्ध असहयोग, बहिष्कार तथा स्वदेशी आंदोलन चलाने पर जोर दिया जबकि उदारवादी नेताओं ने इन विचारों को स्वीकार नहीं किया।

(iii) 1907 ई० को सूरत अधिवेशन में मुख्य विवाद 'अध्यक्ष' के प्रश्न को लेकर हुआ। उग्र राष्ट्रवादी लाला लाजपत राय को तथा उदारवादी डॉ० रासबिहारी बोस को अधिवेशन का अध्यक्ष बनाना चाहते थे। इस प्रकार दोनो दलों में मतभेदों के कारण कांग्रेस का विभाजन हुआ।

13. कांग्रेस के गरमदल और नरमदल के नेताओं की नीतियों के तीन अंतर स्पष्ट कीजिए।

उ०– **नरमदल नेता और गरमदल नेता की नीतियों में अंतर–** कांग्रेस के नरम दल तथा गरम दल की नीतियों में मुख्य रूप से निम्नलिखित अंतर थे–

(i) उदारवादियों के अनुसार भारत में सुधार लाने के लिए ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध संवैधानिक साधन अपनाकर शांतिपूर्ण ढंग से आंदोलन चलाया जाए, जबकि अनुदारवादी उग्र आंदोलन चलाने के पक्षधर थे।

(ii) उदारवादी नेता शिष्टाचारपूर्वक अंग्रेजों की नीतियों का विरोध करना चाहते थे, जबकि अनुदारवादी नेता उग्र जन-आंदोलनों द्वारा लक्ष्य पाना चाहते थे।

(iii) उदारवादी नेता ब्रिटिश शासन को भारत के लिए वरदान मानते थे क्योंकि इससे भारतवासियों को बहुत कुछ सीखने और जानने को मिला, जबकि अनुदारवादी विदेशी शासन को कलंक मानकर उससे छुटकारा पाना चाहते थे।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. भारत में नवजागरण से आप क्या समझते हैं? नवजागरण के कारणों पर प्रकाश डालिए।

उ०– **भारत में नवजागरण–** उसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या-1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

भारत में नवजागरण के कारण– भारत में नवजागरण की लहर अनायास ही प्रकट नहीं हुई वरन् यह धीरे-धीरे विकसित होकर धारा बन पाई। भारत में नवजागरण लाने के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) भारत में अंग्रेजी शासन ने अपने अन्याय और आर्थिक शोषण से भारत के समाज की आर्थिक स्थिति को जर्जर बना दिया था; अत: उसके लिए सुरक्षा का कवच बनकर नवजागरण उत्पंन हुआ।

(ii) अंग्रेज भारतीय नवयुवकों को सेना तथा प्रशासन के उच्च पदों से वंचित रख रहे थे, अत: नवयुवक अपने अधिकार पाने के लिए चेतन हो उठे।

(iii) पाश्चात्य शिक्षा और संस्कृति ने भारतीयों को अपने अधिकारों और स्वतंत्रता के महत्व से अवगत कराकर नवचेतना से भर दिया।

(iv) सामाजिक और धार्मिक सुधार आंदोलनों ने भारत में नवजागरण लाने में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

(v) अंग्रेज सरकार ने भारत में जनकल्याण के विकास कार्यों को बढ़ावा देने की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। भारत के लोग नवजागरण के माध्यम से अंग्रेजों का विरोध करने लगे।

(vi) साहित्य और समाचार-पत्रों के माध्यम से भारतीय विद्वानों और विचारकों ने नए विचारों का प्रचार करके जनसाधारण के हृदयों में नवचेतना का संचार कर दिया।

(vii) भारत में यातायात एवं संचारतंत्र का विस्तार होते ही संपर्क का क्षेत्र बढ़ जाने से नवजागरण स्वत: आ गया।

(viii) इटली तथा जर्मनी के एकीकरण तथा यूरोप में हुए पुनर्जागरण ने भारत में भी नवजागरण के बीज बो दिए।

2. उन्नीसवीं शताब्दी में भारत में राष्ट्रीय चेतना के विकास के विभिंन कारणों की विवेचना कीजिए।

उ०– भारत में राष्ट्रीय चेतना के विकास के कारणों के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-1 में भारत में नवजागरण के कारणों का अवलोकन कीजिए।

3. भारतीय समाज के नवजागरण में सहायक सुधार आंदोलनों का उल्लेख कीजिए तथा उनके योगदान का वर्णन कीजिए।

उ०– **भारत में सामाजिक और धार्मिक सुधार–** 19 वीं शताब्दी में समाज सुधारकों एवं धार्मिक संतों ने सुधार की जो गंगा

बहाई, उसमें अवगाहन करके भारत का जनमानस धंय हो गया। इन सुधार आंदोलनों ने अपने सद् प्रयासों से भारतीय समाज और धर्म को शुद्ध बना दिया। भारत में धर्म-सुधार और धार्मिक शुद्धिकरण के क्षेत्र में निम्नलिखित कार्य हुए–

ब्रह्म समाज– राजाराम मोहन राय ने समाज और धर्म के क्षेत्र में सुधार की मंदाकिनी प्रवाहित करने के लिए जिस संस्था की स्थापना की, उसे **ब्रह्म समाज** का नाम दिया गया। उन्होंने 1828 ई० में कोलकाता में ब्रह्म समाज की स्थापना की। अपने महान उद्देश्यों एवं कार्यों से यह एक राष्ट्रीय संस्था बनकर उभरी।

ब्रह्म समाज का योगदान– ब्रह्म समाज ने समाज सेवा और धर्म सुधार के क्षेत्र में निम्नवत् योगदान दिया–

(i) ब्रह्म समाज ने समाज से भेदभाव को दूर किया।
(ii) ब्रह्म समाज ने अंधविश्वास और रूढ़िवाद को दूर किया।
(iii) बालविवाह, बहुविवाह तथा बाल हत्या पर रोक लगवाई।
(iv) ब्रह्म समाज ने सतीप्रथा का अंत करवाकर विधवा पुनर्विवाह को प्रचलित कराया।
(v) ब्रह्म समाज ने लाखों हिंदुओं को ईसाई बनने से बचाया।
(vi) ब्रह्म समाज ने जातिप्रथा और अस्पृश्यता का विरोध किया।

ब्रह्म समाज ने भारतीय समाज एवं धर्म-सुधार के क्षेत्र में अतुलनीय कार्य किए। इस संस्था का भारतीय समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा। श्री पणिक्कर के शब्दों में, "ब्रह्म समाज की स्थापना से भारत में एक नई सभ्यता ने जंम लिया, जिसमें पूर्वी और पश्चिमी सभ्यता का मिश्रण था।"

वास्तव में राजाराम मोहन राय भारतीय नवजागरण के अग्रदूत थे। राजाराम मोहन राय को भारत का आध्यात्मिक यूरेशियन कहा जाता है। उनके विषय में कहे गए **मैकमिलन** के ये उद्गार उल्लेखनीय बन जाते हैं– "राजाराम मोहन राय ने धार्मिक एवं सामाजिक सुधार की जो ज्योति जलाई, उसने भारतीय जीवन के अंधकार को नष्ट कर दिया।"

दयानंद सरस्वती तथा आर्य समाज का योगदान– दयानंद सरस्वती का लक्ष्य कर्मकांड तथा पाखंडों का विरोध करके वेद और वैदिक धर्म की सर्वोच्चता सिद्ध करना था, अत: दयानंद जी तथा उनकी संस्था ने समाज-सुधार तथा धर्म-सुधार के क्षेत्र में निम्नलिखित कार्यों द्वारा अपना योगदान दिया–

(i) दयानंद सरस्वती ने आर्य समाज के माध्यम से भारत में राष्ट्रीयता की ज्योति जलाई।
(ii) उन्होंने सर्वप्रथम 'स्वेदशी' तथा 'स्वराज्य' शब्दों का प्रयोग करके लोगों में देश-प्रेम और स्वतंत्रता की अलख जगाई।
(iii) दयानंद सरस्वती ने लोगों को हिंदी भाषा को हृदय से अपनाने का संदेश दिया।
(iv) उन्होंने 'भारत, भारतवासियों के लिए है' का उद्घोष करके जन-जन में भारत माँ के प्रति अनुराग जगाया।
(v) आर्य समाज ने एक स्वस्थ और प्रगतिशील समाज की स्थापना की।
(vi) आर्य समाज ने छुआछूत और जातिप्रथा का घोर विरोध किया।
(vii) आर्य समाज ने मात्र स्त्री शिक्षा पर बल ही नहीं दिया वरन् उन्हें पुरुषों के समान अधिकार भी दिलवाए।
(viii) दयानंद सरस्वती ने भारत को आर्थिक क्षेत्र में सबल बनाने के लिए 'स्वदेशी' पर बल दिया।
(ix) आर्य समाज ने देशभर में दयानंद एंग्लो वैदिक (डी०ए०वी०) कॉलेजों की स्थापना कर विद्या और ज्ञान का प्रकाश फैलाया।
(x) 1908 ई० में आर्य समाज ने दलित वर्ग के उत्थान हेतु जो आंदोलन चलाया, उससे उनके जीवन में गुणात्मक सुधार आया।
(xi) आर्य समाज ने शुद्धि आंदोलन चलाकर हिंदू धर्म को छोड़कर दूसरे धर्मों में चले गए लोगों को पुन: हिंदू बनाया।
(xii) 1900 ई० में स्वामी श्रद्धानंद ने हरिद्वार में गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना कर संस्कृत भाषा तथा आयुर्वेद का प्रचार-प्रसार किया।

रामकृष्ण मिशन– स्वामी विवेकानंद ने अपने गुरुदेव के नाम पर आधारित कोलकाता में बेल्लूर मठ में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। उन्होंने 1899 ई० में यहाँ रामकृष्ण मिशन का मुख्यालय भी स्थापित किया। उनका लक्ष्य अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस का संदेश इस मिशन के द्वारा यूरोप तथा अमेरिका तक पहुँचाना था।

विवेकानंद और रामकृष्ण मिशन की समाज-सेवा तथा धर्म-सुधार के क्षेत्र में भूमिका–

(i) विवेकानंद ने देशभर में शिक्षा और ज्ञान का प्रकाश फैलाने के लिए रामकृष्ण मिशन के माध्यम से शिक्षण संस्थाएँ स्थापित कराईं।

(ii) विवेकानंद ने नौजवानों को अपने देश पर गर्व करने की प्रेरणा दी।

(iii) विवेकानंद और रामकृष्ण मिशन ने विदेशों में भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार किया।

(iv) रामकृष्ण मिशन संस्था के स्वयंसेवक मानवजाति की सेवा में जुटे रहे।

(v) रामकृष्ण मिशन के माध्यम से स्वामी विवेकानंद ने जनता की दशा सुधारने का भरपूर प्रयास किया।

(vi) स्वामी विवेकानंद ने समाज में फैली कुरीतियों को दूर किया।

(vii) विवेकानंद को सृजन की प्रतिमा तथा तूफानी हिंदू कहा जाता था।

(viii) विवेकानंद ने भारतीय संस्कृति, सभ्यता तथा राष्ट्रीयता के विकास में अद्वितीय योगदान दिया।

थियोसोफिकल सोसाइटी– थियोसोफिकल सोसाइटी की स्थापना 1875 ई० में **मैडम ब्लावेट्स्की** और **कर्नल आल्काट** ने न्यूयार्क नगर में की थी। 1882 ई० में इस संस्था का मुख्यालय भारत में चेंनई के निकट **अड्यार** में स्थापित किया गया। बाद में आयरिश महिला **श्रीमती एनी बेसेंट** थियोसोफिकल सोसाइटी की अध्यक्षा बनी। अपनी महान सेवाओं और कार्यों द्वारा उन्होंने इस सोसाइटी के कार्यों को आगे बढ़ाया। श्रीमती एनी बेसेंट का जंम 1847 ई० में इंग्लैंड में हुआ था। 1893 ई० में वे आयरलैंड से थियोसोफिकल सोसाइटी का कार्य करने के लिए भारत आयीं। श्रीमती एनी बेसेंट भारतीय धर्म, दर्शन और संस्कृति से बहुत प्रभावित थीं। वे विचारों, खान-पान, आचार-विचार से हिंदू ही हो गई थीं।

मुस्लिम-सुधार आंदोलन– 19वीं शताब्दी में कुप्रथाओं और सामाजिक बुराइयों से मुस्लिम समाज और इस्लाम धर्म भी विकृत होने से नहीं बचा। सामाजिक कुरीतियों और धार्मिक अंधविश्वासों के कारण मुसलमान सुधारकों का ध्यान इस ओर जाना स्वाभाविक ही था। इसका परिणाम था, मुस्लिम समाज का धर्म-सुधार आंदोलन। मुस्लिम-सुधार आंदोलनों को निम्नवत् व्यक्त किया जा सकता है–

(i) बहावी आंदोलन– मुस्लिम समाज और संस्कृति में बढ़ती पश्चिमी सभ्यता की दुष्प्रवृत्तियों की प्रतिक्रियाओं के फलस्वरूप जो मुस्लिम धर्म-सुधार आंदोलन छेड़ा गया, उसे **बहावी आंदोलन** का नाम दिया गया। इस आंदोलन के प्रणेता भारतीय मुस्लिम समुदाय के नेता **शाह वलीउल्लाह साहब** थे। इस आंदोलन के द्वारा भारतीय मुस्लिम समाज में प्रवेश कर गई कुरीतियों को दूर करने का प्रयास किया गया। भारत में बहावी आंदोलन के विचारों का प्रचार-प्रसार **सैयद अहमद बरेलवी** ने किया। इस आंदोलन का लक्ष्य मुस्लिम समाज का विस्तार करके इस्लाम धर्म में प्रविष्ट कुरीतियों को दूर करना था। इस आंदोलन द्वारा धन एकत्र कर स्वयंसेवकों द्वारा समाज-सुधार के साथ-साथ ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध भी संघर्ष किया। इस सुधार आंदोलन ने मुस्लिम समाज और इस्लाम धर्म में आए अनेक दोषों का अंत कर दिया।

(ii) अलीगढ़ आंदोलन– अलीगढ़ मुस्लिम आंदोलन के प्रणेता **सर सैय्यद अहमद खाँ** थे। वे मुसलमानों को अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से आधुनिक बनाना चाहते थे। इस महान उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने 1875 ई० में अलीगढ़ में **मुस्लिम एंग्लो ओरियंटल कॉलेज** की स्थापना की। कॉलेज के रूप में रोपा गया शिक्षा का यह पौधा कालांतर में अलीगढ़ मुस्लिम यूनीवर्सिटी के रूप में वृक्ष बनकर शिक्षा, विज्ञान और संस्कृति का आलोक फैलाने लगा। सर सैय्यद अहमद खाँ ने अपने इस मुस्लिम-सुधार आंदोलन से मुस्लिम समाज और धर्म में व्याप्त कुरीतियों को दूर किया। अंग्रेजी शिक्षा, ज्ञान, विज्ञान एवं प्रगतिशीलता के लिए मुस्लिम समाज उनका सदैव ऋणी रहेगा, क्योंकि उन्होंने मुस्लिम समाज को रूढ़िवादिता का त्याग कर बदलते विश्व के साथ चलने की प्रेरणा दी।

(iii) अहमदिया आंदोलन– अहमदिया आंदोलन के सूत्रधार **मिर्जा गुलाम अहमद** थे। उनके इस आंदोलन का लक्ष्य इस्लाम धर्म को सार्वभौमिक धर्म बनाना था। उनका मत था कि मुसलमानों को प्रगतिशील, औद्योगिक और तकनीकी ज्ञान से युक्त बन जाना चाहिए। मिर्जा गुलाम अहमद साहब ने इस आंदोलन का सूत्रपात 1899 ई० में करके मुसलमानों में राष्ट्रीय चेतना जगाने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

(iv) देवबंद आंदोलन– देवबंद आंदोलन का आरंभ कुछ मुस्लिम विद्वानों ने एक पुनर्जागरण आंदोलन के रूप में किया था। इस आंदोलन के पीछे मुख्य उद्देश्य 'कुरान' तथा 'हदीस' की शिक्षाओं को मुस्लिम समाज के जन-जन तक पहुँचाना था।

4. राजाराम मोहन राय के जीवन एवं मुख्य कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– **राजाराम मोहन राय –** राजाराम मोहन राय की गणना भारत के महान समाज सुधारकों में की जाती है। सुभाषचंद्र बोस के शब्दों में– "राजाराम मोहन राय धार्मिक पुनरुत्थान के अग्रदूत थे।" राजाराम मोहन राय का जंम 1772 ई० में बंगाल में हुआ था। इनके पिता का नाम रमाकांत तथा माता का नाम तारणी देवी था। राजाराम मोहन राय ने अंग्रेजी, अरबी, फारसी तथा संस्कृत भाषाओं का गहन अध्ययन किया और ईस्ट इंडिया कंपनी में नौकर हो गए। देश की सेवा करते हुए राजाराम मोहन राय 27 सितंबर, 1833 ई० में स्वर्ग सिधार गए।

राजाराम मोहन राय के समाज सेवा के कार्य– राजाराम मोहन राय का जंम समाज सेवा करने के लिए ही हुआ था। उन्होंने सरकारी नौकरी छोड़कर समाज सेवा के क्षेत्र में अग्रलिखित कार्य किए–

(i) धर्म-सुधार के कार्य–

(क) राजाराम मोहन राय ने हिंदू धर्म एवं संस्कृति को अंधविश्वासों और आडंबरों से मुक्त कराया।

(ख) राजाराम मोहन राय ने ईसाई मिशनरियों के प्रचार से हिंदू धर्म की रक्षा की।

(ग) उन्होंने हिंदू धर्म के सिद्धांतों की पुन: व्याख्या करके उसकी प्रतिष्ठा को बचाया।

(घ) उन्होंने हिंदू धर्म को मूर्ति पूजा, कर्मकांड तथा जातिवाद के दोषों से मुक्त किया।

(ङ) उन्होंने एकेश्वरवाद, मानवधर्म तथा बुद्धिवादी दृष्टिकोण के सिद्धांत अपनाकर धर्म का शुद्धिकरण किया।

राजाराम मोहनराय भारतीय प्राचीन संस्कृति एवं आधुनिक प्रगतिवादी युग के मध्य सेतु थे। **मिस काटेल** के शब्दों में,– "इतिहास में राजाराम मोहन राय का नाम उस महासेतु के समान है, जिस पर चढ़कर भारतवर्ष अपने अथाह अतीत से अज्ञात भविष्य में प्रवेश करता है।"

(ii) समाज सुधार के कार्य– राजाराम मोहन राय ने समाज सुधार के क्षेत्र में निम्नलिखित कार्य किए–

(क) राजाराम मोहन राय ने बालविवाह तथा बहुविवाह प्रथा का घोर विरोध किया।

(ख) राजाराम मोहन राय ने समाज का कलंक कही जाने वाली सतीप्रथा को लार्ड विलियम बैंटिक की मदद से बंद कराया।

(ग) उन्होंने विधवा पुनर्विवाह का समर्थन करके बाल विधवाओं को नारकीय जीवन से मुक्त कराया।

(घ) राजाराम मोहन राय ने अंग्रेजी भाषा का प्रचार-प्रसार करके भारतीय समाज को प्रगति के मार्ग पर अग्रसर कराया।

(ङ) राजाराम मोहन राय ने 1819 ई० में कोलकाता में हिंदू कालेज की स्थापना कर शिक्षा का प्रचार-प्रसार किया।

राजाराम मोहन राय के समाज सेवा के कार्यों की उपादेयता को इन शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है– "राजाराम मोहन राय ने भारत में नए युग का सूत्रपात किया, वस्तुत: वे आधुनिक भारत के जनक थे।"

ब्रह्म समाज– राजाराम मोहन राय ने समाज और धर्म के क्षेत्र में सुधार की मंदाकिनी प्रवाहित करने के लिए जिस संस्था की स्थापना की, उसे ब्रह्म समाज का नाम दिया गया। उन्होंने 1828 ई० में कोलकाता में ब्रह्म समाज की स्थापना की। अपने महान उद्देश्यों एवं कार्यों से यह एक राष्ट्रीय संस्था बनकर उभरी।

ब्रह्म समाज ने भारतीय समाज एवं धर्म-सुधार के क्षेत्र में अतुलनीय कार्य किए। इस संस्था का भारतीय समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा। श्री पणिक्कर के शब्दों में, "ब्रह्म समाज की स्थापना से भारत में एक नई सभ्यता ने जंम लिया, जिसमें पूर्वी और पश्चिमी सभ्यता का मिश्रण था।"

वास्तव में राजाराम मोहन राय भारतीय नवजागरण के अग्रदूत थे। राजाराम मोहन राय को भारत का आध्यात्मिक यूरेशियन कहा जाता है। उनके विषय में कहे गए **मैकमिलन** के ये उद्‌गार उल्लेखनीय बन जाते हैं– "राजाराम मोहन राय ने धार्मिक एवं सामाजिक सुधार की जो ज्योति जलाई, उसने भारतीय जीवन के अंधकार को नष्ट कर दिया।"

5. स्वामी विवेकानंद सरस्वती का संक्षिप्त जीवन परिचय देते हुए आर्य समाज की स्थापना एवं नवजागरण में उसके योगदान का वर्णन कीजिए।

उ०– **स्वामी दयानंद सरस्वती और आर्य समाज–** स्वामी दयानंद सरस्वती का नाम भारत के उन महान समाज और धर्म सुधारकों में सम्मिलित है, जो पुरातन धर्म एवं संस्कृति के मूल्यों तथा नवीन और सुधारवादी मूल्यों के समन्वय पर बल देते

रहे हैं। दयानंद सरस्वती ने 'वेदों की ओर लौटो' के भाव को आगे बढ़ाकर **आर्य समाज** के माध्यम से सुधार, प्रगति और विकास की त्रिवेणी प्रवाहित की।

स्वामी दयानंद सरस्वती का जन्म 1824 ई० में गुजरात प्रांत के **टंकारा** नामक ग्राम में हुआ था। उनका बचपन का नाम मूलशंकर देसाई था। इनके पिता श्री अंबाशंकर वेदों के प्रकांड पंडित थे। दयानंद जी ने वैदिक धर्म-ग्रंथों का गहन अध्ययन किया और 1847 ई० में घर छोड़कर सत्य की खोज में निकल पड़े। 1860 ई० में वे मथुरा में स्वामी विरजानंद के संपर्क में आए और उंहें अपना गुरु मानकर तथा उनके श्रीचरणों में ध्यान लगाकर वेदों के शुद्ध अर्थ तथा वैदिक धर्म की गरिमा का ज्ञान प्राप्त किया। उनका लक्ष्य धर्म, समाज, राजनीति तथा शिक्षा के क्षेत्र में सुधार का आलोक फैलाना था। स्वामी दयानंद सरस्वती 30 अक्टूबर, 1883 ई० में परलोक सिधार गए।

आर्य समाज– दयानंद सरस्वती ने वेदों की पुनर्प्रतिष्ठा के लिए तथा निराकार परमात्मा का बोध करने के उद्देश्य से 10 अप्रैल, 1875 ई० में मुंबई में 'आर्य समाज' की स्थापना की। उन्होंने सत्य-धर्म का आलोक फैलाने के लिए 'वेदभाष्य', 'ऋग्वैदिक भाष्य भूमिका' तथा 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना की। 'सत्यार्थ प्रकाश' आर्य समाज का पवित्र धर्मग्रंथ है। धीरे-धीरे आर्य समाज का प्रभाव पूरे भारत में व्याप्त होता चला गया।

आर्य समाज के सिद्धांत–

(i) ईश्वर एक है, वह सर्वगुण संपन्न और सर्वव्यापक है।
(ii) ईश्वर अजंमा, अजर और अमर है।
(iii) मूर्तिपूजा निरर्थक है, केवल ईश्वर की ही भक्ति करनी चाहिए। वेद ईश्वर के कहे वचन हैं, जो सत्य और शाश्वत हैं।
(iv) व्यक्ति को समस्त कार्य धर्मानुसार– उचित-अनुचित तथा सत्य-असत्य का विचार करके ही करने चाहिए।
(v) व्यक्ति को स्वयं तथा समाज के कल्याण के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए।
(vi) सर्वसाधारण की उंनति में ही व्यक्ति को अपनी उंनति खोजनी चाहिए।
(vii) अविद्या और अज्ञान के विनाश पर बल देना चाहिए।
(viii) ऊँच-नीच, छुआछूत तथा जात-पाँत सभी वेदों की मांयताओं के विरुद्ध हैं। इनका त्याग कर देना चाहिए।
(ix) पारस्परिक संबंधों का आधार प्रेम, त्याग और धर्म होना चाहिए।
(x) संपूर्ण विश्व की सामाजिक, शारीरिक तथा आध्यात्मिक उंनति के प्रयास किए जाने चाहिए।

दयानंद सरस्वती तथा आर्य समाज का नवजागरण योगदान– दयानंद सरस्वती का लक्ष्य कर्मकांड तथा पाखंडों का विरोध करके वेद और वैदिक धर्म की सर्वोच्चता सिद्ध करना था, अत: दयानंद जी तथा उनकी संस्था ने समाज-सुधार तथा धर्म-सुधार के क्षेत्र में निम्नलिखित कार्यों द्वारा अपना योगदान दिया–

(i) दयानंद सरस्वती ने आर्य समाज के माध्यम से भारत में राष्ट्रीयता की ज्योति जलाई।
(ii) उन्होंने सर्वप्रथम 'स्वेदशी' तथा 'स्वराज्य' शब्दों का प्रयोग करके लोगों में देश-प्रेम और स्वतंत्रता की अलख जगाई।
(iii) दयानंद सरस्वती ने लोगों को हिंदी भाषा को हृदय से अपनाने का संदेश दिया।
(iv) उन्होंने 'भारत, भारतवासियों के लिए है' का उद्घोष करके जन-जन में भारत माँ के प्रति अनुराग जगाया।
(v) आर्य समाज ने एक स्वस्थ और प्रगतिशील समाज की स्थापना की।
(vi) आर्य समाज ने छुआछूत और जातिप्रथा का घोर विरोध किया।
(vii) आर्य समाज ने मात्र स्त्री शिक्षा पर बल ही नहीं दिया वरन् उंहें पुरुषों के समान अधिकार भी दिलवाए।
(viii) दयानंद सरस्वती ने भारत को आर्थिक क्षेत्र में सबल बनाने के लिए 'स्वदेशी' पर बल दिया।
(ix) आर्य समाज ने देशभर में दयानंद एंग्लो वैदिक (डी०ए०वी०) कॉलेजों की स्थापना कर विद्या और ज्ञान का प्रकाश फैलाया।
(x) 1908 ई० में आर्य समाज ने दलित वर्ग के उत्थान हेतु जो आंदोलन चलाया, उससे उनके जीवन में गुणात्मक सुधार आया।
(xi) आर्य समाज ने शुद्धि आंदोलन चलाकर हिंदू धर्म को छोड़कर दूसरे धर्मों में चले गए लोगों को पुन: हिंदू बनाया।
(xii) 1900 ई० में स्वामी श्रद्धानंद ने हरिद्वार में गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना कर संस्कृत भाषा तथा आयुर्वेद का प्रचार-प्रसार किया।

दयानंद सरस्वती तथा उनके द्वारा स्थापित संस्था आर्य समाज ने सोए हुए भारतीय जनमानस को जगाने के क्षेत्र में

अविस्मरणीय कार्य किए। रवींद्रनाथ टैगोर ने उनकी प्रशंसा इन शब्दों में व्यक्त की है– "स्वामी दयानंद आधुनिक भारत के पथ-प्रदर्शक थे।" आर्य समाज ने भारत के पुनरुत्थान का जो आंदोलन चलाया, उससे भारत में नवजागृति के साथ-साथ राष्ट्र-प्रेम का भी संचार हुआ। आर्य समाज के विषय में श्री आर. सी. मजूमदार के ये उद्‌गार उल्लेखनीय हैं– "आर्य समाज प्रारंभ से ही ऐसा संप्रदाय था, जिसका मुख्य उद्‌देश्य तीव्र राष्ट्रीयता थी।" दयानंद सरस्वती की महान सेवाओं को श्री अरविंद घोष ने इस प्रकार व्यक्त किया है– "दयानंद सरस्वती परमात्मा की विचित्र सृष्टि के अद्वितीय योद्धा तथा मनुष्य और मानवीय संस्थानों का सत्कार करने वाले अद्‌भुत शिल्पी थे।" दयानंद सरस्वती को भारतवासी उनकी महान सेवाओं के लिए युगों-युगों तक श्रद्धा से स्मरण करते रहेंगे। उनके द्वारा प्रतिपादित आर्य समाज वर्तमान में भारत का प्रमुख संप्रदाय बन गया है।

6. स्वामी विवेकानंद के जीवन, कार्य एवं समाज-सुधार में योगदान का वर्णन कीजिए।

उ०– **स्वामी विवेकानंद एवं रामकृष्ण मिशन–** भारतमाता अपने जिस महान सपूत पर गर्व कर सकती है, उसे स्वामी विवेकानंद कहा जाता है। स्वामी विवेकानंद का बचपन का नाम नरेंद्रनाथ दत्त था। इनका जन्म 12 जनवरी, 1863 ई० में कोलकाता में हुआ था। इनके पिताजी का नाम 'विश्वनाथ दत्त' एंव माताश्री का नाम 'भुवनेश्वरी देवी' था। नरेंद्रनाथ दत्त प्रारंभ से ही धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन में रुचि रखते थे। उन्होंने बौद्ध ग्रंथ तथा अंग्रेजी और संस्कृत साहित्य का अध्ययन किया। उन्होंने सत्य और ईश्वर की खोज थी। 1880 ई० में उनकी भेंट रामकृष्ण परमहंस से हुई। नरेंद्रनाथ दत्त ने उनसे प्रश्न किया– "क्या आपने ईश्वर को देखा है?" रामकृष्ण परमहंस ने उत्तर दिया, "हाँ, मैं ईश्वर को वैसे ही देखता हूँ, जैसे मैं तुम्हें देखता हूँ। तुम चाहो तो उसे देख सकते हो।" नरेंद्रनाथ उनसे बहुत प्रभावित हुए और उन्हें अपना गुरु मान लिया। रामकृष्ण परमहंस जी के निर्देशन और छत्र-छाया में यही नरेंद्रनाथ दत्त नामक नवयुवक भारत का प्रसिद्ध विद्वान स्वामी विवेकानंद बन गया। उनके आध्यात्मिक विकास और उन्नयन में स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी का अद्वितीय योगदान रहा। रामकृष्ण परमहंस के विषय में महात्मा गाँधी ने यह उद्‌बोधन दिया, "रामकृष्ण परमहंस के जीवन की कहानी, व्यवहारिक धर्म है, उनका जीवन हमें ईश्वर को हमारे सामने दिखाता है।" रामकृष्ण परमहंस वह पारसमणि थे, जिसके स्पर्शमात्र ने नरेंद्रनाथ दत्त को स्वामी विवेकानंद के रूप में खरे सोने में बदल दिया। स्वामी विवेकानंद ने 1893 ई० में अमेरिका के शिकागो नगर में आयोजित सर्वधर्म सम्मेलन में भारतीय प्रतिनिधि के रूप में भाग लेकर समूचे विश्व में हिंदू धर्म और भारतीय संस्कृति का मान बढ़ाया। उन्होंने समूचे विश्व के लिए एक ऐसी नवीन संस्कृति की अवधारणा प्रस्तुत की, जो पश्चिम के भौतिकवाद और पूर्व के आध्यात्मवाद का सफल समंवय थी। उनके महान कार्यों और सिद्धांतों से प्रभावित होकर रवींद्रनाथ टैगोर ने उनके विषय में ये उद्‌गार प्रस्तुत किए– "यदि कोई भारत को समझना चाहता है, तब उसे विवेकानंद को पढ़ना चाहिए।"

रामकृष्ण मिशन– स्वामी विवेकानंद ने अपने गुरुदेव के नाम पर आधारित कोलकाता में बेल्लूर मठ में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। उन्होंने 1899 ई० में यहाँ रामकृष्ण मिशन का मुख्यालय भी स्थापित किया। उनका लक्ष्य अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस का संदेश इस मिशन के द्वारा यूरोप तथा अमेरिका तक पहुँचाना था।

रामकृष्ण मिशन के सिद्धांत– समाज के उत्थान तथा धर्म-सुधार को ध्यान में रखकर विवेकानंद जी ने रामकृष्ण मिशन के लिए निम्नलिखित सिद्धांतों का प्रतिपादन किया–

(i) ईश्वर अजंमा और संपूर्ण संसार का निर्माणकर्ता है।
(ii) प्रत्येक व्यक्ति को आचरण तथा चरित्र की पवित्रता बनाए रखनी चाहिए।
(iii) वेद, वेदांत और उपनिषद् ही सच्चे ग्रंथ हैं।
(iv) आत्मा, परमात्मा का ही एक अंश है।
(v) भारतीय सभ्यता और संस्कृति विश्व की सभी सभ्यताओं और संस्कृतियों से श्रेष्ठ है।
(vi) समस्त धर्म अच्छे हैं, प्रत्येक प्राणी को अपने धर्म में आस्था रखनी चाहिए।
(vii) मानवमात्र की सेवा करना ही ईश्वर की सच्ची पूजा है।
(viii) व्यक्ति को सरल, पवित्र और त्यागमय जीवन जीना चाहिए।
(ix) मूर्तिपूजा ईश्वरीय उपासना का प्रमुख साधन है।

विवेकानंद और रामकृष्ण मिशन की समाज-सेवा तथा धर्म-सुधार के क्षेत्र में भूमिका–

(i) विवेकानंद ने देशभर में शिक्षा और ज्ञान का प्रकाश फैलाने के लिए रामकृष्ण मिशन के माध्यम से शिक्षण संस्थाएँ स्थापित कराईं।

(ii) विवेकानंद ने नौजवानों को अपने देश पर गर्व करने की प्रेरणा दी।

(iii) विवेकानंद और रामकृष्ण मिशन ने विदेशों में भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार किया।

(iv) रामकृष्ण मिशन संस्था के स्वयंसेवक मानवजाति की सेवा में जुटे रहे।

(v) रामकृष्ण मिशन के माध्यम से स्वामी विवेकानंद ने जनता की दशा सुधारने का भरपूर प्रयास किया।

(vi) स्वामी विवेकानंद ने समाज में फैली कुरीतियों को दूर किया।

(vii) विवेकानंद को सृजन की प्रतिमा तथा तूफानी हिंदू कहा जाता था।

(viii) विवेकानंद ने भारतीय संस्कृति, सभ्यता तथा राष्ट्रीयता के विकास में अद्वितीय योगदान दिया।

स्वामी विवेकानंद की प्रशंसा में सुभाषचंद्र बोस के ये उद्गार उल्लेखनीय हैं, "स्वामी विवेकानंद में बुद्ध का हृदय और शंकराचार्य की बुद्धि थी तथा वे आधुनिक भारत के निर्माता थे।" विवेकानंद द्वारा स्थापित रामकृष्ण मिशन ने भारतवासियों में आत्म-विश्वास और आत्म-सम्मान की भावना जगाई।

7. उन्नीसवीं शताब्दी के मुस्लिम-सुधार आंदोलनों का वर्णन कीजिए। तत्कालीन समाज पर उनका क्या प्रभाव पड़ा?

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

8. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना किसने और कब की थी? इसकी स्थापना के क्या उद्देश्य थे? इसका विभाजन क्यों हुआ?

उ०– भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना– भारत में उभरते राष्ट्रवाद को क्रियात्मक रूप देने के लिए एक राजनीतिक रंगमंच की आवश्यकता थी। राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक और राष्ट्रीय स्तर की संस्था 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' की स्थापना करने का श्रेय 1885 ई० में एक अंग्रेज अधिकारी **ए.ओ. ह्यूम** को जाता है। इस संस्था को भारत के उदारवादी बुद्धिजीवी वर्ग का विशेष सहयोग मिला। कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन **व्योमेशचंद्र बनर्जी** की अध्यक्षता में बंबई के **गोकुलदास तेजपाल संस्कृत विद्यालय** में संपन हुआ। शीघ्र ही यह संस्था भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन तथा स्वाधीनता संघर्ष का माध्यम एवं केंद्र बन गई। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना भारतीय राष्ट्रीय चेतना के प्रतीक और राष्ट्रीय जागृति की चरम सीमा के रूप में अवतरित हुई।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के उद्देश्य– ए.ओ. ह्यूम महोदय ने भारत में अंग्रेजों और भारतीयों के बीच विभेदों की बढ़ती खाई को पाटने के उद्देश्य से कांग्रेस की स्थापना की थी। 28 दिसंबर, 1885 ई० में कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन के अध्यक्ष श्री **व्योमेशचंद्र बनर्जी** ने कांग्रेस की स्थापना के निम्नलिखित उद्देश्यों को इंगित किया था–

(i) साम्राज्य के विभिन्न भागों में देशहित के लिए लगन से काम करने वालों की आपस में घनिष्ठता तथा मित्रता बढ़ाना।

(ii) राष्ट्रीय एकता की भावना बढ़ाना और जाति, धर्म या प्रादेशिकता के आधार पर उपजे भेदभाव को दूर करना।

(iii) महत्वपूर्ण एवं आवश्यक सामाजिक प्रश्नों पर भारत के प्रशिक्षित लोगों में चर्चा करने के बाद परिपक्व समितियाँ तथा प्रमाणिक तथ्य स्वीकार करना।

(iv) उन उपायों और दिशाओं का निर्णय करना जिनके द्वारा भारत के राजनीतिज्ञ देशहित के कार्य करें।

यद्यपि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना ब्रिटिश शासन के 'सेफ्टी वाल्व' के रूप में हुई थी, किंतु शीघ्र ही इसकी राजभक्ति राजद्रोह में बदल गई। 1890 ई० में कांग्रेस श्री **सुरेंद्रनाथ बनर्जी** के नेतृत्व में ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध भारतीय शासन में सुधार कराने हेतु विद्रोह की आवाज उठाने वाली संस्था बन गई।

1907 ई० के अधिवेशन में भारतीय कांग्रेस नरमदल तथा गरमदल के मतभदों के कारण दो दलों में विभाजित हो गई।

9. ब्रिटिश शासन की नीतियों का भारत के नवजागरण पर क्या प्रभाव पड़ा? किंहीं चार प्रभावों का वर्णन कीजिए।

उ०– भारतीय नवजागरण पर ब्रिटिश शासन की नीतियों के प्रभाव– 200 वर्षों के शासनकाल में ब्रिटिश शासकों ने भारत

के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया। इस शासन ने भारत को आंग्ल भाषा, पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति के रंग में पूरी तरह रंगने का प्रयास किया। ब्रिटिश शासन ने भारतीय नवजागरण को निम्नलिखित प्रकार से प्रभावित किया–

(i) राजनीतिक जीवन पर प्रभाव– ब्रिटिश शासन ने भारतीय राजनीतिक जीवन को निम्नवत् प्रभावित किया–

(क) अंग्रेजी शासन ने एक शक्तिशाली केंद्रीय सत्ता का सिद्धांत दिया।

(ख) अंग्रेजों ने समूचे भारत में एक शासन प्रणाली लागू की।

(ग) भारत के लोगों ने अंग्रेजी प्रशासन से राजनीतिक अधिकारों का पाठ पढ़ा।

(घ) भारत को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस जैसी राजनीतिक संस्था प्राप्त हुई।

(ii) सामाजिक जीवन पर प्रभाव– ब्रिटिश शासन के भारत के सामाजिक जीवन पर निम्नलिखित प्रभाव पड़े–

(क) भारतीय सामाजिक संगठन की आधार वर्णव्यवस्था ढीली पड़ गई।

(ख) सामाजिक विधान पारित होने से सामाजिक मूल्यों का बुरी तरह ह्रास हो गया।

(ग) समाज में किसान वर्ग के साथ-साथ मध्यम वर्ग का भी उदय हो गया।

(घ) भारतीय समाज की प्राचीन परंपरा संयुक्त परिवार टूटने लगे।

(ङ) भारतीय समाज में ईसाई धर्म का प्रभाव बढ़ने लगा।

(च) भारतीय समाज रूढ़िवाद का चोगा छोड़कर आधुनिकीकरण की ओर कदम बढ़ाने लगा।

(iii) आर्थिक जीवन पर प्रभाव– ब्रिटिश शासन के भारत के आर्थिक जीवन पर निम्नलिखित प्रभाव पड़े–

(क) ब्रिटिश शासन भारत का आर्थिक शोषण करने पर तुल गया।

(ख) ब्रिटिश शासन ने भारतीय कुटीर उद्योगों का विनाश कर भारतीय शिल्पियों को बेरोजगार बना दिया।

(ग) भारत में जमींदारी प्रथा प्रारंभ हो गई।

(घ) भारत का धन इंग्लैंड जाने लगा।

(ङ) भारत आर्थिक दृष्टि से निरंतर दुर्बल होता चला गया।

10. भारतीय समाज के उत्थान में श्रीमती ऐनी बेसेंट की भूमिका की विवेचना कीजिए।

उ०– श्रीमती ऐनी बेसेंट एक आयरिश महिला थीं जो 1893 ई० में प्रमुख सुधारवादी संस्था 'थियोसोफिकल सोसाइटी' का कार्य करने हेतु भारत आईं थीं। उन्होंने हिंदू धर्म के मानवतावादी एवं कल्याणकारी स्वरूप को उजागर करके उसे एक श्रेष्ठ धर्म सिद्ध किया। भारतीयों में उन्होंने राष्ट्रीय भावना का संचार किया। भारतीय समाज के उत्थान में श्रीमती ऐनी बेसेंट ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिसका वर्णन निम्नलिखित है–

(i) श्रीमती एनी बेसेंट ने थियोसोफिकल सोसाइटी के माध्यम से हिंदू धर्म के विचारों का प्रचार और प्रसार किया।

(ii) उन्होंने शोषण, आडंबर, कुरीतियों और भेदभाव से मुक्त समाज की स्थापना का प्रयास किया।

(ii) उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाई।

(iv) श्रीमती एनी बेसेंट ने बाल गंगाधर तिलक के सहयोग से **होमरूल आंदोलन** चलाया।

(v) श्रीमती एनी बेसेंट ने भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में बड़ा सहयोग दिया तथा 1917 ई० में उन्हें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का अध्यक्ष चुना गया।

(vi) श्रीमती एनी बेसेंट ने 1898 ई० में बनारस में सेंट्रल हिंदू कॉलेज स्थापित किया, जिसे 1916 ई० में **पं० मदन मोहन मालवीय** जी ने अपने प्रयासों से **बनारस हिंदू विश्वविद्यालय** का स्वरूप प्रदान किया।

(vii) थियोसोफिकल सोसाइटी ने हिंदू धर्म, दर्शन और पूजा पद्धति का पुनुरुत्थान किया।

(viii) श्रीमती एनी बेसेंट ने थियोसोफिकल सोसाइटी के माध्यम से भारतीयों के हृदयों में हिंदू धर्म तथा स्वदेश के प्रति स्वाभिमान जागृत किया।

❖ प्रोजेक्ट कार्य

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

13 गाँधी विचारधारा– असहयोग आंदोलन

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-97 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-97 व 98 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. असहयोग आंदोलन पर एक टिप्पणी लिखिए।

उ०– प्रथम विश्वयुद्ध की अवधि में तथा उसके बाद भी भारत के प्रति ब्रिटिश सरकार की नीतियाँ सही नहीं थी तथा उसके द्वारा दिए गए कोरे आश्वासनों के आधार पर स्वराज्य-प्राप्ति की आशा करना निरर्थक था। अत: महात्मा गाँधी ने ब्रिटिश सरकार के प्रति सहयोग एवं समर्थन की नीति का परित्याग करके 1920 ई० के कोलकाता अधिवेशन में कांग्रेस ने असहयोग आंदोलन चलाने का प्रस्ताव पारित किया। इस आंदोलन का नेतृत्व महात्मा गाँधी और मोतीलाल नेहरू ने किया। इस आंदोलन का मुख्य उद्देश्य– पंजाब में किए गए अत्याचार का निराकरण एवं स्वराज्य की प्राप्ति था। इस आंदोलन के द्वारा समस्त भारत में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा शिक्षण संस्थाओं का बहिष्कार कर सरकार का असहयोग करने के अभियान प्रारंभ किए गए। इस प्रकार असहयोग आंदोलन से अभिप्राय था– सरकार का किसी भी प्रकार से सहयोग न करना।

2. असहयोग आंदोलन का कार्यक्रम क्या था?

उ०– **असहयोग आंदोलन का कार्यक्रम–** असहयोग आंदोलन का मुख्य लक्ष्य भारत की समस्त सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक संस्थाओं का बहिष्कार कर सरकार का प्रत्येक क्षेत्र में असहयोग करना था। सरकारी तंत्र को निष्क्रिय बनाने के उद्देश्य से असहयोग आंदोलन के लिए निम्नलिखित कार्यक्रम निर्धारित किए गए–

(i) सरकारी वैतनिक तथा अवैतनिक पदों और उपाधियों का त्याग।

(ii) सरकारी और अर्द्धसरकारी स्कूल और कॉलेजों का बहिष्कार।

(iii) 1919 ई० के अधिनियम के अंतर्गत होने वाले चुनावों का बहिष्कार।

(iv) सरकारी न्यायालयों का बहिष्कार।

(v) विदेशी माल का बहिष्कार।

(vi) सरकारी और अर्द्धसरकारी उत्सवों और समारोहों में उपस्थित न होना।

(vii) भारत तथा मेसोपोटामिया में सैनिक, क्लर्क या मजदूर के रूप में कार्य करने से मना करना।

3. चौरी-चौरा काँड क्या था? इसके कारण गाँधी जी ने असहयोग आंदोलन क्यों स्थगित कर दिया?

उ०– 5 फरवरी, 1922 ई० को गोरखपुर जिले के चौरी-चौरा नामक स्थान पर पुलिस की निर्दयता से किसान हिंसक हो उठे, उन्होंने पुलिस की गोलियों का बदला लेते हुए एक थानेदार तथा इक्कीस सिपाहियों को बलपूर्वक थाने में बंद करके आग लगा दी जिससे वे सभी मृत्यु का शिकार हो गए। यह घटना चौरी-चौरा कांड के नाम से जानी जाती है। इस घटना से गाँधीजी को अत्यधिक दु:ख हुआ क्योंकि यह घटना असहयोग आंदोलन के मूलाधार अहिंसा के सिद्धांत के सर्वथा प्रतिकूल थी। इसलिए आंदोलन को हिंसात्मक होते देख गाँधी जी ने 12 फरवरी, 1922 ई० को असहयोग आंदोलन को स्थगित कर दिया।

4. गाँधी जी ने असहयोग आंदोलन कब चलाया? इसके मुख्य कारण बताइए।

उ०– गाँधी जी ने असहयोग आंदोलन 1920 ई० को चलाया। इसके मुख्य कारण निम्नलिखित हैं–

(i) प्रथम विश्वयुद्ध का प्रभाव।

(ii) ब्रिटिश सरकार द्वारा युद्धकालीन आश्वासनों की उपेक्षा करना।

(iii) गाँधी जी को मुस्लिम सहयोग प्राप्त होना।

(iv) रॉलेट एक्ट का पारित किया जाना।

(v) ब्रिटिश सरकार का कठोर दमन-चक्र।

(vi) जलियाँ वाला बाग हत्याकांड।

(vii) हण्टर रिपोर्ट।

(viii) कांग्रेस रिपोर्ट की अवहेलना।

5. जलियाँवाला बाग हत्याकांड का विवरण दीजिए।

उ०– 13 अप्रैल, 1919 ई० को बैशाखी के दिन लगभग 20 हजार व्यक्ति, जिसमें स्त्रियाँ और बच्चे भी सम्मिलित थे, ब्रिटिश सरकार की दमनकारी नीतियों एवं रॉलेट एक्ट का विरोध करने के लिए अमृतसर के जलियाँवाला बाग में एकत्रित हुए। सभा शांतिपूर्वक चल रही थी। अंग्रेज अधिकारी जरनल डायर ने सेना को उन निहत्थे लोगों पर गोलियाँ चलाने का आदेश दे दिया, जिसमें हजारों लोग मारे गए तथा अनेकों घायल हो गए। इस घटना को इतिहास में जलियाँवाला बाग हत्याकांड के नाम से जाना जाता है।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. महात्मा गाँधी ने असहयोग आंदोलन क्यों चलाया? इस आंदोलन के कार्यक्रम क्या थे? उन्हें यह आंदोलन क्यों स्थगित करना पड़ा?

उ०– प्रथम विश्वयुद्ध की अवधि में तथा उसके बाद भी भारत के प्रति ब्रिटिश दृष्टिकोण से यह भली-भांति स्पष्ट हो चुका था कि ब्रिटिश सरकार द्वारा दिए गए कोरे आश्वासनों के आधार पर स्वराज्य-प्राप्ति की आशा करना निरर्थक था। अत: गाँधी जी ने सरकार के प्रति सहयोग एवं समर्थन की नीति का परित्याग करके उसके विरूद्ध असहयोग आंदोलन छेड़ने का निश्चय किया। महात्मा गाँधी द्वारा असहयोग आंदोलन प्रारंभ किए जाने के **प्रमुख कारण** निम्नलिखित थे–

(i) प्रथम विश्वयुद्ध के प्रभाव–

(क) प्रथम विश्वयुद्ध के कारण यूरोप में राष्ट्रीय जागरण की भावनाओं को पर्याप्त बल मिला एवं आत्म-निर्णय के सिद्धांत के आधार पर यूरोप के मानचित्र पर अनेक नए स्वतंत्र राज्य अस्तित्व में आ गए। इससे भारतीयों में देश-प्रेम की भावनाओं का तीव्र गति से संचार हुआ और वे अपने देश को स्वतंत्र कराने के लिए आतुर हो उठे।

(ख) महायुद्ध के कारण जनसामान्य की आर्थिक कठिनाइयों से हुई अपार वृद्धि ने भारतीयों में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध निराशा एवं असंतोष व्याप्त कर दिया। युद्ध के कारण भारत के राष्ट्रीय ऋण में लगभग 30 प्रतिशत की वृद्धि हो गई, जिसके एक भाग के भुगतान के लिए भारतीयों को विवश किया गया।

(ग) युद्ध की अवधि में सरकार ने कड़ी संख्या में भारतीयों को सेना में भर्ती किया था। किन्तु युद्ध के उपरांत बड़ी संख्या में सैनिकों को उनके पदों से अलग कर दिए जाने के कारण उनके पास जीविकोपार्जन का कोई साधन नहीं रहा।

(ii) ब्रिटिश सरकार की युद्धकालीन आश्वासनों की उपेक्षा– प्रथम विश्वयुद्ध में भारतीयों का पूर्ण सहयोग एवं समर्थन प्राप्त करने के लिए ब्रिटिश सरकार को भारतीय नेताओं को अनेक आर्कषक आश्वासन दिए थे। भारतीयों को विश्वास था कि युद्ध की समाप्ति पर अंग्रेज निश्चित रूप से भारत को स्वराज्य प्रदान कर देंगे। किन्तु सन् 1919 में मॉण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधार अधिनियम पारित करके केंद्रीय सरकार को और अधिक निरंकुश बना दिया गया। इससे भारतीयों में तीव्र असंतोष व्याप्त हो गया। महात्मा गाँधी का विश्वास भी अंग्रेजों की न्यायप्रियता से हटने लगा।

(iii) गाँधी जी को मुस्लिम सहयोग प्राप्त होना– गाँधी जी ने खिलाफत के प्रश्न पर भारतीय मुसलमानों को ब्रिटिश शासन के विरूद्ध अपना पूर्ण सहयोग एवं समर्थन प्रदान किया था। इससे हिन्दू-मुसलमान परस्पर निकट आने लगे। उनमें पारस्परिक एकता और मित्रता के बन्धन दृढ़ होने लगे और मुसलमान भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, राष्ट्रवादी नेताओं तथा विशेष रूप से गाँधी जी को अपना परम हितैषी समझने लगे। इन परिस्थितियों में मुसलमानों का सहयोग प्राप्त करके गाँधी जी ने ब्रिटिश सरकार पर असहयोग आंदोलन के माध्यम से तीव्र प्रहार करने का निश्चय किया।

(iv) रौलट ऐक्ट का पारित किया जाना– प्रथम विश्वयुद्ध के बाद क्रांतिकारी एवं आतंकवादी गतिविधियों को कुचलने के लिए ब्रिटिश सरकार कठोर कानून बनाना चाहती थी। इस उद्देश्य से सरकार ने सर सिडनी रौलट ऐक्ट की अध्यक्षता में एक समिति गठित की। इस समिति की सिफारिश पर फरवरी, 1919 ई० में केंद्रीय विधानपरिषद् में दो विधेयक प्रस्तुत किए गए जिन्हें 'रौलट विधेयकों' के नाम से जाना जाता है। भारतीयों ने रौलट विधेयकों के विरूद्ध

तीव्र असंतोष एवं रोष प्रकट किया और 'काले कानून' कहकर इनकी कटू आलोचना की। किन्तु भारतीयों के तीव्र विरोध की कोई परवाह न करते हुए केंद्रीय विधानपरिषद् ने **17 मार्च, 1919 ई०** को इनमें से एक विधेयक 'अराजकतावादी तथा क्रांतिकारी अपराध अधिनियम, 1919' के नाम से पारित कर दिया। इसके अंतर्गत सरकार को यह शक्ति प्राप्त हो गई कि वे विद्रोहियों को केवल संदेह के आधार पर ही बंदी बना सकती थी और बिना न्यायिक सुनवाई के अनिश्चित काल तक कारागार में रख सकती थी। नि:सन्देह यह भारतीयों के अधिकारों का हनन था और भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के विकास पर लगाया गया एक अनुचित एवं अमानवीय प्रतिबंध था। अत: भारतीयों द्वारा इसका प्रबल विरोध किया गया। **मोतीलाल नेहरू** ने **'न अपील, न वकील, न दलील'** कहकर रौलट ऐक्ट (Rowlett Act) की कटु आलोचना की। महात्मा गाँधी ने पहले ही यह घोषणा की हुई थी कि इन कानूनों के पारित किए जाने पर वह सत्याग्रह करने के लिए विवश हो जाएँगे।

(v) सरकार का कठोर दमन-चक्र– रौलट ऐक्ट का तीव्र विरोध करने के उद्देश्य से गाँधी जी ने सरकार के विरूद्ध अहिंसात्मक एवं शान्तिपूर्ण सत्याग्रह प्रारंभ करने का निश्चय किया। 30 मार्च, 1919 ई० को संपूर्ण देश में रौलट ऐक्ट के विरूद्ध सार्वजनिक हड़तालों एवं प्रदर्शनों का दिन निर्धारित किया गया। बाद में यह तिथि बदलकर 6 अप्रैल कर दी गई। किन्तु उचित समय पर सूचना न मिल पाने के कारण दिल्ली, अमृतसर, लाहौर, मुल्तान, जालन्धर, करनाल, अहमदाबाद आदि अनेक स्थानों पर 30 मार्च को ही हड़ताल हो गई। बाद में 6 अप्रैल को भी देश के अनेक नगरों में हड़तालो का आयोजन किया गया। सत्याग्रहियों की उत्तेजना और अधिकारी-वर्ग की अदूरदर्शिता के कारण दिल्ली, कलकत्ता और पंजाब के कुछ नगरों में उपद्रव हो गए। चिन्तित गाँधी जी ने 8 अप्रैल को बंबई से दिल्ली और पंजाब की ओर प्रस्थान किया। किन्तु सरकार ने उन्हें 9 अप्रैल की रात्रि को पलवल स्टेशन (हरियाणा राज्य में) पर बंदी बनाकर बंबई वापिस भेज दिया। गाँधी जी की गिरफ्तारी की सूचना से संपूर्ण देश में उत्तेजना एवं रोष की लहर दौड़ गई। 10 अप्रैल, 1919 ई० को पंजाब के उपराज्यपाल **माहकल ओ डायर** ने पंजाब के दो जनप्रिय नेताओं, डॉ० सैफूद्दीन किचलू तथा डॉ० सत्यपाल को बंदी बना लिया, जिससे स्थिति और अधिक गंभीर हो गई।

(vi) जलियाँवाला बाग हत्याकांड–13 अप्रैल, 1919 ई० को बैशाखी के दिन लगभग 20 हजार व्यक्ति, जिनमें स्त्रियाँ और बच्चे भी सम्मिलित थे, सरकार की कठोर दमनकारी नीतियों का विरोध करने के लिए जलियाँवाला बाग में एकत्रित हुए। सभा शांतिपूर्वक चल रही थी कि जनरल डायर ने सांयकाल पाँच बजे वहाँ पहुंचकर सैनिकों को गोली चलाने का आदेश दे दिया। हजारों निरीह एवं निर्दोष लोगों को कीड़े-मकोड़ों के समान मौत के घात उतार दिया गया था। सरकारी 15 अप्रैल को प्रात: काल से अमृतसर और कई अन्य जिलों में मार्शल लॉ लागू कर दिया गया। पंजाब में ब्रिटिश शासन के अत्याचारों की सूचना से संपूर्ण देश में प्रतिशोध की ज्वाला धधकने लगी। कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने अपनी 'नाइटहुड' की पदवी वापिस कर दी, सर शंकरन नायर ने गवर्नर-जनरल की कार्यकारी परिषद् से त्यागत्र दे दिया और महात्मा गाँधी सरकार के विरुद्ध असहयोग आंदोलन छेड़ देने को तत्पर हो गए।

(vii) हण्टर रिपोर्ट– पंजाब में किए गए हत्याकाण्ड की जाँच के लिए 19 अक्टूबर, 1919 ई० को हण्टर कमेटी (Hunter Committee) का गठन किया गया जिसने अपनी रिपोर्ट 24 मई, 1920 ई० को प्रस्तुत की। इस रिपोर्ट ने जनसामान्य की उत्तेजना में और अधिक वृद्धि कर दी। कमेटी द्वारा जलियाँवाला बाग हत्याकांड से संबंधित सभी अधिकारियों को दोषमुक्त कर दिया गया। जनरल डायर के नृशंस कुकृत्य को केवल 'निर्णय लेने की भूल' कहा गया। उसे उसके पद से हटा दिया गया किन्तु इंग्लैंड पहुँचने पर उसका भव्य स्वागत किया गया। इंग्लैंड की सरकार ने उसके कार्य को 'ईमानदारी से पूर्ण' किन्तु 'भ्रामक निर्णय' स्वीकार करके उस पर निर्दोष होने की मुहर लगा दी। इससे भारतीय जनता और नेताओं को यह दृढ़ विश्वास हो गया कि अंग्रेजों को भारतीयों के प्रति लेशमात्र सहानुभूति नहीं थी; उनका एकमात्र उद्देश्य कठोर दमन-चक्र द्वारा भारत पर अपनी पकड़ को मजबूत बनाए रखना था।

(viii) कांग्रेस रिपोर्ट की अवहेलना– भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने पंजाब में हुए हत्याकांड की जाँच के लिए महात्मा गाँधी, मोतीलाल नेहरू तथा मदन मोहन मालवीय की सदस्यता में एक समिति नियुक्त की जिसने 25 मार्च, 1920 ई० को प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में जनरल डायर के कार्यों की कटु आलोचना की। समिति की रिपोर्ट के अनुसार जलियाँवाला बाग हत्याकांड में मृतकों की संख्या सरकारी रिपोर्ट की अपेक्षा कहीं अधिक थी। समिति की रिपोर्ट के आधार पर कांग्रेस ने सरकार को पंजाब में किए गए अत्याचारों के लिए उत्तरदायी अधिकारियों को दंड देने तथा मृत व्यक्तियों के परिवारों

को उचित आर्थिक सहायता देने का निवेदन किया। किन्तु सरकार ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया। ब्रिटिश सरकार के अपेक्षापूर्ण व्यवहार से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को अत्यधिक निराशा हुई और उसने महात्मा गाँधी के नेतृत्व में असहयोग आंदोलन प्रारंभ करने का निश्चय किया।

असहयोग आंदोलन का कार्यक्रम– असहयोग आंदोलन का मुख्य लक्ष्य भारत की समस्त सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक संस्थाओं का बहिष्कार कर सरकार का प्रत्येक क्षेत्र में असहयोग करना था। सरकारी तंत्र को निष्क्रिय बनाने के उद्देश्य से असहयोग आंदोलन के लिए निम्नलिखित कार्यक्रम निर्धारित किए गए–

(i) सरकारी वैतनिक तथा अवैतनिक पदों और उपाधियों का त्याग।

(ii) सरकारी और अर्द्धसरकारी स्कूल और कॉलेजों का बहिष्कार।

(iii) 1919 ई० के अधिनियम के अंतर्गत होने वाले चुनावों का बहिष्कार।

(iv) सरकारी न्यायालयों का बहिष्कार।

(v) विदेशी माल का बहिष्कार।

(vi) सरकारी और अर्द्धसरकारी उत्सवों और समारोहों में उपस्थित न होना।

(vii) भारत तथा मेसोपोटामिया में सैनिक, क्लर्क या मजदूर के रूप में कार्य करने से मना करना।

आंदोलन का स्थगन– ब्रिटिश सरकार कठोरतापूर्वक आंदोलन को कुचलने के लिए कटिबद्ध हो गई। देशभर में नारा गूँजा, 'चरखा चला-चलाकर स्वराज लेंगे'– 'गाँधी जी की जय'। अनेक राष्ट्रीय नेताओं को पकड़कर जेलों में ठूँस दिया गया। 5 फरवरी, 1922 ई० को गोरखपुर जिले के चौरी-चौरा नामक स्थान पर पुलिस की निर्दयता से किसान हिंसक हो उठे, उन्होंने पुलिस की गोलियों का बदला लेते हुए पुलिस चौकी में आग लगाकर थानेदार सहित, 22 सिपाहियों को जिंदा जला दिया। आंदोलन को हिंसात्मक होते देख गाँधी जी ने 12 फरवरी, 1922 ई० को असहयोग आंदोलन को स्थगित कर दिया। 10 मार्च, 1922 ई० को गाँधी जी को बंदी बनाकर 6 वर्ष के लिए जेल में डाल दिया गया।

2. असहयोग आंदोलन कब प्रारंभ हुआ? इसके मुख्य कारणों एवं परिणामों की विवेचना कीजिए।

उ०– असहयोग आंदोलन 1920 ई० में प्रारंभ हुआ।

असहयोग आंदोलन के कारण– इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

सहयोग आंदोलन के परिणाम– यद्यपि यह आंदोलन अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल नहीं हो सका तथापि इसके निम्नांकित प्रमुख परिणाम हुए–

(i) जनता में निर्भीकता का विकास– इस आंदोलन ने जनता को निर्भीकता प्रदान की। पहले जनता ब्रिटिश सरकार का विरोध करने से घबराती थी तथा जेल जाने से डरती थी। किन्तु इस आंदोलन ने जनता को निर्भीक बना दिया। अब देशवासी अंग्रेज सरकार तथा उसके अधिकारियों के आतंक से डरने के बजाय उसका मुकाबला करने लगी।

(ii) देशभक्ति तथा राष्ट्रीयता का संचार– असहयोग आंदोलन ने समाज के विभिन्न वर्गों, सम्प्रदायों तथा सभी प्रांतों की जनता में देश प्रेम तथा राष्ट्रीयता (nationalism) की भावना जाग्रत कर दी। इस आंदोलन में किसानों, निरक्षर लोगों तथा बुद्धिजीवियों ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया इसने जन-आंदोलन का रूप ले लिया। इससे भविष्य के आंदोलनों के लिए सफलता का मार्ग प्रशस्त हो गया।

(iii) स्वराज का संदेश– इस आंदोलन ने घर-घर में स्वराज का संदेश पहुँचा दिया जिससे समाज के सभी वर्गों तथा धर्मों में स्वतंत्रता के लिए जिज्ञासा उत्पन्न कर दी। बच्चे-बच्चे के मुँह से 'स्वराज' शब्द सुनायी देने लगा।

(iv) स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग– विदेशी वस्तुओं के बहिष्कारों के साथ भारतीयों ने स्वदेशी वस्तुओं तथा वस्त्रों का अधिकाधिक प्रयोग आरंभ कर दिया। इससे देश को न केवल आर्थिक दृष्टि से लाभ पहुँचा वरन् जनता के आत्मविश्वास आत्मसम्मान तथा आत्मनिर्भरता में वृद्धि हुई।

(v) कांग्रेस के कार्यक्रम तथा दृष्टिकोण में परिवर्तन- कांग्रेस पहले वैधानिक साधनों का ही प्रयोग करती थी। किन्तु अब उसने अन्य साधनों का भी शांतिपूर्ण ढ़ंग से प्रयोग करना शुरू कर दिया।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

14 सविनय अवज्ञा आंदोलन

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-102 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-102 व 103 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. सविनय अवज्ञा आंदोलन से आप क्या समझते हैं?

उ०– 1929 ई० में कांग्रेस द्वारा पूर्ण स्वतंत्रता की प्राप्ति के लक्ष्य की घोषणा के बाद भारतवासियों में अंग्रेजों के विरूद्ध जोश बढ़ता गया। 14 फरवरी, 1930 ई० को साबरमती में कांग्रेस ने महात्मा गाँधी को 'सविनय अवज्ञा आंदोलन' चलाने का अधिकार प्रदान किया। **इस आंदोलन का उद्देश्य सरकारी कानूनों का उल्लंघन करके सरकार के विरूद्ध रोष प्रकट करना था।** 12 मार्च, 1930 ई० को महात्मा गाँधी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन का आरंभ डांडी यात्रा से किया। गांधी जी पैदल ही अपने अनुयायियों के साथ गुजरात के समुद्री तट तक स्थित डांडी नामक स्थान पर पहुँचे और वहाँ नमक बनाकर सरकार का नमक कानून तोड़ा। इसके बाद सारे देश में लोगों ने सरकारी कानूनों को भंग करना शुरू कर दिया। आंदोलन को दबाने के लिए अंग्रेज-सरकार ने गांधी जी तथा जवाहरलाल नेहरू सहित प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। इसके फलस्वरूप देश में जगह-जगह हड़तालें तथा प्रदर्शन हुए और अनेक लोग जेल गए। जनवरी 1931 ई० में नेताओं को कारावास से मुक्त कर दिया गया। मार्च 1931 ई० में गांधी जी तथा इरविन के बीच समझौता होने के बाद भी आंदोलन 1934 ई० में समाप्त हुआ।

2. सविनय अवज्ञा आंदोलन क्यों चलाया गया?

उ०– असहयोग आंदोलन के स्थगन के बाद लगभग 20 वर्षों तक गांधी जी ने ब्रिटिश सरकार को भारत के प्रति अपनाई गई अपनी नीतियों को सुधारने एवं संशोधन करने का पूरा अवसर दिया। किंतु भारत के प्रति ब्रिटिश सरकार के निरंतर अपेक्षापूर्ण दृष्टिकोण से गांधी जी यह भली-भाँति समझ गए कि ब्रिटिश सरकार भारत को स्वेच्छापूर्वक स्वराज्य प्रदान नहीं करेगी। अत: भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की कार्य समिति की सभा ने 1930 ई0 में पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति के लिए सविनय अवज्ञा आंदोलन चलाने का निश्चय किया तथा इसका संपूर्ण उत्तरदायित्व गांधी जी के सुपुर्द कर दिया। गांधी जी ने 2 मार्च, 1930 ई० को लार्ड इरविन को पत्र लिखा; परंतु उसका कोई प्रभाव होता हुआ न देखकर गांधी जी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन चलाने का दृढ़ निश्चय किया। गांधी जी ने इस आंदोलन का शुभारंभ 12 मार्च, 1930 ई० को दांडी मार्च से किया।

3. सविनय अवज्ञा आंदोलन के क्या परिणाम हुए?

उ०– सविनय अवज्ञा आंदोलन के निम्नलिखित परिणाम हुए–

(i) सविनय अवज्ञा आंदोलन भारी संख्या में भारतीयों को एकजुट करने में सफल हुआ।

(ii) इस आंदोलन में मजदूरों, किसानों और महिलाओं से लेकर उच्चवर्ग के लोगों ने पूर्ण निष्ठा से अपनी सहभागिता निभाई।

(iii) अंग्रेजी सरकार के अन्यायों और बर्बर दमन-चक्र के बाद भी जनसाधारण ने अहिंसा का मार्ग नहीं छोड़ा।

(iv) इस आंदोलन ने भारतीयों में राष्ट्रीयता के साथ-साथ आत्मबल का भी संचार किया।

(v) इस आंदोलन ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की दुर्बलताओं का पर्दाफाश कर दिया।

(vi) कांग्रेस के पास भविष्य के लिए आर्थिक तथा सामाजिक कार्यक्रम न होने के कारण वह जनसमर्थन का भरपूर सदुपयोग नहीं कर सकी।

4. गाँधी जी-इरविन समझौते पर एक टिप्पणी लिखिए।

उ०– **गाँधी-इरविन समझौता–** प्रथम गोल मेज सम्मेलन से भारत को कुछ भी प्राप्त नहीं हो सका। 5 मार्च, 1931 ई० को गाँधी जी की शर्तों पर वायसराय इरविन ने जो समझौता किया, उसे गाँधी-इरविन समझौता (दिल्ली पैक्ट) नाम दिया गया। इस

समझौते के अनुसार गाँधी जी सरदार भगत सिंह, राजगुरु और सुखेदव को न तो जेल से मुक्त करा सके और न उनकी फाँसी की सजा माफ करा सके। अत: 1931 ई० में कांग्रेस के कराची अधिवेशन में गाँधी जी को काले झंडे दिखाए गए। फिर भी सरदार वल्लभ भाई पटेल के प्रयासों के कारण कांग्रेस ने गाँधी–इरविन समझौता स्वीकार कर लिया और गाँधी जी को भारतीय प्रतिनिधि के रूप में द्वितीय गोल मेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए अधिकृत कर दिया।

5. गाँधी जी के डांडी मार्च पर एक टिप्पणी लिखिए।

उ०– **डाँडी मार्च–** महात्मा गाँधी ने अपने 78 स्वयंसेवकों के साथ 12 मार्च, 1930 ई० को अहमदाबाद से डाँडी तक नमक कानून तोड़ने के लिए पैदल मार्च प्रारंभ किया। इसे इतिहास में **डाँडी मार्च** नाम दिया गया। दो सौ मील लंबी यह पैदल यात्रा 24 दिन में पूरी हुई। 5 अप्रैल, 1930 ई० में गाँधी जी अपने दल–बल के साथ डाँडी पहुँच गए। वहाँ एकत्र भीड़ ने उनका स्वागत किया। 6 अप्रैल को प्रात: प्रार्थना के बाद गाँधी जी ने सागर के जल को उबालकर नमक कानून तोड़ा। सुभाषचंद्र बोस ने गाँधी जी के डाँडी मार्च को नेपोलियन के पेरिस मार्च और मुसोलिनी के रोम मार्च जैसा गौरवपूर्ण बताया। डाँडी मार्च ही सविनय अवज्ञा आंदोलन का शुभारंभ था।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. गाँधी जी द्वारा चलाए गए सविनय अवज्ञा आंदोलन के कारण तथा कार्यक्रमों पर प्रकाश डालिए।

उ०– **सविनय अवज्ञा आंदोलन के कारण–** महात्मा गाँधी द्वारा 1930 ई० में सविनय अवज्ञा आंदोलन चलाया, उसके लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) ब्रिटिश शासन के अन्याय, शोषण और उपेक्षाओं के कारण भारत में शांति एवं सुरक्षा-व्यवस्था भयावह बन चुकी थी। किसान, मजदूर एवं जनसामान्य ने इस अव्यवस्था और कुशासन से मुक्ति पाने के लिए गाँधी जी को आंदोलन चलाने के लिए प्रोत्साहित किया।

(ii) साइमन कमीशन के विरोध में उभरे जनमत और जन आंदोलन ने सविनय अवज्ञा आंदोलन के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न कर दी।

(iii) 10 अगस्त, 1928 ई० में नेहरू रिपोर्ट प्रस्तुत की गई, जिसे अंग्रेजी सरकार ने ठुकराकर नए आंदोलन के लिए वातावरण तैयार कर दिया।

(iv) **सरदार वल्लभ भाई पटेल** के नेतृत्व में गुजरात के **वारदौली** ग्राम में किसानों के आंदोलन को सफलता मिली, उसने असहयोग आंदोलन चलाने के लिए प्रेरणा और जोश उत्पन्न कर दिया।

(v) गाँधी जी ने सत्याग्रह को आंदोलन का अस्त्र बनाकर लड़ने का मन बना लिया था, उसका सर्वत्र समर्थन होने से यह आंदोलन प्रारंभ हो गया।

(vi) गाँधी जी के समक्ष तत्कालीन अराजकता और अन्याय से लड़ने का अन्य कोई उपाय नहीं था, अत: उन्हें सविनय अवज्ञा आंदोलन छेड़ने के लिए विवश होना पड़ा।

(vii) गाँधी जी सरकार से वार्ता कर भारत की स्वतंत्रता का प्रश्न सुलझाना चाहते थे; परंतु सरकार से उन्हें उपेक्षा के अतिरिक्त कुछ नहीं मिला। यही उपेक्षा सविनय अवज्ञा आंदोलन का कारण बन गई।

(viii) गाँधी जी तथा अन्य नेताओं को इन समस्त परिस्थितियों से लड़ने का एकमात्र उपाय सविनय अवज्ञा आंदोलन ही लगा, अत: उन्होंने इसे प्रारंभ कर दिया।

सविनय अवज्ञा आंदोलन का कार्यक्रम– 6 अप्रैल, 1930 ई० को महात्मा गाँधी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन के कार्यक्रम की रूपरेखा निम्नवत् प्रस्तुत की–

(i) भारतवासियों को नमक बनाना चाहिए।

(ii) हिंदू लोग अस्पृश्यता को त्याग दें।

(iii) विदेशी वस्त्रों की होली जलाई जाए।

(iv) शराब की दुकानों पर धरना दिया जाए।

(v) सरकारी स्कूल एवं कालेजों का विद्यार्थियों द्वारा बहिष्कार किया जाए।

(vi) सरकारी कर्मचारी कार्यालयों को छोड़ दें।

(vii) विदेशी वस्त्रों एवं वस्तुओं का बहिष्कार किया जाए।

(viii) भूराजस्व, लगान एवं अन्य करों के भुगतान पर रोक लगा दी जाए।

4 मई, 1930 ई० को अंग्रेज सरकार ने गाँधी जी को बंदी बना लिया। अन्य नेताओं ने भूमिगत होकर आंदोलन का संचालन किया।

2. सविनय अवज्ञा आंदोलन के महत्व और प्रभावों का वर्णन कीजिए।

उ०– **सविनय अवज्ञा आंदोलन के प्रभाव–** गाँधी जी ने इस आंदोलन को भी असफलता के रूप में समाप्त कर दिया; परंतु इस आंदोलन के बड़े दूरगामी परिणाम हुए। इस आंदोलन के प्रभावों को निम्नवत् प्रस्तुत किया जा सकता है–

(i) सविनय अवज्ञा आंदोलन भारी संख्या में भारतीयों को एकजुट करने में सफल हुआ।

(ii) इस आंदोलन में मजदूरों, किसानों और महिलाओं से लेकर उच्चवर्ग के लोगों ने पूर्ण निष्ठा से अपनी सहभागिता निभाई।

(iii) अंग्रेजी सरकार के अन्यायों और बर्बर दमन-चक्र के बाद भी जनसाधारण ने अहिंसा का मार्ग नहीं छोड़ा।

(iv) इस आंदोलन ने भारतीयों में राष्ट्रीयता के साथ-साथ आत्मबल का भी संचार किया।

(v) इस आंदोलन ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की दुर्बलताओं का पर्दाफाश कर दिया।

(vi) कांग्रेस के पास भविष्य के लिए आर्थिक तथा सामाजिक कार्यक्रम न होने के कारण वह जनसमर्थन का भरपूर सदुपयोग नहीं कर सकी।

सविनय अवज्ञा आंदोलन का महत्व– सविनय अवज्ञा आंदोलन ने भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए एक नई पृष्ठभूमि तैयार की। देश की समूची जनता और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस आत्मविश्वास से ओत-प्रोत होकर पुन: भावी आंदोलन के लिए कमर कसने में व्यस्त हो गई।

3. प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय गोल मेज सम्मेलनों पर प्रकाश डालिए।

उ०– **प्रथम गोलमेज सममेलन (12 नवंबर, 1930 ई०)–** ब्रिटिश प्रधानमंत्री रैम्जे मैकडॉनल्ड ने साइमन कमीशन की रिपोर्ट पर विचार-विमर्श करने के उद्देश्य से ब्रिटिश सरकार ने 12 नवंबर, 1930 ई० को लंदन में प्रथम गोलमेज सम्मेलन का आयोजन किया। इस सम्मेलन में भारतीय रियासतों के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त मुस्लिम लीग, हिंदू महासभा तथा भारत के अन्य राजनैतिक दलों के प्रतिनिधि भी शामिल हुए जिनमें सर तेज बहादुर सप्रू, वी.एस. श्रीनिवास शास्त्री, मुहम्मद अली जिन्ना आदि प्रमुख थे। उस समय 'सविनय अवज्ञा आंदोलन' अपनी चरम सीमा पर था; कांग्रेस के लगभग सभी महत्वपूर्ण नेता जेल में थे। अत: कांग्रेस ने इस सम्मेलन का बहिष्कार किया। भारत की 85% जनता का प्रतिनिधित्व करने वाली कांग्रेस के इस सम्मेलन में सम्मिलित न होने के कारण भारतीय समस्याओं का उचित समाधान निकाल पाना संभव नहीं था। इस सम्मेलन में केंद्र में उत्तरदायी सरकार की स्थापना, संघात्मक व्यवस्था और प्रान्तीय स्वायत्ता जैसे संवैधानिक सिद्धांतों पर तो सहमति हो गई किन्तु सांप्रदायिक प्रतिनधित्व की समस्या पर विभिन्न दलों एवं वर्गों के प्रतिनिधि एकमत नहीं हो सके। इस सम्मेलन में हुए समझौते के अनुसार अंग्रेज सरकार ने महात्मा गाँधी और कार्य समिति के 19 सदस्यों को जेल से रिहा कर दिया।

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन– 7 सितंबर, 1931 ई० को द्वितीय गोल मेज सम्मेलन का आयोजन किया गया। सम्मेलन में गाँधी ने पूर्ण उत्तरदायी शासन की माँग रखी, जबकि मोहम्मद अली जिन्ना तथा डॉ० भीमराव अंबेडकर ने पूर्ण उत्तरदायी शासन के स्थान पर अपनी-अपनी जातियों के लिए सुविधाओं की माँग रखी। ऐसे वातावरण में कोई उचित निर्णय होता न देख गाँधी जी दु:खी मन से भारत लौट आए।

भारत आकर गाँधी जी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन पुन: छेड़ दिया। **लार्ड विलिंगटन** ने कांग्रेस के इस आंदोलन को कठोरता और बर्बरता से कुचलने का दृढ़ निश्चय कर लिया। भारतीय जनता भी दृढ़ निश्चय तथा पवित्र मन से आंदोलन कर रही थी, अत: अंग्रेज सरकार को अपेक्षित सफलता नहीं मिली। यह आंदोलन 1934 ई० तक चला, जिससे जनता का धैर्य टूट गया और गाँधी जी ने 7 अप्रैल, 1934 ई० को सविनय अवज्ञा आंदोलन को समाप्त कर दिया।

तृतीय गोल मेज सम्मेलन– 17 सितंबर, 1932 ई० से 24 सितंबर, 1932 ई० तक तृतीय और अंतिम गोलमेज सम्मेलन लंदन में आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में कांग्रेस का कोई प्रतिनिधि नहीं था। मात्र राजभक्त और संप्रदायवादी ही इसमें सम्मिलित हुए। इसी के अनुरूप भारत में **भारत प्रशासन अधिनियम 1935** लागू किया गया।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

15 भारत छोड़ो आंदोलन

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-107 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-107 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. भारत छोड़ो आंदोलन कब प्रारंभ हुआ? इसके लिए उत्तरदायी दो कारण लिखिए।

उ०– 1929 ई0 में कांग्रेस द्वारा पूर्ण स्वतंत्रता की प्राप्ति के लक्ष्य की घोषणा क्रिप्स मिशन के भारत से चले जाने के बाद भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने महात्मा गाँधी के नेतृत्व में 8 अगस्त, 1942 ई० को अगस्त क्रांति के रूप में भारत छोड़ो आंदोलन प्रारंभ किया। इस आंदोलन के दो उत्तरदायी कारण निम्नलिखित हैं–

(i) भारतीय जनता में ब्रिटिश शासकों के प्रति भारी रोष उत्पन्न हो गया था। अत: गाँधी जी ने अनुकूल परिस्थितियाँ देखकर भारत छोड़ो आंदोलन आरंभ किया।

(ii) द्वितीय विश्व युद्ध में अंग्रेजों ने, भारतीयों की जमीनें नष्ट कर डालीं, लोगों से रोजी-रोटी के व्यवसाय छीन लिए तथा आवश्यक वस्तुओं के मूल्य बढ़ा दिए गए, जिससे भारत की जनता आंदोलन करके उनसे छुटकारा पाना चाहती थी।

2. भारत छोड़ो आंदोलन का भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति पर क्या प्रभाव पड़ा?

उ०– 1942 ई० का भारत छोड़ो आंदोलन भारत की स्वतंत्रता के लिए नींव का पत्थर सिद्ध हुआ। इस आंदोलन ने ब्रिटिश औपनिवेशिक साम्राज्य को ध्वस्त करके भारत की स्वतंत्रता के भवन की आधारशिला रखी, अंग्रेज शासक भारतीय जनता के रोष को पहचानकर भारतभूमि को छोड़ने के लिए तैयार हो गए। परिणाम स्वरूप आंदोलन के पाँच वर्ष बाद ही 15 अगस्त, 1947 ई० को भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हो गई।

3. भारत छोड़ो आंदोलन पर एक टिप्पणी लिखिए।

उ०– 8 अगस्त, 1942 ई० को महात्मा गाँधी ने नेतृत्व में कांग्रेस ने बंबई अधिवेशन में भारत छोड़ो आंदोलन प्रारंभ करने का प्रस्ताव पारित किया। गाँधी जी ने देशवासियों को 'करो या मरो' का नारा दिया। किन्तु प्रस्ताव पास होने के अगले ही दिन गाँधी जी तथा कांग्रेस के अन्य नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। गिरफ्तारियों का समाचार पाकर भारत की जनता भड़क गई। समस्त भारत में हड़तालें, प्रदर्शन, तोड़-फोड़, सरकारी इमारतों को आग लगाना, थानों व पुलिस चौकियों पर हमले आदि की घटनाएँ हुईं। कारखाने, स्कूल व कॉलेज बंद हो गए। अनेक गाँवों तथा शहरों पर विद्रोहियों ने अस्थाई नियंत्रण कायम कर लिया। एक सप्ताह के लिए देश में काम-काज बंद रहा। रेल की लाइनें उखाड़ दी गईं। टेलीफोन के तार काट दिए गए।

सरकार ने आंदोलन को कुचलने के लिए भारी प्रयास किए। प्रदर्शनकारियों के विरूद्ध मशीनगनों का प्रयोग किया ओर हवाई जहाम से बम गिराए गए। आखिरकार सरकार आंदोलन को कुचलने में सफल हो गई।

'भारत छोड़ो आंदोलन' स्वतंत्रता संग्राम का सबसे बड़ा आंदोलन था। यह महात्मा गाँधी का अंतिम आंदोलन था। इसका भारत की स्वतंत्रता-प्राप्ति पर गहरा प्रभाव पड़ा। यद्यपि अंग्रेजी सरकार ने इस विद्रोह को दबा दिया था तथापि इसने भारतवासियों में ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध प्रबल भावनाएँ जाग्रत कर दीं। इस आंदोलन के बाद विश्व के अनेक देशों ने समझ लिया कि अब भारतियों को गुलाम रखना संभव नहीं। इसलिए अनेक राष्ट्रों ने भारत की स्वतंत्रता का न केवल समर्थन किया बल्कि इस संबंध में अंग्रेजों पर दबाव भी डाला। अंग्रेजी सरकार इस आंदोलन से भयभीत हो गई और उसने निकट भविष्य में भारत को स्वतंत्रता देने का निश्चय कर लिया।

4. भारत छोड़ो आंदोलन के तीन प्रमुख प्रभाव बताइए।

उ०– भारत छोड़ो आंदोलन के तीन प्रमुख प्रभाव निम्नलिखित हैं–

(i) भारत छोड़ो आंदोलन ने भारत की जनता में एक ऐसी अपूर्व जागृति उत्पन्न कर दी, जिसके कारण ब्रिटेन के लिए भारत पर अधिक लम्बे समय तक शासन करना संभव नहीं रहा।

(ii) ब्रिटिश सरकार इस आंदोलन से भयभीत हो गई और उसने निकट भविष्य में भारतियों को स्वतंत्रता देने का निश्चय कर लिया।

(iii) ब्रिटिश सरकार ने आंदोलन को कुचलने के लिए महात्मा गाँधी और कार्य समिति के सभी सदस्यों को जले भेज दिया और कांग्रेस संस्था को कानून के विरूद्ध घोषित कर दिया।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. भारत छोड़ो आंदोलन पर प्रकाश डालिए तथा भारत के स्वतंत्रता संग्राम पर इसके प्रभावों की विवेचना कीजिए।

उ०– **भारत छोड़ो आंदोलन–** असहयोग आंदोलन और सविनय अवज्ञा आंदोलन के कारण भारतीय जनता में विद्रोह, क्रांति और विरोध की जो घनघोर घटाएँ उमड़ीं, वे 1942 ई० में ब्रिटिश साम्राज्य को आंदोलन की बाढ़ में बहाने के लिए घनघोर वर्षा के रूप में प्रकट हो गईं। भारत छोड़ो आंदोलन क्रिप्स मिशन की उग्र प्रतिक्रियाओं के फलस्वरूप उदित हुआ। ब्रिटिश सरकार ने 23 मार्च, 1942 ई० को **स्टीफर्ड क्रिप्स** को भारत भेजा। 30 मार्च को उनके प्रस्ताव सार्वजनिक कर दिए गए। देश के सभी राजनीतिक दलों ने क्रिप्स मिशन के सभी सुझावों को नकार दिया। मुस्लिम लीग उससे इसलिए नाराज थी कि प्रस्ताव में पृथक पाकिस्तान बनाने की कोई व्यवस्था नहीं थी। क्रिप्स महोदय असफल होकर स्वदेश लौट गए।

क्रिप्स मिशन के भारत से चले जाने पर महात्मा गाँधी जी ने 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का नारा बुलंद कर दिया। अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 8 अगस्त, 1942 ई० को भारत छोड़ो आंदोलन का प्रस्ताव पारित कर दिया। इस आंदोलन के संचालन की संपूर्ण बागडोर गाँधी जी के हाथों में सौंप दी। बंबई के प्रसिद्ध अधिवेशन में अगस्त क्रांति करने का महत्वपूर्ण निर्णय लिया गया। गाँधी जी ने एक सफल और अहिंसात्मक जन आंदोलन चलाने का नेतृत्व सँभाल लिया। महात्मा गाँधी ने कहा– "मेरे जीवन का यह अंतिम संघर्ष होगा।" उन्होंने उद्घोष किया, "करो या मरो"। विश्व के इतिहास में यही आंदोलन **अगस्त क्रांति** या **भारत छोड़ो आंदोलन** के नाम से विख्यात हुआ। उन्होंने कहा था कि या तो हम भारत को स्वतंत्र कराएँगे या इस प्रयास में मारे जाएँगे। आंदोलन के प्रारंभ में ही ब्रिटिश सरकार ने कांग्रेस को गैरकानूनी संस्था घोषित करके गाँधी जी सहित कांग्रेस के नेताओं को बंदी बनाकर अज्ञात स्थानों पर ले जाकर कैद कर दिया।

अंग्रेजों के अन्याय और कठोर दमनचक्र के कारण भारतीय जनमानस में खलबली मचना स्वाभाविक था। अत: कहीं–कहीं आंदोलन हिंसात्मक भी हो गया। बंबई, अहमदाबाद, दिल्ली आदि नगरों से निकलती आंदोलन की लपटों ने समूचे भारत को अपनी चपेट में ले लिया। सरकारी कार्यालयों, रेलवे स्टेशनो, पुलिस चौकियों और डाकखानों को जनता ने आग के हवाले कर दिया। रेलपथों और विद्युत लाइनों को तोड़ा गया। सरकार ने लाठीचार्ज करके तथा आंदोलनकारियों पर गोलियाँ बरसाकर आंदोलन की आग को बुझाना चाहा। मुस्लिम लीग ने इस आंदोलन में सहयोग नहीं किया। नेतृत्वविहीन हो जाने के कारण यह आंदोलन असफल हो गया।

भारत छोड़ो आंदोलन का प्रभाव– 'भारत छोड़ो आंदोलन' स्वतंत्रता संग्राम का सबसे बड़ा आंदोलन था। यह महात्मा गाँधी का अंतिम आंदोलन था। इसका भारत की स्वतंत्रता–प्राप्ति पर गहरा प्रभाव पड़ा। यद्यपि अंग्रेजी सरकार ने इस विद्रोह को दबा दिया था। तथापि इसने भारतवासियों में ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध प्रबल भावनाएँ जाग्रत कर दीं। इस आंदोलन के बाद विश्व के अनेक देशों ने समझ लिया कि अब भारतियों को गुलाम रखना संभव नहीं। इसलिए अनेक राष्ट्रों ने भारत की स्वतंत्रता का न केवल समर्थन किया बल्कि इस संबंध में अंग्रेजों पर दबाव भी डाला। अंग्रेजी सरकार इस आंदोलन से भयभीत हो गई और उसने निकट भविष्य में भारत को स्वतंत्रता देने का निश्चय कर लिया।

डॉ० कश्यप के विचारानुसार, ''सन् 1942 का भारत छोड़ो आंदोलन नि:सन्देह सन् 1857 की असफल क्रांति के बाद भारत में अंग्रेजी राज्य की समाप्ति के लिए किया गया सबसे बड़ा प्रयास था।'' वास्तव में भारतवासियों में इतनी निडरता व दृढ़ संकल्प पहले कभी नहीं देखा गया।

डॉ० ईश्वरी प्रसाद के शब्दों में, '' अगस्त की क्रांति से आधुनिक भारत के इतिहास में एक नया युग प्रारंभ हुआ। यह सरकार की तानाशाही तथा अत्याचारों के विरूद्ध प्रजा का विद्रोह था और इसकी तुलना फ्रांस के इतिहास में बास्तील के

पतन से या रूस की अक्टूबर क्रांति से की जा सकती है।'' 'भारत छोड़ो आंदोलन' के पाँच वर्ष बाद अगस्त 1947 में भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हो गई।

2. भारत छोड़ो आंदोलन के तीन कारण लिखिए। ब्रिटिश सरकार की इस पर क्या प्रतिक्रिया थी? आपके मत से क्या यह असफल रहा? अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दीजिए।

उ०– **भारत छोड़ो आंदोलन के कारण–**

'भारत छोड़ो' आंदोलन के अनेक कारण थे, जिनमें से तीन प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

(i) क्रिप्स मिशन की असफलता– भारत के संवैधानिक गतिरोध को दूर करने के लिए तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के मार्ग की समस्याओं को सुलझाने के लिए मार्च, 1942 ई0 में सर स्टैफर्ड क्रिप्स की अध्यक्षता में क्रिप्स मिशन भारत आया। इस मिशन के प्रस्ताव व सुझाव दोषपूर्ण तथा अपर्याप्त थे।

(ii) युद्ध की भयंकरता व शरणार्थियों के प्रति कठोर व्यवहार– इधर भारत पर जापान के आक्रमण का भय लगातार बढ़ रहा था। अंग्रेजों द्वारा ऐसी स्थिति में भारतीयों को दिए जाने वाले प्रलोभन को महात्मा गाँधी ने **'दिवालिया बैंक का उत्तर दिनांकित चैक'** कहा और प्रलोभन में न आने के लिए भारतीयों को आगाह किया। बर्मा (म्यांमार) से जो भारतीय शरणार्थी भारत आ रहे थे, वे दु:खभरी कहानियाँ सुनाते थे। बर्मा में रह रहे अंग्रेजों को बचाने के तो सतत प्रयत्न किए गए, लेकिन वहाँ रह रहे भारतीयों के साथ अपमानजनक व्यवहार किया गया।

(iii) बंगाल में आतंक का राज्य– पूर्वी बंगाल में भय और आतंक का साम्राज्य था। वस्तुओं के मूल्य बढ़ते जा रहे थे, मुद्रा पर से विश्वास हटता जा रहा था। गाँधी जी को भी यह विश्वास हो गया था कि अंग्रेज भारत की सुरक्षा करने में असमर्थ हैं। इसलिए गाँधी जी ने अंग्रेजों को भारत से चले जाने को कहा।

ब्रिटिश सरकार प्रतिक्रिया– भारत छोड़ो आंदोलन के कारण ब्रिटिश सरकार की प्रतिक्रिया निम्नलिखित थी–

(क) ब्रिटिश सरकार ने महात्मा गाँधी और कांग्रेस को कार्य समिति के सभी सदस्यों को जल भेज दिया। कांग्रेस संस्था को कानून विरोधी घोषित कर दिया और उसके कार्यालय पर पुलिस ने कब्जा कर लिया।

(ख) ब्रिटिश सरकार ने देश में अपनी सत्ता को फिर से स्थापित करने के लिए निर्दोष पुरूषों, स्त्रियों तथा बच्चों को गोलियों से उड़ा दिया।

(ग) अनेक क्रांतिकारियों को आंदोलन से अलग रखने के लिए 'काला पानी' की सजा दी गई।

भारत छोड़ो आंदोलन की असफलता– भारत छोड़ो आंदोलन अन्तत: असफल रहा। इसकी असफलता के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

(i) संगठित शक्ति का अभाव– 'भारत छोड़ो' आंदोलन एक जन-आंदोलन था, जिसके लिए संगठित शक्ति की आवश्यकता थी। लेकिन जब अचानक सभी नेता गिरफ्तार कर लिए गए, तब किसी को पता नहीं था कि अब क्या करना है। आंदोलन अचानक नेतृत्वविहीन हो गया था तथा जनता की समस्त शक्तियाँ बिखर गईं। हिंसा के विचार पर दृष्टिकोण का मतभेद बना रहा। इससे सरकार के विरूद्ध संगठित मोर्चा नहीं बन सका।

(ii) नेताओं में मत-वैभिन्यता– प्रमुख नेताओं के गिरफ्तार हो जाने पर शेष नेता यह निर्णय न ले सके कि कौन-सी कार्यवाही हिंसात्मक है और कौन-सी अहिंसात्मक। इस मतभेद और वैचारिक विभिन्नता ने आंदोलन को शिथिल कर दिया।

(iii) साधनों का अभाव– आंदोलनकारियों के पास साधनों का अभाव था जबकि सरकार के पास अस्त्र-शस्त्रों के साथ सशस्त्र सेना व पुलिस बल पर्याप्त संख्या में था। इसी कारण आंदोलनकर्ता सभी कार्य छिपकर कर रहे थे।

(iv) आंदोलन और दमन-चक्र के मध्य अत्यधिक अल्प समय– आंदोलन का दमन सरकार ने बहुत ही शीघ्र आरंभ कर दिया। इससे आंदोलनकारियों को अपने कार्यक्रम के क्रियान्वयन हेतु पर्याप्त समय भी नहीं मिल पाया। सभी नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया और दमन-चक्र द्वारा देश में आतंक फैला दिया गया।

(v) अन्य दलों द्वारा असहयोग– 'भारत छोड़ो' आंदोलन की असफलता का प्रमुख कारण था- अन्य दलों द्वारा असहयोग। साम्यवादी दल, मुस्लिम लीग, एंग्लो इण्डियन समुदाय व अकाली दल आदि ने इसके साथ कोई सहयोग नहीं किया। अत: यह आंदोलन सफल न हो सका।

(vi) सरकारी सेवाओं के प्रति निष्ठा– 'भारत छोड़ो' आंदोलन की असफलता का प्रमुख कारण था कि देश में सेना, पुलिस, देशी राजाओं तथा जमींदारों ने सरकार का साथ दिया और आंदोलन में भाग नहीं लिया।

यह आंदोलन संगठनात्मक कमजोरियों के कारण अपने निर्दिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति में असफल सिद्ध हुआ परंतु इस आंदोलन ने यह अवश्य स्पष्ट कर दिया कि अब अंग्रेज भारत में अधिक समय तक नहीं रह सकते हैं। उन्हें भारत को स्वतंत्रता प्रदान करने के लिए विवश होना ही पड़ेगा।

3. भारत छोड़ो आंदोलन की सफलताओं एवं असफलताओं का वर्णन कीजिए।

उ०– **भारत छोड़ो आंदोलन की सफलता–** 'भारत छोड़ो आंदोलन' पूर्ण रूप से अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल नहीं हो सका, परन्तु फिर भी इस आंदोलन के महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। इस आंदोलन की सफलता के परिप्रेक्ष्य में इसके महत्व को निम्न प्रकार समझा जा सकता है–

(i) **जन-जागृति उत्पन्न की–** यद्यपि 'भारत छोड़ो' आंदोलन अपने मूल लक्ष्य– भारत से ब्रिटिश शासन की समाप्ति को तात्कालिक रूप में प्राप्त नहीं कर सका, परंतु इस आंदोलन ने भारत की जनता में एक ऐसी अपूर्व जागृति उत्पन्न कर दी, जिसके कारण ब्रिटेन के लिए भारत पर अधिक लंबे समय तक शासन करना संभव नहीं रहा। **ए०सी० बनर्जी** के शब्दों में, ''इस विद्रोह के परिणामस्वरूप अधिराज्य की पुरानी माँग सर्वथा समाप्त हो गई और इसका स्थान पूर्ण स्वराज्य की माँग ने ले लिया।'' इस संबंध में **डॉ० ईश्वरी प्रसाद** का वक्तव्य उल्लेखनीय है– ''अगस्त क्रांति अत्याचार और दमन के विरूद्ध भारतीय जनता का विद्रोह था और इसकी तुलना फ्रांस के इतिहास में बास्तील के पतन या सोवियत संघ की अक्टूबर क्रांति से की जा सकती है। यह क्रांति जनता में उत्पन्न नवीन उत्साह तथा गरिमा की सूचक थी।'' **डॉ० अम्बाप्रसाद** के शब्दों में– ''इस आंदोलन ने 1947 ई० में भारतीय स्वतंत्रता के लिए पृष्ठभूमि तैयार की।''

(ii) **नौसेना का विद्रोह–** इसी आंदोलन के फलस्वरूप 1946 ई० में नौसेना का विद्रोह हुआ।

(iii) **अंतर्राष्ट्रीय जनमत की जागृति–** इस आंदोलन से विदेशों में भारत के पक्ष में जनमत प्रबल हुआ। **च्यांग काइ-शेक** के अनुसार– ''अंग्रेजों के लिए श्रेष्ठ नीति यही है कि वे भारत को पूर्ण स्वतंत्रता दे दें।'' इस आंदोलन का परिणाम यह भी निकला कि अंग्रेज और मुस्लिम लीग एक-दूसरे के समीप आने लगे क्योंकि दोनों ही एक-दूसरे के सहायक ओर कांग्रेस के विरोधी थे। मुहम्मद अली जिन्ना ने दूसरे विश्वयुद्ध में अंग्रेजों का साथ दिया तथा हिंदुओं से वैमनस्यपूर्ण व्यवहार रखा। पाकिस्तान बनवाने की नापाक नीयत तथा हठधर्मिता का त्याग वह कभी नहीं कर सका तथा अंग्रेजों ने भी उसे उपकृत करना चाहा। इसीलिए जब बाद में भारत की स्वतंत्रता प्रदान की गई तो उन्होंने जिन्ना का साथ दिया और उपकार के रूप में उसको पाकिस्तान भी दे दिया।

पं० जवाहरलाल नेहरू ने आंदोलन के संदर्भ में कहा था– ''सन् 1942 में जो कुछ हुआ, उसका मुझको अवश्य गर्व है। मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि उनकी निन्दा नहीं कर सकता हूँ, जिन्होंने आंदोलन में भाग लिया।''

डॉ० ईश्वरी प्रसाद ने लिखा है- ''इस विद्रोह की आग में औपनिवेशिक स्वराज्य की पूरी बात जल गई। भारत अब पूर्ण स्वतंत्रता से कम कुछ नहीं चाहता था। अंग्रेजों का भारत छोड़ना निश्चित हो गया। यह ब्रिटिश साम्राज्यवाद को बड़ा भारी धक्का था।''

भारत छोड़ो आंदोलन की असफलता– इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-2 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

4. भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में गाँधी जी के योगदान (भूमिका) की विवेचना कीजिए।

उ०– **भारत के स्वतंत्रता संग्राम में गाँधी जी का योगदान (भूमिका)–** महात्मा गाँधी भारत के राष्ट्रीय संग्राम के अगुवा ही नहीं, सेनापति भी थे। 1915 ई० से गाँधी जी के हाथों में जो राष्ट्रीय आंदोलन का नेतृत्व आया, वह 1947 ई० तक गाँधी युग की धारा बनकर बहता रहा। महात्मा गाँधी भारत के स्वतंत्रता संग्राम का वह इंजन थे, जिसके पीछे समस्त राष्ट्र जुड़ा हुआ था। साबरमती का यह संत भारत का महात्मा ही नहीं, विश्व इतिहास में युगपुरुष बनकर उभरा। उन्होंने सत्याग्रह के अमोघ अस्त्र से ब्रिटिश साम्राज्यवादी दानव का शिकार कर लिया। इसीलिए आज भी समूचा देश प्रत्येक स्वतंत्रता दिवस पर राष्ट्रपिता के प्रति नतमस्तक हो जाता है। भारत के स्वतंत्रता संग्राम के नेतृत्व से लेकर भारत को स्वतंत्रता दिलवाने तक गाँधी जी का योगदान (भूमिका) निम्नवत् रहा है–

(i) **कांग्रेस को जनसामान्य से जोड़ना–** गाँधी जी के कुशल नेतृत्व ने कांग्रेस को जमींदारों, वकीलों तथा डॉक्टरों के चंगुल से निकाल, किसान, मजदूर और आम आदमी से जोड़कर स्वतंत्रता आंदोलनों में जन-जन का सहयोग प्राप्त किया।

(ii) **असहयोग आंदोलन–** यह महात्मा गाँधी जी द्वारा चलाए गए आंदोलनों में प्रथम महत्वपूर्ण आंदोलन था। पंजाब में हो रहीं नृशंस घटनाओं पर रोक लगाने के उद्देश्य से गाँधी जी ने 1920 ई० में असहयोग आंदोलन किया। इस आंदोलन का

उद्देश्य सरकार से किसी भी प्रकार का सहयोग न करना था। इसका आरंभ गाँधीजी ने अपनी 'कैसर-ए-हिंद' की उपाधि को गवर्नर जनरल को लौटाकर किया। जनता ने भी बड़ा उतसाह दिखाया। सैकड़ों व्यक्तियों ने अपनी उपाधियाँ त्याग दीं। हजारों छात्रों ने स्कूल ओर कॉलेज छोड़ दिए। विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया गया तथा विदेशी वस्त्रों की होली जलाई गई। चुनावों, सरकारी नौकरियों, संस्थाओं तथा उत्सवों का बहिष्कार किया गया। गाँधी जी के आह्वान पर प्रिंस ऑफ वेल्स (ब्रिटेन के युवराज) के भारत-आगमन पर उनका देशभर में बहिष्कार किया गया। 5 फरवरी, 1922 ई० को चौरी चौरा गाँव में हुई हिंसात्मक घटना से दु:खी होकर गाँधी जी ने इस आंदोलन को स्थगित कर दिया। इस आंदोलन से गाँधी जी ने राष्ट्रीय आंदोलन को एक नई दिशा दी और स्वराज्य की लड़ाई को गाँव-गाँव तथा घर-घर तक पहुँचा दिया। इस आंदोलन के स्थगित होने पर सरकार पे राजद्रोह के आरोप में गाँधाी जी को 6 वर्ष के लिए बंदी बना लिया।

(iii) सविनय अवज्ञा आंदोलन– 1922 ई० में कांग्रेस ने लाहौर अधिवेशन में 'पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति' को अपना लक्ष्य घोषित किया जिसकी प्राप्ति के लिए गाँधी जी के नेतृत्व में 'सविनय अवज्ञा आंदोलन' चलाया गया। इस आंदोलन का प्रारंभ महात्मा गाँधी जी के डांडी नामक स्थान पर नमक बनाकर सरकार के नमक-कानून को तोड़कर किया। 1931 ई० में गाँधर-इर्विन समझौता हुआ। गाँधी जी ने आंदोलन स्थगित करके द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में भाग लेना स्वीकार किया। किंतु वार्ता के विफल होने पर आंदोलन पुन: प्रारंभ कर दिया गया। यह आंदोलन 1934 ई० तक चला।

(iv) व्यक्तिगत सत्याग्रह– अंग्रेजी सरकार ने भारतीयों को द्वितीय विश्व युद्ध में नेताओं के साथ कोई परामर्श किए बिना ही धकेल दिया था। परिणामत: 1940-41 में महात्मा गाँधी के नेतृत्व में सरकार के इस कदम का विरोध करने हेतु सतयाग्रह आंदोलन चलाया गया।

(v) भारत छोड़ो आंदोलन– 8 अगस्त, 1942 ई० को कांग्रेस पार्टी के अधिवेशन में 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पास किया गया। गाँधी जी ने देशवासियों को 'करो या मरो' का नारा दिया। किंतु अगले दिन 9 अगस्त की सुबह ही महात्मा गाँधी तथा महत्वपूर्ण नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। इस गिरफ्तारियों की जनता में भयंकर प्रतिक्रिया हुई और समस्त भारत में प्रदर्शन, हड़तालें, तोड़फोड़, सरकारी इमारतों को आग लगाना, थानों व पुलिस चौकियों पर हमले आदि की घटनाएँ हुईं। अनेक स्थानों पर विद्रोहियों ने अस्थायी नियंत्रण कायम कर लिया। यद्यपि अंग्रेज-सरकार अंतत: आंदोलन को कुचलने में सफल हो गई तथापि पाँच वर्ष बाद ही भारत को छोड़ने के लिए विवश हो गई। यह एक राष्ट्रव्यापी आंदोलन था जिसका श्रेय मुख्यतया महात्मा गाँधी को प्राप्त है।

(vi) सत्याग्रह का अभिनव प्रयोग– गाँधी जी ने सत्य और अंहिसा को आधार बनाकर सत्याग्रह के अस्त्र का प्रयोग किया। तभी तो कवि कह उठा– "दे दी हमें आजादी बिना खड्ग बिना ढाल, साबरमती के संत तूने कर दिया कमाल।"

(vii) हिंदू-मुस्लिम एकता के पक्षधर– गाँधी जी जीवन में हिंदू-मुस्लिम एकता के लिए प्रयासरत रहे। उनका सिद्धांत था– 'ईश्वर-अल्लाह तेरो नाम, सबको सन्मति दे भगवान।' इसीलिए भारत के स्वतंत्रता संग्राम में उन्हें जनसाधारण का भरपूर सहयोग मिला।

(viii) छुआछूत का विरोध– गाँधी जी मनुष्य-मनुष्य में भेद नहीं करते थे। जिन्हें सवर्ण अछूत कहते थे, गाँधी जी ने उन्हें हरिजन कहा। ऊँच-नीच की खाई पाटकर ही गाँधी जी भारत को स्वतंत्र कराने में सफल हो सके।

(ix) स्वराज और स्वदेशी का समर्थन– गाँधी जी का नारा स्वराज था, जिसे स्वदेशी भावना को अपनाकर ही पूरा किया जा सकता था। उन्होंने गरीबी दूर करने के लिए चरखे और खादी का प्रचार किया। स्वराज और स्वदेशी ने ही उन्हें उनके महान लक्ष्य तक पहुँचाया।

(x) जेल यातनाएँ और अनशन– गाँधी जी ने जो भी आंदोलन चलाए या अनशन किए, उनके लिए जेलों में डालकर कठोर यातनाएँ दी गईं। उन्होंने भारत को स्वतंत्र कराने के लिए उन्हें हँसते-हँसते झेला।

(xi) त्याग की प्रतिमूर्ति– गाँधी जी एक संत का त्यागमय जीवन व्यतीत करते थे। एक लंगोटी और एक लकुटी उनके साथ रहती थी। उन्हें न तो राजनीतिक पद से लगाव था और न सत्ता के प्रति कोई मोह। स्वतंत्रता प्राप्ति और राष्ट्रीय एकता की स्थापना का मूल्य उन्होंने गोली खाकर चुकाया।

गाँधी जी के स्वतंत्रता संग्राम के योगदान के विषय में विभिन्न विचारकों ने अपने उद्गार निम्नवत् प्रस्तुत किए हैं–

"गाँधी जी ने राष्ट्रीय आंदोलन को जनप्रिय बनाया" **–कूपलैंड**

"बहुत समय बाद तक लोगों में गाँधी जी के नाम की इज्जत बनी रहेगी। हिंदुस्तान की सब माताएँ युगों तक अपने बच्चों को

उनका नाम सम्मान के साथ बताएँगी।" **–सी0एफ0 डंडूज**

"गाँधी जी ही केवल भारत के राष्ट्रीय आंदोलन तथा स्वतंत्रता इतिहास के ऐसे नायक हैं, जिनकी कहानियाँ युगों तक प्रसिद्ध रहेंगी।" **–रोम्यारोला**

"30 जनवरी, 1948 को गाँधी युग का अंत हुआ। इससे एक ऐसा शून्य पैदा हुआ, जिसे भरा भी नहीं जा सकता था।" **–दुर्गादास**

वास्तव में गाँधी जी भारत के स्वतंत्रता संग्राम की धुरी थे। उनके जैसा जुझारू नेता आज तक दूसरा पैदा ही नहीं हुआ। उन्होंने असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन तथा भारत छोड़ो आंदोलन चलाकर जनसहयोग से आततायी और अन्यायी शासन के घातक पंजों से भारत को स्वतंत्र कराया। युगों-युगों तक भारत का जनमानस उनका आभारी रहेगा।

5. महात्मा गाँधी द्वारा चलाए गए दो महत्वपूर्ण राष्ट्रीय आंदोलनों पर प्रकाश डालिए।

उ०– महात्मा गाँधी द्वारा चलाए गए दो महत्वपूर्ण राष्ट्रीय आंदोलन असहयोग आंदोलन व भारत छोड़ो आंदोलन हैं। इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-4 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

16 क्रांतिकारियों का योगदान

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-113 व 114 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-114 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. चंद्रशेखर आजाद के जीवन एवं आंदोलन का स्वतंत्रता संघर्ष में क्या योगदान था?

उ०– चंद्रशेखर आजाद का जन्म 23 जुलाई, 1906 ई० में मध्यप्रदेश के बहोर नामक ग्राम में हुआ था। बचपन से ही वह बड़े साहसी और निडर थे। पढ़ाई में उनकी कोई विशेष रूचि नहीं थी। चंद्रशेखर आजाद देश की आजादी के दीवाने थे। 14 वर्ष की आयु में उन्होंने गाँधी जी के असहयोग आंदोलन में भाग लिया तथा जेल गए। 1922 में जेल से छूटने के बाद आजाद क्रांतिकारी दल में शामिल हो गए। शीघ्र ही उन्होंने प्रमुख क्रांतिकारियों से अपना संबंध स्थापित किया। ज्यों-ज्यों अंग्रेजों के अत्याचार बढ़ रहे थे, त्यों-त्यों आजाद की क्रांतिकारी गतिविधियाँ तेज हो रहीं थीं। आजाद के नेतृत्व में लाला लाजपत राय के हत्यारे साण्डर्स को गोली मार कर हत्या की गई तथा 8 अप्रैल, 1929 में असेम्बली हॉल में बम फेंकने की योजना बनाई गई। आजाद कभी भी पुलिस के हाथों नहीं आए। एक दिन आजाद अपने साथी के साथ इलाहाबाद के अल्फ्रेड पार्क में विचार-विमर्श कर रहे थे, कि अचानक वहाँ पुलिस आ गई। पुलिस ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया। उन्होंने पुलिस का डटकर मुकाबला किया। परन्तु अंतिम गोली से स्वयं को उड़ाकर जीवन भर आजाद रहने का प्रण पूरा किया।

2. भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में लाला लाजपत राय के योगदान का वर्णन कीजिए।

उ०– **लाला लाजपत राय–** लाला लाजपत राय का जन्म पंजाब राज्य के फिरोजपुर जिले में 1865 ई० में हुआ था। उन्होंने स्नातक स्तर तक शिक्षा पाने के बाद भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय भागीदारी निभानी प्रारंभ कर दी। उन्होंने इंग्लैंड जाकर लोगों को भारतवासियों के कष्टों से परिचित करवाया। लाला लाजपत राय ने असहयोग आंदोलन में बढ़-चढ़कर भाग लिया। 1923 ई० में वे केंद्रीय व्यवस्थापिका सभा के सदस्य चुने गए। वे एक साहसी और निर्भीक क्रांतिकारी थे, इसीलिए उन्हें 'पंजाब केसरी' कहा जाता था। 22 फरवरी, 1928 ई० को भारत का यह महान स्वतंत्रता सेनानी इस संसार से कूच कर गया था। 1928 ई० में साइमन कमीशन का विरोध करने पर पुलिस ने इन पर बर्बर लाठियाँ बरसाकर बुरी तरह घायल कर

दिया। परिणामस्वरूप बाद में उसी से उनका स्वर्गवास हो गया। वे कांग्रेस के गरमदल के नेता थे। वे महान शिक्षाविद् समाज सुधारक और कट्टर देशभक्त थे।

3. आजाद हिंद फौज के विषय में आप क्या जानते हैं?

उ०– आजाद हिंद फौज का पुनर्गठन सुभाष चंद्र बोस ने 23 अगस्त, 1943 ई० को सिंगापुर में किया था। वे उसके सेनापति बनकर भारत माता को सैन्यबल से स्वतंत्र कराने में जुट गए। उनका संदेश था– "तुम मुझे खून दो; मैं तुम्हें आजादी दूँगा" उनका नारा था, 'जय हिंद'। उनका आह्वान था, "दिल्ली चलो"। सैनिक उन्हें श्रद्धा से नेताजी कहते थे। आजाद हिंद फौज ने कठोर संघर्ष करते हुए नागालैंड, कोहिमा और मणिपुर तक 150 किमी० भारत भूमि को ब्रिटिश सेना के चंगुल से मुक्त करा लिया था। द्वितीय विश्वयुद्ध में जापान की पराजय के साथ ही आजाद हिंद फौज ने भी 3 मई, 1945 ई० को आत्मसमर्पण कर दिया।

4. बाल गंगाधर तिलक का भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में क्या योगदान था?

उ०– "स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है, मैं इसे लेकर रहूँगा।" की हुँकार भरने वाले, मराठा तथा केसरी पत्रों का प्रकाशन करने वाले तथा गणपति उत्सव के माध्यम से भारतीयता का भाव जगाने वाले बाल गंगाधर तिलक का नाम भारत के स्वतंत्रता संग्राम के आकाश में सदैव ध्रुव तारा बनकर चमकता रहेगा। बाल गंगाधर तिलक का जन्म 23 जुलाई, 1856 ई० को महाराष्ट्र के एक कट्टर हिंदू परिवार में हुआ था। तिलक कांग्रेस के गरमदल के नेता थे। उन्होंने होमरूल आंदोलन चलाया। तिलक ने स्वराज प्राप्ति के लिए निम्नलिखित साधन बताए–

(i) स्वदेशी भावना का प्रचार।
(ii) विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार।
(iii) राष्ट्रीय शिक्षा का प्रचार-प्रसार।
(iv) शांतिपूर्वक सक्रिय विरोध।

तिलक ने अपने पत्रों में राष्ट्रप्रेम से ओत-प्रोत प्रेरणादायक लेख लिखकर राष्ट्रीयता का विकास किया। उन्होंने सच्चे हृदय से कांग्रेस की नि:स्वार्थ भाव से सेवा की। वे स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भाग लेते हुए कई बार जेल गए। बाल गंगाधर तिलक ने क्रांति की मशाल लेकर देश के नवयुवकों का मार्गदर्शन किया। श्रीराम गोपाल ने उनके विषय में ये उद्गार व्यक्त किए हैं– "तिलक चारों ओर के अँधेरे में मशाल लेकर सामने आए।" भारत माता की तन-मन-धन से सेवा करने वाला यह महान सेनानी 1920 ई० में स्वर्ग सिधार गया।

5. अब्दुल कलाम आजाद की भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति में क्या भूमिका थी?

उ०– मौलाना अब्दुल कलाम आजाद का जन्म 1880 ई० में मक्का में हुआ था। आजाद उनका उपनाम था। इनकी गणना भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के अग्रणी नेताओं में की जाती है। उन्होंने **अल-हिलाल** नामक पत्र का प्रकाशन किया तथा 'इंडिया विन्स फ्रीडम' नामक पुस्तक लिखी। उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में निम्नवत् भूमिका निभाई–

(i) अब्दुल कलाम आजाद ने मुस्लिम लीग की नीतियों का विरोध करके मुसलमानों को राष्ट्रीय धारा के साथ जोड़ने का प्रयास किया।
(ii) उन्होंने अंग्रेजों की **फूट डालो शासन करो** की नीति का डटकर विरोध किया।
(iii) अब्दुल कलाम मुसलमानों में बड़े लोकप्रिय थे, अत: उनके प्रयासों से ही 1916 ई० में कांग्रेस और मुस्लिम लीग में समझौता हुआ।
(iv) असहयोग आंदोलन में बढ़-चढ़कर भाग लेने के कारण उन्हें जेल भेजा गया।
(v) 1923 ई० में वे कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए।
(vi) सविनय अवज्ञा आंदोलन में उन्होंने बहुत योगदान दिया।
(vii) 1947 ई० में बनी अंतरिम सरकार में वे शिक्षा मंत्री बने।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. भारत के स्वतंत्रता संग्राम में क्रांतिकारियों की भूमिका की विवेचना कीजिए।

उ०– भारत के स्वतंत्रता संग्राम में क्रांतिकारियों की भूमिका– गाँधी जी के अहिंसात्मक आंदोलनों और सत्याग्रह के सिद्धांतों से साम्राज्यवादी सरकार पर कोई भी प्रभाव न पड़ता देख, माँ भारती के प्रेम में पगे स्वतंत्रता के दीवानों के मन में क्रांति की ज्वाला भड़क उठना स्वाभाविक था। स्वतंत्रता पाने के लिए अहिंसात्मक क्रांति को त्यागकर, जो नौजवान हिंसा और बल का प्रयोग करके भी, स्वतंत्रता की बलिवेदी पर बलिदान होने के लिए तत्पर थे, उन्हें क्रांतिकारी कहा गया। क्रांतिकारियों का मुख्य लक्ष्य था, भारत माता के पैरों में पड़ी गुलामी की बेड़ियाँ काटना। अत: उन्होंने आजादी के वृक्ष को अपने रक्त से

सींचने का मन बना लिया। स्वतंत्रता के लिए अपने प्राण न्योछावर करने वाले इन राष्ट्रभक्त क्रांतिकारियों ने जनता के सामने यह सिद्धांत रखा, "परतंत्र रहने से मृत्यु का वरण करना श्रेष्ठ है।" भारत माता के ये वीर सपूत देश की एकता, अखंडता और स्वतंत्रता के लिए हँसते-हँसते फाँसी के फंदे पर झूल गए। फ्रांस, रूस, चीन तथा मिस्र आदि देशों में जो क्रांतिकारी आंदोलन हुए, उन्होंने भारतीय क्रांतिकारियों को प्रोत्साहन देने के साथ-साथ उनका पथ भी प्रशस्त किया। देश के विभिन्न क्षेत्रों में क्रांतिकारी दलों ने अपने संगठन बना लिए।

भारत के क्रांतिकारियों ने स्वतंत्रता संग्राम में प्राणपण से भागीदारी निभाई। उन्होंने अपना तन, मन और धन सब कुछ स्वातंत्र्य बलिवेदी पर न्योछावर कर दिया। यद्यपि उनका यह प्रयास असफल रहा; परंतु उनके द्वारा बहाया गया रक्त ही 1947 ई० में स्वतंत्रता की स्वर्णिम रश्मियों के रूप में चमका। भारत के स्वतंत्रता संग्राम में उनकी भूमिका को निम्नवत् प्रस्तुत किया जा सकता है–

(i) स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु क्रांतिकारियों के ने अपने प्राणों की भी परवाह नहीं की।
(ii) क्रांतिकारियों ने भारतीय जनमानस को आततायी ब्रिटिश शासन से सीधी टक्कर लेने का प्रशिक्षण दिया।
(iii) गाँधी जी के अहिंसात्मक, निर्जीव आंदोलन में क्रांतिकारी आंदोलन ने चेतना के प्राण फूँक दिए।
(iv) क्रांतिकारियों के बलिदानों ने जनसाधारण की मनोवृत्ति को राष्ट्रभक्ति एवं स्वतंत्रता आंदोलन से जोड़ दिया।
(v) क्रांतिकारियों ने अपने बलिदान और त्याग से भारत के स्वतंत्रता संग्राम को गौरवशाली बना दिया।
(vi) क्रांतिकारियों ने अपनी गतिविधियों से जनसाधारण के समक्ष यह सिद्धांत रख दिया कि 'गुलामी से मौत उत्तम है।'
(vii) क्रांतिकारी गतिविधियों ने विदेशी शासकों के हृदय में भय उत्पन्न कर भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति को निश्चित बना दिया।
(viii) क्रांतिकारियों ने अपनी गतिविधियों से देशप्रेम और स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए समूचे राष्ट्र को एकता और अखंडता के सूत्र में बाँध दिया।

2. गोपाल कृष्ण गोखले तथा दादाभाई नौरोजी की स्वतंत्रता संग्राम में उपलब्धियों की भूमिका का वर्णन कीजिए।

उ०– **गोपाल कृष्ण गोखले की स्वतंत्रता संग्राम में उपलब्धियाँ–** गोपाल कृष्ण गोखले भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के प्रसिद्ध सेनानी थे। उन्होंने जीवनभर कांग्रेस के सान्धिय में भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भागीदारी निभाई। गोपाल कृष्ण गोखले का जन्म 9 मई, 1866 ई० को महाराष्ट्र राज्य में हुआ था। वे प्रारंभ से ही एक प्रतिभाशाली और जुझारू नेता थे। 22 वर्ष की आयु में उन्हें बंबई की लेजिस्लेटिव असेंबली का सदस्य चुना गया। 29 वर्ष की अल्पायु में ही उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष पद को सुशोभित किया। उन्होंने 1905 ई० से 1907 ई० तक ब्रिटिश सरकार का कड़ा विरोध करते हुए हिंदू-मुस्लिम एकता को बढ़ावा दिया। 1905 ई० में गोखले ने 'भारत सेवक समाज' संस्था की स्थापना की। इन्होंने राजनीतिक वसीयत के रूप में सुधारों के लिए एक अभिनव योजना प्रस्तुत की। गोपाल कृष्ण गोखले भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के उत्कृष्ट सेनानी, अद्भुत कूटनीतिज्ञ तथा उदारवादी नेता थे। बाल गंगाधर तिलक ने गोखले की प्रशंसा इन शब्दों में की है– "गोखले, भारत का हीरा, महाराष्ट्र का रत्न एवं मजदूरों का राजा था।'' 1915 ई० में स्वतंत्रता का यह महान सेनानी इतिहास में अपना नाम अमर करके इस संसार से विदा हो गया।

दादा भाई नौरोजी की स्वतंत्रता संग्राम में उपलब्धियाँ– महात्मा गाँधी के राजनीतिक गुरु तथा 'ग्रेट ओल्डमैन ऑफ इंडिया' के नाम से विख्यात दादा भाई नौरोजी का नाम भारत के स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों में अग्रिम पंक्ति में अंकित है। उनका जन्म 4 सितंबर, 1825 ई० को बंबई के निकट एक पारसी परिवार में हुआ था। वे भारत के स्वतंत्रता संग्राम के साथ ऐसे जुड़े कि जीवनभर संघर्ष करते रहे। उन्होंने 1866 ई० में 'ईस्ट इंडिया एसोसिएशन' की स्थापना कर भारतीयों की समस्याओं को उजागर किया। उनकी सेवाओं का सम्मान करते हुए 1866 ई० में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अध्यक्ष का पद देकर इन्हें गौरवान्वित किया। 1891 ई० में उन्हें इंग्लैंड की कॉमनसभा के लिए चुना गया। इन्होंने 'पावर्टी एंड द अनब्रिटिश रूल इन इंडिया' नामक पुस्तक की रचना की। उनका मत था, "हम दया की भीख नहीं माँगते। हम तो केवल न्याय चाहते हैं, हम स्वशासन चाहते हैं।" उन्होंने अंग्रेजी सरकार से भारतीयों के लिए निम्नलिखित तीन अधिकारों की खुली माँग की–

(i) स्वराज पाने का अधिकार।
(ii) उच्च सरकारी पदों पर अधिक से अधिक भारतीयों की नियुक्ति का अधिकार।
(iii) भारत और इंग्लैंड में न्यायपूर्ण आर्थिक संबंधों की स्थापना।

30 जून, 1917 ई० को भारत माँ का यह लाड़ला सपूत और स्वतंत्रता सेनानी चिरनिद्रा में लीन हो गया। भारतवासी उनकी सेवाओं के लिए सदैव उनके ऋणी रहेंगे।

3. सुभाष चंद्र बोस के जीवन तथा भारत के स्वतंत्रता संग्राम में उनके योगदान का विवरण दीजिए।

उ०– सुभाष चंद्र बोस का जन्म 23 जनवरी, 1897 ई० में कटक में हुआ था। वह जन्मजात क्रांतिकारी थे। अपनी आई०सी०एस० की नौकरी को छोड़कर सुभाष राष्ट्रीय आंदोलन में कूद पड़े। 'असहयोग आंदोलन' को सफल बनाने के लिए उन्होने गाँधी जी को पूरा सहयोग दिया। प्रिंस ऑफ वेल्स' के बहिष्कार आंदोलन में भी उन्होने बढ़-चढ़कर भाग लिया जिस कारण अंग्रेज-सरकार ने उन्हें दिसंबर 1921 में 6 महीने के लिए जेल भेज दिया। जब गाँधी जी ने असहयोग आंदोलन स्थगित किया तो सुभाष को बड़ा दु:ख हुआ और उन्होने गाँधी जी का साथ छोड़ दिया। तत्पश्चात् आप स्वराज्य पार्टी की स्थापना के कार्य में लग गए। 1924 ई० में सरकार ने उन पर क्रांतिकारी षडयंत्र का आरोप लगाकर उन्हें बन्दी बना लिया। 1929 ई० में उन्हें रिहा कर दिया गया। 1929 ई० में जब कांग्रेस ने अपना उद्देश्य 'पूर्ण स्वराज्य' घोषित किया तो वह फिर से कांग्रेस में शामिल हो गए।

1938 ई० में सुभाष कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए किन्तु बोस कांगेस की उदारवादी नीति से बहुत असंतुष्ट थे क्योंकि वह तो सशस्त्र क्रांति के पक्ष में थे। कुछ समय पश्चात् बोस कांग्रेस से अलग हो गए ओर 'फारवर्ड ब्लॉक' नाम का एक नया संगठन बना लिया। मार्च 1941 ई० में सुभाष ब्रिटिश सरकार को चकमा देकर भारत से बाहर चले गये और जर्मनी पहुँच गए। जापानी सहायता से ब्रिटिश शासन के विरूद्ध संघर्ष करने के लिए फरवरी 1943 ई० में वे जापान पहुंचे। जापानी सरकार की सहायता से उन्होंने 'आजाद हिंद फौज' का गठन किया और अपने अनुयायियों को 'जय हिंद' का नारा दिया। भारत को स्वतन्त्रता दिलाने हेतु उनकी सेना ने उत्तर-पूर्व की ओर से भारत पर आक्रमण कर दिया। 'आजाद हिन्द फौज' आगे बढ़ती हुई आसाम तक पहुँची। किन्तु उसी समय द्वितीय विश्व युद्ध में जापान हार गया। परिणामत: आजाद हिन्द फौज को जापान से सहायता मिलनी बंद हो गई और इसे पराजय का मुँह देखना पड़ा। उन्ही दिनों एक वायुयान दुर्घटना में सुभाष की मृत्यु हो गई। सुभाष चंद्र बोस और आजाद हिंद फौज का भारत के स्वतंत्रता संघर्ष में बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। भारत की आजाादी के लिए उन्होने जो बलिदान किए उन्हें कभी नहीं भुलाया जला सकता।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

17 भारत का विभाजन एवं स्वतंत्रता प्राप्ति

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-122 व 123 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-123 व 124 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. वे कौन से कारण थे, जिन्होंने ब्रिटिश सरकार को भारत को स्वतंत्रता प्रदान करने के लिए विवश किया?

उ०– भारत को स्वतंत्रता प्रदान करने के लिए ब्रिटिश सरकार की विवशता के कारण निम्नलिखित थे–

(i) द्वितीय विश्वयुद्ध ने इंग्लैंड की साम्राज्यवादी शक्ति को नष्ट कर दिया।

(ii) शक्तिहीन इंग्लैंड अपने सभी एशियाई और अफ्रीकी देशों के स्वतन्त्रता आंदोलनों को रोकने में असमर्थ रहा।

(iii) ब्रिटिश सरकार पर अमेरिका और चीन का भारी दबाव होना।

(iv) भारतीय नौ सेना का विद्रोह।

(v) आजाद हिंद फौज का मुकदमा।

(vi) इंग्लैंड में लेबर पार्टी की जीत ने भारत की स्वतंत्रता का मार्ग प्रशस्त किया।

2. लार्ड माउंटबेटन योजना 1947 ई० की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।

उ०– लार्ड माउंटबेटन योजना 1947 ई० की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) भारत को दो भागों में विभाजित करके भारत तथा पाकिस्तान दो पृथक स्वतंत्र राज्य बनाए जाएँगे।

(ii) पंजाब तथा बंगाल का विभाजन होगा। दोनों प्रांतों की विधानसभाओं को दो भागों में बाँटा जाएगा।

(iii) देशी रियासतों को भारत या पाकिस्तान में से किसी एक में सम्मिलित होने अथवा अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित करने की छूट होगी।

(iv) भारत तथा पाकिस्तान की सीमाओं संबंधी समस्याओं को निपटाने के लिए एक सीमा आयोग गठित किया जाएगा।

(v) भारत तथा पाकिस्तान दोनों देशों को स्वतंत्रता प्रदान करने की तिथि 15 अगस्त, 1947 ई० होगी।

इस योजना को कांग्रेस ने विवशता और दु:खी हृदय से तथा मुस्लिम लीग से स्वीकार कर भारत की स्वतंत्रता का मार्ग पक्का कर दिया।

3. लार्ड माउंटबेटन योजना के अंतर्गत भारतीय नरेशों के सामने क्या विकल्प रखे गए। कश्मीर के राजा ने क्या विकल्प दिया?

उ०– लार्ड माउंटबेटन योजना 1947 ई० के अंतर्गत भारतीय नरेशों के सामने यह विकल्प रखा कि देशी रियासतें भारत या पाकिस्तान दोनों में से किसी भी अधिराज्य में सम्मिलित हो सकती हैं। यदि वे चाहें तो स्वतंत्र भी रह सकती हैं। कश्मीर के राजा कश्मीर को स्वतंत्र रखना चाहते थे। वे कश्मीर को भारत या पाकिस्तान में सम्मिलित करने में असमंजस्य की स्थिति में थे इसलिए उन्होने लार्ड माउंटबेटन से इस विषय में विचार-विमर्श करने के लिए कुछ समय माँगा।

4. डॉ० भीमराव अंबेडकर कौन थे? उनके दो योगदानों का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

उ०– डॉ० भीमराव अंबेडकर बाबा साहेब के नाम से लोकप्रिय, भारतीय विधिवेता, अर्थशास्त्री, राजनीतिज्ञ एवं समाज सुधारक थे। उनका जन्म 14 अप्रैल, 1891 ई० में मध्य प्रदेश के महु नामक ग्राम में हुआ था। उन्होंने जीवनभर भारत की स्वतंत्रता तथा दलितों के उद्धार के लिए संघर्ष किया। भारत के संविधान निर्माण में उन्होंने सक्रिय भूमिका निभाई, अत: उन्हें संविधान निर्माता की संज्ञा दी गई।

5. यदि भारतीय रियासतों का विलय भारत संघ में न हुआ होता तो क्या परिणाम होता?

उ०– यदि भारतीय रियासतों का विलय भारत संघ में न हुआ होता तो भारत की सुरक्षा खतरे में पड़ सकती थी।

6. भारत संघ में जम्मू-कश्मीर का विलय किन परिस्थितियों में हुआ?

उ०– प्रारंभ में कश्मीर के राजा हरि सिंह कश्मीर के भारत में सम्मिलित होने में असमंजस्य की स्थिति में थे। जून, 1947 को माउंटबेटन कश्मीर गए और उन्होंने वहाँ के राजा हरि सिंह से विलय के बारे में शीघ्र आत्मनिर्णय पर जोर दिया ओर जनमत संग्रह की बात कही। महात्मा गाँधी भी महाराजा से मिले, परंतु अगस्त, 1947 में पाकिस्तानियों ने कबाइलियों के वेश में जम्मू-कश्मीर में घुसपैठ करनी प्रारंभ की। पाकिस्तान द्वारा आक्रमण किए जाने से विचलित होकर उन्होंने भी भारत संघ में मिलने की स्वीकृति प्रदान कर दी।

7. स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत को किन तीन चुनौतियों का मुख्य रूप से सामना करना पड़ा?

उ०– स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। उनमें से तीन चुनौतियाँ निम्नवत् हैं–

(i) देशी रियासतों को भारत संघ में विलय की चुनौती।

(ii) विस्थापितों के पुनर्वास की चुनौती।

(iii) जर्जर अर्थव्यवस्था की चुनौती।

8. स्वतंत्र भारत की किन्हीं तीन उपलब्धियों का विवरण दीजिए।

उ०– स्वतंत्र भारत की तीन उपलब्धियों का विवरण निम्नवत है–

(i) देशी रियासतों का विलय– स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत के समक्ष 562 देशी रियासतों की समस्या थी, जिसका निराकरण सरदार वल्लभ भाई पटेल ने अपनी प्रतिभा और सूझ-बूझ से सुगमता से कर लिया।

(ii) विस्थापितों का पुनर्वास– स्वतंत्रता प्राप्ति के समय पाकिस्तान से करोड़ों हिंदू विस्थापित होकर भारत आए थे। भारत के भावी कर्णधारों ने बड़े धैर्य और यत्नों से उन्हें बसाया और उनकी रोजी-रोटी का प्रबंध भी किया। स्वतंत्र भारत की यह एक प्रमुख उपलब्धि मानी जाती है।

(iii) अर्थव्यवस्था का सुधार– भारत ने सदियों से जर्जर अपनी अर्थव्यवस्था को आर्थिक नियोजन लागू करके सुधारा। भारत में 1950 ई० में योजना आयोग की स्थापना हुई, जिसके अध्यक्ष तत्कालीन प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू थे।

9. भारत विभाजन के लिए उत्तरदायी तीन प्रमुख कारण लिखिए।

उ०– भारत विभाजन के लिए उत्तरदायी तीन प्रमुख कारण निम्नवत् हैं–

(i) मुसलमानों की पृथकतावादी नीति।

(ii) जिन्ना की हठवादिता।

(iii) ब्रिटिश शासकों की कूटनीति।

10. भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम 1947 के तीन प्रमुख प्रावधानों का उल्लेख कीजिए।

उ०– भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम 1947 के तीन प्रमुख प्रावधानों का उल्लेख निम्नवत हैं–

(i) ब्रिटिश सरकार दो अधिराज्यों की संविधान सभाओं को सत्ता सौंप देगी। उन्हें अपना-अपना संविधान बनाने की स्वतंत्रता होगी। संविधान सभाएँ पूर्ण प्रभुत्व संपन्न रहेंगी।

(ii) 15 अगस्त, 1947 ई० को भारत ओर पाकिस्तान के रूप में दो अधिराज्य बन जाएँगे।

(iii) दोनों अधिराज्यों की सीमाओं का निर्धारण रेडक्लिफ सीमा आयोग करेगा।

11. भारत के नवनिर्माण में पं० जवाहरलाल नेहरू के तीन प्रमुख योगदान लिखिए।

उ०– भारत के नवनिर्माण में पं० जवाहरलाल नेहरू के तीन प्रमुख योगदान निम्नवत हैं–

(i) स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में उन्होंने भारत के लिए गुटनिरपेक्षता और पंचशील के सिद्धांतों पर आधारित विदेश नीति अपनाई।

(ii) पं० जवाहरलाल नेहरू ने पंचवर्षीय योजनाओं के रूप में आर्थिक लागू करके विकास और संपन्नता की नदियाँ बहा दीं।

(iii) जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व भारत ने औद्योगिक, आर्थिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में अद्वितीय उपलब्धियाँ प्राप्त कीं।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. भारत विभाजन किन परिस्थितियों में हुआ? नव स्वतंत्र भारत को किन समस्याओं का सामना करना पड़ा? किन्हीं दो को समझाकर लिखिए।

उ०– भारत विभाजन के कारण– दीर्घकालीन कष्टकारी संघर्षों के बाद भारत की जनता ने स्वतंत्रता की नवबेला में श्वाँस तो ली; परंतु उसे भारत विभाजन के रूप में दीर्घ आह भी भरनी पड़ी। भारत विभाजन के लिए मुख्यरूप से निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे–

(i) मुसलमानों की पृथकतावादी नीति– मुस्लिम लीग के प्रभाव के कारण भारतीय मुसलमान भविष्य में हिंदुओं के प्रभुत्व से व्याकुल थे। मुहम्मद इकबाल और मोहम्मद अली जिन्ना ने पृथकतावादी बनकर सांप्रदायिकता को भड़का दिया, जिससे पृथक पाकिस्तान बनना आवश्यक हो गया।

(ii) जिन्ना की हठवादिता– मोहम्मद अली जिन्ना पृथक पाकिस्तान लिए बिना, राष्ट्रीय नेताओं का समर्थन नहीं करना चाहते थे। 1946 ई० में उन्होंने सीधी कार्यवाही दिवस मनाकर अपनी हठवादिता को सच कर दिया। अत: कांग्रेस को विभाजन स्वीकार करना पड़ा।

(iii) ब्रिटिश शासकों की कूटनीति– ब्रिटिश सरकार "फूट डालो शासन करो" की नीति पर चलकर भारत में सांप्रदायिकता के बीज बो रही थी। उसने इसे सांप्रदायिक रूप दिलाकर भारत को विभाजित करने में सफलता पाई। "वास्तव में पाकिस्तान के निर्माता इकबाल और जिन्ना न होकर **लार्ड मिंटो** थे।''

(iv) हिंदुओं का अछूतवादी दृष्टिकोण– भारत के कट्टर हिंदू मुसलमानों से दूरी बनाए रखना चाहते थे, जिससे मुसलमानों ने समझ लिया कि बहुसंख्यक हिंदुओं के कारण उनका धर्म और संस्कृति सुरक्षित नहीं है। इसी सांप्रदायिक विद्वेष के कारण भारत का विभाजन संभव हो गया।

(v) सांप्रदायिक दंगे– मुस्लिम लीग द्वारा 'सीधी कार्यवाही दिवस' मनाते ही भारत में जगह-जगह हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिक दंगे भड़क उठे। भारतीय नेताओं ने इनसे मुक्ति पाने के लिए बँटवारा स्वीकार कर लिया।

(vi) कांग्रेस की तुष्टिकरण की नीति– कांग्रेस भारतीय मुसलमानों के प्रति तुष्टिकरण की नीति पर चल रही थी। उसने मुस्लिम लीग के साथ सांप्रदायिक निर्वाचन का समझौता करके पृथक पाकिस्तान के निर्माण का मार्ग पक्का कर दिया।

(vii) शक्तिशाली भारत की कामना– कांग्रेस और सरदार पटेल का मत था कि बँटवारे के बाद भारत में जो 80% भू-भाग बचेगा, उसे एक शक्तिशाली भारत का रूप दिया जा सकता है, अत: बँटवारा स्वीकार कर लिया जाए।

(viii) स्वतंत्रता प्राप्ति का स्वर्णिम अवसर– इंग्लैंड में मजदूर दल की उदारवादी सरकार बन जाने से कांग्रेस ने सोचा कि हमारा बहुप्रतीक्षित स्वतंत्रता प्राप्ति का स्वर्णिम अवसर हाथ से न चला जाए, अत: विभाजन के मूल्य पर स्वतंत्रता स्वीकार करने में ही भलाई है।

ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली की घोषणा और लार्ड माउंटबेटन की कूटनीति ने भारत को दो स्वतंत्र देशों के रूप में विभक्त कर दिया। इस प्रकार सगे भाई दो पड़ोसी देश बनकर रह गए।

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत के समक्ष चुनौतियाँ– भारत ने दीर्घकालीन परतंत्रता का बोझ ढोते हुए स्वतंत्रता का फल चखा था। विदेशी शासन की लूट-खसोट और कूटनीतिक चालों ने स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत के समक्ष निम्नलिखित समस्याएँ चुनौतियों के रूप में छोड़ी थीं–

(i) देशी रियासतों को भारत संघ में विलय करने की चुनौती– स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत में 562 देशी रियासतें थीं, जिन्हें भारत संघ में मिलाए बिना देश की अखंडता और स्वतंत्रता की रक्षा करना संभव नहीं था।

(ii) विस्थापितों के पुनर्वास की चुनौती– बँटवारे के समय पाकिस्तान ने हिंदुओं को खदेड़ दिया था। इन लुटे-पिटे शरणार्थियों की संख्या करोड़ों में थी। भारत सरकार को इस गंभीर चुनौती का दृढ़ता से सामना करना था।

(iii) जर्जर अर्थव्यवस्था की चुनौती– अंग्रेजों ने भारत की प्राकृतिक संपदा को जी भरकर लूटा। उन्होंने कूटनीति अपनाकर भारत के कला-कौशलों को नष्ट करके भारत को आर्थिक दृष्टि से जर्जर बना दिया था। अत: भारत के निर्माताओं के समक्ष जर्जर अर्थव्यवस्था को पुन: पटरी पर लाने की कठिन चुनौती थी।

(iv) नया संविधान बनाकर लागू करने की चुनौती– भारत में लोकतंत्र और गणतंत्रीय शासन व्यवस्था लागू करने के लिए नया संविधान बनाकर उसे ठीक से लागू करने की चुनौती भारतीय नेताओं के समक्ष थी, जिसे कुशलतापूर्वक हल करने के प्रयास किए गए।

(v) भारत के सर्वांगीण विकास की चुनौती– स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत अशिक्षा, निर्धनता, बेरोजगारी और भुखमरी जैसी समस्याओं से ग्रसित था। अत: नवभारत के निर्माताओं के सामने इन समस्याओं का निराकरण करके राष्ट्र के सर्वांगीण विकास की चुनौती मुँह खोले खड़ी थी।

(vi) परिवहन तथा संचारतंत्र का जाल फैलाने की चुनौती– स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत परिवहन तथा संचारतंत्र के अभावों से जूझ रहा था। राष्ट्र का बहुमुखी विकास करने के लिए इस चुनौती का सामना करना आवश्यक था।

(vii) प्राकृतिक संसाधनों के योजनाबद्ध विदोहन की चुनौती– प्रकृति ने भारत को प्रचुर मात्रा में प्राकृतिक संसाधन दिए हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय उनके योजनाबद्ध विदोहन की समस्या बनी हुई थी।

(viii) विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विकास की चुनौती– स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में बहुत पिछड़ा हुआ था। अत: भारत के निर्माताओं के सामने विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के समुचित विकास की चुनौती थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत के निर्माताओं ने बड़े कौशल, प्रतिभा और सूझ-बूझ से इन चुनौतियों का निराकरण कर भारत के सर्वांगीण विकास का मार्ग बनाया।

2. भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम 1947 की प्रमुख विशेषताएँ (प्रावधान) बताइए।

उ०– **भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम 1947 ई०–** ब्रिटेन की संसद ने माउंटबेटन योजना के प्रस्तावों को कार्यरूप में परिणित करने के उद्देश्य से 18 जुलाई, 1947 ई० में भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम पारित कर दिया। इस अधिनियम की धाराएँ निम्नलिखित थीं–

(i) ब्रिटिश सरकार दो अधिराज्यों की संविधान सभाओं को सत्ता सौंप देगी। उन्हें अपना-अपना संविधान बनाने की स्वतंत्रता होगी। संविधान सभाएँ पूर्ण प्रभुत्वसंपन्न रहेंगी।

(ii) 15 अगस्त, 1947 ई० को भारत और पाकिस्तान के रूप में दो अधिराज्य बन जाएँगे।

(iii) दो अधिराज्यों की सीमाओं का निर्धारण **रेडक्लिफ सीमा आयोग** करेगा।

(iv) जब तक दोनों अधिराज्य नया संविधान नहीं बना लेते, संविधान सभाएँ ही कानून बनाएँगी।

(v) ब्रिटिश राष्ट्रमंडल में रहने का अधिकार दोनों अधिराज्यों के पास रहेगा।

(vi) जब तक नए चुनाव नहीं होते, इस समय के विधान मंडल ही कार्य करते रहेंगे।

(vii) जब तक दोनों अधिराज्य नए संविधान नहीं बना लेते, तब तक प्रांतों में 1935 ई० का अधिनियम ही प्रभावी रहेगा।

(viii) दोनों अधिराज्यों के लिए ब्रिटिश सम्राट अधिराज्यों की सरकारों के परामर्श से अलग-अलग गवर्नर जनरल नियुक्त करेंगे। भारत के प्रथम और अंतिम भारतीय गवर्नर जनरल **चक्रवती राजगोपालाचारी** थे।

(ix) 15 अगस्त, 1947 ई० के पश्चात् देशी रियासतें भारत या पाकिस्तान दोनों में से किसी भी अधिराज्य में सम्मिलित हो सकती हैं। यदि वे चाहे तो स्वतंत्र भी रह सकती हैं।

(x) ब्रिटिश मंत्रिमंडल में से भारत-मंत्री का पद समाप्त कर दिया जाएगा। अत: ब्रिटिश संसद का भारत या पाकिस्तान पर भविष्य में कोई नियंत्रण नहीं रहेगा।

3. भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में पं० जवाहरलाल नेहरू के मुख्य योगदानों की समीक्षा कीजिए।

उ०– **पं0 जवाहरलाल नेहरू का योगदान–** भारतीय स्वतंत्रता संग्राम और उसके नवनिर्माण में जवाहरलाल नेहरू का योगदान निम्नवत् रहा–

(i) पं० जवाहरलाल नेहरू ने गाँव-गाँव जाकर भारत का भ्रमण किया। किसान उन्हें **किसान सेवक** कहते थे।

(ii) 1922 ई० में उन्होंने इलाहाबाद का चेयरमैन बनकर नगर के विकास में अभूतपूर्व योगदान दिया।

(iii) 1927 ई० में उन्होंने जेनेवा में साम्राज्य विरोधी सम्मेलन में कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया।

(iv) उन्होंने इलाहाबाद में साइमन कमीशन का काले झंडों से विरोध जताया।

(v) स्वतंत्रता आंदोलन में भागीदारी करने पर उन्हें कई बार जेल-यात्रा भी करनी पड़ी।

(vi) 1946 ई० की अंतरिम सरकार में वे भारत के प्रधानमंत्री बने।

(vii) स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में उन्होंने भारत के लिए गुटनिरपेक्षता और पंचशील के सिद्धातों पर आधारित विदेश नीति बनाई।

(viii) पं० जवाहरलाल नेहरू ने पंचवर्षीय योजनाओं के रूप में देश में आर्थिक नियोजन लागू करके विकास और संपन्नता की नदियाँ बहा दीं।

(ix) उन्होंने शक्तिगुटों का विरोध और साम्राज्यवाद की आलोचना कर शांतिदूत बनने का गौरव पाया।

(x) जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में भारत ने औद्योगिक, आर्थिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में अद्वितीय उपलब्धियाँ प्राप्त कीं।

पं० जवाहरलाल नेहरू के योगदान को विद्वानों ने निम्नवत् व्यक्त किया है–

"नेहरू हमारी पीढ़ी के महानतम् व्यक्ति थे। वे स्वतंत्रता संग्राम में यशस्वी योद्धा थे और आधुनिक भारत के निर्माण के लिए उनका अंशदान अभूत पूर्व था।" **–डॉ० राधाकृष्णन्**

"मुझे भारतीय इतिहास में कोई व्यक्ति ऐसा नहीं दिखाई देता, जिसके प्रति आदर और प्यार प्रकट किया गया हो जितना कि पंडित जी के प्रति था।" **–डॉ० जाकिर हुसैन**

4. सरदार वल्लभ भाई पटेल का जीवन परिचय देते हुए स्वतंत्रता आंदोलन में उनके योगदान की समीक्षा कीजिए।

उ०– **सरदार वल्लभ भाई पटेल–** भारत के लौहपुरुष के नाम से विख्यात सरदार वल्लभ भाई पटेल का जन्म 31 अक्टूबर, 1875 ई० को गुजरात प्रांत के करमंद नामक गाँव में हुआ था। उन्होंने वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण कर, वकालत करनी प्रारंभ कर दी। गाँधी जी ने साबरमती में अपना आश्रम बनाकर, जब अहमदाबाद में सत्याग्रह प्रारंभ किया तो सरदार पटेल भी उनके अनुयायी बन गए। अब राष्ट्रसेवा करना ही उनके जीवन का मुख्य लक्ष्य बन गया। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम से जुड़ने पर उन्हें

कई बार जेल जाना पड़ा। धीरे-धीरे वे स्वतंत्रता संग्राम के सक्रिय सेनानी बन गए।

सरदार पटेल का स्वतंत्रता संग्राम का योगदान– भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों में सरदार पटेल का नाम अग्रिम पंक्ति में लिपिबद्ध है। उनका योगदान निम्नवत् था–

(i) सरदार पटेल ने कार्यकर्ताओं को संगठित कर एकजुट बनाने का अद्‌भुत कार्य किया।

(ii) उन्होंने गाँधी जी के प्रत्येक आंदोलन में सक्रिय भागीदारी निभाई।

(iii) सरदार पटेल ने वकालत छोड़कर गोधरा, खेड़ा और बारदौली के आंदोलनों को सफलतापूर्वक संचालित कर, किसानों की समस्याएँ हल करवाईं।

(iv) 1946 ई० में बनी अंतरिम सरकार में उन्हें उप प्रधानमंत्री का पद दिया गया।

(v) स्वतंत्रता प्राप्ति के समय वे 562 देशी रियासतों का विलय भारत संघ में नहीं करते तो भारत की स्वतंत्रता निरर्थक होती।

(vi) उन्होंने भारत की एकता और अखंडता बनाए रखने के लिए अथक प्रयास किया।

(vii) सरदार वल्लभ भाई पटेल ने लौह और रक्त नीति का अनुपालन करते हुए भारत की स्वतंत्रता को दीर्घगामी बना दिया।

सरदार पटेल के इस महान कार्य की प्रशंसा इंग्लैंड के प्रमुख पत्र लंदन टाइम्स ने इस शब्दों में की– ''भारतीय रियासतों के एकीकरण का उनका कार्य उन्हें जर्मनी के विस्मार्क और संभवत: उससे भी ऊँचा स्थान प्रदान करता है।''

सरदार पटेल के प्रत्येक कार्य के पीछे राष्ट्रहित निहित रहता था। 15 दिसंबर, 1950 ई० को विधाता ने भारत के इस लौहपुरूष को भारत माता से सदैव के लिए छीन लिया।

5. नव स्वतंत्र भारत के समक्ष कौन-कौन सी समस्याएँ थीं?

उ०– **स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत के समक्ष समस्याएँ–** भारत ने दीर्घकालीन परतंत्रता का बोझ ढोते हुए स्वतंत्रता का फल चखा था। विदेशी शासन की लूट-खसोट और कूटनीतिक चालों ने स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत के समक्ष निम्नलिखित समस्याएँ चुनौतियों के रूप में छोड़ी थीं–

(i) देशी रियासतों को भारत संघ में विलय करने की चुनौती– स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत में 562 देशी रियासतें थीं, जिन्हें भारत संघ में मिलाए बिना देश की अखंडता और स्वतंत्रता की रक्षा करना संभव नहीं था।

(ii) विस्थापितों के पुनर्वास की चुनौती– बँटवारे के समय पाकिस्तान ने हिंदुओं को खदेड़ दिया था। इन लुटे-पिटे शरणार्थियों की संख्या करोड़ों में थी। भारत सरकार को इस गंभीर चुनौती का दृढ़ता से सामना करना था।

(iii) जर्जर अर्थव्यवस्था की चुनौती– अंग्रेजों ने भारत की प्राकृतिक संपदा को जी भरकर लूटा। उन्होंने कूटनीति अपनाकर भारत के कला-कौशलों को नष्ट करके भारत को आर्थिक दृष्टि से जर्जर बना दिया था। अत: भारत के निर्माताओं के समक्ष जर्जर अर्थव्यवस्था को पुन: पटरी पर लाने की कठिन चुनौती थी।

(iv) नया संविधान बनाकर लागू करने की चुनौती– भारत में लोकतंत्र और गणतंत्रीय शासन व्यवस्था लागू करने के लिए नया संविधान बनाकर उसे ठीक से लागू करने की चुनौती भारतीय नेताओं के समक्ष थी, जिसे कुशलतापूर्वक हल करने के प्रयास किए गए।

(v) भारत के सर्वांगीण विकास की चुनौती– स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत अशिक्षा, निर्धनता, बेरोजगारी और भुखमरी जैसी समस्याओं से ग्रसित था। अत: नवभारत के निर्माताओं के सामने इन समस्याओं का निराकरण करके राष्ट्र के सर्वांगीण विकास की चुनौती मुँह खोले खड़ी थी।

(vi) परिवहन तथा संचारतंत्र का जाल फैलाने की चुनौती– स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत परिवहन तथा संचारतंत्र के अभावों से जूझ रहा था। राष्ट्र का बहुमुखी विकास करने के लिए इस चुनौती का सामना करना आवश्यक था।

(vii) प्राकृतिक संसाधनों के योजनाबद्ध विदोहन की चुनौती– प्रकृति ने भारत को प्रचुर मात्रा में प्राकृतिक संसाधन दिए हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय उनके योजनाबद्ध विदोहन की समस्या बनी हुई थी।

(viii) **विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विकास की चुनौती–** स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में बहुत पिछड़ा हुआ था। अत: भारत के निर्माताओं के सामने विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के समुचित विकास की चुनौती थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत के निर्माताओं ने बड़े कौशल, प्रतिभा और सूझ–बूझ से इन चुनौतियों का निराकरण कर भारत के सर्वांगीण विकास का मार्ग बनाया।

6. स्वतंत्र भारत की प्रमुख उपलब्धियों की व्याख्या कीजिए।

उ०– **स्वतंत्र भारत की उपलब्धियाँ–** स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतवासियों में एक नवचेतना और नवजागरण का संचार हुआ। भारत का नवनिर्माण करने वाले कर्णधारों ने इन सभी चुनौतियों का सामना करते हुए भारतीय जनता को निम्नलिखित उपलब्धियों का उपहार दिया–

(i) **देशी रियासतों का विलय–** स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत के समक्ष 562 देशी रियासतों की समस्या थी, जिसका निराकरण सरदार वल्लभ भाई पटेल ने अपनी प्रतिभा और सूझ–बूझ से सुगमता से कर लिया।

(ii) **विस्थापितों का पुनर्वास–** स्वतंत्रता प्राप्ति के समय पाकिस्तान से करोड़ों हिंदू विस्थापित होकर भारत आए थे। भारत के भावी कर्णधारों ने बड़े धैर्य और यत्नों से उन्हें बसाया और उनकी रोजी–रोटी का प्रबंध भी किया। स्वतंत्र भारत की यह एक प्रमुख उपलब्धि मानी जाती है।

(iii) **अर्थव्यवस्था का सुधार–** भारत ने सदियों से जर्जर अपनी अर्थव्यवस्था को आर्थिक नियोजन लागू करके सुधारा। भारत में 1950 ई० में योजना आयोग की स्थापना हुई, जिसके अध्यक्ष तत्कालीन प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू थे।

(iv) **नवीन संविधान का निर्माण–** भारत की संविधान सभा ने डॉ० राजेंद्र प्रसाद की अध्यक्षता में तथा प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ० भीमराव अंबेडकर के सहयोग से नया संविधान बनाकर 26 जनवरी, 1950 ई० को लागू कर, भारत को गणतंत्र बनाया। इसीलिए 26 जनवरी गणतंत्र दिवस के रूप में भारत का राष्ट्रीय पर्व बन गया।

(v) **राज्यों का पुनर्गठन–** भारत ने 1953 ई० में राज्य पुनर्गठन आयोग की स्थापना की, जिसने 1956 ई० में **राज्य पुनर्गठन अधिनियम** पारित करके उस समय 24 राज्य और 7 केंद्रशासित प्रदेशों का निर्धारण किया। वर्तमान में भारत में 29 राज्य और 7 केंद्रशासित क्षेत्र हैं।

(vi) **परिवहन तथा संचारतंत्र का विकास–** भारत ने स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्र के सभी क्षेत्रों का सर्वांगीण विकास करने हेतु परिवहन सेवाओं और संचारतंत्र का जाल फैला दिया।

(vii) **परमाणु शक्ति तथा अंतरिक्ष विज्ञान में ऊँची उड़ान–** स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत ने शांतिपूर्ण कार्यों के लिए परमाणु शक्ति का विकास कर लिया। भारतीय वैज्ञानिकों ने उपग्रह बनाकर तथा अंतरिक्ष में उन्हें स्थापित करके अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में सफलता की ऊँची उड़ान भर ली।

(viii) **औद्योगिक विकास–** स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत ने हरितक्रांति के माध्यम से कृषि विकास तथा औद्योगीकरण को बढ़ावा देकर कुटीर उद्योग, लघु उद्योग और बड़े पैमाने के उद्योगों का विकास कर विश्व में औद्योगिक राष्ट्र की पहचान बनाने में सफलता प्राप्त कर ली है।

(ix) **सूचना प्रौद्योगिकी का विकास–** भारत ने कंप्यूटर, कंप्यूटर सॉफ्टवेयर तथा इंटरनेट के माध्यम से विश्वस्तरीय सूचना प्रौद्योगिकी का विकास कर अपनी सफलता के झंडे विश्वभर में गाड़ दिए हैं।

(x) **विकसित राष्ट्र बनने की ओर–** भारत ने कृषि, उद्योग, वाणिज्य, व्यापार, परिवहन, संचार, ऊर्जा, राष्ट्रीय आय और नवीनतम् प्रौद्योगिकी का विकास कर विश्व की चतुर्थ सुदृढ़ अर्थव्यवस्था बन जाने का गौरव प्राप्त कर, भविष्य में एक विकसित राष्ट्र बन जाने के लिए कदम बढ़ा दिए हैं।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई-1 (क) : केंद्र एवं राज्य सरकार

18 केंद्र सरकार-विधायिका (संसद)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-148 व 149 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-149 व 150 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. लोकसभा का गठन कैसे होता है?

उ०– लोकसभा में जिस दल का बहुमत होता है उस दल के नेता को राष्ट्रपति प्रधानमंत्री नियुक्त करता है। तत्पश्चात् प्रधानमंत्री अपने मंत्रीपरिषद् की सूची राष्ट्रपति के पास भेजता है। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री तथा अन्य मंत्रियों को गोपनीयता तथा विश्वसनीयता की शपथ दिलाता है। राष्ट्रपति तथा मंत्रियों के हस्ताक्षर के बाद केंद्रीय मंत्रिपरिषद का गठन होता है। प्रधानमंत्री की सलाह से राष्ट्रपति मंत्रियों से उनके विभागों का वितरण करता है। तब लोकसभा में किसी भी दल का स्पष्ट बहुमत नहीं होता तो राष्ट्रपति अपने विवेक का प्रयोग करके प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है।

प्रधानमंत्री तथा अन्य मंत्रियों के लिए संसद के किसी भी सदन में होना आवश्यक है। यदि कोई मंत्री किसी भी सदन का सदस्य नहीं है तो उसे मंत्री बनने के बाद 6 महीने के अंदर किसी न किसी सदन का सदस्य बन जाना चाहिए अन्यथा उसे मंत्री-पद से त्यागपत्र देना पड़ेगा।

2. राज्यसभा की रचना (गठन) का वर्णन कीजिए।

उ०– **मंत्रिपरिषद का गठन**- राज्यसभा के चुनाव के बाद जिस दल का राज्यसभा में बहुमत होता है उस दल के नेता को राज्यपाल मुख्यमंत्री नियुक्त करता है। मुख्यमंत्री की सलाह से राज्यपाल अन्य मंत्रियों की नियुक्ति करता है तथा उनके कार्यों का विभाजन करता है। यदि राज्यसभा में किसी भी एक दल का बहुमत नहीं है तो राज्यपाल अपने विवेक से उस व्यक्ति को मुख्यमंत्री नियुक्त करता है जो मंत्रीपरिषद का संचालन कर सकें राज्य के मंत्रीपरिषद में तीन स्तर के मंत्री होते हैं– कैबिनेट मंत्री, राज्यमंत्री और उपमंत्री। संविधान के अंतर्गत मंत्रियों की संख्या निश्चित नहीं की गई है।

मंत्रियों की योग्यताएँ- मुख्यमंत्री तथा अन्य मंत्रियों को विधान मंडन के किसी सदन का सदस्य होना आवश्यक है। यदि कोई मंत्री किसी भी सदन का सदस्य नहीं है तो उसे मंत्री बनने के 6 महीने के अन्दर किसी न किसी सदन का सदस्य बन जाना चाहिए अन्यथा उसे मंत्री-पद से त्यागपत्र देना पड़ेगा।

3. लोकसभा तथा राज्यसभा में अंतर स्पष्ट कीजिए।

उ०– **लोकसभा तथा राज्यसभा में अंतर-**

लोकसभा	राज्यसभा
1. लोकसभा संसद का लोकप्रिय और निचला सदन है।	1. राज्यसभा संसद का उच्च सदन है।
2. लोकसभा का सदस्य बनने के लिए व्यक्ति की आयु 25 वर्ष से अधिक होनी चाहिए।	2. राज्यसभा का सदस्य बनने के लिए व्यक्ति की आयु 30 वर्ष से अधिक होनी चाहिए।
3. लोकसभा अस्थायी सदन है।	3. राज्यसभा स्थायी सदन है।
4. लोकसभा के सदस्यों का कार्यकाल 5 वर्ष होता है।	4. राज्यसभा के सदस्यों का कार्यकाल 6 वर्ष होता है।
5. केंद्रीय मंत्रिपरिषद् लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होती है।	5. केंद्रीय मंत्रिपरिषद् राज्यसभा के प्रति उत्तरदायी नहीं होती है।

4. राज्यसभा का विधायी शक्तियों एवं कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– राज्यसभा की विधायी शक्तियाँ एवं कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) वित्त विधेयक को छोड़कर अन्य सभी साधारण विधेयक राज्यसभा में प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

(ii) वित्त विधेयक लोकसभा में पारित होने पर राज्यसभा उसे पारित करती है।

(iii) साधारण विधेयक राज्यसभा में पारित हुए बिना पारित नहीं समझा जाता।

(iv) राज्यसभा साधारण विधेयक को 6 माह तथा वित्त विधेयक को 14 दिन ही रोक सकती है।

(v) किसी विधेयक पर विवाद होने पर दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में उसे निपटाया जाता है।

(vi) राज्यसभा राज्य सूची से संबंधित किसी विषय को दो-तिहाई मत से राष्ट्रीय महत्व का घोषित कर, संसद को एक वर्ष तक उस पर कानून बनाने का अधिकार दिला सकती है। राज्यसभा उसे प्रतिवर्ष एक वर्ष के लिए आगे बढ़ा सकती है।

5. लोकसभा के सभापति के प्रमुख कार्य तथा शक्तियों को स्पष्ट कीजिए।

उ०– लोकसभा के सभापति (स्पीकर) के प्रमुख कार्य तथा शक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) लोकसभा का सभापति लोकसभा की बैठकों की अध्यक्षता करता है।

(ii) सदन की कार्यवाही को शांतिपूर्वक एवं सुचारू रूप से चलाने का दायित्य उसी का होता है।

(iii) वह लोकसभा के नेता से परामर्श करके सदन का कार्यक्रम निश्चित करता है।

(iv) किसी विषय अथवा विधेयक पर विवाद उत्पन्न हो जाने की दशा में वह मतदान कराकर, मतों की गणना करके परिणाम घोषित करता है।

(v) दोनों पक्षों के मत बराबर रहने की दशा में, वह किसी एक पक्ष को अपना निर्णायक मत देकर विवाद का निबटारा करता है।

(vi) वह सदन की विभिन्न समितियाँ बनाता है तथा उनके कार्यों का निरीक्षण करता है।

(vii) वह लोकसभा के सदस्यों के विशेषाधिकारों की रक्षा करता है।

(viii) स्पीकर प्रत्येक सदस्य को सदन में बोलने की अनुमति देता है।

(ix) स्पीकर सदन की कार्यवाहियों के अभिलेखों को सुरक्षित रखने की व्यवस्था करता है।

(x) वह दोनों सदनों की संयुक्त बैठक की अध्यक्षता करता है।

(xi) वह दोनों सदनों में पारित विधेयकों को राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भिजवाता है।

(xii) स्पीकर राष्ट्रपति और लोकसभा के मध्य एक सेतु का काम करता है।

6. लोकसभा का सदस्य निर्वाचित होने के लिए आवश्यक योग्यताएँ क्या हैं?

उ०– लोकसभा का सदस्य बनने के लिए प्रत्याशी में निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए–

(i) वह भारत का नागारिक हो।

(ii) वह 25 वर्ष की आयु पूर्ण कर चुका हो।

(iii) वह केंद्र सरकार या राज्य सरकार के अंतर्गत किसी लाभ के पद पर न हो।

(iv) वह संसद द्वारा निर्धारित सभी योग्यताएँ रखता हो।

(v) वह पागल या दिवालिया न हो।

(vi) उसे किसी न्यायालय द्वारा सजा नहीं दी गई हो।

7. धन (वित्त) विधेयक क्या होता है? धन विधेयक और साधारण विधेयक के अंतर को स्पष्ट कीजिए।

उ०– **वित्त विधेयक–** जिस विधेयक का संबंध धन से होता है, वह वित्त विधेयक कहा जाता है। वित्त विधेयक को प्रस्तुत करने से पहले राष्ट्रपति की अनुमति लेनी पड़ती है। वित्त विधेयक केवल लोकसभा में ही प्रस्तुत किए जाते हैं। धन या वित्त विधेयक लोकसभा अध्यक्ष द्वारा प्रमाणित कराकर ही प्रस्तुत किया जाता है।

साधारण विधेयक तथा धन विधेयक में अंतर–

साधारण विधेयक	वित्त (धन) विधेयक
1. साधारण विधेयक का संबंध धन से नहीं होता।	1. वित्त विधेयक धन से संबंधित होता है।

2. साधारण विधेयक प्रस्तुत करने से पूर्व राष्ट्रपति से अनुमति नहीं ली जाती।	2. वित्त विधेयक प्रस्तुत करने से पूर्व राष्ट्रपति से अनुमति लेना आवश्यक है।
3. साधारण विधेयक संसद के किसी भी सदन में प्रस्तुत किया जा सकता है।	3. वित्त विधेयक केवल लोकसभा में ही प्रस्तुत किया जा सकता है।
4. साधारण विधेयक को प्रस्तुत करने से पूर्व लोकसभा अध्यक्ष से प्रमाणित कराने की आवश्यकता नहीं है।	4. वित्त विधेयक को प्रस्तुत करने से पूर्व उसे लोकसभा अध्यक्ष से प्रमाणित कराना आवश्यक है।
5. साधारण विधेयक मंत्री या अन्य कोई भी सांसद प्रस्तुत कर सकता है।	5. वित्त विधेयक मंत्री द्वारा ही प्रस्तुत किया जा सकता है।

8. संसद केंद्रीय मंत्रिमंडल पर किस प्रकार नियंत्रण रखती है? अथवा लोकसभा किन-किन तरीकों से मंत्रिपरिषद् पर नियंत्रण करती है?

उ०– **लोकसभा मंत्रिपरिषद (केंद्रीय मंत्रिमंडल) पर निम्न प्रकार से नियंत्रण करती है–**

(i) लोकसभा के सदस्य मंत्रिपरिषद् के सदस्यों से पूरक प्रश्न पूछकर, उस पर नियत्रंण बनाए रखते हैं।

(ii) लोकसभा के सदस्य मंत्रिपरिषद् के कार्यों की आलोचना करके, उस पर नियंत्रण बनाते हैं।

(iii) लोकसभा के सदस्य मंत्रिपरिषद् के विरुद्ध स्थगन प्रस्ताव तथा निंदा प्रस्ताव रखकर, नियंत्रण बनाए रखते हैं।

(iv) लोकसभा मंत्रिपरिषद् के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पारित करके, उसे पदच्युत कर सकती है।

9. राज्यसभा का सदस्य बनने के लिए व्यक्ति में कौन-कौन सी योग्यताएँ होनी चाहिए?

उ०– **राज्यसभा के प्रत्याशी में निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए–**

(i) वह भारत का नागरिक हो।

(ii) वह 30 वर्ष की आयु पूर्ण कर चुका हो।

(iii) वह केंद्र सरकार अथवा राज्य सरकार के किसी लाभ के पद पर कार्यरत न हो।

(iv) वह पागल या दिवालिया न हो।

(v) उसे न्यायालय द्वारा दंडित न किया गया हो।

(vi) वह संसद द्वारा निर्धारित योग्यताएँ रखता हो।

10. लोकसभा और राज्यसभा में कौन-सा सदन अधिक शक्तिशाली होता है?

उ०– लोकसभा राज्यसभा से अधिक शक्तिशाली होता है। इसके लिए निम्नलिखित तर्क दिए जा सकते हैं–

(i) वित्त विधेयक केवल लोकसभा में ही प्रस्तुत किए जा सकते हैं, राज्यसभा में नहीं। राज्यसभा उन्हें विचार के लिए मात्र 14 दिन तक ही रोक सकती है। इस समय सीमा के बाद उसे पारित मान लिया जाता है।

(ii) यदि राज्यसभा वित्त विधेयक को रद्द कर देती है अथवा उसमें संशोधन करती है, तब भी लोकसभा स्वतंत्र होती है कि वह उसके निर्णय को स्वीकार करे अथवा नहीं।

(i) राज्यसभा के सदस्य मंत्रिपरिषद् के सदस्यों से प्रश्न पूछकर उनकी नीतियों की आलोचना कर सकते हैं।

(ii) राज्यसभा मंत्रिमंडल के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पारित कर, उसे अपदस्थ नहीं कर सकती। डॉ० एम. पी. शर्मा के शब्दों में, ''लोकसभा राज्यसभा की अपेक्षा कानून बनाने के क्षेत्र में अधिक शक्तिशाली है और वित्त की एकमात्र स्वामी है।''

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. संसद के दो सदन कौन-कौन से हैं? लोकसभा के गठन की प्रक्रिया समझाइए, इसके कार्यों का उल्लेख भी कीजिए।

उ०– **भारतीय संसद में दो सदन हैं–** उच्च सदन तथा निम्न सदन। उच्च सदन को राज्य सभा तथा निम्न सदन को लोकसभा कहते हैं। लोकसभा पूरे भारत का प्रतिनिधित्व करती है, जबकि राज्यसभा राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों का।

लोकसभा की रचना– लोकसभा संसद का निम्न सदन है। इसका गठन निम्न प्रकार होता है–

सदस्यों की संख्या तथा निर्वाचन– लोकसभा में अधिक से अधिक 552 सदस्य हो सकते हैं। इनमें 530 सदस्य राज्यों के

तथा 20 सदस्य केंद्रशासित क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व कर सकते हैं। इनके अतिरिक्त, लोकसभा में एंग्लो-इंडियन वर्ग का पर्याप्त प्रतिनिधित्व न होने पर राष्ट्रपति इस वर्ग के दो सदस्यों को मनोनीत कर सकता है। लोकसभा के सदस्य वयस्क मताधिकार के आधार पर प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा निर्वाचित किए जाते हैं। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए स्थान सुरक्षित है। निर्वाचित होने के पश्चात् सदस्यों को राष्ट्रपति के सम्मुख अपने पद की गोपनीयता की शपथ लेनी पड़ती है।

कार्यकाल– लोकसभा का कार्यकाल 5 वर्ष का होता है। किन्तु विशेष परिस्थितियों में इसका समय एक वर्ष के लिए बढ़ाया जा सकता है। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की सलाह पर लोकसभा को 5 वर्ष से पहले भी भंग कर सकता है। लोकसभा की 6 महीने बाद बैठक अवश्य होनी चाहिए। लोकसभा के वर्ष में सामान्यत: तीन अधिवेशन होते हैं।

पदाधिकारी– लोकसभा के सदस्य अपने में से एक अध्यक्ष (Speaker) और एक उपाध्यक्ष (Deputy Speaker) चुन लेते हैं। अध्यक्ष सदन की बैठक में अध्यक्षता करता है, सदन की कार्यवाही का संचालन करता है, अधिवेशनों में अनुशासन बनाए रखता है, मत गिनता है तथा आवश्यकता पड़ने पर निर्णायक मत भी देता है। अध्यक्ष की अनुपस्थिति में इन्हीं कार्यों को उपाध्यक्ष करता है। इन्हें अविश्वास का प्रस्ताव पारित करके पद्च्युत किया जा सकता है।

लोकसभा के अधिकार और कार्य– लोकसभा को संविधान द्वारा निम्नलिखित अधिकार (शक्तियाँ) तथा कार्य सौंपे गए हैं–

(i) विधायी शक्तियाँ एवं कार्य– लोकसभा की विधायी शक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

(क) लोकसभा में साधारण विधेयक प्रस्तुत कर उन्हें पारित करवाना।

(ख) वित्तीय विधेयक लोकसभा में ही प्रस्तुत किए जा सकते हैं, अत: उन्हें प्रस्तुत करके पारित करवाना।

(ग) लोकसभा तथा राज्यसभा में किसी विधेयक को लेकर मतभेद हो जाने पर परस्पर विचार-विमर्श करके अथवा संयुक्त बैठक बुलवाकर गतिरोध दूर करवाना।

(घ) लोकसभा साधारण विधेयकों और वित्तीय विधेयकों को राज्यसभा से भी पारित हो जाने के बाद राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेजती है। राष्ट्रपति के हस्ताक्षर हो जाने पर ही, वह कानून का रूप ले पाता है।

(ii) कार्यपालिका संबंधी शक्तियाँ एवं कार्य– केंद्रीय मंत्रिपरिषद् लोकसभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होती है। केंद्रीय मंत्रिपरिषद् तब तक ही बनी रह सकती है, जब तक उसे लोकसभा का विश्वास प्राप्त रहता है। लोकसभा कार्यपालिका संबंधी अपनी शक्तियों को निम्नलिखित कार्यों के माध्यम से लागू करती हैं–

(क) लोकसभा के सदस्य मंत्रिपरिषद् के सदस्यों से पूरक प्रश्न पूछकर, उस पर नियत्रंण बनाए रखते हैं।

(ख) लोकसभा के सदस्य मंत्रिपरिषद् के कार्यों की आलोचना करके, उस पर नियंत्रण बनाते हैं।

(ग) लोकसभा के सदस्य मंत्रिपरिषद् के विरुद्ध स्थगन प्रस्ताव तथा निंदा प्रस्ताव रखकर, नियंत्रण बनाए रखते हैं।

(घ) लोकसभा मंत्रिपरिषद् के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पारित करके, उसे पदच्युत कर सकती है।

मंत्रिपरिषद् के एक मंत्री की पराजय पूरे मंत्रिपरिषद् की पराजय मानी जाती है।

(iii) वित्तीय, शक्तियाँ एवं कार्य– लोकसभा अपने निम्नलिखित कार्यों से वित्तीय शक्तियों का उपयोग करती है–

(क) वित्त विधेयक केवल लोकसभा में ही प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

(ख) वित्त विधेयक को राज्यसभा मात्र 14 दिन ही रोक सकती है। उसकी सिफारिशों को मानना या न मानना लोकसभा पर निर्भर होता है।

(ग) दोनों सदनों से पारित विधेयक को लोकसभा राष्ट्रपति के पास उसकी स्वीकृति के लिए भेजती है।

(घ) राष्ट्र का वार्षिक बजट लोकसभा में ही प्रस्तुत किया जाता है।

(ङ) राष्ट्र के धन पर संसद के माध्यम से लोकसभा ही अपना नियत्रंण बनाए रखती है।

वित्तीय मामलों में लोकसभा राज्यसभा से अधिक शक्तिशाली होती है।

(iv) निर्वाचन संबंधी शक्तियाँ एवं कार्य– लोकसभा अपनी निम्नलिखित शक्तियों से निर्वाचन संबंधी कार्यों का संपादन करती है–

(क) लोकसभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष का चुनाव।

(ख) राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति के चुनाव में भाग लेना।

(v) **संवैधानिक शक्तियाँ एवं कार्य–** लोकसभा अपनी संवैधानिक शक्तियों का प्रयोग निम्नलिखित कार्यों के माध्यम से करती है–

(क) लोकसभा संविधान में संशोधन करने का प्रस्ताव पारित करती है।

(ख) वह पारित प्रस्ताव को राज्यसभा के पास भेजती है।

(ग) दोनों सदनों में बहुमत से पारित प्रस्ताव के बाद लोकसभा संविधान में संशोधन कर देती है।

(vi) **न्यायिक शक्तियाँ एवं कार्य–** लोकसभा अपनी न्यायिक शक्तियों का उपयोग निम्नलिखित कार्यों के माध्यम से करती है–

(क) लोकसभा राष्ट्रपति के विरुद्ध महाभियोग प्रस्ताव लाकर, उसे दोनों सदनों से पारित कराती है।

(ख) लोकसभा उच्च तथा सर्वोच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के दुराचरण का प्रस्ताव लाकर दोनों सदनों से पारित करवा सकती है।

(ग) राज्यसभा यदि उपराष्ट्रपति को हटाने का प्रस्ताव पारित करती है, तब उसके लिए लोकसभा का अनुमोदन भी आवश्यक हो जाता है।

(घ) राष्ट्रपति द्वारा आपातकालीन घोषणा के लिए निश्चित अवधि में लोकसभा की स्वीकृति भी आवश्यक होती है।

(vii) **विविध शक्तियाँ एवं कार्य–** लोकसभा अपनी निम्नलिखित विविध शक्तियों एवं कार्यों का भी संपादन करती है–

(क) लोकसभा राज्यसभा के साथ मिलकर सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के अधिकार क्षेत्रों में परिवर्तन करती है।

(ख) वह राज्यसभा के साथ मिलकर अंतर्राष्ट्रीय समझौतों को लागू कराने के लिए कानून बनाती है।

(ग) वह राज्यसभा के साथ मिलकर राष्ट्रपति द्वारा जारी किए गए अध्यादेशों को स्वीकृत या अस्वीकृत करती है।

(घ) वह राज्यसभा के साथ मिलकर नए राज्यों के निर्माण तथा राज्यों के क्षेत्रों और सीमाओं में भी परिवर्तन करती है।

(ङ) राज्यसभा के साथ मिलकर वह दो या दो से अधिक राज्यों के लिए 'संयुक्त लोक सेवा आयोग' का गठन करती है।

लोकसभा संसद का लोकप्रिय, प्रभावी और शक्ति संपन्न सदन है। लोकसभा के महत्व को प्रो० एम. पी. शर्मा ने इन शब्दों में व्यक्त किया है, ''यदि संसद देश का सर्वोच्च अंग है, तो लोकसभा संसद का सर्वोच्च अंग है।''

2. राज्यसभा की रचना तथा शक्तियों का वर्णन कीजिए।

उ०– **राज्यसभा की रचना (संगठन)–** राज्यसभा संसद का एक स्थायी तथा द्वितीय सदन होता है, जिसे उच्च सदन कहा जाता है। इसका कभी विघटन नहीं होता। संविधान के अनुच्छेद 80 (1) के अनुसार इसमें अधिकतम 250 सदस्य हो सकते हैं। इनमें से 238 सदस्य राज्यों तथा केंद्रशासित क्षेत्रों से निर्वाचित होकर आते हैं, जबकि 12 सदस्य राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किए जाते हैं। ये 12 सदस्य ऐसे व्यक्ति होते हैं, जिनका साहित्य, विज्ञान, कला अथवा सामाजिक क्षेत्रों मे विशेष योगदान होता है।

राज्यसभा सदस्यों का चुनाव– प्रत्येक राज्य की विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्य अपने राज्य के लिए निर्धारित सदस्यों का चुनाव करते हैं। यह चुनाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति से एकल संक्रमणीय मत पद्धति द्वारा संपन्न होता है। संघ शासित क्षेत्रों के प्रतिनिधियों का चुनाव संसद द्वारा निर्धारित पद्धति से होता है। राज्यसभा की बैठकें राष्ट्रपति बुलाता है, जबकि उनकी अध्यक्षता उपराष्ट्रपति करता है। राज्यसभा कभी भंग नहीं होती है, उसके 1/3 सदस्य प्रति दो वर्ष बाद अवकाश ग्रहण कर लेते हैं तथा उनके स्थान पर नए सदस्य चुन लिए जाते हैं। राज्यसभा के सदस्यों का कार्यकाल 6 वर्ष का होता है।

उपराष्ट्रपति राज्यसभा का पदेन सभापति होता है। राज्यसभा अपने सदस्यों में से किसी एक को 6 वर्ष के लिए उपसभापति चुन लेती है। सभापति की अनुपस्थिति में वही उसके कार्यों का निर्वहन करता है।

राज्यसभा के अधिकार एवं कार्य– राज्यसभा अपने अधिकारों (शक्तियों) का प्रयोग निम्नलिखित कार्यों के माध्यम से संपन्न करती है–

(i) **विधायी शक्तियाँ एवं कार्य–** राज्यसभा की विधायी शक्तियाँ एवं कार्य निम्नलिखित हैं–

(क) वित्त विधेयक को छोड़कर अन्य सभी साधारण विधेयक राज्यसभा में प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

(ख) वित्त विधेयक लोकसभा में पारित होने पर राज्यसभा उसे पारित करती है।

(ग) साधारण विधेयक राज्यसभा में पारित हुए बिना पारित नहीं समझा जाता।

(घ) राज्यसभा साधारण विधेयक को 6 माह तथा वित्त विधेयक को 14 दिन ही रोक सकती है।

(ङ) किसी विधेयक पर विवाद होने पर दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में उसे निपटाया जाता है।

(च) राज्यसभा राज्य सूची से संबंधित किसी विषय को दो-तिहाई मत से राष्ट्रीय महत्व का घोषित कर, संसद को एक वर्ष तक उस पर कानून बनाने का अधिकार दिला सकती है। राज्यसभा उसे प्रतिवर्ष एक वर्ष के लिए आगे बढ़ा सकती है।

(ii) कार्यपालिका संबंधी शक्तियाँ एवं कार्य– राज्यसभा की कार्यपालिका संबधी शक्तियाँ एवं कार्य निम्नलिखित हैं–

(क) राज्यसभा के सदस्य मंत्रिपरिषद् के सदस्य बन सकते हैं।

(ख) राज्यसभा के सदस्य मंत्रियों से प्रश्न पूछ सकते हैं।

(ग) राज्यसभा के सदस्य बजट पर विचार करते हैं तथा 'काम रोको' प्रस्ताव पारित कर सकते हैं।

(घ) राज्यसभा के सदस्य मंत्रिपरिषद् की कड़ी आलोचना करके उसे प्रभावित कर सकते हैं, परंतु उसके विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पारित कर मंत्रियों को उनके पद से नहीं हटा सकते।

(iii) वित्तीय शक्तियाँ एवं कार्य– राज्यसभा अपनी वित्तीय शक्तियों को निम्नलिखित कार्यों द्वारा पूरा करती है–

(क) वित्त विधेयक को राज्यसभा मात्र 14 दिन ही रोक सकती है। वित्त विधेयक में किए गए, उसके परिवर्तनों को लोकसभा मानने के लिए बाध्य नहीं है।

(ख) राज्यसभा बजट पर विचार कर उसे पारित करती है।

(iv) संवैधानिक शक्तियाँ एवं कार्य– राज्यसभा अपनी संवैधानिक शक्तियों को निम्नलिखित कार्यों के माध्यम से पूरा करती है–

(क) संविधान में संशोधन के लिए विधेयक राज्यसभा में प्रस्तुत किया जा सकता है।

(ख) साधारण विधेयक भी राज्यसभा में प्रस्तुत किया जा सकता है।

(ग) राष्ट्रपति द्वारा संकटकाल की घोषणा को राज्यसभा द्वारा भी स्वीकृत करना आवश्यक है।

(v) न्यायिक शक्तियाँ एवं कार्य– राज्यसभा अपनी न्यायिक शक्तियों का अनुपालन निम्नलिखित कार्यों द्वारा करती है–

(क) राज्यसभा लोकसभा के साथ मिलकर महाभियोग प्रस्ताव पारित कर राष्ट्रपति को अपदस्थ कर सकती है।

(ख) उपराष्ट्रपति के विरुद्ध महाभियोग प्रारंभ करने का अधिकार राज्यसभा को ही है।

(ग) राज्यसभा उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश को लोकसभा के सहयोग से उसके पद से हटा सकती है।

(घ) राज्यसभा मुख्य चुनाव आयुक्त, महान्यायवादी तथा नियंत्रक महालेखा परीक्षक को हटवाने के लिए लोकसभा का सहयोग करती है।

(ङ) राज्यसभा अपने सदस्यों अथवा अन्य व्यक्तियों द्वारा विशेषाधिकार का उल्लंघन होने पर, उसे दंडित कर सकती है।

(vi) निर्वाचन संबंधी शक्तियाँ एवं कार्य– राज्यसभा अपनी निर्वाचन संबंधी शक्तियों का उपयोग अपने निम्नलिखित कार्यों के द्वारा करती है–

(क) राज्यसभा के सदस्य राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति के निर्वाचन में भाग लेते हैं।

(ख) राज्यसभा के सदस्य अपने सदस्यों में से किसी एक को उपसभापति चुनते हैं।

(vii) विशिष्ट शक्तियाँ एवं कार्य– राज्यसभा अपनी विशिष्ट शक्तियों का प्रयोग निम्नलिखित कार्यों द्वारा पूरा करती है–

(क) राज्यसभा राज्य सूची में दिए गए किसी भी विषय को राष्ट्रीय महत्व का विषय घोषित कर सकती है।

(ख) राज्यसभा प्रस्ताव पारित करके अखिल भारतीय न्यायिक सेवाएँ प्रारंभ करने के लिए केंद्र सरकार को अधिकृत कर सकती है।

3. संसद के गठन एवं कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– भारतीय संसद का गठन– केंद्रीय व्यवस्थापिका को ही संसद कहते हें। भारतीय संसद की रचना लोकसभाा और राज्यसभा दोनों सदनों से मिलकर होती है। इन दोनों सदनों को भारतीय संसद के दो हाथ कहते हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 79 के अनुसार, ''भारतीय संघ की एक संसद होगी जिसका निर्माण राष्ट्रपति तथा दोनों सदनों से मिलकर होगा,

जिनके नाम लोकसभा एवं राज्यसभा होंगे।'' इस प्रकार भारत के राष्ट्रपति, लोकसभा तथा राज्यसभा को संयुक्त रूप से भारतीय संसद कहा जाता है।

संसद के कार्य और अधिकार– संसद भारत की संपूर्ण प्रभुतासंपन्न संघीय व्यवस्थापिका है। भारतीय संविधान ने इसे शासन के सभी अंगों से अधिक और व्यापक शक्तियाँ प्रदान की हैं। भारतीय संसद के कार्य और अधिकारों को अग्रलिखित रूप से स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) कानून निर्माण संबंधी कार्य और अधिकार– संसद के कानून निर्माण संबंधी कार्य और अधिकार निम्नलिखित हैं–

(क) भारतीय संसद संघ सूची के सभी विषयों पर तथा समवर्ती सूची के कुछ विषयों पर कानून बनाने का अधिकार रखने वाली सर्वोच्च संस्था है।

(ख) वह कुछ विशेष परिस्थितियों में राज्य सूची के विषयों पर भी कानून बना सकती है।

(ग) कुछ ऐसे विषयों का, जिनका उल्लेख तीनों सूचियों में से किसी में भी नहीं है, उन पर केवल संसद ही कानून बना सकती है।

(घ) संसद पुराने कानूनों को रद्द भी कर सकती है।

(ii) प्रशासन संबंधी कार्य और अधिकार– संसद प्रशासन संबंधी कार्यों और अधिकारों को निम्नवत् संपन्न करती है–

(क) भारतीय संसद का मुख्य आधिकारिक कार्य मंत्रिपरिषद् पर नियंत्रण बनाए रखना है।

(ख) मंत्रिपरिषद् का सामूहिक उत्तरदायित्व लोकसभा के प्रति होता है।

(ग) संसद मंत्रियों से प्रश्न पूछकर, स्थगन प्रस्ताव लाकर, ध्यानाकर्षण प्रस्ताव रखकर, काम रोको प्रस्ताव पारित करके, विधेयकों को अस्वीकृत करके, बजट में कटौती करके तथा उनके कार्यों की जाँच करके, मंत्रिपरिषद् पर अपना नियंत्रण बनाए रखती है।

(घ) लोकसभा मंत्रिपरिषद् के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पारित करके उसे भंग करा सकती है।

(iii) वित्त संबंधी कार्य और अधिकार– संसद केंद्र सरकार के आय-व्यय को निम्नलिखित कार्यों और अधिकारों द्वारा निश्चित और नियंत्रित करती है–

(क) संसद सरकार के वित्त पर पूरा नियंत्रण रखती है।

(ख) संसद प्रत्येक वर्ष सरकार का बजट पारित करती है।

(ग) प्राकृतिक आपदाओं और युद्ध के लिए पूरक बजट संसद ही पारित करती है।

(घ) केंद्रीय कोष से व्यय संसद की स्वीकृति से ही किया जा सकता है।

(ङ) सरकार संसद से स्वीकृति लेकर ही कोई ऋण ले सकती है।

(iv) न्याय संबंधी कार्य और अधिकार– संसद को न्याय के क्षेत्र में निम्नलिखित कार्य करने का अधिकार प्राप्त है–

(क) संसद राष्ट्रपति पर महाभियोग पारित करके उसे पद से हटा सकती है।

(ख) संसद उच्च न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों एवं नियंत्रक महालेखा परीक्षक आदि के विरुद्ध दुराचरण के आरोप के द्वारा उन्हें राष्ट्रपति से अपदस्थ करा सकती है।

(v) संविधान संशोधन संबंधी कार्य और अधिकार– भारतीय संसद संविधान में संशोधन संबंधी कार्य कर अपने अधिकारों का प्रयोग कर सकती है–

(क) संसद संविधान के कुछ अनुच्छेदों में साधारण बहुमत से संशोधन कर सकती है।

(ख) संसद को संविधान के कुछ अनुच्छेदों में संशोधन करने के लिए दो-तिहाई बहुमत की आवश्यकता होती है।

(ग) संसद संविधान के कुछ अनुच्छेदों में राज्य विधानमंडलों के सहयोग से संशोधन करने का अधिकार रखती है।

(vi) निर्वाचन संबंधी कार्य और अधिकार– संसद सदस्य राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति के निर्वाचन में भाग लेते हैं।

4. संसद मंत्रिपरिषद पर किस प्रकार नियंत्रण करती है? उदाहरण सहित वर्णन कीजिए।

उ०– संसद का मंत्रिपरिषद पर नियंत्रण– संसद निम्नलिखित प्रकार से मंत्रिपरिषद पर अपना नियंत्रण करती है–

(i) संसद के सदस्य मंत्रियों से प्रश्न तथा पूरक प्रश्न पूछते हैं जिनका उत्तर देना मंत्रियों के लिए आवश्यक है। यदि किसी

प्रश्न का उत्तर देने में मंत्री असमर्थ हैं तो उनके स्थान पर प्रधानमंत्री उत्तर दे सकता है।

(ii) लोकसभा के सदस्य मंत्रिपरिषद् के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव प्रस्तुत कर उसको अपरस्थ कराने का प्रयास कर सकते हैं।

(iii) संसद के सदस्य मंत्रिपरिषद् के विरूद्ध काम रोको प्रस्ताव, निंदा प्रस्ताव तथा स्थगन प्रस्ताव पारित कर सकते हैं।

(iv) संसद बजट के माध्यम से भी मंत्रिपरिषद् के ऊपर अपना नियंत्रण स्थापित किया जाता है।

(v) संसद की विभिन्न समितियाँ भी मंत्रिपरिषद् पर अपना प्रभावी नियन्त्रण रखती है। इनमें अनुमान समिति, लोक लेखा समिति तथा आश्वासन लेखा समिति की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है।

5. लोकसभा के अध्यक्ष का निर्वाचन किसके द्वारा होता है? लोकसभा की बैठकों के सफल संचालन हेतु वह क्या कार्य करता है?

उ०– लोकसभा के अध्यक्ष का निर्वाचन लोकसभा सदस्यों में से लोकसभा सदस्यों द्वारा 5 वर्ष के लिए होता है। लोकसभा की बैठकों के सफल संचालन हेतु लोकसभा अध्यक्ष निम्नलिखित कार्य करता है–

(i) वह लोकसभा की बैठकों का सभापतित्व करता है तथा सदन की समस्त कार्यवाहियों का संचालन करता है।

(ii) सदन की कार्यवाही शांतिपूर्वक एवं सुव्यवस्थित रूप से चलाने की व्यवस्था करता है।

(iii) वह लोकसभा के नेता से परामर्श करके सदन का कार्यक्रम निश्चित करता है।

(iv) किसी विषय अथवा विधेयक पर विवाद उत्पन्न हो जाने की दशा में वह मतदान कराकर, मतों की गणना करके परिणाम घोषित करता है।

(v) दोनों पक्षों के मत बराबर रहने की दशा में, वह किसी एक पक्ष को अपना निर्णायक मत देकर विवाद का निबटारा करता है।

(vi) वह सदन की विभिन्न समितियाँ बनाता है तथा उनके कार्यों का निरीक्षण करता है।

(vii) वह लोकसभा के सदस्यों के विशेषाधिकारों की रक्षा करता है।

(viii) स्पीकर प्रत्येक सदस्य को सदन में बोलने की अनुमति देता है।

(ix) स्पीकर सदन की कार्यवाहियों के अभिलेखों को सुरक्षित रखने की व्यवस्था करता है।

(x) वह दोनों सदनों की संयुक्त बैठक की अध्यक्षता करता है।

(xi) वह दोनों सदनों में पारित विधेयकों को राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भिजवाता है।

(xii) स्पीकर राष्ट्रपति और लोकसभा के मध्य एक सेतु का काम करता है।

(xiii) वह प्रश्नों को स्वाकार करता है तथा नियम के विरूद्ध होने पर अस्वीकार भी का सकता है।

(xiv) यदि कोई सदस्य सदन में अव्यवस्था उत्पन्न करता है तो अध्यक्ष उसे चेतावनी दे सकता है। यदि कोई सदस्य उसकी आज्ञा का उल्लंघन करता है तो वह उसे सदन से बाहर निकलवा सकता है।

6. भारतीय संसद में विधि निर्माण प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।

उ०– **संसद में विधि निर्माण की प्रक्रिया–** संसद भारतीय संघ के लिए विधि (कानून) निर्माण करने वाली सर्वोच्च संस्था है। संसद में विधि निर्माण की प्रक्रिया विधेयक के प्रस्तुत करने से प्रारंभ होती है, ये विधेयक दो प्रकार के होते हैं–

(i) साधारण विधेयक– विधि निर्माण के लिए सदन में प्रस्तुत प्रस्ताव का प्रारूप जिसका संबंध धन से नहीं होता, सामान्य या साधारण विधेयक कहलाता है। इसे मंत्री अथवा कोई भी सांसद प्रस्तुत कर सकता है। सामान्य विधेयक सामान्य जनता से संबंधित होने पर वह **सार्वजनिक विधेयक** तथा किसी क्षेत्र अथवा संस्था विशेष से संबंधित होने पर वह **असार्वजनिक विधेयक** कहलाता है। साधारण विधेयक लोकसभा या राज्यसभा दोनों सदनों में प्रस्तुत किया जा सकता है।

(ii) वित्त विधेयक– जिस विधेयक का संबंध धन से होता है, वह वित्त विधेयक कहा जाता है। वित्त विधेयक को प्रस्तुत करने से पहले राष्ट्रपति की अनुमति लेनी पड़ती है। वित्त विधेयक केवल लोकसभा में ही प्रस्तुत किए जाते हैं। धन या वित्त विधेयक लोकसभा अध्यक्ष द्वारा प्रमाणित कराकर ही प्रस्तुत किया जाता है।

साधारण विधेयक पारित होने की प्रक्रिया– संसद में साधारण विधेयक निम्नलिखित प्रक्रिया के माध्यम से पारित किए जाते हैं–

(i) **प्रथम वाचन–** विधेयक प्रस्तुत करने वाला व्यक्ति विधेयक के उद्‌देश्य स्पष्ट करता है तथा उसके पारित करने की उपादेयता भी बताता है। सदन के सदस्य विधेयक की मुख्य बातों पर वाद-विवाद करते हैं, परंतु उसमें संशोधन नहीं किए जाते। इसे प्रथम वाचन कहा जाता है।

(ii) **द्वितीय वाचन–** निर्धारित तिथि पर विधेयक प्रस्तुतकर्ता यह निर्णय करता है, कि विधेयक पर शीघ्र विचार किया जाए। इस समय सदन के सामने दो विकल्प रहते हैं–

(क) विधेयक प्रवर समिति को सौंपा जाए या संयुक्त प्रवर समिति को।

(ख) अथवा जनमत जानने के लिए जनता में प्रसारित कर दिया जाए।

द्वितीय वाचन में विधेयक के मूल सिद्धांतों के साथ-साथ प्रत्येक अनुच्छेद पर गहराई से विचार-विमर्श किया जाता है। प्रवर समिति गहन अध्ययन के बाद उसमें संशोधन करके, अपनी रिपोर्ट के साथ सदन को वापिस कर देती है। इन संशोधनों पर गहनता के साथ विचार-विमर्श करके सदन द्वितीय वाचन की प्रक्रिया समाप्त करता है।

(iii) **तृतीय वाचन–** तृतीय वाचन की स्थिति में विधेयक को प्रस्तुत करने वाला यह प्रस्ताव रखता है, कि विधेयक को पारित कर दिया जाए। इस स्थिति में विधेयक के प्रत्येक खंड पर न तो कोई विचार-विमर्श किया जाता है और न कोई महत्वपूर्ण संशोधन ही किया जाता है। मात्र विधेयक की शब्दावली में सुधार किया जाता है। सामान्य वाद-विवाद के बाद विधेयक पारित हो जाता है।

द्वितीय सदन में विधेयक पारित होना– लोकसभा से पारित होने के बाद, विधेयक को पारित होने के लिए राज्यसभा के पास भेजा जाता है। राज्यसभा के सामने निम्नलिखित तीन विकल्प होते हैं–

(क) विधेयक को यथावत् पारित कर दिया जाए।

(ख) विधेयक में आवश्यक संशोधन किए जाएँ।

(ग) विधेयक को अस्वीकार कर दिया जाए।

राज्यसभा द्वारा विधेयक में संशोधन कर देने पर उसे पुनः लोकसभा के पास भेजा जाता है। लोकसभा संशोधन को स्वीकार कर ले, तो उसे स्वीकृत मानकर राष्ट्रपति के पास अनुमति के लिए भेज दिया जाता है।

विधेयक पर दोनों सदनों में विवाद होने पर राष्ट्रपति दोनों सदनों की संयुक्त बैठक बुलाता है, जहाँ विवाद का निराकरण करके विधेयक पारित कर दिया जाता है।

राष्ट्रपति की स्वीकृति– दोनों सदनों से पारित विधेयक को लोकसभा अध्यक्ष द्वारा राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है। यदि राष्ट्रपति उसे अपनी स्वीकृति दे देता है, तब विधेयक विधि बन जाता है। राष्ट्रपति द्वारा स्वीकृति न दिए जाने पर, दोनों सदन पुनः उस पर विचार करते हैं, उसमें सुधार करके अथवा ज्यों का त्यों उसे पारित कर पुनः राष्ट्रपति के पास भेजते हैं, इस बार राष्ट्रपति को उस पर अपनी स्वीकृति देनी ही पड़ती है।

वित्त विधेयक पारित होने की प्रक्रिया– वित्त (धन) विधेयक पारित होने की प्रक्रिया निम्नलिखित है–

(i) वित्त विधेयक लोकसभा में प्रस्तुत किया जाता है। लोकसभा उस पर भली प्रकार विचार-विमर्श करके उसे पारित कर देती है।

(ii) लोकसभा अपनी सिफारिशों के साथ वित्त विधेयक को पारित करके राज्यसभा के पास भेज देती है। राज्यसभा के साथ यह प्रतिबंध है, कि उसे 14 दिन की अवधि में ही अपनी सिफारिशों के साथ विधेयक लोकसभा को लौटाना होगा, अन्यथा समय सीमा के बाद उसे पारित मान लिया जाता है।

(iii) लोकसभा राज्यसभा की सिफारिशों को मानने के लिए बाध्य नहीं है।

वित्त विधेयक के दोनों सदनों से पारित हो जाने के बाद उसे राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है।

राष्ट्रपति उसे अनुमति प्रदान करने के लिए बाध्य है, क्योंकि उसे वह पुनर्विचार के लिए नहीं लौटा सकता और न ऐसे विधेयकों को सदनों की संयुक्त समिति को ही सौंपा जा सकता है।

7. भारतीय संसद के विभिन्न अंग क्या हैं? इसके दोनों सदनो में से कौन-सा सदन अधिक शक्तिशाली है और क्यों?

उ०– भारतीय संसद के तीन अंग है- राष्ट्रपति, लोकसभा और राज्यसभा। भारतीय संसद में दो सदन है- उच्च सदन और निम्न सदन। उच्च सदन को राज्य सभा तथा निम्न सदन को लोकसभा कहते हैं। भारतीय संसद के दोनों सदनों में से निम्न सदन (लोकसभा) अधिक शक्तिशाली है।

लोकसभा के राज्यसभा से अधिक शक्तिशाली होने के पक्ष में तर्क- इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या-10 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

8. लोकसभा के सदस्यों की योग्यताओं का उल्लेख कीजिए तथा उनका नियमित कार्यकाल बताइए।

उ०– **लोकसभा के सदस्यों की योग्यताएँ**– इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या-6 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

लोकसभा सदस्यों का कार्यकाल– लोकसभा के सदस्यों का कार्यकाल 5 वर्ष का होता है। लोकसभा को प्रधानमंत्री की सलाह पर राष्ट्रपति 5 वर्ष से पूर्व भी भंग कर सकता है। संकटकालीन घोषणा की स्थिति में लोकसभा का कार्यकाल एक वर्ष और बढ़ाया जा सकता है। घोषणा की समाप्ति के बाद 6 माह के अंदर नई लोकसभा का चुनाव होना आवश्यक होता है। अत: परिस्थितियों के अनुसार इसकी कार्याविधि कम अथवा अधिक हो सकती है। सरकार के अल्प मत में आ जाने पर भी लोकसभा भंग होने की आशंका रहती है।

9. राज्यसभा के अध्यक्ष का चुनाव कैसे होता है? उसकी शक्तियाँ बताइए।

उ०– **राज्यसभा का अध्यक्ष**– भारत का उपराष्ट्रपति राज्यसभा का पदेन सभापति (अध्यक्ष) होता है।

राज्यसभा के अध्यक्ष (उपराष्ट्रपति) का चुनाव– राज्यसभा के अध्यक्ष अर्थात् उपराष्ट्रपति का चुनाव ऐसे निर्वाचक मंडल द्वारा किया जाता है, जिसमें संसद के दोनों सदनों के सदस्य होते हैं अर्थात् उपराष्ट्रपति का चुनाव लोकसभा तथा राज्यसभा के सदस्यों द्वारा अनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के अनुसार एकल संक्रणीय मत प्रणाली द्वारा किया जाता है।

राज्यसभा अध्यक्ष (उपराष्ट्रपति) की शक्तियाँ एवं कार्य– लोकसभा अध्यक्ष के रूप में उपराष्ट्रपति निम्नलिखित कार्यों का संपादन करता है–

(i) उपराष्ट्रपति राज्यसभा की बैठकों की अध्यक्षता करता है।
(ii) राज्यसभा की कार्यवाही को शांतिपूर्वक एवं सुचारू रूप से चलाने का दायित्व उसी का होता है।
(iii) राज्यसभा के नेता से परामर्श करके सदन एवं कार्यक्रम निश्चित करता है।
(iv) किसी विषय अथवा विधेयक पर विवाद उत्पन्न हो जाने की दशा में मतदान कराकर, मतों की गणना करके परिणाम घोषित करता है।
(v) दोनों पक्षों के मत बराबर होने की दशा में अपना निर्णायक मत देकर विवाद का निपटारा करता है।
(vi) वह सदन की विभिन्न समितियाँ बनाता है तथा उनके कार्यों का निरीक्षण करता है।
(vii) वह राज्यसभा के सदस्यों के अधिकारों की रक्षा करता है।
(viii) सदन द्वारा स्वीकृत विधेयकों पर हस्ताक्षर करता है।
(ix) राज्यसभा के संभाषण उसी को संबोधित करके दिए जाते हैं।
(x) वह आवश्यक होने पर सदन में दर्शकों तथा प्रेस-प्रतिनिधियों के राज्यसभा में प्रवेश पर रोक लगा सकता है।
(xi) वह प्रश्नों को स्वीकार करता है तथा नियम विरूद्ध होने पर अस्वीकार करता है।
(xii) उसकी आज्ञा प्राप्त होने पर ही कोई सदस्य राज्यसभा में भाषण दे सकता है।

10. भारतीय संसद के दोनों सदनों की निर्वाचन प्रणाली मे क्या अंतर है? लोकसभा की विधायी शक्तियों का उल्लेख कीजिए।

उ०– **भारतीय संसद के दोनों सदनों की निर्वाचन प्रक्रिया में अंतर**– लोकसभा के सदस्यों का निर्वाचन गुप्त मतदान प्रणाली में वयस्क मताधिकार द्वारा किया जाता है। निर्वाचन के लिए संपूर्ण देश को अनेक निर्वाचक क्षेत्रों में विभक्त कर दिया जाता है। इसके बाद प्रत्येक क्षेत्र में मतदाताओं की सूची तैयार की जाती है। प्रत्येक क्षेत्र में जिस उम्मीदवार को सर्वाधिक मत मिलते हैं, वह लोकसभा का सदस्य बन जाता है। लोकसभा के सदस्य का कार्यकाल 5 वर्ष का होता है, जबकि राज्यसभा के सदस्यों का निर्वाचन अप्रत्यक्ष विधि द्वारा किया जाता है। इनका चुनाव प्रत्येक राज्य की विधानसभा के निर्वाचित सदस्यों द्वारा अनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के आधार पर एकल संक्रमणीय मत पद्धति द्वारा होता है। इसके एक-तिहाई सदस्य प्रत्येक दो वर्ष बाद अवकाश ग्रहण करते रहते हैं। इसके सदस्यों का कार्यकाल 6 वर्ष का होता है।

विधायी शक्तियाँ एवं कार्य– लोकसभा की विधायी शक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) लोकसभा में साधारण विधेयक प्रस्तुत कर उन्हें पारित करवाना।
(ii) वित्तीय विधेयक लोकसभा में ही प्रस्तुत किए जा सकते हैं, अत: उन्हें प्रस्तुत करके पारित करवाना।

(iii) लोकसभा तथा राज्यसभा में किसी विधेयक को लेकर मतभेद हो जाने पर परस्पर विचार-विमर्श करके अथवा संयुक्त बैठक बुलवाकर गतिरोध दूर करवाना।

(iv) लोकसभा साधारण विधेयकों और वित्तीय विधेयकों को राज्यसभा से भी पारित हो जाने के बाद राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेजती है। राष्ट्रपति के हस्ताक्षर हो जाने पर ही, वह कानून का रूप ले पाता है।

11. लोकसभा तथा राज्यसभा के परस्पर संबंधों की व्याख्या कीजिए।

उ०– **लोकसभा तथा राज्यसभा में परस्पर संबंध–** लोकसभा तथा राज्यसभा दोनों सदनों से मिलकर ही भारतीय संसद की रचना होती है। इन दोनों को भारतीय संसद के दो हाथ कहा जा सकता है। अत: दोनों सदनों में निम्नलिखित संबंध पाए जाते हैं–

(i) लोकसभा तथा राज्यसभा दोनों साधारण विधेयकों को पारित करती हैं। गतिरोध उत्पन्न होने पर दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में उसे दूर किया जाता है। दोनों सदनों से पारित विधेयक ही राष्ट्रपति के पास अनुमति के लिए भेजे जाते हैं।

(ii) वित्त विधेयक भले ही लोकसभा में प्रस्तुत किए जाते हैं, परंतु उन्हें वह पारित कर राज्यसभा के पास भेजती है, जिसे राज्यसभा 14 दिन की अवधि में पारित कर लोकसभा को लौटा देती है। लोकसभा उसे राष्ट्रपति के पास भेजती है।

(iii) वार्षिक बजट लोकसभा में प्रस्तुत किया जाता है, जिसमें वह संशोधन कर पारित करती है तथा राज्यसभा को भेजती है। राज्यसभा बिना किसी कटौती के उसे पारित कर वापिस लोकसभा को भेज देती है।

(iv) लोकसभा तथा राज्यसभा दोनों ही विविध उपायों से केंद्रीय मंत्रिपरिषद् पर नियंत्रण रखती हैं परंतु लोकसभा अविश्वास पारित कर मंत्रिपरिषद् को त्यागपत्र देने पर विवश कर सकती है, जबकि राज्यसभा को यह अधिकार प्राप्त नहीं है।

(v) राष्ट्रपति को उसके पद से हटाने के लिए दोनों सदन उस पर महाभियोग लगा सकते हैं। एक सदन प्रस्ताव लाता है, तब दूसरा सदन उसकी जाँच करता है। दोनों सदनों में बहुमत से प्रस्ताव पारित होने पर राष्ट्रपति को उसके पद से हटाया जा सकता है।

(vi) संविधान में संशोधन करने के लिए दोनों सदन समान भूमिका निभाते हैं।

(vii) राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति के चुनाव में दोनों सदन भाग लेते हैं। लोकसभा अपना सभापति चुनती है तथा उसके विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर सकती है।

लोकसभा और राज्यसभा एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं। इन दोनों के पारस्परिक संबंधों को डॉ० जाकिर हुसैन ने इन शब्दों में व्यक्त किया है, ''दोनों सदनों का अस्तित्व एक-दूसरे के साथ है तथा एक सदन दूसरे की अपेक्षा श्रेष्ठ नहीं है।''

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

19 संघीय कार्यपालिका– राष्ट्रपति

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-158 व 159 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-159 व 160 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. राष्ट्रपति का निर्वाचन कैसे होता है?

उ०– भारत के राष्ट्रपति चुनाव में देश के सभी मतदाता भाग नहीं लेते वरन् राष्ट्रपति का चुनाव अप्रत्यक्ष रीति से होता है। उसके निर्वाचन के लिए एक निर्वाचक मंडल बनाया जाता है, जिसमें संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य एवं राज्यों की विधानसभाओं और संघीय क्षेत्रों की विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्य होते हैं। यह निर्वाचन आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली की एक संक्रमणीय प्रणाली द्वारा गुप्त मतदान की रीति से होता है।

2. भारत के राष्ट्रपति के दो संवैधानिक अधिकारों का वर्णन कीजिए।

उ०– भारत के राष्ट्रपति के दो संवैधानिक अधिकार निम्नलिखित हैं–

(i) राष्ट्रपति के शांतिकालीन अधिकार– सामान्य परिस्थितियों को शांतिकाल कहा जाता है। शांतिकाल में राष्ट्रपति को निम्न अधिकार प्राप्त हैं–

(क) कार्यपालिका या शसन संबंधी अधिकार।

(ख) विधायी या कानून निर्माण संबंधी अधिकार।

(ग) वित्तीय अधिकार

(घ) न्यायिक अधिकार।

(ii) राष्ट्रपति के आपात या संकटकालीन अधिकार– भारत के राष्ट्रपति को संविधान ने आपातकाल में विशेष अधिकार सौंपे हें, जो निम्न परिस्थितियों में संकटकाल की घोषण करके शासन को अपने हाथ में ले सकता है तथा संकट से निपटने के उपाय कर सकता है।

(क) बाह्य आक्रमण होने पर अथवा आंतरिक युद्ध या सशस्त्र विद्रोह होने की दशा में।

(ख) राज्यों में संवैधानिक तंत्र के विफल हो जाने की दशा में।

(ग) राष्ट्र में वित्तीय संकट उत्पन्न हो जाने की दशा में।

3. राष्ट्रपति की तीन विधायी शक्तियों का उल्लेख कीजिए।

उ०– राष्ट्रपति की तीन विधायी शक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) संसद का सत्र बुलाना– राष्ट्रपति संसद का सत्र बुलाता है तथा वही सत्रावसान की घोषणा करता है। वह दोनों सदनों के समक्ष भाषण देता है। वही दोनों सदनों के संयुक्त सत्र को आमंत्रित करता है। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की सलाह पर लोकसभा को समय से पूर्व भंग भी कर सकता है।

(ii) लोकसभा तथा राज्यसभा सदस्यों को मनोनीत करने का अधिकार– राष्ट्रपति लोकसभा में 2 एंग्लो–इंडियन समुदाय के सदस्यों तथा राज्यसभा में 12 सदस्यों को मनोनित करता है। वह राज्यसभा में साहित्य, विज्ञान और कला के क्षेत्र के विद्वानों और कलाकारों को मनोनीत करता है।

(iii) विधेयकों को स्वीकृत करना– लोकसभा तथा राज्यसभा से पारित सभी विधेयक राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेजे जाते हैं। राष्ट्रपति की स्वीकृति के बाद ही विधेयक कानून का रूप ले पाता है। राष्ट्रपति के हस्ताक्षर और मुहर विधेयक को कानून बना देते हैं।

4. राष्ट्रपति की न्याय संबंधी दो शक्तियों का उल्लेख कीजिए।

उ०– राष्ट्रपति की न्याय संबंधी दो शक्तिया निम्नलिखित हैं–

(i) न्यायाधीशों की नियुक्ति– राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है। वह उच्चतम न्यायालय की कार्य प्रणाली के लिए नियम बना सकता है तथा संसद द्वारा महाभियोग प्रस्ताव पारित करने पर न्यायाधीश को उसके पद से हटा सकता है।

(ii) क्षमा प्रदान करना– राष्ट्रपति सक्षम न्यायालय द्वारा अपराधी को दिए गए मृत्युदंड को आजीवन कारावास में बदलने का अधिकार रखता है। वह कुछ समय के लिए सजा को स्थगित कर सकता है। वह न्यायिक अधिकारों का उपयोग कानूनों के अनुरूप ही करता है।

5. भारत के राष्ट्रपति को उसके पद से हटाने की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।

उ०– **राष्ट्रपति को उसके पद से हटाने की प्रक्रिया–** भारत के राष्ट्रपति को उसके पद से हटाने की संवैधानिक व्यवस्था का नाम महाभियोग है। संविधान के अनुच्छेद 61 में महाभियोग की व्यवस्था निम्नवत् निश्चित की गई है–

(i) संविधान का उल्लंघन करने पर संसद का कोई एक सदन कम से कम एक चौथाई सदस्यों के हस्ताक्षर करवाकर राष्ट्रपति के विरुद्ध महाभियोग का प्रस्ताव लाता है।

(ii) यह प्रस्ताव लिखित रूप में 14 दिन पूर्व भेजा जाना चाहिए।

(iii) भली प्रकार विचार–विमर्श करके के बाद यदि सदन उसे दो–तिहाई बहुमत से पारित कर देता है, तब महाभियोग प्रस्ताव स्वीकृत हो जाता है।

(iv) संसद का दूसरा सदन महाभियोग प्रस्ताव की जाँच करके, उसे दो–तिहाई मत से पारित करता है।

(v) राष्ट्रपति स्वयं उपस्थित होकर अथवा अपना प्रतिनिधि भेजकर अपने बचाव का स्पष्टीकरण दे सकता है।

दूसरे सदन में भी दो–तिहाई मतों से प्रस्ताव के पारित हो जाने पर राष्ट्रपति को अपना पद छोड़ना पड़ता है। स्वतंत्र भारत में अभी तक किसी राष्ट्रपति को उसके पद से महाभियोग द्वारा नहीं हटाया गया है।

6. राष्ट्रपति किन–किन परिस्थितियों में संकटकाल की घोषणा कर सकता है?

उ०– राष्ट्रपति को निम्नलिखित तीन परिस्थितियों में संकटकाल की घोषणा करने का अधिकार है–

(i) युद्ध, बाह्य आक्रमण होने की संभावना अथवा आंतरिक सशस्त्र विद्रोह की दशा में।

(ii) राज्यों में संवैधानिक तंत्र के विफल हो जाने की दशा में।

(iii) राष्ट्र में वित्तीय संकट उत्पन्न हो जाने की दशा में।

7. भारत के किन्हीं तीन पूर्व राष्ट्रपतियों के नामों का उल्लेख कीजिए।

उ०– भारत के तीन पूर्व राष्ट्रपतियों के नाम निम्नलिखित हैं–

(i) डॉ० राजेंद्र प्रसाद – 26 जनवरी, 1950 से 13 मई, 1962 तक

(ii) डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन – 13 मई, 1962 से 13 मई, 1967 तक

(ii) डॉ० जाकिर हुसैन – 13 मई, 1967 से 3 मई, 1969 तक

8. मान लीजिए श्री शंकर नारायण राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी हैं। उन्हें अपने पक्ष में मत पाने के लिए किन–किन मतदाताओं से संपर्क करना चाहिए?

उ०– राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी शंकर नारायण को अपने पक्ष में मत पाने के लिए संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्यों एवं राज्यों और संघीय क्षेत्रों की विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्यों से संपर्क करना चाहिए।

9. राज्यसभा के सभापति का निर्वाचन कैसे होता है? वह कितने वर्षों के लिए निर्वाचित होता है?

उ०– राज्यसभा का सभापति उपराष्ट्रपति होता है। उसका निर्वाचन एक ऐसे निर्वाचक मंडल के द्वारा होता है, जिसमें संसद के दोनों सदनों के सदस्य होते हैं, अर्थात् राज्यसभा के सभापति (उपराष्ट्रपति) का निर्वाचन लोकसभा तथा राज्यसभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के अनुसार एकल संक्रमणीय मत प्रणाली द्वारा किया जाता है। वह 5 वर्ष के लिए निर्वाचित होता है।

10. भारत के उपराष्ट्रपति का चुनाव कैसे होता है? उसे उसके पद से कैसे हटाया जा सकता है?

उ०– उपराष्ट्रपति का चुनाव लोकसभा एवं राज्यसभा के निर्वाचित सदस्यों द्वारा अनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के अनुसार एकल संक्रमणीय मत प्रणाली द्वारा किया जाता है।

उपराष्ट्रपति द्वारा अपनी शक्तियों का दुरूपयोग करने पर, संसद उसे राष्ट्रपति की भांति महाभियोग प्रस्ताव पारित करके उसे उसके पद से हटा सकती है।

11. भारत के उपराष्ट्रपति के दो कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– भारत के उपराष्ट्रपति के दो कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) राज्यसभा के अधिवेशनों का सभापतित्व– उपराष्ट्रपति राज्यसभा का पदेन सभापति होता है। वह राज्यसभा के अधिवेशनों में सभापति का आसन ग्रहण करता है। वही राज्यसभा में अनुशासन बनाए रखता है तथा प्रत्येक सदस्य को भाषण देने की अनुमति प्रदान करता है। वह किसी विधेयक पर विवाद हो जाने पर मतदान कराकर परिणाम घोषित करता है।

(ii) राष्ट्रपति की अनुपस्थिति में उसके कार्यों का निर्वहन– राष्ट्रपति के अवकाश लेने, त्यागपत्र देने तथा पद से हटाए जाने की स्थिति में उसके कार्यों का निर्वहन उपराष्ट्रपति ही करता है। उसे उस समय राष्ट्रपति के समस्त अधिकार और शक्तियाँ प्राप्त हो जाती हैं। वह अधिकतम 6 माह तक राष्ट्रपति के पद पर कार्य कर सकता है। 6 माह के भीतर ही तुरंत नए राष्ट्रपति का चुनाव कराना आवश्यक होता है।

12. राज्यसभा का एक सदस्य उपराष्ट्रपति का चुनाव लड़ना चाहता है, उसे कौन–से दो कार्य करने पड़ेंगे?

उ०– राज्यसभा के सदस्य को उपराष्ट्रपति का चुनाव लड़ने के लिए निम्न दो कार्य करने पड़ेंगे–

(i) उपराष्ट्रपति का चुनाव लड़ने के लिए ₹15000 जमानत राशि के रूप में जमा करने होंगे।

(ii) 10 सदस्यों द्वारा प्रस्ताव–पत्र तथा 10 सदस्यों द्वारा हस्ताक्षरित अनुमोदन पत्र जमा करना पड़ेगा।

13. राष्ट्रपति पद के लिए कौन–कौन सी योग्यताएँ होनी चाहिए?

उ०– **राष्ट्रपति पद के लिए योग्यताएँ**–राष्ट्रपति पद के लिए निम्नलिखित योग्यताएँ निर्धारित की गई हैं–

(i) वह भारत का नागरिक हो।

(ii) वह 35 वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो।

(iii) वह राज्य सरकार अथवा केंद्र सरकार के अंतर्गत किसी लाभ के पद पर न हो।

(iv) वह संसद के किसी सदन अथवा राज्य विधानमंडल के किसी सदन का सदस्य न हो।

(v) वह संसद द्वारा निर्धारित योग्यताएँ रखता हो।

14. उपराष्ट्रपति पद का चुनाव लड़ने के लिए प्रत्याशी में कौन कौन–सी योग्यताएँ होनी चाहिए?

उ०– **उपराष्ट्रपति पद के लिए आवश्यक योग्यताएँ–** भारत का उपराष्ट्रपति बनने के लिए प्रत्याशी में निम्नलिखित योग्यताएँ होनी आवश्यक हैं–

(i) प्रत्याशी भारत का नागरिक हो।

(ii) वह 35 वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो।

(iii) वह राज्यसभा का सदस्य बनने की अर्हताएँ रखता हो।

(iv) वह संसद या विधानमंडल के किसी सदन का सदस्य न हो।

(v) वह केंद्र सरकार या राज्य सरकार के किसी लाभ के पद पर न हो।

उपराष्ट्रपति का चुनाव लड़ने के लिए प्रत्याशी को ₹15000 जमानत राशि के रूप में जमा करने होंगे, साथ ही 10 सदस्यों द्वारा प्रस्ताव तथा 10 सदस्यों द्वारा हस्ताक्षरित अनुमोदन–पत्र जमा करना आवश्यक होता है।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. राष्ट्रपति का निर्वाचन किस प्रकार होता है? उसके पद के लिए क्या अर्हताएँ हैं?

उ०– **राष्ट्रपति का चुनाव–** राष्ट्रपति के चुनाव में देश के सभी मतदाता भाग नहीं लेते, वरन् संविधान के अनुच्छेद 54 के अनुरूप उसके चुनाव के लिए निम्नवत् एक निर्वाचक मंडल बनाया जाता है, जिसमें–

(i) संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य होते हैं।

(ii) राज्य विधानसभाओं और संघीय क्षेत्रों की विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्य होते हैं।

राष्ट्रपति के चुनाव में राष्ट्रपति द्वारा मनोनित सदस्यों की भागीदारी नहीं होती है क्योंकि वे राष्ट्रपति के निर्वाचन में पक्षपात कर सकते हैं।

मतों का मूल्य– राष्ट्रपति के चुनाव में एक मतदाता एक मत के सिद्धांत को नहीं अपनाया गया है। चूँकि विधानसभा के सदस्यों और सांसदों के मतों का मूल्य एक समान नहीं है, अत: दोनों के मतों का मूल्य निम्नवत् ज्ञात किया जाता है–

(i) विधानसभा के सदस्यों (एम.एल.ए.) के मतों का मूल्य– राष्ट्रपति के चुनाव में प्रत्येक छोटे और बड़े राज्य की भागीदारी सुनिश्चित करने के उद्देश्य से विधानसभा के सदस्यों के मतों का मूल्य निम्नलिखित सूत्र द्वारा ज्ञात किया जाता है–

(ii) सांसदों के मत का मूल्य– सांसदों के मत का मूल्य निकालने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है–

$$\text{विधानसभा के सदस्य के मत का मूल्य} = \frac{\text{राज्य की जनसंख्या}}{\text{विधानसभा के निर्वाचित सदस्यों की संख्या}} + 1000$$

सामानुपातिक प्रतिनिधित्व एकल संक्रमणीय प्रणाली से निर्वाचन– भारत के राष्ट्रपति के निर्वाचन में यह विशेष प्रणाली प्रयोग में लाई जाती है। इस प्रणाली के अनुसार वही व्यक्ति निर्वाचित माना जाएगा, जो मतों के निर्धारित कोटे को पाने में सफल रहेगा। यह कोटा ज्ञात करने का सूत्र निम्नलिखित है–

$$\text{सांसद के मत का मूल्य} = \frac{\text{समस्त राज्य विधानसभाओं के सदस्यों के मतों का कुल योग}}{\text{सांसदों की कुल निर्वाचित संख्या}}$$

$$\text{निर्धारित कोटे की न्यूनतम संख्या} = \frac{\text{कुल वैध मतों की संख्या}}{\text{पदों की संख्या} + 1} + 1$$

उदाहरण के लिए यदि किसी चुनाव में कुल वैध मत 1600 हैं, तो प्रत्याशी को राष्ट्रपति का चुनाव जीतने के लिए कम से कम $\frac{1600}{1+1} + 1 = 801$ का कोटा अवश्य प्राप्त करना होगा।

2. राष्ट्रपति की शक्तियों और कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– राष्ट्रपति की शक्तियों एवं कार्यों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है–

(i) शांतिकालीन या साधारण स्थिति की शक्तियाँ एवं कार्य

(ii) संकट या आपातकालीन शक्तियाँ एवं कार्य।

(i) शांतिकालीन या साधारण स्थिति की शक्तियाँ एवं कार्य– साधारण स्थिति में राष्ट्रपति को निम्नलिखित शक्तियाँ प्राप्त हैं–

(क) कार्यपालिका या शासन संबंधी अधिकार– कार्यपालिका का प्रधान होने के नाते राष्ट्रपति को कार्यपालिका संबंधी निम्न अधिकार प्राप्त हैं–

(अ) केंद्रीय शासन के सभी कार्य राष्ट्रपति के नाम से किए जाते हैं।

(ब) राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है। प्रधानमंत्री की सलाह से वह अन्य मंत्रियों की नियुक्ति करता है तथा उसने कार्यों का विभाजन करता है।

(स) वह विभिन्न उच्च पदों पर नियुक्तियाँ करता है, जैसे सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च–न्यायालयों के न्यायाधीश, राज्यों के राज्यपाल, केंद्रीय लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा सदस्य इत्यादि की नियुक्तियाँ।

(द) वह विदेशों में भारतीय राजदूतों की नियुक्ति करता है तथा बाहर से आए हुए राजदूत राष्ट्रपति को ही अपने प्रमाण–पत्र प्रस्तुत करते हैं।

(य) राष्ट्रपति भारतीय जल, थल एवं वायु सेनाओं का प्रधान होता है।

(र) राष्ट्रपति प्रधानमंत्री से शासन संबंधी कोई भी जानकारी प्राप्त कर सकता है।

(ख) कानून निर्माण संबंधी अधिकार– राष्ट्रपति व्यवस्थापिका का अभिन्न अंग है। उसे कानून–निर्माण के क्षेत्र में निम्न अधिकार प्राप्त हैं–

(अ) राष्ट्रपति को संसद के अधिवेशन को बुलाने, स्थगित करने तथा लोकसभा को भंग करने का अधिकार है।

(ब) उसे संसद के दोनों सदनों को सम्बोधित करने तथा लिखित संदेश भेजने का अधिकार है।

(स) संसद द्वारा परित कोई भी विधेयक बिना राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के कानून नहीं बन सकता।

(द) संसद का अधिवेशन न होने के समय उसे अध्यादेश जारी करने का अधिकार है।

(य) राष्ट्रपति राज्यसभा के 12 सदस्यों को मनोनीत करता है।

(ग) वित्त संबंधी अधिकार–

(अ) राष्ट्रपति प्रत्येक वित्तीय वर्ष के प्रारंभ से वित्त मंत्री के माध्यम से संसद में बजट प्रस्तुत करता है।

(ब) राष्ट्रपति की अनुमति के बिना कोई भी वित्तीय विधेयक लोक सभा में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता।

(स) राष्ट्रपति को वित्तीय आयोग की नियुक्ति का अधिकार है।

(द) राष्ट्रपति आकस्मिक निधि में से सरकार का खर्च करने के लिए धन दे सकता है।

(घ) न्याय संबंधी अधिकार–

(अ) राष्ट्रपति किसी भी अपराधी की सजा को कम कर सकता है अथवा माफ कर सकता है।

(ब) राष्ट्रपति को मृत्युदंड को क्षमा करने का भी अधिकार है।

(स) राष्ट्रपति किसी भी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को अन्य राज्य के उच्च न्यायालय में स्थानांतरित कर सकता है। वह उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को सर्वोच्च न्यायालय में भी भेज सकता है।

(द) राष्ट्रपति किसी भी सार्वजनिक न्याय के प्रश्न पर उच्चतम न्यायालय से परामर्श कर सकता है, परंतु वह उसके परामर्श को मानने के लिए बाध्य नहीं है।

(ङ) राष्ट्रपति के अन्य अधिकार (शक्तियाँ) और कार्य– राष्ट्रपति को साधारण अवस्था में निम्नलिखित अन्य अधिकार भी प्राप्त हैं–

(अ) राष्ट्रपति संपूर्ण देश के प्रशासन को सुचारु रूप से संचालित करवाने के लिए आवश्यक नियम बनवा सकता है।

(ब) वह वित्त आयोग, संघ लोक सेवा आयोग, चुनाव आयोग, भाषा आयोग और नियंत्रक महालेखा परीक्षक से प्राप्त प्रतिवेदनों को लोकसभा के पटल पर रख सकता है।

(स) राष्ट्रपति लोक सेवा आयोग के सदस्यों की संख्या, सेवा शर्तों तथा कार्यकाल के विषय में आवश्यक नियम बनवा सकता है।

(द) राष्ट्रपति तीनों सेनाओं के अध्यक्षों की नियुक्ति करता है। वह अशांत क्षेत्रों में शांति स्थापित करने के लिए सेना को आदेशित करता है।

(च) संकट या आपातकालीन शक्तियाँ एवं कार्य– संकटकाल से निपटने के लिए राष्ट्रपति को संविधान में विशेष अधिकार दिए गए हैं। वह निम्न परिस्थितियों में संकटकाल की घोषणा करके शासन को अपने हाथ में ले सकता है तथा संकट से निपटने के लिए उपाय कर सकता है–

(अ) बाहरी आक्रमण या युद्ध होने पर आंतरिक युद्ध या सशस्त्र विद्रोह की स्थिति या संभावना उत्पन्न होने पर।

(ब) राज्यों में संवैधानिक शासन के विफल हो जाने पर।

(द) देश में वित्तीय संकट उत्पन्न होने पर।

3. राष्ट्रपति किन–किन परिस्थितियों में आपातकाल की घोषणा कर सकता है? उसके आपातकालीन अधिकारों का वर्णन कीजिए।

उ०– **राष्ट्रपति के आपातकालीन अधिकार (शक्तियाँ) और कार्य–** भारत के राष्ट्रपति को संविधान ने आपातकाल में कुछ ऐसी विशेष शक्तियाँ सौंपी हैं, जिससे वह विश्व में सर्वाधिक शक्तिशाली संवैधानिक अध्यक्ष बन जाता है। राष्ट्रपति की संकटकालीन शक्तियाँ (अधिकार) निम्नलिखित हैं–

(i) संकटकाल की घोषणा करने का अधिकार– राष्ट्रपति को निम्नलिखित तीन परिस्थितियों में आपातकाल (संकटकाल) की घोषणा करने का अधिकार है–

(क) युद्ध, बाह्य आक्रमण होने की संभावना अथवा सशस्त्र विद्रोह होने की दशा में।

(ख) राज्यों में संवैधानिक तंत्र के विफल हो जाने की दशा में।

(ग) राष्ट्र में वित्तीय संकट उत्पन्न हो जाने की दशा में।

(ii) युद्ध, बाह्य आक्रमण होने की संभावना अथवा सशस्त्र विद्रोह होने की दशा में– भारतीय संविधान के अनुच्छेद 352 में यह व्यवस्था की गई है, कि जब राष्ट्रपति को यह विश्वास हो जाए कि देश में युद्ध, बाहरी आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह जैसी स्थितियाँ उत्पन्न हो गई हैं, तब वह आपातकाल की घोषणा कर सकता है।

घोषणा का प्रभाव– इस प्रकार घोषित आपातकालीन व्यवस्था के निम्नलिखित परिणाम होंगे–

(क) संसद राज्य सूची के किसी भी विषय पर कानून बना सकेगी।

(ख) राज्य तथा केंद्र के बीच राजस्व बँटवारे संबंधी सभी प्रावधान निलंबित रहेंगे।

(ग) लोकसभा का कार्यकाल एक वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है। इसे दोबारा एक वर्ष और बढ़ाया जा सकता है।

(घ) व्यक्तिगत स्वतत्रंता को छोड़कर नागरिकों के मौलिक अधिकार स्थगित किए जा सकते हैं।

भारत में आपातकालीन घोषणाएँ 1962 ई० में चीन का आक्रमण होने पर, 1965 तथा 1971 ई० में पाकिस्तान से युद्ध छिड़ जाने पर तथा 1975 ई० में देश में आंतरिक अशांति होने पर की जा चुकी हैं।

(iii) राज्यों में संवैधानिक व्यवस्था विफल हो जाने पर– भारतीय संविधान के अनुच्छेद 356 में कहा गया है कि यदि किसी राज्य के राज्यपाल से प्रतिवेदन मिल जाए कि अमुक राज्य में शासन संविधान के अनुसार चलाया जाना संभव नहीं है, तब राष्ट्रपति उस राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू कर सकता है।

घोषणा का प्रभाव– इस प्रकार घोषित आपातकालीन व्यवस्था के निम्नलिखित प्रभाव होंगे–

(क) राज्यपाल राष्ट्रपति के प्रतिनिधि के रूप में प्रशासन चलाएगा।

(ख) राज्य विधानमंडल भंग हो जाएगा तथा कानून निर्माण का कार्य संसद करेगी।

(ग) राज्य सरकार के समस्त अधिकार राष्ट्रपति के हाथों में चले जाएँगे।

(घ) उच्च न्यायालय की शक्तियाँ यथावत् बनीं रहेंगी।

(iv) वित्तीय संकट उत्पन्न हो जाने पर– भारतीय संविधान के अनुच्छेद 360 में यह व्यवस्था की गई है कि यदि देश में या उसके किसी क्षेत्र में वित्तीय स्थिरता या साख को खतरा है, तो राष्ट्रपति आपातकाल की घोषणा कर सकता है। इस घोषणा का संसद के दोनों सदनों से दो माह की अवधि में अनुमोदन होना आवश्यक है। अन्यथा दो माह की अवधि के बाद यह घोषणा निष्क्रिय हो जाएगी।

घोषणा का प्रभाव– इस प्रकार की घोषणा के निम्नलिखित प्रभाव होंगे–

(क) राष्ट्रपति किसी राज्य के विधानमंडल से वित्तीय विधेयक अपनी स्वीकृति देने के लिए मँगा सकता है।

(ख) राष्ट्रपति केंद्र या राज्य के अधिकारियों के वेतन भत्तों में कटौती कर सकता है।

(ग) वह राज्य संघ के वित्तीय बँटवारे की व्यवस्था में कोई भी परिवर्तन कर सकता है।

भारत में आज तक वित्तीय आपातकाल की घोषणा की स्थिति उत्पन्न नहीं हुई है।

4. भारत के उपराष्ट्रपति के निर्वाचन, कार्यकाल, योग्यताओं का उल्लेख करते हुए राज्यसभा के सभापति के रूप में उसकी भूमिका का उल्लेख कीजिए।

उ०– **उपराष्ट्रपति का निर्वाचन–** उपराष्ट्रपति का निर्वाचन एक ऐसे निर्वाचक मंडल द्वारा किया जाता है, जिसमें संसद के दोनों सदनों के सदस्य होते हैं, अर्थात उपराष्ट्रपति का चुनाव लोकसभा तथा राज्यसभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के अनुसार एकल संक्रमणीय मत प्रणाली द्वारा किया जाता है।

उपराष्ट्रपति का कार्यकाल– भारत का उपराष्ट्रपति 5 वर्ष के लिए चुना जाता है। यह अवधि उसके द्वारा शपथ लेने की तिथि से प्रारंभ होती है। उपराष्ट्रपति स्वेच्छा से इस अवधि से पूर्व भी पद त्याग सकता है। उपराष्ट्रपति दोबारा चुनाव लड़कर पुन: वही पद ग्रहण कर सकता है।

उपराष्ट्रपति पद के लिए आवश्यक योग्यताएँ– भारत का उपराष्ट्रपति बनने के लिए प्रत्याशी में निम्नलिखित योग्यताएँ होनी आवश्यक हैं–

(i) प्रत्याशी भारत का नागरिक हो।

(ii) वह 35 वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो।

(iii) वह राज्यसभा का सदस्य बनने की अर्हताएँ रखता हो।

(iv) वह संसद या विधानमंडल के किसी सदन का सदस्य न हो।

(v) वह केंद्र सरकार या राज्य सरकार के किसी लाभ के पद पर न हो।

राज्यसभा के सभापति के रूप में उपराष्ट्रपति की भूमिका– उपराष्ट्रपति राज्यसभा का पदेन सभापति होता है। वह राज्यसभा के अधिवेशनों में सभापति का आसन ग्रहण करता है। वही राज्यसभा में अनुशासन बनाए रखता है तथा प्रत्येक सदस्य को भाषण देने की अनुमति प्रदान करता है। वह किसी विधेयक पर विवाद हो जाने पर मतदान कराकर परिणाम घोषित करता है।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

20 केंद्रीय मंत्रिपरिषद्– गठन एवं कार्य

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 166 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 166 व 167 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. केंद्रीय मंत्रिपरिषद् के दो विधायी कार्यों का उल्लेख कीजिए।

उ०– केंद्रीय मंत्रिपरिषद के दो विधायी कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) संसद में विधेयक प्रस्तुत कर उन्हें पारित करवाना।

(ii) कानून निर्माण के क्षेत्र में संसद का नेतृत्व करना।

2. केंद्रीय मंत्रिपरिषद् के सामूहिक उत्तरदायित्व का क्या अर्थ है?

उ०– सामूहिक उत्तरदायित्व– केंद्रीय मंत्रिपरिषद् के सभी सदस्य व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से संसद के प्रति उत्तरदायी होते हैं। एक मंत्री के कार्यों, भूलों तथा त्रुटियों के लिए समूची मंत्रिपरिषद् उत्तरदायी होती है, जिसे **सामूहिक उत्तरदायित्व** कहा जाता है। किसी एक मंत्री की लोकसभा में पराजय हो जाने पर पूरी मंत्रिपरिषद् को त्यागपत्र देना पड़ता है। इस संदर्भ में लार्ड मॉर्ले का यह कथन विशेष रूप से उल्लेखनीय बन जाता है, ''मंत्रिपरिषद् के सदस्य एक ही साथ तैरते हैं और एक ही साथ डूबते हैं।'' मंत्रिमंडल की बैठकें होती रहती हैं, जबकि मंत्रिपरिषद् की बैठक आवश्यकता पड़ने पर ही बुलाई जाती है। समस्त बैठकों की अध्यक्षता प्रधानमंत्री ही करता है।

3. प्रधानमंत्री की दो महत्वपूर्ण शक्तियों का वर्णन कीजिए।

उ०– प्रधानमंत्री की दो महत्वपूर्ण शक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) केंद्रीय शासन का निर्देशक– प्रधानमंत्री केंद्रीय प्रशासन का प्रधान होता है। उसी के निर्देशन में राष्ट्र का शासन संचालित किया जाता है।

(ii) मंत्रालयों का विभाजन– प्रधानमंत्री सदस्यों की वरिष्ठता तथा योग्यतानुसार उन्हें मंत्रालय सौंपता है। प्रधानमंत्री जब चाहें मंत्रियों के विभागों में फेरबदल कर सकता है या उन्हें मंत्रिपरिषद् से हटा भी सकता है।

4. मंत्रिपरिषद् की तीन प्रमुख शक्तियाँ क्या हैं?

उ०– मंत्रिपरिषद की तीन प्रमुख शक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) विधायी शक्तियाँ– केंद्रीय मंत्रिपरिषद् अपनी विधायी शक्तियों के अनुसार संसद में विधेयक प्रस्तुत कर उन्हें पारित करवाती है तथा कानून निर्माण में संसद का नेतृत्व करती है।

(ii) वित्तीय शक्तियाँ– केंद्रीय मंत्रिपरिषद् की महत्वपूर्ण इकाई मंत्रिमंडल की ओर से वित्तमंत्री तथा रेलमंत्री अपने–अपने वार्षिक बजट बनाकर प्रस्तुत करते है तथा उन्हें पारित करते हैं।

(iii) नीति निर्धारण करना– केंद्रीय मंत्रिमंडल गृह तथा विदेश नीति का निर्धारण करता है।

5. केंद्रीय मंत्रिपरिषद् और लोकसभा के संबंधों का वर्णन कीजिए।

उ०– भारतीय संविधान के अनुसार मंत्रिपरिषद् तथा लोकसभा परस्पर घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं। मंत्रिपरिषद् सामूहिक रूप से लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होती है। लोकसभा प्रश्नों, पूरक प्रश्नों, काम रोका, स्थगन तथा निंदा प्रस्तावों द्वारा मंत्रिपरिषद् पर नियंत्रण रखती है तथा अविश्वास प्रस्ताव, विधेयक की अस्वीकृति किसी मंत्री के प्रति अविश्वास आदि आधारों पर मंत्रिपरिषद् को पदच्युत कर सकती है। मंत्रिपरिषद् के परामर्श पर राष्ट्रपति लोकसभा को भंग कर सकता है।

6. **खंडित जनादेश और त्रिशंकु लोकसभा से आपका क्या आशय है?**

उ०– आम चुनाव में किसी भी राजनीतिक दल को स्पष्ट बहुमत न मिलने को खंडित जनादेश कहते हें। खंडित जनादेश की स्थिति में अन्य सहयोगी दलों के सहयोग से गठित लोकसभा को त्रिशंकु लोकसभा कहते हैं।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. **प्रधानमंत्री की नियुक्ति कैसे होती है? उसके महत्वपूर्ण कर्तव्यों का वर्णन कीजिए।**

उ०– **प्रधानमंत्री की नियुक्ति–** भारतीय संविधान के अनुच्छेद 75 के अनुसार प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है लेकिन वह लोकसभा में बहुमत प्राप्त दल के नेता को ही प्रधानमंत्री बनाने के लिए आमंत्रित करता है। कभी–कभी जब लोकसभा में किसी एक दल को बहुमत प्राप्त नहीं होता है, तो राष्ट्रपति संयकुत दलों के नेता को प्रधानमंत्री नियुक्त कर, उसे लोकसभा में अपना बहुमत सिद्ध करने को कहता हैं।

प्रधानमंत्री के कर्तव्य और अधिकार या शक्तियाँ– भारतीय संविधान ने प्रधानमंत्री को शक्ति संपन्न बना दिया है। वह मंत्रिपरिषद् के निर्माण से लेकर संसद के नेतृत्व और प्रशासनिक गतिविधियों की धुरी है। उसके अधिकार तथा कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) **मंत्रिपरिषद् का निर्माता–** प्रधानमंत्री मंत्रिपरिषद् का निर्माण करता है। मंत्रिपरिषद् के आकार तथा सदस्य संख्या के निर्धारण में वह एकाधिकारी है।

(ii) **मंत्रालयों का विभाजन–** प्रधानमंत्री सदस्यों की वरिष्ठता तथा योग्यतानुसार उन्हें मंत्रालय सौंपता है। प्रधानमंत्री जब चाहे मंत्रियों के विभागों में फेरबदल कर सकता है या उन्हें मंत्रिपरिषद् से हटा भी सकता है।

(iii) **बैठकों की अध्यक्षता–** प्रधानमंत्री कैबिनेट का अध्यक्ष होता है तथा मंत्रिमंडल की सभी बैठकों की अध्यक्षता करके, उन्हें संचालित करता है। उसकी अनुपस्थिति में आवश्यकता पड़ने पर यह कार्य उपप्रधानमंत्री (यदि है) अथवा वरिष्ठ मंत्री करता है।

(iv) **केंद्रीय शासन का निर्देशक–** प्रधानमंत्री केंद्रीय प्रशासन का प्रधान होता है। उसी के निर्देशन में राष्ट्र का शासन संचालित किया जाता है।

(v) **मंत्रालयों का समन्वयक–** प्रधानमंत्री विभिन्न मंत्रालयों के बीच ताल–मेल बैठाकर विकास और प्रगति के कार्यों को गति प्रदान करने के लिए विविध मंत्रालयों में आपसी समन्वय बनाए रखता है।

(vi) **लोकसभा का नेतृत्व–** प्रधानमंत्री लोकसभा का नेतृत्व करता है। वह सत्र की कार्यवाही को सुचारु रूप से संचालित कराने में स्पीकर का सहयोग करता है। लोकसभा में विधेयक प्रस्तुत करवाने से लेकर सत्तारूढ़ दल की समस्त गतिविधियों का संचालन उसी के नेतृत्व में होता है।

(vii) **महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्तियाँ–** प्रधानमंत्री महत्वपूर्ण नियुक्तियों के संबंध में मंत्रिमंडल में विचार करके राष्ट्रपति से उन्हें संपन्न करवाता है।

(viii) **मंत्रिपरिषद् और राष्ट्रपति के मध्य का सेतु–** प्रधानमंत्री मंत्रिपरिषद् और राष्ट्रपति को परस्पर जोड़ने वाला सेतु है। वह मंत्रिपरिषद् के निर्णयों, परामर्शों और विचारों को राष्ट्रपति तक पहुँचाता है। मंत्रिमंडल की बैठकों में लिए गए नीति संबंधी महत्वपूर्ण निर्णयों से वह राष्ट्रपति को अवगत कराता है।

(ix) **उपाधियाँ प्रदान करवाना–** प्रधानमंत्री उल्लेखनीय तथा महत्वपूर्ण कार्य करने वाले भारतीय नागरिकों को भारत रत्न, पद्म विभूषण, पद्म भूषण और पद्मश्री आदि महत्वपूर्ण उपाधि प्रदान कराने के लिए राष्ट्रपति से सिफारिश करता है।

(x) **राष्ट्र का प्रतिनिधित्व–** भारत का प्रधानमंत्री अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों और गोष्ठियों में राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है। वह देश और सरकार के प्रधान वक्ता के रूप में भारत का दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।

2. **केंद्रीय मंत्रिपरिषद् का गठन कैसे होता है? इसके प्रमुख कार्यों का वर्णन कीजिए।**

उ०– **केंद्रीय मंत्रिपरिषद् की रचना (गठन)–** केंद्रीय मंत्रिपरिषद् का मुखिया प्रधानमंत्री होता है, जो राष्ट्रपति से अन्य मंत्रियों की नियुक्ति करवाकर केंद्रीय मंत्रिपरिषद् की रचना करता है। इसकी रचना की प्रक्रिया को निम्नवत् समझा जा सकता है–

प्रधानमंत्री की नियुक्ति– प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति के द्वारा की जाती है। वह प्रधानमंत्री की नियुक्ति में

निम्नलिखित प्रावधानों का अनुपालन करता है–

(i) राष्ट्रपति लोकसभा में बहुमत दल के नेता को प्रधानमंत्री नियुक्त करता है।

(ii) खंडित जनादेश या त्रिशंकु लोकसभा होने की स्थिति में, वह संयुक्त गठबंधन के नेता को प्रधानमंत्री नियुक्त करता है, जिसे वह एक निश्चित समय में लोकसभा में अपना बहुमत सिद्ध करने के लिए कहता है।

मंत्रियों का चयन– मंत्रिपरिषद् में कैबिनेट मंत्री, राज्यमंत्री तथा उपमंत्री के रूप में तीन श्रेणियों के मंत्री होते हैं, जिनकी नियुक्ति प्रधानमंत्री के परामर्श से राष्ट्रपति करता है। मंत्रियों की नियुक्ति में प्रधानमंत्री अपने विश्वासपात्र, वरिष्ठ तथा योग्य सदस्यों को वरीयता देता है। संविदा सरकार में प्रत्येक दल को उचित प्रतिनिधित्व देना पड़ता है। मंत्रिपरिषद् में सभी समुदायों, भौगोलिक क्षेत्रों, अल्पसंख्यक वर्गों तथा महिलाओं को भी उचित प्रतिनिधित्व दिया जाता है।

केंद्रीय मंत्रिपरिषद् का सदस्य लोकसभा या राज्यसभा का सदस्य होना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति मंत्री बन गया है और वह दोनों सदनों में से किसी का भी सदस्य नहीं हैं तब उस पर यह प्रतिबंध होगा कि उसे 6 माह के भीतर किसी भी सदन का सदस्य बनना अनिवार्य होगा। यदि वह इस अवधि में किसी भी सदन की सदस्यता ग्रहण नहीं कर पाता है तो उसे अपना पद त्यागना होता है।

कैबिनेट, राज्यमंत्री तथा उपमंत्रियों के समूह को मंत्रिपरिषद् कहा जाता है, जबकि मंत्रिमंडल प्रधानमंत्री और कैबिनेट मंत्रियों के समूह को कहा जाता है। सरकार के समस्त निर्णय प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में मंत्रिमंडल ही लेता है। अत: मंत्रिमंडल, मंत्रिपरिषद का महत्वपूर्ण अंग होता है। इसलिए मंत्रिपरिषद् का प्रत्येक सदस्य कैबिनेट मंत्री ही बनना चाहता है। मंत्रिपरिषद् में मंत्रियों की संख्या लोकसभा की कुल सदस्य संख्या के 15% तक अधिकतम हो सकती है।

मंत्रिपरिषद् का कार्यकाल निश्चित नहीं होता। केंद्रीय मंत्रिपरिषद् तभी तक कार्य करती है, जब तक उसका लोकसभा में बहुमत रहता है और जब तक उसके सदस्यों पर प्रधानमंत्री का विश्वास बना रहता है। केंद्रीय मंत्रिपरिषद् संसद के प्रति उत्तरदायी होती है। मंत्रिपरिषद् के सदस्यों में उनके विभागों का बँटवारा प्रधानमंत्री राष्ट्रपति के सहयोग से करता है। वह एक ही मंत्री को एक से अधिक विभाग भी सौंप सकता है।

केंद्रीय मंत्रिपरिषद् के कार्य और शक्तियाँ– केंद्रीय मंत्रिपरिषद् की सबसे महत्वपूर्ण इकाई मंत्रिमंडल है। इसकी कार्यवाही को सुचारु रूप से संचालित कराने के लिए मंत्रिमंडलीय सचिवालय है। मंत्रिमंडल के कार्य और शक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) विधायी कार्य एवं शक्तियाँ– केंद्रीय मंत्रिपरिषद् अपनी विधायी शक्तियों के अनुसार निम्नलिखित कार्य करती है–

(क) संसद में विधेयक प्रस्तुत कर उन्हें पारित करवाना।

(ख) कानून निर्माण के क्षेत्र में संसद का नेतृत्व करना।

(ग) संसद में विधेयक प्रस्तुत करने का क्रम तथा समय निश्चित करना।

(घ) आवश्यकता पड़ने पर राष्ट्रपति से अध्यादेश जारी करवाना।

(ii) नीति निर्धारण करना– केंद्रीय मंत्रिमंडल गृह तथा विदेश की नीति का निर्धारण करता है।

(iii) वित्तीय शक्तियाँ– केंद्रीय मंत्रिमंडल की ओर से वित्तमंत्री तथा रेलमंत्री अपने–अपने वार्षिक बजट बनवाकर प्रस्तुत करते हैं तथा उन्हें पारित करवाते हैं।

(iv) नियुक्तियों का अधिकार– केंद्रीय मंत्रिमंडल राज्यों के राज्यपालों, उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों, तीनों सेनाओं के सेनापतियों एवं ऍटार्नी जनरल, राजदूतों आदि की महत्वपूर्ण नियुक्तियाँ राष्ट्रपति से करवाता है। इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से ये नियुक्तियाँ मंत्रिमंडल द्वारा ही की जाती हैं।

(v) संकटकालीन घोषणा संबंधी शक्तियाँ– केंद्रीय मंत्रिमंडल की सलाह पर ही राष्ट्रपति संकटकाल की घोषणा करता है।

(vi) युद्ध और संधि की घोषणा संबंधी शक्तियाँ– आवश्यकता पड़ने पर परिस्थितियों के अनुरूप केंद्रीय मंत्रिमंडल ही राष्ट्रपति को युद्ध, संधि तथा शांति की घोषणा की सलाह देता है।

(vii) **संविधान संशोधन संबंधी शक्तियाँ–** संविधान में संशोधन करने का प्रस्ताव केंद्रीय मंत्रिमंडल ही संसद में प्रस्तुत करता है।

(viii) **प्रशासन के विभागों का नेतृत्व करने की शक्तियाँ–** राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू होने पर केंद्रीय मंत्रिमंडल ही कार्यों का संचालन करवाता है। वह प्रशासन के विभिन्न विभागों का नेतृत्व और मार्गदर्शन करता है।

(ix) **विभिन्न मंत्रालयों में समन्वय की शक्तियाँ–** केंद्रीय मंत्रिमंडल ही विभिन्न मंत्रालयों के बीच तालमेल बैठाकर प्रशासन को निर्बाध रूप से चलाता है।

(x) **उपाधियों के लिए सिफारिश करने की शक्तियाँ–** केंद्रीय मंत्रिमंडल भारत रत्न, पद्म विभूषण, पद्म भूषण तथा पद्मश्री आदि उपाधियाँ उचित व्यक्तियों को प्रदान कराने के लिए राष्ट्रपति से सिफारिश करता है।

3. भारत के प्रधानमंत्री की शक्तियों और कार्यों का परीक्षण कीजिए।

उ०– **राष्ट्र के प्रशासन में प्रधानमंत्री की भूमिका–** प्रधानमंत्री मंत्रिपरिषद् का रचियता, पार्टी का नेता और प्रशासन का सर्वेसर्वा होता है। संसदीय शासन प्रणाली में व्यवहारिक रूप से मंत्रिपरिषद् ही कार्यपालिका की प्रधान होती है और मंत्रिपरिषद् का प्रधानमंत्री ही होता है। वह प्रशासन का प्रधान स्रोत और संचालक होता है। राष्ट्रपति केवल संवैधानिक प्रधान होता है, जबकि प्रशासन के समस्त सूत्र प्रधानमंत्री के हाथों में निहित होते हैं।

प्रधानमंत्री के कार्यों और उसकी शक्ति से स्पष्ट है कि भारत के प्रशासन में प्रधानमंत्री की स्थिति वहीं है, जो इंग्लैंड के शासन में प्रधानमंत्री की है। वह शासन–चक्र की धुरी के समान है। वह कार्यकारिणी और व्यवस्थापिका का नेतृत्व करता है किन्तु साथ ही यह भी सत्य है कि प्रधानमंत्री की स्थिति और शक्ति उसके व्यक्तित्व पर निर्भर करती है। यदि कोई साधारण प्रतिभा का व्यक्ति इस पद पर आसीन हो जाए तो उसका प्रभाव कम होगा, किन्तु पं0 जवाहरलाल नेहरू की भंति इस पद पर यदि कोई असाधारण प्रतिभा का व्यक्ति आसीन हो जाए तो उसका प्रभाव निश्चय ही सर्वव्यापी होगा।

प्रधानमंत्री की स्थिति कभी भी एक तानाशाह के समान नहीं हो सकती क्योंकि वह बहुमत प्राप्त दल का नेता होता है। यदि वह तानाशाह होने का प्रयत्न करेगा तो उसका दल किसी अन्य व्यक्ति को अपना नेता चुन लेगा। वह अपने साथियों , दल व जनमत की उपेक्षा नहीं कर सकता है। उसकी शक्ति सभी के साथ मिलकर कार्य करने से ही कायम रह सकती है। फिर भी **प्रो० लास्की** का यह कथन सत्य है– ''प्रधानमंत्री के पद का वही महत्व है जो इस पद पर आसीन व्यक्ति इसे प्रदान करना चाहता है।''

भारतीय प्रशासन में प्रधानमंत्री की स्थिति वही है जो ब्रिटिश प्रशासन में प्रधानमंत्री की है। **डॉ० जेनिंग्स** ने कहा है– ''प्रधानमंत्री केवल समान श्रेणी वालों में प्रथम नहीं है और न वह सितारों के बीच चंद्रमा की तरह है, जैसा कि हरकोर्ट कहता है, वह तो सूर्य के समान है जिसके चारों ओर ग्रह घूमते हैं।''

जितनी भी उक्तियाँ ब्रिटिश प्रधानमंत्री के लिए कही गईं हैं, वे सभी भारतीय प्रधानमंत्री के लिए भी पूर्णतया उपयुक्त हैं क्योंकि दोनों ही देशों में संसदात्मक सरकारें हैं। एक अर्थ में तो भारतीय प्रधानमंत्री ब्रिटिश प्रधानमंत्री से भी अधिक शक्तिशाली है क्योंकि भारत में ब्रिटेन की भांति कोई सुसंगठित विरोधी राजनीतिक दल नहीं है। **प्रो० के०टी० शाह** ने संविधान सभा में कहा था– ''प्रधानमंत्री की शक्तियों को देखकर मुझे ऐसा लगता है कि यदि वह चाहे तो किसी भी समय देश का तानाशाह बन सकता है।''

4. भारतीय प्रधानमंत्री के संसद और राष्ट्रपति से संबंधों का वर्णन कीजिए।

उ०– **प्रधानमंत्री के संसद से संबंध–** प्रधानमंत्री और संसद के परस्पर गहरे संबंध हैं। इनके संबंधों को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है–

(i) प्रधानमंत्री लोकसभा में बहुमत वाले दल का नेता होता है। अत: संसद को व्यवस्थित ढंग से चलवाने का कार्य वहीं करता है।

(ii) वह संसद में मंत्रियों द्वारा विधेयक प्रस्तुत करवाता है तथा उन्हें पारित करवाने में सहायक बनता है।

(iii) प्रधानमंत्री एवं उसकी मंत्रिपरिषद् लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होती है।

(iv) प्रधानमंत्री तथा उसकी मंत्रिपरिषद् तब तक ही कार्य करती है, जब तक उसे लोकसभा का विश्वास प्राप्त रहता है।

(v) प्रधानमंत्री संसद और मंत्रिपरिषद् के बीच की कड़ी का कार्य करता है।

(vi) प्रधानमंत्री लोकसभा भंग करने की सिफारिश राष्ट्रपति से कर सकता है।

(vii) प्रधानमंत्री संसद के रुख को देखकर ही नीतियों का निर्धारण करता है।

प्रधानमंत्री के राष्ट्रपति से संबंध– प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति में निम्नलिखित संबंध पाए जाते हैं–

(i) राष्ट्रपति राष्ट्र का संवैधानिक प्रधान, जबकि प्रधानमंत्री कार्यपालिका का प्रधान होता है।

(ii) प्रधानमंत्री के परामर्श को मानकर ही राष्ट्रपति अपने कार्यों का संपादन करता है।

(iii) प्रधानमंत्री के निर्णयों पर राष्ट्रपति अपनी मोहर लगाने के लिए विवश है।

(iv) प्रधानमंत्री मंत्रिपरिषद् के निर्णयों को राष्ट्रपति तक पहुँचाकर तथा राष्ट्रपति के विचारों को मंत्रिपरिषद् तक पहुँचाकर, एक कड़ी बन जाता है।

(v) राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है, जबकि प्रधानमंत्री संविधान की उपेक्षा करने पर राष्ट्रपति को, संसद में महाभियोग पारित करवाकर पद से हटवा सकता है।

(vi) राष्ट्रपति अपने व्यक्तिगत प्रभाव तथा कुशाग्र नीतियों से प्रधानमंत्री को प्रभावित कर सकता है, परंतु उसे निर्णय बदलने के लिए बाध्य नहीं कर सकता।

5. केंद्रीय मंत्रिपरिषद् की शक्तियों और कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या– के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

6. राष्ट्र के प्रशासन में प्रधानमंत्री की भूमिका का वर्णन कीजिए।

उ०– राष्ट्र के प्रशासन में प्रधानमंत्री की भूमिका निम्नलिखित है–

(i) मंत्रिपरिषद् का निर्माता– राष्ट्रपति प्रधानमंत्री को नियुक्त करता है। फिर प्रधानमंत्री की सलाह से राष्ट्रपति अन्य मंत्रियों की नियुक्ति तथा उनके विभागों का वितरण करता है। प्रधानमंत्री किसी भी मंत्री के विभाग में फेर–बदल कर सकता है।

(ii) मंत्रिपरिषद् का अध्यक्ष– प्रधानमंत्री केंद्रीय मंत्रिपरिषद् का अध्यक्ष तथा नेता होता है। वह मंत्रिपरिषद् की बैठकों में अध्यक्षता तथा उसकी कार्यवाही का संचालन करता है। मंत्रिपरिषद् के सभी निर्णय उसकी इच्छा से प्रभावित होते हैं। मंत्रिपश्रिशद यदि देश की नौका है तो प्रधानमंत्री उसका नाविक है। यदि किसी मंत्री में प्रधानमंत्री का विश्वास नहीं रहता है तो वह ऐसे मंत्री का त्यागपत्र देने के लिए बाध्य कार सकता है अन्यथा उसे राष्ट्रपति द्वारा मंत्रिपरिषद् से हटवा सकता है।

(iii) कार्यपालिका का वास्तविक प्रधान– राष्ट्रपति देश की कार्यपालिका का नाममात्र का प्रधान होता है। कार्यपालिका की वास्तविक शक्ति प्रधानमंत्री में निहित होती है। अत: अप्रत्यक्ष रूप से देश का मुख्य शासक प्रधानमंत्री होता है।

(iv) शासन का प्रमुख प्रबन्धक– देश की शासन–व्यवस्था को विभिन्न विभागों तथा मंत्रालयों में बांटना, मंत्रियों में विभागों का वितरण करना, मंत्रालयों की नीतियाँ तय करना तथा उनमें समय–समय पर अपेक्षित परिवर्तन करना आदि कार्य प्रधानमंत्री की इच्छा तथा निर्देश पर निर्भर होते हैं। इस प्रकार प्रधानमंत्री ही देश के शासन का प्रमुख प्रबंधक होता है।

(v) लोकसभा का नेता– लोकसभा में बहुमत दल का नेता होने के नाते वह लोकसभा का अधिवेशन बुलाने, कार्यक्रम निश्चित करने तथा सत्र स्थगित करने का निर्णय लेता है। वह लोकसभा में अपने मत्रिमंडल का नेतृत्व करता है तथा शासन संबंधी नीतियों की घोषण करता है। वह राष्ट्रपति को लोकसभा भंग करने का भी परामर्श दे सकता है।

(vi) राष्ट्रपति एवं मंत्रिपरिषद् तथा राष्ट्रपति एवं संसद के बीच की कड़ी– प्रधानमंत्री राष्ट्रपति और मंत्रिपरिषद् के बीच की कड़ी का कार्य करता है। वह मंत्रिमंडल की नीतियों, निर्णयों आदि की जानकारी राष्ट्रपति को देता है तथा राष्ट्रपति के निर्णयों से वह मंत्रियों को अवगत कराता है। इसी प्रकार प्रधानमंत्री राष्ट्रपति तथा संसद के बीच भी कड़ी के रूप में कार्य करता है। वह राष्ट्रपति को संसद की कार्यवाही से अवगत कराता है तथा राष्ट्रपति के सुझावों को संसद तक पहुँचाता है।

(vii) नियुक्तियाँ संबंधी अधिकार– राष्ट्रपति के द्वारा मंत्रियों, राज्यपालों, न्यायधीशों, राजदूतों, विभिन्न आयोगों, लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष एवं सदस्य आदि की नियुक्तियाँ प्रधानमंत्री के परामर्श पर की जाती हैं।

(viii) देश का प्रतिनिधित्व– प्रधानमंत्री अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में देश का प्रतिनिधित्व करता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्रधानमंत्री मंत्रीपरिषद् रूपी वृत्त-खंड की आधारशिला है। प्रधानमंत्री की तुलना सूर्य से की जा सकता है। जिसके चारों ओर ग्रह चक्कर लगाते है। **रेम्जेम्योर** के शब्दों में, ''मंत्रिमंडल राज्यरूपी जहाज का यंत्र है और प्रधानमंत्री उस यंत्र का चालक है।''

उपयुक्त विवेचना के आधार पर हम कह सकते हैं कि राष्ट्र के प्रशासन में प्रधानमंत्री मंत्रिपरिषद् का रचयिता, पार्टी का नेता और प्रशासन का सर्वेसर्वा होता है। संसदीय शासन प्रणाली में व्यवहारिक रूप से मंत्रिपरिषद् ही कार्यपालिका की प्रधान होती है और मंत्रिपरिषद् का प्रधान प्रधानमंत्री ही होता है। वह प्रशासन का प्रधान स्रोत और संचालक होता है। राष्ट्रपति केवल संवैधानिक प्रधान होता है, जबकि प्रशासन के समस्त सूत्र प्रधानमंत्री के हाथों में निहित होते हैं। डॉ० भीमराव अंबेडकर ने प्रधानमंत्री के महत्व को इन शब्दों में व्यक्त किया है, ''प्रधानमंत्री वास्तव में मंत्रिमंडल रूपी भवन के वृत्तखंड की आधारशिला होता है।'' प्रधानमंत्री की प्रतिभा तथा कार्यकुशलता पर ही समूचे राष्ट्र की प्रगति निर्भर करती है।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

21 राज्य सरकार

(विधायिका– विधानमंडल, विधानसभा, विधान-परिषद्)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 175 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 175 व 176 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. राज्य की विधानसभा का गठन किस प्रकार होता है?

उ०– विधानसभा का गठन–

(i) सदस्य संख्या– विधानसभा के सदस्यों की अधिकतम संख्या 500 तथा न्यूनतम संख्या 60 होगी। किसी राज्य की विधानसभा के सदस्यों की वास्तविक संख्या का निर्धारण वहाँ की जनसंख्या के आधार पर संसद द्वारा किया जाएगा। कुछ स्थान अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए सुरक्षित रखे जाते हैं। राज्यपाल आंग्ल भारतीय समुदाय के एक सदस्य को मनोनीत कर सकता है। उत्तर प्रदेश की विधानसभा के सदस्यों की संख्या 403 निर्धारित की गई है।

(ii) सदस्यों का निर्वाचन– विधानसभा के सदस्यों का निर्वाचन जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से वयस्क मताधिकार के आधार पर गुप्त रीति से होता है।

(iii) सदस्यों की योग्यताएँ– विधानसभा का सदस्य बनने के लिए किसी स्त्री या पुरूष में इन योग्यताओं का होना आवश्यक है– वह भारत का नागरिक हो। वह 25 वर्ष की आयु प्राप्त कर चुका हो। वह भारत सरकार या राज्य सरकार के अधीन किसी लाभ के पद पर न हो। संसद द्वारा निर्धारित अन्य सभी शर्तें पूरी करता हो तथा वह पागल, दिवालिया व विदेशी न हो।

(iv) सदस्यों का कार्यकाल– विधानसभा का कार्यकाल 5 वर्ष होता है किन्तु राज्यपाल इस अवधि से पूर्व भी विधानसभा को भंग कराकर पुन: नए चुनाव करा सकता है। संकटकाल में विधानसभा की अवधि संसद द्वारा एक बार में एक वर्ष के लिए बढ़ाई जा सकती है।

(v) पदाधिकारी– विधानसभा के सदस्य अपने में से एक अध्यक्ष तथा एक उपाध्यक्ष का चुनाव करते हैं। अध्यक्ष का कार्य सदन की बैठक में अध्यक्षता करना तथा कार्यवाही का संचालन करना है। अध्यक्ष की अनुपस्थिति में यही कार्य उपाध्यक्ष करता है।

2. अपने राज्य की विधान–परिषद् के गठन पर प्रकाश डालिए।

उ०– **(i) सदस्य संख्या–** विधान-परिषद् के सदस्यों की संख्या कम से कम 40 तथा अधिक से अधिक विधानसभा के सदस्यों की संख्या का 1/3 हो सकती है। उत्तर प्रदेश विधानसभा सदस्यों की संख्या–100 है।

(ii) सदस्यों का निर्वाचन एवं मनोनयन– विधान–परिषद् के सदस्यों का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से जनता नहीं करती बल्कि इसके सदस्यों का चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से जनता के प्रतिनिधियों द्वारा इस प्रकार होता है– परिषद् के समस्त सदस्यों का 1/3 भाग राज्य की स्थानीय निकायों द्वारा, 1/3 भाग राज्य की विधान सभा द्वारा, 1/12 भाग स्नातकों द्वारा तथा 1/12 भाग शिक्षकों द्वारा किया जाता है। शेष 1/6 सदस्यों को राज्यपाल मनोनीत करता है। ये ऐसे व्यक्ति होते है। जिन्हें साहित्य, कला, विज्ञान और समाज सेवा के क्षेत्र में विशेष ज्ञान प्राप्त होता है।

(iii) सदस्यों की योग्यताएँ– विधान–परिषद् का सदस्य बनने के लिए किसी व्यक्ति में निम्न योग्यताओं का होना अनिवार्य है– वह भारत का नागरिक हो। उसकी आयु 30 वर्ष से कम न हो। वह किसी सरकारी लाभ के पद पर न हो। वह संसद द्वारा निर्धारित अन्य शर्तें पूर्ण करता हो।

(iv) सदस्यों का कार्यकाल– विधान–परिषद् एक स्थाई सदन होता है तथा वह कभी भंग या समाप्त नहीं होता। किन्तु इसके 1/3 सदस्यों का कार्यकाल प्रति दो वर्ष बाद समाप्त हो जाता है और उनके स्थान पर उतने ही नए सदस्य निर्वाचित कर लिए जाते हैं। इस प्रकार एक सदस्य अपने पद पर 6 वर्ष तक रहता है।

(v) पदाधिकारी– विधान–परिषद् के दो पदाधिकारी होते हैं– सभापति तथा उपसभापति। दोनों का निर्वाचन विधान–परिषद् के सदस्य अपने में से करते हैं। सभापति का कार्य सदन की बैठक में अध्यक्षता करना तथा कार्यवाही का संचालन करना होता है। सभापति की अनुपस्थिति में इन्हीं कार्यों का संपादन उपसभापति करता है।

3. विधानसभा के अध्यक्ष का निर्वाचन कैसे होता है? उसके कोई चार कार्य लिखिए।

उ०– **विधानसभा के अध्यक्ष का निर्वाचन–** विधानसभा के अध्यक्ष का निर्वाचन विधानसभा के सदस्य अपने ही बीच में से चुनकर करते हैं।

विधानसभा के अध्यक्ष के कार्य– विधानसभा के अध्यक्ष के चार कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) अध्यक्ष विधानसभा की बैठकों की अध्यक्षता करता है।

(ii) अध्यक्ष विधानसभा की कार्यवाही को व्यस्थित रूप से संचालित करता है।

(iii) अध्यक्ष विधानसभा में शांति और सुरक्षा बनाए रखता है।

(iv) सदन में अव्यवस्था और अशांति की दशा में सदन को स्थगित कर सकता है।

4. विधान–परिषद् की दो वित्तीय शक्तियों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

उ०– विधान–परिषद् की दो वित्तीय शक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) विधान–परिषद् विधान सभा द्वारा पारित विधेयकों पर विचार कर उन्हें पारित करती है।

(ii) विधान–परिषद साधारण विधेयक को अस्वीकार का सकती है और उसमें संशोधन कर सकती है।

5. राज्य विधानसभा की कार्यपालिका संबंधी शक्तियों का वर्णन कीजिए।

उ०– विधानसभा की कार्यपालिका संबंधी शक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) राज्य की मंत्रिपरिषद् विधानसभा के प्रति उत्तरदायी होती है।

(ii) विधानसभा राज्य की मंत्रिपरिषद् के विरूद्ध अविश्वास का प्रस्ताव करके उसे हटा सकती है।

(iii) विधानसभा के सभी सदस्य मंत्रियों से प्रश्न पूछने तथा उनकी आलोचना करने का अधिकार रखते हैं।

6. विधानसभा के सदस्य की अर्हताएँ बताइए।

उ०– उत्तर के लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

7. विधान-परिषद् के सदस्यों को चुनने वाले निर्वाचक मंडलों का परिचय दीजिए।

उ०– विधान-परिषद् के सदस्यों का चुनाव निम्नलिखित निर्वाचक मंडलों द्वारा किया जाता है–

(i) स्थानीय निकायों का निर्वाचक मंडल– विधान–परिषद् के एक तिहाई सदस्य जिला पंचायतों, नगर निगमों, नगरपालिका परिषदों, नगर पंचायतों आदि स्थानीय निकायों की संस्थाओं के सदस्यों द्वारा बने निर्वाचक मंडल द्वारा चुने जाते हैं।

(ii) विधानसभा सदस्यों का निर्वाचक मंडल– विधान-परिषद् के एक तिहाई सदस्य उस राज्य की विधान-सभाओं के सदस्यों द्वारा उन व्यक्तियों में से चुने जाते हैं, जो विधानसभा के सदस्य न हों।

(iii) स्नातकों का निर्वाचक मंडल– विधान–परिषद् के 1/12 सदस्यों का चुनाव उस राज्य के उन स्नातकों द्वारा किया जाता है, जो तीन वर्ष पूर्व स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण कर चुकें हों तथा उनका नाम मतदाता सूची में अंकित हो।

(iv) अध्यापकों का निर्वाचक मंडल– विधान–परिषद् के सदस्यों का बारहवाँ भाग माध्यमिक अध्यापकों के निर्वाचक मंडल द्वारा चुना जाता है। इसमें बाध्यता यह है कि अध्यापक माध्यमिक विद्यालय में कम से कम तीन वर्ष से शिक्षण कार्य कर रहा हो।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. अपने राज्य की विधानसभा के संगठन पर प्रकाश डालिए।

उ०– उत्तर प्रदेश की विधानसभा के संगठन–

(i) संख्या– उत्तर प्रदेश में विधानसभा के सदस्यों की संख्या 403 है। आंग्ल-भारतीय समुदाय का एक सदस्य निर्वाचित न हो पाने की दशा में, राज्यपाल इस समुदाय के एक सदस्य को मनोनीत करता है। अत: यह संख्या 404 तक हो सकती है।

(ii) सदस्यों का निर्वाचन– विधानसभा के सदस्यों का चुनाव राज्य के वयस्क मतदाताओं द्वारा प्रत्यक्ष, गुप्त एवं निष्पक्ष मतदान करके किया जाता है। इनके चुनाव भारतीय चुनाव आयोग द्वारा संपन्न कराए जाते हैं। राज्य के 18 वर्ष से अधिक आयु के सभी वे नागरिक, जिनका नाम मतदाता सूची में अंकित होता है, मतदान करके विधायकों का चुनाव करते हैं। यदि निर्वाचन या चुनाव के बाद विधानसभा के किसी भी राजनीतिक दल को स्पष्ट बहुमत नहीं मिलता है, तो उसे 'त्रिशंकु विधानसभा' कहा जाता है।

विधानसभा के सदस्य की योग्यताएँ– विधानसभा का सदस्य बनने के लिए प्रत्याशी में निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए–

(i) वह भारत का नागरिक हो।

(ii) उसकी आयु 25 वर्ष से अधिक हो।

(iii) वह राज्य सरकार या केंद्र सरकार के अधीन किसी लाभ के पद पर कार्यरत न हो।

(iv) वह पागल या दिवालिया घोषित न किया गया हो।

(v) वह संसद या विधानमंडल द्वारा निर्धारित समस्त योग्यताएँ रखता हो।

कार्यकाल एवं आरक्षण– जम्मू-कश्मीर (जिसकी विधानसभा का कार्यकाल 6 वर्ष है।) को छोड़कर अन्य सभी राज्यों की विधानसभा के सदस्यों का कार्यकाल सामान्यत: 5 वर्ष होता है, परंतु समय से पूर्व विधानसभा भंग हो जाने पर या स्वयं त्यागपत्र दे देने पर यह अवधि अनिश्चित हो जाती है। विधानसभा में राज्य की अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित कर दिए गए हैं। एक स्थान आंग्ल भारतीय समुदाय के लिए भी सुरक्षित है।

पदाधिकारी– अध्यक्ष और उपाध्यक्ष विधानसभा के दो पदाधिकारी होते हैं, जिनका चुनाव विधानसभा के सदस्य अपने ही बीच में से चुनकर करते हैं। अध्यक्ष विधानसभा की बैठकों की अध्यक्षता करते हुए उसकी कार्यवाही को व्यवस्थित रूप से संचालित करता है तथा सदन में शांति और सुरक्षा बनाए रखता है। उसकी अनुपस्थिति में यह कार्य उपाध्यक्ष द्वारा संपन्न किया जाता है। उपाध्यक्ष के भी अनुपस्थित होने पर यह कार्य अनुभवी तथा वरिष्ठतम सदस्य को कुछ समय के लिए अस्थायी अध्यक्ष बनाकर किया जा सकता है। अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष स्वयं त्यागपत्र देकर पद त्याग सकते हैं अथवा उन्हें हटाने के लिए 14 दिन पूर्व हटाने का प्रस्ताव प्रस्तुत कर सदन में उसे पारित कराकर हटाया जा सकता है। विधानसभा का विघटन हो जाने पर एक नई विधानसभा के सत्र के प्रथम दिन भी वही अध्यक्ष कार्य करेगा।

2. विधानसभा की शक्तियों और कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– विधानसभा की शक्तियाँ (अधिकार) और कार्य– विधानसभा को भारतीय संविधान ने विस्तृत अधिकार प्रदान किए हैं, जिसके अनुरूप वह निम्नलिखित कार्यों का संपादन करती है–

(i) विधायी शक्तियाँ– विधानसभा को निम्नलिखित विधायी शक्तियाँ प्राप्त हैं–

(क) विधानसभा राज्य सूची के सभी विषयों पर कानून पारित करती है।

(ख) उसे समवर्ती सूची के विषयों पर भी कानून बनाने का अधिकार है।

(ग) वह प्रस्तावित संविधान संशोधन का अनुमोदन करती है।

(घ) विधानसभा में साधारण तथा वित्तीय दोनों विधेयक प्रस्तुत किए जाते हैं।

(ii) कार्यपालिका संबंधी शक्तियाँ– विधानसभा की कार्यपालिका संबंधी शक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

(क) राज्य की मंत्रिपरिषद् विधानसभा के प्रति उत्तरदायी होती है।

(ख) विधानसभा राज्य की मंत्रिपरिषद् के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित करके उसे हटा सकती है।

(ग) विधानसभा के सभी सदस्य मंत्रियों से प्रश्न पूछने तथा उनकी आलोचना करने का अधिकार रखते हैं।

(iii) वित्तीय शक्तियाँ– विधानसभा को वित्तीय क्षेत्र में निम्नलिखित शक्तियाँ प्राप्त हैं–

(क) विधानसभा राज्य के कोष पर पूरा नियंत्रण बनाए रखती है।

(ख) विधानसभा में ही राज्य का वार्षिक बजट पारित किया जाता है।

(ग) यह सरकार को कर लगाने तथा राजकोष से धन व्यय करने की अनुमति देती है।

(iv) अन्य शक्तियाँ– विधानसभा को निम्नलिखित विविध शक्तियाँ भी प्राप्त हैं–

(क) विधानसभा के निर्वाचित सदस्य राष्ट्रपति के चुनाव में मतदान करते हैं।

(ख) विधानसभा के सदस्य विधान-परिषद् के 1/3 सदस्यों का चुनाव करते हैं।

(ग) विधानसभा राज्य में विधान-परिषद् की स्थापना अथवा उसकी समाप्ति का प्रस्ताव पारित कर सकती है।

(घ) संविधान संशोधन में देश के कम से कम आधे राज्यों की विधानसभाओं की स्वीकृति लेनी आवश्यक होती है।

3. विधान-परिषद् से आप क्या समझते हैं? इसके संगठन का वर्णन कीजिए।

उ०– **विधान-परिषद्–** विधान-परिषद् राज्य विधानमंडल का द्वितीय और उच्च सदन है। यह एक स्थायी सदन है, अर्थात् यह कभी भंग नहीं होता। इसके एक तिहाई सदस्य प्रति दो वर्ष पश्चात सेवानिवृत हो जाते हैं तथा उनके स्थान पर नए सदस्य निर्वाचित हो जाते हैं। **उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, तेलगांना, कर्नाटक, महाराष्ट्र, बिहार और जम्मू–कश्मीर** सहित 7 राज्यों में ही विधान-परिषद् है। विधान-परिषद् के सदस्यों की संख्या विधानसभा के सदस्यों से एक तिहाई से अधिक नहीं हो सकती। किंतु किसी भी स्थिति में इसकी सदस्य संख्या 40 से कम नहीं होगी। मात्र जम्मू-कश्मीर राज्य इसका अपवाद है। वहाँ विधान-परिषद् के सदस्यों की संख्या 36 है। विधान-परिषद् के सदस्यों को एम.एल.सी. कहा जाता है, जिनका कार्यकाल 6 वर्ष होता है।

विधान–परिषद् का संगठन या रचना– विधान-परिषद् के संगठन एवं उसके सदस्यों के निर्वाचन की प्रक्रिया विधानसभा के सदस्यों के निर्वाचन से सर्वथा भिन्न है। विधान-परिषद् के 5/6 सदस्यों का चुनाव, **आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति** से **एकल संक्रमणीय मत पद्धति** द्वारा किया जाता है।

निर्वाचक मंडल– विधान-परिषद् के सदस्यों का चुनाव निम्नलिखित निर्वाचक मंडलों द्वारा किया जाता है–

(i) स्थानीय निकायों का निर्वाचक मंडल– विधान-परिषद् के एक तिहाई सदस्य जिला पंचायतों, नगर निगमों, नगरपालिका परिषदों, नगर पंचायतों आदि स्थानीय निकायों की संस्थाओं के सदस्यों द्वारा बने निर्वाचक मंडल द्वारा चुने जाते हैं।

(ii) विधानसभा सदस्यों का निर्वाचक मंडल– विधान-परिषद् के एक तिहाई सदस्य उस राज्य की विधान-सभाओं के सदस्यों द्वारा उन व्यक्तियों में से चुने जाते हैं, जो विधानसभा के सदस्य न हों।

(iii) स्नातकों का निर्वाचक मंडल– विधान–परिषद् के 1/12 सदस्यों का चुनाव उस राज्य के उन स्नातकों द्वारा किया जाता है, जो तीन वर्ष पूर्व स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण कर चुकें हों तथा उनका नाम मतदाता सूची में अंकित हो।

(iv) अध्यापकों का निर्वाचक मंडल– विधान-परिषद् के सदस्यों का बारहवाँ भाग माध्यमिक अध्यापकों के निर्वाचक मंडल द्वारा चुना जाता है। इसमें बाध्यता यह है कि अध्यापक माध्यमिक विद्यालय में कम से कम तीन वर्ष से शिक्षण कार्य कर रहा हो।

राज्यपाल द्वारा मनोनयन– विधान-परिषद् के 1/6 सदस्य राज्यपाल द्वारा मनोनीत किए जाते हैं। राज्यपाल महोदय साहित्य, विज्ञान, कला, सहकारी आंदोलन या समाजसेवा के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्यों से जुड़े लोगों का मनोनयन करते हैं।

विधान–परिषद् के सदस्यों की योग्यताएँ– विधान–परिषद् का सदस्य (एम.एल.सी.) बनने के लिए प्रत्याशी में निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए–

(i) वह भारत का नागरिक हो।

(ii) वह 30 वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो।

(iii) वह पागल या दिवालिया घोषित न किया गया हो।

(iv) वह केंद्र या राज्य सरकार के अंतर्गत लाभ के पद पर कार्यरत न हो।

(v) वह संसद द्वारा निर्धारित योग्यताएँ रखता हो।

मनोनीत किया जाने वाला सदस्य उसी राज्य का निवासी होना चाहिए, जिस राज्य की विधान–परिषद् में उसे मनोनीत किया गया है।

विधान-परिषद् के पदाधिकारी– सभापति तथा उपसभापति विधान-परिषद् के दो पदाधिकारी हैं, जिनका चुनाव विधान-परिषद् के सदस्यों द्वारा अपने ही बीच के सदस्यों में से किया जाता है। सभापति विधान-परिषद् की बैठकों की अध्यक्षता करता है, जबकि उसकी अनुपस्थिति में यह कार्य उपसभापति करता है। दोनों के अनुपस्थित होने पर अस्थायी सभापति चुन लिया जाता है।

विधान-परिषद् का अधिवेशन– विधान-परिषद् के एक वर्ष में दो अधिवेशन होने आवश्यक हैं। दोनों अधिवेशनों के मध्य 6 माह से अधिक का अंतराल नहीं होना चाहिए।

4. विधान-परिषद् की शक्तियों और कार्यों पर प्रकाश डालिए।

उ०– **विधान-परिषद् की शक्तियाँ (अधिकार) और कार्य–** विधान-परिषद् अपनी शक्तियों के आधार पर निम्नलिखित कार्यों का संपादन करती है–

(i) विधायी शक्तियाँ– विधान-परिषद् को निम्नलिखित विधायी शक्तियाँ प्राप्त हैं–

(क) विधान-परिषद् विधानसभा द्वारा पारित विधेयकों पर विचार कर उन्हें पारित करती है।

(ख) विधान-परिषद् साधारण विधेयक को अस्वीकार कर सकती है और उसमें संशोधन कर सकती है।

(ग) साधारण विधेयक को वह तीन माह तक रोके रख सकती है।

(ii) कार्यपालिका शक्तियाँ– विधान-परिषद् को कार्यपालिका से संबंधित निम्नलिखित शक्तियाँ प्राप्त हैं–

(क) विधान-परिषद् का राज्य की मंत्रिपरिषद् पर आंशिक नियंत्रण होता है।

(ख) विधान-परिषद् के सदस्य मंत्रिपरिषद् के सदस्यों से प्रश्न तथा पूरक प्रश्न पूछकर उनके कार्यों की आलोचना करते हैं।

(ग) विधान-परिषद् के सदस्य वाद–विवाद करके मंत्रिपरिषद पर नियंत्रण बनाए रखते हैं।
विधान-परिषद् अविश्वास प्रस्ताव पारित करके मंत्रिपरिषद को पद त्याग कराने का अधिकार नहीं रखती।

(iii) वित्तीय शक्तियाँ– विधान-परिषद् को वित्त के क्षेत्र में निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं–

(क) विधान-परिषद् वित्त विधेयक को अपने पास मात्र 14 दिन तक ही रोककर रख सकती है।

(ख) विधान-परिषद् वित्त विधेयक में आवश्यक संशोधन कर सकती है, परंतु उसे मानना या न मानना विधानसभा की इच्छा पर निर्भर करता है। स्पष्ट है कि विधान-परिषद् के पास वित्तिय शक्तियाँ नहीं के बराबर हैं।

(iv) अन्य शक्तियाँ– विधान-परिषद् को कुछ अन्य निम्नलिखित शक्तियाँ भी प्राप्त हैं–

(क) विधान-परिषद् संविधान के कुछ उपबंधों में संशोधनों की पुष्टि करती है।

(ख) विधान-परिषद् किसी भी विधेयक को दोहराने की भूमिका निभाती है।

विधान-परिषद् का महत्व– विधान-परिषद् के अधिकार, शक्तियों एवं कार्यों का विश्लेषण करके उसके महत्व को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है–

(i) विधान-परिषद् साधारण विधेयकों पर अपने संशोधनों तथा महत्वपूर्ण विचारों के द्वारा उसे उपयोगी बनाकर पारित कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

(ii) विधान-परिषद् के गठन की प्रक्रिया से समाज के विविध वर्गों के साथ-साथ अल्पसंख्यकों को भी भागीदारी प्राप्त हो जाती है।

(iii) राज्यपाल महोदय 12 विद्वानों और कलाकारों का मनोनयन करके योग्य व्यक्तियों की सेवाओं का लाभ उपलब्ध करा देते है।

(iv) विधान–परिषद् में चुनकर तथा मनोनीत होकर योग्य व्यक्ति पहुँचते हैं, अत: विविध विषयों पर उपयोगी और सार्थक वाद–विवाद होता है जिसका लाभ समूचे राज्य को प्राप्त होता है।

5. विधानमंडल की विधि निर्माण प्रक्रिया को समझाइए।

उ०– **विधानमंडल में कानून निर्माण की प्रक्रिया–** राज्य विधानमंडल में कानून निर्माण की प्रक्रिया निम्नलिखित है–

(i) साधारण विधेयक पारित होने की प्रक्रिया– साधारण विधेयक दोनों में से किसी भी सदन में प्रस्तुत किए जा सकते हैं। किसी मंत्री द्वारा प्रस्तुत विधेयक 'सरकारी विधेयक' जबकि अन्य सदस्य द्वारा प्रस्तुत 'व्यक्तिगत विधेयक' कहलाता है। साधारण विधेयक को पारित होने के लिए निम्न प्रक्रियाओं से होकर गुजरना पड़ता हैं।

(क) प्रथम वाचन– सरकारी विधेयक अध्यक्ष की अनुमति से कभी भी प्रस्तुत किए जा सकते हैं, जबकि व्यक्तिगत विधेयक लाने के लिए 30 दिन पूर्व सूचना देना आवश्यक होता है। निश्चित तिथि पर विधेयक सदन में प्रस्तुत किया जाता है। विधेयक प्रस्तुत करने वाला, सदन से विधेयक प्रस्तुत करने की आज्ञा माँगता है। आज्ञा मिल जाने पर विधेयक का शीर्षक पढ़ा जाता है, यदि आवश्यक हो तो वह सदन में भाषण भी देता है। विपक्षी दल के सदस्य विधेयक की आलोचना करते हैं। इसे विधेयक का 'प्रथम वाचन' कहा जाता है। इसके पश्चात् विधेयक को सरकारी गजट में प्रकाशित करा दिया जाता है।

(ख) द्वितीय वाचन– द्वितीय वाचन के समय विधेयक की प्रतियाँ सदन में वितरित कर दी जाती हैं। निश्चित तिथि पर प्रस्तावक निम्न में से कोई एक प्रस्ताव रख देता है–

(अ) विधेयक पर तुरंत विचार किया जाए।

(ब) विधेयक प्रवर समिति को सौंप दिया जाए।

(स) विधेयक को दोनों सदनों की संयुक्त प्रवर समिति के पास भिजवा दिया जाए।

प्रवर समिति में 15 से 30 तक सदस्य होते हैं। प्रस्तावक भी उस समिति का सदस्य होता है। समिति विधेयक की प्रत्येक धारा पर गहन विचार कर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर देती है। समिति द्वारा सदन को भेजी गई रिपोर्ट पर सदन में बहस होती है। समिति द्वारा सुझाए गए सुझावों पर मतदान कराया जाता है, विधेयक पर विशेषज्ञों की सलाह ली जाती है। मतभेद वाली धाराओं को निकाल दिया जाता हैं। अंत में द्वितीय वाचन की प्रक्रिया पूरी मान ली जाती है।

(ग) तृतीय वाचन– तृतीय वाचन में विधेयक के सिद्धांतों पर वाद–विवाद होता है, तथा भाषा में आवश्यक सुधार किए जाते हैं। इस प्रक्रिया में विधेयक को स्वीकार या अस्वीकार किया जाता है। विधेयक पारित हो जाने पर उसे द्वितीय सदन को भेज दिया जाता है।

(घ) विधान–परिषद् में विधेयक के पारित होने की प्रक्रिया– जिन राज्यों में विधान-परिषद् नहीं है, वहाँ विधानसभा ही विधेयक पारित कर देती है। जिन राज्यों में द्वितीय सदन है, विधानसभा से पारित विधेयक वहाँ भेजा जाता है। विधान-परिषद् विधेयक पर विचार करने की प्रक्रिया पूरी कर, उसे पारित करके विधानसभा को लौटा देती है।

(ङ) राज्यपाल की स्वीकृति– दोनों सदनों से पारित विधेयक राज्यपाल महोदय की स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है। यदि राज्यपाल विधेयक को अपने सुझावों सहित विधानसभा को लौटा देते हैं ,तब विधानसभा उनके सुझावों को मानने या न मानने के लिए स्वतंत्र है। इस बार राज्यपाल को उसे स्वीकृति देना अनिवार्य हो जाता है। राज्यपाल के हस्ताक्षर हो जाने पर कानून बनने की प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है।

(ii) वित्त विधेयक पारित होने की प्रक्रिया– साधारण विधेयक सामान्य विषयों से संबंधित तथा वित्त विधेयक धन से संबंधित होता है। संविधान के अनुच्छेद 199 में वित्त विधेयक को निम्नवत् परिभाषित किया गया है। धन विधेयक वे होते हैं, जिनमें–

(क) किसी कर को लगाने, संशोधित करने या समाप्त करने;

(ख) राज्य द्वारा उधार लेने, अनुग्रह प्रदान करने या अन्य किसी आर्थिक जिम्मेदारी को पूर्ण करने;

(ग) राज्य की संचित निधि या आकस्मिक निधि से धन का विनियोग करने का प्रयास किया जाता है।

यदि किसी विधेयक पर यह विवाद हो जाए कि वह वित्त विधेयक है या नहीं, इस संदर्भ में विधानसभा के अध्यक्ष का निर्णय ही अंतिम माना जाता है।

वित्त विधेयक विधानसभा में प्रस्तुत किया जाता है। यह सदन विधिवत् उसे पारित करता है। पारित विधेयक विधान-परिषद् के पास भेजा जाता है, जो उस पर मात्र 14 दिन तक विचार कर सकती है, 14 दिन की अवधि बीत जाने पर विधेयक पारित मान लिया जाता है। यदि विधान-परिषद् द्वारा विधेयक में कुछ संशोधन करके विधानसभा को लौटाया जाता है, तब विधानसभा उन्हें मानने के लिए बाध्य नहीं है। दोनों सदनों से पारित वित्त विधेयक राज्यपाल की स्वीकृति के लिए भेजा जाता है। उनके हस्ताक्षर होते ही यह कानून बन जाता है।

6. विधानसभा और विधान-परिषद् की तुलना कीजिए।

उ०– विधानसभा और विधान-परिषद् की तुलना–

विधानसभा	**विधान-परिषद्**
1. विधानसभा राज्य की समस्त जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती है।	1. विधान-परिषद् विविध पेशे के लोगों तथा अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधित्व करती है।
2. विधानसभा में 60 से 500 तक सदस्य हो सकते हैं।	2. विधान-परिषद् में कम से कम 40 और अधिकतम विधानसभा के सदस्यों के मात्र एक तिहाई सदस्य हो सकते हैं।
3. विधानसभा का सदस्य बनने की आयु सीमा 25 वर्ष से अधिक है।	3. विधान-परिषद् का सदस्य बनने के लिए आयु सीमा 30 वर्ष से अधिक है।
4. विधानसभा के सदस्यों का कार्यकाल 5 वर्ष है।	4. विधान-परिषद् के सदस्यों का कार्यकाल 6 वर्ष है।
5. विधानसभा के दो अधिकारी अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष होते हैं।	5. विधान-परिषद् के दो अधिकारी सभापति तथा उपसभापति होते हैं।
6. राज्य की मंत्रिपरिषद् विधानसभा के प्रति उत्तरदायी होती है। यह उसके विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पारित कर, उसे हटा सकती है।	6. मंत्रिपरिषद विधान-परिषद् के प्रति उत्तरदायी नहीं होती। इसके सदस्य मंत्रियों से प्रश्न पूछकर मात्र उनके कार्यों की आलोचना ही कर सकते हैं।
7. साधारण विधेयक विधानसभा में प्रस्तुत किए जा सकते हैं।	7. साधारण विधेयक विधान-परिषद् में भी प्रस्तुत किए जा सकते हैं।
8. साधारण विधेयक विधानसभा द्वारा पारित होने आवश्यक हैं।	8. विधान-परिषद् साधारण विधेयक को तीन माह तक रोक सकती है, अधिक अवधि होने पर उसे पारित मान लिया जाता है।
9. वित्त विधेयक केवल विधानसभा में ही प्रस्तुत किए जा सकते हैं। वह उन्हें पारित करके विधान–परिषद् के पास भेजती है।	9. विधान-परिषद् वित्त विधेयक को मात्र 14 दिन विचारार्थ रोक सकती है। उसके बाद उसे पारित मान लिया जाता है। उसके संशोधन और सुझावों को मानने के लिए विधानसभा बाध्य नहीं है।
10. राष्ट्रपति के चुनाव में विधानसभा के निर्वाचित सदस्य भाग लेते हैं।	10. राष्ट्रपति के चुनाव में विधान-परिषद् के सदस्यों को भाग लेने का अधिकार नहीं हैं।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि, ''विधानसभा की अपेक्षा विधान–परिषद् की शक्तियाँ भले ही कम हों परंतु उसकी उपयोगिता और महत्व कम नहीं है।''

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

22 राज्य की कार्यपालिका
(राजपाल और मंत्रिपरिषद्)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-184 व 185 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-185 व 186 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. राज्यपाल की नियुक्ति किसके द्वारा की जाती है? इस पद के लिए कौन-कौन सी योग्यताएँ होनी चाहिए?

उ०– **राज्यपाल की नियुक्ति–** भारतीय संविधान के अनुच्छेद 155 के अनुसार प्रत्येक राज्य में राज्यपाल की नियुक्त राष्ट्रपति द्वारा की जाती है।

राज्यपाल पद के लिए आवश्यक योग्यताएँ– संविधान के अनुच्छेद 157 में राज्यपाल बनने वाले व्यक्ति में निम्नलिखित योग्यताएँ होना आवश्यक है–

(i) वह भारत का नागरिक हो।
(ii) उसकी आयु 35 वर्ष से अधिक हो।
(iii) वह विधानमंडल या संसद का सदस्य न हो।
(iv) वह सरकार के अधीन किसी लाभ के पद पर न हो।
(v) वह किसी न्यायालय द्वारा दिवालिया घोषित न किया गया हो।

राज्यपाल को पद सँभालने से पूर्व कर्तव्यनिष्ठा और गोपनीयता की शपथ ग्रहण करनी पड़ती है।

2. राज्य प्रशासन में राज्यपाल का क्या महत्व है?

उ०– राज्य प्रशासन में राज्यपाल का महत्व निम्न प्रकार है–

(i) राज्यपाल ही मंत्रिपरिषद् का संवैधानिक प्रधान होता है। अत: राज्य के संपूर्ण शासन संबंधी कार्य उसी के नाम से संचालित किए जाते हैं।
(ii) राज्यपाल मुख्यमंत्री की नियुक्ति करता है, मुख्यमंत्री की सलाह से अन्य मंत्रियों की नियुक्ति करता है तथा उनके कार्यों का विभाजन करता है।
(iii) राज्यपाल मुख्यमंत्री से शासन संबंधी कोई भी सूचना माँग सकता है।
(iv) राज्यपाल मुख्यमंत्री के परामर्श से विधानसभा को भंग करके नए चुनाव कराने की सिफारिश कर सकता है।
(v) राज्य का शासन सुचारू रूप से न चलने पर राज्यपाल राष्ट्रपति को अपनी रिपोर्ट भेजकर राज्य में राष्ट्रपति शासन के लागू किए जाने की सिफारिश कर सकता है।
(vi) राज्यपाल साधारण और वित्त विधेयकों को अपनी स्वीकृति देकर कानून का रूप देता है।

3. राज्य मंत्रिपरिषद् के सामूहिक उत्तरदायित्व से आप क्या समझते हैं?

उ०– राज्य मंत्रिपरिषद् के सभी विधानसभा के प्रति उत्तरदायी होते है। एक मंत्री के कार्यों, भूलों तथा त्रुटियों के लिए संपूर्ण मंत्रिपरिषद् उत्तरदायी होती है। इसे सामूहिक उत्तरदायित्व कहा जाता है।

4. राज्यपाल की प्रमुख शक्तियाँ लिखिए।

उ०– राज्यपाल की प्रमुख शक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) कार्यपालिका संबंधी शक्तियाँ
(ii) विधायी शक्तियाँ
(iii) वित्तीय शक्तियाँ
(iv) न्यायिक शक्तियाँ

5. मुख्यमंत्री की नियुक्ति किसके द्वारा की जाती है? राज्य प्रशासन में उसकी भूमिका की व्याख्या कीजिए।

उ०– मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्यपाल के द्वारा की जाती है। केंद्र प्रशासन में जो महत्व प्रधानमंत्री का होता है, राज्य प्रशासन में वही महत्व मुख्यमंत्री का होता है। मुख्यमंत्री राज्य मंत्रिपरिषद् की बैठकों की अध्यक्षता एवं उसकी कार्यवाही का संचालन करता है। मुख्यमंत्री की इच्छानुसार ही राज्यपाल मंत्रियों की नियुक्ति तथा उनके विभागों का पितरण करता है। वह राज्यपाल और मंत्रिपरिषद् तथा विधानमण्डन एवं मंत्रिपरिषद् के बीच सम्पर्क बनाए रखने वाली एक कड़ी का कार्य करता है। मुख्यमंत्री राज्य प्रशासन का केंद्र बिन्दु होता है, पूरा प्रशासन चक्र उसी के चारों ओर घूमता है।

6. राज्यपाल तथा मुख्यमंत्री के परस्पर संबंध पर टिप्पणी लिखिए।

उ०– **मुख्यमंत्री तथा राज्यपाल के मध्य संबंध–** राज्य प्रशासन की दो ही महत्वपूर्ण कड़ियाँ हैं– पहली मुख्यमंत्री तथा दूसरी राज्यपाल। दोनों के संबंध एक–दूसरे को संपूर्ण बनाते हैं। इनके संबंधों को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है–

(i) मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्यपाल स्वविवेक से करता है।

(ii) मुख्यमंत्री मंत्रिपरिषद् के अन्य सदस्यों की नियुक्ति तथा मंत्रालयों का बँटवारा राज्यपाल से कराता है।

(iii) राज्यपाल राज्य के महाधिवक्ता, राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष व सदस्यों तथा विश्वविद्यालयों के उपकुलपतियों की नियुक्तियाँ मुख्यमंत्री की सलाह से ही करता है।

(iv) मुख्यमंत्री राज्य का संपूर्ण प्रशासन राज्यपाल के माध्यम से चलाता है।

(v) राज्यपाल सभी कार्य मंत्रिपरिषद् (मुख्यमंत्री) की सलाह से ही संपन्न करने को बाध्य होता है।

(vi) राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू होने पर राज्यपाल राज्य का वास्तविक प्रशासक बन जाता है।

7. राज्यपाल की न्यायिक शक्तियों का उल्लेख कीजिए।

उ०– राज्यपाल को न्याय के क्षेत्र में निम्नलिखित शक्तियाँ प्राप्त हैं–

(i) राज्यपाल उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति में राष्ट्रपति को परामर्श देता है।

(ii) जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति तथा उन्हें पदोन्नति देने का अधिकार राज्यपाल को ही है।

(iii) राज्यपाल उस अपराधी की सजा को माफ कर सकता है, घटा सकता है या स्थगित कर सकता है, जिसे राज्य के कानून का उल्लंघन करने पर दंडित किया गया हो।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. राज्यपाल की शक्तियों का विस्तार से उल्लेख कीजिए।

उ०– **राज्यपाल की शक्तियाँ (अधिकार) और कार्य–** राज्यपाल को राष्ट्रपति ने निम्नलिखित शक्तियाँ प्रदान की हैं, जिनके आधार पर वह निम्नलिखित कार्य करता है–

(i) कार्यपालिका संबंधी शक्तियाँ– राज्यपाल की कार्यपालिका संबंधी शक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

(क) राज्य का समस्त प्रशासनिक कार्य राज्यपाल के नाम पर संपन्न होता है।

(ख) राज्यपाल राज्य के मुख्यमंत्री की नियुक्ति करता है।

(ग) वह मुख्यमंत्री की सलाह से मंत्रियों की नियुक्ति करता है, तथा उन्हें उनके पद से हटाता है।

(घ) राज्यपाल राज्य के महाधिवक्ता, लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा अन्य उच्च पदाधिकारियों आदि को नियुक्त करता है।

(ङ) वह उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति में राष्ट्रपति को परामर्श देता है।

(च) राज्यपाल मंत्रिपरिषद् के निर्णयों को पुन:विचार करने के लिए वापिस कर सकता है।

(छ) वह मुख्यमंत्री से कोई भी प्रशासनिक जानकारी प्राप्त कर सकता है।

(ज) अनुच्छेद 356 के अनुसार राज्यपाल राज्य में राष्ट्रपति शासन लगाने की राष्ट्रपति से सिफारिश कर सकता है।

(ii) विधायी शक्तियाँ– विधानमंडल का ही एक अंग होने के कारण निम्नलिखित विधायी शक्तियाँ प्राप्त हैं–

(क) राज्यपाल राज्य विधानमंडल का सत्र बुलाता है तथा उसका अवसान करता है।

(ख) वह विधानमंडल के दोनों सदनों में भाषण दे सकता है तथा उन्हें संदेश भेज सकता है।

(ग) वह मुख्यमंत्री के परामर्श से विधानसभा को भंग कर सकता है।

(घ) राज्यपाल विधानसभा के प्रथम सत्र का शुभारंभ अपने भाषण से करता है, जिसमें वह राज्य की नीतियों का विवरण देता है।

(ङ) राज्यपाल विधानसभा में एक एंग्लो इंडियन तथा विधान-परिषद् में विभिन्न वर्गों के निश्चित सदस्यों (राज्यों के अनुसार अलग-अलग) को मनोनीत करता है।

(च) राज्य विधानमंडल द्वारा पारित साधारण विधेयक या वित्त विधेयक, राज्यपाल की अनुमति मिल जाने पर ही कानून बन पाता है।

(छ) वह आवश्यकता पड़ने पर अध्यादेश भी जारी कर सकता है।

(ज) विधान-परिषद् में सभापति तथा उपसभापति का पद रिक्त होने पर, वह किसी भी सदस्य को अस्थायी सभापति बना सकता है।

(iii) वित्तीय शक्तियाँ– राज्यपाल को निम्नलिखित वित्तीय शक्तियाँ प्राप्त हैं–

(क) वित्त विधेयक विधानसभा में राज्यपाल की अनुमति से ही प्रस्तुत किया जा सकता है।

(ख) राज्य सरकार धन (अनुदान) की माँग राज्यपाल की सिफारिश पर ही कर सकती है।

(ग) सरकार के वार्षिक बजट को राज्यपाल ही वित्तमंत्री द्वारा विधानसभा में प्रस्तुत करवाता है।

(घ) राज्य की संचित निधि पर राज्यपाल का ही नियंत्रण रहता है।

(iv) न्यायिक शक्तियाँ– राज्यपाल को न्याय के क्षेत्र में निम्नलिखित शक्तियाँ प्राप्त हैं–

(क) राज्यपाल उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति में राष्ट्रपति को परामर्श देता है।

(ख) जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति तथा उन्हें पदोन्नति देने का अधिकार राज्यपाल को ही है।

(ग) राज्यपाल उस अपराधी की सजा को माफ कर सकता है, घटा सकता है या स्थगित कर सकता है, जिसे राज्य के कानून का उल्लंघन करने पर दंडित किया गया हो।

(v) अन्य शक्तियाँ– राज्यपाल को निम्नलिखित अन्य शक्तियाँ भी प्राप्त हैं–

(क) राज्यपाल राज्य में संवैधानिक संकट उत्पन्न हो जाने पर राष्ट्रपति को रिपोर्ट भेजता है।

(ख) राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू हो जाने पर राज्यपाल राष्ट्रपति के प्रतिनिधि के रूप में शासन चलाता है।

(ग) राज्यपाल अपने राज्य के विश्वविद्यालयों का कुलाधिपति होता है।

(घ) राज्यपाल पर अपने पद पर रहते हुए कोई फौजदारी का मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है।

(ङ) उसके कार्यकाल में उसे बंदी बनाकर न्यायालय में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है।

(च) उस पर दीवानी मुकदमा चलाने के लिए, उसे दो माह पूर्व सूचना देना आवश्यक है।

2. राज्यपाल की नियुक्ति कौन करता है? उसे कौन हटा सकता है? राज्य मंत्रिपरिषद् तथा राज्यपाल के संबंध समझाइए।

उ०– **राज्यपाल की नियुक्ति–** भारतीय संविधान के अनुच्छेद 155 में की गई व्यवस्था के अनुसार, ''प्रत्येक राज्य के लिए राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति करेगा।'' राज्यपाल राष्ट्रपति की इच्छा पर और विश्वास बने रहने तक ही अपने पद पर बना रह सकता है। उसके स्थानांतरण से लेकर पद से हटाने तक के सभी अधिकार राष्ट्रपति को प्राप्त हैं। राष्ट्रपति एक ही राज्यपाल को एक से अधिक राज्यों का कार्यभार भी सौंप सकता है, अथवा एक राज्य से दूसरे राज्य में स्थानांतरित कर सकता है। राज्यपाल का कार्यकाल 5 वर्ष का होता है, वह स्वयं इससे पूर्व त्याग पत्र देकर पद से हट सकता है। राज्यपाल को ₹1,10,000 मासिक वेतन, भत्ते, नि:शुल्क निवास तथा कार आदि की सुविधाएँ प्राप्त होती हैं। जब एक ही व्यक्ति को दो या अधिक राज्यों का राज्यपाल नियुक्त किया जाता है तो राज्यपाल को देय उपलब्धियाँ तथा वेतन-भत्ते ऐसे अनुपात में बाँट दिए जाते हैं, जो राष्ट्रपति आदेश देकर निश्चित करें। राज्यपाल को भारत के संचित कोष से वेतन व भत्ते दिए जाते हैं।

मंत्रिपरिषद् तथा राज्यपाल के मध्य संबंध– मंत्रिपरिषद् और राज्यपाल के बीच घनिष्ठ संबंध पाए जाते हैं, जिन्हें निम्नवत् स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) राज्यपाल मंत्रिपरिषद् की सलाह से सभी कार्य करता है।
(ii) वही मुख्यमंत्री तथा अन्य मंत्रियों की नियुक्ति करता है।
(iii) राज्यपाल मुख्यमंत्री से शासन संबंधी सूचना माँगता है।
(iv) मुख्यमंत्री उसे सूचनाएँ उपलब्ध कराता है।
(v) राज्यपाल ही राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू करने की रिपोर्ट राष्ट्रपति को भेजता है।
(vi) राज्यपाल ही केंद्र सरकार के कानूनों को राज्य में लागू करवाता है तथा उनका क्रियान्वयन करवाता है।

3. मुख्यमंत्री की नियुक्ति किस प्रकार होती है? प्रशासन में उसकी स्थिति (भूमिका) स्पष्ट कीजिए।

उ०– **मुख्यमंत्री की नियुक्ति–** भारतीय संविधान के अनुच्छेद 164(1) में स्पष्ट लिखा गया है, ''मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्य का राज्यपाल करेगा।'' मुख्यमंत्री की नियुक्ति करने में राज्यपाल मनमानी नहीं कर सकता। मुख्यमंत्री की नियुक्ति की व्यवस्था निम्नवत् है–

(i) राज्यपाल विधानसभा में बहुमत दल के नेता को मुख्यमंत्री नियुक्त करता है।
(ii) विधानसभा में किसी भी दल का बहुमत न होने की दशा में वह संयुक्त दल के नेता को मुख्यमंत्री नियुक्त कर, उसे विधानसभा में बहुमत सिद्ध करने को कहता है।
(iii) खंडित जनादेश और त्रिशंकु विधानसभा की स्थिति में राज्यपाल मुख्यमंत्री की नियुक्ति में स्वविवेक से काम लेता है।
(iv) चुनावों के उपरांत राज्य में सरकार न बन पाने कि स्थिति में, राज्यपाल राष्ट्रपति को रिपोर्ट देकर राज्य में 6 माह के लिए राष्ट्रपति शासन लागू करवा देता है।
(v) 6 माह तक सरकार का गठन न हो पाने पर या तो संसद राष्ट्रपति शासन को 6 माह के लिए बढ़ा देती है अन्यथा नए चुनाव कराए जाते हैं।

मुख्यमंत्री का कार्यकाल 5 वर्ष का होता है, परंतु विधानसभा में बहुमत रहने तक ही वह अपने पद पर बना रहता है। विधानसभा द्वारा 'अविश्वास प्रस्ताव' पारित कर अथवा अनुच्छेद 356 के अनुसार राज्य में संकटकाल की उदघोषणा होने तथा राष्ट्रपति शासन लागू होने पर मुख्यमंत्री पद से हट जाता है।

यदि कोई ऐसा व्यक्ति मुख्यमंत्री बन गया है, जो राज्य विधानमंडल का सदस्य नहीं है, तब 6 माह के भीतर ही उसे विधानमंडल का सदस्य बन जाना अनिवार्य होगा, अन्यथा उसे पद छोड़ना पड़ेगा।

राज्य के प्रशासन में मुख्यमंत्री की भूमिका (महत्व)– राज्य के प्रशासन में मुख्यमंत्री का वही महत्व है, जो केंद्र के शासन में प्रधानमंत्री का होता है। राज्य के प्रशासन में मुख्यमंत्री की भूमिका तथा महत्व को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है–

(i) मुख्यमंत्री राज्य प्रशासन का केंद्र बिंदु होता है, पूरा प्रशासनात्मक चक्र उसी के चारों ओर घूमता है।
(ii) मुख्यमंत्री राज्य प्रशासन का मुखिया और सूत्रधार होता है, उसी के निर्णय और निर्देश के अनुसार प्रशासन तंत्र संचालित होता है।
(iii) मुख्यमंत्री राज्य प्रशासन का नियंत्रक और संचालक होता है, वह प्रशासन रूपी रेलगाड़ी का गार्ड है, उसके हरी झंडी दिखाते ही प्रशासन की गाड़ी चल पड़ती है।
(iv) वह राज्यपाल के माध्यम से राज्य के महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्तियाँ कराकर प्रशासन का सर्वेसर्वा बन जाता है।
(v) मुख्यमंत्री कानूनों के निर्माण से लेकर उनके क्रियान्वयन तक प्रमुख और महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
(vi) बहुमत के बल पर मुख्यमंत्री कानून निर्माण से लेकर प्रशासन चलाने तक अपनी मनमानी करता है।
(vii) मुख्यमंत्री के निर्देश पर राज्य का वित्तमंत्री बजट बनाकर पारित करवाता है, वही वित्तीय नीतियों की घोषणा करके वित्तीय व्यवस्था का नियंत्रक बन जाता है।
(viii) मुख्यमंत्री राज्य में कल्याणकारी योजनाएँ चलाकर तथा सार्वजनिक हित की घोषणा करके जनप्रिय नायक बन जाता है।

मुख्यमंत्री मंत्रिपरिषद् का निर्माता, जीवनदाता और उसका अंत करने वाला होते हुए, राज्य प्रशासन का मुखिया और प्रशासन की धुरी बन जाता है।

4. राज्य मंत्रिपरिषद् के गठन एवं कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– **राज्य मंत्रिपरिषद्**–राज्य मंत्रिपरिषद् वास्तविक कार्यपालिका होती है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 163 में लिखा गया है, **''राज्यपाल को प्रशासनिक कार्यों में सहयोग और सलाह देने के लिए एक मंत्रिपरिषद होगी जिसका अध्यक्ष मुख्यमंत्री होगा।''** राज्यपाल को सहयोग और परामर्श देने के लिए जिस मंत्रिपरिषद् का गठन किया जाता है, व्यवहार में वही शासन चलाती है। **मुख्यमंत्री, कैबिनेट मंत्री, राज्यमंत्री और उपमंत्रियों के संगठन का ही नाम मंत्रिपरिषद् है।** मुख्यमंत्री राज्य मंत्रिपरिषद् का मुखिया और निर्माता होता है। राज्य मंत्रिपरिषद् केंद्रीय मंत्रिपरिषद् का ही लघु प्रतिरूप होती है। मुख्यमंत्री और कैबिनेट मंत्री मिलकर मंत्रिमंडल की रचना करते हैं। यही मंत्रिमंडल राज्य के लिए नीतियों को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण निर्णय लेता है।

मंत्रिपरिषद् का गठन (रचना)– मंत्रिपरिषद् का निर्माता और मुखिया राज्य का मुख्यमंत्री होता है। मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा की जाती है। राज्यपाल मुख्यमंत्री की नियुक्ति में परिस्थितियों के अनुसार निम्नवत् निर्णय लेता है–

(i) राज्यपाल विधानसभा में बहुमत वाले दल के नेता को मुख्यमंत्री नियुक्त करता है।

(ii) त्रिशंकु विधानसभा होने की स्थिति में राज्यपाल संयुक्त दल के नेता को मुख्यमंत्री नियुक्त करता है तथा उसे विधानसभा में बहुमत सिद्ध करने का परामर्श देता है।

(iii) खंडित जनादेश होने की स्थिति में वह राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू कराने की सिफारिश करता है।

(iv) अगले 6 माह में भी राज्य में दलीय सरकार बनने की संभावना समाप्त हो जाने पर नए चुनाव करा सकता है।
मुख्यमंत्री अन्य मंत्रियों की सूची तैयार कर राज्यपाल के पास भेजता है, जो स्वीकृति प्रदान कर मंत्रियों की नियुक्ति कर देता है। यदि कोई ऐसा व्यक्ति मंत्री बन जाता है, जो विधानमंडल का सदस्य नहीं है, तब उसे 6 माह में किसी भी सदन की सदस्यता ग्रहण करना अनिवार्य होगा, नहीं तो उसे अपना पद त्यागना पड़ता है। मंत्रिपरिषद में मंत्रियों की संख्या विधानसभा के कुल सदस्यों का 15% तक हो सकती है।

मुख्यमंत्री राज्यपाल के परामर्श से मंत्रियों में विभागों का वितरण कर उन्हें कार्य सौंपता है। मंत्रिपरिषद् का प्रत्येक सदस्य मुख्यमंत्री के प्रसादपर्यंन्त अपने पद पर बना रहता है।

अवधि– मंत्रिपरिषद् की कार्यावधि 5 वर्ष रखी गई है, परंतु वह तभी तक कार्य करती है, जब तक उसे विधानसभा का विश्वास प्राप्त रहता है। विधानसभा 'अविश्वास प्रस्ताव' पारित करके मंत्रिपरिषद् को भंग करा सकती है। कार्यभार ग्रहण करते समय प्रत्येक मंत्री गोपनीयता और कर्तव्य निष्ठा की शपथ ग्रहण करता है।

राज्य मंत्रिपरिषद् की शक्तियाँ तथा कार्य– राज्य मंत्रिपरिषद् की शक्तियाँ और कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) राज्यपाल को परामर्श देना– राज्य मंत्रिपरिषद् प्रशासनिक कार्यों में राज्यपाल को परामर्श देती है। साधारण रूप से राज्यपाल मुख्यमंत्री के परामर्श से ही कार्य करता है।

(ii) नीतियों का निर्धारण करना– राज्य मंत्रिपरिषद् का मुख्य कार्य प्रशासन के लिए उचित नीतियों का निर्धारण करना है। सत्तारूढ़ दल चुनाव के समय किए गए वायदे पूरे करने की रणनीति बनाता है।

(iii) प्रशासन पर नियंत्रण– राज्य मंत्रिपरिषद् का प्रत्येक सदस्य अपने उत्तरदायित्वों की पूर्ति के लिए प्रशासन पर नियंत्रण बनाए रखता है। मंत्रिपरिषद् प्रशासन के लिए विधानसभा के प्रति उत्तरदायी होती है।

(iv) कानूनों का क्रियान्वयन– राज्य मंत्रिपरिषद् का सबसे महत्वपूर्ण कार्य कानूनों का क्रियान्वयन करना है। इसके सदस्य विधेयक प्रस्तुत कर विधानमंडल में कानून बनवाते हैं तथा मंत्रिपरिषद् राज्य में शांति और व्यवस्था बनाए रखने के लिए कानूनों को ठीक से लागू करवाती है।

(v) नियुक्तियाँ कराना– राज्यपाल राज्य में महत्वपूर्ण पदों पर जो नियुक्तियाँ करता है, वह मंत्रिपरिषद् की सलाह मानकर ही करता है।

(vi) आय–व्यय निश्चित करना– मंत्रिपरिषद राज्य की विभिन्न मदों के लिए आय–व्यय को निश्चित करने के उद्देश्य से वार्षिक बजट तैयार करके, उसे पारित करवाती है।

5. राज्य प्रशासन में राज्यपाल का क्या महत्व है? राज्यपाल तथा मुख्यमंत्री के संबंधों का वर्णन कीजिए।

उ०– **राज्यपाल की प्रशासनिक स्थिति और महत्व**– राज्यपाल की राज्य में प्रशासनिक स्थिति बड़े महत्व की है, जिसे निम्नवत् प्रस्तुत किया जा सकता है–

(i) **संवैधानिक प्रधान–** राज्यपाल ही मंत्रिपरिषद् का संवैधानिक प्रधान होता है। सरकार की समस्त शक्तियाँ राज्यपाल में निहित होती हैं। राज्य का संपूर्ण कार्य उसी के नाम पर चलाया जाता है। संवैधानिक प्रधान होते हुए भी वह नाममात्र का प्रशासक रह जाता है।

(ii) **राष्ट्रपति का प्रतिनिधि–** राज्यपाल राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू हो जाने पर राष्ट्रपति के प्रतिनिधि के रूप में प्रशासन का सर्वेसर्वा बन जाता है।

(iii) **मुख्यमंत्री की नियुक्ति–** राज्य के मुख्यमंत्री की नियुक्ति करने का पूर्ण अधिकार राज्यपाल का है। इस कार्य में वह स्वविवेक का प्रयोग करता है।

(iv) **विधानसभा को भंग करना–** राज्यपाल मुख्यमंत्री के परामर्श से विधानसभा को भंग करके नए चुनाव कराने की सिफारिश कर देता है।

(v) **सूचना प्राप्त करना–** राज्यपाल मुख्यमंत्री से प्रशासनिक और वैधानिक सूचनाएँ प्राप्त कर उन्हीं के अनुरूप परामर्श देता है।

(vi) **विधेयकों को कानून का रूप देना–** राज्यपाल साधारण और वित्त विधेयकों को जो विधानमंडल से पारित होते हैं, अपनी अनुमति देकर तथा हस्ताक्षर करके कानून का रूप देता है।

राज्यपाल तथा मुख्यमंत्री के मध्य संबंध– इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 6 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई-1 (ख) : भारतीय न्याय व्यवस्था

23 सर्वोच्च न्यायालय

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 190 व 191 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 191 व 192 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति कौन करता है? इसके लिए क्या अर्हताएँ निर्धारित की गई हैं?

उ०– सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश बनने के लिए व्यक्ति में निम्नलिखित अर्हताएँ होनी चाहिए–

(i) वह भारत का नागरिक हो।
(ii) वह 65 वर्ष से कम आयु का हो।
(iii) वह कम से कम 5 वर्ष तक किसी भी उच्च न्यायालय में न्यायाधीश रह चुका हो।
(iv) वह किसी उच्च न्यायालय में 10 वर्ष तक अधिवक्ता के रूप में कार्य कर चुका हो।
(v) वह राष्ट्रपति की दृष्टि से कुशल-विधिवेता हो।

2. सर्वोच्च न्यायालय के प्रारंभिक क्षेत्राधिकारों का वर्णन कीजिए।

उ०– **सर्वोच्च न्यायालय के प्रारंभिक क्षेत्राधिकार–** सर्वोच्च न्यायालय के प्रारंभिक क्षेत्राधिकार के अंतर्गत वे अधिकार सम्मिलित किए गए हैं, जो अन्य किसी न्यायालय को प्राप्त नहीं हैं। वह उन विवादों पर विचार करता है, जिन पर अन्य कोई भी न्यायालय विचार नहीं करता। संविधान के अनुच्छेद 131 में वर्णित निम्नलिखित विवाद सीधे सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए जाते हैं–

(i) भारत सरकार तथा एक या एक से अधिक राज्यों के मध्य उत्पन्न विवाद।

(ii) वे विवाद, जिनमें एक ओर भारत सरकार तथा एक या एक से अधिक राज्य दूसरी ओर हों।

(iii) वे विवाद, जो दो या दो से अधिक राज्यों के मध्य हो।

(iv) वे विवाद, जिनका संबंध संविधान या कानून की व्याख्या से जुड़ा हुआ हो।

(v) मौलिक अधिकारों के हनन से संबंधित विवाद। सर्वोच्च न्यायालय मौलिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए उचित आदेश, निर्देश दे सकता है या लेख पत्र जारी कर सकता है।

3. सर्वोच्च न्यायालय की चार प्रमुख शक्तियों का उल्लेख कीजिए।

उ०– सर्वोच्च न्यायालय की चार प्रमुख शक्तियाँ निम्न प्रकार हैं–

(i) संविधान की व्याख्या और सुरक्षा– संविधान की धारा के विषय में मतभेद हो जाने पर उसकी अंतिम व्याख्या करने का अधिकार सर्वोच्च न्यायालय को है। इस प्रकार संविधान की मूल भावना की सुरक्षा होती है।

(ii) मौलिक अधिकारों की रक्षा– सर्वोच्च न्यायालय व्यक्तिगत स्वतंत्रता तथा मौलिक अधिकारों की सुरक्षा करता है। वह मौलिक अधिकारों का हनन होने पर (i) बंदी प्रत्यक्षीकरण, (ii) परमादेश, (iii) प्रतिषेध, (iv) अधिकार पृच्छा, (v) उत्प्रेषण-लेख जारी कर उन्हें सुरक्षा प्रदान करता है। परंतु संकटकाल में मौलिक अधिकारों को लागू करवाने के सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार को राष्ट्रपति स्थगित कर सकता है।

(iii) राष्ट्रपति को कानूनी परामर्श देना– अनुच्छेद 143 के अनुसार राष्ट्रपति किसी भी सार्वजनिक महत्व के विषय अथवा कानूनी उलझन पड़ने पर सर्वोच्च न्यायालय से परामर्श माँग सकता है। परंतु सर्वोच्च न्यायालय अपनी राय देने के लिए बाध्य नहीं है और न ही राष्ट्रपति उस परामर्श को मानने के लिए बाध्य है।

(iv) न्यायिक पुनरावलोकन– सर्वोच्च न्यायालय अपने निर्णयों पर पुनर्विचार भी करता है, जिसे न्यायिक पुनरावलोकन कहते हैं। इस व्यवस्था में कानूनी त्रुटि को सुधारा जा सकता है।

4. सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का कार्यकाल कितना है? उन्हें उनके पद से कैसे हटाया जा सकता है?

उ०– सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश 65 वर्ष की आयु तक ही अपने पद पर कार्यरत रहते हैं। यदि आयु के विषय में कोई मतभेद हो जाए तो संविधान के 15 वें संशोधन के अनुसार राष्ट्रपति का निर्णय अंतिम होगा। इस आयु सीमा के पूर्ण होने से पूर्व वह स्वयं पद त्याग सकता है। अयोग्यता या दुराचार के आधार पर संसद के दो-तिहाई बहुमत से महाभियोग पारित करके उसे पद से हटाया जा सकता है।

5. न्यायिक पुनरावलोकन से क्या तात्पर्य है? इस शक्ति का प्रयोग किस न्यायालय द्वारा किया जाता है?

उ०– सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपने निर्णयों पर पुनर्विचार करने की प्रक्रिया को न्यायिक पुनरावलोकन कहते हैं। न्यायिक पुनरावलोकन शक्ति का प्रयोग भारतीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा किया जाता है। इस शक्ति के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय कानून की संवैधानिकता की जाँच कर सकता है कि कानून संविधान के अनुकूल है या प्रतिकूल।

6. भारत का सर्वोच्च न्यायालय किस प्रकार नागरिकों के मूल अधिकारों का संरक्षण करता है?

उ०– भारत का सर्वोच्च न्यायालय मूल अधिकारों का हनन होने पर (i) बंदी प्रत्यक्षीकरण, (ii) परमादेश, (iii) प्रतिषेध, (iv) अधिकार पृच्छा, (v) उत्प्रेक्षण-लेख आदि जारी करके उनकी सुरक्षा करता है।

7. सर्वोच्च न्यायालय को संविधान का रक्षक क्यों कहा गया है?

उ०– सर्वोच्च न्यायालय नागरिकों के मूल अधिकारों की रक्षा बंदी प्रत्यक्षीकरण परमादेश, प्रतिभेद अधिकार पृच्छा एवं उत्प्रेषण लेख जारी करके करता है, इसलिए सर्वोच्च न्यायालयों को संविधान का रक्षक कहा जाता है।

8. संविधान में न्यायपालिका को स्वतंत्र बनाए रखने के लिए क्या उपाय किए गए हैं?

उ०– संविधान में न्यायापालिका को स्वतंत्र बनाए रखने निम्नलिखित उपाय किए गए हैं–

(i) सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति भारत का राष्ट्रपति उनकी योग्यता के आधार पर नियमानुसार करता है, जिससे वे बाह्य दबाव से मुक्त रहें।

(ii) सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को उनके पद से हटाने के लिए महाभियोग की कठोर प्रक्रिया है, अत: वे अपनी अवधि पूरी होने तक सेवा सुरक्षा के प्रति निश्ंचित बने रहते हैं।

(iii) न्यायाधीशों को वेतन तथा भत्ते संचित निधि से दिए जाते हैं, उनमें कोई कटौती करने का प्रावधान नहीं रखा गया है।

(iv) सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश 65 वर्ष की आयु तक निर्बाध रूप से सेवा में बने रहते हैं।

(v) सर्वोच्च न्यायालय का कोई भी न्यायाधीश सेवानिवृत होने के बाद वकालत नहीं कर सकता, ताकि बाद में वह अन्य न्यायाधीशों को प्रभावित न कर सके।

(vi) सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों पर संसद में कोई वाद-विवाद नहीं किया जा सकेगा। इससे वह कार्यपालिका के दबाव से वंचित रहेगा।

(vii) सर्वोच्च न्यायालय अपनी अवमानना करने वाले व्यक्ति को दोषी मानकर दंड दे सकता है।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. उच्चतम न्यायालय के संगठन, शक्तियों एवं कर्तव्यों (कार्यों) का वर्णन कीजिए।

उ०– **सर्वोच्च न्यायालय का संगठन (रचना)–** भारत का सर्वोच्च न्यायालय मुख्य न्यायाधीश तथा अन्य न्यायाधीशों से मिलकर बनता है। इस न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति भारत का राष्ट्रपति करता है। वह मुख्य न्यायाधीश से परामर्श कर अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति कर, सर्वोच्च न्यायालय के गठन का कार्य पूर्ण करता है। जनवरी, 2009 में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की संख्या 25 से बढ़ाकर 30 कर दी गई है। अत: अब सर्वोच्च न्यायालय में एक मुख्य न्यायाधीश व 30 सहायक न्यायधीश हैं। सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति वरिष्ठता को ध्यान में रखकर की जाती है।

कार्यकाल– सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश 65 वर्ष की आयु तक ही अपने पद पर कार्यरत होते हैं। यदि आयु के विषय में कोई मतभेद हो जाए तो संविधान के 15 वें संशोधन के अनुसार राष्ट्रपति का निर्णय अंतिम होगा। इस आयु सीमा के पूर्ण होने से पूर्व वह स्वयं पद त्याग सकता है। अयोग्यता या दुराचार के आधार पर संसद के दो–तिहाई बहुमत से महाभियोग पारित करके उसे पद से हटाया जा सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की योग्यताएँ– सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश बनने के लिए व्यक्ति में निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए–

(i) वह भारत का नागरिक हो।

(ii) वह 65 वर्ष से कम आयु का हो।

(iii) वह कम से कम 5 वर्ष तक किसी भी उच्च न्यायालय में न्यायाधीश रह चुका हो।

(iv) वह किसी उच्च न्यायालय में 10 वर्ष तक अधिवक्ता के रूप में कार्य कर चुका हो।

(v) वह राष्ट्रपति की दृष्टि में कुशल–विधिवेत्ता हो।

सर्वोच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार एवं कार्य– सर्वोच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार और शक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) प्रारंभिक क्षेत्राधिकार– सर्वोच्च न्यायालय के प्रारंभिक क्षेत्राधिकार के अंतर्गत वे अधिकार सम्मिलित किए गए हैं, जो अन्य किसी न्यायालय को प्राप्त नहीं हैं। वह उन विवादों पर विचार करता है, जिन पर अन्य कोई भी न्यायालय विचार नहीं करता। संविधान के अनुच्छेद 131 में वर्णित निम्नलिखित विवाद सीधे सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए जाते हैं–

(क) भारत सरकार तथा एक या एक से अधिक राज्यों के मध्य उत्पन्न विवाद।

(ख) वे विवाद, जिनमें एक ओर भारत सरकार तथा एक या एक से अधिक राज्य दूसरी ओर हों।

(ग) वे विवाद, जो दो या दो से अधिक राज्यों के मध्य हो।

(घ) वे विवाद, जिनका संबंध संविधान या कानून की व्याख्या से जुड़ा हुआ हो।

(ङ) मौलिक अधिकारों के हनन से संबंधित विवाद। सर्वोच्च न्यायालय मौलिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए उचित आदेश, निर्देश दे सकता है या लेख पत्र जारी कर सकता है।

(च) राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के चुनाव से संबंधित विवाद। इस विषय में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय ही अंतिम होता है।

(ii) अपीलीय क्षेत्राधिकार– वे विवाद, जो सीधे सर्वोच्च न्यायालय के सम्मुख नहीं लाए जा सकते, वह अधीनस्थ

न्यायालय के निर्णयों के विरुद्ध अपील के रूप में यहाँ प्रस्तुत किए जाते हैं। अपीलें संवैधानिक, फौजदारी तथा दीवानी सभी प्रकार की हो सकती हैं। सर्वोच्च न्यायालय में अपीलें करने की शर्तें निम्नलिखित हैं–

(क) संविधान के अनुच्छेद 132 के अनुसार यदि उच्च न्यायालय किसी मुकदमे के विषय में यह प्रमाणित कर दे कि मुकदमे की किसी धारा में कानून का महत्वपूर्ण प्रश्न छिपा है, तब उसकी अपील सर्वोच्च न्यायालय में की जा सकती है।

(ख) संविधान के अनुच्छेद 133 के अनुसार दीवानी के मुकदमों की अपीलें सर्वोच्च न्यायालय में की जा सकती हैं, यदि उच्च न्यायालय ने मुकदमें के विषय में यह प्रमाणपत्र दे दिया है कि मुकदमा सर्वोच्च न्यायालय में सुनने योग्य है।

(ग) संविधान के अनुच्छेद 134 के अनुसार निम्नलिखित फौजदारी मुकदमों में उच्च न्यायालय के निर्णयों के विरुद्ध, सर्वोच्च न्यायालय को अपीलें सुनने का अधिकार है–

(अ) किसी निचले न्यायालय से बरी किए गए अपराधी को उच्च न्यायालय ने मृत्युदंड दे दिया हो।

(ब) उच्च न्यायालय ने निचले न्यायालय से विवाद अपने पास मँगा लिया हो तथा उसमें आरोपित को दोषी मानकर मृत्युदंड दिया हो।

(स) किसी मुकदमे को उच्च न्यायालय यह प्रमाणपत्र दे दे, कि यह मुकदमा सर्वोच्च न्यायालय में अपील करने के योग्य है।

(द) सर्वोच्च न्यायालय किसी फौजदारी मुकदमे में स्वयं ही अपील करने की आज्ञा प्रदान कर दे।

(य) संविधान का अनुच्छेद 136 सर्वोच्च न्यायालय को यह विशेष अधिकार प्रदान करता है कि उच्चतम न्यायालय किसी भी उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध अपील सुन सकता है। परंतु सैनिक न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय में अपील नहीं की जा सकती।

(iii) संविधान की व्याख्या और सुरक्षा– संविधान की धारा के विषय में मतभेद हो जाने पर उसकी अंतिम व्याख्या करने का अधिकार सर्वोच्च न्यायालय को है। इस प्रकार संविधान की मूल भावना की सुरक्षा होती है।

(iv) मौलिक अधिकारों की रक्षा– सर्वोच्च न्यायालय व्यक्तिगत स्वतंत्रता तथा मौलिक अधिकारों की सुरक्षा करता है। वह मौलिक अधिकारों का हनन होने पर (i) बंदी प्रत्यक्षीकरण, (ii) परमादेश, (iii) प्रतिषेध, (iv) अधिकार पृच्छा, (v) उत्प्रेषण-लेख जारी कर उन्हें सुरक्षा प्रदान करता है। परंतु संकटकाल में मौलिक अधिकारों को लागू करवाने के सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार को राष्ट्रपति स्थगित कर सकता है।

(v) राष्ट्रपति को कानूनी परामर्श देना– अनुच्छेद 143 के अनुसार राष्ट्रपति किसी भी सार्वजनिक महत्व के विषय अथवा कानूनी उलझन पड़ने पर सर्वोच्च न्यायालय से परामर्श माँग सकता है। पंरतु सर्वोच्च न्यायालय अपनी राय देने के लिए बाध्य नहीं है और न ही राष्ट्रपति उस परामर्श को मानने के लिए बाध्य है।

(vi) न्यायिक पुनरावलोकन– सर्वोच्च न्यायालय अपने निर्णयों पर पुनर्विचार भी करता है, जिसे न्यायिक पुनरावलोकन कहते हैं। इस व्यवस्था में कानूनी त्रुटि को सुधारा जा सकता है।

(vii) अभिलेख न्यायालय– सर्वोच्च न्यायालय एक अभिलेख न्यायालय के रूप में कार्य करता है। वह अपनी समस्त कार्यवाहियों और निर्णयों को प्रकाशित कराकर अभिलेखों के रूप में सुरक्षित रखता है। ये निर्णय अन्य वादों में 'मिसाल' के रूप में प्रयुक्त किए जाते हैं।

(viii) न्यायालय की कार्यवाही और कार्यविधि के लिए नियम बनाना– संविधान के अनुच्छेद 145 के अधीन सर्वोच्च न्यायालय को न्यायालय की कार्यवाही और कार्यविधि के संबंध में समय–समय पर नियम बनाने का अधिकार है।

(ix) विवादों को स्थानांतरित करना– सर्वोच्च न्यायालय किसी मुकदमे में शीघ्र न्याय दिलाने के लिए वाद को एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय में स्थानांतरित कर सकता है।

(x) कानूनों की वैधता पर निर्णय– सर्वोच्च न्यायालय संसद या विधानमंडलों द्वारा पारित ऐसे कानूनों को अवैध घोषित कर सकता है, जो संविधान के अनुरूप नहीं हैं।

(xi) विविध कार्य– सर्वोच्च न्यायालय के पास निम्नलिखित विविध कार्य करने की भी शक्तियाँ हैं–

(क) सर्वोच्च न्यायालय अपने कार्यों के संपादन हेतु अधिकारियों की नियुक्ति करता है।

(ख) वह अधीनस्थ न्यायालयों की कार्यविधि पर पूरी दृष्टि रखता है।

(ग) सर्वोच्च न्यायालय संघीय लोकसभा के अध्यक्ष तथा सदस्यों के कार्यकलापों की जाँच करके, उन्हें हटाने के लिए राष्ट्रपति को परामर्श देता है।

(घ) सर्वोच्च न्यायालय याचिकाओं पर लगने वाले शुल्क को रद्द कर सकता है।

2. उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति कैसे होती है? उनको अपदस्थ करने की क्या प्रक्रिया है?

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

3. सर्वोच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार या प्रमुख कार्यों पर प्रकाश डालिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

4. सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए क्या अर्हताएँ निर्धारित हैं? इनकी नियुक्ति कौन करता है? उन्हें अपदस्थ करने की क्या प्रक्रिया है?

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

5. भारत के सर्वोच्च न्यायालय के महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– **सर्वोच्च न्यायालय का महत्व–** सर्वोच्च न्यायालय भारत की सर्वोच्च न्यायिक संस्था है। इसके महत्व को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है–

(i) भारतीय संविधान की सर्वोच्चता बनाए रखने में सर्वोच्च न्यायालय बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

(ii) यह संविधान की सार्थक व्याख्या करके उसे सुरक्षा प्रदान करने में उपयोगी है।

(iii) सर्वोच्च न्यायालय केंद्र सरकार और राज्य सरकारों की शक्तियों को अक्षुण्ण बनाए रखने में प्रमुख भूमिका निभाता है।

(iv) यह केंद्र तथा राज्यों के मध्य शक्ति विभाजन का प्रहरी है।

(v) सर्वोच्च न्यायालय व्यक्तिगत स्वतंत्रता तथा मौलिक अधिकारों की सुरक्षा करता है।

(vi) राष्ट्र की आर्थिक और सामाजिक उन्नति में सर्वोच्च न्यायालय का योगदान अद्वितीय रहता है।

(vii) यह न्यायालय उच्च न्यायालयों के संवैधानिक, फौजदारी तथा दीवानी मुकदमों के निर्णयों के विरुद्ध अपीलें सुनकर राष्ट्र की जनता को न्याय देता है।

(viii) वह राष्ट्रपति को न्यायिक समस्याओं पर उचित परामर्श देकर समस्याओं का उचित समाधान करता है।

सर्वोच्च न्यायालय के महत्व को डॉ० भीमराव अंबेडकर ने इन शब्दों में व्यक्त किया है, ''हमारे संघ में एकीकृत न्यायपालिका की व्यवस्था है, उसका क्षेत्राधिकार संवैधानिक, दीवानी तथा फौजदारी के अंतर्गत सभी मामलों तक विस्तृत है और यह सब में उपचार की व्यवस्था कर सकती है।''

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

24 उच्च न्यायालय– संगठन तथा शक्तियाँ

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 196 व 197 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 197 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति किस प्रकार होती है?

उ०– उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायधीश तथा राज्य के राज्यपाल से परामर्श कर की जाती है। उच्च न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति मुख्य न्यायाधीश से परामर्श पर करता है।

2. उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की योग्यताओं तथा कार्यकाल पर प्रकाश डालिए।

उ०– **उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के पद के लिए योग्यताएँ–** उच्च न्यायालय का न्यायाधीश बनने के लिए व्यक्ति में निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए–

(i) वह भारत का नागरिक हो।

(ii) उसकी आयु 62 वर्ष से अधिक न हो।

(iii) वह 10 वर्ष से अधिक किसी न्यायिक पद पर कार्य कर चुका हो।

(iv) वह एक से अधिक उच्च न्यायालयों में 10 वर्ष तक अधिवक्ता रह चुका हो।

(v) राष्ट्रपति की दृष्टि में विख्यात न्यायविद् होते हुए संसद द्वारा निर्धारित योग्यताएँ रखता हो।

कार्यकाल– उच्च न्यायालय के न्यायाधीश 62 वर्ष की आयु तक अपने पद पर कार्य करते हैं। इससे पूर्व स्वयं अपने पद से त्यागपत्र दे सकते हैं अथवा दुराचार या अयोग्यता के आधार पर उन्हें भी सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की भाँति पद से हटाया जा सकता है।

3. उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को उनके पद से हटाने की क्या प्रक्रिया है?

उ०– उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को उनके पद से अयोग्यता या दुराचार के आधार पर संसद के दो–तिहाई बहुमत से महाभियोग पारित करके हटाया जा सकता है।

4. उच्च न्यायालय अपने अपीलीय क्षेत्राधिकार में कौन–से तीन प्रकार के मुकदमे सुन सकता है?

उ०– उच्च न्यायालय अपने अपीलीय क्षेत्राधिकार में निम्न तीन प्रकार के मुकदमे सुन सकता है–

(i) वह उन विवादों की अपील सुन सकता है, जिसमें ₹10,000 की धनराशि या उसी मूल्य की संपत्ति का प्रश्न जुड़ा है।

(ii) वे फौजदारी के मुकदमे जिनमें सत्र न्यायालय ने अपराधी को चार वर्ष की सजा दी हो।

(iii) सत्र न्यायालय को अपराधी को मृत्यु दंड देने से पूर्व उच्च न्यायालय की अनुमति अवश्य लेनी पड़ती है।

5. उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में आने वाले किन्हीं दो विषयों पर प्रकाश डालिए।

उ०– उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में आने वाले दो विषय निम्नलिखित हैं–

(i) न्यायिक पुनर्निरीक्षण– उच्च न्यायालय को न्यायिक पुनर्निरीक्षण का भी अधिकार प्राप्त है। वह केंद्र या राज्य सरकार द्वारा बनाए गए किन्हीं भी ऐसे कानूनों को, जो संविधान तथा मौलिक अधिकारों के विरुद्ध हो, अवैध घोषित कर सकता है।

(ii) अभिलेख न्यायालय– उच्च न्यायालय अपनी समस्त कार्यवाहियों और निर्णयों को प्रकाशित करवाकर अभिलेख के रूप में सुरक्षित रखता है। ये निर्णय राज्य के सभी न्यायालयों द्वारा मान्य होते हैं। इन्हें 'मिसाल' के रूप में जनपदीय न्यायालयों में प्रस्तुत किया जा सकता है।

6. उच्च न्यायालय मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए कौन–कौन से लेख जारी करता है?

उ०– उच्च न्यायालय मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए निम्नलिखित लेख जारी करता है–

(i) बंदी प्रत्यक्षीकरण (ii) परमादेश (iii) प्रतिषेध (iv) अधिकार पृच्छा (v) उत्प्रेषण

7. उच्च न्यायालय के तीन प्रमुख महत्व बताइए।

उ०– उच्च न्यायालय के तीन महत्व निम्नलिखित हैं–

(i) उच्च न्यायालय की स्थिति राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था में बड़ी महत्वपूर्ण है।

(ii) उच्च न्यायालय राज्य विधानमंडल पर अंकुश लगाकर उसे अपनी सीमाओं का ध्यान दिलाता रहता है।

(iii) उच्च न्यायालय न्यायिक पुनर्निरीक्षण द्वारा संविधान के विरुद्ध बने नियमों को अवैध घोषित कर विधानमंडल की निरंकुशता पर अंकुश लगाता है।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. उच्च न्यायालय के संगठन तथा उसके न्यायाधीशों के कार्यकाल का वर्णन कीजिए।

उ०– **उच्च न्यायालय का संगठन–** उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है। मुख्य न्यायाधीश के परामर्श से वह अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति करके उच्च न्यायालय का संगठन करता है। उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति में राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा राज्य के राज्यपाल से भी परामर्श करता है। मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति में वरिष्ठता का ध्यान रखा जाता है। संविधान के अनुच्छेद 216 में उच्च न्यायालय में न्यायाधीशों की संख्या नियत करने का अधिकार राष्ट्रपति को है। वह राज्य की जनसंख्या तथा कार्यभार देखते हुए न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है। कार्य की अधिकता के कारण वह अतिरिक्त न्यायाधीशों की नियुक्ति भी कर सकता है, जिनका कार्यकाल 2 वर्ष का होता है। उत्तर प्रदेश के उच्च न्यायालय में इस समय एक मुख्य न्यायाधीश तथा 160 न्यायाधीशों के पद स्वीकृत हैं, जिनमें से 81 न्यायाधीश कार्यरत है। उत्तर प्रदेश का उच्च न्यायालय इलाहाबाद में है, जिसकी खंडपीठ लखनऊ नगर में स्थापित की गई है।

उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के पद के लिए योग्यताएँ– उच्च न्यायालय का न्यायाधीश बनने के लिए व्यक्ति में निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए–

(i) वह भारत का नागरिक हो।

(ii) उसकी आयु 62 वर्ष से अधिक न हो।

(iii) वह 10 वर्ष से अधिक किसी न्यायिक पद पर कार्य कर चुका हो।

(iv) वह एक से अधिक उच्च न्यायालयों में 10 वर्ष तक अधिवक्ता रह चुका हो।

(v) राष्ट्रपति की दृष्टि में विख्यात न्यायविद् होते हुए संसद द्वारा निर्धारित योग्यताएँ रखता हो।

कार्यकाल तथा वेतन–भत्ते– उच्च न्यायालय के न्यायाधीश 62 वर्ष की आयु तक अपने पद पर कार्य करते हैं। इससे पूर्व वे स्वयं अपने पद से त्यागपत्र दे सकते हैं अथवा दुराचार या अयोग्यता के आधार पर उन्हें भी सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की भाँति पद से हटाया जा सकता है।

2. उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार का विस्तार से वर्णन कीजिए।

उ०– **उच्च न्यायालय की शक्तियाँ (अधिकार और कार्य)–** संपूर्ण राज्य उच्च न्यायालय का कार्यक्षेत्र होता है। संसद चाहे तो अन्य पड़ोसी राज्य को भी उसी उच्च न्यायालय से संबद्ध कर सकती है। (देखें उच्च न्यायालय और उनके अधिकार–क्षेत्र की ऊपर दी गई तालिका)। उच्च न्यायालय को अग्रलिखित शक्तियाँ तथा अधिकार प्राप्त हैं, उन्हीं के अनुरूप वह अपने कार्यों का संपादन करता है–

(i) प्रारंभिक क्षेत्राधिकार– उच्च न्यायालय के प्रारंभिक क्षेत्राधिकार के अंतर्गत वे विवाद आते हैं, जो प्रारंभिक स्तर पर सुनवाई के लिए उच्च न्यायालय में प्रस्तुत किए जा सकते हैं। उच्च न्यायालय के प्रारंभिक क्षेत्राधिकार निम्नवत् हैं–

(क) वह विवाद, जो मौलिक अधिकारों से संबंधित है, सीधा उच्च न्यायालय में दायर किया जा सकता है। न्यायालय मौलिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए निम्न लेख जारी करता है– बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार पृच्छा तथा उत्प्रेषण।

(ख) विवाह विच्छेद, (तलाक) वसीयत, न्यायालय की मान–हानि, नव वैधिक विवाद एवं सम प्रमाण विवाद आदि उच्च न्यायालय के प्रारंभिक क्षेत्र से जुड़े हैं।

(ग) उच्च न्यायालय मौलिक अधिकारों के अतिरिक्त अन्य विवादों में भी लेख जारी करने का अधिकार रखता है।

(घ) चुनाव याचिकाएँ भी उच्च न्यायालय के प्रारंभिक अधिकार के अंतर्गत आती हैं, वही इन पर निर्णय देता है।

(ii) अपीलीय क्षेत्राधिकार– उच्च न्यायालय अधीनस्थ न्यायालयों के निर्णयों के विरुद्ध अपीलें सुनता है। उसे दीवानी, फौजदारी तथा राजस्व संबंधी मुकदमों की अपीलें सुनने का अधिकार है। उसके अपीलीय क्षेत्राधिकार में निम्नलिखित विवाद आते हैं–

(क) वह उन विवादों की अपील सुन सकता है, जिसमें ₹10,000 की धनराशि या उसी मूल्य की संपत्ति का प्रश्न जुड़ा है।
(ख) वे फौजदारी के मुकदमे जिनमें सत्र न्यायालय ने अपराधी को चार वर्ष की सजा दी हो।
(ग) सत्र न्यायालय को अपराधी को मृत्यु दंड देने से पूर्व उच्च न्यायालय की अनुमति अवश्य लेनी पड़ती है।
(घ) राजस्व के मुकदमों की अपीलें भी उच्च न्यायालय में की जा सकती हैं।
(ङ) आयकर, बिक्रीकर तथा अन्य करों से संबंधित विवादों की अपीलें भी उच्च न्यायालय में की जाती हैं।
(च) उच्च न्यायालय अपने ही निर्णय के विरुद्ध अपील सुनने का अधिकार रखता है।
(छ) कोई भी ऐसा विवाद जिसमें संविधान की धारा या कानून की व्यवस्था का प्रश्न निहित हो, अपील के रूप में उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है।

(iii) न्यायिक पुनर्निरीक्षण– उच्च न्यायालय को न्यायिक पुनर्निरीक्षण का भी अधिकार प्राप्त है। वह केंद्र या राज्य सरकार द्वारा बनाए गए किन्हीं भी ऐसे कानूनों को, जो संविधान तथा मौलिक अधिकारों के विरुद्ध हो, अवैध घोषित कर सकता है।

(iv) अभिलेख न्यायालय– उच्च न्यायालय अपनी समस्त कार्यवाहियों और निर्णयों को प्रकाशित करवाकर अभिलेख के रूप में सुरक्षित रखता है। ये निर्णय राज्य के सभी न्यायालयों द्वारा मान्य होते हैं। इन्हें 'मिसाल' के रूप में जनपदीय न्यायालयों में प्रस्तुत किया जा सकता है।

(v) प्रशासनिक शक्तियाँ (अधिकार)– उच्च न्यायालय अपनी प्रशासनिक शक्तियों के आधार पर निम्नलिखित कार्यों का संपादन करता है–

(क) उच्च न्यायालय को राज्य के समस्त न्यायालयों तथा न्यायाधिकरणों के निरीक्षण करने का अधिकार है।
(ख) उच्च न्यायालय अधीनस्थ न्यायालयों के लिए नियमावली बनाने तथा उसमें परिवर्तन करने का अधिकार रखता है।
(ग) वह अपने अधीनस्थ न्यायालयों को रिकॉर्ड रखने की विधि के बारे में आदेश दे सकता है।
(घ) वह किसी भी अधीनस्थ न्यायालय से कोई रिकॉर्ड, कागज–पत्र अपने निरीक्षण हेतु मँगवा सकता है।
(ङ) उच्च न्यायालय अपने अधीनस्थ न्यायालयों की शक्ति सीमा के अंतर्गत, उनके कर्तव्यों के अनुपालन कराने पर दृष्टि रखता है।
(च) वह अधीनस्थ न्यायालय से किसी भी मुकदमे को सुनवाई के लिए मँगवाकर निर्णय दे सकता है।
(छ) वह मुकदमे को एक अधीनस्थ न्यायालय से दूसरे अधीनस्थ न्यायालय में स्थानांतरित कर सकता है।
(ज) उच्च न्यायालय को अन्य न्यायालयों के न्यायाधीशों की पदोन्नति, अवनति करने और अवकाश, वेतन तथा भत्ते आदि के विषयों में नियम बनाने का अधिकार है।
(झ) उच्च न्यायालय अपने अधीन काम करने वाले अधिकारियों तथा कर्मचारियों की नियुक्ति करता है और उनके लिए सेवा–शर्तें बनाता है।

3. उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति की योग्यताएँ क्या हैं? उसके अधिकार–क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 व 2 का अवलोकन कीजिए।

4. उच्च न्यायालय की स्वतंत्रता हेतु क्या उपाय किए गए हैं? उच्च न्यायालय का महत्व स्पष्ट कीजिए।

उ०– **उच्च न्यायालय की स्वतंत्रता–** उच्च न्यायालय स्वतंत्र रहकर ही निष्पक्ष न्याय प्रदान कर सकता है। अत: संविधान ने इसकी स्वतंत्रता बनाए रखने के लिए निम्नलिखित प्रावधान किए हैं–

(i) उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को राजनीतिक तथा प्रशासनिक दबाव से मुक्त रखने के लिए इनकी नियुक्ति करने का अधिकार राष्ट्रपति को दिया गया है।
(ii) उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को वेतन तथा भत्ते राज्य की संचित निधि से दिए जाते है; जिनमें कोई कटौती नहीं की जा सकती।
(iii) उच्च न्यायालय के न्यायाधीश 62 वर्ष की आयु तक निर्बाध रूप से कार्य करते हैं, उन्हें अपदस्थ करने का अधिकार संसद को दिया गया है।

(iv) उच्च न्यायालय के अवकाश प्राप्त न्यायाधीशों पर न्यायालय में वकालत करने पर प्रतिबंध लगाया गया है।

(v) राज्य विधानमंडल उच्च न्यायालय के कार्यकलापों तथा निर्णयों पर कोई वाद-विवाद नहीं कर सकता है।

उपर्युक्त व्यवस्थाओं के अनुसार उच्च न्यायालय से यह आशा की जाती है, कि वह स्वतंत्रता, निष्पक्षता तथा निडरता से अपने कार्यों का संपादन कर न्याय प्रदान करें।

उच्च न्यायालय का महत्व– उच्च न्यायालय न्याय का वह विशाल दीपक है, जो राज्यभर में अपने न्याय का प्रकाश बिखेरता है। उच्च न्यायालय के महत्व को निम्नवत् स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) उच्च न्यायालय की स्थिति राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था में बड़ी महत्वपूर्ण है।

(ii) उच्च न्यायालय राज्य विधानमंडल पर अंकुश लगाकर उसे अपनी सीमाओं का ध्यान दिलाता रहता है।

(iii) उच्च न्यायालय न्यायिक पुनर्निरीक्षण द्वारा संविधान के विरुद्ध बने नियमों को अवैध घोषित कर विधानमंडल की निरंकुशता पर अंकुश लगाता है।

(iv) उच्च न्यायालय संविधान की व्याख्या तथा सुरक्षा करता है।

(v) उच्च न्यायालय विविध लेख जारी करके नागरिकों के मौलिक अधिकारों के लिए सुरक्षा कवच का कार्य करता है।

(vi) उच्च न्यायालय सरकार और जनता के विवादों का निष्पक्ष निपटारा करके जन कल्याण की धारा प्रवाहित करता है।

उच्च न्यायालय अपने स्वतंत्र और निष्पक्ष निर्णयों द्वारा राज्य के सर्वांगीण विकास को सुदृढ़ आधार प्रदान करता है। राज्यों में उच्च न्यायालय के न्याय का दीपक जब तक जलता रहेगा, तब तक अपराध का अंधकार छिपा रहेगा।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

25 जनपदीय न्यायालय एवं लोक अदालत

(न्यायिक सक्रिता-जनहितवाद एवं लोकायुक्त)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 205 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 205 व 206 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. राजस्व न्यायालय पर एक टिप्पणी लिखिए।

उ०– **राजस्व न्यायालय–** लगान, मालगुजारी, सिंचाई तथा बंदोबस्त आदि से संबंधी मुकदमों को राजस्व के विवाद कहा जाता है। राजस्व संबंधी मुकदमों की सुनवाई के लिए जनपद में जिन न्यायालयों की व्यवस्था की जाती है, उन्हें राजस्व न्यायालय कहते हैं। राजस्व न्यायालय के अंतर्गत आयुक्त, जिलाधिकारी, अपर जिलाधिकारी, उपजिलाधिकारी, तहसीलदार के राजस्व न्यायालय होते हैं। ये न्यायालय अपने-अपने क्षेत्र में शांति एवं व्यवस्था बनाए रखते हैं।

2. लोक अदालत से आप क्या समझते हैं? इसकी दो विशेषताएँ बताइए।

उ०– लोक अदालत का शाब्दिक अर्थ 'जन अदालत' या 'जनता की अदालत' है। भारत में लोक अदालत का शुभारंभ भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश श्री पी.एन. भगवती ने किया। भारत सरकार ने शीघ्र, सस्ता और सुलभ न्याय का लाभ जन-जन तक पहुँचाने के लिए लोक अदालत की व्यवस्था की है। लोक अदालत में न्यायाधीश, एक परामर्शदाता के रूप में कार्य करके सरल ढंग से परस्पर सुलह-समझौते के आधार पर मुकदमों का निबटारा करवाता है। लोक-अदालत की दो मुख्य विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं–

(i) लोक अदालत दीवानी, फौजदारी तथा राजस्व आदि सभी विवादों की सुनवाई करती है।

(ii) लोक अदालतों में विवादों का निबटारा समझौतों के आधार पर होता है। फैसलों को कोर्ट फाइल में अंकित कर दिया जाता है।

3. लोक अदालतों का गठन क्यों किया जाता है? इसकी स्थापना के दो कारण लिखिए।

उ०– मुकदमे के बोझ से दबे भारतीय न्यायालयों के कार्यभार को घटाकर जनसामान्य की शीघ्र और सस्ता न्याय सुलभ कराने के लिए लोक अदालतों का गठन किया जाता है। लोक अदालतों की स्थापना के दो कारण निम्नलिखित हैं–

(i) देश में न्यायाधिशों की कम संख्या होने के कारण।

(ii) आए दिन होने वाली वकीलों की हड़तालों से मुकदमें में हो रहे विलंब के कारण।

4. लोक अदालत का मुख्य उद्देश्य क्या है? क्या इसके निर्णय के विरुद्ध अपील हो सकती है?

उ०– लोक अदालत का उद्देश्य मुकदमों के बोझ से लदे भारतीय न्यायालयों के कार्यभार को घटाकर जनसामान्य को शीघ्र और सस्ता न्याय सुलभ कराना है। लोक अदालतों के निर्णय को विधिक न्यायलयों के समान ही मान्यता प्राप्त है। इसके निर्णय के विरूद्ध किसी भी न्यायालय में अपील नहीं की जा सकती है।

5. जिला स्तर की अदालतों के गठन पर प्रकाश डालिए और इनके दो कार्यों का उल्लेख कीजिए।

उ०– जिला स्तरीय न्याय प्रणाली के अंतर्गत जिले के दीवानी, फौजदारी तथा राजस्व न्यायालयों (अदालतों) का गठन किया गया है। इन पर राज्य के उच्च न्यायालयों का प्रशासनिक नियंत्रण होता है। जिलास्तर के न्यायालयों के दो कार्य निम्न प्रकार हैं–

(i) जनपद के नागरिकों के जान-माल की सुरक्षा करना तथा विवादों का निबटारा करना।

(ii) अपराधियों को दंडित करना।

6. जिला न्यायालय के तीन कार्य लिखिए।

उ०– जिला न्यायालय के तीन कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) जिले के नागरिकों की जान-माल की सुरक्षा करना।

(ii) विवादों का निबटारा करना।

(iii) अपराधियों को दंडित करना।

7. जिले में राजस्व न्यायालय के रूप में सर्वोच्च अधिकारी कौन होता है? उसके निर्णय के विरूद्ध कहाँ अपील की जा सकती है?

उ०– जिले में राजस्व न्यायालय के रूप में सर्वोच्च अधिकारी जिलाधीश होता है। उसके विरूद्ध कमिश्नर के न्यायालय में अपील की जा सकती है।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. जिला स्तर की न्याय व्यवस्था की विवेचना कीजिए और जिला स्तर पर कार्यरत तीनों प्रकार के न्यायालयों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उ०– **जनपदीय न्यायालय–** ग्राम, कस्बे, नगर तथा तहसीलों से मिलकर एक जनपद बनता है। जनपद का सर्वोच्च प्रशासनिक अधिकारी जिलाधिकारी होता है। उसका कार्य जिले में न्याय व्यवस्था को चाक-चौबंद बनाए रखते हुए, वहाँ शांति और सुरक्षा की स्थापना करना है। जनपद में नागरिकों के जान-माल की सुरक्षा करने, विवादों का निबटारा करने तथा अपराधियों को दंडित करने के उद्देश्य से जनपद न्यायालयों की व्यवस्था की गई है। जनपद न्यायालय का अधिकार क्षेत्र संपूर्ण जनपद होता है। राज्य का सर्वोच्च न्यायालय उच्च न्यायालय है, अत: उसके अधीन प्रत्येक जनपद में जिन न्यायालयों की स्थापना की गई है, उन्हें जनपद न्यायालय कहा जाता है।?

न्यायालय के प्रकार– अधिकांश देशों में दो प्रकार के न्यायालय होते हैं– दीवानी तथा फौजदारी न्यायालय।

दीवानी न्यायालय वे होते हैं जो उन वादों की सुनवाई करते हैं, जो संपत्ति के लेन-देन, जायदाद के बँटवारे, साझेदारी, ट्रेडमार्क या वस्तुओं के क्रय-विक्रय से संबंधित होते हैं। **फौजदारी न्यायालय** वे होते हैं, जो मार-पीट, चोरी हत्या, डकैती या अपहरण से संबंधित मुकदमों की सुनवाई करते हैं। इसके अलावा सभी राज्यों में स्थापित राजस्व न्यायालय लगान वसूली से संबंधित मामलों को देखते हैं।

उच्च न्यायालय के अधीन जिले में दीवानी, फौजदारी तथा राजस्व तीन प्रकार के न्यायालय होते हैं।

इन न्यायालयों में नीचे से ऊपर की ओर एक क्रम बनाया गया है, प्रत्येक निचली अदालत के निर्णय के विरुद्ध ऊपर की अदालत में अपील की जा सकती है तथा ऊपरी अदालतों के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील करने की व्यवस्था की गई है।

जनपदीय न्याय प्रणाली– जनपद के दीवानी, फौजदारी तथा राजस्व न्यायालयों को निम्नवत् दर्शाया जा सकता है–

(i) जनपद में निम्नलिखित दीवानी न्यायालय कार्यरत हैं–

(क) जिला जज का न्यायालय– यह जनपद का सबसे बड़ा दीवानी न्यायालय है। जिले में न्याय व्यवस्था को सुचारु बनाए रखना इसका कर्तव्य है। जिला जज की नियुक्ति राज्यपाल उच्च न्यायालय के परामर्श से करता है। यह प्रारंभिक तथा अपील के रूप में दोनों प्रकार के मुकदमों की सुनवाई कर सकता है। 2 हजार रुपए से 5 लाख रुपए तक के मुकदमे सीधे इस न्यायालय में दायर किए जाते हैं। यह न्यायालय इतनी ही धनराशि वाले मुकदमों की अपीलें भी सुनता है। बड़े जिलों में काम की अधिकता होने पर अतिरिक्त जिला न्यायाधीश की भी नियुक्ति की जा सकती है।

(ख) सिविल जज का न्यायालय– जिला जज के नीचे सिविल जज का न्यायालय होता है। इस न्यायालय को जिला जज के समान अधिकार प्राप्त होते हैं। यह न्यायालय 1 लाख रुपए तक के मुकदमों की अपीलें सुन सकता है। इसके निर्णय के विरुद्ध जिला जज के न्यायालय में अपील की जा सकती है।

(ग) मुंसिफ का न्यायालय– सिविल जज के न्यायालय के नीचे मुंसिफ का न्यायालय होता है। यह न्यायालय 2000 से लेकर 1 लाख रुपए तक के मुकदमे सुन सकता है। इसे अपीलें सुनने का अधिकार नहीं होता।

(घ) खफीफा न्यायालय– मुंसिफ के नीचे खफीफा न्यायालय की व्यवस्था की गई है। इसे 5 हजार रुपए तक के मुकदमे सुनने का अधिकार है। यह न्यायालय किराया-वसूली तथा किराएदार की बेदखली आदि के मुकदमों की सुनवाई कर सकता है। इस न्यायालय की स्थापना बड़े नगरों में कार्यभार कम करने के लिए की गई है। इस न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध अपील नहीं की जा सकती है।

(ङ) न्याय पंचायत– न्याय पंचायत को 500 रुपए तक के मुकदमे सुनने का अधिकार होता है। इसमें कोई भी वकील मुकदमे की पैरवी नहीं कर सकता। ऐसा इसलिए किया गया है, ताकि भोली-भाली जनता को निष्पक्ष और सस्ता न्याय मिल सके। न्याय पंचायत के निर्णय के विरुद्ध अपील करने का प्रावधान नहीं रखा गया है।

(ii) जनपद के फौजदारी न्यायालय– जनपद में मार-पीट, लड़ाई-झगड़ों, धोखाधड़ी के अपराधों के साथ-साथ हत्या होना आम बात है। ये सभी अपराध फौजदारी के अंतर्गत आते हैं। जनपद में इन मुकदमों की सुनवाई के लिए निम्नलिखित न्यायालयों की व्यवस्था की गई है–

(क) सेशन जज का न्यायालय– जनपद में फौजदारी का सबसे बड़ा न्यायालय सेशन जज का न्यायालय (सत्र न्यायालय) होता है। जिला जज ही सेशन जज के रूप में कार्य करता है। दीवानी मुकदमों की सुनवाई करते समय इसे जिला जज तथा फौजदारी के मुकदमों की सुनवाई करते समय सेशन जज कहा जाता है। सेशन जज को प्रारंभिक तथा अपील संबंधी मुकदमे सुनने का अधिकार है। इसे मृत्यु दंड देने का अधिकार है, परंतु मृत्यु दंड देने के लिए इसे उच्च न्यायालय से अनुमति लेनी पड़ती है।

(ख) न्यायालय मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी– कलेक्टर या डिप्टी कलेक्टर प्रथम-श्रेणी के मजिस्ट्रेट के रूप में कार्य करते हैं। ये 3 वर्ष तक की कैद तथा 5000 रुपए तक का जुर्माना कर सकते हैं। इनके निर्णय के विरुद्ध सेशन जज के यहाँ अपील की जा सकती है।

(ग) न्यायालय मजिस्ट्रेट द्वितीय श्रेणी– तहसीलदार द्वितीय श्रेणी के मजिस्ट्रेट के रूप में कार्य करता है, जिसे 1 वर्ष तक की कैद तथा 2000 रुपए तक का जुर्माना करने का अधिकार होता है। इसके निर्णय के विरुद्ध मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी के यहाँ अपील की जा सकती है।

(घ) न्यायालय मजिस्ट्रेट तृतीय श्रेणी– नायब तहसीलदार तृतीय श्रेणी के मजिस्ट्रेट के रूप में कार्य करता है। इसे 1 माह की कैद तथा 500 रुपए तक का जुर्माना करने का अधिकार होता है। इसके निर्णय के विरुद्ध मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी के यहाँ अपील की जा सकती है।

(ङ) **अवैतनिक मजिस्ट्रेट–** जनपद में नियुक्त किए गए कुछ अवैतनिक मजिस्ट्रेट फौजदारी के मुकदमों का निर्णय करते हैं। अब इनकी नियुक्ति की व्यवस्था बंद कर दी गई है।

(च) **न्याय पंचायत–** गाँवों में फौजदारी के छोटे-मोटे मुकदमे न्याय पंचायत सुनती है। यह 500 रुपए तक जुर्माना कर सकती है। इसे कारावास करने का अधिकार नहीं है। इसके निर्णय के विरुद्ध अपील नहीं की जा सकती।

(iii) जनपदीय राजस्व न्यायालय– लगान, मालगुजारी, सिंचाई आदि के मुकदमों को राजस्व के विवाद कहा जाता है। इनसे संबंधित मुकदमे सुनने के लिए जनपद में निम्नलिखित न्यायालयों की व्यवस्था की गई है–

(क) **राजस्व परिषद्–** यह राजस्व संबंधी मुकदमों का निर्णय करने वाली राज्य-स्तरीय सबसे बड़ी अदालत है। यह जनपद के राजस्व न्यायालय के निर्णयों के विरुद्ध अपीलें सुनती है। राजस्व परिषद् के निर्णयों के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील की जा सकती है।

2. परिवार न्यायालय का अर्थ और उद्देश्य बताइए।

उ०– **परिवार न्यायालय–** परिवार समाज की एक लघु इकाई है। परिवार में सुख और शांति होने का अर्थ है, 'सुखी समाज और खुशहाल राष्ट्र'। परिवार के छोट-मोटे झगड़े कभी-कभी विकराल रूप ले लेते हैं। अत: केंद्र सरकार ने पारिवारिक समस्याओं के समाधान हेतु, जो न्यायिक व्यवस्था की, उसे परिवार न्यायालय कहा गया। भारतीय संसद ने 1984 ई० में अधिनियम पारित करके देश के विविध राज्यों में परिवार न्यायालयों की स्थापना की है। उत्तर प्रदेश में परिवार न्यायालय कानून 2 अक्टूबर, 1986 ई० में लागू किया गया। 10 फरवरी, 1986 ई० में इलाहाबाद में प्रथम विशेष महिला न्यायालय ने कार्य प्रारंभ किया। उत्तर प्रदेश के विभिन्न जनपदों में अब तक 16 परिवार न्यायालय स्थापित हो चुके हैं, जिनमें हजारों पारिवारिक विवाद प्रेमपूर्वक निबटाए जा चुके हैं।

परिवार न्यायालय स्थापित करने के उद्देश्य– परिवार न्यायालय स्थापित करने के उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

(i) स्त्रियों और बालकों के हित में पारिवारिक विवादों में यथाशीघ्र समझौता कराना।

(ii) शादी–विवाह विच्छेद, संपत्ति, भरण पोषण तथा चरित्र आदि से संबंधित विवादों को मधुर वातावरण में निबटाना।

(iii) परिवार के सदस्यों को न्यायालयों की लंबी, खर्चीली तथा उबाऊ प्रक्रिया से बचाना।

(iv) स्त्रियों और बच्चों को उनके कानूनी अधिकार दिलवाना।

(v) सामान्य विवादों के कारण परिवार में उत्पन्न होने वाले मतभेदों की दरारों को रोकना।

(vi) परिवार में पुन: प्रेम, सहयोग और सौहार्द उत्पन्न करना।

(vii) परिवारों को शीघ्र और सस्ता न्याय सुलभ कराना।

केंद्र सरकार ने परिवार न्यायालयों की व्यवस्था करके समाज को प्रेम, सहयोग और प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने का स्वर्णिम अवसर प्रदान किया है। परिवार जैसे-जैसे विकसित होगा, राष्ट्र के सर्वांगीण विकास का सपना उतना ही साकार बनेगा। परिवार न्यायालय **सुखी जन, बढ़े धन** के सिद्धांत का अनुपालन करते हुए उपयोगी तथा महत्वपूर्ण बन गए हैं।

3. जिला न्यायालय पर एक टिप्पणी लिखिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

4. लोक अदालतों के गठन, उद्देश्यों तथा महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– **लोक अदालत–** लोक अदालत का शाब्दिक अर्थ **'जन न्यायालय या जनता की अदालत'** है। भारत में लोक अदालत का शुभारंभ करने का श्रेय भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश श्री पी०एन० भगवती को है, जिनकी अध्यक्षता में भारत सरकार ने 'कानूनी सहायता योजना कार्यान्वयन समिति' का गठन किया। उन्होंने शिविर रूप में लोक अदालतों की शृंखला प्रारंभ की। भारत में प्रथम लोक अदालत 1982 ई० में गुजरात के जूनागढ़ जिले में लगाई गई। इसकी सफलता से प्रभावित होकर देश के विभिन्न भागों में लोक अदालत लगाने का क्रम ही चल निकला। लोक अदालत लगाने का उद्देश्य मुकदमों के बोझ से दबे भारतीय न्यायालयों के कार्यभार को घटाकर जनसामान्य को शीघ्र और सस्ता न्याय सुलभ कराना है। न्यायाधीशों की व्यवस्था तथा वकीलों की हड़तालें मुकदमों के निर्णयों में रोड़ा अटकाकर न्याय-प्रक्रिया को बाधा पहुँचाते हैं। अत: भारत सरकार ने शीघ्र, सस्ता और सुलभ न्याय का लाभ जन-जन तक पहुँचाने के लिए लोक अदालत की व्यवस्था की है। लोक

अदालत में न्यायाधीश, एक परामर्शदाता के रूप में कार्य करके सरल ढंग से परस्पर सुलह-समझौते के आधार पर मुकदमों का निबटारा करवाता है। दिल्ली में लगी एक लोक अदालत ने एक दिन में 150 विवादों का निबटारा करके सबको चौंका दिया था। वर्तमान में केंद्र तथा राज्य सरकारें स्थायी लोक अदालतों की स्थापना के लिए कार्यरत हैं।

लोक अदालत की विशेषताएँ– लोक अदालत अपनी निम्नलिखित विशेषताओं के लिए जानी जाती हैं–

(i) लोक अदालतें दीवानी, फौजदारी तथा राजस्व आदि के सभी विवादों की सुनवाई करती हैं।

(ii) लोक अदालतों में विवादों का निबटारा आपसी समझौतों के आधार पर होता है। फैसलों को कोर्ट फाइल में अंकित कर दिया जाता है।

(iii) लोक अदालतों में वकीलों को लाना मना होता है। वादी तथा प्रतिवादी परस्पर वार्तालाप करके विवाद का निबटारा करते हैं।

(iv) लोक अदालतों में वैवाहिक, पारिवारिक, सामाजिक झगड़े, किराया, बेदखली, वाहनों के चालान तथा बीमा क्लेम आदि के विवादों का निबटारा किया जाता है।

(v) लोक अदालतों में सेवानिवृत न्यायाधीश, राजपत्रित अधिकारी तथा समाज के प्रतिष्ठित व्यक्ति परामर्शदाता के रूप में भूमिका निभाकर विवादों का निबटारा करते हैं।

(vi) लोक अदालतें न्यायालय द्वारा बंदी बनाए गए व्यक्ति को नहीं छुड़वा सकतीं। इन्हें समझौता कराकर या जुर्माना करके या चेतावनी देकर छोड़ने का ही अधिकार है।

(vii) लोक अदालतों के निर्णयों को विधिक न्यायालयों के समान ही मान्यता प्राप्त है। इनके निर्णयों के विरुद्ध किसी भी न्यायालय में अपील नहीं की जा सकती।

(viii) लोक अदालत अभी तक जनता की अदालत ही बनी हुई हैं। इन्हें कानूनी मान्यता प्राप्त नहीं हो पाई है।

(ix) केंद्र सरकार संसद में विधेयक पारित करके इन्हें कानूनी अधिकार देने के लिए प्रयासरत है।

(x) लोक अदालतों में मुकदमों की सुनवाई के लिए कोई शुल्क नहीं देना पड़ता।

लोक अदालत का महत्व– कहावत है, ''देर से मिलने वाला न्याय, न्याय न होकर एक राहत मात्र होती है।'' इस कहावत के आलोक में भारत के जन–सामान्य को सस्ता और शीघ्र न्याय दिलवाने में **लोक अदालतें** बड़ी उपयोगी सिद्ध हो रही हैं। इनके महत्व को निम्नवत् स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) लोक अदालत 'जन-अदालत' बनकर भारत के निर्धन तथा सामान्य लोगों को सस्ता और शीघ्र न्याय दिलवाने में ब्रह्मास्त्र सिद्ध हुई है।

(ii) लोक अदालतों ने शीघ्र न्याय सुलभ कराने की व्यवस्था देकर न्यायालयों के विस्तृत कार्य भार को घटा दिया है।

(iii) लोक अदालतों ने वादी और प्रतिवादी को, न्याय की कठिन प्रक्रिया से निकालकर, आपसी समझौते द्वारा वाद निबटाने का शुभ अवसर प्रदान किया है।

(iv) लोक अदालतों ने अब तक लाखों विवाद सुलझाकर न्याय विभाग तथा राष्ट्र की महती सेवा की है।

(v) लोक अदालतों में वकीलों की व्यवस्था पर रोक होने से, लोग न्याय के दाँव-पेंच तथा खर्चों से बच जाते हैं।

(vi) लोक अदालतों का निर्णय विधिवत् मान्य है। उसके विरुद्ध अपील की व्यवस्था न होने के कारण विवाद का निबटारा अंतिम रूप से हो जाता है।

(vii) लोक अदालतें भारत के निर्धन, सरल-स्वभावी तथा अल्पज्ञानी लोगों के लिए 'न्यायिक वरदान' बन गई हैं।

(viii) भारत की बढ़ती जनसंख्या के लिए न्याय की सुलभ-व्यवस्था में इन अदालतों का योगदान अद्वितीय माना जाता है।

लोक अदालतों को अधिक शक्तिसंपन्न और सुदृढ़ बनाकर इनके महत्व में चार चाँद लगाए जा सकते हैं। अत: इनके महत्व को एक पंक्ति में इन शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है, ''जनसामान्य को शीघ्र एवं सस्ता न्याय सुलभ कराने की दिशा में लोक अदालतें एक प्रगतिशील एवं क्रांतिकारी कदम हैं।''

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

26 भारत की विदेश नीति

(गुट-निरपेक्षता एवं पंचशील, नि:शस्त्रीकरण रंगभेद नीति का विरोध)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 216 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 216 व 217 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. गुट-निरपेक्ष नीति का क्या अर्थ है?

उ०– गुट-निरपेक्ष नीति का अर्थ है कि विश्व में शक्तिशाली गुटों से पृथक रहकर कौन सही है और कौन गलत, इस पर स्वतंत्र निर्णय लेना ओर सही का साथ देना। पं० जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में, ''गुट-निरपेक्ष नीति शांति का मार्ग है और लड़ाई से बचाव का मार्ग है।'' भारत ने गुट-निरपेक्ष नीति का अनुपालन करके स्वयं को एक गुट-निरपेक्ष राष्ट्र के रूप में विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया है।

2. गुट-निरपेक्ष आंदोलन के दो महत्व बताइए।

उ०– **गुट-निरपेक्ष आंदोलन के दो महत्व निम्नलिखित हैं–**

(i) गुट-निरपेक्ष आंदोलन दो शक्ति गुटों में संतुलन बनाए रखने तथा विश्व को युद्ध की भयानकता से बचाने के लिए प्रासंगिक है।

(ii) गुट-निरपेक्ष आंदोलन शक्तिशाली राष्ट्रों के आर्थिक साम्राज्यवाद पर प्रभावी नियंत्रण लगाने के लिए प्रासंगिक बन गया है।

3. गुट–निरपेक्षता से क्या आशय है? क्या इस नीति का पालन करने से भारत की अंतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई है?

उ०– **गुट–निरपेक्षता का अर्थ–** गुट-निरपेक्षता का सामान्य अर्थ है– शक्ति गुटों से अपना पृथक अस्तित्व बनाए रखने की भावना। गुट-निरपेक्षता धीरे-धीरे विश्वव्यापी आंदोलन बन गया। गुट-निरपेक्षता तटस्थता की नीति से भिन्न है। किसी विवाद में यह जानते हुए कि कौन ठीक है और कौन गलत, चुप रहकर किसी का पक्ष न लेना तटस्थता है, जबकि सही का साथ देना गुट-निरपेक्षता है। विश्व में शक्तिशाली राष्ट्रों द्वारा, निर्बल और पिछड़े राष्ट्रों का शोषण असहनीय होता चला गया। अत: शक्तिशाली राष्ट्रों के अन्याय और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाकर उनका सामना करने की भावना से उत्पन्न नया आंदोलन गुट-निरपेक्ष आंदोलन बन गया। गुट–निरपेक्षता को परिभाषित करते हुए पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, ''गुट-निरपेक्षता शांति का मार्ग है और लड़ाई से बचाव का मार्ग है।'' गुट-निरपेक्षता सैनिक गुटबंदियों से दूर रहकर जिस नए संगठन को जन्म देने में सफल रहा, उसे **तृतीय विश्व** कहा गया। श्रीमती इंदिरा गाँधी के शब्दों में, ''गुट-निरपेक्षता अपने आप में एक नीति है। यह केवल एक लक्ष्य नहीं, इसके पीछे उद्देश्य यह है कि निर्णयकारी स्वतंत्रता और राष्ट्र की सच्ची भक्ति तथा मौलिक हितों की रक्षा की जाए।''

हाँ, गुट-निरपेक्ष नीति का पालन करने से भारत की अंतर्राष्ट्रीय ख्याति में वृद्धि हुई है।

4. वर्तमान परिस्थितियों में भारत को गुट–निरपेक्ष नीति का अनुसरण क्यों करना चाहिए?

उ०– वर्तमान परिस्थितियों में भारत को गुट-निरपेक्ष नीति का अनुसरण निम्नलिखित कारणों से करना चाहिए–

(i) भारत को अपने पड़ोसी राष्ट्रों से संबंध बनाए रखने के लिए गुट-निरपेक्षता का अनुसरण करना चाहिए क्योंकि किसी राष्ट्र की विदेश नीति उसकी भौगोलिक स्थिति पर निर्भर करती है। सार्क संगठन की स्थापना और उसकी गतिविधियों में भाारत की सक्रिय भूमिका उसकी भौगोलिक स्थिति के कारण ही है।

(ii) राष्ट्र में व्याप्त राजनीतिक विचारधारा का प्रत्यक्ष प्रभाव विदेश नीति पर पड़ता है।

(iii) भारत एक गरीब विकासशील राष्ट्र है जिसे आर्थिक विकास के लिए विदेशी आर्थिक सहायता की अत्यंत आवश्यकता है। इसलिए भारत को गुट निरपेक्षता की नीति आवश्यक है।

5. पंचशील के दो सिद्धांतों का वर्णन कीजिए।

उ०– पंचशील के दो सिद्धांत निम्नलिखित हैं–

(i) प्रत्येक राष्ट्र एक-दूसरे राष्ट्र की एकता व अखंडता का सम्मान करें।

(ii) विभिन्न राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंधों की स्थापना करना।

6. भारत की विदेश नीति की दो मुख्य विशेषताएँ क्या हैं?

उ०– भारत की विदेश नीति की दो प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) जातिवाद तथा रंगभेद का घोर विरोध– भारत जातिवाद तथा रंगभेद का भाव रखने वाले देशों का घोर विरोधी रहा है। भारत ने दक्षिण अफ्रीकी सरकार के रंगभेद का विरोध ही नहीं किया, वरन् उससे राजनीतिक संबंध भी विच्छेद कर लिए। भारत ने रोडेशिया की गोरी सरकार का भी इसी संदर्भ में घोर विरोध किया।

(ii) नि:शस्त्रीकरण का पक्षधर– भारत ने 'शांतिदूत' बनकर सदैव ही नि:शस्त्रीकरण का पक्ष लिया है। भारत द्वारा 1982 ई० में प्रस्तुत नि:शस्त्रीकरण का प्रस्ताव इस क्षेत्र के लिए नींव का पत्थर सिद्ध हुआ। भारत का विश्वास है कि एक बमवर्षक विमान बनाने में जितना धन व्यय होता है, उससे कई अस्पताल और स्कूल बनाए जा सकते हैं। विमान मौत बरसाता है, जबकि अस्पताल और विद्यालय जीवन के फूल खिलाते हैं। भारत की विदेश नीति इसी सिद्धान्त की अनुयायी बनी हुई है।

7. गुट-निरपेक्ष नीति क्या है? इसके प्रर्वतक कौन–कौन थे? इसका प्रथम सम्मेलन कब और कहाँ आयोजित किया गया था?

उ०– विश्व में शक्ति गुटों से पृथक रहना तथा अंतर्राष्ट्रीय मामलों में किसी बाह्य दबाव के अच्छाई और बुराई को ध्यान में रखते हुए निर्णय लेने को गुट-निरपेक्ष नीति कहते हैं।

गुट-निरपेक्ष नीति के प्रवर्तक भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू, मिस्र के राष्ट्रपति कर्नल नासिर तथा युगोस्लाविया के राष्ट्रपति मार्शल टीटो थे।

गुट–निरपेक्ष आन्दोलन का प्रथम सम्मेलन सन् 1961 ई० में युगोस्लाविया के बेलग्रेड नगर में हुआ।

8. भारत की विदेश नीति के तीन सिद्धांतों का वर्णन कीजिए।

उ०– भारत में विदेश नीति के तीन सिद्धांत निम्नलिखित हैं–

(i) विश्व में संघर्ष एवं तनाव के झंझावतों को प्रेम, त्याग और अहिंसा के सिद्धांतों से रोककर ही स्थायी विश्वशांति की स्थापना की जा सकती है, यह भारतीय विदेश नीति का सार्वभौमिक सिद्धांत है।

(ii) तटस्थता या गुट-निरपेक्षता भारत की विदेश-नीति की आधारभूत सिद्धांत है।

(iii) सभी राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बनाना।

(iv) पंचशील सिद्धांतों का अनुपालन करना।

9. विश्व-शांति के लिए नि:शस्त्रीकरण क्यों आवश्यक है? किन्हीं दो कारणों का उल्लेख कीजिए।

उ०– **नि:शस्त्रीकरण की आवश्यकता–** शीत युद्ध और तनाव पर प्रभावी रोक लगाने का एक मात्र सही उपाय नि:शस्त्रीकरण है। अत: वर्तमान परिवेश में नि:शस्त्रीकरण की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से और भी महत्वपूर्ण हो जाती है–

(i) युद्धों पर नियंत्रण– अस्त्र-शस्त्र के भंडार युद्धों को जन्म देते हैं। अत: नहीं होंगे अस्त्र और न होगा युद्ध। इस संदर्भ में श्री कोहन का यह कथन विचारणीय होगा, ''नि:शस्त्रीकरण द्वारा राष्ट्रों के भय और मतभेद को कम करके शांतिपूर्ण समझौतों की प्रक्रिया को सुविधापूर्ण तथा शक्तिशाली बनाया जा सकता है।'' शस्त्रीकरण युद्धों का जनक है। नि:शस्त्रीकरण उनका नियंत्रक होने के कारण बहुत आवश्यक है।

(ii) स्थायी विश्व-शांति की स्थापना– स्थायी विश्व-शांति की स्थापना का सपना नि:शस्त्रीकरण ही पूरा कर सकता है। शस्त्र न होने पर युद्ध नहीं होगा और युद्ध न होने पर स्थायी विश्व-शांति को अपने पंख फैलाने का अवसर मिलेगा। नि:शस्त्रीकरण ही वह मसाला है, जो स्थायी विश्व-शांति का महल खड़ा कर सकता है। नि:शस्त्रीकरण विश्व-शांति को जन्म देने के कारण, वर्तमान समय की आवश्यकता बन गया है।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. ''भारत की विदेश नीति का आधार गुट-निरपेक्षता है।'' स्पष्ट कीजिए।

उ०– भारतीय विदेश नीति का दूसरा आधार स्तंभ है– गुट-निरपेक्षता का सिद्धांत। पंचशील और नि:सशस्त्रीकरण की भावना ने भारत की विदेश नीति को गुट–निरपेक्षता की गइराई तक जोड़ दिया है। 1947 ई० में गुट-निरपेक्ष नीति ने तृतीय विश्व को जन्म दिया। अत: भारत ने गुटों से पृथक रहने की नीति का अनुपालन करके स्वयं को एक गुट–निरपेक्ष राष्ट्र के रूप में विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया। आइए, परीक्षण करें कि गुट–निरपेक्षता भारतीय विदेश नीति का कितना मजबूत आधार बनी है–

(i) **गुटों से दूर रहना–** भारत ने अपनी आंतरिक सुरक्षा, बढ़ती जनसंख्या, सैन्य संगठन और बहुआयामी विकास को ध्यान में रखते हुए शक्ति शिविर में प्रवेश न करके स्वयं को पूँजीवादी और साम्यवादी शक्ति गुटों से पृथक रखा।

(ii) **गुटों से पृथक रहकर कठिनाइयों का समाधान–** भारत ने अपनी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक समस्याओं का समाधान गुटों से जुड़कर नहीं, उनसे पृथक रहकर किया। उसने गुट–निरपेक्षता की नीति अपनाकर अपना भौगोलिक और सामरिक संतुलन बनाए रखते हुए आर्थिक क्षेत्र के साथ विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विकास किया।

(iii) **संघर्ष और तनावों से बचाव–** भारत ने अपनी विदेश नीति के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय तनावों और संघर्षों में उलझने के बजाय बचाव, सुरक्षा और अहिंसा का मार्ग चुना। पं० जवाहरलाल नेहरू के अनुसार, ''गुट–निरपेक्षता लड़ाई से बचाव और शांति का मार्ग है।'' भारत सैनिक गुटबंदियों से दूर रहकर गुट–निरपेक्षता का अक्षरश: अनुपालन कर रहा है।

(iv) **उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद का विरोध–** भारत गुट-निरपेक्षता के इस सिद्धांत का पक्का समर्थक है। उसने एशिया तथा अफ्रीका के देशों को उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद से बचाने के लिए, उनके स्वतंत्रता आंदोलन में भरपूर सहयोग दिया है।

(v) **स्वतंत्र विदेश नीति का अनुसरण–** गुट–निरपेक्षता की नीति की यह मूलभूत विशेषता है, जिसका भारत ने अपनी स्वतंत्र विदेश नीति में अनुपालन किया है। भारत ने अपनी विदेश नीति बिना किसी बाह्य दबाव के बनाई है।

(vi) **संयुक्त राष्ट्र संघ का सहयोग–** भारत की विदेश नीति संयुक्त राष्ट्र संघ के सिद्धांतों में विश्वास रखते हुए, उसके सभी कार्यों में उसका सहयोग करती है। भारतीय विदेश नीति का लक्ष्य रहा है कि यह अंतर्राष्ट्रीय संस्था शक्तिसंपन्न बनकर विश्व–शांति और भाईचारे के वातावरण का निर्माण करे।

भारतीय विदेश नीति गुट-निरपेक्षता के सिद्धांतों के अनुपालन में अग्रणी रही है। इस संदर्भ में स्व. श्री राजीव गाँधी के ये शब्द उल्लेखनीय बन जाते हैं, ''हमें शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व, नि:शस्त्रीकरण, मानवाधिकार तथा अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की ज्वलंत समस्याओं पर ध्यान देना है।'' भारतीय विदेश नीति गुट–निरपेक्षता के सिद्धांत की पोषक ही नहीं अनुगामी भी है।

2. गुट–निरपेक्ष आंदोलन से आप क्या समझते हैं? क्या यह वर्तमान परिस्थितियों में प्रासंगिक है?

उ०– **गुट–निरपेक्ष आंदोलन–** गुट-निरपेक्ष आंदोलन को समझने के लिए उसकी पृष्ठभूमि में झाँकना आवश्यक है। गुट–निरपेक्ष आंदोलन को जन्म देने का श्रेय, द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात प्रारंभ हुए शीत युद्ध से उत्पन्न तनाव और संघर्ष को है। द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हो गया, परंतु जाते–जाते विश्व को दो शक्ति गुटों में विभाजित कर गया। सैनिक संधियों और गठबंधनों ने राष्ट्रों के मध्य ईर्ष्या, द्वेष और गुटबंदी पैदा कर दी। द्वितीय विश्व युद्ध के महाविनाश ने उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद को झकझोरकर रख दिया और विस्तारवादी यूरोपीय शक्तियों को उपनिवेशों से अपना बोरिया–बिस्तर बाँधने का संकेत दे दिया। एशिया तथा अफ्रीका के परतंत्र देशों में स्वतंत्रता प्राप्ति की होड़ लग गई। सभी परतंत्र राष्ट्र स्वतंत्र होने लगे। नव–स्वतंत्र राष्ट्रों के समक्ष दो विकल्प थे–

(i) शक्ति गुटों में शामिल होकर पुन: आर्थिक दासता स्वीकार कर लेना।

(ii) गुटों से पृथक रहकर अपने बहुविकास के द्वार खोलना।

नव–स्वतंत्र राष्ट्रों ने गुटों से पृथक रहकर अपने नवनिर्माण का जो निर्णय लिया, उसी से गुट–निरपेक्ष आंदोलन की विचारधारा ने जन्म लिया। गुटों से पृथक रहने का भाव ही गुट–निरपेक्षता है।

गुट-निरपेक्ष आंदोलन का महत्व या प्रासंगिकता– गुट–निरपेक्षता आंदोलन वर्तमान युग में बड़ा महत्वपूर्ण बन चुका है,

अत: उसकी प्रासंगिकता निम्नलिखित कारणों से और अधिक बढ़ गई है–

(i) गुट-निरपेक्ष आंदोलन दो शक्ति गुटों में संतुलन बनाए रखने तथा विश्व को युद्ध की भयानकता से बचाने के लिए प्रासंगिक है।

(ii) गुट-निरपेक्ष आंदोलन शक्तिशाली राष्ट्रों के आर्थिक साम्राज्यवाद पर प्रभावी नियंत्रण लगाने के लिए प्रासंगिक बन गया है।

(iii) नव-स्वतंत्र देश जो आर्थिक तथा सैन्यबल के क्षेत्र में दुर्बल हैं, उन्हें शक्ति संपन्न राष्ट्रों की आर्थिक परतंत्रता से बचाने के लिए गुट-निरपेक्ष आंदोलन प्रासंगिक बन जाता है।

(iv) शीतयुद्ध, तनाव और संघर्ष से बचने तथा अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखने के लिए गुट-निरपेक्षता आज प्रासंगिक बनी हुई है।

(v) 21वीं शताब्दी के भावी आर्थिक युद्ध को रोकने के लिए निश्चय ही गुट-निरपेक्ष आंदोलन आवश्यक रूप से प्रासंगिक बन जाता है।

(vi) वर्तमान युग में परमाणु अस्त्र-शस्त्रों के बढ़ते भंडार पर प्रभावी नियंत्रण लगाने के लिए गुट-निरपेक्ष आंदोलन का महत्व बढ़ गया है।

(vii) प्राकृतिक संसाधनों के विदोहन को लेकर मची मारामारी, प्रदूषण तथा आतंकवाद जैसी समस्याओं का निश्चित समाधान खोजने के लिए गुट-निरपेक्षता प्रासंगिक ही नहीं आवश्यक बन गई है।

(viii) विश्व के सभी राष्ट्रों के लिए 'शांतिपूर्ण सहअस्तित्व' अपनाने तथा 'अनाक्रमण' का अनुपालन करने के लिए गुट–निरपेक्षता प्रासंगिक बन गई है।

3. भारत की विदेश नीति की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उ०– **भारत की विदेश नीति के सिद्धांत एवं विशेषताएँ–** भारत राम, कृष्ण, गाँधी, गौतम और महावीर का देश है। ये सभी महापुरुष सदाचरण और अहिंसा का सदुपदेश देते रहे। भगवान महावीर ने संपूर्ण विश्व को अहिंसा का पाठ पढ़ाते हुए 'जियो और जीने दो' का सिद्धांत दिया। अहिंसा के रंग में डूबी हमारी विदेश नीति में निम्नलिखित सिद्धांतों को महत्व दिया गया–

(i) विश्व–शांति– भारत देश और विदेश सभी स्थानों पर शांति चाहता है। विश्व में संघर्ष और तनाव के झंझावातों को प्रेम, त्याग, सहयोग और अहिंसा के सिद्धांतों से रोककर ही स्थायी विश्व-शांति की स्थापना की जा सकती है, यही भारतीय विदेश नीति का सार्वभौमिक सिद्धांत है।

(ii) गुट–निरपेक्षता– गुट–निरपेक्षता का सामान्य अर्थ है, शक्ति गुटों से पृथक रहना तथा अंतर्राष्ट्रीय मामलों में बिना किसी बाह्य दबाव के अच्छाई व बुराई को ध्यान में रखकर स्वतंत्र निर्णय लेना। द्वितीय विश्वयुद्ध के विनाश ने समूचे विश्व को पूँजीवादी और साम्यवादी दो शक्ति गुटों में बाँट दिया था। भारत ने गुट-निरपेक्षता का मार्ग ग्रहण कर तटस्थता को चुना। भारत ने गुट-निरपेक्ष संगठन के रूप में तृतीय विश्व का निर्माण किया। गुट-निरपेक्षता या तटस्थता भारत की विदेश नीति का आधारभूत सिद्धांत है। गुट-निरपेक्षता के सिद्धांत से भारत को दोनों ही गुटों से आर्थिक और तकनीकी सहयोग मिलता रहा है।

(iii) अन्य राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध– भारत की विदेश नीति विश्व के सभी राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बनाने पर बल देती है। पं० जवाहरलाल नेहरू ने इस आदर्श को इन शब्दों में स्पष्ट किया है, "भारत की विदेश नीति का मूल उद्देश्य विश्व के समस्त राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करना है।" भारत इस सिद्धांत का कठोरता से पालन करता आ रहा है। इतिहास गवाह है कि भारत ने आज तक किसी भी देश पर आक्रमण नहीं किया है और न ही किसी की भूमि पर कब्जा जमाने का प्रयास किया।

(iv) पंचशील के सिद्धांतों का अनुपालन– पंचशील बौद्ध धर्म के पाँच सिद्धांतों पर आधारित है। इसकी घोषणा भारत के प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू तथा चीन के प्रधानमंत्री चाऊ एन. लाई ने 1954 ई० में की थी। बाद में संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी पंचशील के सिद्धन्त को स्वीकार कर लिया था। पंचशील के सिद्धांत निम्नलिखित हैं–

(क) प्रत्येक राष्ट्र की एकता व अखंडता का पूर्ण सम्मान करना।

(ख) अनाक्रमण के सिद्धांत का पालन करना।

(ग) किसी राष्ट्र के आंतरिक मामले में हस्तक्षेप न करने की नीति का पालन करना।

(घ) प्रत्येक राष्ट्र के लाभ के लिए सहयोग की भावना रखना।

(ङ) शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति का पालन करना।

भारत की विदेश नीति में निहित पंचशील ही एक ऐसा मार्ग है, जिस पर चलकर विश्व को युद्ध के महाविनाश से बचाया जा सकता है। विश्व के अनेक देश इस सिद्धांत के प्रशंसक और अनुपालक बन चुके हैं।

(v) शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व– शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व का अर्थ है, समस्त छोटे-बड़े राष्ट्रों को परस्पर मिल-जुलकर अपना अस्तित्व बनाए रखना। यह पंचशील के सिद्धांत का ही एक खंड है, जिसे भारत ने अपनी विदेश नीति का अंग बना लिया है। शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के निम्नलिखित तीन आधार हैं–

(क) प्रत्येक राष्ट्र के स्वतंत्र अस्तित्व को पूर्ण मान्यता देना।

(ख) प्रत्येक राष्ट्र को अपने भाग्य का स्वयं निर्माता बनने देना।

(ग) पिछड़े हुए राष्ट्रों के आर्थिक विकास का दायित्व संयुक्त राष्ट्र संघ की समिति द्वारा स्वीकार करना।

भारत की विदेश नीति का यह सिद्धांत कहता है, ''आओ साथ-साथ बढ़ें, मिलकर सुखपूर्वक जियें।''

(vi) उपनिवेशवाद का विरोध– उपनिवेशवाद साम्राज्यवाद द्वारा बोई गई अन्याय और शोषण उगाने वाली फसल है। भारत की विदेश नीति उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद की प्रवृत्ति का घोर विरोध करती है। भारत ने साम्राज्यवाद के भार से दबे परतंत्र देश जैसे वियतनाम, घाना, मोरक्को तथा अल्जीरिया आदि के स्वतंत्र होने में सहयोग किया।

(vii) जातिवाद तथा रंगभेद का घोर विरोध– भारत जातिवाद तथा रंगभेद का भाव रखने वाले देशों का घोर विरोधी रहा है। भारत ने दक्षिण अफ्रीकी सरकार के रंगभेद का विरोध ही नहीं किया, वरन् उससे राजनीतिक संबंध भी विच्छेद कर लिए। भारत ने रोडेशिया की गोरी सरकार का भी इसी संदर्भ में घोर विरोध किया।

(viii) नि:शस्त्रीकरण का पक्षधर– भारत ने 'शांतिदूत' बनकर सदैव ही नि:शस्त्रीकरण का पक्ष लिया है। भारत द्वारा 1982 ई० में प्रस्तुत नि:शस्त्रीकरण का प्रस्ताव इस क्षेत्र के लिए नींव का पत्थर सिद्ध हुआ। भारत का विश्वास है कि एक बमवर्षक विमान बनाने में जितना धन व्यय होता है, उससे कई अस्पताल और स्कूल बनाए जा सकते हैं। विमान मौत बरसाता है, जबकि अस्पताल और विद्यालय जीवन के फूल खिलाते हैं। भारत की विदेश नीति इसी सिद्धांत की अनुयायी बनी हुई है।

4. भारतीय विदेश नीति के सिद्धांतों का वर्णन कीजिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

5. भारत की गुट–निरपेक्षता की नीति को बताइए। वर्तमान युग में इस नीति का क्या महत्व है?

उ०– **भारत की गुट निरपेक्षता की नीति–** 'गुट निरपेक्षता' का अर्थ है शक्ति के किसी भी गुट में सम्मिलित न होना तथा अंतर्राष्ट्रीय मामलों में बिना किसी बाह्य दबाव के अच्छाई व बुराई को ध्यान में रखकर स्वतंत्र निर्णय लेना। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विश्व के अधिकांश राष्ट्र दो गुटों में बँट गए– एक गुट का नेतृत्व रूस ने तथा दूसरे का संयुक्त राज्य अमेरिका ने किया है। किन्तु भारत ने गुट निरपेक्षता की नीति अपनाई है। अर्थात् हमने किसी भी गुट ने शामिल न होकर दोनों गुटों के राष्ट्रों से मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित किए हैं। भारत की इस नीति ने 'तृतीय विश्व' (गुट निरपेक्ष राष्ट्र) की स्थापना में बड़ा सहयोग दिया है। वैसे सोवियत संघ के विघटन के पश्चात् राष्ट्रों के अब दो गुट नहीं रह गए हैं।

गुट निरपेक्षता की नीति के पालन से भारत कई प्रकार से लाभान्वित हुआ है– (1) भारत ने दोनों गुटों के देशों से आर्थिक तथा तकनीकी सहायता प्राप्त करके अपना तीव्रता से विकास किया है। (2) भारत का एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में आत्म–सम्मान बढ़ा है। (3) भारत की इस नीति से अमेरिका तथा रूस के बीच की दूरी कम करने में, अंतर्राष्ट्रीय विवादों को निपटाने में तथा उपनिवेशवाद का विरोध करने में बड़ी सहायता प्रदान की है। (4) इस नीति के अपनाने से भारत अन्य राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करने में सफल रहा है।

वर्तमान युग में गुट–निरपेक्षता का महत्व– इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 2 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

6. पंचशील तथा भारत की विदेश नीति पर एक निबंध लिखिए।

उ०– **भारत की विदेश नीति और पंचशील–** भारत की विदेश नीति का आधार पंचशील के सिद्धांत हैं। भारत की विदेश नीति के जन्मदाता और पंचशील के सिद्धांतों के प्रणेता पं० जवाहरलाल नेहरू ने दोनों को भली प्रकार समन्वित किया है। इसके

लिए निम्नलिखित तथ्य प्रस्तुत किए जा सकते हैं–

(i) पंचशील का प्रथम सिद्धांत है कि **एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र की अखंडता और प्रभुसत्ता का सम्मान** करे। भारत की विदेश नीति इस सिद्धांत का अनुपालन पूर्ण निष्ठापूर्वक करती रही है। भारत ने सदैव विकसित राष्ट्रों से सहयोग प्राप्त किया है तथा पिछड़े राष्ट्रों को संबल प्रदान किया है।

(ii) अनाक्रमण का सिद्धांत पंचशील का दूसरा सिद्धांत है। भारत ने आज तक किसी भी राष्ट्र पर आक्रमण न करके अपनी विदेश नीति को इसी सिद्धांत के अनुरूप ढाल दिया है। इसीलिए भारत की विदेश नीति 'जियो और जीने दो' के सिद्धांत में विश्वास रखती है।

(iii) अहस्तक्षेप की भावना पंचशील के तृतीय सिद्धांत से प्रतिध्वनित होती है। यही भारत की विदेश नीति का आधार बन गई है। पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, "यह एक महत्वपूर्ण धारणा है कि प्रत्येक राष्ट्र को दूसरों के मामलों में हस्तक्षेप न करते हुए, अपने भाग्य का निर्माण करना चाहिए। जब कभी किसी सबल राष्ट्र ने दुर्बल राष्ट्र के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप किया, तो उसे भारत का विरोध झेलना पड़ा।

(iv) समानता और पारस्परिक सहयोग पंचशील का चौथा सिद्धांत है, जो भारत की विदेश नीति में पूर्णत: रच बस गया है। भारत सदैव से विकासशील और पिछड़े राष्ट्रों को विकसित राष्ट्रों के समकक्ष समानता देने के पक्ष में रहा है। भारत की विदेश नीति एकला चलो न होकर, परस्पर मिल-जुलकर रहने और विकास करने की पक्षधर रही है।

(v) शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व एवं आर्थिक सहयोग पंचशील का पंचम् सिद्धांत है, जो भारत की विदेश नीति में पूरी तरह रचा बसा है। भारत की विदेश नीति शांतिपूर्ण ढंग से रहने तथा आर्थिक विकास करने के मार्ग का अनुसरण करती है, जिससे विश्व में नवीन आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था बन सके। भारत संघर्षों को टालने के लिए शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व पर बल देता है। इसीलिए वह अपने पड़ोसी देशों पाकिस्तान, बांग्लादेश और चीन की घुसपैठों को भुलाकर, उनसे शांतिपूर्ण भाईचारा बनाए रखना चाहता है।

वास्तव में पंचशील के पाँच सिद्धांत भारतीय विदेश नीति का ताना-बाना बनकर उसमें समा गए हैं। **14 सितंबर, 1954 ई० को भारत ने पंचशील के सिद्धांतों को संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा में प्रस्तुत किया, जिसका अधिकांश राष्ट्रों ने स्वागत किया।** इसी के परिणामस्वरूप भारत एशिया तथा अफ्रीका के देशों में अगुवा बनकर उभरा।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

27 पड़ोसी देशों से भारत के संबंध तथा दक्षेश

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 226 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 226 व 227 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. भारत के पाकिस्तान के साथ मधुर संबंध क्यों नहीं हैं? किन्हीं दो कारणों का वर्णन कीजिए।

उ०– **भारत के पाकिस्तान के साथ मधुर संबंध न होने के दो कारण–**

(i) कश्मीर के भारत में विलय के समय उसके कुछ भाग पर पाकिस्तान ने अपना अधिकार बताकर समस्या को जन्म दिया।

(ii) पाकिस्तान द्वारा आतंकवादियों को संरक्षण प्रदान करना तथा भारत में आतंकी गतिविधियाँ चलाना।

2. भारत-पाक संबंधों में कश्मीर की भूमिका का उल्लेख कीजिए।

उ०– भारत-पाक संबंधों में कश्मीर की समस्या दोनों देशों के मध्य तनाव का कारण है। कश्मीर का मुद्दा पाकिस्तान की भारत

के प्रति घृणा का प्रतीक है। भारत कश्मीर को अपना अभिन्न अंग मानता है जबकि पाकिस्तान कश्मीर पर अपना अधिकार जताना चाहता है। कश्मीर समस्या भारत–विभाजन के समय से चली आ रही है जिसके चलते दोनों देशों के मध्य कई बार युद्ध की स्थिति बन चुकी है।

3. दक्षेश की स्थापना कब और कहाँ हुई? इसके दो सिद्धांत लिखिए।

उ०– दक्षेश की स्थापना दिसंबर, 1985 ई० में बांग्लादेश की राजधानी ढाका में हुई। इस संगठन के दो सिद्धांत निम्नलिखित हैं–

(i) दक्षिण एशिया की जनता के कल्याण को बढ़ावा देना तथा उनके जीवन स्तर में सुधार करना।

(ii) दक्षिण एशिया के देशों में सामूहिक आत्मनिर्भरता को मजबूत करना और बढ़ावा देना।

4. दक्षेश के दो उद्‌देश्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– दक्षेश के दो उद्‌देश्यों (सिद्धांतों) के लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

5. भारत–पाकिस्तान संबंधों पर संक्षेप में अपने विचार प्रकट कीजिए।

उ०– 1947 ई० में स्वाधीनता के समय भारत से पृथक होकर बना पाकिस्तान भारत का सबसे प्रमुख पड़ोसी देश है। जाति और धर्म के आधार पर बना यह देश भारत के साथ सदैव तनाव और विद्वेष का भाव बनाए रखता है। दोनों देशों के मध्य तनाव और टकराव का मुख्य कारण कश्मीर समस्या है। स्वाधीनता के बाद भारतीय प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने पाकिस्तान के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करने की चेष्टा की थी, किंतु पाकिस्तान प्रारंभ से ही बैर-भाव का पक्ष-पोषण करता रहा है। 1965 व 1971 ई० में पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण कर शत्रुभाव एवं संकीर्ण मानसिकता का परिचय दिया। यद्यपि भारतीय सेना ने पाकिस्तान को बुरी तरह परास्त किया।

6. दक्षेश से क्या आशय है? इस संगठन के सदस्य देशों के नाम लिखिए।

उ०– दक्षेश का अर्थ 'दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन' है इस संगठन की स्थापना 8 दिसंबर, 1985 ई० में बांग्लादेश की राजधानी ढाका में हुई है। इस संगठन के सदस्य देशों में– भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान, मालदीव और अफगानिस्तान हैं।

7. दक्षेस की सफलता के लिए चार सुझाव लिखिए।

उ०– दक्षेश की सफलता के लिए चार सुझाव लिखिए–

(i) सार्क (दक्षेश) संगठन के सदस्य राष्ट्रों मध्य सहयोग तथा भाईचारे का वातावरण बने, जिससे टकराव की स्थिति उत्पन्न न हो सके।

(ii) सार्क गठन को महाशक्तियों की छाया से भी दूर रखा जाए।

(iii) इस संगठन का लक्ष्य द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय सहयोग को विकसित करना होना चाहिए।

(iv) अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं पर दक्षेश संगठन के सदस्य देशों में सर्वसम्मत होकर एकता का प्रदर्शन करना चाहिए।

8. दक्षेश के शिखर सम्मेलन आयोजित करने वाले किन्हीं चार देशों के नाम, उनकी राजधानी तथा आयोजन के वर्ष सहित लिखिए।

उ०– चार देशों के दक्षेस शिखर सम्मेलनों का विवरण निम्नवत् है–

शिखर सम्मेलन	देश का नाम	राजधानी	वर्ष
पहला	बांग्लादेश	ढाका	1985
दूसरा	भारत	नई दिल्ली	1986
तीसरा	नेपाल	काठमांडू	1987
चौथा	पाकिस्तान	इस्लामाबाद	1988

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) की स्थापना का क्या उद्‌देश्य है? संयुक्त राष्ट्र संघ से यह किस प्रकार भिन्न है?

उ०– दक्षिण एशियाई क्षेत्र में कृषि, उद्योग, स्वास्थ्य, शिक्षा, संचार, ग्रामीण विकास, यातायात तथा तकनीकी के विकास को

दृष्टिगत रखते हुए सार्क संगठन का निर्माण किया गया। सार्क संगठन के चार्टर के अनुसार इसके निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं–

(i) दक्षिण एशिया की जनता के कल्याण को बढ़ावा देना तथा उसके जीवन-स्तर में सुधार लाना।

(ii) क्षेत्र में आर्थिक विकास, सामाजिक प्रगति और सांस्कृतिक विकास में तेजी लाना तथा सभी व्यक्तियों को प्रतिष्ठा के साथ रहने का अवसर प्रदान करना व उनकी पूरी क्षमताओं को उपयोग में लाना।

(iii) दक्षिण एशिया के देशों में सामूहिक आत्मनिर्भरता को मजबूत करना और बढ़ावा देना।

(iv) परस्पर विश्वास व समझ-बूझ को बढ़ावा और उसी के आधार पर एक-दूसरे की समस्याओं का मूल्यांकन करना।

(v) आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, तकनीकी तथा वैज्ञानिक क्षेत्रों में आपसी सहयोग को बढ़ाना।

(vi) अन्य विकासशील देशों के साथ सहयोग को दृढ़ बनाना।

(vii) समान हितों के मामलों पर अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर आपस में सहयोग से कार्य करना।

(viii) अंतर्राष्ट्रीय संगठनों एवं इस क्षेत्रीय संगठन के साथ समान लक्ष्यों व उद्देश्यों में सहयोग करना।

सार्क और संयुक्त राष्ट्र संघ में अंतर– सार्क या दक्षेश दक्षिण एशिया के उद्देश्यों का नवीनतम अंतर्राष्ट्रीय संगठन है। इसका मुख्य उद्देश्य दक्षिण एशियाई क्षेत्र में कृषि, उद्योग, स्वास्थ्य, शिक्षा, संचार, ग्रामीण विकास, यातायात तथा तकनीकी विकास में परस्पर सहयोग करना है जबकि संयुक्त राष्ट्र संघ विश्व का सबसे बड़ा अंतर्राष्ट्रीय संगठन है जिसकी वर्तमान सदस्य संख्या 193 है। संयुक्त राष्ट्र संघ का प्रमुख उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा की स्थापना करना है।

2. सार्क (दक्षेश) पर विस्तृत टिप्पणी लिखिए।

उ०– दक्षेश या सार्क संगठन का पूरा नाम दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन है। सार्क विश्व का नवीनतम अंतर्राष्ट्रीय संगठन है, जिसका जन्म 7 एवं 8 दिसंबर, 1985 ई० में सात राष्ट्रों के सेनाध्यक्षों के सम्मिलित प्रयास से हुआ। इस संगठन की स्थापना पर भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका और मालदीव के रूप में सात सदस्य राष्ट्र सम्मिलित थे। बाद में इसमें अफगानिस्तान और जुड़ गया, अत: सार्क संगठन के परिवार में आठ सदस्य हो गए। सार्क संगठन के सदस्य देश सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, भौगोलिक तथा एक समान ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की उपज होने के कारण एक जुट हुए हैं।

सार्क संगठन के सदस्य देशों के भू-भाग में लगभग 142 करोड़ जनशक्ति का बसाव होने के कारण यह विश्व का सर्वाधिक जनसंख्या वाला संगठन बनने का गौरव पा गया है। वर्तमान में आठ सदस्यीय देशों के संगठन वाले दक्षेश का मुख्यालय नेपाल देश की राजधानी काठमांडू में बनाया गया है। धीरे-धीरे विकसित होने वाला यह देश अब दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन का महत्वपूर्ण देश बन चुका है।

सार्क संगठन की स्थापना के उद्देश्य– इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

सार्क संगठन के सिद्धांत– सार्क संगठन के उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए इसके निम्नलिखित सिद्धांत निश्चित किए गए हैं–

(i) सदस्य राष्ट्र एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे।

(ii) संगठन के ढाँचे के अंतर्गत, सहयोग, प्रभुसत्तासंपन्न समानता, क्षेत्रीय अखंडता, राजनीतिक स्वतंत्रता, दूसरे देशों के मामलों में हस्तक्षेप न करना तथा आपसी हित के सिद्धांतों का आदर करना।

(iii) सदस्य राष्ट्रों का सहयोग, द्विपक्षीय और बहुपक्षीय सहयोग का स्थान नहीं लेगा, वरन् वह परस्पर पूरक होगा।

सार्क संगठन का ताना-बाना– सार्क संगठन के ढाँचे या ताने-बाने के निर्माण में निम्नलिखित संस्थाओं का योगदान रहा है–

(i) शिखर सम्मेलन– सार्क संगठन के चार्टर के अनुच्छेद 3 के अनुसार प्रतिवर्ष इसका एक शिखर सम्मेलन आयोजित किया जाएगा, जिसमें सभी सदस्य देशों के शासनाध्यक्षों को भाग लेना चाहिए। अब तक इसके 19 शिखर सम्मेलन आयोजित किए जा चुके हैं।

(ii) मंत्रिपरिषद्– सार्क संगठन की मंत्रिपरिषद् के सदस्य, समस्त सदस्य राष्ट्रों के विदेशमंत्री होते हैं। इसकी बैठक 6 माह में एक बार अवश्य होनी चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर अन्य बैठकें भी बुलाई जा सकती हैं। इसका कार्य परिषद् के नये क्षेत्रों को निश्चित करना और सामान्य हित के अन्य विषयों पर निर्णय करना है।

(iii) स्थायी समिति– सार्क संगठन की स्थायी समिति में सदस्य देशों के विदेश सचिव होते हैं। ये संगठन के कार्यों पर दृष्टि रखने तथा कार्यक्रमों में तालमेल बैठाने का कार्य करते हैं।

(iv) तकनीकी समिति– सार्क संगठन के सदस्य देशों में तकनीकी विकास कराने का उत्तरदायित्व इस समिति का होता है।

(v) कार्यकारी समितियाँ– इन समितियों का कार्य संगठन के लिए विविध कार्यक्रमों का संपादन करना है।

(vi) सचिवालय (मुख्यालय)– इस संगठन का मुख्यालय नेपाल की राजधानी काठमांडू में है। इसके महासचिव की नियुक्ति मंत्रिपरिषद् द्वारा दो वर्ष के लिए की जाती है। सार्क के सदस्य देश इस पर बारी-बारी से किसी व्यक्ति को मनोनीत करते हैं।

(vii) वित्तीय व्यवस्थाएँ– सार्क संगठन के सचिवालय तथा कार्यक्रमों के संचालन के व्यय के लिए आठों सदस्य राष्ट्रों को भागीदारी सौंपी गई है। इसके लिए भारत 32%, पाकिस्तान 25%, नेपाल, बांग्लादेश और श्रीलंका प्रत्येक 11% एवं भूटान और मालदीव प्रत्येक 5% अंश प्रदान करते हैं।

पर्यवेक्षक दल– सार्क संगठन के कार्यों का पर्यवेक्षण करने वाले राष्ट्र संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, जापान, तथा दक्षिणी कोरिया हैं।

सार्क संगठन का महत्व– यद्यपि सदस्य राष्ट्रों के मन-मुटाव के चलते यह संगठन अधिक सफल नहीं हो पाया है, फिर भी क्षेत्र के विकास की दृष्टि से सार्क संगठन की उपलब्धियों का मूल्यांकन करते हुए उसके निम्नलिखित महत्वों का बोध होता है–

(i) सार्क संगठन दक्षिणी एशिया के पिछड़े हुए देशों के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं तकनीकी विकास के क्षेत्र में ब्रह्मस्त्र सिद्ध हो रहा है।

(ii) सार्क संगठन दक्षिण एशियाई क्षेत्र के लिए प्रगति और विकास का नवप्रभात बनकर उदित हुआ है।

(iii) सार्क संगठन के महत्व को देखते हुए भूटान नरेश ने इस संदर्भ में यह टिप्पणी की है, ''सार्क संगठन सामूहिक बुद्धिमत्ता और राजनीतिक इच्छा शक्ति का परिणाम बन गया है।''

(iv) इस संगठन ने 'खाद्य कोष' की स्थापना करके इस क्षेत्र की खाद्य समस्या और कुपोषण का सही निराकरण खोज लिया है।

(v) सार्क संगठन ने इस क्षेत्र में कृषि, पर्यावरण सुरक्षा, शिक्षा तथा सांस्कृतिक विकास की गंगा प्रवाहित कर दी है।

(vi) यह संगठन समझौतों के माध्यम से कृषि, औद्योगिक और वैज्ञानिक विकास के महान कार्यों में जुटा हुआ है।

(vii) इस संगठन ने इस क्षेत्र की गरीबी, भुखमरी, आतंकवाद, महिला तथा बाल कल्याण की समस्याओं का निश्चित समाधान खोज निकाला है।

(viii) सार्क संगठन ने मुक्त व्यापार के सिद्धांत को लागू करके तथा परस्पर कानूनी सहायता उपलब्ध कराकर अनेक समस्याओं का सहज निराकरण खोज निकाला है।

यदि सार्क संगठन की उपलब्धियों का विश्लेषण किया जाए, तो इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि यह संगठन पाकिस्तान जैसे सदस्यों की विद्वेषपूर्ण नीति तथा आतंकवाद को बढ़ावा देने की प्रवृत्ति के कारण लक्ष्य प्राप्ति में पिछड़ गया है। अत: इसे सबल और सफल बनाने की नितांत आवश्यकता है।

सार्क संगठन की सफलता हेतु सुझाव– दक्षिण एशियाई क्षेत्र के आर्थिक विकास, सुख, समृद्धि और शांति तथा सुरक्षा के लिए सार्क संगठन का सफल होना नितांत आवश्यक है। सार्क संगठन की सफलता हेतु निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

(i) सार्क संगठन के सदस्य राष्ट्रों के मध्य सहयोग तथा भाईचारे का वातावरण बने, जिससे टकराव की स्थिति उत्पन्न न हो सके।

(ii) सार्क संगठन को महाशक्तियों की छाया से भी दूर रखा जाए।

(iii) इस संगठन का लक्ष्य द्विपक्षीय तथा बहुपक्षीय सहयोग को विकसित करना होना चाहिए।

(iv) अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं पर सार्क संगठन के सदस्य देशों को सर्वसम्मत होकर एकता का प्रदर्शन करना चाहिए।

(v) संगठन का लक्ष्य सदस्य राष्ट्रों में ऊर्जा, परिवहन, संचार, कृषि, उद्योग, व्यापार तथा प्रौद्योगिकी का विकास होना चाहिए।

(vi) सार्क संगठन का मंच आर्थिक विकास के चिंतन के साथ-साथ, राजनीतिक विचार का मंच भी बन जाना चाहिए।

भारत पर कभी-कभी सार्क संगठन पर अपनी प्रभुता थोपने का आरोप लगाया जाता है, जो सर्वथा असत्य है। यह तथ्य स्व० श्री राजीव गाँधी के इन शब्दों से प्रमाणित हो जाता है, ''हम किसी देश के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहते हैं और न किसी देश पर अपनी चौधराहट ही स्थापित करना चाहते हैं।''

3. दक्षेश की स्थापना कब और कहाँ हुई? इसके उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।

उ०– दक्षेश संगठन की स्थापना दिसम्बर, 1985 ई० को बांग्लादेश की राजधानी में हुई थी।

दक्षेश संगठन के उद्देश्य– इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

4. भारत के किन्हीं दो पड़ोसी देशों के साथ संबंधों की विवेचना कीजिए।

उ०– भारत के पाकिस्तान के साथ संबंध

परिचय– पाकिस्तान भारत के उत्तर–पश्चिम में स्थित है। 14 अगस्त, 1947 को भारत-विभाजन के फलस्वरूप इसका निर्माण हुआ। 1971 में पाकिस्तान के विभाजन से बांग्लादेश बना। पाकिस्तान एक मुस्लिम देश है। इसकी सीमाएँ ईरान, अफगानिस्तान तथा भारत से मिली हुई हैं। इसका क्षेत्रफल 8,81,913 वर्ग किमी, जनसंख्या लगभग 20 करोड़, राजधानी– इस्लामाबाद, मुख्य धर्म– इस्लाम, भाषा– उर्दू, पंजाबी, सिंधी, अंग्रेजी, बलूची तथा पश्तो और मुद्रा पाकिस्तानी रुपया है। अंग्रेजी शासन की कूटनीति के कारण भारत से पृथक होकर बना, पाकिस्तान भारत का सबसे प्रमुख पड़ोसी देश है। जाति और धर्म के आधार पर बना यह देश भारत के साथ सदैव तनाव और विद्वेष का भाव बनाए रखता है। दोनों देशों के मध्य तनाव और टकराव का मुख्य कारण कश्मीर समस्या है। डॉ० मावेत्कर के अनुसार, ''पाकिस्तान की भारत के प्रति घृणा का प्रतीक कश्मीर समस्या है।'' कश्मीर की समस्या को निम्नलिखित परिपेक्ष्य में समझा जा सकता है–

(i) कश्मीर के भारत में विलय के समय उसके कुछ भाग पर पाकिस्तान ने अपना अधिकार बताकर समस्या को जन्म दिया।

(ii) पाक अधिकृत कश्मीर आजाद कश्मीर कहलाता है।

(iii) पाकिस्तान समूचे कश्मीर को हड़पना चाहता है।

(iv) 1951 ई० की जम्मू-कश्मीर विधानसभा की इस घोषणा को कि 'कश्मीर भारत संघ का अंग है' पाकिस्तान ने स्वीकार नहीं किया।

(v) 1965 ई० में पाकिस्तान ने युद्ध विराम सीमाओं का उल्लंघन करके कच्छ पर आक्रमण कर दिया, जिसे बाद में कश्मीर तक बढ़ा दिया।

(vi) सुरक्षा परिषद् के प्रयास से दोनों देशों में युद्ध विराम हुआ।

इसी संदर्भ में 1966 ई० में ताशकंद समझौता तथा 1972 ई० में शिमला समझौता संपन्न हुआ।

1982 ई० में पाकिस्तान ने पंजाब के आतंकवादियों को प्रशिक्षण तथा हथियार देकर वहाँ आतंकवाद फैलाया, जिससे पुन: दोनों में तनाव उत्पन्न हो गया। मई 1999 ई० में पाकिस्तान ने भारत के समक्ष कारगिल संकट खड़ा कर दिया, जिसमें भारतीय सेना ने कारगिल को पाकिस्तानी सेना से मुक्त करा लिया।

2001 ई० में पाकिस्तान के राष्ट्रपति परवेज मुशर्रफ तथा भारतीय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेई के मध्य 'आगरा शिखर वार्ता' हुई, जो पूर्णत: असफल रही।

13 दिसंबर, 2001 ई० में भारतीय संसद पर पाकिस्तानी आतंकवादियों ने हमला करके दोनों देशों के मध्य तनाव और युद्ध की स्थिति उत्पन्न कर दी। 2004 ई० में सार्क संगठन सम्मेलन में दोनों देशों के मध्य सुलह वार्ता हुई और भारत ने बंद पड़ी विमान सेवा, रेल सेवा और बस सेवा पाकिस्तान के लिए फिर से शुरू कर दीं।

26 नवंबर, 2008 ई० में पाकिस्तानी आतंकवादियों ने मुंबई पर हमला करके शांत संबंधों के समुद्र में तूफान ला दिया।

8 जनवरी, 2013 ई० में पाकिस्तानी सैनिकों ने युद्ध विराम रेखा का उल्लंघन करके दो भारतीय सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया।

भारत लगातार पाकिस्तान के साथ बड़ा भाई बनकर प्रेम और मैत्री का व्यवहार करता रहता है, परंतु पाकिस्तान ने 27 मई, 2014 ई० में संयुक्त राष्ट्र संघ में कश्मीर का राग अलाप कर शांतिवार्ता के द्वार पुन: बंद कर दिए। भारत, कश्मीर समस्या का निराकरण द्विपक्षीय वार्ता द्वारा करने के लिए हर समय तैयार रहता है। भारत जैसे ही कश्मीर समस्या समाधान का वातावरण बनाता है, पाकिस्तान के अलगाववादी विष वमन करके शांति और प्रेम के रास्ते में शत्रुता के काँटे बिखेर देते हैं। इसीलिए श्री लाल बहादुर शास्त्री जी को यह घोषणा करने पर विवश होना पड़ा, ''यदि पाकिस्तान तर्क के द्वारा समस्या को सुलझाने में विश्वास नहीं रखता, तो भारतीय सेनाएँ भी देश की रक्षा करने में पीछे नहीं रहेंगी।'' आशा है भारत के कुशल प्रधानमंत्री अपने नेतृत्व में इस समस्या का उचित हल निकाल लेंगे।

भारत के अफगानिस्तान के साथ संबंध

परिचय– अफगानिस्तान मध्य एशिया तथा भारतीय उपमहाद्वीप के बीच में स्थित है। सन् 1747 ई० में अहमद शाह दुर्रानी ने इसकी स्थापना की थी। इनका क्षेत्रफल– 6,52,864 वर्ग किमी, जनसंख्या– 3.33 करोड़, राजधानी– काबुल, धर्म– इस्लाम (सुन्नी), सरकारी भाषा– पश्तो, दारी और मुद्रा– अफगानी है। भारत और अफगानिस्तान के मध्य प्राचीनकाल से ही मधुर संबंध रहे हैं। सम्राट अशोक के शासनकाल में यह देश बौद्ध धर्म तथा भारतीय संस्कृति का केंद्र रहा है। भारत और अफगानिस्तान अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान एकजुट होकर करते रहे हैं। 1950 ई० में उसने भारत के पंचशील के सिद्धांत को स्वीकार किया। अफगान नेता बड़ी सूझबूझ के साथ भारत के साथ मैत्री संबंध बनाए रहे।

सोवियत संघ ने अफगानिस्तान को हथियाने की कोशिश की। गुट–निरपेक्ष नीति का अनुसरण करते हुए भारत ने सोवियत संघ के हस्तक्षेप की आलोचना की। अमेरिका तथा चीन के वहाँ जुट जाने पर, भारत ने सोवियत संघ को वहाँ से चले जाने के लिए मनाकर तृतीय विश्वयुद्ध का खतरा टाल दिया। भारत ने अफगानिस्तान के विकास हेतु पर्याप्त सहयोग दिया। दोनों देश परस्पर मिल–जुलकर उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ रहे हैं। 2014 ई० में भारत के प्रधानमंत्री शपथ ग्रहण समारोह में अफगानिस्तान के प्रधानमंत्री ने उपस्थित होकर भारत के प्रति सम्मान और प्रेम दर्शा दिया है। अफगानिस्तान सार्क संगठन का नया सदस्य बन, भारत से और अधिक जुड़ गया है।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

28 संयुक्त राष्ट्र संघ एवं विश्व-शांति

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 235 व 236 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 236 व 237 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना कब हुई? इसकी स्थापना के तीन उद्देश्य लिखिए।

उ०– संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना 24 अक्टूबर, 1945 ई० न्यूयार्क में हुई। इसकी स्थापना के तीन उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

(i) अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा की स्थापना अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के अनुरूप करना तथा युद्धों को रोकना।

(ii) आक्रमणकारी देश के विरुद्ध सामूहिक रूप से सैनिक कार्यवाही करना।

(iii) अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं का निराकरण विचार–विमर्श तथा सहमति से करना।

2. संयुक्त राष्ट्र संघ के चार प्रमुख सिद्धांत लिखिए।

उ०– संयुक्त राष्ट्र संघ के चार प्रमुख सिद्धांत निम्नलिखित हैं–

(i) समस्त सदस्यों की प्रभुसता एक समान हैं।

(ii) समस्त सदस्य घोषणा–पत्र के अनुरूप अपने दायित्वों का पालन करते हुए निर्धारित अधिकारों की प्राप्ति करेंगे।

(iii) सभी सदस्य राष्ट्र अपने विवादों का निबटारा शांतिपूर्ण ढंग से इस प्रकार करेंगे कि अंतर्राष्ट्रीय शांति, सुरक्षा तथा न्याय को किसी प्रकार का कोई खतरा न हो।

(iv) समस्त सदस्य किसी भी राष्ट्र की राजनीतिक स्वतंत्रता तथा प्रभुसत्ता को आघात पहुँचाने वाला कार्य नहीं करेंगे।

3. संयुक्त राष्ट्र संघ के चार प्रमुख कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– संयुक्त राष्ट्र संघ के चार प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं और विवादों का शांतिपूर्ण ढंग से हल निकालना।

(ii) सदस्य राष्ट्रों के मध्य शांति वार्ता करवाना तथा युद्ध की संभावनाओं को कम करना।

(iii) अंतर्राष्ट्रीय विवादों को हल करने के लिए वार्ता करवाना तथा उपाय करना।

(iv) विवादों के निबटारे तथा शांति स्थापना के लिए विश्व-पंचायत की भूमिका निभाना।

4. सुरक्षा परिषद् का गठन कैसे होता है? वीटो का अधिकार क्या है?

उ०– **सुरक्षा परिषद् का गठन एवं वीटो अधिकार–** यह संयुक्त राष्ट्र संघ का एक महत्वपूर्ण अंग है। इसमें 15 सदस्य होते हैं। जिनमें से 5 सदस्य स्थायी तथा 10 सदस्य अस्थायी होते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, इग्लैंड, फ्रांस तथा चीन इसके स्थायी सदस्य हैं। अस्थायी सदस्य महासभा द्वारा दो तिहाई बहुमत से दो वर्ष के लिए चुने जाते हैं। कोई अस्थायी सदस्य अवधि समाप्त होने पर पुन: निर्वाचनों में खड़ा नहीं हो सकता। स्थायी सदस्यों को निषेधाधिकार (वीटो पावर) प्राप्त होता है, जिसका आशय उस अधिकार से है, जो स्थायी सदस्य द्वारा पारित होने वाले प्रस्ताव के विरोध में प्रयोग किया जाता है और इसके प्रभावस्वरूप बहुमत से पारित होने वाला प्रस्ताव भी पारित होने से रुक जाता है। किसी भी वाद-विवाद का अंतिम निर्णय पाँच स्थायी सदस्यों और चार अस्थायी सदस्यों की सहमति के बाद ही माना जाता है। भारत भी 1-1-1993 से 1-1-1995 तक सुरक्षा परिषद् का अस्थायी सदस्य रहा है।

5. यदि सुरक्षा परिषद् में कोई स्थायी सदस्य देश प्रस्ताव के विरुद्ध मतदान करे, तो इसका क्या परिणाम होगा?

उ०– यदि सुरक्षा परिषद् में कोई स्थायी सदस्य देश प्रस्ताव के विरूद्ध मतदान करे तो वह प्रस्ताव पारित नहीं किया जा सकता है।

6. सुरक्षा परिषद् क्या है? यह विश्व–शांति की स्थापना के लिए क्या कार्य करती है?

उ०– सुरक्षा परिषद् संयुक्त राष्ट्र संघ का एक महत्वपूर्ण अंग है। इसमें 15 सदस्य राष्ट्र होते है। जिनमें 5 सदस्य राष्ट्र स्थाई तथा 10 सदस्य अस्थाई होते हैं। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, रूस, इंग्लैंड, फ्रांस और चीन इसके स्थाई सदस्य हैं। इस परिषद को विश्व में शांति की स्थापना के लिए असीम अधिकार प्राप्त हैं। यह परिषद अपने इन अधिकारों का सदुपयोग करके तथा अंतर्राष्ट्रीय संघर्ष और विवाद के कारणों की जाँच करना तथा उनके निराकरण के शांतिपूर्ण समाधान के उपाय खोजकर विश्व में शांति की स्थापना करती है।

7. यूनेस्को से आप क्या समझते हैं? इसके दो प्रमुख कार्य क्या हैं?

उ०– यूनेस्को संयुक्त राष्ट्र संघ की एक विशिष्ट समिति (अभिकरण) है। यूनेस्को का पूरा नाम संयुक्त राष्ट्र शैक्षणिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन है। इसके दो प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) शिक्षा एवं शैक्षिक अनुसंधान पर बल देना।

(ii) शरणार्थियों का पुर्नवास करना।

8. विश्व स्वास्थ्य संगठन की स्थापना कब हुई? इसके दो प्रमुख कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– विश्व स्वास्थ्य संगठन की स्थापना 1948 ई० को जेनेवा में हुई। इसके दो प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) संक्रामक रोगों की रोकथाम करना।

(ii) स्वास्थ्य के क्षेत्र में अनुसंधान बढ़ाना।

9. 'वीटो पावर' क्या है? यह किन–किन देशों को प्राप्त है?

उ०– संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद् के स्थायी सदस्यों को एक विशेष निषेधाधिकार प्राप्त होता है, जिसे वीटों पावर कहते हैं। इस अधिकार का उपयोग स्थायी सदस्यों द्वारा पारित होने वाले प्रस्ताव का विरोध करने में किया जाता है। यह अधिकार सुरक्षा परिषद् के स्थायी सदस्यों संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, इंग्लैंड, फ्रांस तथा चीन को प्राप्त है।

10. मानवाधिकार पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उ०– **मानवाधिकार–** अधिकार सामाजिक जीवन की आधारशिला है। प्रत्येक व्यक्ति को जीने के लिए जिन अपेक्षाओं की आवश्यकता होती है, उन्हें मानवाधिकार की संज्ञा दी जाती है। मानव जीवनयापन के लिए तथा सुख-सुविधाओं का उपभोग करने के लिए कुछ इच्छाएँ रखता है। राज्य इन इच्छाओं की पूर्ति कर उन्हें मानवाधिकार बना देता है। मानवाधिकार सभ्य एवं

सुखी जीवन की अनिवार्यताएँ बन गए हैं। दूसरे शब्दों में, ''मानव जीवन के सर्वांगीण विकास हेतु जिन स्वतंत्रताओं और अनिवार्यताओं की आवश्यकता होती है, उन्हें मानवाधिकार कहा जाता है।'' मानवाधिकार मानव की उन्नति तथा विकास के लिए नितांत आवश्यक हैं। अत: राज्य उन्हें जुटाने का भरसक प्रयास करता है। मानवाधिकारों के साथ मानव मात्र का सर्वोच्च हित जुड़ा है।

मानवाधिकारों के महत्व और अस्तित्व को संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी अनुभव किया। अत: 10 दिसंबर, 1948 ई० में संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा करके इनकी उपादेयता पर अपनी मुहर लगा दी। मानवाधिकारों की इस सार्वभौम घोषणा में 30 धाराएँ हैं। इन धाराओं में मानव के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक अधिकारों की सुरक्षा की गारंटी दी गई है। समूचे विश्व और मानव जाति में मानवाधिकारों के प्रति रुचि जगाने तथा चेतना उत्पन्न करने की दृष्टि से समूचे विश्व में प्रतिवर्ष 10 दिसंबर को 'मानवाधिकार दिवस' मनाया जाता है।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना कब की गई? इसके कितने अंग हैं? किन्हीं दो अंगों तथा उनके कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना 24 अक्टूबर, 1945 ई० को न्यूयार्क में की गई। संयुक्त राष्ट्र संघ के 6 अंग हैं, जो निम्नलिखित हैं–

(i) महासभा (i) सुरक्षा परिषद् (iii) आर्थिक एवं सामाजिक परिषद्

(iv) संरक्षण परिषद् (v) अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय (vi) सचिवालय।

महासभा– यह संयुक्त राष्ट्र संघ की मुख्य या साधारण सभा कही जाती है। प्रत्येक सदस्य राष्ट्र इसमें 5 सदस्य भेज सकता है, परंतु प्रत्येक राष्ट्र को एक ही मत देने का अधिकार होता है। इसका वर्ष में एक अधिवेशन सितंबर माह में आयोजित किया जाता है। आवश्यकता पड़ने पर विशेष अधिवेशन बुलाया जा सकता है। इसमें एक निर्वाचित अध्यक्ष तथा 18 उपाध्यक्ष होते हैं।

महासभा के कार्य– महासभा मुख्य रूप से निम्नलिखित कार्य करती है–

(i) संयुक्त राष्ट्र संघ का बजट स्वीकार करना।
(ii) सुरक्षा परिषद् के लिए 10 अस्थायी सदस्यों का चुनाव करना।
(iii) आर्थिक परिषद् तथा संरक्षण परिषद् के कुछ सदस्यों का निर्वाचन करना।
(iv) अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय के न्यायाधीशों के चुनाव में भागीदारी करना।

सुरक्षा परिषद्– इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 4 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

सुरक्षा परिषद के कार्य– सुरक्षा परिषद् द्वारा निम्नलिखित कार्य संपन्न किए जाते हैं–

(i) अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखने के प्रयत्न करना।
(ii) नि:शस्त्रीकरण पर बल देते हुए अस्त्र-शस्त्रों की होड़ पर नियंत्रण लगाना।
(iii) तनाव, उत्तेजना तथा युद्ध छिड़ जाने पर जाँच करना तथा इन समस्याओं के निराकरण के उपाय करना।
(iv) दुर्बल क्षेत्रों तथा राष्ट्रों को संरक्षण प्रदान करना।
(v) युद्ध भड़क उठने पर, उसे तुरंत रोकने के उपाय तथा आवश्यक होने पर आक्रमणकारी देश के विरुद्ध सेना का प्रयोग करना।

2. संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्य तथा सिद्धांतों का वर्णन कीजिए।

उ०– संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्य– संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा–पत्र में इसके निम्नलिखित उद्देश्यों का वर्णन किया गया है–

(i) अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा की स्थापना अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के अनुरूप करना तथा युद्धों को रोकना।
(ii) आक्रमणकारी देश के विरुद्ध सामूहिक रूप से सैनिक कार्यवाही करना।
(iii) अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं का निराकरण विचार-विमर्श तथा सहमति से करना।
(iv) पारस्परिक मतभेदों को मिल-बैठकर निबटाना तथा राष्ट्रों के मध्य मैत्रीपूर्ण संबंधों का विकास करना।
(v) मानव के मौलिक अधिकारों, उसकी गरिमा तथा आधारभूत स्वतंत्रता के प्रति सम्मान की भावना जगाना।
(vi) विश्व के संपूर्ण राष्ट्रों में परस्पर मैत्रीपूर्ण समन्वय तथा संबंध बनाए रखना और विचारों की अभिव्यक्ति के लिए एक केंद्रीय विश्व-मंच के रूप में कार्य करना।

(vii) प्रत्येक राष्ट्र के साथ समानता का व्यवहार करते हुए सभी को समान अधिकार प्रदान करना।

संयुक्त राष्ट्र संघ के सिद्धांत– संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा–पत्र के अनुसार उसके मूल सिद्धांत निम्नलिखित हैं–

(i) समस्त सदस्यों की प्रभुसत्ता एक समान है।

(ii) समस्त सदस्य घोषणा–पत्र के अनुरूप अपने दायित्वों का पालन करते हुए निर्धारित अधिकारों की प्राप्ति करेंगे।

(iii) सभी सदस्य राष्ट्र अपने विवादों का निबटारा शांतिपूर्ण ढंग से इस प्रकार करेंगे कि अंतर्राष्ट्रीय शांति, सुरक्षा तथा न्याय को किसी प्रकार का खतरा न हो।

(iv) समस्त सदस्य किसी भी राष्ट्र की राजनीतिक स्वतंत्रता तथा प्रभुसत्ता को आघात पहुँचाने वाला कार्य नहीं करेंगे।

(v) समस्त सदस्य घोषणा–पत्र में वर्णित विषयों पर उस राष्ट्र की सहायता नहीं करेंगे, जिनके विरुद्ध संयुक्त राष्ट्र संघ कोई विरोधात्मक या प्रतिरोधात्मक कार्यवाही कर रहा हो।

(vi) अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा को बनाए रखने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ उन गैर–सदस्य राष्ट्रों से भी उसके सिद्धांतों के अनुकूल व्यवहार की आशा करेगा, जो संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा–पत्र के अनुरूप कार्य नहीं कर रहे हैं।

(vii) संयुक्त राष्ट्र संघ किसी भी राष्ट्र के उन मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा, जो उसके आंतरिक मामले हैं, न ऐसा कोई काम करेगा, जो धमकी या दबाव का कारण बन जाए।

3. संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना क्यों की गई? इसकी विशिष्ट संस्थाओं का वर्णन कीजिए।

उ०– **संयुक्त राष्ट्र संघ–** जिस प्रकार परिवार में मुखिया और पंचायत में प्रधान, समस्याओं का निराकरण और विवादों का निपटारा करते हैं, ठीक वैसे ही अंतर्राष्ट्रीय जगत में एक विश्व-पंचायत बनी, जिसे संयुक्त राष्ट्र संघ कहा जाता है। यह संस्था युद्धों की विभीषिका पर नियंत्रण लगाने के साथ–साथ राष्ट्रों के विवादों का निबटारा करने के उद्देश्य से बनाई गई है।

'संयुक्त राष्ट्र संघ', इन शब्दों का प्रयोग सर्वप्रथम संयुक्त राष्ट्रों के 1 जनवरी, 1920 ई० के उस घोषणा–पत्र में किया गया था, जिसमें 26 देशों के प्रतिनिधियों ने मिलकर अपनी–अपनी सरकारों की ओर से जर्मनी, इटली और जापान के विरुद्ध मिलकर लड़ते रहने की प्रतिज्ञा की थी। विश्व के 50 राष्ट्रों का एक महासम्मेलन संयुक्त राज्य अमेरिका के सेन फ्रांसिस्को नगर में आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा–पत्र पर गहन विचार–विमर्श किया गया। 26 जून, 1945 ई० को इस घोषणा–पत्र पर सर्वसम्मति बनी और सभी देशों के प्रतिनिधियों ने इस पर हस्ताक्षर कर इसे मान्य किया। पोलैंड ने बाद में इस पर अपने हस्ताक्षर कर 51 सदस्यों की सहमति की मुहर लगा दी। इसी घोषणा–पत्र के गर्भ से 24 अक्टूबर, 1945 ई० को संयुक्त राष्ट्र संघ का जन्म हुआ। इसका जन्म-स्थल न्यूयार्क था। अत: उसे ही इसका प्रधान कार्यालय (सचिवालय) बनाया गया।

संयुक्त राष्ट्र संघ की विशिष्ट संस्थाएँ– संयुक्त राष्ट्र संघ ने आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्यों के संपादन के लिए अनेक विशिष्ट संस्थाओं का निर्माण किया है। इसकी प्रमुख संस्थाओं का विवरण निम्नलिखित है–

(i) अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन– इसकी स्थापना सर्वप्रथम प्रथम विश्वयुद्ध के बाद 1919 ई० में हुई थी। राष्ट्र संघ के पतन के बाद इसे संयुक्त राष्ट्र संघ का अंग बना लिया गया। इसका मुख्यालय **जेनेवा** (स्विट्जरलैण्ड) में स्थित है। इसके सदस्यों की कुल संख्या 150 से अधिक है। प्रत्येक राष्ट्र के 4 सदस्य इसकी बैठक में भाग लेते हैं। इसका प्रशासनिक विभाग श्रमिक संघ के कार्यों पर नियंत्रण रखता है।

कार्य– (i) विश्व भर के श्रमिकों के हित के लिए कल्याणकारी योजनाएँ बनाना, (ii) श्रमिकों के शिक्षण और प्रशिक्षण का प्रबंध करना, (iii) श्रमिकों के समुचित वेतन, आवास, स्वास्थ्य तथा जीवन–स्तर सुधारने के उपाय करना, (iv) बाल-श्रम की रोकथाम करना, (v) औद्योगिक विवादों का निर्णय करना तथा श्रमिकों की समस्याओं का समाधान करना।

(ii) विश्व स्वास्थ्य संगठन– विश्व स्वास्थ्य संगठन की स्थापना 7 अप्रैल, 1948 ई० को **जेनेवा** (स्विट्जरलैण्ड) में की गई थी। इस संस्था के तीन अंग हैं– साधारण सभा, प्रशासनिक बोर्ड एवं सचिवालय। प्रशासनिक बोर्ड के सदस्यों की संख्या 18 है। अमेरिका, अफ्रीका, यूरोप तथा दक्षिण–पूर्वी एशिया तथा अन्य देशों में विश्व स्वास्थ्य संगठन की शाखाएँ स्थापित की गयीं हैं।

कार्य– (i) संपूर्ण विश्व में मानव स्वास्थ्य के विकास के लिए विभिन्न योजनाओं का निर्माण करना, (ii) संक्रामक तथा घातक बीमारियों की रोकथाम करना, (iii) स्वास्थ्य के क्षेत्र में वैज्ञानिक अनुसंधान करना तथा दैवी आपदा से होने

वाली हानि को रोकना, (iv) अल्प-विकसित देशों को स्वास्थ्य संबंधी जानकारी उपलब्ध करना, (v) स्वास्थ्य संबंधी साहित्य का प्रकाशन व वितरण करना तथा (vi) मानसिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में सभी देशों का ध्यान आकर्षित करना।

(iii) संयुक्त राष्ट्र शैक्षणिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन– संयुक्त राष्ट्र संघ के शैक्षणिक, वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक संगठन की स्थापना के उद्देश्य से 1 से 6 नवंबर तक ब्रिटिश सरकार ने फ्रांस की सरकार के सहयोग से लंदन में एक सम्मेलन बुलाया। इसी सम्मेलन में 4 नवंबर, 1945 ई० को इस संस्था की स्थापना हुई। इस समय इस संस्था के सदस्यों की संख्या 100 से अधिक है। इसका मुख्यालय **फ्रांस** की राजधानी **पेरिस** में है। इस संस्था का वर्ष में एक सामान्य सम्मेलन होता है जिसमें सभी सदस्य देशों के एक–एक प्रतिनिधि भाग लेते हैं।

कार्य– यह संघ की सबसे अधिक महत्वपूर्ण संस्था है। इसके कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) विश्व में शिक्षा और संस्कृति का प्रसार करना, (ii) शिक्षा और विज्ञान के क्षेत्र में नवीन अनुसंधाान करना तथा अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना का विकास करना, (iii) अविकसित तथा विकासशील देशों में शैक्षिक तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन करवाना, (iv) विस्थापितों के पुनर्वास की व्यवस्था करना, (v) विश्व के देशों में सांस्कृतिक आदान-प्रदान की व्यवस्था करना, (vi) विशेष समस्याओं के समाधान के लिए विभिन्न देशों में अपने विशेषज्ञ भेजना तथा, (vii) विभिन्न देशों के वैज्ञानिकों के बीच संपर्क और संबंधों की स्थापना करना।

(iv) खाद्य एवं कृषि संगठन– इस संस्था की स्थापना 16 अक्टूबर, 1945 ई० को हुई थी। वर्तमान में 180 से अधिक देश इस संस्था के सदस्य हैं। इसका मुख्यालय **इटली** की राजधानी **रोम** में स्थित है।

कार्य– (i) अल्प-विकसित देशों में कृषि उत्पादन वृद्धि की योजनाएँ तैयार करना और उन्हें लागू करवाना, (ii) कृषि संबंधी सूचनाओं का प्रसार करना, (iii) कृषि की नयी तकनीकों की खोज करना, (iv) उन्नतशील बीजों की नई-नई किस्मों की खोज करना, (v) पशुओं के स्वास्थ्य की रक्षा तथा बीमारियों की रोकथाम के उपाय करना तथा (vi) कृषि संबंधी वैज्ञानिक अनुसंधानों का प्रकाशन करना।

(v) अंतर्राष्ट्रीय बाल आपातकालीन कोष– इस संस्था की स्थापना 4 नवंबर, 1946 ई० को **न्यूयार्क** (संयुक्त राज्य अमेरिका) में हुई थी। प्रारंभ में इसमें केवल 20 सदस्य थे, लेकिन वर्तमान में इसकी सदस्य-संख्या 188 तक पहुँच गई है। इस संस्था का मुख्य उद्देश्य विश्व भर के बच्चों के स्वास्थ्य की देखभाल करना है। 1953 ई० में इस संस्था को स्थायी कर दिया गया है।

कार्य– (i) संसार के सभी देशों के बच्चों की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आर्थिक सहायता देना, (ii) मातृ और शिशु-कल्याण स्वास्थ्य केंद्रों में प्रशिक्षण व सामग्री की व्यवस्था करना, (i) दैवी आपदाओं के समय माताओं तथा शिशुओं के लिए विशेष प्रबंध करना, (iv) विभिन्न देशों के चिकित्सालयों तथा स्कूलों में शिशु-कल्याण व प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना करना, (v) शिशुओं की घातक बीमारियों की रोकथाम के लिए योजनाएँ बनाना तथा उन्हें लागू करना।

इन संस्थाओं के अतिरिक्त अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ, अंतराष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक आदि अनके संस्थाएँ संयुक्त राष्ट्र संघ की अधीनता में विश्व के देशों के लिए कल्याणकारी कार्यों का संपादन कर रही हैं।

4. संयुक्त राष्ट्र संघ के कार्यों में भारत के योगदान का वर्णन उदाहरण देकर कीजिए।

उ०– **संयुक्त राष्ट्र संघ के कार्यों में भारत का सहयोग–** भारत संयुक्त राष्ट्र संघ के संस्थापक सदस्यों में रहा है, इसलिए वह आस्था और विश्वास के साथ इस संस्था से जुड़ा है। भारत ने युद्धों को टालने तथा स्थायी विश्व-शांति की स्थापना में संयुक्त राष्ट्र संघ के साथ कंधे से कंधा मिलाकर कार्य किया है। भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ के कार्यों में निम्नवत् सहयोग दिया है–

(i) भारत ने कोरियाई युद्ध में युद्ध-बंदियों की अदला-बदली का प्रस्ताव पारित करवाया। दोनों देशों के युद्ध-बंदियों को भारतीय सेना की देख-रेख में ही सौंपा गया।

(ii) कांगो के प्रधानमंत्री की हत्या की भारत ने निष्पक्ष जाँच की माँग करके तथा वहाँ संयुक्त राष्ट्र संघ के कहने पर अपनी सेना भेजकर कांगो को स्वतंत्र करवाया।

(iii) संयुक्त राष्ट्र संघ ने साइप्रस में भारतीय सेना की टुकड़ी भेजकर वहाँ गृह-युद्ध को रोककर शांति की स्थापना की।

(iv) द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद दो भागों में बँटे वियतनाम के उत्तरी तथा दक्षिणी भागों को मिलाने के लिए आयोग की

स्थापना हुई, जिसकी अध्यक्षता भारत ने की। भारत ने वहाँ युद्ध बंद करने तथा स्थायी शांति का प्रस्ताव पारित कराया।

(v) स्वेज नहर विवाद पर 1956 ई० में तृतीय विश्वयुद्ध छिड़ सकता था। भारत ने विशेष दबाव बनाकर इंग्लैंड, फ्रांस तथा इजराइल की आक्रमणकारी सेनाओं को मिस्र की भूमि से हटवाकर समझौते द्वारा विवाद निबटवाया।

(vi) भारत ने 1966 ई० में संयुक्त राष्ट्र संघ में नि:शस्त्रीकरण का प्रस्ताव पारित कराकर, संसार को अस्त्र–शस्त्रों की होड़ से बचाया।

(vii) 1961 ई० में संयुक्त राष्ट्र संघ ने उपनिवेशवाद के उन्मूलन के लिए जो समिति बनाई, उसकी अध्यक्षता भारत के प्रतिनिधि को दी गई। भारत ने अनेक देशों को उपनिवेशवाद से मुक्त कराया।

(viii) भारत ने ईरान–इराक युद्ध की समाप्ति संयुक्त राष्ट्र संघ की मध्यस्थता से कराई।

(ix) चेकोस्लोवाकिया में 1956 में हंगरी और 1968 में रूस के हस्तक्षेप का भारत ने घोर विरोध किया।

(x) भारत ने 1971 ई० में पूर्वी बंगाल (बांग्लादेश) के भीषण नरसंहार को रोकने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ से गुहार लगाई।

(xi) भारत को 2 वर्ष के लिए सुरक्षा परिषद् का अस्थायी सदस्य चुना गया। भारत आतंक विरोधी समिति के अध्यक्ष पद पर सुशोभित हुआ। भारत की श्रीमति विजयलक्ष्मी पंडित संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा की अध्यक्षा रह चुकी हैं।

(xii) भारत ने कांगो, लेबनान, साइप्रस, लाइबेरिया, गोलान हाइट्स, कोट डी आइवर, पूर्वी तिमोर, हैती तथा दक्षिणी सूडान आदि देशों में शांति सेना भेजकर संयुक्त राष्ट्र संघ का भरपूर सहयोग किया है।

(xiii) भारतीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश बलवीर भंडारी अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में निर्वाचित होकर कार्य कर चुके हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ में भारत के सहयोग को अमेरिकी प्रतिनिधि ने इन शब्दों में व्यक्त किया है, ''संयुक्त राष्ट्र संघ में भारत एक सैनिक योद्धा के समान खड़ा है, जो उपनिवेशवाद का न झुकने वाला शत्रु है।''

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई-2 (ख) : देश की बाह्य एवं आंतरिक सुरक्षा

29 देश की सीमाएँ एवं सुरक्षा-व्यवस्था

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 242 व 243 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 243 व 244 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. भारत की उत्तरी–पश्चिमी सीमा का उल्लेख कीजिए।

उ०– **उत्तरी–पश्चिमी सीमा–** भारत की उत्तरी–पश्चिमी सीमा पर **अफगानिस्तान और पाकिस्तान** राष्ट्र स्थित हैं। अफगानिस्तान हमारा मित्र राष्ट्र है। किन्तु पाकिस्तान से हमारे कभी भी अच्छे संबंध नहीं रहे। पाकिस्तान भारत पर तीन बार आक्रमण कर चुका है। आज भी वह कश्मीर का कुछ भाग दबाए हुए है जिसे 'आजाद–कश्मीर' के नाम से जाना जाता है। इसके अतिरिक्त, पाकिस्तान निरंतर आधुनिकतम युद्ध–सामग्री जुटाने में लगा रहता है। इस कारण इस सीमा पर भारत के लिए खतरा बना रहता है।

2. भारतीय सेना के कितने अंग हैं? उनके नाम लिखते हुए बताइए कि सशस्त्र सेनाओं का सर्वोच्च सेनापति कौन होता है?

उ०– भारतीय सेना के तीन अंग हैं– थल सेना, नौसेना और वायुसेना। भारतीय सशस्त्र सेना के तीनों अंगों का सर्वोच्च सेनापति भारत का राष्ट्रपति होता है।

3. भारतीय थल सेना का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

उ०– भारतीय थल सेना– थल सेना भारतीय सेना का सबसे महत्वपूर्ण अंग है। थल सेना की टुकड़ियाँ भारत के विविध क्षेत्रों की छावनियों में रहती हैं, परंतु इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है। थल सेना का सर्वोच्च अधिकारी थल सेनाध्यक्ष (जनरल) होता है। भारतीय थल सेना निम्नलिखित कमांडों में विभक्त है–

(i) पश्चिमी कमांड	(ii) पूर्वी कमांड	(iii) उत्तरी कमांड
(iv) दक्षिणी कमांड	(v) दक्षिणी-पश्चिमी कमांड	(vi) सेन्ट्रल कमांड

प्रत्येक कमांड का सर्वोच्च अधिकारी 'जनरल ऑफिसर कमांडिग इन चीफ' होता है।

थल सेना की निम्नलिखित प्रमुख शाखाएँ होती हैं–

(i) इन्फेंट्री कोर	(ii) बख्तरबंद कोर	(iii) तोपखाना रेजीमेंट
(iv) इंजीनियरिंग कोर	(v) सिग्नल कोर	(vi) आर्मी सेना कोर
(vii) आर्मी आर्डिनेंस कोर	(viii) आर्मी मेडिकल कोर	(ix) आर्मी डेंटल कोर
(x) इलेक्ट्रिकल और मैकेनिकल कोर	(xi) सेना शिक्षा कोर।	

भारत की थल सेना टैंकों, दूरमारक तोपों, विमानभेदी मिसाइलों तथा अन्य आधुनिकतम अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित है।

4. भारत की सुरक्षा तैयारी पर एक नोट लिखिए।

उ०– भारतीय सुरक्षा तैयारियाँ– भारत ने सामरिक सुरक्षा की दृष्टि से अपने प्रतिरक्षा तंत्र को सुदृढ़ बनाया है। उत्तरी-पश्चिमी तथा चीन की ओर से सीमा पर बढ़ती घुसपैठ की घटनाओं ने उसे अपनी सीमाओं की सुरक्षा-व्यवस्था को सुदृढ़ करने का अवसर दिया है। पाकिस्तान तथा चीन परमाणु शस्त्रों का भंडार एकत्र कर भारत को चुनौतियाँ दे रहे हैं। इसलिए भारत अपनी सुरक्षा-व्यवस्था के प्रति पूर्ण सजग है। भारत की सुरक्षा तैयारियों की झलक निम्नवत् प्रस्तुत की जा सकती है–

(i) सुरक्षा की राष्ट्रीय भावना का विकास।	(ii) आर्थिक और औद्योगिक विकास पर बल।
(iii) खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता।	(iv) रक्षा-सामग्री के उत्पादन में निपुणता।
(v) रक्षा अनुसंधान और विकास कार्यों को बढ़ावा।	(vi) सेना के प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था।
(vii) सैन्य आधुनिकीकरण पर बल।	(viii) नागरिक सुरक्षा-प्रशिक्षण की व्यवस्था।
(ix) परमाणु शक्ति का विकास।	

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय सेना के तीनों अंगों का विस्तृत वर्णन कीजिए।

उ०– (i) थल सेना– इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

(ii) नौसेना– भारत के सामुद्रिक बेड़े को नौसेना कहा जाता है। भारतीय नौसेना के जवान सागर के सीने पर तैरकर भारतीय रक्षा तंत्र को सुदृढ़ बनाते हैं। नौसेना का सर्वोच्च अधिकारी नौसेनाध्यक्ष (एडमिरल) कहलाता है। भारतीय नौसेना का मुख्यालय नई दिल्ली में स्थित है। भारतीय नौसेना निम्नलिखित दो बेड़ों में विभक्त है–

(i) पूर्वी बेड़ा	(ii) पश्चिमी बेड़ा

भारतीय नौसेना निम्नलिखित तीन कमानों में विभक्त है–

(i) पूर्वी नौसेना कमान	=	कार्यालय	=	विशाखापट्टनम्
(ii) पश्चिमी नौसेना कमान	=	कार्यालय	=	मुंबई
(iii) दक्षिणी नौसेना कमान	=	कार्यालय	=	कोच्चि

प्रत्येक नौसेना कमान का सर्वोच्च अधिकारी 'फ्लैग ऑफिसर कमांडिंग इन चीफ' होता है।

भारतीय नौसेना आधुनिकतम युद्धपोतों और परमाणु पनडुब्बियों से सुसज्जित है।

(iii) वायु सेना– जल, थल और आकाश में सुरक्षा व्यवस्था सँभालने वाला भारतीय सेना का तीसरा महत्वपूर्ण अंग वायु सेना है। वर्तमान परिपेक्ष्य में वायु सेना युद्ध का सबसे महत्वपूर्ण साधन बन गई है। वायु सेना के बमवर्षक विमान जल, थल तथा आकाश में बम वर्षा कर युद्ध के रुख को मोड़ने की क्षमता रखते हैं। भारत के पास आधुनिकतम, प्रशिक्षित

और शक्तिशाली वायु सेना है। वायु सेना का सर्वोच्च अधिकारी वायु सेनाध्यक्ष (एयरचीफ मार्शल) होता है। भारतीय वायु सेना का मुख्यालय नई दिल्ली में है।

भारतीय वायु सेना में निम्नलिखित सात कमांड सम्मिलित हैं–

(क) पूर्वी वायु कमांड (ख) पश्चिमी वायु कमांड (ग) दक्षिणी कमांड

(घ) प्रशिक्षण कमांड (ङ) मध्य कमांड (च) रखरखाव कमांड

(छ) दक्षिण–पश्चिमी कमांड

प्रत्येक कमांड एक स्क्वाड्रन लीडर के अधीन होती है। प्रत्येक कमांड में युद्धपोत, बमवर्षक विमान तथा सैनिक वाहक विमान होते हैं। भारतीय वायु सेना का स्थान विश्व की महान वायु सेनाओं में है। वायु सेना ही वर्तमान युद्ध जितवाती है। यह थल सेना और नौसेना को आगे बढ़ाने के लिए आकाश से शत्रु सेना पर बम गिराकर उसका संहार करती है। भारतीय वायु सेना यह कमाल अनेक बार दिखा चुकी है।

भारतीय सेना की एकीकृत सुरक्षा कमांड– भारतीय सेना के तीनों अंगों में उचित समन्वय बैठाने की आवश्यकता अनुभव हुई। अत: भारतीय सैन्य अधिकारियों ने 1 अक्टूबर, 2001 ई० को एक नवीन **एकीकृत सुरक्षा कमांड** की स्थापना कर इस कमी को पूरा कर दिया। यह कमांड तीनों अंगों को परस्पर संबद्ध करके थल सेना, नौसेना तथा वायु सेना के लिए सम्मिलित प्रशिक्षण सेवा, सम्मिलित योजना सेवा, सम्मिलित सुरक्षा गुप्तचर सेवा एवं सम्मिलित चिकित्सा सेवा आदि की व्यवस्था करके उनकी गुणवत्ता में वृद्धि करने का महत्वपूर्ण कार्य करती है।

2. भारत की सुरक्षा तैयारियों पर एक निबंध लिखिए।

उ०– **भारतीय सुरक्षा तैयारियाँ–** भारत ने सामरिक सुरक्षा की दृष्टि से अपने प्रतिरक्षा तंत्र को सुदृढ़ बनाया है। उत्तरी–पश्चिमी तथा चीन की ओर से सीमा पर बढ़ती घुसपैठ की घटनाओं ने उसे अपनी सीमाओं की सुरक्षा-व्यवस्था को सुदृढ़ करने का अवसर दिया है। पाकिस्तान तथा चीन परमाणु शस्त्रों का भंडार एकत्र कर भारत को चुनौतियाँ दे रहे हैं। इसलिए भारत अपनी सुरक्षा-व्यवस्था के प्रति पूर्ण सजग है। भारत की सुरक्षा तैयारियों की झलक निम्नवत् प्रस्तुत की जा सकती है–

(i) सुरक्षा की राष्ट्रीय भावना का विकास– भारत का जन-जन राष्ट्र प्रेम और राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत है। भारत सरकार ने जनसाधारण में देश पर मर-मिटने का भाव जागृत कर, देश की जनता को राष्ट्रीय सुरक्षा में भागीदारी करने के लिए तैयार कर लिया है।

(ii) आर्थिक और औद्योगिक विकास पर बल– राष्ट्र आर्थिक और औद्योगिक दृष्टि से जितना अधिक शक्ति-संपन्न होगा, सुरक्षा के लिए भी उतना ही प्रतिबद्ध होगा। भारत ने आर्थिक औद्योगिक क्षेत्र में विकास करके राष्ट्र की सुरक्षा को चुस्त बना दिया है।

(iii) खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता– भारत ने कृषि की नवीनतम तकनीकी अपनाकर तथा हरित क्रान्ति के माध्यम से कृषि उत्पादन में आश्चर्यजनक उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं। भारत खाद्यान्न उत्पादन तथा भंडारण में आत्मनिर्भर बनकर सुरक्षा के क्षेत्र में सबल बन गया है।

(iv) रक्षा–सामग्री के उत्पादन में निपुणता– भारत ने रक्षा–सामग्री का उत्पादन देश में कार्यरत 39 आयुध कारखानों में करके स्वयं को रक्षा–सामग्री के उत्पादन में निपुण बना लिया है। इस सामग्री ने हमारे सैनिकों को शत्रु सेना से मुकाबला करने में हर प्रकार से सक्षम बना दिया है।

(v) रक्षा अनुसंधान और विकास कार्यों को बढ़ावा– भारत सरकार ने 1980 ई० में 'रक्षा विकास एवं अनुसंधान विभाग' की स्थापना करके इस क्षेत्र में नए-नए अनुसंधानों को जन्म दिया है। नवीनतम अस्त्र–शस्त्रों ने भारत को सुरक्षा के क्षेत्र में सुदृढ़ बना दिया है।

(vi) सेना के प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था– कहावत है 'सैनिक जितना प्रशिक्षित होगा मुकाबला उतना ही कड़ा होगा'। भारत सरकार ने अनेक स्थानों पर सैन्य प्रशिक्षण संस्थान स्थापित कर तथा उनमें योग्य अधिकारियों की नियुक्ति कर, सेना को युद्ध-कौशल में प्रवीण बना लिया है।

(vii) सैन्य आधुनिकीकरण पर बल– भारत सरकार का लक्ष्य भारतीय सेना को नवीनतम तथा आधुनिकतम बनाना है।

भारतीय सेना युद्धपोतों, वायुयानों, मिसाइलों तथा परमाणु पनडुब्बियों से संपन्न बनकर आधुनिकीकरण का चोला धारण कर चुकी है। उसका यह स्वरूप भारतीय सुरक्षा–व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए पर्याप्त है।

(viii) नागरिक सुरक्षा-प्रशिक्षण की व्यवस्था– भारत ने आपातकालीन परिस्थितियों से निबटने के लिए, आवश्यकता पड़ने पर देश के नागरिकों को सुरक्षा व्यवस्था में भागीदारी करने के योग्य बनाने के लिए नागरिक सुरक्षा-प्रशिक्षण की व्यवस्था करके भारतीय सुरक्षा व्यवस्था को पूरी तरह मजबूत बना लिया है।

3. भारतीय सैन्य संगठन का विस्तृत विवरण लिखिए।

उ०– **भारतीय सैन्य संगठन–** भारत सरकार देश के सभी क्षेत्रों की सुरक्षा की समुचित व्यवस्था करती है। भारत के राष्ट्रपति को सेना के तीनों अंगों का सुप्रीम कमांडर (सर्वोच्च सेनापति) बनाया गया है। उसी के हाथों में तीनों सेनाओं की कमान रहती है। देश की सुरक्षा के लिए समुचित कार्यप्रणाली एवं कूटनीति तैयार करने का भार भारतीय रक्षा मंत्रालय को सौंपा गया है। रक्षा मंत्रालय का प्रमुख रक्षामंत्री होता है। 1962 ई० में सरकार ने रक्षा उत्पादन विभाग बनाया तथा बाद में रक्षा वितरण विभाग को भी उसी के साथ जोड़ दिया गया। सरकार ने 1980 ई० में रक्षा शोध एवं विकास विभाग की स्थापना कर सेना सुरक्षा–व्यवस्था का आधुनिकीकरण कर दिया। रक्षा सचिव, भारतीय रक्षा विभाग का मुख्य अधिकारी होता है।

भारतीय सेना– सेना किसी भी राष्ट्र की सुरक्षा की धुरी होती है। भारत ने एक शक्ति–संपन्न तथा नवीनतम अस्त्र–शस्त्रों से सुसज्जित विशाल सेना का गठन किया है। भारत की सेना आई.एन.ए. (भारतीय राष्ट्रीय सेना) कही जाती है। जैसे हमारा राष्ट्रध्वज तीन रंगों की छटा बिखेरता है, वैसे ही हमारी सेना धरती, सागर और आकाश में सुरक्षा की आभा बिखेरती है। भारतीय सेना के तीन अंग हैं। भारतीय सेना के तीनों अंगों का सेनापति भारत का राष्ट्रपति होता है। भारतीय सेना के तीन अंग निम्नलिखित हैं–

(i) **थल सेना–** इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

(ii) **नौ सेना–** इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

(iii) **वायु सेना–** इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

4. भारत की वायु सेना का विस्तृत विवरण दीजिए।

उ०– इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

30 देश की आंतरिक सुरक्षा-व्यवस्था

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 242 व 243 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 243 व 244 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. आंतरिक सुरक्षा को बनाए रखने के लिए कोई तीन उपाय सुझाइए।

उ०– प्रत्येक राष्ट्र को अपनी आंतरिक सुरक्षा को सुदृढ़ बनाने के लिए अनेक उपाय करने पड़ते हैं। अत: भारत को भी इस कार्य के लिए अनेक साधनों एवं संगठनों का निर्माण करना पड़ा। भारत द्वारा अपनी आंतरिक सुरक्षा को बनाए रखने के लिए अपनाए गए तीन प्रमुख संगठन निम्न हैं–

(i) प्रादेशिक सेना (ii) सीमा सुरक्षा बल (iii) भारतीय तटरक्षक बल।

2. भारत की आंतरिक सुरक्षा की किन्हीं तीन चुनौतियों का उल्लेख कीजिए।

उ०– भारत की आंतरिक सुरक्षा की तीन चुनौतियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) भाषावाद की समस्या (ii) संप्रदाय वाद की समस्या (iii) अलगाववाद की समस्या

3. भारत की आंतरिक सुरक्षा की रणनीति के तीन उपाय बताइए।

उ०– भारत को विविध चुनौतियों का सामना करते हुए, अपनी आंतरिक सुरक्षा हेतु कारगर रणनीति बनाने की नितांत आवश्यकता है। भारत में अशिक्षा, निर्धनता, विषमता और बेरोजगारी की समस्याएँ आंतरिक सुरक्षा की उचित रणनीति अपनाने के लिए बाध्य करती हैं। भारत की आंतरिक सुरक्षा की रणनीति के तीन उपाय निम्न प्रकार हैं–

(i) राष्ट्र के सर्वांगीण विकास का लक्ष्य तय करना।

(ii) संपूर्ण क्षेत्रों में समान रूप से विकास और प्रगति की धारा प्रवाहित करना।

(iii) समाज के सभी वर्गों और संप्रदायों को लाभ के समान अवसर जुटाना।

4. असम राइफल्स के विषय में संक्षेप में बताइए।

उ०– असम राइफल्स की स्थापना सन् 1935 ई० में लूटपाट करने वाली जनजातियों से ब्रिटिश बस्तियों और चाय बगानों की सुरक्षा के लिए कैशर लैवी के रूप में की गई थी। वर्ष 1833 में इसका नाम बदलकर 'फ्रंटियर पुलिस' रखा गया। वर्ष 1917 में इसे 'असम राइफल्स' नाम दिया गया। यह ग्रह मंत्रालय के अधीन कार्य करने वाला 'केंद्रीय सशस्त्र बल' है। यह अंतर्राष्ट्रीय सीमा की सुरक्षा के साथ-साथ अन्य कार्य भी करता है। वर्तमान समय में असम राइफल्स में 46 बटालियन हैं। इसका मुख्यालय शिलांग में है। इसका आदर्श वाक्य है– 'पहाड़ी लोगों का मित्र।''

5. प्रादेशिक सेना पर एक टिप्पणी लिखिए।

उ०– **प्रादेशिक सेना–** भारत में प्रादेशिक सेना का गठन 9 अक्टूबर, 1949 ई० को किया गया था। प्रादेशिक सेना नागरिकों का स्वैच्छिक सैन्य संगठन है। इसके अंतर्गत उन नागरिकों को जोड़ा जाता है, जो स्वेच्छा से अपनी अल्पकालीन सेवाएँ देश की रक्षा में अर्पित करने की इच्छा रखते हैं। इन नागरिकों को अवकाश के समय सैन्य प्रशिक्षण दिया जाता है, ताकि आंतरिक सुरक्षा, युद्ध तथा प्राकृतिक आपदाओं के समय उन्हें कार्यों में लगाया जा सके। संकटकाल में सामान्य सेवाओं के बाधित होने अथवा राष्ट्रीय सुरक्षा पर संकट आने के समय प्रादेशिक सेना नियमित सेना की तरह कार्य करके राष्ट्र सेवा में अपना अंशदान करती है।

6. एन.सी.सी. को सुरक्षा सेवा की नर्सरी क्यों कहा गया है?

उ०– एन.सी.सी. अर्थात् राष्ट्रीय कैडिट कोर शिक्षा प्राप्त कर रहे युवक एवं युवतियों का एक स्वैच्छिक संगठन हैं, जो अनुशासन में रहकर शस्त्र चलाने का प्रशिक्षण प्राप्त करता है। एन.सी.सी. नियमित सेना की पाठशाला के रूप में कार्य करती है तथा सेना को योग्य अधिकारी दिलाने में सहायक बनती है इसलिए भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने एन.सी.सी. को सुरक्षा सेवा की नर्सरी कहा है।

7. ''आतंकवाद एक अंतर्राष्ट्रीय समस्या है।'' किन्हीं तीन तर्कों द्वारा स्पष्ट कीजिए।

उ०– पर्यावरण प्रदूषण के बाद दूसरी सबसे बड़ी समस्या आतंकवाद है। मध्य एशिया में उपजे धीरे-धीरे इसने समूचे विश्व को अपनी चपेट में ले लिया है। आतंकवाद के अंतर्राष्ट्रीय समस्या बन जाने के पीछे निम्न तीन कारण तक दिए जा सकते हैं–

(i) राजनीतिक स्वार्थ के कारण कुछ उन्मादी तथा गैर-सामाजिक लोग विश्वभर में आतंकवादी घटनाओं का संचालन कर रहे हैं।

(ii) सूचना एवं प्रौद्योगिकी तथा नए-नए घातक यंत्रों के आविष्कारों और उनकी सुलभता ने, आतंकवाद को समूचे विश्व में फैलने का अवसर दिया है।

(iii) जैविक, नाभिकीय तथा रासायनिक अस्त्र-शस्त्रों तक आतंकवादियों की पहुँच ने विश्वभर में भय और आतंक का वातावरण बना दिया है।

8. आतंकवाद को नियंत्रित करने के लिए तीन उपाय लिखिए।

उ०– आतंकवाद को नियंत्रित करने के तीन उपाय निम्नलिखित हैं–

(i) संयुक्त राष्ट्र संघ में आतंकवाद की समाप्ति के लिए प्रस्ताव पारित किया जाए।

(ii) समस्त राष्ट्र संयुक्त प्रयासों द्वारा आतंकवाद के विरुद्ध कार्य योजना बनाए।

(iii) अलगाववाद की आवाज उठते ही, उसे तुरंत दबा दिया जाना चाहिए।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. आंतरिक सुरक्षा से आप क्या समझते हैं? भारत की आंतरिक सुरक्षा के समक्ष आने वाली चुनौतियाँ बताइए।

उ०– **आंतरिक सुरक्षा का अर्थ–** राष्ट्र की भौगोलिक सीमाओं में शांति और व्यवस्था के साथ नागरिकों की जान–माल की सुरक्षा की व्यवस्था आंतरिक सुरक्षा कहलाती है। अलगाववाद, आतंकवाद के साथ-साथ राष्ट्र के असामाजिक तत्व आंतरिक सुरक्षा में बाधा पहुँचाते हैं। आंतरिक सुरक्षा, राष्ट्र के आर्थिक विकास का सही मार्ग तथा बाह्य सुरक्षा की पक्की नींव होती है। इसी नींव पर राष्ट्र की सामरिक सुरक्षा का किला बनाया जाता है। आंतरिक सुरक्षा को बनाए रखने में सरकार के साथ-साथ प्रत्येक नागरिक को भी सक्रिय भूमिका निभाने की आवश्यकता होती है। सरकार द्वारा किए गए सुरक्षा उपायों के साथ-साथ प्रत्येक नागरिक के राष्ट्रभक्त और जागरूक होने से राष्ट्र सशक्त और सुरक्षित बनता है। आंतरिक सुरक्षा समाज में भाईचारा, शांति, सहयोग और सौहार्द का वातावरण उत्पन्न कर प्रत्येक नागरिक को आर्थिक विकास और राष्ट्र निर्माण के लिए प्रेरित करती है।

आंतरिक सुरक्षा की चुनौतियाँ– राष्ट्र की आंतरिक सुरक्षा एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। भारत जैसे विशाल क्षेत्रफल वाले देश के समक्ष ये चुनौतियाँ अधिक विकट बन जाती हैं। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक तथा अरुणाचल प्रदेश से लेकर गुजरात तक भारत में विविध जातियों, धर्मों, संप्रदायों और भाषा–भाषी लोगों का जमघट होने के कारण भारत को क्षेत्रवाद, भाषावाद और सांप्रदायिकता का संकट झेलना पड़ता है। भाषावाद, क्षेत्रवाद और सांप्रदायवाद का टकराव राष्ट्र की आंतरिक सुरक्षा पर प्रहार कर, उसे छिन्न-भिन्न करने में लगा रहता है। सीमापार से आने वाला आतंकवाद और घुसपैठियों का रेला भारत की आंतरिक सुरक्षा को सदैव नष्ट करने पर तुला रहता है। भारतीयता का भाव, संपूर्ण देशवासियों को एकता के सूत्र में बाँधकर आतंकवाद की आँधी और घुसपैठियों से निपटने में सक्षम बनाता है। भारत हमारी माता है और हम इसकी संतान हैं। यही भाव कश्मीरी, पंजाबी, बंगाली, बिहारी, तमिल तथा केरलवासियों को भावात्मक सूत्र में बाँधकर आंतरिक सुरक्षा बनाए रखने की प्रेरणा देता हैं। वर्तमान में भारत की आंतरिक सुरक्षा के समक्ष निम्नलिखित चुनौतियाँ विद्यमान हैं–

(i) क्षेत्रवाद की समस्या (ii) भाषावाद की समस्या (iii) संप्रदायवाद की समस्या

(iv) अलगाववाद की भावना (v) आतंकवाद की समस्या (vi) पिछड़ेपन की समस्या

(vii) पड़ोसी देशों से असामाजिक तत्वों की घुसपैठ की समस्या

(viii) राजनीतिक दलों द्वारा जातिवाद और संप्रदायवाद को भड़काने की समस्या

उपर्युक्त सभी समस्याएँ भारत की आंतरिक सुरक्षा के समक्ष गंभीर चुनौतियाँ उत्पन्न कर रही हैं।

2. भारत में आंतरिक सुरक्षा के साधनों का वर्णन कीजिए।

उ०– **भारत की आंतरिक सुरक्षा के साधन–** प्रत्येक राष्ट्र को अपनी आंतरिक सुरक्षा को सुदृढ़ बनाने के लिए अनेक उपाय करने पड़ते हैं। अत: भारत को भी इस कार्य के लिए अनेक साधनों और संगठनों का निर्माण करना पड़ा। उसके द्वारा अपनाए गए साधनों को निम्नवत् वर्गीकृत किया जा सकता है–

(i) पारंपरिक साधन– आंतरिक सुरक्षा के पारंपरिक साधन वे हैं, जो प्राचीनकाल से चले आ रहे हैं। हाँ, समयानुकूल इनमें परिवर्तन और सुधार अवश्य होता है। ये साधन पुलिस बल, त्वरित कार्य बल (आर.ए.एफ), असम राइफल्स, होमगार्ड, सशस्त्र पुलिस, गुप्तचर शाखा तथा अपराध शाखा आदि हैं। पुलिस प्रशासन राज्य सरकार के अंतर्गत आता है। इसका पूरा संचालन पुलिस महानिरीक्षक द्वारा किया जाता है।

त्वरित कार्य बल का कार्य सांप्रदायिक दंगों तथा उपद्रवों पर नियंत्रण पाना है। 1991 ई० में गठित यह बल एक प्रशिक्षित और शस्त्र–सुसज्जित आक्रामक बल के रूप में कार्य करता है। दंगा समाप्त हो जाने पर यही बल कानून–व्यवस्था लागू कराकर बचाव तथा राहत कार्यों में भी सहयोग देता है।

असम राइफल्स का गठन 1835 ई० में 'कछार लेवी' के नाम से पूर्वोत्तर राज्यों में सुरक्षा–व्यवस्था बनाए रखने के लिए कया गया था। यह बल 'पर्वतीय लोगों का मित्र' और 'पूर्वोत्तर का प्रहरी' कहलाता है। इसका मुख्यालय शिलांग में है।

होमगार्ड शाखा का गठन 1946 ई० में नागरिक अशांति और सांप्रदायिक दंगों के नियंत्रण हेतु किया गया था। यह

संगठन देश में हवाई हमला होने तथा प्राकृतिक आपदाओं के आने पर बचाव तथा राहत कार्य करता है।

(ii) गैर–पारंपरिक साधन– आंतरिक सुरक्षा-व्यवस्था बनाए रखने के लिए समाज के दिव्यांग, असहाय, वृद्ध तथा बीमार लोगों की सहायता के लिए जो उपाय काम में लाए जाते हैं, उन्हें गैर-पारंपरिक साधन कहते हैं। गैर–परंपरागत साधनों को अपनाकर अल्पसंख्यकों, महिलाओं, दिव्यांगों तथा पिछड़े वर्ग के लोगों को राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़कर सामाजिक असमानता और असंतोष को दूर किया जाता है। इन साधनों का उपयोग समय और आवश्यकतानुसार किया जाता है।

जिस प्रकार देश की विस्तृत सीमाओं की सुरक्षा के लिए सशस्त्र सेनाओं का गठन किया जाता है उसी प्रकार देश की आंतरिक सुरक्षा-व्यवस्था को मजबूत करने के लिए विभिन्न सुरक्षा संगठनों का गठन किया जाता है। भारत में गठित इन बलों का विवरण निम्नलिखित तालिका में दिया गया है–

भारत की आंतरिक सुरक्षा में कार्यरत संगठनों की तालिका–

संगठन का नाम	स्थापना वर्ष	मुख्यालय
1. इंटेलीजेंस ब्यूरो	1920	नई दिल्ली
2. असम राइफल्स	1835	शिलांग
3. केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल	1939	नई दिल्ली
4. राष्ट्रीय कैडेट कोर (एन०सी०सी०)	1948	नई दिल्ली
5. प्रादेशिक सेना	1949	नई दिल्ली
6. भारत-तिब्बत सीमा पुलिस	1962	नई दिल्ली
7. होमगार्ड्स	1946	नई दिल्ली
8. केंद्रीय जाँच ब्यूरो	1963	नई दिल्ली
9. सीमा सुरक्षा बल	1965	नई दिल्ली
10. केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल	1969	नई दिल्ली
11. भारतीय तटरक्षक बल	1978	नई दिल्ली
12. राष्ट्रीय सुरक्षा गार्ड	1984	नई दिल्ली
13. नेशनल क्राइम रिकार्ड्स ब्यूरो	1986	नई दिल्ली
14. रैपिड एक्शन फोर्स	1991	नई दिल्ली

उपर्युक्त संगठनों में से कुछ महत्वपूर्ण संगठनों का वर्णन निम्नलिखित है–

(i) प्रादेशिक सेना– भारत में प्रादेशिक सेना का गठन 9 अक्टूबर, 1949 ई० को किया गया था। प्रादेशिक सेना नागरिकों का स्वैच्छिक सैन्य संगठन है। इसके अंतर्गत उन नागरिकों को जोड़ा जाता है, जो स्वेच्छा से अपनी अल्पकालीन सेवाएँ देश की रक्षा में अर्पित करने की इच्छा रखते हैं। इन नागरिकों को अवकाश के समय सैन्य प्रशिक्षण दिया जाता है, ताकि आंतरिक सुरक्षा, युद्ध तथा प्राकृतिक आपदाओं के समय उन्हें कार्यों में लगाया जा सके। संकटकाल में सामान्य सेवाओं के बाधित होने अथवा राष्ट्रीय सुरक्षा पर संकट आने के समय प्रादेशिक सेना नियमित सेना की तरह कार्य करके राष्ट्र सेवा में अपना अंशदान करती है।

(ii) सीमा सुरक्षा बल– सीमा सुरक्षा बल का गठन 1 दिसंबर, 1965 ई० को किया गया था। इसका मुख्य कार्य भारत की अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं की स्थायी सुरक्षा करना है। सीमा सुरक्षा बल का सर्वोच्च अधिकारी महानिदेशक होता है तथा इसका मुख्यालय नई दिल्ली में स्थापित किया गया है। सीमा सुरक्षा बल के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं–

(क) भारत के सीमावर्ती क्षेत्रों में रहने वाले नागरिकों में सुरक्षा की भावना को बनाए रखना।

(ख) अंतर्राष्ट्रीय अपराधों की बाढ़ रोकने के लिए घुसपैठ, तस्करी तथा अन्य अवैध गतिविधियों पर रोक लगाना।

(ग) युद्ध के समय सेना के अनुपूरक के रूप में कार्य करना।

(घ) आंतरिक सुरक्षा बनाए रखने तथा असैनिक प्रशासन को बनाए रखने में सहयोग करना।

(ङ) सीमावर्ती क्षेत्रों में सुरक्षात्मक कार्यवाही करने वाले अन्य बलों के साथ संपर्क एवं सहयोग बनाए रखना।

(iii) भारतीय तटरक्षक बल– भारतीय तटरक्षक बल का गठन 18 अगस्त, 1978 ई० में समुद्री सीमाओं की सुरक्षा करने के उद्देश्य से किया गया था। इसका प्रमुख अधिकारी डायरेक्टर जनरल स्तर का होता है। भारतीय तटरक्षक बल के तीन क्षेत्रीय कार्यालय क्रमशः मुंबई, चेन्नई तथा पोर्टब्लेयर में स्थापित किए गए हैं। इस बल के द्वारा मुख्य रूप से निम्नलिखित कार्य किए जाते हैं–

(क) समुद्री सीमा तथा सामुद्रिक क्षेत्रों में राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा करना।

(ख) तट से दूर समुद्र में स्थित नौसैनिक अड्डों तथा द्वीपों की सुरक्षा करना।

(ग) समुद्र में मछली पकड़ने गए मछुआरों की विपत्ति में सुरक्षा करना।

(घ) सागरीय पर्यावरण तथा प्रदूषण पर नियंत्रण लगाना।

(ङ) तस्करों के विरुद्ध अभियान चलाने में सीमा शुल्क अधिकारियों का सहयोग करना।

(iv) भारत-तिब्बत सीमा पुलिस– भारत–तिब्बत सीमा पुलिस बल की स्थापना 24 अक्टूबर, 1962 ई० को की गई थी, जिसका मुख्यालय नई दिल्ली में स्थापित किया गया। इसका कार्यक्षेत्र लद्दाख के कराकोरम दर्रे से लेकर अरुणाचल प्रदेश के लिपुलेख दर्रे तक है। भारत में कैलाश पर्वत तथा मानसरोवर झील की पावन यात्रा इसी संगठन के संरक्षण में संपन्न कराई जाती है।

(v) केंद्रीय जाँच ब्यूरो– केंद्रीय जाँच ब्यूरो की स्थापना 1963 ई० में की गई थी, जिसका मुख्यालय नई दिल्ली में स्थापित किया गया। यह केंद्र सरकार की मुख्य अन्वेषी संस्था है। इसका मुख्य कार्य राजनेताओं, सरकारी कर्मचारियों, संगठित गैंग तथा पेशेवर अपराधियों की धोखाधड़ी, गबन, रिश्वतखोरी तथा जालसाजी आदि आपराधिक कार्यों की जाँच करना है।

(vi) केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल– केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल का गठन 1939 ई० में किया गया था। इसका मुख्यालय नई दिल्ली में स्थापित किया गया। इस बल का मुख्य कार्य केंद्र तथा राज्य सरकारों को कानून और शांति व्यवस्था बनाने में सहयोग देना तथा प्राकृतिक आपदाओं के समय बचाव तथा राहत कार्यों में मदद देना है।

(vii) राष्ट्रीय कैडेट कोर– इसे एन.सी.सी. के नाम से जाना जाता है। राष्ट्रीय कैडेट कोर की स्थापना 1948 ई० में की गई थी, जिसका मुख्यालय नई दिल्ली में स्थापित किया गया। राष्ट्रीय कैडेट कोर शिक्षा प्राप्त कर रहे युवक एवं युवतियों का एक स्वैच्छिक संगठन है, जो अनुशासन में रहकर शस्त्र चलाने का प्रशिक्षण प्राप्त करता है। राष्ट्रीय कैडेट कोर का आदर्श है– 'एकता और अनुशासन'। इस संगठन के लक्ष्यों को निम्नवत् स्पष्ट किया जा सकता है–

(क) शैक्षिक संस्थाओं से छात्र, छात्राओं का संगठन बनाना।

(ख) युवा कैडेट्स को सैन्य प्रशिक्षण प्रदान कराना।

(ग) कैडेट्स के अनुशासित शिविर लगाकर, उन्हें शस्त्र चलाने तथा राष्ट्र की सुरक्षा करने का व्यवहारिक प्रशिक्षण प्रदान करना।

(घ) युवकों में राष्ट्र प्रेम तथा राष्ट्र की सुरक्षा की भावना जगाना।

(ङ) राष्ट्र पर युद्ध का संकट आ जाने पर द्वितीय सहायक सेना का गठन करना।

(च) सैन्य प्रशिक्षण द्वारा युवक–युवतियों में अनुशासन जगाकर चरित्र–निर्माण करना।

राष्ट्रीय कैडेट कोर नियमित सेना की पाठशाला के रूप में कार्य करती है तथा सेना को योग्य अधिकारी दिलाने में सहायक बनती है। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने राष्ट्रीय कैडेट कोर का महत्व इन शब्दों में व्यक्त किया था, "राष्ट्रीय कैडेट कोर (एन.सी.सी.) सुरक्षा सेवा की नर्सरी है।" अतः कहा जाता है कि राष्ट्र की आंतरिक सुरक्षा का मूलमंत्र यह है कि "भारत का प्रत्येक विद्यार्थी राष्ट्रीय कैडेट कोर का सदस्य बने, तभी एन.सी.सी. भारत की दूसरी रक्षा पंक्ति बनने में सफल हो सकेगी।"

3. सीमा सुरक्षा बल तथा एन.सी.सी. का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 2 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

4. आतंकवाद को जन्म देने के लिए कौन–कौन से कारण उत्तरदायी हैं? आतंकवाद रोकने के चार उपाय सुझाइए।

उ०– आतंकवाद– भारत की आंतरिक सुरक्षा में सेंध लगाने में आतंकवाद कभी भी सक्रिय हो जाता है। आतंकवाद उन गैर –सामाजिक तथा धार्मिक उन्मादी नवयुवकों की भय और आतंकवादी गतिविधियों को कहा जाता है, जिनसे वे समाज तथा

राष्ट्र में भय का वातावरण उत्पन्न करते हैं। प्राय: कुछ असामाजिक तत्व अपनी गैर कानूनी माँगों को पूरा करवाने के लिए हिंसा, लूटमार, आगजनी तथा बम विस्फोट करके, जो भय का वातावरण उत्पन्न करते हैं, उसे ही आतंकवाद कहा जाता है। प्राय: सामाजिक असमानताएँ, विषमताएँ और असंतोष आतंकवादियों को जन्म देते हैं, जिसका परिणाम ही आतंकवाद है।

आतंकवाद की विशेषताएँ– आतंकवाद की पहचान, उसकी निम्नलिखित विशेषताओं द्वारा हो जाती है–

(i) कुछ गैर–सामाजिक लोगों द्वारा हिंसा फैलाना।
(ii) राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति हेतु सामाजिक वातावरण को हिंसात्मक तथा विषाक्त बनाना।
(iii) सरकार को धमकाने तथा अपनी गैर कानूनी माँगों को पूरा कराने के लिए हिंसा और अपहरण का सहारा लेना।
(iv) विद्रोह के रूप में संघर्ष कराने, आग लगाने तथा बम–विस्फोट द्वारा निर्दोष लोगों की हत्या करने जैसी घातक घटनाओं को जन्म देना।
(v) अवैध तथा अमानवीय कार्य करने से भी न हिचकिचाना।
(vi) राष्ट्रीय एकता और अखंडता को खंड–खंड करने का प्रयास करना।
(vii) हिंसा, लूटमार, बम–विस्फोट तथा खूनी संघर्ष करवाकर सत्ता परिवर्तन का प्रयास करना।

आतंकवाद पर नियंत्रण– आतंकवाद समूचे विश्व के लिए विनाशक और मानवता के लिए कलंक बनकर उभरा है। अत: इस अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पनप रही समस्या का समाधान भी अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से ही किया जाना चाहिए। आतंकवाद पर नियंत्रण लगाने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिए–

(i) संयुक्त राष्ट्र संघ में आतंकवाद की समाप्ति के लिए प्रस्ताव पारित किया जाए।
(ii) समस्त राष्ट्र संयुक्त प्रयासों द्वारा आतंकवाद के विरुद्ध कार्य योजना बनाएँ।
(iii) विश्व में आतंकवादियों को राष्ट्रों के संयुक्त अभियानों द्वारा कुचल डालने का प्रयास किया जाए।
(iv) संयुक्त राष्ट्र संघ को शांति वाहिनी सेना की तरह, आतंकवाद विनाशनी सेना का गठन करके आतंकवाद तथा आंतकवादियों को कुचलने का प्रयास करना चाहिए।
(v) अलगाववाद की आवाज उठते ही, उसे तुरंत कठोरता से दबा दिया जाना चाहिए।
(vi) आतंकवाद की समस्या को हल करने में पक्षपात या तुष्टिकरण की नीति को दूर रखना चाहिए।
(vii) गैर-सामाजिक और उन्मादी लोगों को सुधारने का भरपूर प्रयास करना चाहिए।
(viii) आतंकवादी संगठनों को जड़ से नष्ट करके, आतंकवादियों को अस्त्र-शस्त्र सहित समर्पण करने के लिए बाध्य किया जाना चाहिए।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई-2 (ग) : सड़क सुरक्षा और यातायात

31 सड़क यातायात और सड़क सुरक्षा

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 258 का अवलोकन कीजिए

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 258 व 259 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. सड़क यातायात के विकास का वर्णन कीजिए।

उ०– मानव सदैव से ही भ्रमणशील रहा है। आदिमानव ने नदियों को प्राकृतिक सड़कों के रूप में प्रयोग किया और पहिए का

आविष्कार कर कच्ची सड़कों से प्रारंभ करके सड़क यातायात को पक्की सड़कों तक पहुँचा दिया। आदिमानव ने कच्ची सड़कों पर पत्थर बिछाकर तथा पहिए से गाड़ी बनाकर वर्तमान सभ्यता को सड़क यातायात का उपहार दिया। सतत् विकास ही जीवन जीने की नई पद्धति है और प्रगति मानव का स्वभाव है। इन्हीं दोनों आदर्शों ने मिलकर सड़क यातायात के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन किए। पहले कच्ची सड़कें और खड़ंजे बने, फिर पक्की सड़कों को राष्ट्रीय राजपथों के रूप में विकसित करके एक्सप्रेस-वे को जन्म दिया।

मोटरकार, ट्रक, बाइक, स्कूटर तथा बैलगाड़ी के माध्यम से सड़क मार्ग से गन्तव्य तक पहुँचना ही सड़क यातायात कहलाता है। सड़कें सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास का मार्ग प्रशस्त करती हैं। कहावत है, सड़कें सभ्यता की वाहक और आर्थिक विकास की जननी हैं।

सड़क यातायात परिवहन का वह साधन है, जो आपको आपके घर, कार्यालय, विद्यालय या कारखाने से लेकर गंतव्य तक पहुँचाने में सार्थक भूमिका निभाता है। घर से बाहर कदम रखिए, बस सड़क आपकी सेवा में हाजिर है। सड़क परिवहन वह व्यवस्था है, जो कश्मीर के सेब को कन्याकुमारी तक तथा गुजरात के केलों को कश्मीर तक पहुँचाती है। कार, स्कूटर, बाइक, ट्रक या ट्रैक्टर के द्वारा सड़क यातायात संपन्न होता है।

2. सड़क यातायात के चार लाभ लिखिए।

उ०– सड़क यातायात के चार लाभ निम्नलिखित हैं–

(i) सड़क यातायात आवागमन का सुगम साधन हैं। सड़क यातायात का उपयोग गाँव, कस्बे, नगर, महानगर, वन, पर्वत, पठार, मरुस्थल सभी जगह किया जाता है।

(ii) सड़क यातायात द्वारा कच्च माल कारखानों तथा तैयार माल खपत केंद्रों तक पहुँचाकर उद्योगों की स्थापना और विकास में सहायक हैं।

(iii) सड़क यातायात नगर, मंडियों और कारखानों से कृषि यंत्र, बीज, उर्वरक, कीट-नाशक आदि को कृषि क्षेत्रों तक तथा कृषि उपजों को खेतों से मंडियों तथा वितरण केंद्रों तक पहुँचाकर कृषि विकास में सहायक है।

(iv) सड़क यातायात प्रशासनिक अधिकारियों को यत्र तत्र पहुँचाकर तथा समाचार पत्र और पत्रिकाओं का वितरण करके प्रशासन तथा संचार-तंत्र को बनाता है।

3. सड़क सुरक्षा क्या है? इसे बनाए रखने के लिए चार उपाय सुझाइए।

उ०– सड़क परिवहन की अवधि में अपने आप को सुरक्षित बनाए रखना तथा दूसरों की सुरक्षा का ध्यान रखते हुए अपने गंतव्य तक पहुँचना ही सड़क सुरक्षा है। दूसरे शब्दों में सड़क यातायात के समय वाहनों के टकराव को रोककर स्वयं के जीवन की रक्षा करते हुए दूसरों को सुरक्षित यात्रा करने में सहयोगी बनना ही सड़क सुरक्षा है। सड़क सुरक्षा बनाए रखने के लिए चार उपाय निम्नलिखित हैं–

(i) वाहन धीमी गति से सुरक्षित रूप से चलाना।

(ii) यात्रा पर जाने से पूर्व वाहन की भली प्रकार जाँच करना।

(iii) ओवर टेकिंग से बचना।

(iv) यातायात के नियमों का कठोरता से पालन करना।

4. सड़क दुर्घटना होने के लिए उत्तरदायी चार कारण लिखिए।

उ०– सड़क दुर्घटना होने के लिए उत्तरदायी चार कारण निमनलिखित हैं–

(i) बहुत तेजी से वाहन चलाना।

(ii) नशे में वाहन चलाना।

(iii) चालक का ध्यान बँटाने वाली गतिविधियाँ होना।

(iv) मोबाइल पर बातें करते हुए वाहन चलाना।

5. सड़क सुरक्षा में अपनी भूमिका पर प्रकाश डालिए।

उ०– **सड़क सुरक्षा में हमारी भूमिका–** सड़कें राष्ट्र की धरोहर, यातायात का सुलभ साधन और आर्थिक विकास की स्रोत हैं, अत: इन्हें सुरक्षित बनाए रखना प्रत्येक नागरिक और सरकार की प्राथमिकता है। सड़क सुरक्षा के क्षेत्र में हम निम्नलिखित भूमिका निभा सकते हैं–

(i) बच्चों को वाहन चलाने से रोकें।
(ii) 18 वर्ष की आयु पूरी होने तथा चालक लाइसेंस प्राप्त करने पर ही वाहन चलाएँ।
(iii) विद्यालय जाते समय सड़क पर एक के पीछे एक लाइन लगाकर चलें तथा सावधानीपूर्वक सड़क पार करें।
(iv) सड़क पर यात्रा करते समय आगे और पीछे से आने वाले वाहनों पर दृष्टि रखें।
(v) रात्रि में साइकिल यात्रा करने से बचें।
(vi) सड़क पर घूमने या जॉगिंग करने से बचें।
(vii) सड़क पार करने में जेबरा क्रॉसिंग का प्रयोग करें।
(viii) ओवर टेकिंग कदापि न करें।
(ix) सड़क सुरक्षा के नियमों का कठोरता से पालन करें।
(x) दुर्घटना हो जाने पर तुरंत बचाव कार्य में जुटकर अपना सहयोग दें।
(xi) सड़क पर मारपीट, झगड़ा आदि न करें।
(xii) सड़क पर ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न न होने दें, जिससे जाम लग जाए।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. सड़क यातायात क्या है? इसका महत्व स्पष्ट कीजिए।

उ०– **सड़क यातायात–** सड़क यातायात परिवहन का वह साधन है, जो यात्रियों व सामान को सड़क मार्ग से एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने में सहायक है। कार, स्कूटर, ट्रक, ट्रैक्टर, बस आदि द्वारा सड़क यातयात संपन्न होता है।

(i) यातायात का सुगम साधन– सड़कें यातायात का सुगम साधन हैं। गाँव, कस्बे, नगर, महानगर, वन, पर्वत, पठार, मरुस्थल सभी सड़क यातायात सुगमता से उपयोग कर लेते हैं। सड़कों का उपयोग पैदल यात्री, साइकिल सवार तथा गाड़ीवान सभी कर लेते हैं। सड़कें घर को गाँव से, गाँव को नगर से तथा नगर को महानगरों से जोड़ती हैं।

(ii) औद्योगीकरण में सहयोगी– सड़क यातायात ट्रकों के द्वारा कच्चा माल कारखानों तक तथा तैयार माल खपत के केंद्रों तक पहुँचाकर उद्योगों की स्थापना और विकास में सहायक बनता है। मैदानी क्षेत्रों में जहाँ सड़कों का जाल बिछा हुआ है, उद्योग धंधों की स्थापना में बहुत सहयोग मिला है।

(iii) कृषि विकास में सहायक– सड़कें खेतों को मंडियों तथा वितरण केंद्रों से जोड़कर कृषि उपजों के विपणन में सहयोगी बनती हैं। सड़क यातायात नगरों, मंडियों और कारखानों से कृषि यंत्र, उन्नत बीज, उर्वरक तथा कीटनाशक खेतों तक पहुँचाकर कृषि विकास में सहायक बनता है तथा हरित क्रांति कार्यक्रम को सफल बनाता है।

(iv) देशी तथा विदेशी व्यापार का विस्तार– सड़क यातायात तैयार माल तथा कृषि उपज को मंडियों, औद्योगिक केंद्रों, महानगरों तथा बंदरगाहों तक पहुँचाकर देशी तथा विदेशी व्यापार के विस्तार में सहायक बनकर राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाता है।

(v) खनिजों के शोषण में सहायक– सड़क परिवहन महत्वपूर्ण खनिज-उत्पादक क्षेत्रों की खानों से अयस्क कारखानों तक पहुँचाकर राष्ट्र के आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त करता है

(vi) राष्ट्रीय सुरक्षा में सहायक– सड़क यातायात के माध्यम से आवश्यक युद्ध सामग्री छावनी क्षेत्रों तक तथा छावनियों से सैनिकों को युद्ध स्थल तक पहुँचाकर राष्ट्र की सुरक्षा में अभूतपूर्व योगदान देता है। राष्ट्र की आंतरिक तथा बाह्य सुरक्षा सड़क यातायात पर निर्भर है।

(vii) आपदाओं के प्रबंधन में योगदान– सड़क यातायात आपदाओं के समय सुरक्षा दल, राहत सामग्री, दवाइयाँ तथा खाद्य-सामग्री प्रभावित क्षेत्र तक पहुँचाकर आपदा प्रबंधन में सक्रिय भागीदारी निभाता है।

(viii) क्षेत्रीय नियोजन में सहायक– सड़क यातायात, पर्वत, पठार, मरुस्थल तथा वन क्षेत्रों में अपनी सेवाएँ सुलभ कराकर क्षेत्रीय नियोजन में सहायक होता है।

(ix) प्रशासन कार्य तथा संचार-तंत्र में सहयोग– सड़क यातायात प्रशासनिक अधिकारियों को यत्रतत्र पहुँचाकर तथा समाचार-पत्र और पत्रिकाओं का वितरण करके प्रशासन तथा संचार-तंत्र को सफल बनाता है।

(x) पर्यटन का विकास– सड़क यातायात पर्यटकों को पर्वतीय क्षेत्रों, रमणीक स्थलों तथा प्राकृतिक दृश्यावली के क्षेत्रों में पहुँचाकर, होटल तथा रेस्टोरेंट कारोबार को पनपाकर पर्यटन का विकास करने में सहभागिता निभाता है।

(xi) रोजगार का स्रोत– सड़क परिवहन, ड्राइवरों तथा बस संचालित करने वालों एवं कार किराए पर देने वालों को रोजगार के अवसर जुटाकर प्रतिव्यक्ति आय और राष्ट्रीय आय में वृद्धि करता है।

2. सड़क सुरक्षा क्या है? इसे बाधित करने वाले कारणों की विवेचना कीजिए।

उ०– **सड़क सुरक्षा का अर्थ–** बढ़ते सड़क यातायात के वाहनों की भीड़ और कम पड़ती सड़कों ने सड़क यातायात के समक्ष जो

सबसे गंभीर समस्या उत्पन्न की है, उसे 'सड़क सुरक्षा' कहा जाता है। भारत में अब सड़क सुरक्षा एक बहस का मुद्दा बन गया है। वर्तमान में सड़कों पर सुरक्षा की धज्जियाँ उड़ाकर हजारों लोगों के लहू से सड़कों को रँगा जाना आम बात हो गई है। प्रश्न यह उठता है कि सड़क सुरक्षा है क्या? ''सड़क परिवहन की अवधि में अपने आप को सुरक्षित बनाए रखना तथा दूसरों की सुरक्षा का ध्यान रखते हुए अपने लक्ष्य तक पहुँच जाना ही सड़क सुरक्षा है।'' सड़क सुरक्षा की अवधारणा परिवार, समाज और राष्ट्र की सुरक्षा के प्रति एक महत्वपूर्ण कदम है। प्राचीन कहावत है, ''धीरे चलिए, सुरक्षित रहिए। घर पर कोई आपकी प्रतीक्षा कर रहा है।'' सड़क यातायात के समय सड़क सुरक्षा के नियमों का अनुपालन करते हुए सुखद यात्रा सम्पन्न करना ही सड़क सुरक्षा है। दूसरे शब्दों में, सड़क यातायात के समय वाहनों के टकराव को रोककर स्वयं के जीवन की रक्षा करते हुए दूसरों को सुरक्षित यात्रा करने में सहभागी बनना ही सड़क सुरक्षा का मूलमंत्र है। सड़क सुरक्षा नियमों तथा ट्रेफिक सिग्नलों को ध्यान में रखकर सड़क परिवहन में सावधान रहना और सुरक्षित चलना ही सड़क सुरक्षा है। विकास के साथ-साथ संस्कृति का विकास कर निरापद सड़कों का उपयोग करना ही सड़क सुरक्षा है।

कहावत है, ''सावधानी हटी और दुर्घटना घटी।''

सड़क सुरक्षा के मार्ग की बाधाएँ– सड़क सुरक्षा के मार्ग में निम्नलिखित बाधाएँ उत्पन्न होती हैं—

(i) सड़क दुर्घटनाएँ– सड़क सुरक्षा के लिए सर्वाधिक उत्तरदायी कारण सड़क दुर्घटनाएँ हैं। सर्वेक्षण के अनुसार भारत में प्रत्येक 4 मिनट पर सड़क दुर्घटना में 1 व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है। सड़क दुर्घटनाओं के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं—

(क) बहुत तेज गति से वाहन चलाना।
(ख) नशे में वाहन चलाना।
(ग) चालक का ध्यान बँटाने वाली गतिविधियाँ होना।
(घ) मोबाइल पर बातें करते हुए वाहन चलाना।
(ङ) सीट बेल्ट, हेलमेट आदि सुरक्षा के उपायों की अनदेखी करना।
(च) ओवर टेकिंग करना।
(छ) चालक का प्रशिक्षित न होना।
(ज) सड़क पर अचानक जंगली पशु आ जाना।
(झ) मौसम का बिगड़ जाना, आँधी, तूफान, कोहरा तथा हिमपात आरंभ हो जाना।
(ञ) सड़क की दशा खराब होना, उसमें गड्ढे आदि होना।

(ii) यातायात के नियमों का पालन न करना– पैदल यात्रियों और वाहन चालकों द्वारा यातायात के नियमों की अनदेखी करना भी सड़क सुरक्षा के मार्ग में बाधा है। यातायात के नियमों का अनुपालन न करने से सड़क सुरक्षा नष्ट हो जाती है।

(iii) वाहन का त्रुटिपूर्ण होना– वाहन का टायर फट जाना, ब्रेक फेल हो जाना, हेडलाइटों का न जलना तथा अधिक सामान लादना या अधिक सवारियाँ बैठाना भी सड़क सुरक्षा में सेंध लगाने के सक्षम कारण हैं।

3. सड़क सुरक्षा बनाए रखने के उपाय सुझाइए।

उ०– **सड़क सुरक्षा बनाए रखने के उपाय–** सड़क सुरक्षा बनाए रखने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते हैं—

(i) वाहन धीमी गति से सुरक्षित रूप से चलाना।
(ii) यात्रा पर जाने से पूर्व वाहन की भली प्रकार जाँच करना।
(iii) ओवर टेकिंग से बचना।
(iv) ड्राइविंग लाइसेंस प्रशिक्षित चालकों को ही देना।
(v) यातायात के नियमों का कठोरता से पालन करना।
(vi) पैदल यात्रियों का पैदल पथ पर चलना तथा सड़क पार करने के लिए जेबरा क्रॉसिंग का उपयोग करना।
(vii) बच्चों को सड़कों पर अकेला नहीं छोड़ना।
(viii) बाइक, स्कूटर तथा साईकिल पर यात्रा करते समय स्टंटबाजी न करना।
(ix) यात्रा करते समय गाने न सुनना।
(x) वाहन चलाते समय मोबाइल पर बातें नहीं करना।
(xi) साईकिल पर यात्रा करते समय सावधान रहते हुए साईकिल-मार्ग का उपयोग करना।
(xii) स्कूल बस में स्कूल जाते समय अथवा स्कूल से घर आते समय अपनी सीट पर शांत बैठकर यात्रा करना।
(xiii) चलते वाहन से न तो बाहर झाँकना और न शरीर का कोई अंग बाहर निकालना।
(xiv) सदैव प्राधिकृत स्थलों पर ही उचित ढंग से वाहन को पार्क करना।

(xv) वाहन का रख-रखाव उचित ढंग से करना।

(xvi) नशा करके वाहन न चलाना।

4. सड़क सुरक्षा में 'बच्चों की भूमिका' पर प्रकाश डालिए।

उ०– **बच्चे और सड़क सुरक्षा–** सड़कें राष्ट्र की धरोहर हैं, जबकि बच्चे राष्ट्र का भविष्य। अत: प्रत्येक समाज और राष्ट्र चाहता है कि दोनों सुरक्षित रहें। अत: बच्चों को सड़क सुरक्षा के महत्व को समझ लेना आवश्यक हो जाता है—

(i) बच्चे नटखट और शैतान होते हैं, अत: उनका सड़क पर उत्पात मचाना उनके स्वयं तथा सड़क सुरक्षा के लिए घातक हो सकता है।

(ii) बच्चे कभी-कभी बिना सावधानी बरते दौड़कर सड़क पार करने लग जाते हैं, जिससे वाहनों की चपेट में आ जाते हैं।

(iii) बच्चे गली से अचानक मुख्य सड़क पर आकर वाहन की चपेट में आ जाते हैं।

(iv) सड़क के बीच में पहुँचकर बच्चे हड़बड़ा जाते हैं और दुर्घटना का शिकार बन जाते हैं।

बच्चों के लिए सड़क सुरक्षा के नियम– बच्चों को अपनी सुरक्षा के साथ-साथ सड़क सुरक्षा को बनाए रखने के लिए निम्नलिखित नियमों का पालन करना चाहिए—

(i) बच्चों को सड़क पार करते समय पहले बाएँ, फिर दाएँ तथा फिर बाएँ देखकर सड़क पार करनी चाहिए।

(ii) बच्चों को बड़ों का हाथ पकड़कर ही सड़क पार करनी चाहिए।

(iii) सड़क पर दौड़ लगाना, खेलना या मस्ती करना स्वयं तथा सड़क सुरक्षा दोनों के लिए घातक है।

(iv) सड़क पर पैदल यात्रा करते समय बच्चों को फुटपाथ का प्रयोग करना चाहिए।

(v) चौराहे पर सड़क पार करने के लिए यातायात की बत्तियों (लाल बत्ती—रुको, पीली बत्ती—तैयार हो जाओ और हरी बत्ती— आगे बढ़ जाओ) से सीख लेनी चाहिए।

(vi) साईकिल चलाते समय सड़क के एक ओर चलना चाहिए।

(vii) यातायात के नियमों का ठीक से पालन करना चाहिए।

5. सड़क परिवहन एवं सड़क सुरक्षा अधिनियम 2014 के प्रावधानों का वर्णन कीजिए।

उ०– **सड़क परिवहन एवं सड़क सुरक्षा विधेयक 2014 –** केंद्र सरकार सड़क यातायात के विकास के साथ-साथ सड़क यातायात की सुरक्षा बनाए रखने के प्रति भी वचनबद्ध है। इसीलिए केंद्र सरकार ने सड़क परिवहन एवं सड़क सुरक्षा विधेयक 2014 पारित किया। इस विधेयक के मुख्य प्रावधान निम्नवत् हैं—

(i) सड़क यातायात का विकास करना और सड़क दुर्घटनाओं पर लगाम लगाकर सड़कों को सुरक्षित बनाना।

(ii) 'मेक इन इंडिया' मिशन के अंतर्गत सुरक्षित, त्वरित और अल्पव्यय से सड़क यातायात का चरम विकास करना।

(iii) सड़क परिवहन के क्षेत्र में गुणवत्ता लाकर प्रतिवर्ष 2 लाख लोगों को सड़क दुर्घटनाओं से सुरक्षित रखना।

(iv) सड़क यातायात के सुरक्षा मानकों को ध्यान में रखकर मोटर वाहन नियमन एवं सड़क सुरक्षा प्राधिकरण का गठन करना।

(v) राष्ट्रीय सड़क सुरक्षा यातायात, प्रबंधन को लागू कराना।

(vi) सड़क सुरक्षा को सुनिश्चित करने की दृष्टि से कठोर कानून बनाने का प्रावधान करना।

(vii) ड्राइविंग लाइसेंस देने तथा बीमा प्रणाली को बायोमैट्रिक सिस्टम से जोड़ना तथा वाहन स्थानांतरण ऑनलाइन व्यवस्था से जोड़ना।

(viii) सड़क दुर्घटना हो जाने पर घायलों को एक घंटे की अवधि में चिकित्सा सुविधाएँ उपलब्ध कराना।

(ix) मोटर एक्सीडेंट फंड की स्थापना करके प्रत्येक व्यक्ति को अनिवार्य बीमा योजना का लाभ देना।

(x) यातायात के नियमों का उल्लंघन करने वालों के लिए निम्नलिखित कठोर दण्डों का प्रावधान करना—

(क) लापरवाही से वाहन चलाने पर लाइसेंस रद्द करना।

(ख) खराब वाहन की स्थिति पर वाहन स्वामी पर जुर्माना करना।

(ग) नशे की हालत में वाहन चलाने पर प्रथम बार 25,000 रुपए दंड या तीन माह की जेल, द्वितीय बार पकड़े जाने पर 50,000 रुपए जुर्माना या एक वर्ष की जेल तथा लाइसेंस रद्द करने का प्रावधान होना।

(घ) चालक द्वारा सीट बैल्ट न बाँधने पर 5,000 रुपए जुर्माना लगाना।

(ङ) चालक की लापरवाही से किसी की मौत हो जाने पर 3 लाख रुपए जुर्माना तथा 7 साल की जेल की व्यवस्था।

(च) असुरक्षित वाहन रखने पर 1 लाख रुपए जुर्माना तथा 6 माह की जेल की व्यवस्था।

(छ) तीन बार ट्रैफिक सिग्नल का उल्लंघन करने पर 15,000 रुपए जुर्माना तथा चालक का ड्राइविंग लाइसेंस रद्द करना।

(झ) स्कूल बस चलाने वाला चालक नशे की दशा में बस चलाता पकड़ा गया तो उस पर 50,000 रुपए जुर्माना और तीन वर्ष के लिए जेल की सजा।

(ज) सड़क सुरक्षा नियमों की अवहेलना करने वाले 18 से 25 वर्ष के चालकों का ड्राइविंग लाइसेंस सदैव के लिए रद्द करने का प्रावधान।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

अनुभाग– 3 : पर्यावरणीय अध्ययन

इकाई-1 (क) : भारत का भौतिक पर्यावरण

32 भौतिक स्वरूप– स्थिति तथा विस्तार, उच्चावच एवं जल प्रवाह

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 274, 275 व 276 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 276, 277 व 278 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. भारत को उपमहाद्वीप क्यों कहा जाता है?

उ०– अपनी केंद्रीय स्थिति के कारण भारत प्राचीन काल से एक सुस्पष्ट भौगोलिक इकाई बना रहा है। आकार की विशालता ने इसे विशिष्ट भौतिक विविधताएँ प्रदान की हैं। पड़ोसी देशों की भौगोलिक स्थिति, जलवायु, धरातलीय संरचना, सांस्कृतिक लक्ष्णों तथा जनसंख्या की विशेषताओं में विभिन्नताएँ एवं विविधताएँ होते हुए भी उनमें एकात्मकता दिखाई पड़ती है, इसलिए भारत को उपमहाद्वीप कहा जाता है।

2. भारत के दो प्राकृतिक प्रदेशों का नाम लिखिए और उनकी स्थिति स्पष्ट कीजिए।

उ०– भारत के दो प्राकृतिक प्रदेश और उनकी स्थिति निम्नलिखित है–

(i) **हिमालय का पर्वतीय प्रदेश–** भारत के उत्तर में हिमालय पर्वत-श्रृंखला चाप के आकार में पश्चिम से पूर्व 2500 किमी० तथा उत्तर से दक्षिण 150 से 400 किमी० तक विस्तृत है। वर्ष भर बर्फ से ढ़का रहने वाला विश्व का सर्वोच्च पर्वत हिमालय भारत और तिब्बत देश के मध्य में स्थित है। हिमालय के पर्वतीय प्रदेश का क्षेत्रफल 5 लाख वर्ग किमी० है।

(ii) **उत्तर का विशाल मैदान–** हिमालय पर्वत का वरदान और भारत के हृदय के नाम से प्रसिद्ध उत्तर का विशाल मैदान हिमालय पर्वत के दक्षिण और दकन के पठार के शीघ्र तक स्थित है। इसका विस्तार पूर्व में असम और पश्चिम में पाकिस्तान की सीमा तक पाया जाता है। यह मैदान नवीन जलोढ़ मिट्टी से बना होने के कारण जलोढ़ मैदान के नाम से भी जाना जाता है। यह मैदान अत्यधिक उपजाऊ है। इसी कारण यहाँ जनसंख्या घनत्व अधिक है।

3. भारत के उत्तरी मैदान की स्थिति तथा विस्तार बताइए।

उ०– उत्तर के लिए लघुउत्तरीय प्रश्न संख्या- 2 के उत्तर में 'उत्तर का विशाल मैदान' का अवलोकन कीजिए।

4. गंगा नदी की चार सहायक नदियों का विवरण दीजिए।

उ०– गंगा नदी की चार सहायक नदियाँ– गोमती, घाघरा, गण्डक तथा सोन हैं।

5. हिमालय पर्वत से होने वाले चार लाभ लिखिए।

उ०– **हिमालय पर्वत से होने वाले चार लाभ निम्नलिखित हैं–**

(i) हिमालय भारत की उत्तरी अंतर्राष्ट्रीय सीमा पर अभेदम् दीवार के रूप में सजग प्रहरी बन कर खड़ा हुआ।

(ii) भारत की धरातलीय रचना में हिमालय पर्वत ने विशेष योगदान दिया है। भारत का हृदय कहलाने वाला उत्तर का विशाल

मैदान हिमालय की नदियों के निक्षेप से बना है।

(iii) हिमालय पर्वत के हिमनद़ सिंधु गंगा तथा ब्रह्मपुत्र नदियों के उद्गम स्रोत हैं जो अपनी विरल और शीतल जल से बिजली, सिंचाई परिवहन तथा पेयजल सुलभ कराकर भारत में जीवन के अंकुर उपजाती रहती हैं।

(iv) हिमालय प्राकृतिक वनस्पति का अतुल भंडार होने के कारण उपयोगी काष्ठ, औषधियों फलों तथा वन्य जंतुओं के रूप में अनेक उपहार देता है।

6. उत्तर के विशाल मैदान की जल प्रवाह प्रणाली का वर्णन कीजिए।

उ०– उत्तर के विशाल मैदान की सहानीरा नदियों का उद्गम स्थल हिमालय के हिमनद हैं। हिमालय के पश्चिम क्षेत्र में सिंधु तथा उसकी सहायक नदियाँ पूर्वोत्तर से निकलकर पश्चिम-दक्षिण को बहती हुई अरब सागर में गिर जाती हैं। हिमालय के मध्यवर्ती क्षेत्र के हिमनदों से गंगा तथा उसकी सहायक नदियाँ निकलकर दक्षिण-पूर्व को बहती हुई बंगाल की खाड़ी में गिर जाती हैं। उत्तर का विशाल मैदान गंगा नदी का वरदान है। पूर्वी भाग में ब्रह्मपुत्र और उसकी सहायक नदियाँ पश्चिम-दक्षिण की ओर बहकर बंगाल की खाड़ी में गिर जाती हैं। उत्तर के विशाल मैदान की जलप्रवाह प्रणाली की ये समस्त नदियाँ जल विद्युत, निर्माण, सिंचाई, नौका चालन तथा पेयजल के रूप में उत्तरी भारत के लिए प्राकृतिक वरदान बनकर प्रवाहित होती हैं। वर्षा ऋतु में इनमें आने वाली बाढ़ें विनाश का कारण बनतीं हैं।

7. दक्षिण पठारी भाग की जल प्रवाह प्रणाली का वर्णन कीजिए।

उ०– दक्षिण के पठार का प्रवाह तंत्र दो भागों में बँटा हुआ है। पूर्वी भाग का प्रवाह तंत्र उन नदियों के योग से बनता है जो मध्यवर्ती पठार से निकलकर बंगाल की खाड़ी में गिर जाती हैं। इनमें महानदी, दामोदर, गोदावरी, कृष्णा तथा कावेरी नदियाँ आती हैं। पश्चिमी क्षेत्र का प्रवाह तंत्र उन नदियों के योग से बना है जो मध्य के पर्वतों से निकलकर पश्चिम में अरब सागर में गिर जाती है। इनमें नर्मदा, तापी, लूनी तथा साबरमती नदियाँ प्रमुख है।

8. भारत के उत्तरी मैदान का महत्व स्पष्ट कीजिए।

उ०– उत्तरी मैदान का महत्व– श्रीकृष्ण, राम, महावीर और गौतम की भूमि के रूप में उत्तर का विशाल मैदान अपने आर्थिक महत्व के कारण भारत का भाग्यविधाता बना रहा है। इसका महत्व निम्नवत् है–

(i) उत्तर का विशाल मैदान उपजाऊ जलोढ़ मृदा से बना कृषि व्यवसाय का आधार होने के कारण महत्वपूर्ण है। यह भारतीय कृषि उपजों की प्रचुरता के कारण भारत का अन्न भंडार बन गया है।

(ii) उत्तरी भारत की सदावाहिनी नदियाँ तथा नियतवाही नहरें सिंचाई व्यवस्था का जाल बनाकर कृषि विकास में वरदान सिद्ध हुई हैं।

(iii) उत्तरी भारत में रेलमार्गों और सड़कों का जाल बिछा हुआ है जिससे यहाँ कृषि, उद्योग, वाणिज्य तथा परिवहन का खूब विकास हो गया है।

(iv) यह मैदानी क्षेत्र, कच्चे माल, ऊर्जा, परिवहन, संचार तथा सुलभ श्रम के कारण चीनी उद्योग, सूती वस्त्र उद्योग तथा जूट उद्योग का केंद्र बनकर उभरा है।

(v) उत्तम जलवायु, खाद्यान्न आपूर्ति, उद्योग, परिवहन, संचार तथा रोजगार के अवसरों ने उत्तरी मैदान को जनसंख्या के बसाव का आकर्षण केंद्र बना दिया है। भारत की 40% जनसंख्या का आश्रय स्थल यही मैदान बना हुआ है।

(vi) उत्तर का विशाल मैदान प्राचीनकाल से ही सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक गतिविधियों का केंद्र रहा है।

भारत की प्राचीन सभ्यता इसी मैदान से विकसित हुई है तथा इसने देश के आर्थिक और सांस्कृतिक विकास में अभूतपूर्व योगदान दिया है।

9. भारत के पश्चिमी तटीय मैदान की स्थिति तथा विस्तार का वर्णन कीजिए।

उ०– गुजरात प्रदेश की खंभात की खाड़ी से लेकर कन्याकुमारी तक, अरबसागर और पश्चिमी घाट के मध्य जो उपजाऊ और समतल पट्टी पाई जाती है, पश्चिमी तटीय मैदान के नाम से जानी जाती है। यह मैदान उपजाऊ मिट्टी से युक्त तथा उत्तम जलवायु वाला क्षेत्र होने के कारण रबड़, नारियल, केला, गरम मसाले, चावल तथा तंबाकू उत्पादन के लिए प्रसिद्ध हो गया है। पश्चिमी तटीय मैदान का उत्तरी भाग कोंकण तट तथा दक्षिणी तट मालाबार तट कहलाता है। कपास का प्रसिद्ध उत्पादन

क्षेत्र होने के कारण यहाँ सूती वस्त्र उद्योग खूब उन्नति कर गया है। काँदला, मुंबई तथा कोच्चि इस क्षेत्र के प्रमुख बंदरगाह हैं।

10. भारत के पूर्वी तटीय मैदान का वर्णन कीजिए।

उ०– बंगाल की खाड़ी और पूर्वी घाट के मध्य संकरी पट्टी के रूप में पश्चिम बंगाल से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक जो समतल क्षेत्र फैला है, पूर्वी तटीय मैदान कहलाता है। यह मैदान बलुई तथा चीका मिट्टी के निक्षेपों से बना है। महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नदियों ने अपने डेल्टाओं से इसे उपजाऊ बना दिया है। इस मैदानी भाग में चावल, जूट, तंबाकू, केला तथा नारियल खूब उगाए जाते हैं। पूर्वी तटीय मैदान का उत्तरी भाग उत्कल तट तथा दक्षिणी भाग कोरोमंडल तट कहलाता है। पूर्वी तट के सागरीय भाग में कोलकाता, पारादीप, विशाखापट्टनम, तथा चेन्नई बंदरगाह स्थित हैं। यह तट मछली उद्योग तथा नारियल उद्योग के लिए प्रसिद्ध है।

11. दक्षिण के पठार की दो प्रमुख विशेषताएँ बताइए।

उ०– दक्षिण के पठार की दो प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) प्रकृति ने दक्षिण के पठार को पर्याप्त खनिज संसाधन प्रदान किए हैं। इस पठार की अग्नेय शैलों ने लोह अयस्क, कोयला, सोना, ताँबा, अभ्रक, मैगनीज तथा बाक्साइड आदि खनिजों को जन्म देकर इसे भारत का खनिज भंडार बना दिया है।

(ii) दक्षिण का पठारी क्षेत्र साल, सागौन, चंदन आदि उपयोगी काष्ठ वृक्षों से घिरा है। साथ ही यहाँ पर तेंदूपत्ता, हरड़, बहेड़ा, आँवला तथा महुआ के उपयोगी वृक्ष बहुतायत में उगकर लोगों के कल्याण में योगदान दे रहे हैं।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. भारत को प्रमुख भू-आकृतिक (प्राकृतिक) प्रदेशों में विभाजित कीजिए। संक्षेप में इनका विवरण लिखिए।

उ०– उच्चावच की दृष्टि से भारत को निम्नलिखित भूआकृतिक प्रदेशों (प्राकृतिक प्रदेशों) में बाँटा गया है–

(i) हिमालय का पर्वतीय प्रदेश
(ii) उत्तर का विशाल मैदानी प्रदेश
(iii) दक्षिण का पठारी प्रदेश
(iv) थार का मरुस्थल
(v) समुद्रतटीय मैदान एवं द्वीप समूह – (क) पूर्वी तटीय मैदान, (ख) पश्चिमी तटीय मैदान
(vi) दीपमालाएँ

(i) हिमालय का पर्वतीय प्रदेश– भारत के उत्तर में पर्वतराज हिमालय स्थित है। सालभर हिमकणिकाओं से लदा रहने वाला संसार का सर्वोच्च पर्वत हिमालय भारत और तिब्बत देश के बीच में एक भू-अवरोधक की भाँति विराजमान है। यह पर्वतमाला एक चाप के रूप में पश्चिम से पूर्व 2500 किमी० तथा उत्तर से दक्षिण 150 से 400 किमी० तक विस्तृत है। हिमालय के पर्वतीय प्रदेश का क्षेत्रफल 5 लाख वर्ग किमी० है। भारत की धरातलीय बनावट से लेकर जलवायु, आर्थिक विकास तथा सांस्कृतिक परिवेश के निर्माण में हिमालय पर्वत ने भारत के लिए एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारत का हृदय कहे जाने वाला उत्तर का विशाल मैदान हिमालय की नदियों के निपेक्ष से बना है।

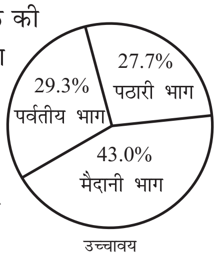

उच्चावय

(ii) उत्तर का विशाल मैदानी प्रदेश– हिमालय पर्वत का वरदान तथा भारत के हृदय के नाम से प्रसिद्ध उत्तर का विशाल मैदान विश्व के समतल और उपजाऊ मैदानों में गिना जाता है। उत्तरी मैदान हिमालय पर्वत के दक्षिण और दकन के पठार के शीर्ष तक स्थित है। इसका विस्तार पूर्व में असम तक तथा पश्चिम में पाकिस्तान की सीमा तक पाया जाता है। भारत के मध्य में स्थित होने के कारण इस मैदान को भारत भूमि का हृदय कहा जाता है। इसकी धड़कन से ही समूचा भारत जीवन पाता है। इसे जलोढ़ मैदान के नाम से जाना जाता है जो नवीन जलोढ़ मिट्टी से बना है और अत्यधिक उपजाऊ है। इसी कारण यहाँ आबादी का घनत्व अधिक है। नदियों की उपजाऊ जलोढ़ मृदा से बना यह समतल तथा उपजाऊ मैदान भारत भूमि के 7.5 लाख वर्ग किमी० क्षेत्र पर फैला हुआ है। पूर्व से पश्चिम इसकी लंबाई 2414 किमी० तथा उत्तर से दक्षिण चौड़ाई 145 किमी० है।

श्रीराम, कृष्ण, महावीर और गौतम की भूमि के रूप में उत्तर का विशाल मैदान अपने आर्थिक महत्व के कारण भारत का भाग्य विधाता है।

(iii) दक्षिण का पठारी प्रदेश– उत्तर के विशाल मैदान के धुर दक्षिण में कठोर चट्टानों से बना जो त्रिभुजाकार पठार फैला है, उसे दक्षिण का पठारी प्रदेश कहा जाता है। (क) स्थिति– दक्षिण का पठारी प्रदेश उत्तर के विशाल मैदान के दक्षिण में तीन ओर से सागर से घिरा हुआ है। इसके पूर्व में पूर्वी तटीय मैदान तथा पश्चिम में पश्चिमी तटीय मैदान स्थित हैं। (ख) धरातलीय रचना– दक्षिण का पठारी प्रदेश प्राचीन कठोर आग्नेय चट्टानों से बना है। अपरदन के कारकों ने काट छाँट-कर इस प्रदेश को अत्यंत ऊबड़–खाबड़ बना दिया है। इसमें कहीं समतल मैदान, कहीं चोटियाँ तो कहीं-कहीं गहरी घाटियाँ पाई जाती हैं। इस पठारी प्रदेश के उत्तरी पश्चिमी भाग में उपजाऊ काली मिट्टी का भारी जमाव पाया जाता है। धरातलीय रचना की दृष्टि से इसे निम्न उपविभागों में बाँटा गया है–

(क) दक्कन का पठार– मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और कर्नाटक राज्यों में फैला पठारी भू–भाग दक्कन का पठार कहलाता है। इसके उत्तरी-पश्चिमी भाग में विंध्याचल और सतपुड़ा पर्वत, मैकाल और महादेव पहाड़ियाँ हैं, जबकि पूर्व में पूर्वी घाट तथा पश्चिम में पश्चिमी घाट स्थित है। रवेदार चट्टानों से बना इस पठारी क्षेत्र का ढाल पश्चिम से पूर्व की ओर है।

यहाँ महाराष्ट्र में सह्याद्रि, कर्नाटक में नीलगिरि तथा अन्नामलाई की पहाड़ियाँ पाई जाती हैं। इसके पश्चिमी घाट में थालघाट, भोरघाट तथा पालघाट के दर्रे आवागमन की सुविधाएँ प्रदान करते हैं। इसके उत्तरी क्षेत्र में भीमा, गोदावरी, तुंगभद्रा और कृष्णा तथा दक्षिण में कावेरी नदियाँ बहती हैं। कृष्णा के उद्‌गम के निकट महाबलेश्वर नामक प्रसिद्ध पर्वतीय नगर स्थित है। तमिलनाडु में प्रसिद्ध पर्वतीय नगर उटकमंड (ऊटी) स्थित है।

(ख) मध्यवर्ती उच्च भूमि– मालवा का पठार इस भू-भाग में आता है। ग्रेनाइट चट्टानों से संपन्न यह पठारी भू–भाग सागर तल से लगभग 800 मीटर तक ऊँचा है। इसके उत्तर में चंबल तथा बेतवा नदियाँ अनेक गहरे खड्ड या गड्ढे बनाती हैं। इसका पूर्वी क्षेत्र बुंदेलखंड का पठार जबकि सोन नदी के पूर्व का भाग मालवा का पठार कहा जाता है। इस भाग में राजमहल तथा पारसनाथ की पहाड़ियाँ स्थित हैं। दामोदर नदी इस पठार के मध्य में एक भ्रंशघाटी में बहती है।

(iv) थार का मरुस्थल– राजस्थान के उत्तरी पश्चिमी क्षेत्र में शुष्क बलुई मिट्टी का जो क्षेत्र पाया जाता है, वह भारतीय मरुस्थल है जिसे थार का मरुस्थल भी कहते हैं। यह मरुस्थल क्षेत्र वर्षा न होने के कारण शुष्क और उष्ण क्षेत्र बन गया है। इस क्षेत्र में सर्वत्र रेत और बालू के टीले पाए जाते हैं। दिन में भयंकर धूल भरी गर्म आँधियाँ चलती हैं, जबकि रात में ठंड हो जाती है। इस क्षेत्र में नागफनी के वृक्ष या काँटेदार झाँड़ियाँ ही उगती हैं। कहीं–कहीं खजूर का उपयोगी वृक्ष भी उगता है। वर्षा के अभाव में इस क्षेत्र में सिंचाई की सुविधाएँ जुटाकर ज्वार-बाजरा उगाए जाते हैं। आर्थिक क्षेत्र में पिछड़ा यह भू-भाग विरल जनसंख्या वाला है। थार के मरुस्थल में साँभर तथा डिंडवाना की खारे जल से युक्त झीले हैं जिनके जल का उपयोग नमक बनाने में किया जाता है। परिवहन के साधनों के अभाव तथा संसाधनों की कमी के कारण यह क्षेत्र कृषि, उद्योग तथा व्यापारिक क्षेत्र में अत्यंत पिछड़ा हुआ है।

(v) समुद्र तटीय मैदान– भारत के पूर्व में बंगाल की खाड़ी तथा पश्चिम में अरब सागर है। कन्याकुमारी बंगाल की खाड़ी, हिंद महासागर और अरब सागर की त्रिवेणी है। भारत के पूर्वी तथा पश्चिमी तटों पर जो संकरी तथा समतल मैदानी पट्टियाँ पाई जाती हैं, उन्हें समुद्रतटीय मैदान कहकर पुकारा जाता है। ये मैदान निम्नलिखित हैं–

(क) पूर्वी तटीय मैदान– बंगाल की खाड़ी और पूर्वी घाट के मध्य संकरी पट्टी के रूप में पश्चिम बंगाल से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक जो समतल क्षेत्र फैला है, पूर्वी तटीय मैदान कहलाता है। यह मैदान बलुई तथा चीका मिट्टी के निक्षेपों से बना है। महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नदियों ने अपने डेल्टाओं से इसे उपजाऊ बना दिया है। इस मैदानी भाग में चावल, जूट, तंबाकू, केला तथा नारियल खूब उगाए जाते हैं। पूर्वी तटीय मैदान का उत्तरी भाग उत्कल तट तथा दक्षिणी भाग कोरोमंडल तट कहलाता है। पूर्वी तट के सागरीय भाग में कोलकाता, पारादीप, विशाखापट्टनम, तथा चेन्नई बंदरगाह स्थित हैं। यह तट मछली उद्योग तथा नारियल उद्योग के लिए प्रसिद्ध है।

(ख) पश्चिमी तटीय मैदान– गुजरात प्रदेश की खंभात की खाड़ी से लेकर कन्याकुमारी तक, अरबसागर और पश्चिमी घाट के मध्य जो उपजाऊ और समतल पट्टी पाई जाती है, पश्चिमी तटीय मैदान के नाम से जानी

जाती है। यह मैदान उपजाऊ मिट्टी से युक्त तथा उत्तम जलवायु वाला क्षेत्र होने के कारण रबड़, नारियल, केला, गरम मसाले, चावल तथा तंबाकू उत्पादन के लिए प्रसिद्ध हो गया है। पश्चिमी तटीय मैदान का उत्तरी भाग कोंकण तट तथा दक्षिणी तट मालाबार तट कहलाता है। कपास का प्रसिद्ध उत्पादन क्षेत्र होने के कारण यहाँ सूती वस्त्र उद्योग खूब उन्नति कर गया है। काँदला, मुंबई तथा कोच्चि इस क्षेत्र के प्रमुख बंदरगाह हैं।

(vi) द्वीप मालाएँ– भारत की दो द्वीप मालाएँ भी हैं जो बंगाल की खाड़ी और अरब सागर में स्थित है। ये द्वीप ज्वालामुखी से निकले अवसादों से बने हैं। बंगाल की खाड़ी में अंडमान निकोबार द्वीप समूह हैं। इस क्षेत्र में 204 द्वीप हैं। यह द्वीप समूह भारत का केंद्र शासित प्रदेश है। इस द्वीप समूह की राजधानी पोर्टब्लेयर है। भारत की नौसैनिक सामरिक सुरक्षा की दृष्टि से इन द्वीपों का विशेष महत्व है। ये द्वीप समूह सदाबहार वर्षा वनों से संपन्न है। यहाँ के मैदानी क्षेत्रों में चावल, गन्ना, केला और नारियल उगाए जाते हैं।

अरब सागर में लक्षद्वीप समूह स्थित है। यह द्वीप समूह भारतीय तट से लगभग 250 किमी० दूर हैं। यह भी भारत का संघ शासित प्रदेश है, जिसकी राजधानी कवारत्ती है। इन द्वीपों के लोगों का मुख्य धंधा मछलियाँ पकड़ना तथा नारियल उगाना है। ये दोनों द्वीप समूह भारत संघ के ही अभिन्न अंग है।

2. हिमालय के पर्वतीय प्रदेश का विवरण निम्न शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए।

(क) स्थिति तथा विस्तार (ख) धरातलीय बनावट (ग) जलप्रवाह प्रणाली (घ) महत्व

उ०– हिमालय का पर्वतीय प्रदेश–

(i) स्थिति एवं विस्तार– भारत के उत्तर में पर्वतराज हिमालय स्थित है। सालभर हिमकणिकाओं से लदा रहने वाला संसार का सर्वोच्च पर्वत हिमालय भारत और तिब्बत देश के बीच में एक भू-अवरोधक की भाँति विराजमान है। यह पर्वतमाला एक चाप के रूप में पश्चिम से पूर्व 2500 किमी० तथा उत्तर से दक्षिण 150 से 400 किमी० तक विस्तृत है। हिमालय के पर्वतीय प्रदेश का क्षेत्रफल 5 लाख वर्ग किमी० है।

(ii) प्राकृतिक (धरातलीय) बनावट– विद्वानों का मत है कि हिमालय पर्वत की रचना आज से लगभग 5 करोड़ वर्ष पूर्व सागर तल में जमी तलछटों में आंतरिक बलों के प्रभाव से पड़ने वाले मोड़ों के फलस्वरूप हुई है। इसीलिए इसकी प्राकृतिक बनावट कठोर चट्टानों वाली अत्यंत ऊँची नीची है। इसकी गगनचुंबी और कठोर चट्टानों वाली पर्वत चोटियाँ सालभर बर्फ से ढकी रहती हैं, जबकि निचले ढ़ालों पर हरी घास तथा प्राकृतिक वनस्पति का आवरण पाया जाता है। निम्न भागों में चट्टानें बालू तथा कंकड़ पत्थर वाली हैं जो वर्षा में घुल कर बहती और फिसलती रहती हैं। हिमालय के पर्वतीय प्रदेश को अग्रलिखित तीन भागों में बाँटा गया है–

(क) महान (वृहद्) हिमालय– हिमालय पर्वत का सर्वोच्च उत्तरी भाग जो समुद्रतल से लगभग 6000 मीटर से भी अधिक ऊँचा है, हिमाद्री या महान हिमालय कहलाता है। यह पश्चिम में सिंधु नदी के मोड़ से पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदी के मोड़ तक विस्तृत है। यह उत्तर से आने वाली ठंडी हवाओं को रोकता है और मानसूनी हवाओं को रोककर भारत में वर्षा कराने में सहायक है। इसके संदर्भ में निम्न तथ्य जानने योग्य है।

(अ) पर्वत शिखर– (1) माउंट एवरेस्ट विश्व का सर्वोच्च पर्वत शिखर ऊँचाई 8848 मीटर, स्थिति नेपाल में। (2) गॉडविन ऑस्टिन (के–2) ऊँचाई 8611 मीटर, स्थिति पाक अधिकृत कश्मीर में (3) कंचनजंघा ऊँचाई, 8598 मीटर, स्थिति भारत में। अन्य मकालू, धौलागिरी, नंगापर्वत, नंदादेवी आदि।

(ब) दर्रे– शिपकीकला, जोजिला, नीति, नाथूला, जेलेपा तथा बोमडिला आदि प्रमुख हैं। जिनके संकरे रास्तों से तिब्बत के पठार तथा हिमालय पर्वत होकर भारत आया–जाया जाता है।

(ख) मध्य (लघु) हिमालय– महान हिमालय से निचला दक्षिणी भाग मध्य हिमालय कहलाता है। इस क्षेत्र की समुद्रतल से औसत ऊँचाई 2000 से 3500 मीटर तक है। इसे कश्मीर में पीरपंजाल तथा हिमाचल में धौलाधार कहा जाता है। इस क्षेत्र की आकर्षक प्राकृतिक सुषमा और सुहावनी जलवायु ने पर्वतीय नगरों को पर्यटन का केंद्र बना दिया है। डलहौजी, शिमला, मसूरी, नैनीताल तथा दार्जिलिंग आदि नगर पर्यटकों के आकर्षण के केंद्र बने रहते हैं। इस क्षेत्र में कश्मीर, काँगड़ा, कुल्लू तथा पोखरा की घाटियाँ सौंदर्य और प्राकृतिक दृश्यावली के कारण लोगों को अपनी ओर आकर्षित करती रहती हैं। यह क्षेत्र फल, सब्जी और चाय उगाने के लिए भी प्रसिद्ध है।

(ग) बाह्य (उप) हिमालय– हिमालय पर्वत का सबसे दक्षिणी भाग शिवालिक के नाम से प्रसिद्ध है। यह क्षेत्र

समुद्रतल से 600 मीटर से 1500 मीटर तक ऊँचा है। इस क्षेत्र में असमान ऊँची तथा नीची चोटियाँ पाई जाती हैं। यहाँ की पश्चिमी क्षेत्र की घाटियों को दून तथा पूर्व की घाटियों को द्वार कहा जाता है। इसका पूर्वी भाग नागा, लुशाई, गारो, खासी और जयंतिया की पहाड़ियों से घिरा है।

(iii) जल प्रवाह प्रणाली– उत्तरी भारत की सदानीरा नदियों के उद्‌गम स्थल हिमालय पर्वत के हिमनद ही हैं। इसके पश्चिमी क्षेत्र में सिंधु तथा उत्तर की सहायक नदियाँ पूर्वोत्तर से निकलकर पश्चिम–दक्षिण को बहती हुई अरब सागर में गिर जाती हैं। हिमालय पर्वत के मध्यवर्ती क्षेत्र के हिमनदों से गंगा और उसकी सहायक नदियाँ निकलकर दक्षिण पूर्व को बहती हुई बंगाल की खाड़ी में गिर जाती हैं। उत्तर का विशाल मैदान गंगानदी का वरदान ही है। पूर्वी भाग में ब्रह्मपुत्र और उसकी सहायक नदियाँ पश्चिम–दक्षिण की ओर बहकर बंगाल की खाड़ी में गिर जाती हैं। हिमालय पर्वत की जल प्रवाह प्रणाली से ये समस्त नदियाँ जलविद्युत निर्माण, सिंचाई, नौकाचालन तथा पेयजल के रूप में उत्तरी भारत के लिए प्राकृतिक वरदान बनकर प्रवाहित होती हैं। वर्षा ऋतु में इनमें आने वाली बाढ़ें विनाश का भी कारण बनती हैं।

महत्व– भारत की धरातलीय बनावट से लेकर जलवायु, आर्थिक विकास तथा सांस्कृतिक परिवेश के निर्माण में हिमालय पर्वत ने भारत के लिए बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हिमालय पर्वत पर निवास करने वाले देवताओं ने भारत को निम्न महत्त्वपूर्ण वरदानों से लाभान्वित किया है।

(i) हिमालय भारत की उत्तरी अंतर्राष्ट्रीय सीमा पर अभेदम् दीवार के रूप में सजग प्रहरी बन कर खड़ा हुआ।

(ii) भारत की धरातलीय रचना में हिमालय पर्वत ने विशेष योग दिया है। भारत का हृदय कहलाने वाला उत्तर का विशाल मैदान हिमालय की नदियों के निक्षेप से बना है।
भारत की जलवायु को वर्षा का जल सुलभ कराने में तथा साइबेरिया की ओर से बर्फीली हवाओं से बचाने में इसी देव भूमि का योगदान रहता है।

(iii) हिमालय पर्वत के हिमनढ़ सिंधु गंगा तथा ब्रह्मपुत्र नदियों के उद्‌गम स्रोत हैं जो अपनी विरल और शीतल जल से बिजली, सिंचाई परिवहन तथा पेयजल सुलभ कराकर भारत में जीवन के अंकुर उपजाती रहती हैं।

(iv) हिमालय प्राकृतिक वनस्पति का अतुल भंडार होने के कारण उपयोगी काष्ठ, औषधियों फलों तथा वन्य जंतुओं के रूप में अनेक उपहार देता है।

(v) हिमालय पर्वत के उपजाऊ ढाल, चाय, फल, चावल तथा अनेक फलों का उत्पादन भारत के आर्थिक विकास में सहयोगी बनते हैं।

(vi) हिमालय पर्वत में स्थित धरती का स्वर्ग कश्मीर घाटी, अन्य घाटियां, जलप्रपात तथा पर्वतीयनगर देश तथा विदेश के पर्यटकों को आकर्षित करते हैं।

(vii) हिमालय पर्वत की नदियों पर पाए जाने वाले प्राकृतिक जल प्रपात जलविद्युत उत्पादन करके भारत के औद्योगिकरण तथा आर्थिक विकास में भरपूर सहयोग देते हैं।

3. उत्तर के विशाल मैदान का वर्णन निम्न शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए।

(i) विस्तार व स्थिति (ii) उच्चावच (iii) जल प्रवाह प्रणाली (iv) महत्व

उ०– **उत्तर का विशाल मैदानी प्रदेश–** हिमालय पर्वत का वरदान तथा भारत के हृदय के नाम से प्रसिद्ध उत्तर का विशाल मैदान विश्व के समतल और उपजाऊ मैदानों में गिना जाता है।

(i) स्थिति– उत्तरी मैदान हिमालय पर्वत के दक्षिण और दकन के पठार के शीर्ष तक स्थित है। इसका विस्तार पूर्व में असम तक तथा पश्चिम में पाकिस्तान की सीमा तक पाया जाता है। भारत के मध्य में स्थित होने के कारण इस मैदान को भारत भूमि का हृदय कहा जाता है। इसकी धड़कन से ही समूचा भारत जीवन पाता है। इसे जलोढ़ मैदान के नाम से जाना जाता है जो नवीन जलोढ़ मिट्टी से बना है और अत्यधिक उपजाऊ है। इसी कारण यहाँ आबादी का घनत्व अधिक है।

(ii) विस्तार एवं प्राकृतिक बनावट– नदियों की उपजाऊ जलोढ़ मृदा से बना यह समतल तथा उपजाऊ मैदान भारत भूमि के 7.5 लाख वर्ग किमी० क्षेत्र पर फैला हुआ है। पूर्व से पश्चिम इसकी लंबाई 2414 किमी० तथा उत्तर से दक्षिण चौड़ाई 145 किमी० है। इस मैदान का विस्तार निम्न तीन क्षेत्रों में बँटा है–

(क) पश्चिमी मैदान– राजस्थान, पंजाब तथा हरियाणा राज्यों में फैला यह मैदानी भाग उत्तरी मैदान का पश्चिमी शुष्क भाग कहलाता है। यह 1.75 लाख वर्ग किमी० क्षेत्र में फैला हुआ। इस मैदानी क्षेत्र का निर्माण पंजाब की पाँचों नदियों तथा यमुना नदी के अवसादों के जमने के कारण हुआ है।

(ख) गंगा का मैदान– यह मैदानी भाग उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भाग से लेकर बिहार तक विस्तृत है। यह मध्यवर्ती मैदान भी कहलाता है। इसका निर्माण यमुना और गंगा की सहायक नदियों ने भारी जलोढ़ मिट्टी बिछाकर किया है। इस मैदान का पुरानी जलोढ़ मिट्टी का क्षेत्र बाँगर तथा प्रतिवर्ष नई जलोढ़ मिट्टी के जमाव वाला क्षेत्र खादर कहलाता है। खादर क्षेत्र में बाढ़ का जल प्रतिवर्ष नई काँप मिट्टी जमा करके उर्वरता में वृद्धि करता रहता है।

(ग) बह्मपुत्र का मैदान– बिहार, झारखंड, पश्चिमी बंगाल तथा असम तक विस्तृत यह मैदान पूर्वी मैदान के नाम से भी जाना जाता है। इसका निर्माण गंगा और ब्रह्मपुत्र नदियों ने काँप मिट्टी बिछाकर किया है।

(iii) जल प्रवाह प्रणाली– उत्तर के विशाल मैदान की जल प्रवाह प्रणाली का निर्माण हिमालय पर्वत से निकलने वाली वे समस्त नदियाँ करती हैं जिनका वर्णन हिमालय पर्वत की जलप्रवाह प्रणाली के रूप में किया जा चुका है।

(iv) उत्तर के विशाल मैदान का महत्व– श्रीकृष्ण, राम, महावीर और गौतम की भूमि के रूप में उत्तर का विशाल मैदान अपने आर्थिक महत्व के कारण भारत का भाग्य विधाता बना रहा है। इसका महत्व निम्नवत् है–

(क) उत्तर का विशाल मैदान उपजाऊ जलोढ़ मृदा से बना कृषि व्यवसाय का आधार होने के कारण महत्वपूर्ण है। यह भारतीय कृषि उपजों की प्रचुरता के कारण भारत का अन्न भंडार बन गया है।

(ख) उत्तरी भारत की सदावाहिनी नदियाँ तथा नियतवाही नहरें सिंचाई व्यवस्था का जाल बनाकर कृषि विकास में वरदान सिद्ध हुई हैं।

(ग) उत्तरी भारत में रेलमार्गों और सड़कों का जाल बिछा हुआ है जिससे यहाँ कृषि, उद्योग, वाणिज्य तथा परिवहन का खूब विकास हो गया है।

(घ) यह मैदानी क्षेत्र, कच्चे माल, ऊर्जा, परिवहन, संचार तथा सुलभ श्रम के कारण चीनी उद्योग, सूती वस्त्र उद्योग तथा जूट उद्योग का केंद्र बनकर उभरा है।

(ड) उत्तम जलवायु, खाद्यान्न आपूर्ति, उद्योग, परिवहन, संचार तथा रोजगार के अवसरों ने उत्तरी मैदान को जनसंख्या के बसाव का आकर्षण केंद्र बना दिया है। भारत की 40% जनसंख्या का आश्रय स्थल यही मैदान बना हुआ है।

(च) उत्तर का विशाल मैदान प्राचीनकाल से ही सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक गतिविधियों का केंद्र रहा है।

4. भारत के दक्षिण के पठारी भाग का वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए।

(i) स्थिति तथा विस्तार (ii) उच्चावच (iii) जल प्रवाह प्रणाली (iv) खनिज संपदा

उ०– **दक्षिण का पठारी प्रदेश–** उत्तर के विशाल मैदान के दक्षिण में कठोर चट्टानों से बना जो त्रिभुजाकार पठार फैला है, उसे दक्षिण का पठारी प्रदेश कहा जाता है।

(i) स्थिति एवं विस्तार– दक्षिण का पठारी प्रदेश उत्तर के विशाल मैदान के दक्षिण में तीन ओर से सागर से घिरा हुआ है। इसके पूर्व में पूर्वी तटीय मैदान तथा पश्चिम में पश्चिमी तटीय मैदान स्थित हैं। यह पहाड़ी प्रदेश 16 लाख वर्ग किमी० क्षेत्रफल में विस्तृत है। इस पठारी प्रदेश का विस्तार उत्तर में राजस्थान से लेकर दक्षिण में कुमारी अंतरीप तक 1700 किमी० की लंबाई तथा पश्चिम में गुजरात राज्य से लेकर पूर्व में पश्चिमी बंगाल तक 1400 किमी० की चौड़ाई में है। प्राकृतिक दृष्टिकोण से उसकी उत्तरी सीमा अरावली, कैमूर तथा राजमहल की पहाड़ियों द्वारा निर्धारित होतीं हैं।

(ii) उच्चावच या धरातलीय रचना– दक्षिण का पठारी प्रदेश प्राचीन कठोर आग्नेय चट्टानों से बना है। अपरदन के कारकों ने काट छाँट–कर इस प्रदेश को अत्यंत ऊबड़–खाबड़ बना दिया है। इसमें कहीं समतल मैदान, कहीं चोटियाँ तो कहीं–कहीं गहरी घाटियाँ पाई जाती हैं। इस पठारी प्रदेश के उत्तरी पश्चिमी भाग में उपजाऊ काली मिट्टी का भारी जमाव पाया जाता है। धरातलीय रचना की दृष्टि से इसे निम्न उपविभागों में बाँटा गया है–

(क) दक्कन का पठार– मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और कर्नाटक राज्यों में फैला पठारी भू–भाग दक्कन का पठार

कहलाता है। इसके उत्तरी–पश्चिमी भाग में विंध्याचल और सतपुड़ा पर्वत, मैकाल और महादेव पहाड़ियाँ हैं, जबकि पूर्व में पूर्वी घाट तथा पश्चिम में पश्चिमी घाट स्थित है। रवेदार चट्टानों से बना इस पठारी क्षेत्र का ढाल पश्चिम से पूर्व की ओर है।

यहाँ महाराष्ट्र में सह्याद्रि, कर्नाटक में नीलगिरि तथा अन्नामलाई की पहाड़ियाँ पाई जाती हैं। इसके पश्चिमी घाट में थालघाट, भोरघाट तथा पालघाट के दर्रे आवागमन की सुविधाएँ प्रदान करते हैं। इसके उत्तरी क्षेत्र में भीमा, गोदावरी, तुंगभद्रा और कृष्णा तथा दक्षिण में कावेरी नदियाँ बहती हैं। कृष्णा के उद्गम के निकट महाबलेश्वर नामक प्रसिद्ध पर्वतीय नगर स्थित है। तमिलनाडु में प्रसिद्ध पर्वतीय नगर उटकमंड (ऊटी) स्थित है।

(ख) मध्यवर्ती उच्च भूमि– मालवा का पठार इस भू–भाग में आता है। ग्रेनाइट चट्टानों से संपन्न यह पठारी भू–भाग सागर तल से लगभग 800 मीटर तक ऊँचा है। इसके उत्तर में चंबल तथा बेतवा नदियाँ अनेक गहरे खड्ड या गड्ढे बनाती हैं। इसका पूर्वी क्षेत्र बुंदेलखंड का पठार जबकि सोन नदी के पूर्व का भाग मालवा का पठार कहा जाता है। इस भाग में राजमहल तथा पारसनाथ की पहाड़ियाँ स्थित हैं। दामोदर नदी इस पठार के मध्य में एक भ्रंशघाटी में बहती है।

(ग) जल प्रवाह प्रणाली– दक्षिण के पठार का प्रवाह तंत्र दो भागों में बँटा हुआ है। पूर्वी भाग का प्रवाह तंत्र उन नदियों के योग से बनता है जो मध्यवर्ती पठार से निकलकर बंगाल की खाड़ी में गिर जाती हैं। इनमें महानदी, दामोदर, गोदावरी, कृष्णा तथा कावेरी नदियाँ आती हैं। पश्चिमी क्षेत्र का प्रवाह तंत्र उन नदियों के योग से बना है जो मध्य के पर्वतों से निकलकर पश्चिम में अरब सागर में गिर जाती है। इनमें नर्मदा, तापी, लूनी तथा साबरमती नदियाँ प्रमुख है।

(घ) खनिज संपदा– प्रकृति ने दक्षिण के पठार को पर्याप्त खनिज संसाधन प्रदान किए हैं। इस पठार की आग्नेय शैलों ने लौह अयस्क, कोयला, सोना, ताँबा, अभ्रक, मैंगनीज तथा बॉक्साइट आदि खनिजों को जन्म देकर इसे भारत का खनिज भंडार बना दिया है। ये खनिज पदार्थ दक्षिण भारत के राज्यों के साथ–साथ भारत के अन्य राज्यों के औद्योगिक विकास में सहायक बने हैं। इस क्षेत्र में पाए जाने वाले संगमरमर तथा चूना पत्थर ने भवन निर्माण के साथ–साथ उद्योगों को विकसित करने में भी सहयोग प्रदान किया है। दक्कन के पठार में स्थित ओडिशा, आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, झारखंड तथा तमिलनाडु खनिज भंडारों के कारण सर्वांगीण उन्नति कर गए हैं।

5. भारत के पूर्वी तथा पश्चिमी तटीय मैदानों का वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए।

(i) स्थिति तथा विस्तार **(ii) मुख्य फसलें व उद्योग**

उ०– **(i) पूर्वी तटीय मैदान–**

(क) स्थिति एवं विस्तार– बंगाल की खाड़ी एवं पूर्वी घाट के मध्य संकरी पट्टी के रूप में पश्चिमी बंगाल से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक तो समतल क्षेत्र फैला हुआ है, पूर्वी तटीय मैदान कहलाता है। उत्तर में स्वर्ण रेखा नदी से दक्षिण में कुमारी अंतरीय तक विस्तृत यह मैदान पश्चिमी तटीय मैदान की अपेक्षा अधिक चौड़ा है। इसकी औसत चौड़ाई 161 किमी० से 480 किमी० तक है।

(ख) फसलें एवं उद्योग– पूर्वी तटीय मैदान बुलई तथा चीका मिट्टी के निक्षेपों से बना है। महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नदियों ने अपने डेल्टाओं से उपजाऊ बना दिया है। यहाँ की मुख्य फसलें गन्ना, चावल, तम्बाकू, जूट और नारियल हैं। यह तट मछली तथा नारियल उद्योग के लिए प्रसिद्ध है।

(ii) पश्चिमी तटीय मैदान–

(क) स्थिति एवं विस्तार– गुजरात प्रदेश की खंबात की खाड़ी से लेकर कन्याकुमारी तक, अरब सागर और पश्चिमी घाट के मध्य जो उपजाऊ और समतल पट्टी पाई जाती है, पश्चिमी तटीय मैदान के नाम से जानी जाती है। इस मैदान की औसत चौड़ाई 165 किमी० है। यह मध्य में संकीर्ण है किन्तु इसका उत्तरी और दक्षिणी भाग चौड़ा है। दमन से गोवा तक के 500 किमी० तक के प्रदेश को कोकण तट, मध्य भाग में गोवा से मंगलौर तक के 225 किमी० के विस्तार को कोंकण तट तथा मंगलौर व कन्याकुमारी के बीच के 500 किमी० क्षेत्र को मालाबार तट कहते हैं।

(ख) **फसलें एवं उद्योग–** पश्चिमी तटीय मैदान उपजाऊ मिट्टी से युक्त तथा उत्तम जलवायु वाला क्षेत्र होने के कारण रबड़, नारियल, केला, गरम मसाले, कपास, चावल तथा तम्बाकू उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है। नमक बनाना, मत्स्य संग्रहण, नारियल से रेशे बनाना तथा सूती वस्त्र यहाँ के प्रसिद्ध उद्योग हैं।

6. भारत के पूर्वी व पश्चिमी तटीय मैदानों की तुलना कीजिए।

उ०– भारत के पूर्वी तथा पश्चिमी मैदानों की तुलना–

भारत के पूर्वी तटीय मैदान	भारत के पश्चिमी तटीय मैदान
1. पूर्वी तटीय मैदान का विस्तार प्रायद्वीप के पूर्वी किनारों पर पश्चिमी बंगाल से लेकर कन्याकुमारी तक है।	पश्चिमी तटीय मैदान का विस्तार प्रायद्वीप के पश्चिमी किनारों पर खंभात की खाड़ी से लेकर कन्याकुमारी अंतरीम तक है।
2. पूर्वी तटीय मैदान की औसत चौड़ाई 64 किमी० है।	पश्चिमी तटीय मैदान की औसत चौड़ाई 161 से 483 किमी० है।
3. यह मैदान चावल, जूट, तंबाकू, केला तथा नारियल आदि फसलों के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है।	इस मैदान की प्रमुख फसलें रबड़, कपास, नारियल, केला, गरम मसाले, चावल तथा तंबाकू आदि प्रमुख हैं।
4. पूर्वी तट के सागरीय भाग में कोलकाता, पारा द्वीप, विशाखापट्टनम तथा चैन्नई बंदरगाह प्रमुख हैं।	इस क्षेत्र के प्रमुख बंदरगाह काँदला, मुम्बई तथा कोच्चि हैं।
5. इस क्षेत्र के प्रमुख उद्योग मत्स्य संग्रहण एवं नारियल उद्योग है।	इस क्षेत्र के प्रमुख उद्योग नमक बनाना, मत्स्य संग्रहण एवं नारियल से रेशे बनाना सूती वस्त्र उद्योग आदि हैं।

7. भारत को प्राकृतिक भौतिक प्रदेशों में विभाजित कीजिए तथा इनमें से किसी एक का वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए।

(i) स्थिति व विस्तार **(ii) कप्राकृतिक स्वरूप**

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

33 जलवायु

(प्रभावित करने वाले कारक, भारतीय जलवायु की विशेषताएँ एवं प्रभाव)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 285 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 285, 286 व 287 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. मानसून से आप क्या समझते हैं?

उ०– मानसून अरबी भाषा के 'मौसिम' शब्द से बना है जिसका अर्थ ऋतु है। मानसून उन मौसमी पवनों को कहते हैं, जो 6 माह स्थल से सागर की ओर तथा 6 माह सागर से स्थल की ओर चलती हैं अर्थात् मानसून से तात्पर्य ऐसी जलवायु से है जिनमें ऋतु के अनुसार पवनों की दिशा में परिवर्तन हो जाता है। भारत वर्ष भर इन्हीं मानसूनी पवनों के प्रभाव में बना रहता है। ऋतु परिवर्तन मानसूनी जलवायु की विशेषता है। यही कारण है कि भारत में गर्मी–सर्दी और वर्षा की ऋतुएँ वर्षभर बारी–बारी से चक्कर लगाती रहती हैं।

2. दक्षिण पश्चिमी मानसून की उत्पत्ति कैसे होती है?

उ०– दक्षिण पश्चिमी मानसून की उत्पत्ति– ग्रीष्म ऋतु में देश के उत्तर-पश्चिम भागों में निम्न वायुदाब का क्षेत्र विकसित हो जाता है। जून के प्रारंभ तक निम्न वायुदाब का यह क्षेत्र इतना प्रबल हो जाता है कि दक्षिण गोलार्द्ध की व्यापारिक पवनें भी इस ओर खिंच आती है। इन दक्षिण-पूर्वी व्यापारिक पवनों की उत्पत्ति समुद्र से होती है। हिन्द महासागर में विषुवत् वृत्त को पार करके ये पवने बंगाल की खाड़ी तथा अरब सागर में पहुँच जाती हैं। इसके बाद ये भारत के वायु-संचरण का अंग बन जाती हैं। विषुतीय गर्म धाराओं के ऊपर से गुजरने के कारण ये भारी मात्रा में आर्द्रता ग्रहण कर लेतीं हैं। विषुवतीय वृत्त पार करते ही इनकी दिशा दक्षिण-पश्चिम हो जाती है। इसलिए इन्हें **'दक्षिण पश्चिमी मानसून'** कहा जाता है।

3. भारतीय मानसूनी वर्षा की विशेषताएँ लिखिए।

उ०– भारतीय मानसूनी वर्षा की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) भारतीय वर्षा मुख्य रूप से मानसूनी वर्षा है। यहाँ दक्षिण-पश्चिमी और दक्षिण-पूर्वी मानसूनों से सर्वत्र व्यापक वर्षा होती है।

(ii) भारत की मानसूनी वर्षा सामान्यत: 10 जून से 30 सितंबर तक होती है।

(iii) भारतीय मानसूनी वर्षा तेज गति से मूसलाधार होती है जिससे नदियों में बाढ़े आ जातीं हैं।

(iv) भारत में वर्षा कभी अधिक हो जाती है तो कभी सूखा पड़ जाता है इसलिए भारतीय कृषि को मानसून का जुआ कहते हैं।

(v) भारत में होने वाली वर्षा अनियमित है। मानसून शीघ्र आने से वर्षा शीघ्र शुरू हो जाती है।

(vi) भारत में वर्षा का वितरण असमान है। कहीं अति वृष्टि का प्रकोप रहता है तो कहीं अनावृष्टि का।

(vii) भारत में वर्षा अधिकतर पर्वतीय वर्षा है, क्योंकि मानसून पर्वतों से टकराकर वर्षा करते हैं।

4. भारतीय जलवायु की तीन प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।

उ०– भारतीय जलवायु की तीन विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) विविधता– भारतीय जलवायु विविधता के रंगों से रंगी हुई है। उत्तर में शीत, मैदान में समशीतोष्ण, मरुस्थल में विषमता और दक्षिण भारत में उष्णता भारतीय जलवायु की विविधता को स्पष्ट कर देती है।

(ii) मानसून आधारित– भारतीय जलवायु मानसून की देन है। भारत में मानूसनी वर्षा की अनियमिता, अनिश्चितता तथा असमान वितरण जैसी विलक्षताएँ दृष्टिगोचर होती हैं।

(iii) ऋतुओं का चक्र– भारत में जलवायु सालभर सर्दी, गर्मी, वर्षा और लौटती मानसून की ऋतुओं के चक्र को घुमाती रहती है। भारत के लोग सर्दी की ठिठुरन, गर्मी की जलन तथा वर्षा की झड़ियों का आनंद लेते हैं।

5. कोरोमंडल तट पर जाड़ों में वर्षा क्यों होती है?

उ०– नवंबर, दिसंबर, जनवरी तथा फरवरी के महीनों में संपूर्ण देश में जाड़े की ऋतु होती है। इस ऋतु में दक्षिण से उत्तर की ओर तापमान घटता जाता है। इस ऋतु में दक्षिण का औसत तापमान 24^0 से 25^0 सेल्सियस तक रहता है, किंतु उत्तरी मैदानों में औसत तापमान 10^0 से 15^0 सेल्सियस तक रहता है। निम्न तापमानों के कारण स्थल पर वायुदाब अधिक होता है। अतएव ठंडी एवं शुष्क पवनें स्थल से सागर की ओर चलती हैं। ये पवनें लौटते हुए बंगाल की खाड़ी से नमी ग्रहण कर लेतीं हैं और अंडमान निकोबार द्वीप समूह और तमिलनाडु के कोरोमंडल तट पर जाड़ों में खूब वर्षा करती हैं।

6. भारत की अधिकांश वर्षा गर्मियों में क्यों होती है?

उ०– भारत की 80% वर्षा ग्रीष्म ऋतु में दक्षिण-पश्चिम मानसून से होती है। भारत की अधिकांश वर्षा ग्रीष्म ऋतु में होने के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं–

(i) भारत में गर्मियों की ऋतु में उत्तरी क्षेत्र में निम्न वायुदाब उत्पन्न हो जाने से सागर के उच्च वायुदाब की ओर से वाष्प से भरी पवनें आने लगती हैं।

(ii) ये मानसून-पवनें भारत में बांग्लादेश की ओर से प्रवेश करके पूर्व से पश्चिम तक व्यापक वर्षा करती हैं।

(iii) अरब सागर से आने वाली मानसून-पवनें पश्चिमी घाट-महाराष्ट्र, गुजरात, मध्य प्रदेश तथा राजस्थान में वर्षा करती हुई बंगाल की खाड़ी के मानसून से मिलकर उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, तथा हिमालय के ढालों को वर्षा प्रदान करती हैं।

(iv) हिमालय पर्वत दक्षिण-पूर्व मानसून को रोककर समस्त उत्तरी भारत को वर्षा प्रदान करता है।

(v) शीत ऋतु आते ही यह मानसून लौटने लगता है। शुष्क होने के कारण यह वर्षा नहीं कर पाता। यह बंगाल की खाड़ी से

पुनः वाष्प ग्रहण करके तमिलनाडु, तथा कर्नाटक राज्यों में ही वर्षा कर पाता है। समस्त उत्तरी भारत जाड़ों में वर्षा से वंचित रह जाता है।

भारत में अनुकूल जलवायु दशाएँ मात्र गर्मियों में ही बन पाती हैं। इसीलिए यहाँ गर्मियों में ही अधिक वर्षा होती है। शीत ऋतु इन दशाओं से वंचित रहने के कारण अल्प वर्षा ही प्राप्त कर पाती है।

7. भारत की जलवायु पर हिमालय पर्वत की स्थिति के दो प्रभावों का उल्लेख कीजिए।

उ०– भारत की जलवायु पर हिमालय पर्वत की स्थिति के दो प्रभाव निम्नलिखित हैं–

(i) हिमालय पर्वत दक्षिण से आने वाली वाष्पयुक्त पवनों को रोककर उत्तरी भारत में वर्षा कराने में सहायक हैं।

(ii) हिमालय पर्वत अपने ऊपर से आने वाली पवनों को रोककर भारत को ठंडा होने से बचाता है।

8. भारत की जलवायु को प्रभावित करने वाले तीन कारकों का वर्णन कीजिए।

उ०– भारत की जलवायु को प्रभावित करने वाले तीन कारक निम्नलिखित हैं–

(i) हिमालय पर्वत की स्थिति– भारत के उत्तर में हिमालय पर्वत स्थित है, जो उत्तर से आने वाली बर्फीली पवनों को रोककर भारत को ठंडा होने से बचाता है। यह पर्वत दक्षिण से आने वाली भाप से भरी पवनों को रोककर उत्तरी भारत को वर्षा प्रदान कराने में सहायक बनता है। "हिमालय पर्वत न होता तो उत्तर का विशाल मैदान शुष्क मरुस्थल बन गया होता।"

(ii) हिंद महासागर– भारत के दक्षिण में तीन ओर महासागर फैला है। हिंद महासागर का भारत की जलवायु पर गहरा प्रभाव पड़ता है। अरब सागर, हिंद महासागर तथा बंगाल की खाड़ी की मानसून–पवनें भारत को वर्षा से सराबोर करके जलापूर्ति कर पूरे भारत की जलवायु को प्रभावित करती हैं।

(iii) मानसून पवनें– भारत की जलवायु को सर्वाधिक प्रभावित करने वाला तत्व मानसून-पवनें हैं। सागर की ओर से आने वाली भाप से लदी मानसून-पवनें जून माह से लेकर अक्टूबर माह तक समूचें भारत को वर्षा प्रदान करती हैं। अक्टूबर से लौटती मानसून-पवनें दक्षिण भारत को वर्षा प्रदान करती हैं। मानसूनी पवनें नमी तथा उमस पैदा कर जलवायु को विशेष रूप से प्रभावित करती हैं।

9. मौसम और जलवायु में अंतर बताइए।

उ०– जलवायु और मौसम में अंतर–

जलवायु	मौसम
1. दीर्घकालीन वायुमंडल की दशाओं को जलवायु कहते हैं।	अल्पकालीन वायुमंडल की दशाओं को मौसम कहते हैं।
2. जलवायु दीर्घकाल तक एक समान बनी रहती है।	मौसम क्षण-क्षण बदलने वाला होता है।
3. जलवायु एक विशाल क्षेत्र को अपने मिजाज से प्रभावित करती है।	मौसम के मिजाज का प्रभाव बहुत छोटे क्षेत्र पर ही पड़ता है।
4. जलवायु वायुमंडल की दशाओं का दीर्घकालीन योग होती है।	मौसम पर वायुमंडल की अल्पकालीन दशाओं का प्रभाव होता है।
5. दीर्घकालीन मौसम के अनुपात का योग जलवायु होती है।	अल्पकालीन जलवायु को मौसम कहा जाता है।

10. भारत की वर्षा के वितरण पर उच्चावच के प्रभावों का वर्णन कीजिए।

उ०– उच्चावच का वर्षा के वितरण पर प्रभाव– वार्षिक वर्षा के वितरण पर धरातलीय दशाओं (उच्चावच) का गहरा प्रभाव पड़ता है। भारत में पर्वतीय उच्च प्रदेशों में वर्षा की मात्रा अधिक होती है, जैसे– पश्चिमी घाट, गारो–खासो की पहाड़ियाँ तथा हिमालयी क्षेत्र। मैदानी प्रदेशों में कम वर्षा होती है। इसलिए उत्तरी मैदान में उत्तर से दक्षिण की ओर वर्षा कम हो जाती है। जल से भरी मानसून–पवनें मार्ग में पड़ने वाले पर्वतों की सम्मुख ढ़ाल पर अधिक वर्षा करती हैं, जबकि इन पर्वतों के

विमुख क्षेत्र (ढाल) वृष्टि छाया में रहने के कारण शुष्क रहते हैं। इन्हीं गारो–खासी पहाडियों में वार्षिक वर्षा की मात्रा 1,000 सेमी० है परंतु ब्रह्मपुत्र घाटी तथा शिलांग पठार में यह मात्रा घटकर 200 सेमी० रह जाती है। पश्चिमी घाट के अग्र भाग में मालाबार तट पर वर्षा की मात्रा 300 सेमी० है परंतु पश्चिमी घाट की वृष्टि छाया में दक्षिणी पठार पर यह मात्रा केवल 600 सेमी० है। राजस्थान में अरावली पर्वत मानसून-पवनों के समान्तर स्थित होने के कारण इन पवनों को रोक नहीं पाता जिससे से प्रदेश शुष्क हैं।

11. थार के मरुस्थल में कम वर्षा होने के क्या कारण हैं?

उ०– थार के मरूस्थल में वर्षा के कम होने के निम्नलिखित कारण हैं–

(i) बंगाल की खाड़ी से जब मानसून पश्चिमी राजस्थान (थार के मरूस्थल) में पहुँचती है तो उसमें वर्षा करने की क्षमता समाप्त हो जाती है अर्थात् पवनों के आर्द्रता–रहित होने के कारण उनमें वर्षा करने की क्षमता नहीं होती।

(ii) अरब सागर से आने वाली आर्द्रता युक्त पवनें इस क्षेत्र से सीधी निकल जातीं हैं क्योंकि यहाँ स्थित अरावली पर्वत-माला की दिशा के समानान्तर हैं जो पवनों को रोकने में असमर्थ रहतीं हैं। इस कारण इन पवनों से भी यहाँ वर्षा नहीं हो पाती है।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय जलवायु को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।

उ०– भारतीय जलवायु को प्रभावित करने वाले कारणों का विवरण निम्न प्रकार है–

(i) विशाल विस्तार– अक्षांश और देशांतरीय विस्तार बहुत अधिक होने और उत्तर से दक्षिण तक तथा पूर्व से पश्चिम तक फैला होने के कारण भारत जलवायु की विविधता झेलने पर विवश है। उच्च अक्षांशों में स्थित हिमालय का पर्वतीय प्रदेश शीत जलवायु वाला है जबकि थार के मरुस्थल में तापांतर सर्वाधिक पाया जाता है। मैदानी क्षेत्र में जब गर्मियों में लू चलती है तब पर्वतीय क्षेत्रों में रमणीय जलवायु पाई जाती है। दक्षिणी भारत सालभर उष्ण जलवायु का क्षेत्र बना रहता है।

(ii) हिमालय पर्वत की स्थिति– भारत के उत्तर में हिमालय पर्वत स्थित है, जो उत्तर से आने वाली बर्फीली पवनों को रोककर भारत को ठंडा होने से बचाता है। यह पर्वत दक्षिण से आने वाली भाप से भरी पवनों को रोककर उत्तरी भारत को वर्षा प्रदान कराने में सहायक बनता है। "हिमालय पर्वत न होता तो उत्तर का विशाल मैदान शुष्क मरुस्थल बन गया होता।"

(iii) हिंद महासागर– भारत के दक्षिण में तीन ओर महासागर फैला है। हिंद महासागर का भारत की जलवायु पर गहरा प्रभाव पड़ता है। अरब सागर, हिंद महासागर तथा बंगाल की खाड़ी की मानसून-पवनें भारत को वर्षा से सराबोर करके जलापूर्ति कर पूरे भारत की जलवायु को प्रभावित करती हैं।

(iv) मानसून पवनें– भारत की जलवायु को सर्वाधिक प्रभावित करने वाला तत्व मानसून-पवनें हैं। सागर की ओर से आने वाली भाप से लदी मानसून–पवनें जून माह से लेकर अक्टूबर माह तक समूचें भारत को वर्षा प्रदान करती हैं। अक्टूबर से लौटती मानसून-पवनें दक्षिण भारत को वर्षा प्रदान करती हैं। मानसूनी पवनें नमी तथा उमस पैदा कर जलवायु को विशेष रूप से प्रभावित करती हैं।

(v) जेट पवनें– 25° उत्तरी अक्षांश पर तेज गति से चलने वाली वायु धाराओं को **जेट पवनें** या **जेट प्रवाह** कहते हैं। जेट पवनें भारत के मौसमी रचना तंत्र को विशेष रूप से प्रभावित करती हैं। जेट पवनें भारत में चक्रवातों को पहुँचाकर जलवायु पर प्रभाव डालती हैं। जेट पवनों के कारण दक्षिणी-पश्चिमी मानसून सक्रिय होकर वर्षा की अधिक मात्रा प्रदान कर देता है।

(vi) उच्चावच– भारत का उच्चावच भी जलवायु को विशेष रूप से प्रभावित करता है। हिमालय पर्वत, थार का मरुस्थल, उत्तर का विशाल मैदान, पश्चिमी घाट आदि वर्षा और तापमान की मात्रा को प्रभावित कर जलवायु को विविधता प्रदान करते हैं।

(vii) चक्रवात– वे चक्करदार पवनें जिनके बीच में निम्न वायुदाब होता है तथा किनारों पर उच्च वायुदाब होता हैं, उन्हें चक्रवात कहा जाता है। भारत में शीतऋतु में पश्चिम-उत्तर से जो चक्रवात आते हैं वे वर्षा के साथ-साथ शीतलहर

तथा कुहरा उत्पन्न कर जलवायु को प्रभावित करते हैं। अप्रैल से अक्टूबर तक बंगाल की खाड़ी से उत्तर की ओर आने वाले चक्रवात भी जलवायु को बहुत प्रभावित करते हैं।

(viii) अलनीनो– दक्षिणी दोलन के उतार चढ़ाव को अलनीनो प्रभाव कहा जाता है। अलनीनों का प्रभाव भारत ही नहीं संपूर्ण विश्व की जलवायु पर पड़ता है। हिंद महासागर में इसकी बनाई अनुकूल स्थिति से भारत को पर्याप्त मात्रा में वर्षा मिलती है। जबकि प्रतिकूल होने से वर्षा का अभाव झेलना पड़ता है। इस स्थिति में भारत में वर्षा कम होती है। जबकि अधिक वर्षा से चीन में बाढ़ आ जाती है।

2. मानसूनी वर्षा की प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।

उ०– **मानसूनी वर्षा की विशेषताएँ–** भारत की मानसूनी वर्षा विविध रूपों और विलक्षणताओं से भरपूर है। भारत की मानसूनी वर्षा की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) मानसूनी वर्षा– भारतीय वर्षा मुख्य रूप से मानसूनी वर्षा है। यहाँ दक्षिणी-पश्चिमी और दक्षिणी-पूर्वी मानसूनों से सर्वत्र व्यापक वर्षा होती है। चक्रवातों से बहुत थोड़े क्षेत्र पर ही अल्पमात्रा में वर्षा होती है।

(ii) वर्षा की निश्चित अवधि– भारत की वर्षा सामान्यत: 10 जून से 30 सितंबर तक होती है। इस अवधि के दौरान देश में 80% से भी अधिक वर्षा होती है। अत: इस अवधि को वर्षा ऋतु कहा जाता है। वर्षा ऋतु की निश्चित अवधि मानसूनी वर्षा की अनुपम विशेषता है।

(iii) मूसलाधार वर्षा– भारत में वर्षा तेज गति से तथा मूसलाधार होती है। कभी-कभी तो एक ही दिन में 50 सेंटीमीटर तक वर्षा हो जाना साधारण सी बात है। तेज वर्षा होने के कारण अधिकांश जल व्यर्थ बह जाता है जिससे नदियों में बाढ़ें आ जाती हैं।

(iv) अनिश्चित वर्षा– भारत में वर्षा (दक्षिण-पूर्व मानसून) की सबसे बड़ी विशेषता उसकी अनिश्चितता है। कभी वर्षा अधिक हो जाती है तो कभी सूखा पड़ जाता है। **इसलिए भारतीय कृषि एवं भारतीय बजट वर्षा का जुआ है।**

(v) अनियमित वर्षा– भारत में होने वाली वर्षा पूर्णतया मानसून पर निर्भर है। मानसून शीघ्र आ जाता है तो वर्षा भी शीघ्र शुरू हो जाती है। कभी-कभी वर्षा बीच में लंबा अंतराल दे जाती है। कहीं सूखा और कहीं बाढ़ मानसूनी जलवायु की बहुरंगी विशेषता है।

(vi) असमान वितरण– भारत में वर्षा का वितरण बहुत असमान है। एक ओर चेरापूँजी में 1,100 सेंटीमीटर के लगभग वर्षा होती है, तो दूसरी ओर राजस्थान में केवल 12 से 15 सेंटीमीटर। वर्षा की मात्रा में पूर्व से पश्चिम की ओर अंतर आ जाता है। कुछ राज्यों में अतिवृष्टि का प्रकोप रहता है तो कुछ में अनावृष्टि का।

(vii) वर्षभर वर्षा– यद्यपि भारत की 80% वर्षा ग्रीष्म ऋतु में होती है परंतु शेष समय में भी देश के किसी-न-किसी क्षेत्र में वर्षा होती रहती है। जैसे, दिसंबर से मार्च तक उत्तरी-पश्चिमी भारत में, मार्च से मई तक मालाबार तट एवं सुदूरपूर्वी भारत में तथा अक्टूबर एवं नवंबर में कोरोमंडल तट पर तथा अंडमान निकोबार द्वीप समूह में वर्षा होती है।

(viii) पर्वतीय वर्षा– भारत में वर्षा अधिकतर पर्वतीय वर्षा है, क्योंकि मानसून पर्वतों से टकराकर वर्षा करते हैं। देश की 90% वर्षा इसी प्रकार होती है। हिमालय पर्वत इस दिशा में विशेष सहायक बनता है।

3. भारत में वार्षिक वर्षा के वितरण को स्पष्ट कीजिए।

उ०– भारत की अधिकांश वर्षा मानसूनी-पवनों के द्वारा होती है। भारत के दक्षिणी भागों में संवहनीय वर्षा होती है। भारत का कोई भी भाग वर्षा से रहित नहीं रहता है। भारत के किसी न किसी भाग में वर्ष के प्रत्येक मास में वर्षा होती है। भारत की वार्षिक वर्षा का औसत 110 सेमी० है। भारत में 80% वर्षा ग्रीष्म ऋतु में होती है। शेष वर्षा वर्ष के शेष भाग में कहीं न कहीं होती रहती है। भारत के विभिन्न भागों में कई कारणों से कम या अधिक वर्षा होती है। भारत में वर्षा के वितरण को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है।

(i) अधिक वर्षा वाले क्षेत्र– भारत के जिन क्षेत्रों पर मानसून का विशेष प्रभाव रहता है वहाँ वर्षा का वार्षिक औसत 200 सेमी० से अधिक रहता है। मणिपुर, मिजोरम, नागालैंड, अरुणाचल प्रदेश, असम, मेघालय, पश्चिम बंगाल, बिहार तथा पश्चिमी घाट भारत के अधिक वर्षा पाने वाले क्षेत्र है। मेघालय में भारत की सबसे अधिक वर्षा होती है।

(ii) मध्यम वर्षा वाले क्षेत्र– भारत के जिन क्षेत्रों में वर्षा का वार्षिक औसत 200 से 100 सेमी० तक रहता है, मध्यम वर्षा वाले क्षेत्र कहे जाते हैं। इस क्षेत्र में बिहार का पश्चिमी भाग, ओडिशा, हिमालय पर्वत के पूर्वोत्तर ढाल, उत्तर प्रदेश का दक्षिणी भाग तथा मध्य प्रदेश का क्षेत्र इसी क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। वर्षा की कमी होने पर कृषि को सिंचाई के साधनों पर निर्भर रहना पड़ता है।

(iii) कम (न्यून) वर्षा वाले क्षेत्र– भारत के जिन भागों में वर्षा का वार्षिक औसत 100 से 50 सेमी० तक रहता है, न्यून वर्षा वाले क्षेत्र कहलाते हैं। पश्चिमी उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पश्चिमी मध्य प्रदेश, उत्तरी आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, दक्षिणी पंजाब तथा उत्तरी पश्चिमी गुजरात कम वर्षा प्राप्त करने वाले क्षेत्र हैं। इन क्षेत्रों में कम नमी के कारण सूखा पड़ने की संभावना बनी रहती है।

4. भारतीय जलवायु की विशेषताएँ लिखिए।

उ०– **भारतीय जलवायु की विशेषताएँ–** भारतीय जलवायु में निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाती हैं–

(i) विविधता– भारतीय जलवायु विविधता के रंगों से रंगी हुई है। उत्तर में शीत, मैदान में समशीतोष्ण, मरुस्थल में विषमता और दक्षिण भारत में उष्णता भारतीय जलवायु की विविधता को स्पष्ट कर देती है।

(ii) मानसून आधारित– भारतीय जलवायु मानसून की देन है। भारत में मानूसनी वर्षा की अनियमिता, अनिश्चितता तथा असमान वितरण जैसी विलक्षताएँ दृष्टिगोचर होती हैं।

(iii) ऋतुओं का चक्र– भारत में जलवायु सालभर सर्दी, गर्मी, वर्षा और लौटती मानसून की ऋतुओं के चक्र को घुमाती रहती है। भारत के लोग सर्दी की ठिठुरन, गर्मी की जलन तथा वर्षा की झड़ियों का आनंद लेते हैं।

(iv) सालभर कृषि उत्पादन– भारत की जलवायु की इन विशेषताओं के कारण ही भारत में सालभर कृषि उत्पादन चलता रहता है। यहाँ जलवायु के अनुरूप ही रबी, खरीफ तथा जायद की फसलें उगती हैं।

(v) आर्थिक और सांस्कृतिक विकास– भारत की जलवायु ने पर्वतीय, मैदानी, पठारी और मरुस्थलीय क्षेत्रों में विविधता को जन्म देकर आर्थिक और सांस्कृतिक विकास में भी विविधता ला दी है।

भारत की जलवायु की विशेषताओं के कारण ही भारत के विभिन्न भागों में जनजीवन, रीति रिवाज तथा आर्थिक अनुक्रियाओं की विविधताओं के अंकुर फूटे हैं।

5. भारत की जलवायु का मानव जीवन पर प्रभाव स्पष्ट कीजिए।

उ०– **भारत की मानसूनी जलवायु का मानव–जीवन पर प्रभाव–** 'जलवायु के प्रभाव' को हम निम्न शीर्षकों के अंतर्गत स्पष्ट कर सकते हैं–

(i) जलवायु का कृषि पर प्रभाव– भारत एक कृषि-प्रधान देश है। यहाँ 67.4% कार्यशील जनसंख्या कृषि पर निर्भर करती है। वर्षा और जलवायु का कृषि पर सीधा प्रभाव पड़ता है। कृषि पर जलवायु के प्रभाव को निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है–

(क) कृषि की विभिन्न उपजें– भारत के विभिन्न भागों में जलवायु की भिन्नता एवं वर्षा की असमानता अनेक कृषि उपजों को संभव बनाती है; जैसे– अधिक वर्षा वाले भागों में चावल, गन्ना एवं जूट पैदा किए जाते हैं, जबकि कम वर्षा वाले भागों में ज्वार, बाजरा, तिलहन, दालें, सोयाबीन, मटर, चना आदि पैदा किए जाते हैं।

(ख) सिंचाई की सुविधा– भारत में अधिक वर्षा होने के कारण यहाँ की नदियाँ वर्षभर जल से भरी रहती हैं, जिनसे जल निकालकर सिंचाई की जाती है।

(ग) फसलों के तैयार होने में सहायक– ऊँचे तापमान के कारण भारत में फसलों के पकने में सुविधा रहती है। बहुत-सी फसलें केवल ऊँचे तापमान में ही उगती हैं।

(ii) जलवायु का जनसंख्या के वितरण पर प्रभाव– भारत में जनसंख्या का वितरण वर्षा की मात्रा पर निर्भर करता है। जैसे–जैसे वर्षा की मात्रा पूर्व से पश्चिम की ओर कम होती जाती है, वैसे–वैसे जनसंख्या का घनत्व भी पश्चिम की ओर कम होता चला जाता है; जैसे– पश्चिमी बंगाल में यह घनत्व 615 व्यक्ति है, जबकि राजस्थान में केवल 100 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर ही है।

(क) **रोगों की उत्पत्ति–** मानसूनी जलवायु में मलेरिया बहुत फैलता है। इसके अलावा अधिक वर्षा व गर्मी वाले क्षेत्रों में बेरी–बेरी, पेचिश, आदि संक्रामक रोग फैल जाते हैं।

(ख) **भाग्यवादिता एवं अकाल–** भारत की अनियमित तथा अनिश्चित वर्षा ने भारतीय कृषक को भाग्यवादी बना दिया है। वर्षा के लिए इंद्र आदि देवताओं की पूजा की जाती है। वर्षा नहीं होने पर अकाल की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

(iii) **जलवायु का मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं पर प्रभाव–** भारत की जलवायु ने यहाँ के निवासियों की आर्थिक क्रियाओं को बहुत अधिक प्रभावित किया है। मानवीय आर्थिक क्रियाओं पर जलवायु के प्रभाव को अनेक प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है–

(क) देश के अनेक उद्योगों का स्थानीयकरण
(ख) अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की दिशा
(ग) पर्यटन उद्योग
(घ) श्रमिकों की कार्यकुशलता

इन सभी पर जलवायु का विविध प्रकार से प्रभाव पड़ता है। जलवायु का अर्थतंत्र पर विविध रूप से विशेष प्रभाव पड़ने के कारण ही **भारतीय बजट को मानसून का जुआ** कहा गया है।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

34 प्राकृतिक आपदाएँ
(भूस्खलन, बाढ़, सूखा, भूकंप, चक्रवाती तूफान एवं लहरें)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 297 व 298 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 298 व 299 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. प्राकृतिक आपदा किसे कहते हैं? दो प्राकृतिक आपदाओं के प्रभावों का वर्णन कीजिए।

उ०– **प्राकृतिक आपदा–** प्रकृति द्वारा जल, स्थल अथवा वायुमंडल में उत्पन्न विनाशकारी घटना या बदलाव को प्राकृतिक आपदा कहते हैं। भूस्खलन, बाढ़ सूखा, भूकम्प, चक्रवाती तूफान एवं लहरें प्राकृतिक आपदाएँ हैं।

बाढ़ के दुष्प्रभाव– बाढ़ आपदा के दुष्प्रभाव निम्नलिखित हैं–

(i) बाढ़ आने से मनुष्य और पशु मर जाते हैं, तथा सम्पत्ति को भारी क्षति पहुँचती हैं।
(ii) बाढ़ का जल खेतों में भरकर लहलहाती फसलों को चौपट कर देता है।
(iii) बाढ़ का जल समतल भूमि में कटाव करके उसे कृषि के लिए अयोग्य बना देता है।
(iv) बाढ़ का जल सड़कों को तोड़ देता है, रेलवे लाइनों तथा विद्युत खम्बों को उखाड़ डालता है।
(v) बाढ़ के जल से भवन, दुकान, कार्यालय तथा अन्य संस्थान नष्ट हो जाते हैं।
(vi) बाढ़ का जल एकत्र हो जाने से क्षेत्र में मलेरियार, डेंगू तथा पेचिश आदि रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है।

सूखे के दुष्परिणाम– सूखा आपदा के मुख्य रूप से निम्नलिखित प्रभाव पड़ते हैं–

(i) सूखे के कारण फसलें सूख जाती हैं, और कृषि उत्पादन घट जाता है।
(ii) सूखा पड़ने से प्रतिव्यक्ति और राष्ट्रीय आय घटने से अर्थव्यवस्था दुर्बल हो जाती है।
(iii) सूखा पड़ने से पेयजल का अभाव उत्पन्न हो जाता है।
(iv) सूखा पड़ने से पशुओं के लिए चारे का अभाव उत्पन्न हो जाता है।
(v) सूखा जलाभाव का कारण बनता है, अत: लोग दूषित जल पीकर घातक बीमारियों का शिकार बन जाते हैं।
(vi) सूखे के कारण पेड़ पौधे सूख जाते हैं, और वन्य जंतु नष्ट हो जाते हैं।

2. आपदा प्रबंधन से आप क्या समझते हैं? उदाहरण देकर समझाइए।

उ०– आपदा प्रबंधन– आपदा प्रबंधन का सामान्य अर्थ आपदाओं को रोकने तथा नियंत्रण के प्रयासों से लगाया जाता है। दूसरे शब्दों में, "आपदा से होने वाली क्षति को न्यूनतम करना ही आपदा प्रबंधन है।" प्राकृतिक आपदाओं के लिए सुरक्षा तथा उपचार की सुव्यवस्था भी आपदा प्रबंधन के अंतर्गत आती है।

आपदा प्रबंधन के चरण– आपदा प्रबंधन की व्यवस्था के निम्नलिखित चरण हैं–

(i) **प्रथम चरण–** प्रथम चरण में आपदा के विषय में भविष्यवाणी करना, आपदा के कारणों की जाँच और समीक्षा करना तथा आपदा आने के बाद प्रबंधन के कार्य सम्मिलित हैं।

(ii) **द्वितीय चरण–** इस चरण में आपदा ग्रस्त क्षेत्रों में प्रशिक्षित बचाव टीम भेजना, आपदाग्रस्त लोगों की चिकित्सा की उचित व्यवस्था करना तथा उन्हें सुरक्षित स्थानों पर पहुँचाना आदि कार्यों को सम्मिलित किया जाता है।

(iii) **तृतीय चरण–** इस चरण में आपदा प्रबंधन के दीर्घकालीन निवारक तथा सुरक्षात्मक उपाय अपनाए जाते हैं। भारत सरकार ने 2005 ई० में राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान की स्थापना करके इस क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण कदम उठाया है।

3. भूस्खलन क्या है? इसके दो दुष्प्रभाव लिखिए।

उ०– भूस्खलन का सामान्य अर्थ है भूखंड का फिसल जाना। पृथ्वी पर शैलों का अपक्षय होने से अपक्षय हुए पदार्थ गुरुत्वाकर्षण शक्ति द्वारा ढलान की तरफ खिसकना शुरु हो जाते हैं। यह प्रक्रिया पर्वतीय ढालों पर अधिक होती है। अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में त्वरित वर्षा होने से अपक्षरित खंडो का ढाल के साथ नीचे फिसल जाने की क्रिया को भूस्खलन कहते हैं। भूस्खलन के कारण फिसलती हुई चट्टान मार्ग में पड़ने वाले वृक्षों, बाँधों तथा आवासों को नष्ट कर डालती हैं। भूस्खलन दो प्रकार का होता है। **चट्टानी खिसकाव** में चट्टानें अपने आधार से दूर चली जाती हैं तथा धीरे-धीरे नीचे की ओर खिसकती हैं। यह कम विनाशक होती हैं। **अचानक भूस्खलन** तीव्र गति से अनायास होने वाली प्रक्रिया है जो भयंकर विनाश का कारण बनता है।

भूस्खलन के दो दुष्प्रभाव निम्नवत् हैं–

(i) भूस्खलन से सड़कें टूट-फूटकर परिवहन की दृष्टि से बेकार हो जाती हैं।

(ii) भूस्खलन के कारण अवसाद तथा चट्टानें नदी के मार्ग में गिरकर विनाशक बाढ़ को जन्म देती हैं।

4. सूखा क्या है? इसे रोकने के दो उपाय लिखिए।

उ०– जल जीवन है और सूखा मृत्यु। किसी क्षेत्र विशेष में जल स्रोतों का अभाव हो जाना सूखे का प्रतीक है। जल के अभाव में आर्द्रता घट जाती है जो सूखा आपदा को जन्म देती है, सूखा इन शब्दों में परिभाषित किया जा सकता है, "किसी क्षेत्र विशेष में औसत वार्षिक वर्षा के 75% से कम वर्षा होने की स्थिति को सूखा पड़ना कहा जाता है।" सूखा भयंकर आपदा बनकर टूट पड़ता है। सूखा आपदा फसलों, वृक्षों तथा जीव जंतुओं को लील जाती है।

सूखा आपदा को रोकने के दो उपाय निम्नलिखित हैं–

(i) सिंचाई के लिए जल संसाधनों की उचित व्यवस्था करनी चाहिए।

(ii) नदियों को परस्पर जोड़कर सूखाग्रस्त क्षेत्रों में जलापूर्ति करनी चाहिए।

5. बाढ़ आने के क्या कारण हैं? इसके प्रबंधन का उपाय लिखिए।

उ०– बाढ़ आने के निम्नलिखित कारण हैं–

बाढ़ के कारण– बाढ़ को जन्म देने के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं–

(i) तीव्रगति से होने वाली दीर्घकालीन भारी वर्षा।

(ii) जल के साथ अवसादों का नदी की तली में जमाव हो जाना।

(iii) नदियों में एक साथ अत्यधिक जल राशि का पहुँच जाना।

(iv) नदी के प्रवाह मार्ग में अवरोध उत्पन्न हो जाना।

(v) नदी में एकत्र जल राशि का दोनों किनारों को तोड़कर दूर तक फैल जाना।

(vi) वनों को अंधाधुंध काटकर हरित आवरण को नष्ट कर देना।

(vii) भूमि का अवैज्ञानिक ढंग से उपयोग करना।

(viii) कृषि भूमि में अत्यधिक सिंचाई करना।

(ix) बाँध में अचानक दरार पड़ जाना या बाँध टूट जाना।

(x) बादल फट जाना।

बाढ़ आपदा का प्रबंधन– बाढ़ आपदा प्रबंधन हेतु बाढ़ से पूर्व, बाढ़ के दौरान तथा बाढ़ के बाद निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिए–

(i) बाढ़ संभावित क्षेत्रों की पहचान करके उन्हें मानचित्र पर प्रदर्शित कर देना चाहिए।

(ii) ऐसे क्षेत्रों में जल भराव रोकने के प्रयास किए जाने चाहिए।

(iii) बाढ़ संभावित क्षेत्रों से जल निकासी की समुचित व्यवस्था कर देनी चाहिए।

(iv) नदियों के किनारों पर पक्के तटबंध बनवा देने चाहिए।

(v) आवासों को बाढ़ संभावित क्षेत्रों में नहीं बनने देना चाहिए।

(vi) लोगों को बाढ़ से बचने के लिए उचित प्रशिक्षण देने की व्यवस्था करनी चाहिए।

(vii) बाढ़ आ जाने पर बचाव कार्य प्रारंभ कर देना चाहिए।

(viii) बाढ़ प्रभावित लोगों को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाकर उन्हे भोजन– वस्त्र तथा दवाइयाँ दी जानी चाहिए।

(ix) बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में महामारी फैलने से रोकने की उचित व्यवस्था कर देनी चाहिए।

(x) बाढ़ से प्रभावित लोगों के पुनर्वास की उचित व्यवस्था कर देनी चाहिए।

6. सुनामी क्या है? सुनामी आपदा प्रबंधन का वर्णन कीजिए।

उ०– महासागरों में उठने वाली विनाशकारी लहरों को सुनामी कहते हैं। सुनामी जापानी भाषा का शब्द है जो दो शब्दों सू (बंदरगाह) और नामी (लहर या तरंग) से बना है, अर्थात् सुनामी बंदरगाह की ओर आने वाली राक्षसी समुद्री लहरें हैं जो महासागर की तली के नीचे भूकंप आने के कारण उत्पन्न होती हैं।

सुनामी आपदा प्रबंधन– सुनामी आपदा प्रबंधन हेतु सुरक्षात्मक तथा प्रतिरोधस्वरूप निम्न कार्य किए जाने चाहिए–

(i) सुनामी की पूर्व सूचना प्रसारित करने वाली उच्च कोटि की तकनीक खोजी जाए। अब **उपग्रह प्रौद्योगिकी** तथा **सुनामीटर** के कारण सुनामी की आशंका की चेतावनी जारी करना संभव हो गया है।

(ii) सुनामी आने की संभावना होने पर तुरंत चेतावनी प्रसारित की जाए।

(iii) सुनामी आपदा के जोखिम और खतरों से बचाव के लिए विशेषज्ञों की टीम बनाई जाए।

(iv) आवासों को सागरीय तटों से दूर, ऊँचे तथा सुरक्षित स्थानों पर बनाया जाए।

(v) मकानों के निर्माण में स्टील के बने ढाँचों का प्रयोग किया जाए।

(vi) मकान ऊँचे तथा मजबूत छतों वाले बनाए जाएँ, ताकि आवश्यकता पड़ने पर छतों पर शरण ली जा सके।

(vii) चेतावनी की घोषणा होते ही सागर में तैर रही नौकाओं को बाहर तथा जलयानों को सुरक्षित डॉक्स में ले जाया जाए।

(viii) सुनामी आपदाग्रस्त क्षेत्रों के लिए तुरंत बचाव दल भेजे जाएँ।

(ix) मलवे में दबे शवों को निकालते समय सावधानी बरती जाए।

(x) घायलों को सुरक्षित शिविरों में पहुँचा कर उनकी उचित देखभाल की जाए तथा उनके पुनर्वास की उचित व्यवस्था की जाए।

7. ज्वालामुखी विस्फोट के कारण तथा इससे निकलने वाली गैसों के नाम बताइए।

उ०– ज्वालामुखी क्रिया के कारण– ज्वालामुखी क्रिया का संबंध भूगर्भीय हलचल से होता है। पृथ्वी के आंतरिक तापमान में वृद्धि, रेडियोधर्मी विखंडन, जलवाष्प की उत्पत्ति, भूकंप इत्यादि कारणों से ज्वालामुखी विस्फोट होते हैं।

ज्वालामुखी विस्फोट से निकलने वाली गैंसे– ज्वालामुखी विस्फोट से कार्बन डॉइ ऑक्साइड, कार्बन मोना ऑक्साइड, सल्फर डाई ऑक्साइड, हाइड्रोक्लोरीन, नाइट्रोजन, अमोनिया एवं अन्य अम्लीय–प्रभाव वाली जहरीली गैसें निकलकर वायुमंडल में फैल जाती हैं।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. प्राकृतिक आपदा किसे कहते हैं? किन्हीं दो प्राकृतिक आपदाओं का वर्णन कीजिए।

उ०– प्राकृतिक आपदा– प्रकृति बड़ी ममता और स्नेह से मानव का पालन पोषण शिशु की भाँति करती है। उद्‌दंड बालक से कभी–कभी माँ रुष्ठ होकर उसे प्रताड़ित भी कर देती है, ठीक उसी प्रकार प्रकृति भी रौद्र रूप धारण करके विनाशक हो

जाती है। प्रकृति द्वारा जल, स्थल अथवा वायुमंडल में उत्पन्न विनाशकारी घटना या बदलाव प्राकृतिक आपदा कहलाता है। भूस्खलन, बाढ़, सूखा, भूकंप, चक्रवाती तूफान एवं लहरें प्राकृतिक आपदाओं के उदाहरण है।

बाढ़– बाढ़ का शाब्दिक अर्थ है जल की मात्रा या संख्या में अत्यधिक वृद्धि हो जाना। देश में बढ़ती जनसंख्या को कहा जाता है कि देश में लोगों की बाढ़ ही आ गई है। बाढ़ एक प्राकृतिक आपदा के रूप में जल प्लावन से जुड़ी हुई है। नदी का जल जब अपने तटों को तोड़कर दूर तक भूमि पर फैलकर विनाश का कारण बनता है, बाढ़ कहलाता है।

सितंबर 2014 ई० में आई बाढ़ ने विश्व का स्वर्ग कहलाने वाली कश्मीर घाटी में विनाश का भयंकर तांडव मचाया था।

बाढ़ के कारण– बाढ़ को जन्म देने के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं–

(i) तीव्रगति से होने वाली दीर्घकालीन भारी वर्षा।
(ii) जल के साथ अवसादों का नदी की तली में जमाव हो जाना।
(iii) नदियों में एक साथ अत्यधिक जल राशि का पहुँच जाना।
(iv) नदी के प्रवाह मार्ग में अवरोध उत्पन्न हो जाना।
(v) नदी में एकत्र जल राशि का दोनों किनारों को तोड़कर दूर तक फैल जाना।
(vi) वनों को अंधाधुंध काटकर हरित आवरण को नष्ट कर देना।
(vii) भूमि का अवैज्ञानिक ढंग से उपयोग करना।
(viii) कृषि भूमि में अत्यधिक सिंचाई करना।
(ix) बाँध में अचानक दरार पड़ जाना या बाँध टूट जाना।
(x) बादल फट जाना।

बाढ़ के दुष्प्रभाव– बाढ़ आपदा के दुष्प्रभाव निम्नलिखित हैं–

(i) बाढ़ आने से मनुष्य और पशु मर जाते हैं, तथा संपत्ति को भारी क्षति पहुँचती है।
(ii) बाढ़ का जल खेतों में भरकर लहलहाती फसलों को चौपट कर देता है।
(iii) बाढ़ का जल समतल भूमि में कटाव करके उसे कृषि के लिए अयोग्य बना देता है।
(iv) बाढ़ का जल सड़कों को तोड़ देता है, रेलवे लाइनों तथा विद्युत खंभों को उखाड़ डालता है।
(v) बाढ़ के जल से भवन, दुकान, कार्यालय तथा अन्य संस्थान नष्ट हो जाते हैं।
(vi) बाढ़ का जल एकत्र हो जाने से क्षेत्र में मलेरिया, डेंगू तथा पेचिश आदि रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है।

बाढ़ आपदा का प्रबंधन– बाढ़ आपदा प्रबंधन हेतु बाढ़ से पूर्व, बाढ़ के दौरान तथा बाढ़ के बाद निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिए–

(i) बाढ़ संभावित क्षेत्रों की पहचान करके उन्हें मानचित्र पर प्रदर्शित कर देना चाहिए।
(ii) ऐसे क्षेत्रों में जल भराव रोकने के प्रयास किए जाने चाहिए।
(iii) बाढ़ संभावित क्षेत्रों से जल निकासी की समुचित व्यवस्था कर देनी चाहिए।
(iv) नदियों के किनारों पर पक्के तटबंध बनवा देने चाहिए।
(v) आवासों को बाढ़ संभावित क्षेत्रों में नहीं बनने देना चाहिए।
(vi) लोगों को बाढ़ से बचने के लिए उचित प्रशिक्षण देने की व्यवस्था करनी चाहिए।
(vii) बाढ़ आ जाने पर बचाव कार्य प्रारंभ कर देना चाहिए।
(viii) बाढ़ प्रभावित लोगों को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाकर उन्हें भोजन-वस्त्र तथा दवाइयाँ दी जानी चाहिए।
(ix) बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में महामारी फैलने से रोकने की उचित व्यवस्था कर देनी चाहिए।
(x) बाढ़ से प्रभावित लोगों के पुनर्वास की उचित व्यवस्था कर देनी चाहिए।

सूखा– जल जीवन है और सूखा मृत्यु। किसी क्षेत्र विशेष में जल स्रोतों का अभाव हो जाना सूखे का प्रतीक है। जल के अभाव में आर्द्रता घट जाती है जो सूखा आपदा को जन्म देती है, सूखा इन शब्दों में परिभाषित किया जा सकता है, "किसी क्षेत्र विशेष में औसत वार्षिक वर्षा के 75% से कम वर्षा होने की स्थिति को सूखा पड़ना कहा जाता है।" सूखा भयंकर आपदा बनकर टूट पड़ता है। सूखा आपदा फसलों, वृक्षों तथा जीव जंतुओं को लील जाती है।

सूखा पड़ने के कारण– सूखा आपदा का प्रत्यक्ष संबंध जल के अभाव में आर्द्रता का न होना है। इसके लिए अलग–अलग कई कारण उत्तरदायी होते हैं–

(i) कम वर्षा या वर्षा न होना।
(ii) राष्ट्र के 33% क्षेत्र का वर्षा से वंचित रह जाना या कम वर्षा होना।
(iii) सिंचाई की सुविधाएँ कम हो जाना।
(iv) लंबी गर्मी की ऋतु होने के कारण शुष्कता बढ़ जाना।
(v) भूस्तरीय तथा भूगर्भीय जल स्रोतों का अत्यधिक दोहन होना।
(vi) मानसून पवनों का असफल हो जाना।

सूखे के दुष्परिणाम– सूखा आपदा के मुख्य रूप से निम्नलिखित प्रभाव पड़ते हैं–

(i) सूखे के कारण फसलें सूख जाती हैं, और कृषि उत्पादन घट जाता है।
(ii) सूखा पड़ने से प्रतिव्यक्ति और राष्ट्रीय आय घटने से अर्थव्यवस्था दुर्बल हो जाती है।
(iii) सूखा पड़ने से पेयजल का अभाव उत्पन्न हो जाता है।
(iv) सूखा पड़ने से पशुओं के लिए चारे का अभाव उत्पन्न हो जाता है।
(v) सूखा जलाभाव का कारण बनता है, अत: लोग दूषित जल पीकर घातक बीमारियों का शिकार बन जाते हैं।
(vi) सूखे के कारण पेड़ पौधे सूख जाते हैं, और वन्य जंतु नष्ट हो जाते हैं।

सूखे से बचाव के उपाय– सूखा आपदा से बचाव हेतु निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं–

(i) सिंचाई के लिए जल संसाधनों की उचित व्यवस्था करनी चाहिए।
(ii) नहरों द्वारा सिंचाई की व्यवस्था सीमित रखनी चाहिए।
(iii) जल संसाधनों का उचित प्रयोग करने की योजना बना लेनी चाहिए।
(iv) नदियों को परस्पर जोड़कर सूखाग्रस्त क्षेत्रों में जलापूर्ति करनी चाहिए।
(v) सिंचाई के लिए टपकन सिंचाई प्रणाली अपनानी चाहिए।
(vi) देश में शुष्क कृषि विधि को बढ़ावा देना चाहिए।
(vii) बाँध बनाकर नदियों में कृत्रिम जल संचयन की उचित व्यवस्था करनी चाहिए।
(viii) वर्षा जल का उचित संचयन करके जलाभाव की कमी को पूरा किया जा सकता है।
(ix) वृक्षारोपण को बढ़ावा देकर हरित आवरण को बढ़ाया जाना चाहिए।
(x) राष्ट्रीय जल बजट का उचित प्रयोग किया जाना चाहिए।

भारत के सूखा प्रभावित क्षेत्र– भारत में सूखा आपदा प्रभावित क्षेत्र निम्नवत हैं–

(i) गुजरात का कच्छ क्षेत्र, कर्नाटक का पठार, तमिलनाडु का पठार, झारखंड, ओडिशा तथा राजस्थान का थार मरूस्थलीय क्षेत्र और जैसलमेर तथा बाड़मेर जिले भारत के अत्यधिक सूखा प्रभावित क्षेत्र हैं।
(ii) राजस्थान का पूर्वी भाग, हरियाणा, उत्तर प्रदेश का दक्षिणी भाग, महाराष्ट्र का पूर्वी भाग तथा ओडिशा का आंतरिक भाग भारत के मध्यम सूखाग्रस्त क्षेत्र हैं।
(iii) राजस्थान का उत्तरी भाग, हरियाणा का उत्तरी भाग, महाराष्ट्र, तमिलनाडु में कोयमबटूर के पठार तथा आंतरिक कर्नाटक के कुछ जिले सामान्य सूखाग्रस्त क्षेत्र है।

सूखा आपदा प्रबंधन– सूखा आपदा निरंतर बढ़ने की स्थिति में है, अत: उसका उचित प्रबंधन करना आवश्यक है। इसके लिए निम्नलिखित तात्कालिक तथा दीर्घकालिक उपाय किए जा सकते हैं–

(i) सूखाग्रस्त क्षेत्रों में पेय जल की आपूर्ति की उचित तथा त्वरित व्यवस्था कराई जानी चाहिए।
(ii) आपदा संभावित क्षेत्रों में पर्याप्त जल संचयन की व्यवस्था की जानी चाहिए।
(iii) सूखा आपदा को जन्म देने वाले कारणों का उचित निराकरण किया जाना चाहिए।

(iv) यहाँ पशुओं के लिए चारे और पानी की उचित व्यवस्था की जानी चाहिए।
(v) बीमार लोगों के लिए दवाइयाँ तथा भोजन सुलभ कराया जाना चाहिए।
(vi) सूखे के प्रभावों को हर तरह से कम से कम करने के प्रयास किए जाने चाहिए।

2. सूखा आपदा का वर्णन निम्न शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए।
(क) सूखा आपदा के कारण (ख) दुष्प्रभाव (ग) प्रबंधन

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

3. बाढ़ से आप क्या समझते हैं? बाढ़ आने के कारण तथा रोकने के उपायों का वर्णन कीजिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

4. चक्रवात क्या है? चक्रवात के किन्हीं पाँच प्रभावों को स्पष्ट कीजिए।

उ०– **चक्रवात–** चक्रवात, पवनों में पड़ने वाले गतिरोधों से उत्पन्न गर्तों के झंझावतों को कहा जाता है। चक्रवात उन चक्करदार पवनों के गर्त को कहते हैं, जिनके मध्य में निम्न वायुदाब तथा किनारे की ओर उच्च वायुदाब होता है। चक्रवाक वह समुद्री तूफान होता है जो समुद्री क्षेत्र से निकलकर तटीय भागों में पहुँच जाता है और भारी विनाश करता है। चक्रवात की गति 100 किमी० प्रतिघंटा से सैकड़ों किमी० प्रति घंटा तक होती है। इसमें पवनें किनारे से केंद्र की ओर झपट कर तूफान उत्पन्न कर देती हैं। द्रुत गति से दौड़ने वाला चक्रवात घनघोर वर्षा तथा अंधड़ के साथ भयंकर विनाश उत्पन्न कर देता है। चक्रवाती तूफान जब एक प्राकृतिक आपदा बनकर टूटता है, तो प्रभावित क्षेत्र में सब कुछ नष्ट कर देता है। चक्रवाक मुख्य रूप से उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में आते हैं।

चक्रवात की उत्पत्ति दो भिन्न तापमान वाली वायु राशियों के मिलने से होती है। चक्रवात उष्णता का वह यंत्र है, जिसको सागरीय जल से ऊर्जा मिलते ही वह भयंकर तूफान के रूप में तटवर्ती भागों में विनाश का हृदय विदाकर दृश्य प्रस्तुत कर देता है। गतिज ऊर्जा के कारण चक्रवात और अधिक वेगवान बनकर विनाशक तूफान बन जाता है।

चक्रवात के दुष्प्रभाव– चक्रवात स्वयं एक प्राकृतिक प्रलयकारी आपदा है, और जब वह तूफान बन जाता है, महाविनाशक राक्षस का रूप धारण कर लेता है। चक्रवाती तूफान के दुष्प्रभाव अग्रलिखित हैं–

(i) चक्रवात तूफान बनकर मूसलाधार वर्षा को जन्म देकर धरती को जल मग्न कर फसलों को तहस-नहस कर डालता है।
(ii) इससे घर, दुकान, कारखाने टूट जाते हैं, तथा अनेकों लोग अकाल काल के मुख में चले जाते हैं।
(iii) अनिवार्य सेवाएँ; जैसे– विद्युत, जलापूर्ति, टेलीफोन तथा संचार प्रणाली नष्ट अथवा बुरी तरह प्रभावित हो जाती है।
(iv) इसके कारण परिवहन सेवाएँ तथा संचार तंत्र अस्त व्यस्त हो जाते हैं।
(v) चक्रवात, बाढ़, तूफान, भूस्खलन, तथा मृदा अपरदन जैसी समस्याओं को जन्म दे डालता है।
(vi) चक्रवात महामारी के साथ-साथ वायरल रोगों को भी जन्म दे देता है।
(vii) चक्रवात सागर में तैरती नौकाओं और जलयानों को नष्ट कर देता है।
(viii) चक्रवात से बंदरगाह के डॉक्स भी टूट-फूट जाते हैं।
(ix) चक्रवात मार्ग में आने वाले मनुष्यों, पशुओं तथा वृक्षों को नष्ट कर डालता है।

5. चक्रवात तथा प्रति चक्रवात से आप क्या समझते हैं?

उ०– **चक्रवात–** इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 4 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रतिचक्रवात– प्रतिचक्रवात या विलोम चक्रवात, चक्रवात का एकदम उल्टा होता है। "प्रतिचक्रवात उन चक्करदार हवाओं से घिरे क्षेत्र को कहते हैं, जिसके बीच में उच्च वायुदाब तथा किनारे पर निम्न वायु दाब होता है।" प्रतिचक्रवात में पवनें केंद्र से बाहर की ओर चलती हैं। इन पवनों की गति मंद होती है। प्रतिचक्रवात वर्षा नहीं करता, बस इसके आगमन से आकाश बादलों से ढक जाता है और दीर्घकाल तक शीतलहर आ जाती है। ये न तो किसी प्रकार का विनाश करते हैं, और न इससे मौसम ही अधिक प्रभावित होता है।

6. भूकंप के आने के क्या कारण हैं? भूकंप के दुष्प्रभाव बताइए।

उ०– भूकंप वह प्राकृतिक आपदा है, जो अचानक प्रकट होकर आपदाग्रस्त क्षेत्र में तबाही मचा सकती है। किसी भूगर्भीय हलचल के कारण भूकंप से पृथ्वी का एक भाग अचानक हिल जाता है या जोरों से काँप उठता है। इस कंपन को भूचाल या भूकंप कहा जाता है। प्रो० सैल्सिबरी ने भूकंप को इन शब्दों में व्यक्त किया है, ''भूकंप वे प्राकृतिक कंपन हैं जो व्यक्ति से असंबंधित क्रियाओं के परिणामस्वरूप होते हैं।'' पृथ्वी के आंतरिक बलों के कारण चट्टानों पर आघात पड़ने पर भूपटल का एक विशेष क्षेत्र काँप उठता है। भूपटल के जिस केंद्र से भूकंप की लहरें उत्पन्न होती है, भूकंप उद्गम केंद्र कहलाता है। भूंकप उद्गम–केंद्र के ठीक ऊपर धरातल के जिस बिंदु पर भूकंप का प्रभाव होता वह भूकंप का अधिकेंद्र कहलाता है। विश्व में सर्वाधिक भूकंप जापान में आते हैं।

भूकंप की उत्पत्ति के कारण– भूकंप आपदा की उत्पत्ति के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं–

(i) भूकंप की उत्पत्ति का मुख्य कारण ज्वालामुखी का उदगार है। ज्वालामुखी का विस्फोट होते ही दूर–दूर तक के क्षेत्र काँप उठते हैं।

(ii) भूपटल पर दबाव अथवा तनाव के कारण भूगर्भीय चट्टानों में वलन, संपीडन तथा भ्रंशन की क्रियाएँ होने से भूकंप उत्पन्न होते हैं।

(iii) भूगर्भ में तापमान तथा वायुदाब बढ़ने से शैलों में जो असंतुलन उत्पन्न होता है, वह भूकंप को जन्म देने के लिए उत्तरदायी बन जाता है।

(iv) झील, तालाब आदि जल राशियों में भरा जल, नीचे की चट्टानों पर भार डालकर उनमें भूकंप उत्पन्न कर देता है।

(v) महाद्वीपों की प्लेटों में विर्वतनिक हलचलों द्वारा मुख्यत: भूकंपों की उत्पत्ति होती है।

(vi) महाद्वीप प्लेटों के साथ जुड़े हुए हैं, इन प्लेटों में **खिसकने** की क्रियाएँ भूकंप को जन्म देती हैं। भूकंप की माप भूकंपलेखी यंत्र द्वारा की जाती है।

भूकंप के दुष्प्रभाव– भूकंप आपदा महाविनाश लेकर आती है। इसके मानव जीवन पर निम्नलिखित प्रभाव पड़ते हैं।

(i) भूकंप आपदा अचानक प्रकट होकर जन–धन का भारी विनाश कर देती है। 1991 में उत्तरकाशी, 1992 में लातूर तथा 26 जनवरी, 2001 को गुजरात के भुज में आए विनाशकारी भूकंपों में कई हजार व्यक्तियों की मृत्यु हो चुकी है।

(ii) भूकंप के कारण नदियों के मार्ग बदल जाने से भयंकर बाढ़ आ जाती है।

(iii) भूकंप के कारण धरातल में बड़ी–बड़ी दरारें पड़ने से समतल क्षेत्र ऊबड़–खाबड़ बन जाता है।

(iv) भूकंप के कारण समुद्रों में ऊँची और भयानक सुनामी लहरें उठकर विनाश का कारण बन जाती हैं।

(v) भूकंप के कारण सड़कें टूट जाती हैं, जबकि रेलवे लाइनें मुड़कर यातायात के लिए बेकार हो जाती है।

7. सुनामी क्या है? सुनामी के दुष्प्रभाव तथा प्रबंधन के उपाय सुझाइए।

उ०– **सुनामी–** समुद्री लहरें कभी–कभी अत्यधिक विनाशकारी रूप धारण कर लेती हैं। इनकी ऊँचाई 10 से 15 मीटर होती है। ये लहरें मिनटों में ही तट तक पहुँच जातीं हैं तथा भयानक शक्ति के साथ तट से टकराकर कई मीटर ऊपर तक उठती हैं। तटवर्ती मैदानी क्षेत्रों में इनकी चाल 50 किमी/घंटा से भी अधिक होती है। ये समुद्री लहरें तट के आस–पास की बस्तियों को पूर्णरूपेण तबाह कर देतीं है। इन विनाशकारी समुद्री लहरों को सुनामी कहते हैं।

सुनामी के दुष्प्रभाव– सुनामी लहरों के कहर से पूरे विश्व में लाखों लोग काल–कलवित हो जाते हैं। संपूर्ण सुनामी प्रभावित क्षेत्र विनाश और तबाही का प्रतिरूप बन जाता है। भारत तथा इसके निकट तटीय देशों म्यांमार, इंडोनेशिया, मलेशिया, थाइलैंड, मालदीव आदि में सुनामी विनाश का ताँडव करती है। तटीय बस्तियाँ तहस–नहस हो जाती हैं। लाखों लोगों को जान–माल की हानि होती है।

सुनामी आपदा प्रबंधन– इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 6 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

35

मानवकृत आपदाएँ
(विस्फोट वैश्विक तापन, ओजोन क्षरण, रेडियोधर्मिता– कारण एवं प्रबंधन)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 305 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 306 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. मानवकृत आपदा क्या है? मानवकृत दो आपदाओं के नाम लिखिए।

उ०– विज्ञान और प्रौद्योगिकी के माध्यम से जहाँ मानव ने विकास की नई–नई बुलंदियों को हासिल किया है। वहीं आपदाओं के रूप में विनाश के द्वार भी खोल दिए हैं। मानव की क्रियाओं के कारण जिन संकटों का उदय हुआ है, उन्हें मानवकृत आपदाएँ कहते हें। दूसरे शब्दों में 'मानव की क्रियाओं और त्रुटियों के कारण उत्पन्न होने वाली विनाशकारी घटनाओं को मानवकृत आपदाएँ कहते हैं।' नाभिकीय विस्फोट, रासायनिक दुर्घटना, परिवहन दुर्घटनाएँ, ओजोन क्षरण, ग्रीन हाउस प्रभाव, रेडियोधर्मी- प्रदूषण आदि मानवकृत आपदाएँ हैं।

2. वैश्विक तापन के दो कारण क्या हैं? उसे रोकने के दो उपाय सुझाइए।

उ०– वैश्विक तापन के दो कारण–

(i) वायुमंडल में कार्बन डाई ऑक्साइड गैस की मात्रा में अत्यधिक वृद्धि होना।

(ii) खनिज तेल तथा अन्य ईंधनों के प्रयोग में अपार वृद्धि हो जाना।

वैश्विक तापन को रोकने के दो उपाय–

(i) वायुमंडल में बढ़ रही कार्बन डाई ऑक्साइड गैस की मात्रा पर प्रभावी नियंत्रण लगाना।

(ii) खनिज तेल तथा अन्य ईंधनों को जलाने पर प्रतिबंध लगाकर उसे सीमित करना।

3. ओजोन परत में क्षरण से क्या आशय है? इसके लिए उत्तरदायी दो कारण लिखिए।

उ०– वायुमंडल में अवस्थित ओजोन गैस की परत पृथ्वी का रक्षा कवच कही जाती है क्योंकि यह सूर्य से आने वाली हानिकारक पैराबैंगनी किरणों को रोककर उनके दुष्प्रभाव से पृथ्वी की रक्षा करती है। वैश्विक तापन और ग्रीन हाउस प्रभाव से ओजोन गैस की परत के पतली होने को ओजोन गैस की परत का क्षरण कहते हैं। इसके लिए उत्तरदायी दो कारण निम्न प्रकार हैं–

(i) रासायनिक अभिक्रियाओं का बढ़ता प्रभाव।

(ii) क्लोरोफ्लोरोकार्बन परमाणु द्वारा ओजोन के अणुओं का विनाश करना।

4. ग्रीन हाउस प्रभाव के लिए दो उत्तरदायी कारण क्या हैं? इसे रोकने के दो उपाय लिखिए।

उ०– ग्रीन हाउस प्रभाव के दो उत्तरदायी कारण निम्नवत् हैं–

(i) लकड़ी, कोयला, खनिज तेल एवं प्राकृतिक गैस आदि जैविक ईंधन ग्रीन हाउस गैस के जनक हैं।

(ii) औद्योगिक संस्थानों की भट्टियों से निकलने वाला धुआँ ग्रीन हाउस प्रभाव बढ़ाने वाला मुख्य स्त्रोत है।

ग्रीन हाउस प्रभाव को रोकने के दो उपाय निम्नवत् हैं–

(i) वायुमंडल में बढ़ रही कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा को कम करना।

(ii) कारखानों से निकलने वाली घातक तथा विषैली गैसों पर प्रभावी नियंत्रण लगाना।

5. रेडियाधर्मी प्रदूषण क्या है? इसे रोकने के दो उपाय लिखिए।

उ०– **रेडियाधर्मी प्रदूषण–** यूरेनियम तथा थोरियम परमाणु खनिजों के विखंडन की प्रक्रिया में रेडियोधर्मी पदार्थों की सक्रियता के कारण वायुमण्डल में फैलने वाला हानिकारक प्रभाव रेडियाधर्मी प्रदूषण कहलाता है। पर्यावरण प्रदूषण के माध्यम से रेडियोधर्मी तत्व मानव की अस्थियों में घुसकर कैंसर जैसे भयानक रोगों को जन्म देते हैं।

रेडियोधर्मी प्रदूषण को रोकने के उपाय– (i) परमाणु विस्फोटों पर तुरंत प्रभावी रोक लगनी चाहिए, (ii) परमाणु ऊर्जा रियेक्टर बस्तियों से दूर लगाए जाने चाहिए।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. भूमंडलीय तापन क्या है? इसके लिए कौन-कौन से कारण उत्तरदायी हैं? इसे रोकने के उपाय सुझाइए।

उ०– **भूमण्डलीय तापन–** औद्योगिक विकास, दहन क्रियाओं और वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड गैस की मात्रा बढ़ने से जैवमंडल के ताप में जो निरंतर वृद्धि हो रही है, उसे वैश्विक तापन अथवा ग्लोबल वार्मिंग या भूमंडलीय तापन कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, "वायुमंडल के औसत तापमान में निरंतर वृद्धि होने की प्रक्रिया को वैश्विक तापन कहा जाता है।" भूमंडलीय तापन की यह समस्या धीरे-धीरे आपदा का रूप धारण करती जा रही है।

भूमंडलीय तापन के कारण– भूमंडलीय तापन की समस्या निम्नलिखित कारणों से उत्पन्न हो रही है–

(i) वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड गैस की मात्रा में भारी वृद्धि हो जाना।
(ii) वनों का भारी विनाश हो जाना।
(iii) भूमि के उपयोग के स्वरूप में भारी फेर-बदल हो जाना।
(iv) खनिज तेल तथा अन्य ईंधनों के प्रयोग में अपार वृद्धि हो जाना।
(v) औद्योगिकरण का स्तर बहुत अधिक बढ़ जाना।
(vi) जनसंख्या के आकार एवं विस्तार में आश्चर्यजनक वृद्धि हो जाना।
(vii) कृषि उत्पादन के कारण वाष्पोत्सर्जन की मात्रा का बढ़ जाना।
(viii) फ्रिज तथा रेफ्रीजरेशन से फ्लोरोकार्बन की मात्रा में भारी वृद्धि हो जाना।

भूमंडलीय तापन के दुष्प्रभाव– भूमंडलीय तापन के दुष्प्रभावों से समूचा विश्व आहत हो रहा है। इसके प्रमुख दुष्प्रभाव निम्न हैं–

(i) जलवायु-चक्र में परिवर्तन आने से अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है।
(ii) वायुमंडल में निरंतर उष्णता बढ़ने से पृथ्वी के औसत तापमान में वृद्धि के कारण जीव-जगत त्रस्त हो रहा है।
(iii) तापमान बढ़ने से पर्वत शिखरों पर ग्लेशियर पिघल रहे हैं।
(iv) ग्लेशियर पिघलने से महासागरों में जल-स्तर बढ़ने से बाढ़ आने की संभावना उत्पन्न हो गई है।
(v) वायुमंडल के हरित गृह प्रभाव में वृद्धि हो रही है।

भूमंडलीय तापन का निराकरण– भूमंडलीय तापन का निराकरण निम्न उपायों से किया जा सकता है–

(i) वायुमंडल में बढ़ रही कार्बन डाइऑक्साइड गैस की मात्रा पर प्रभावी नियंत्रण लगाना।
(ii) वनों के विनाश को रोककर, वृक्षारोपण पर बल देना।
(iii) भूमि उपयोग व्यवस्था को वैज्ञानिक ढंग से लागू करना।
(iv) खनिज तेल तथा अन्य ईंधनों के जलाने पर प्रतिबंध लगाकर उसे सीमित बनाना।
(v) औद्योगिकरण के बढ़ते स्तर को घटाना।
(vi) तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या पर प्रभावी रोक लगाना।
(vii) कृषि में हरित क्रांति को सही ढंग से लागू कराना।
(viii) पर्यावरण के संतुलन को ठीक से बनाए रखना।

2. हरित गृह प्रभाव (ग्रीन हाउस प्रभाव) के लिए कौन-कौन से कारण उत्तरदायी हैं? इसे रोकने के उपाय बताइए।

उ०– **ग्रीन हाउस प्रभाव (हरित गृह प्रभाव)–** पृथ्वी के चारों ओर गैसों का जो विशाल आवरण है, वह वायुमंडल कहलाता है। सूर्य की किरणें पहले भूतल को गर्म करती हैं, गर्म तल को छूकर ही वायुमंडल गर्म होता है। वायुमंडल का यह आवरण सूर्य की किरणें भीतर तो आने देता है, परंतु उन्हें बाहर नहीं जाने देता है। ठीक वैसे ही जैसे काँच का बना घर तापमान को भीतर तो आने देता है परंतु उसके लौटने में बाधक बन जाता है। वायुमंडल के इस प्रभाव को ही ग्रीन हाउस प्रभाव कहा जाता है। पर्यावरण प्रदूषण के कारण कार्बन डाइऑक्साइड तथा विषैली गैसों का दुष्प्रभाव एक मोटा सा आवरण बना लेता है, जिससे

पृथ्वी के निकट तापमान बढ़ता रहता है। इसी से ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न हो जाता है।

ग्रीन हाउस प्रभाव के कारण– ग्रीन हाउस प्रभाव की उत्पत्ति के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी होते हैं–

(i) कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरोकार्बन तथा हाड्रोजन गैसें ग्रीन हाउस प्रभाव को बढ़ाने में सहायक हैं।

(ii) लकड़ी, कोयला, खनिज तेल एवं प्राकृतिक गैस आदि जैविक ईंधन ग्रीन हाउस प्रभाव के जनक हैं।

(iii) स्वचालित वाहनों में जीवाश्म ईंधन के प्रयोग से निकलने वाला धुँआ तथा कार्बन, ग्रीन हाउस प्रभाव को बढ़ाता है।

(iv) औद्योगिक संस्थानों में भट्टियों से निकलने वाला धुँआ ग्रीन, हाउस प्रभाव बढ़ाने वाला मुख्य स्रोत है।

(v) ज्वालामुखी के उद्‌गार से निकलने वाला धुँआ, राख तथा गैसें ग्रीन हाउस प्रभाव को जन्म देती हैं।

(vi) वनस्पतियों की सड़न से उत्पन्न दुर्गंधमय गैसें ग्रीन हाउस प्रभाव की जन्मदाता हैं।

(vii) वनों के अंधाधुँध कटान होने से ग्रीन हाऊस प्रभाव में निरंतर वृद्धि हुई है।

ग्रीन हाउस दुष्प्रभावों को नियंत्रित करने के उपाय– ग्रीन हाउस दुष्प्रभावों को नियंत्रित करने के लिए निम्नलिखित उपाय काम में लाए जा सकते हैं–

(i) वायुमंडल में बढ़ रही कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा को कम करना।

(ii) वृक्षारोपण द्वारा हरित पट्टी क्षेत्र को बढ़ाना।

(iii) कारखानों से निकलने वाली घातक तथा विषैली गैसों पर प्रभावी नियंत्रण लगाना।

(iv) जेट वायुयानों से छोड़ी जाने वाली विषैली गैसों पर रोक लगाना।

(v) क्लोरोफ्लोरोकार्बन तथा मोनो ऑक्साइड गैसों को वायुमंडल में मिलने से रोकना।

3. रेडियोधर्मी प्रदूषण के क्या कारण हैं? इसे रोकने के उपाय बताइए।

उ०– रेडियोधर्मी प्रदूषण के कारण निम्नवत् हैं–

(i) मानवीय भूल, तकनीकी अकुशलता या कुप्रबंध एवं अव्यवस्था जिसके फलस्वरूप परमाणु ईंधन संयंत्रों में विस्फोट या रेडियोधर्मी पदार्थो। के रिसाव के कारण तबाही की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

(ii) मानवीय दुष्प्रवृतियाँ; जो युद्ध, आतंकवाद या राजनीतिक स्वार्थों के वशीभूत होती रहीं हैं; भी नाभिकीय विस्फोट का कारण होती हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा दूसरे विश्व युद्ध में जापान के नागासाकी व हिरोशिमा नगरों व वियतनाम युद्ध के दौरान राजनीतिक स्वार्थों के कारण ही परमाणु बमों का प्रयोग किया गया था।

(iii) नाभिकीय विखंडन के फलस्वरूप इलेक्ट्रॉन, प्रोटोन, न्यूट्रान तथा एल्फा, बीटा, गामा किरणें वायुमण्डल में मिलकर हानिकारक बनाकर रेडियाधर्मी प्रदूषण को जन्म देते हैं।

रेडियोधर्मी प्रदूषण पर नियंत्रण करने के उपाय– रेडियोधर्मी प्रदूषण पर नियंत्रण करना नितांत आवश्यक है। इसे नियंत्रित करने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं–

(i) परमाणु विस्फोटों पर तुरंत प्रभावी रोक लगा देनी चाहिए।

(ii) परमाणु ऊर्जा रिएक्टर्स बस्तियों से दूर लगाए जाने चाहिए।

(iii) परमाणु ऊर्जा रिएक्टर्स में रख-रखाव के साथ-साथ दुर्घटनाओं से निबटने की चाक-चौबंद व्यवस्था की जानी चाहिए।

(iv) परमाणु शक्ति का उपयोग चिकित्सा, शांति और औद्योगिक कार्यों के लिए ही किया जाना चाहिए।

(v) युद्ध तथा सैन्य अस्त्र-शस्त्रों के उपयोग के लिए परमाणु शक्ति का उपयोग तुरंत प्रतिबंधित कर दिया जाना चाहिए।

(vi) पर्यावरण की समय-समय पर जाँच कराकर परमाणु तत्वों की उपस्थिति की जाँच कराई जानी चाहिए।

(vii) परमाणु कचरे को सुरक्षित रूप से भूमि में गहराई पर दबा देना चाहिए।

(viii) अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कानून बनाकर भी रेडियोधर्मी प्रदूषण पर रोक लगाई जा सकती है।

वास्तव में रेडियोधर्मी प्रदूषण मानव की ही देन है, वही उस पर ठीक ढंग से नियंत्रण बना सकता है।

4. रेडियोधर्मी प्रदूषण के स्रोत कौन-कौन से हैं? इसके दुष्प्रभाव स्पष्ट कीजिए।

उ०– रेडियोधर्मी प्रदूषण के स्रोत– रेडियोधर्मी प्रदूषण निम्नलिखित स्रोतों से उत्पन्न होता है–

(i) परमाणु परीक्षण के लिए जो नाभिकीय विस्फोट किए जाते हैं, उनसे निकलने वाले तत्व रेडियोधर्मी प्रदूषण के स्रोत होते हैं जो अपने विकिरण द्वारा समस्त जैवमंडल के घटकों को प्रभावित करते हैं।

(ii) परमाणु भट्टियों में परमाणु ईंधन का प्रयोग होता है, उनसे निकलने वाले तत्व प्रदूषण के स्रोत होते हैं।

(iii) परमाणु ऊर्जा के संयंत्रों (बिजलीघरों) में दुर्घटनाएँ होने के फलस्वरूप रिसने वाली गैसें, रेडियोधर्मी प्रदूषण के स्रोत बन जाती हैं।

(iv) परमाणु बम तथा हाइड्रोजन बम के निर्माण में यूरेनियम, थोरियम, पोलोनियम का प्रयोग होता है। इनसे रेडियोधर्मी पदार्थ का छोटे-छोटे कणों के रूप मे वायुमंडल में फैलाने का खतरा बना रहता है।

(v) खनिज पदार्थों का खनन करते समय प्रकृति में विद्यमान अनेक रेडियोधर्मी तत्व धूल के साथ उड़कर वायुमंडल में पहुँचकर रेडियोधर्मी प्रदूषण के स्रोत बन जाते हैं।

(vi) चिकित्सा के क्षेत्र में प्रयुक्त होने वाले एक्स-रे, अल्ट्रासाउंड तथा सी०टी० स्कैन आदि में रेडियोधर्मी पदार्थों का बर्हिगमन होता है,जो रेडियोधर्मी प्रदूषण के स्रोत बन जाते हैं।

(vii) अनुसंधानशालाओं में परमाणु विकास के लिए जो शोध कार्य चलते हैं, उनसे निकलने वाले रेडियो धर्मी तत्व, रेडियोधर्मी प्रदूषण के स्रोत बन जाते हैं।

रेडियोधर्मी प्रदूषण के दुष्परिणाम– रेडियोधर्मी प्रदूषण एक खतरनाक मानवकृत आपदा है। इसके मानव के जीवन पर निम्नलिखित दुष्प्रभाव पड़ते हैं–

(i) रेडियोधर्मी प्रदूषण के कारण मानव के शरीर में खून की कमी, बालों का झड़ना, ल्यूकोमिया तथा अस्थियों का कैंसर जैसे रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

(ii) यह प्रदूषण तंत्रिका तंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

(iii) इस प्रदूषण के कारण गर्भ से विकलांग शिशुओं का जन्म होता है।

(iv) परमाणु विस्फोट के समीप का 16 किमी० का क्षेत्र वनस्पति विहीन हो जाता है।

(v) रेडियोधर्मी प्रदूषण तीव्र वर्षा तथा तूफान जैसी प्राकृतिक आपदाओं को जन्म देकर विनाश का कारण बनता है।

(vi) रेडियोधर्मी प्रदूषण पशुओं तथा अन्य जीवों को भारी हानि पहुँचाता है।

(vii) रेडियोधर्मी प्रदूषण के कारण कीट-पंतगों का जीवन-चक्र ही बदल जाता है।

5. नाभिकीय परमाणु विस्फोट जनित आपदाओं पर लेख लिखिए।

उ०– **नाभिकीय परमाणु विस्फोट–** नाभिकीय ऊर्जा से युक्त परमाणु बमों के विस्फोट से उत्पन्न आपदा 'नाभिकीय विस्फोट आपदा' कहलाती है। परमाणु बमों के परीक्षण, युद्ध के समय परमाणु बमों के हमले (अमेरिका द्वारा जापान पर परमाणु बमों से हमला), परमाणु ऊर्जा संयंत्रों में रेडियोधर्मी पदार्थों के रिसाव आदि से इस प्रकार की आपदाएँ उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार के विस्फोट या रिसाव से निकलने वाले एल्फा, बीटा तथा गामा विकिरणों से जान व माल की भारी तबाही होती है। ऐसे विकिरण नाभिकीय अणुओं के विखण्डन से उत्पन्न होते हैं।

कारण– नाभिकीय विस्फोटों के पीछे दो मूल कारण निहित होते हैं–

(i) मानवीय भूल व अकुशलता– मानव की भूल, अव्यवस्था, अकुशलता, कुप्रबंध आदि के कारण परमाणु संयंत्रों में विस्फोट या रेडियोधर्मी पदार्थों के रिसाव के कारण भारी तबाही की स्थिति उत्पन्न होती है।

(ii) मानवीय दुष्प्रवृतियाँ– युद्ध, आतंकवाद आदि की घटनाएँ मानव के राजनीतिक स्वार्थों तथा दुष्प्रवृतियों के कारण होतीं हैं।

नाभिकीय परमाणु विस्फोट के स्रोत, प्रभाव तथा नियंत्रण के उपाय– इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-3 व 4 में रेडियाधर्मी प्रदूषण संबंधी स्रोत, दुष्प्रभाव एवं नियंत्रण के उपायों का अवलोकन कीजिए।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई-2 (ख) : भौतिक संसाधन एवं उनका दोहन

36 भूमि संसाधन

(महत्व, विभिन्न उपयोग, मानव जीवन पर प्रभाव-मृदा के संदर्भ में)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 314 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 314 व 316 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. भूमि किसे कहते हैं? भूमि की दो विशेषताएँ लिखिए।

उ०– भूमि सामान्य रूप से धरती की ऊपरी सतह को कहा जाता है, जो मानव की कार्यस्थली है। भूमि के अंतर्गत वे सभी पदार्थ और शक्तियाँ सम्मिलित हैं, जो प्रकृति ने हमें पृथ्वी-तल पर, पृथ्वी के नीचे तथा पृथ्वी के ऊपर नि:शुल्क प्रदान किए हैं, जैसे– खनिज पदार्थ, नदियाँ, समुद्र, वर्षा, वनस्पति, जलवायु, हवा, धूप, पर्यावरण, प्रकाश आदि।

भूमि की दो विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) भूमि की मात्रा निश्चित और सीमित है, उसे घटाया या बढ़ाया नहीं जा सकता है।

(ii) भूमि-प्रकृति का नि:शुल्क उपहार है। श्रम तथा पूँजी व्यय करने पर वह मूल्यवान बन जाती है।

2. काली मिट्टी भारत के किन दो राज्यों में सर्वाधिक पायी जाती है?

उ०– काली मिट्टी भारत के महाराष्ट्र तथा गुजरात राज्य में सर्वाधिक पायी जाती हैं।

3. भारत की जलोढ़ मिट्टी की प्रमुख तीन विशेषताएँ लिखिए।

उ०– भारत में पाए जाने वाली जलोढ़ मिट्टी की तीन विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) जलोढ़ मिट्टी में उर्वरकता तथा जीवांश अधिक पाए जाते हैं।

(ii) इस मिट्टी में पोटाश, सूचना तथा फास्फोरस के अंश अधिक पाए जाते हैं।

(iii) जलोढ़ मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा कम होती है।

4. जलोढ़ मिट्टी का निर्माण कैसे होता है? खादर और बाँगर क्षेत्र में अंतर बताइए।

उ०– नदियों द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों से बहाकर लाई गई जीवांश युक्त मिट्टी से जलोढ़ मिट्टी का निर्माण होता है।

खादर व बांगर क्षेत्र में अन्तर– खादी क्षेत्र में प्रतिवर्ष आने वाली बाढ़ों से नवीन काँव या जलोढ़ मिट्टी बिछती रहती है। इस क्षेत्र की मिट्टी में नमी धारण करने की क्षमता अधिक होती है। इस क्षेत्र की जलोढ़ मिट्टी बांगर क्षेत्र से अधिक उर्वर होती है। जबकि बांगर क्षेत्र में नदियों की बाढ़ का पानी नहीं पहुँच पाता। इस क्षेत्र की मिट्टी को पुरातन काँप या जलोढ़ मिट्टी कहते हैं। इस क्षेत्र की मिट्टी में कहीं-कहीं कंकड़ भी पाए जाते हैं। बांगर क्षेत्र का मिट्टी की अपेक्षा कम उर्वर होती है।

5. जलोढ़ मिट्टी और काली मिट्टी के अंतर को स्पष्ट कीजिए।

उ०– जलोढ़ मिट्टी और काली मिट्टी में अंतर–

जलोढ़ मिट्टी	काली मिट्टी
(i) इस मिट्टी का निर्माण नदियों द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों से बहाकर लाई गई जीवांश युक्त मिट्टी द्वारा हुआ है।	(i) इस मिट्टी का निर्माण ज्वालामुखी उद्गार से निकलने वाले लावे तथा राख आदि के जमने से हुआ है।
(ii) इस मिट्टी का रंग हल्का भूरा होता है।	(ii) इस मिट्टी का रंग काला होता है।
(iii) इस मिट्टी में पोटाश, फास्फोरस, चूना एवं जीवांशों की मात्रा अधिक होती है।	(iii) इस मिट्टी में लोहा, मैग्नीशियम, चूना, एल्यूनिनियम तथा जीवांशों की मात्रा अधिक होती है।

(iv) इस मिट्टी में गन्ना, गेहूँ, चावल, जूट, तंबाकू आदि उगाया जाता है।	(iv) इस मिट्टी में कपास, सब्जियाँ, फल, जवार, बाजरा, मूँगफली और सोयाबीन आदि फसलें उगायी जाती हैं।

6. जलोढ़ मिट्टी और लैटराइट मिट्टी के अंतर को स्पष्ट कीजिए।

उ०– जलोढ़ मिट्टी और लैटराइट मिट्टी में अंतर–

जलोढ़ मिट्टी	लैटराइट मिट्टी
(i) इस मिट्टी का रंग हल्का भूरा होता है।	(i) लैटाइट मिट्टी का रंग लाल व पीले रंग का मिश्रण होता है।
(ii) यह मिट्टी बारीक तथा चिकने कणों से युक्त होती हैं।	(ii) यह मिट्टी कंकड़ तथा पत्थर के टुकड़ों से युक्त होती है।
(iii) इस मिट्टी में पोटाश, चूना तथा फास्फोरस के अंश अधिक पाए जाते हैं।	(iii) इस मिट्टी में चूना, फास्फोरस तथा नाइट्रोजन की मात्रा बहुत कम होती है।
(iv) यह मिट्टी अत्यधिक उपजाऊ है।	(iv) यह मिट्टी जलोढ़ मिट्टी की अपेक्षा कम उपजाऊ है।
(v) यह मिट्टी मुख्य रूप से गंगा और ब्रह्मपुत्र नदी के मैदान तथा डेल्टाई क्षेत्रों में पाई जाती है।	(v) यह मिट्टी मुख्य रूप से दक्कन के पठारी क्षेत्र में पाई जाती है।
(iv) इस मिट्टी में मुख्य रूप से गन्ना, गेहूँ, चावल, जूट, तम्बाकू, पटसन आदि फसलें उगायी जाती हैं।	(iv) इस मिट्टी में मुख्य रूप से चावल, गन्ना, काजू, चाय, रबड़ तथा कहवा आदि फसलें उगाई जाती हैं।

7. काली मिट्टी और लैटराइट मिट्टी में क्या अंतर पाया जाता है?

उ०– काली मिट्टी और लैटराइट मिट्टी में अंतर–

काली मिट्टी	लैटराइट मिट्टी
(i) इस मिट्टी का निर्माण ज्वालामुखी उद्गार से निकलने वाले लावे के जमाव के बाद निर्मित चट्टानों के अपरदन से हुआ है।	(i) इस मिट्टी का निर्माण 200 सेमी० से अधिक वार्षिक वर्षा वाले पर्वतीय ढ़ालों पर लाल रंग की चट्टानों के अपरदन से हुआ है।
(ii) यह काली, चिकनी और बारीक कणों से युक्त मिट्टी है।	(ii) यह लाल, मोटे कणों से युक्त कंकरीली मिट्टी है।
(iii) इस मिट्टी में लोहा, मैग्नीशियम, जीवांश, चूना तथा ऐल्यूमीनियम अधिक मात्रा में पाया जाता है।	(iii) इस मिट्टी में चूना, फास्फोरस, मैग्नीशियम, नाइट्रोजन तथा पोटाश का अभाव होता है।
(iv) कपास, चावल, सब्जियाँ, फल, मूँगफली, तंबाकू, सोयाबीन आदि इस मिट्टी की प्रमुख फसलें हैं।	(iv) चाय, कहवा, काजू, चावल, रबड़ आदि इस मिट्टी की प्रमुख फसलें हैं।

8. भूमि के कोई दो उपयोग लिखिए।

उ०– भूमि के दो उपयोग निम्नलिखित हैं–

(i) भूमि का उपयोग प्राथमिक उद्योग कृषि, पशुपालन, वन-व्यवसाय आदि में किया जाता है।

(ii) बिजली, कोयला, तेल, ईंधन तथा ऊर्जा के संसाधनों के विकास में भूमि का उपयोग किया जाता है।

9. भूमि संरक्षण क्यों आवश्यक है? कोई दो कारण लिखिए।

उ०– भूमि किसी राष्ट्र के लिए प्रकृति द्वारा प्रदत्त सर्वश्रेष्ठ एवं अमूल्य उपहार है। भूमि ही राष्ट्र के आर्थिक विकास की आधारशिला है। अत: इतनी उपयोगी राष्ट्रीय धरोहर का संरक्षण नितांत आवश्यक है। भूमि संरक्षण की आवश्यकता के दो

कारण निम्नलिखित हैं–

(i) भारत एक कृषि प्रधान देश है और कृषि ही भारतीय अर्थव्यवस्था का मूल आधार है। अत: अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए मृदा संरक्षण करना आवश्यक है।

(ii) भूमि उपयोग को सही तथा वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने के लिए इसका संरक्षण आवश्यक है।

10. मृदा संरक्षण के तीन उपाय लिखिए।

उ०– मृदा संरक्षण के तीन उपाय निम्नलिखित हैं–

(i) पर्वतीय ढ़ालों में सीढ़ीदार खेत बनाकर तथा भूमि कटाव का नियंत्रण करके मृदा संरक्षण किया जा सकता है।

(ii) खेतों की मेढ़बंदी तथा चकबंदी द्वारा भूरक्षण पर रोक लगाकर, मृदा संरक्षण किया जा रहा है।

11. भूमि संसाधन से क्या तात्पर्य है? इसका महत्व लिखिए।

उ०– भूमि संसाधन– भूमि संसाधन प्रकृति द्वारा प्रदान वह अमूल्य तथा श्रेष्ठतम उपहार है, जिस पर समस्त वनस्पतियों और जीवधारियों का जीवन निर्भर करता है।

भूमि संसाधन का महत्व– भूमि उत्पादन का प्राथमिक तथा अनिवार्य उत्पादन है भूमि के बिना कोई भी उत्पादन कार्य संभव नहीं है। उत्पादन कार्य में भूमिका वही स्थान है जो बच्चे के जन्म में माता का होता है। इसलिए धरती को माता कहकर पुकारा जाता है। भूमि संसाधन का महत्व निम्नवत् है–

(i) जीवधारियों के जीवन का आधार
(ii) आर्थिक विकास का आधार
(iii) प्राथमिक उद्योगों का आधार
(iv) शक्ति के साधनों का आधार
(v) औद्योगिक विकास का आधार
(vi) व्यापार का आधार
(vii) परिवहन तथा संचार के साधनों का आधार
(viii) रोजगार का आधार

12. मृदा अपरदन के किन्हीं तीन कारणों पर प्रकाश डालिए।

उ०– मृदा अपरदन के तीन कारण निम्नलिखित हैं–

(i) मूसलाधार वर्षा के कारण मिट्टी की मुलायम परत कटकर भूमि कटाव का कारण बनती है।

(ii) वृक्षों के अंधाधुँध कटान के कारण भूमि का हरित आवरण नष्ठ को जाने से, वह मृदा अपरदन या कटाव का शिकार बन जाती है।

(iii) भूमि का अत्यधिक ढालू होना भी मृदा अपरदन का मुख्य कारण है।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. भारत में पाई जाने वाली मिट्टियों का वर्गीकरण कीजिए तथा उनके महत्व एवं विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

उ०– भारत की मिट्टियों का वर्गीकरण (प्रकार)– प्रकृति ने भारत को मिट्टियों के इंद्रधनुषी प्रकारों से संपन्न बनाया है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अनुसार यहाँ 19 प्रकार की मिट्टियाँ पाई जाती हैं। अध्ययन की सुविधा के लिए भारत की मिट्टियों का स्थूल वर्गीकरण निम्नवत् किया जा सकता है–

(i) जलोढ़ या काँप मिट्टी– नदियों द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों से बहाकर लाई गई जीवांश युक्त मिट्टी अथवा जलोढ़ मिट्टी, कछारी या दोघट मिट्टी कहा जाता है। नदियाँ प्रतिवर्ष अपनी बाढ़ से नवीन जलोढ़ मिट्टी का निर्माण करती हैं, जिसे खादर कहा जाता है, जबकि जिन भागों में बाढ़ का जल नहीं पहुँच पाने के कारण पुरानी काँप मिट्टी पाई जाती है, उसे बाँगर कहते हैं। नदियों के डेल्टाई भागों में बारीक तथा चिकने कणों से युक्त जो मिट्टी मिलती है उसे डेल्टाई जलोढ़ मिट्टी कहते हैं।

(क) जलोढ़ मिट्टी के क्षेत्र– भारत में 7.68 लाख वर्ग किमी० क्षेत्र पर जलोढ़ मिट्टी का विस्तार है। गंगा–ब्रह्मपुत्र नदी का मैदान जलोढ़ मिट्टी का प्रधान क्षेत्र है। जलोढ़ मिट्टी पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल राज्यों में मुख्य रूप से पाई जाती है। गंगा नदी, महानदी, कृष्णा नदी तथा कावेरी नदी के डेल्टाओं में डेल्टाई जलोढ़ मिट्टी पाई जाती है।

(ख) जलोढ़ मिट्टी की विशेषताएँ– जलोढ़ मिट्टी में कुछ खास विशेषताएँ पाई जाती हैं, जो निम्नलिखित हैं–

(अ) जलोढ़ मिट्टी में उर्वरकता तथा जीवांश अधिक पाए जाते हैं।

(ब) इस मिट्टी में पोटाश, चूना तथा फॉस्फोरस के अंश अधिक पाए जाते हैं।
(स) इस मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा कम होती है।
(द) यह मिट्टी उपजाऊ होने के साथ-साथ गहराई तक पाई जाती है।
(य) शुष्क क्षेत्र की मिट्टी में क्षारीय तत्व पाए जाते हैं।
(र) खादर क्षेत्र की जलोढ़ मिट्टी प्रतिवर्ष आने वाली बाढ़ों से उर्वरता प्राप्त करती रहती है।

(ग) उपयोगिता या महत्त्व– जलोढ़ मिट्टी अपने उपजाऊपन के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध होती है। इसमें बिना खाद दिए भी फसलें उगाई जा सकती हैं। जलोढ़ मिट्टी में मुख्य रूप से चावल, जूट, गन्ना, गेहूँ, तंबाकू, पटसन तथा चाय आदि की फसलें उगाई जाती हैं। डेल्टाई क्षेत्र चावल तथा जूट उत्पादन के लिए धनी हैं।

(ii) काली या रेगुर मिट्टी– इस मिट्टी का रंग काला होता है तथा यह देखने में कठोर दिखाई पड़ती है। काली मिट्टी का निर्माण ज्वालामुखी उद्गार से निकलने वाले लावे तथा राख आदि के जमने से होता है। काले रंग के कारण इसे काली या रेंगुर मिट्टी कहते हैं। यह मिट्टी बारीक कणों के मिश्रण से बनी होने के कारण नमी को अधिक समय तक सोखकर सुरक्षित रखने की क्षमता रखती है, यही कारण है कि काली या रेगुर मिट्टी को **कपास की मिट्टी** कहा जाता है।

(क) काली मिट्टी के क्षेत्र– भारत में काली मिट्टी का मुख्य क्षेत्र दक्कन के पठार में पाया जाता है। काली मिट्टी भारत के 5 लाख वर्ग किमी० से अधिक क्षेत्र पर विस्तृत है। मुख्य रूप से काली मिट्टी का विस्तार गुजरात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक के उत्तरी भाग तथा बुंदेलखंड में पाया जाता है।

(ख) काली मिट्टी की विशेषताएँ– काली मिट्टी अपनी निम्नलिखित विशेषताओं के माध्यम से पहचानी जाती है–

(अ) यह मिट्टी काले रंग की होती है।
(ब) इस मिट्टी में नमी धारण करने की अद्भुत क्षमता पाई जाती है।
(स) जल के संयोग से यह मिट्टी चिपचिपी तथा सूखने पर एकदम कठोर हो जाती है।
(द) शुष्कता के कारण इस मिट्टी में दरारें पड़ जाती हैं।
(य) कठोर होने पर भी यह मिट्टी जुताई करते ही भुरभुरी बन जाती है।
(र) इस मिट्टी में विद्यमान जीवांश की पर्याप्त मात्रा इसे उर्वरक बनाती है।
(ल) इस मिट्टी में लौह, पोटाश, मैग्नीशियम, ऐल्युमिनियम तथा चूने के अंश अधिक पाए जाते हैं।
(व) काली मिट्टी में नाइट्रोजन के अंश कम होते हैं।

(ग) उपयोगिता या महत्त्व– काली या रेगुर मिट्टी फसलें उत्पादन की दृष्टि से बहुत उपयोगी है। यह जिन क्षेत्रों में पाई जाती है, उनके लिए कृषि की जीवनरेखा बन कर उभरी है। इस मिट्टी में कपास, सोयाबीन, चावल, गन्ना, तंबाकू, ज्वार, बाजरा तथा मूँगफली की फसलें उगाई जाती हैं। काली या रेगुर मिट्टी की मुख्य उपज कपास है। काली मिट्टी ने गुजरात तथा महाराष्ट्र में कपास जैसी व्यापारिक फसल उगाकर इन राज्यों में आर्थिक विकास की गंगा बहा दी हैं।

(iii) लाल तथा पीली मिट्टी– लाल तथा पीली मिट्टियों का जन्म उन लौह अंश युक्त शैलों से होता है, जिनमें जल या नमी के संयोग से जंग लग जाती है। जंग लगी शैलों के टूटे-फूटे कणों से लाल या पीले रंग की मिट्टियाँ बन जाती हैं। लाल और पीली मिट्टियों का निर्माण विविध परतें जमने के कारण होता है अत: इनमें परतें दृष्टिगोचर होती हैं। लाल और पीली मिटट्याँ भारत के लगभग 6 लाख वर्ग किमी० क्षेत्र में मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश, ओडिशा, कर्नाटक, तमिलनाडु आदि राज्यों में पाई जाती हैं। लाल और पीली मिट्टियाँ अनुपजाऊ होती हैं, अत: इस मिट्टी में मोटे अनाज ज्वार, बाजरा, मूँगफली, मक्का, दलहन, कहवा आदि तथा घाटियों में गन्ने की फसलें उगाई जाती है।

(iv) लैटराइट मिट्टी– इस मिट्टी का रंग लाल एवं पीले रंग का मिश्रण होता है। यह मिट्टी कंकड़ और पत्थर के टुकड़ों से युक्त होती है। लैटराइट मिट्टी में चूना, फॉस्फोरस तथा नाइट्रोजन की मात्रा बहुत कम होती है। कहीं-कहीं इस मिट्टी में चिकनी तथा बारीक कणों वाले अवसाद भी मिलते हैं। यह मिट्टी दक्कन के पठार पर लगभग 1.22 लाख

वर्ग किमी० क्षेत्र में पाई जाती है। लैटराइट मिट्टी में चावल, गन्ना, काजू, चाय, रबड़ तथा कहवा की फसलें उगाई जाती हैं। लैटराइट मिट्टी से युक्त पर्वतीय ढाल चाय के बागानों के क्षेत्र बन गए हैं।

(v) मरुस्थलीय मिट्टी– बलुई मिट्टी को मरुस्थलीय मिट्टी कहते हैं। यह बालू युक्त मिट्टी लवणता और क्षारीय गुणों से युक्त होती है। यह मिट्टी मुलायम और प्रवेश्य होती है, अर्थात् यह जल को एकदम सोख लेती है। यह नमी धारण करने में असफल रहती है। बलुई मिट्टी को पवन के झोकें एक स्थान से उड़ाकर दूसरे स्थान पर जमा कर देते हैं। भारत में इस मिट्टी का विस्तार लगभग 1.14 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल पर मिलता है। मरुस्थलीय मिट्टी हरियाणा, पश्चिमी राजस्थान तथा गुजरात राज्यों में पाई जाती है। मरुस्थलीय मिट्टी में ज्वार, बाजरा, मूँग, उड़द, तिलहन तथा मूँगफली की फसलें उगाई जाती हैं।

(vi) पर्वतीय मिट्टी– पर्वतीय क्षेत्रों में कंकड़, पत्थर तथा बालु युक्त जो मिट्टी पाई जाती है, उसे पर्वतीय मिट्टी कहा जाता है। पर्वतीय मिट्टी में चूने की मात्रा अधिक पाई जाती है। यह मिट्टी जलोढ़, टर्शियरी, लावा, मैग्मा तथा डोलोमाइट तत्वों से युक्त होती है। यह मिट्टी कम उपजाऊ होती है। भारत में इस मिट्टी का विस्तार लगभग 2.80 लाख वर्ग किमी० क्षेत्रफल पर पाया जाता है। पर्वतीय मिट्टी जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, सिक्किम तथा पश्चिम बंगाल राज्यों में पाई जाती हैं। इस मिट्टी में चीड़ व साल के पेड़ और चावल, आलू तथा चाय की फसलें खूब उगाई जाती हैं।

2. काली मिट्टी का वर्णन निम्न शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए–

(क) क्षेत्र (ख) विशेषताएँ (ग) उपयोगिता

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

3. जलोढ़ मिट्टी से आप क्या समझते हैं? उसका वर्णन निम्न शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए–

(क) क्षेत्र (ख) विशेषताएँ (ग) उत्पादित फसलें

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

4. भूमि उपयोग से आप क्या समझते हैं? भारत में भूमि उपयोग के प्रारूप पर प्रकाश डालिए।

उ०– भूमि उपयोग– उपयोगिता, स्थिति तथा उर्वरता के आधार पर भूमि को विविध कार्यों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। भूमि को विविध कार्यों के लिए काम में लाना ही भूमि उपयोग कहलाता है। भूमि उपयोग किसी राष्ट्र के लोगों की आर्थिक अनुक्रियाओं का दिग्दर्शन करा देता है। भारत में भूमि का उपयोग अत्यंत विषम और अवैज्ञानिक है। भारत में भूमि उपयोग के निम्नलिखित स्वरूप पाए जाते हैं–

(i) कृषि भूमि– कृषि भारत का राष्ट्रीय व्यवसाय है अत: भारत में 51% भूमि का उपयोग कृषि कार्य करने में किया जाता है। भारत की 65% जनशक्ति लगभग 16.2 करोड़ हेक्टेयर भूमि पर कृषि करके अपनी आजीविका कमाती है। विश्व में भारत कृषि के अंतर्गत सर्वाधिक भूमि उपयोग करने वाला देश है। देश की 125 करोड़ जनसंख्या का भरण-पोषण करने के लिए कृषि योग्य भूमि का विस्तार करने का प्रयास किया जा रहा है, परंतु उद्योगों, कारखानों और आवासों ने कृषि भूमि के क्षेत्रफल को बढ़ने से रोक दिया है।

(ii) वन भूमि– भारत में पहले 33% भूमि वनों के अंतर्गत थी परंतु कृषि, उद्योग और आवासों ने वन भूमि उपयोग को घटाकर लगभग 19.2% कर दिया है। वन मानव के लिए बहुत उपयोगी हैं। वन वर्षा के जल को मिट्टी के अंदर रिसने में सहायक होते हैं, जिससे जल का सरंक्षण होता है। वन मृदा का भी संरक्षण करते हैं। जिससे बाढ़ों पर नियंत्रण होता है। परंतु, उद्योग, कृषि एवं आवासों के कारण अन्य देशों की अपेक्षा भारत में वन भूमि का क्षेत्र अत्यंत कम है।

(iii) चरागाह भूमि– भारत में पशुपालन का धंधा कृषि के सहायक धंधे के रूप में चलाया जाता है। पशुओं को स्वच्छंद रूप से चराने के उपयोग में आने वाले हरे घास के विस्तृत मैदान चरागाह कहे जाते हैं। भारत की 4.3% भूमि का उपयोग ही चरागाहों के रूप में होता है। भारत में विश्व के सर्वाधिक पशु पाए जाते हैं, उनकी तुलना में चरागाह भूमि अत्यंत कम है। चरागाह भूमि को बढ़ाने की आवश्यकता है, परंतु कृषि-भूमि विस्तार के प्रयास घास के मैदानों को छोटा करते जा रहे हैं।

(iv) बंजर और परती भूमि– खेती, चरागाह तथा वन उगने के अनुपयुक्त भूमि बंजर भूमि के नाम से जानी जाती है।

पर्वतीय ढाल, पठारी क्षेत्र, मरुस्थल तथा कंकड़-पत्थर युक्त कृषि के अयोग्य भूमि को **बंजर भूमि** कहा जाता है। वह भूमि जो बेकार पड़ी है, परंतु भविष्य में तकनीकी द्वारा उसे खेती के योग्य बनाया जा सकता है, परती भूमि कहलाती है। भारत में लगभग 24% भूमि बंजर तथा **परती भूमि** है। परती भूमि को एक दो साल खाली छोड़कर बार-बार खेती के लिए प्रयोग में लाया जाता है। सिंचाई, उर्वरक तथा उन्नत किस्म के बीजों का उपयोग करके परती भूमि का खेती के लिए सदुपयोग किया जा सकता है।

5. भूमि की किन्हीं पाँच विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

उ०– भूमि की विशेषताएँ या लक्षण (Characteristics of Land)– भूमि की प्रमुख विशेषताएँ निम्न है–

(i) सीमित पूर्ति– भूमि की मात्रा निश्चित तथा सीमित है। भूमि के परिमाण को घटाया अथवा बढ़ाया नहीं जा सकता। हवा, प्रकाश, खनिज पदार्थ आदि जो प्रकृति ने प्रदान किए हैं, मनुष्य उनमें कोई वृद्धि नहीं कर सकता। इसी प्रकार किसी क्षेत्र की जलवायु में कोई विशेष परिवर्तन नहीं किया जा सकता। मनुष्य केवल भूमि के स्वरूप में परिवर्तन कर सकता है।

(ii) प्रकृति की निःशुल्क देन– जल, वायु, खनिज पदार्थ, वन संपत्ति आदि को प्राप्त करने के लिए समाज को कुछ भी खर्च या त्याग नहीं करना पड़ा है; ये सब प्रकृति से निःशुल्क प्राप्त हुए हैं।

(iii) अनाशवान– मनुष्य भूमि को न तो उत्पन्न कर सकता है और न ही उसे नष्ट कर सकता है। भूमि की उर्वरता को तो कम या नष्ट किया जा सकता है, किन्तु उसका अस्तित्व अविनाशी है। भूमि के स्वरूप को तो बदला जा सकता है, किंतु उसे समाप्त नहीं किया जा सकता।

(iv) अचल या गतिहीन– भूमि का स्थान नहीं बदला जा सकता, अर्थात् इसे एक स्थान से उठाकर दूसरे स्थान पर नहीं ले जाया जा सकता। उदाहरणार्थ, हिमालय पर्वत को भारत से उठाकर जापान में नहीं ले जाया जा सकता। इसी प्रकार पर्वतीय क्षेत्रों की जलवायु को मैदानों में नहीं ले जाया जा सकता; अर्थात् भूमि का स्थानान्तरण संभव नहीं है।

(v) विविधता– भिन्न-भिन्न स्थानों की भूमि भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। कहीं की भूमि उपजाऊ है तो कहीं की बंजर है। कहीं पर नदियाँ व समुद्र हें तो कहीं पर पहाड़ हैं। कहीं की मिट्टी काली है कहीं की पीली। किसी क्षेत्र में अधिक सर्दी पड़ती है तो कहीं अधिक गर्मी। इस विवधता के कारण भूमि की उपजाऊ-शक्ति में विभिन्नता पाई जाती है।

6. मृदा संरक्षण से आप क्या समझते हैं? मृदा संरक्षण के उपाय लिखिए।

उ०– **मृदा संरक्षण–** मृदा किसी राष्ट्र के लिए प्रकृति का दिया हुआ सर्वश्रेष्ठ तथा अमूल्य उपहार है। मृदा ही वह संसाधन है, जो राष्ट्र के राजकोष को भरने का प्रमुख स्रोत बनती है। इतनी उपयोगी राष्ट्रीय धरोहर का संरक्षण नितांत आवश्यक हो जाता है। मृदा संरक्षण का सामान्य अर्थ है– मिट्टी की उपादेयता को बनाए रखना। दूसरे शब्दों में, "भूमि के उपयोगी तत्वों और उर्वरता की सुरक्षा कर उसे भावी उपयोग के लिए ठीक-ठीक बनाए रखना ही मृदा संरक्षण है।" मृदा संरक्षण ही वह महामंत्र है, जिसे फूँककर मृदा को भावी पीढ़ी के लिए उपयोगी और उर्वरक बनाए रखा जा सकता है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में यदि हरित क्रांति को सफल बनाना है, तो भूसरंक्षण को एक राष्ट्रीय कार्यक्रम के रूप में अपनाना होगा।

भूसंरक्षण की आवश्यकता– मृदा राष्ट्र के आर्थिक विकास की आधारशिला है। इस आधारशिला को सुरक्षित रखकर ही सुदृढ़ अर्थव्यवस्था का स्थायी भवन खड़ा किया जा सकता है। भूसंरक्षण की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से है–

(i) भारत एक कृषि प्रधान देश है और कृषि ही भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार है, अतः अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए मृदा का संरक्षण करना आवश्यक है।

(ii) कृषि भारतीय राष्ट्रीय आय का 28% प्रदान करती है अतः भूमि को संरक्षित करके ही राष्ट्रीय आय को स्थिर बनाए रखा जा सकता है।

(iii) मिट्टी की रेंगती हुई मृत्यु अर्थात् कटाव को रोकने के लिए उसका संरक्षण करना ही एकमात्र उपाय है।

(iv) पर्यावरण को संतुलित बनाए रखने के लिए मृदा संरक्षण की नितांत आवश्यकता है।

(v) भूमि उपयोग को सही तथा वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने के लिए भूमि का संरक्षण आवश्यक है।

(vi) भारत की 125 करोड़ जनसंख्या का समुचित भरण-पोषण संभव बनाने के लिए भूमि का संरक्षण करना नितांत आवश्यक हो गया है।

(vii) भारत की आने वाली पीढ़ी तक भूमि के उपयोगी स्वरूप को बनाए रखने के लिए, भूमि संरक्षण संजीवनी बन जाएगा।

भूसंरक्षण के उपाय– भूमि संरक्षण का अर्थ और आवश्यकता जान लेने के पश्चात् उसके संरक्षण के उपाय खोजना आवश्यक हो जाता है। भूमि संरक्षण हेतु निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं–

(i) पर्वतीय ढालों में सीढ़ीदार खेत बनाकर तथा भूमि के कटाव पर नियंत्रण करके भूमि का संरक्षण किया जा सकता है।

(ii) खेतों की मेढ़बंदी तथा चकबंदी द्वारा भूसंक्षरण पर रोक लगाकर, भूमि का संरक्षण हो सकता है।

(iii) खेतों की मेढ़ों पर वृक्ष लगाकर तथा भूसंक्षरण पर प्रभावी नियंत्रण करके भूसंरक्षण किया जा सकता है।

(iv) ढालू भूमि में भूमि को ढाल के विरुद्ध जोतने की व्यवस्था करके तथा जल निकासी के उचित उपाय अपनाकर भूमि का संरक्षण किया जा सकता है।

(v) झूमिंग कृषि से वनों तथा भूमि का विनाश होता है, उस पर प्रतिबंध लगाकर भूमि का संरक्षण किया जा सकता है।

(vi) वृक्षारोपण द्वारा वन क्षेत्र बढ़ाकर तथा हरित पट्टी का निर्माण करके, भूसंक्षरण को रोककर भूमि का संरक्षण करना संभव हो सकेगा।

(vii) परती भूमि में हरे चारे वाली फसलें उगाकर तथा उसकी उर्वरता और गुणवत्ता बढ़ाकर भूमि का संरक्षण किया जा सकता है।

(viii) नदियों पर बाँध तथा उचित तटबंध बनाकर उनमें आने वाली बाढ़ों से भूमि का संरक्षण किया जा सकता है।

(ix) खेतों में पशुओं की अनियंत्रित चराई पर प्रभावी रोक लगाकर तथा भूक्षरण को रोककर भूमि का संरक्षण किया जा सकता है।

(x) भूमि में रासायनिक, उर्वरकों, कीटनाशकों का प्रयोग सीमित करके, अत्यधिक सिंचाई करने पर नियंत्रण करके तथा कंपोस्ट और जैविक खाद का प्रयोग करके भूमि का संरक्षण किया जा सकता है।

मिट्टी सोना है, मिट्टी चंदन है, मिट्टी सुरक्षित रहेगी तो देश की अर्थव्यवस्था सुरक्षित रहेगी। आइए मिट्टी संरक्षण को एक राष्ट्रीय कार्यक्रम बनाकर इस महान कार्य में हम सब भी अपनी भागीदारी सुनिश्चित करें।

7. भूमि संसाधन क्या है? भूमि संसाधन का महत्व स्पष्ट कीजिए।

उ०– **भूमि संसाधन–** भूमि सामान्य रूप से धरती की ऊपरी उस सतह को कहा जाता है, जो मानव की कार्यस्थली है। भूमि के अंतर्गत वे सभी निःशुल्क उपहार आते हैं, जो प्रकृति ने हमें पृथ्वी पर, पृथ्वी के नीचे तथा पृथ्वी के ऊपर प्रदान किए हैं। भूमि में मृदा, खनिज, वनस्पति तथा पर्यावरण सभी सम्मिलित हैं। भूमि में श्रम, तकनीकी तथा पूँजी का विनिवेश करके उसे संसाधन बनाया जाता है। प्रो० एस०के० रुद्र के शब्दों में, "भूमि में वे समस्त शक्तियाँ सम्मिलित हैं, जिन्हें प्रकृति निःशुल्क उपहारों के रूप में प्रदान करती है।"; जैसे–

(i) पृथ्वी की सतह पर मैदान, नदियाँ, पर्वत, पठार, झील, झरने समुद्र और प्राकृतिक वनस्पति; जैसे– घास, वन, पेड़–पौधे, जड़ी–बूटियाँ और विभिन्न जीव–जंतु, पशु–पक्षी भूमि का ही भाग हैं।

(ii) पृथ्वी के ऊपर मिलने वाली प्राकृतिक शक्तियाँ– प्रकाश, हवा, जलवायु, गर्मी, सर्दी, धूप, वर्षा आदि।

(iii) पृथ्वी के नीचे पाए जाने वाले खनिज तथा चट्टानें– कच्चा लोहा, सोना, चाँदी, कोयला, ताँबा, तेल आदि।

भूमि वास्तव में मानव जीवन का आधार है, क्योंकि भूमि उसे भोजन, वस्त्र तथा आवास की सुविधाएँ उपलब्ध कराती है।

भूमि संसाधन का महत्व– भूमि का अर्थ और लक्षण जान लेने के पश्चात उसके महत्व पर विचार करना आवश्यक है। भूमि का महत्व निम्नवत् स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) भूमि मानव मात्र के जीवन का आधार है। भूमि के बिना कोई भी उत्पादन कार्य संभव नहीं। उत्पादन कार्य में यह माता की भाँति मानव का पालन पोषण करती है।

(ii) भूमि प्राथमिक उद्योग कृषि, खनन, पशुपालन, वन–व्यवसाय तथा मछली पकड़ने के धंधों के विकास का मूलाधार है।

(iii) किसी देश का आर्थिक विकास मुख्यतः वहाँ पर पाए जाने वाले प्राकृतिक संशाधनों अर्थात् भूमि पर निर्भर करता है। भूमि उपजाऊ मृदा, खनिज संपदा, वन, जल आदि उपलब्ध कराकर आर्थिक विकास का माध्यम बनती है।

(iv) भूमि काष्ठ, ईंधन तथा ऊर्जा के संसाधन, बिजली, कोयला, तेल आदि देकर उद्योग, परिवहन तथा व्यापार के विकास में अमूल्य योगदान देती है।

(v) भूमि उपजाऊ मृदा के रूप में कृषि को सुदृढ़ आधार प्रदान करती है। कृषि उपजें मानव का पालन–पोषण करने के साथ–साथ उद्योगों को कच्चा माल उपलब्ध कराकर उनका भी पोषण करती है।

(vi) मनुष्य को रोजगार प्रदान करने में भूमि का महत्वपूर्ण स्थान है। खेती, वन तथा खानों में 70% से अधिक जनसंख्या रोजगाररत है।

8. भूक्षरण (भूमि का कटाव) क्या है? इसके कारण और निवारण के उपाय सुझाइए।

उ०– **भूक्षरण या मृदा अपरदन या भूमि कटाव–** भूक्षरण या भूमि कटाव की समस्या मृदा को अनुपयोगी तथा दुर्बल बनाने वाला एक रोग है। अपरदन के विविध कारकों द्वारा मिट्टी की ऊपरी मुलायम परत को हटाने की प्रक्रिया, भूक्षरण या भूमि का कटाव कहलाता है। भूक्षरण को **मिट्टी की रेंगती हुई मृत्यु** कहा जाता है, क्योंकि यह धीरे-धीरे उपजाऊ भूमि को अनुपजाऊ बना डालता है। भूक्षरण के कारण भूमि ऊबड़-खाबड़ बनकर फसलों के लिए बेकार हो जाती है। भूक्षरण समतल रूप में तथा नालीदार होता है। भारत में लगभग 5 करोड़ हेक्टेअर भूमि-क्षेत्र भूक्षरण से प्रभावित है। अकेली गंगा नदी प्रतिवर्ष लगभग 30 करोड़ टन मिट्टी बहाकर बंगाल की खाड़ी में डालती है। इसी प्रकार नदियों के तटों पर कटाव के कारण विशाल भूमि क्षेत्र बीहड़ क्षेत्र बनकर रह गया है। इन बीहड़ों में अनाज की नहीं डाकुओं के रूप में अपराध की फसलें उगती हैं। उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में चंबल के बीहड़ इसी प्रकार बने हैं।

भूक्षरण या भूमि के कटाव के कारण– भूक्षरण या भूमि के कटाव के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं–

(i) मूसलाधार वर्षा के कारण मिट्टी की मुलायम परत कटकर भूक्षरण या भूमि कटाव का कारण बनती है।

(ii) वृक्षों के अंधाधुँध कटान के कारण भूमि का हरित आवरण नष्ट हो जाने से, वह भूक्षरण या कटाव का शिकार बन जाती है।

(iii) भूमि का अत्यधिक ढालू होना भी भूक्षरण का मुख्य कारण बन जाता है।

(iv) खेतों को जोतकर खुला छोड़ देने से तीव्र पवन के झोंके भुरभुरी मुलायम मिट्टी को उड़ाकर ले जाते हैं और अपने पीछे भूक्षरण का रूप छोड़ जाते है।

(v) वर्षा ऋतु में खेतों को परता छोड़कर उसे भूक्षरण के लिए वर्षा के हवाले कर दिया जाता है।

(vi) खेतों में पशुओं के अनियंत्रित ढंग से नियमित चराने तथा उनके तीव्र खुरों से मुलायम भूमि कट जाने से भी भूक्षरण होता है।

(vii) मुलायम तथा रेतीली मिट्टी में भूक्षरण तथा कटाव की समस्या स्वत: बढ़ जाती है।

भूक्षरण रोकने के उपाय– भूक्षरण मिट्टी के लिए रेंगती हुई मृत्यु है। मिट्टी को इस मृत्यु से बचाने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिए–

(i) वृक्षारोपण विशाल स्तर पर करके तथा भूमि पर हरित आवरण बनाकर भूक्षरण का निराकरण किया जा सकता है।

(ii) खेतों की उचित ढंग से मेढ़बंदी करके मिट्टी को कटाव जैसे शत्रु से बचाया जा सकता है।

(iii) ढालू भूमि में ढाल के विपरीत जुताई करके जल प्रवाह में बाधा डालकर भूक्षरण को रोका जा सकता है।

(iv) ढालू भूमि में वैज्ञानिक ढंग से जल निकासी की उचित व्यवस्था करके भूक्षरण को रोका जा सकता है।

(v) वर्षा ऋतु में खेतों को जोतकर तथा भली तरह पाटा लगाकर मिट्टी को ठीक से दबा देना चाहिए।

(vi) खेतों को परता नहीं छोड़ना चाहिए, वरन् उसमें हरी चारे वाली फसलें उगाई जानी चाहिए। इससे भूक्षरण तो रुकेगा ही, साथ ही उसकी उर्वरता में भी वृद्धि होगी।

(vii) खेतों में पशुओं की अनियंत्रित चराई पर एकदम रोक लगा देनी चाहिए।

(viii) भूक्षरण संभावित क्षेत्रों में नदियों के तटबंध बनाकर, बाढ़ों को रोककर भूक्षरण को रोका जा सकता है।

(ix) भूक्षरण के कारण भूमि में बने गड्डों को समतल बनाकर, भूक्षरण के रोग का उचित इलाज किया जा सकता है।

(x) कटावयुक्त भूमि को पुन: कृषि योग्य बनाकर भूक्षरण की समस्या को सुलझाया जा सकता है।

भारत सरकार द्वारा देहरादून, कोटा, जोधपुर तथा बेल्लारी नगरों में भू-अनुसंधानशालाएँ स्थापित करके तथा चकबंदी द्वारा छोटी–छोटी जोतों को बड़े चक में बदलकर भूक्षरण को रोकने की व्यवस्था की गई है।

❖ प्रोजेक्ट कार्य

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

37 जल संसाधन

(जल के विभिन्न स्रोत तथा उनकी उपयोगिता, भू-जल रिचार्ज, वर्षा जल संचयन, बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाएँ– रिंहद, दामोदर घाटी, भाखड़ा नागल, हीराकुंड, नागार्जुन सागर)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 328 व 329 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 329 व 330 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. भूमिगत जल से क्या तात्पर्य है? इसके उपयोग के दो साधनों का वर्णन कीजिए।

उ०– **भूमिगत जल–** वर्षा का वह जल जो भूमि द्वारा सोख लिया जाता है और पृथ्वी के अंदर कठोर चट्टानों पर जाकर एकत्र हो जाता है, भूमिगत जल कहलाता है।

उपयोग के साधन– भूमिगत जल को मानव कुआँ, नल व ट्यूबवेल आदि के माध्यम से प्राप्त करके उसका उपयोग घरेलू कार्यों में, कृषि में तथा उद्योग-धन्धों में करता है।

2. भारत में जल संकट का सामना करने हेतु दो सुझाव दीजिए।

उ०– भारत में जल संकट का सामना करने हेतु दो सुझाव निम्नवत् हैं–

(i) जल संसाधनों के संरक्षण की उचित व्यवस्था करना।

(ii) वर्षा जल का संचयन करके विभिन्न कार्यों में उसका सदुपयोग करना।

3. नदी घाटी परियोजना के तीन प्रमुख लाभ लिखिए।

उ०– नदी घाटी परियोजनाओं के तीन प्रमुख लाभ निम्नवत् हैं–

(i) नदी घाटी परियोजनाओं द्वारा कृत्रिम जलाशयों में विशाल जल राशि को संचित करके विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करना।

(ii) खेतों की सिंचाई के निए नहरों का जाल तैयार करना।

(iii) जल विद्युत शक्तिगृह स्थापित करके जलविद्युत का उत्पादन करना।

4. भारत की किन्ही तीन बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं का एक-एक महत्त्व बताइए।

उ०–

परियोजना का नाम	महत्व
(i) रिहंद बाँध परियोजना	(i) इस परियोजना से निकली नहरों ने उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश राज्यों में सिंचाई की सुविधा देकर अनाज के उत्पादन में वृद्धि की है।
(ii) दामोदर घाटी परियोजना	(ii) इस परियोजना ने पश्चिमी बंगाल, बिहार तथा झारखंड राज्यों को दामोदर नदी में आने वाली विनाशकारी बाढ़ों द्वारा होने वाले विनाश से बचाया है।
(iii) भाखड़ा नागल बाँध परियोजना	(iii) इस परियोजना के विद्युतगृहों में 12 लाख किलोवाट बिजली का उत्पादन किया जाता है।

5. भारत की किन्हीं दो परियोजनाओं के नाम लिखिए तथा उनका महत्व बताइए।

उ०– उत्तर के लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 4 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

6. दामोदर घाटी परियोजना से होने वाले तीन प्रमुख लाभ बताइए।

उ०– **परियोजना के लाभ–** दामोदर घाटी परियोजना पं० बंगाल, बिहार तथा झारखंड राज्यों के लिए बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई है। इस परियोजना के प्रमुख लाभ निम्नवत हैं–

(i) इस परियोजना ने पं० बंगाल, बिहार तथा झारखंड राज्यों को दामोदर नदी में आने वाली विनाशकारी बाढ़ों द्वारा होने वाले विनाश से बचा दिया है।

(ii) इस परियोजना में निकाली गई नहरें लगभग 8 लाख हेक्टेयर भूमि सींचकर अन्न उत्पादन बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुई हैं।

(iii) इस परियोजना ने इस क्षेत्र में चावल, जूट और गन्ना का उत्पादन कई गुना बढ़ा दिया है।

7. जल संसाधन से क्या अभिप्राय है? इसका महत्व भी बताइए।

उ०– **जल संसाधन–** भूतल पर द्रव, ठोस तथा वाष्प के रूप में उपलब्ध जल को जल संसाधन कहते हैं। वायुमंडल में जल वाष्प के रूप में, भू-पृष्ठ के ऊपर तथा नीचे द्रव के रूप में जल विद्यमान है। पर्वतों के उच्च शिखरों पर जल बर्फ अथवा हिम के रूप में पाया जाता है।

महत्व– जल मनुष्यों के साथ-साथ सभी जीवों के जीवन का आधार है। मनुष्य को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पग-पग पर जल की आवश्यकता पड़ती है। उसे केवल पीने के लिए ही नहीं अपितु खाना बनाने, कपड़े धोने, नहाने में भी जल की आवश्यकता होती है। कृषि विकास भी मुख्य रूप से पर्याप्त जलापूर्ति पर ही निर्भर है। पशुपालन, मछलीपालन तथा उद्योग भी जल की उपलब्धता पर ही निर्भर हैं।

8. बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजना से होने वाले तीन लाभ बताइए।

उ०– उत्तर के लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

9. जल संरक्षण क्या है? इसकी आवश्यकता एवं महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– **जल संरक्षण–** जल को सुरक्षित और उपयोगी बनाए रखना ही जल संरक्षण कहलाता है। दूसरे शब्दों में **''सीमित जल संसाधनों की उपादेयता बनाए रखते हुए उन्हें भावी उपयोग के लिए संरक्षित करना ही जल संरक्षण कहलाता है।''**

आवश्यकता एवं महत्व– फसलों में सिंचाई, नगरीय एवं औद्योगिक कार्यों में जल के बढ़ते उपयोग के कारण देश में ताजे जल की कमी बढ़ती जा रही है। भविष्य में जल संकट घातक रूप ले सकता है। इसलिए उपलब्ध जल संसाधनों के वैज्ञानितक उपयोग के साथ-साथ उनके संरक्षण की महता आवश्यकता है।

समय रहते उपलब्ध जल संसाधनों के संरक्षण से भविष्य में जल संकट से बचा जा सकता है।

10. वर्षा जल संचयन की आवश्यकता और किन्हीं दो उपायों का वर्णन कीजिए।

उ०– **वर्षा जल संचयन की आवश्यकता–** वर्तमान समय में जल संसाधनों की माँग ओर खपत तो बढ़ रही है, परंतु जलीय स्रोत निरंतर घट रहे हें। वर्षा का अधिकांश जल व्यर्थ बहकर समुद्र में चला जाता है। इसलिए वर्ष जल संचयन की महती आवश्यकता है, ताकि वर्षा के अपरिमित जल को व्यर्थ में बहकर जाने से रोककर उसे एकत्र करके पुन: प्रयोग में लाया जा सके।

वर्षा जल संचयन के उपाय– वर्षा जल संचयन के दो उपाय निम्नलिखित हैं–

(i) रेनवाटर हार्वेस्टिंग विधि से भवनों की ऊपरी छत पर विशाल टैंक में वर्षा का जल एकत्रित करके उसे पाइपों द्वारा नीचे भूमिगत टैंकों में संचय कर लिया जाता है। इस जल का पुन: चक्रण करके उपयोग में लाया जाता है।

(ii) गाँव में तालाबों का निर्माण करवाकर उनमें वर्षा जल का संचयन किया जा सकता है। तालाब का जल ग्रामीणों और पशुओं के लिए जलापूर्ति तो करेगा ही साथ ही भूमिगत जल के स्तर को ऊँचा बनाए रखने में भी सहायक होता है।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. भारत के जल संसाधनों की विवेचना निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए–

(क) भूमिगत जल की उपयोगिता **(ख) नदी जल का महत्व**

उ०– **भूमिगत जल की उपयोगिता–** भूमिगत जल की उपयोगिता को निम्न बातों से भलीं-भांति समझा जा सकता है–

(i) नमी– भूमिगत जल से नमी बनी रहती है।

(ii) फसलों का पोषण– पृथ्वी पर उगने वाली वनस्पति तथा फसलों का पोषण इसी जल से होता है।

(iii) विविध उपयोग– ऐसे जल को मानव स्वयं, पशुओं के माध्यम से, पम्पिंग सेट से, बिजली की मोटरों आदि के माध्यम

से प्राप्त करके उसका उपयोग घरेलू कार्यों में, कृषि में तथा उद्योग-धंधों में करता है।

नदी जल का महत्व–किसी भी देश की भौतिक संरचना एवं उसके प्राकृतिक साधनों में नदियों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। नदियों की किस्म और उनकी संख्या पर वहाँ का आर्थिक विकास निर्भर होता है। किसी भी देश की धरती पर जलधाराओं के रूप में बहने वाली नदियाँ मानव शरीर की रक्त-वाहिनी नसों के समान हैं।

सामान्य रूप से नदियों के उद्गम स्रोत ऊँचे पहाड़ी भागों व हिमानियों में होते हैं। कुछ नदियाँ झीलों, झरनों व दलदली क्षेत्रों से भी फूटती हैं। हमारे देश के विशाल भू-भाग में एक कोने से दूसरे कोने तक छोटी-बड़ी दस हजार नदियाँ बहती है। संसार में भारत के अतिरिक्त शायद ही कोई ऐसा देश होगा, जहाँ नदियों ने वहाँ के निवासियों के दैनिक व आर्थिक जीवन पर इतना अधिक प्रभाव डाला हो। भारत की नदियाँ प्राचीन काल से ही यहाँ के आर्थिक एवं मानवीय विकास में महान योगदान करती रही हैं। आज भी ये नदियाँ हमारे देश की आर्थिक समृद्धि का एक मुख्य स्रोत बनी हुई हैं। उत्तरी भारत की प्रमुख नदियों में गंगा, रामगंगा, गोमती, बेतवा, सोन, सिन्धु, यमुना, ब्रह्मपुत्र, घाघरा, गण्डक, कोसी, चंबल, सतलुज, व्यास आदि प्रमुख हैं। गंगा नदी गंगोत्री व यमुना नदी यमनोत्री हिमानियों से निकलती है। इन दोनों के उद्गम स्रोत उत्तराखंड में स्थित है। सिन्धु व ब्रह्मपुत्र नदियों के उद्गम स्रोत तिब्बत के पठार पर मानसरोवर झील से हैं। तिब्बत में ब्रह्मपुत्र को सँपू कहा जाता है। दक्षिणी भारत की नदियों में महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, नर्मदा व ताप्ती मुख्य हैं। इनमें नर्मदा व ताप्ती पश्चिम की ओर बहती हुई अरब सागर में गिरती हैं तथा महानदी, गोदावरी, कृष्णा व कावेरी नदियाँ पूर्व की ओर बहती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती हैं।

2. बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं से आप क्या समझते हैं? इनके उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।

उ०– **बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाएँ**– स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत के समक्ष उफनती नदियों की जलराशि द्वारा आने वाली बाढ़ों से होने वाले जन-धन के विनाश की समस्या थी। भारत के निर्माताओं ने नदियों के विनाशकारी जल दैत्य को नियंत्रित कर विकास के कार्यों में लगाने की योजनाएँ बनाने की ओर सोचना प्रारंभ किया। इसी सोच और संकल्पना ने राष्ट्र को बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं का उपहार दिया। "नदियों के विनाशकारी जल के अनेक उपयोगी उद्देश्यों की पूर्ति हेतु जो योजनाएँ बनाई गईं, उन्हें बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाएँ कहा गया।" इन योजनाओं से अनेक उद्देश्यों की पूर्ति संभव हो जाने के कारण इन्हें बहुमुखी या बहुउद्देशीय परियोजनाएँ कहा गया। बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाएँ भारत के सर्वागीण आर्थिक विकास हेतु एक क्रांतिकारी कदम है।

बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं के उद्देश्य अथवा लाभ– बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं का निर्माण निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया गया है–

(i) नदियों पर विशाल बाँध बनाकर बाढ़ों पर नियंत्रण करना।
(ii) कृत्रिम जलाशयों में विशाल जलराशि को संचित करके जल की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करना।
(iii) खेतों की सिंचाई के लिए नहरों का जाल तैयार करना।
(iv) जलविद्युत शक्तिगृह स्थापित कर, जलविद्युत का उत्पादन करना।
(v) कृषि क्षेत्र तथा औद्योगिक क्षेत्र को सस्ती जलविद्युत सुलभ करना।
(vi) दलदल को सुखाकर, कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल बढ़ाना।
(vii) स्थानीय संसाधनों के विकास तथा दोहन की सुविधाएँ जुटाना।
(viii) वृक्षारोपण करके वन क्षेत्र बढ़ाना तथा वनों का उचित तथा नियंत्रित दोहन करना।
(ix) जलाशयों में मछली पालन करके मत्स्य उद्योग को बढ़ावा देना।
(x) जलाभाव तथा सूखाग्रस्त क्षेत्रों को नहरों द्वारा जल पहुँचाना।
(xi) नौका–विहार की सुविधाएँ जुटाकर जल परिवहन की सुविधाओं का विकास करना।
(xii) नगरों के लिए शुद्ध पेयजल आपूर्ति की सुविधाएँ जुटाना।
(xiii) बाँधों के निकट पर्यटक स्थल, होटल तथा पार्क विकसित करके पर्यटन को बढ़ावा देना।
(xiv) क्षेत्रीय नियोजन की व्यवस्था कर क्षेत्र के सर्वांगीण विकास पर बल देना।
(xv) राष्ट्र के सर्वांगीण विकास के लिए संसाधन जुटाना।

3. बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजना क्या है? भारत की किसी एक बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजना का वर्णन कीजिए।

उ०– **बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजना–** इसके लिए विस्तृत प्रश्न संख्या- 2 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

(i) रिहंद बाँध परियोजना– रिहंद बाँध परियोजना उत्तर प्रदेश की एक मात्र बहुउद्देशीय परियोजना है। इस परियोजना का निर्माण 1956 ई० में शुरू किया गया था, जिसे **गोविंद बल्लभ सागर परियोजना** और **रेणुका बहुउद्देशीय परियोजना** आदि नामों से भी पुकारा जाता है। सोनभद्र जनपद में रिहंद नदी पर लगभग 934 मीटर लंबा और लगभग 91.5 मीटर ऊँचा विशाल बाँध बनाकर इस योजना को 1966 में पूरा कर राष्ट्र को समर्पित कर दिया गया। इस बाँध के पीछे 460 वर्ग किमी० गोविंद बल्लभ पंत सागर नामक कृत्रिम झील बनाई गई है। यह कृत्रिम जलाशय उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश राज्यों की सीमा पर बनाया गया है। नदी की बाढ़ का जल इसमें लाने के लिए 13 फाटक बनाए गए हैं। इस जलाशय की जलधारण क्षमता 10,608 लाख घन मीटर है। इस परियोजना पर बने बाँध ने नदी के तूफानी जल प्रवाह पर नियंत्रण करके बाढ़ों को रोक दिया है। मुख्य रूप से इस परियोजना का निर्माण जलविद्युत निर्माण के लिए किया गया था।

परियोजना के लाभ– रिहंद बाँध परियोजना से निम्नलिखित लाभ प्राप्त हुए हैं–

(i) इस परियोजना में बनने वाली बिजली का उपयोग उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में नलकूप चलाकर सिंचाई करने में किया जाता है।

(ii) इस परियोजना से निकली नहरों ने उत्तर प्रदेश, बिहार तथा मध्य प्रदेश राज्यों में सिंचाई की सुविधा देकर अनाज के उत्पादन में भारी वृद्धि कर दी है।

(iii) रिहंद बाँध परियोजना से मिलने वाली बिजली ने सीमेंट, लोहा, कागज तथा सूती वस्त्र उद्योग का विकास कर दिया है।

(iv) इस परियोजना ने सोन और रिहंद नदी की बाढ़ों के द्वारा होने वाले विनाश से मुक्ति दिला दी है।

(v) रेलों के संचालन तथा खनिजों की ढुलाई में योग देकर इस परियोजना ने उत्तर प्रदेश के दक्षिण पूर्वी भाग में विकास और उन्नति की गंगा बहा दी है।

4. दामोदर घाटी अथवा भाखड़ा नांगल बाँध बहुउद्देशीय परियोजना का सविस्तार वर्णन कीजिए।

उ०– **दामोदर घाटी परियोजना–** पं० बंगाल, बिहार तथा झारखंड राज्यों का शोक कहलाने वाली दामोदर तथा उसकी सहायक नदियों पर 1948 ई० में 8 बाँध बनाए गए। अतीत में दामोदर नदी अपनी भंयकर बाढ़ के लिए कुख्यात रही है। इसकी बाढ़ से लगभग 18,000 वर्ग किमी० भूमि प्रभावित रहती थी। पश्चिम बंगाल और बिहार राज्यों की यह सम्मिलित योजना दामोदर घाटी परियोजना के नाम से विख्यात है। इस परियोजना की व्यवस्था के लिए दामोदर घाटी विकास निगम की स्थापना की गई। इस निगम द्वारा दामोदर नदी की बाढ़ को नियंत्रित करने तथा छोटा नागपुर क्षेत्र के बहुमुखी विकास के लिए दामोदर घाटी परियोजना का निर्माण किया गया। यह विश्व की दूसरी सबसे बड़ी परियोजना है। इस परियोजना में तिलैया, मैथान, कोनार, पंचेत पहाड़ी, बोकारो, बाल पहाड़ी, बर्नपुर व दुर्गापुर नामक स्थानों पर आठ बाँध बनाए गए हैं।

परियोजना के लाभ– दामोदर घाटी परियोजना पं० बंगाल, बिहार तथा झारखंड राज्यों के लिए बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई है। इस परियोजना के प्रमुख लाभ निम्नवत हैं–

(i) इस परियोजना ने पं० बंगाल, बिहार तथा झारखंड राज्यों को दामोदर नदी में आने वाली विनाशकारी बाढ़ों द्वारा होने वाले विनाश से बचा दिया है।

(ii) इस परियोजना में निकाली गई नहरें लगभग 8 लाख हेक्टेयर भूमि सींचकर अन्न उत्पादन बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुई हैं।

(iii) इस परियोजना ने इस क्षेत्र में चावल, जूट और गन्ना का उत्पादन कई गुना बढ़ा दिया है।

(iv) झारखंड राज्य में शहतूत के वृक्षों पर रेशम के कीड़े पालने का धंधा विकसित हुआ है।

(v) इस परियोजना में बनी बिजली ने औद्योगीकरण को सुदृढ़ आधार प्रदान किया है।

भाखड़ा नांगल बाँध परियोजना– यह देश की अब तक की **सबसे बड़ी बहुउद्देशीय परियोजना** है। पंजाब राज्य में सतलुज नदी के जल को सिंचाई और विद्युत निर्माण के उपयोग में लाने हेतु भाखड़ा नांगल परियोजना का निर्माण किया

गया है। यह परियोजना सन् 1969 ई० में बनकर तैयार हुई जिस पर 235 करोड़ रूपए व्यय हुए। इसमें पंजाब के रोपड़ नामक स्थान से 80 किमी० ऊपर उत्तर की ओर **'भाखड़ा'** नामक गाँव के निकट एक विशाल बाँध बनाया गया है। भाखड़ा बाँध के पीछे विशाल गोविंद सागर नामक कृत्रिम झील में जल एकत्र किया गया है, यह झील 88 किमी० लंबी तथा 2 से 8 किमी० चौड़ी है। इसकी जल धारण क्षमता लगभग 780 हजार हक्टेअर मीटर है। इस बाँध की ऊँचाई 235 मीटर तथा लंबाई 518 मीटर है। यह एशिया महाद्वीप का सबसे ऊँचा बाँध है। भाखड़ा बाँध से 13 किमी० नीचे नांगल नामक दूसरा बाँध बनाया गया है जो 29 मीटर ऊँचा, 315 मीटर लंबा तथा 121 मीटर चौड़ा है। इस बाँध से 64 किमी० लंबी नागल पन–विद्युत नहर निकाली गई है। इस परियोजना में निकाली गई नहरों की कुल लंबाई 4500 किमी० है। इन नहरों से 27 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है।

परियोजना के लाभ– भाखड़ा नांगल परियोजना से मुख्य रूप में निम्नलिखित लाभ हुए हैं–

(i) भाखड़ा नांगल परियोजना से निकाली गई नहरों ने पंजाब, हरियाणा तथा राजस्थान राज्यों में खेतों की सिंचाई करके कृषि उत्पादन को बढ़ा दिया है।

(ii) सिंचाई की सुविधाएँ बढ़ने से खेतों ने अधिक अन्न उगा कर, सोना पैदा कर दिया है।

(iii) इस परियोजना के विद्युत गृहों में लगभग 12 लाख किलोवाट बिजली बनती है।

(iv) बिजली का उपयोग नलकूप चलाने, नगरों में प्रकाश करने तथा उद्योग-धंधे चलाने में किया जाता है।

(v) नांगल में स्थापित नांगल फर्टिलाइजर का कारखाना उर्वरक बनाने में अग्रणी बन गया है।

(vi) गोविंद सागर झील से मछलियाँ पकड़ी जाती हैं, तथा वन क्षेत्रों से लकड़ी के लठ्ठे ढोए जाते हैं।

5. वर्षा जल के संचयन की आवश्यकता क्यों है? इसके संचयन की विधियाँ लिखिए।

उ०– **वर्षा जल के संचयन की आवश्यकता–** वर्तमान परिस्थितियों में वर्षा–जल का संचयन आवश्यक ही नहीं अनिवार्य बन गया है, अत: वर्षा जल के संचयन की आवश्यकता निम्नलिखित कारणें से है–

(i) व्यर्थ बहकर चले जाने वाली वर्षा–जल की अपार राशि को भविष्य के लिए उपभोग में लाने के लिए।

(ii) क्षेत्र को तीव्रगामी वर्षा जल से होने वाले विनाश, बाढ़ तथा भूक्षरण के प्रकोप से बचाने के लिए।

(iii) बढ़ती जनसंख्या को उचित एवं आवश्यक जलापूर्ति कराने के लिए।

(iv) ग्रीष्म ऋतु में वर्षा के अभाव में पेयजल तथा अन्य आवश्यक कार्यों के लिए जल का उपयोग करने के लिए।

(v) समूचे राष्ट्र को सूखा आपदा के महाविनाश से सुरक्षित बनाए रखने के लिए।

(vi) सड़कों, खाली स्थानों, गलियों तथा नालियों में वर्षा जल के अनावश्यक भराव को रोकने के लिए।

(vii) भूमिगत जल के भंडार को बढ़ाकर उनका स्तर ऊँचा करने के लिए।

(viii) मृदा क्षरण, बाढ़ तथा जल भराव जैसी घातक समस्याओं का निश्चित समाधान खोजने के लिए।

(ix) भूस्तरीय जलराशियों में जल भंडारण को सुनिश्चित करने के लिए।

(x) वर्ष भर विविध कार्यों हेतु जल की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए।

वर्षा जल संचयन की विधियाँ (उपाय)– वर्षा जल संचयन की अनिवार्यता को देखते हुए इसके संचयन हेतु निश्चित उपाय खोजना और अपनाना आवश्यक बन गया है। आज वर्षा जल के संचयन के लिए कई वैज्ञानिक विधियों को अपनाया जा रहा है।

(i) रेनवाटर हार्वेस्टिंग– भवनों की विशाल छतें वर्षा जल संग्रहण का मुख्य स्रोत बन सकती हैं। अत: वैज्ञानिकों ने इन्हीं के माध्यम से वर्षा–जल का संचयन करने हेतु रेनवाटर हार्वेस्टिंग की विधि खोज निकाली है। इस विधि में भवन की ऊपरी छत पर एक विशाल टैंक में वर्षा का जल एकत्र कर उसे पाइपों द्वारा नीचे भूमिगत टैंक जो जोड़ा जाता है। वर्षा काल में छत पर गिरने वाली संपूर्ण जलराशि भूमिगत टैंक में एकत्र कर ली जाती है। इस जल का पुन: चक्रण करके प्रयोग में लाया जाता है। रेनवाटर हार्वेस्टिंग की यह विधि अस्पतालों, बारातघरों होटलों, विद्यालयों आदि के साथ–साथ आवासीय कालोनियों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त सिद्ध होंगी। इसीलिए नए बनने वाले भवनों के नक्शे बिना रेनवॉटर हार्वेस्टिंग व्यवस्था के पास नहीं किए जाते हैं। रेनवाटर हार्वेस्टिंग योजना जल संसाधनों का विकास, करने में सक्षम होगी।

(ii) गाँवों में तालाबों का पुनर्निमाण– प्राचीन काल में प्रत्येक गाँव में एक तालाब या पोखर अवश्य होता था। जिसके चारों ओर गाँव का सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और सांस्कृतिक जन-जीवन फलीभूत होता था। ग्रामीण क्षेत्रों में वर्षा का अतिरिक्त जल इन्हीं तालाबों और पोखरों में एकत्र होकर वर्षभर गाँव के लोगों और पशुओं को जलापूर्ति करता था। राजनीतिक संरक्षण, व्यक्तिगत स्वार्थ और बढ़ते भूमि के मूल्यों ने गाँवों की इस सांस्कृतिक धरोहर को नष्ट कर दिया है। किंतु गाँवों में तालाबों का निर्माण कर या पुराने तालाबों की मरम्मत करवाकर वर्षा जल के संचयन की समुचित व्यवस्था की जा सकती है। तालाब का जल वर्षभर लोगों और पशुओं को जलीय सुविधाएँ तो देगा ही, साथ ही भूमिगत जल के स्तर को भी ऊँचा बनाए रखेगा।

(iii) कुओं का पुनर्भरण– ग्रामीण परिवेश में पेयजल की आपूर्ति का मुख्य स्रोत कुएँ होते थे। किंतु हैंडपंपों, नलकूपों तथा टंकी के पाइपों द्वारा होने वाली जलापूर्ति ने कुओं के अस्तित्व को लील लिया है। गाँव, कस्बों और नगरों में पुराने कुओं को साफ करके उनमें जल पुनर्भरण की व्यवस्था करके वर्षा जल का संचयन किया जा सकता है। कुएँ वर्षभर पेयजल देकर जलाभाव की पूर्ति तथा जल संचयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में सक्षम बन जाएँगे।

(iv) नगरों में सड़कों के निकट गहरे कुएँ बनाना– नगरों में सड़कें, गलियाँ, चौराहे तथा आँगन सभी सीमेंट से बने हुए होने के कारण जल सोखने में असमर्थ हैं, अतः सड़कों के निकट खाली भूमि में जगह-जगह गहरे तथा पक्के कुएँ (टैंक) बनाकर तथा उन्हें भूमिगत पाइपों से जोड़कर व्यर्थ बहकर जाते हुए वर्षा जल का संग्रहण सुविधापूर्वक किया जा सकता है। पाइपों के माध्यम से वर्षा का जल इन कुओं में एकत्र होकर जलभराव की समस्या का सुगम हल निकाल देगा तथा बाद में इस जल को स्वच्छ बना विविध कार्यों में उपयोग में लाया जा सकेगा।

(v) कृषि क्षेत्रों में पक्के टैंक बनाना– गाँवों के विशाल कृषि भूमि क्षेत्रों में चौड़े तथा कम गहरे पक्के टैंक बनाकर नालियों या पाइपों द्वारा वर्षा के जल को एकत्र करने की समुचित व्यवस्था की जा सकती है। इन टैंकों में एकत्र वर्षा का जल सालभर पशुओं को जल पिलाने, कृषि के विविध कार्यों के साथ–साथ खेती की सिंचाई के लिए प्रयुक्त किया जा सकेगा। कृषि क्षेत्रों में बने ये कृत्रिम लघु तालाब वर्षा जल संचयन का उपयोगी साधन बन सकते है।

(vi) कृत्रिम झीलों का निर्माण– मानसूनी वर्षा बड़ी तीव्रगति से घनघोर रूप में होती है अतः उस जल को भूमि सोखने में असमर्थ रहने के कारण अधिकांश वर्षा जल बहकर नदियों में पहुँच जाता है। यह वर्षा जलराशि अपने साथ मिट्टी तथा अन्य अवसाद लाकर नदियों में बाढ़ की स्थिति उत्पन्न कर देती हैं। ह्वांग्हो नदी चीन का शोक और दामोदर नदी बंगाल, बिहार का शोक इसी कारण कही जाती हैं। नदियों पर बाँध बनाकर जल की अतिरिक्त राशि को कृत्रिम झीलों में एकत्र कर विनाशक से हितकारी बनाया जा सकता है। गोविंद सागर झील तथा गोविंद बल्लभ सागर झीलें इसका उदाहरण हैं।

6. जल संरक्षण क्या है? भारत में जल प्रबंधन के लिए कौन–कौन से उपाय किए गए हैं?

उ०– **जल संरक्षण–** जल अमूल्य है–जल बचेगा तो धरा पर जीवन बचेगा। जल संरक्षण का सामान्य अर्थ है, "जल को सुरक्षित और उपयोगी बनाए रखना"। दूसरे शब्दों में जल की बरबादी रोकना ही जल संरक्षण है। आइए इसे इस प्रकार समझें, "सीमित जल संसाधनों की उपादेयता बनाए रखते हुए उन्हें भावी उपयोग के लिए संरक्षित करना ही जल संरक्षण कहलाता है।" बढ़ती जनसंख्या तथा वर्षा की अनिश्चितता ने मानव मात्र को जल संसाधनों के महत्व से परिचित कराकर इसके संरक्षण का मार्ग प्रशस्त कर दिया है।

भारत में जल प्रबंधन– जल संसाधनों के उचित संरक्षण तथा जल के राष्ट्रीय बजट के सदुपयोग की व्यवस्था को जल प्रबंधन कहा जाता है। भारत में जल प्रबंधन के क्षेत्र में निम्नलिखित उपाय किए गए हैं–

(i) केंद्रीय जल आयोग की स्थापना– भारत में जल प्रबंधन की आधुनिकतम तकनीक स्थापित करने के लिए 1945 ई० में केंद्रीय जल आयोग स्थापित किया गया। इस आयोग ने जल प्रबंधन के लिए नए-नए साधन जुटाए हैं।

(ii) केंद्रीय भू–जल बोर्ड का गठन– भारत सरकार ने केंद्रीय भू-जल बोर्ड की स्थापना 1970 ई० में की थी। जिसका मुख्यालय फरीदाबाद नगर में है। यह बोर्ड जल प्रबंधन के लिए वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी का विकास करता है तथा राष्ट्रीय नीति की निगरानी में उन्हें वितरित करता है।

(iii) राष्ट्रीय जल विकास एजेंसी– सरकार ने 1980 ई० में राष्ट्रीय जल विकास एजेंसी बनाकर नदी, घाटियों के जल प्रबंधन की उचित व्यवस्था बनाई है। जिससे सिंचाई की सुविधाएँ बढ़ाई जा रही हैं।

(iv) राष्ट्रीय जल बोर्ड– भारत ने 1990 ई० में राष्ट्रीय जल बोर्ड के माध्यम से राष्ट्रीय जल नीति निर्धारित कर जल प्रबंधन

के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कदम बढ़ाया है।

(v) भू-जल की कृत्रिम भू-जल पुनर्भरण योजना– भारत सरकार ने 2007 ई० में भू-जल की कृत्रिम भू-जल पुनर्भरण योजना प्रारंभ करके जल प्रबंधन के लिए नाबार्ड द्वारा वित्तीय व्यवस्था जुटाने का सद्प्रयास किया है।

(vi) राष्ट्रीय जल नीति का निर्धारण– भारत सरकार ने 2013 ई० में राष्ट्रीय जल नीति बनाकर जल प्रबंधन के लिए नवीनतम प्रौद्योगिकी विकसित करने तथा अपनाने के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी कदम उठाया है।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

38 वन एवं जीव संसाधन

(उपयोगिता, सुरक्षा एवं संरक्षण से संबंधित राष्ट्रीय नीति तथा विभिन्न कार्यक्रम)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 340 व 341 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 341, 342 व 343 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. भारत में उगने वाले किन्हीं दो प्रकार के वनों का वर्णन कीजिए।

उ०– भारत में उगने वाले दो वनों का विवरण निम्नवत् है–

(i) उष्णकटीबंधीय सदाबहार वन– ये वन उन क्षेत्रों में पाए जाते हैं जहाँ वार्षिक वर्षा का औसत 200 सेमी तथा औसत तापमान 24° सेन्टीग्रेड रहता है। अधिक वर्षा के कारण ये वन वर्ष भर हरे-भरे रहते हैं। ये वन ऊँचे व घने होते हैं जिनमें 30 से 60 मीटर की ऊँचाई वाले वृक्ष पाए जाते हें। इन वनों में मुख्य रूप से बाँस, ताड़, सिनकोना, महोगनी, रबड़ तथा आबनूस आदि के वृक्ष पाए जाते हैं। भारत में ये वन 2500 वर्ग किमी क्षेत्र में विस्तृत है। ये वन असम, मेघालय, कर्नाटक, केरल, गुजरात, अंडमान-निकोबार, द्वीप समूह, मणिपुर तथा त्रिपुरा आदि राज्यों में पाए जाते हैं।

(ii) उष्णकटीबंधीय पतझड़ वाले (मानसून) वन– भारत के जिन भागों में सामान्य तापमान पाया जाता है और मध्यम वर्षा होती है वहाँ उष्ण कटिबंधीय पतझड़ वाले (मानसूनी) वन उगते हैं। ग्रीष्म ऋतु का प्रारंभ होते ही वृक्ष गर्मी और वाष्पीकरण के प्रभाव से स्वयं को बचाने के लिए अपनी पत्तियाँ गिरा देते हैं, इसीलिए इन्हें 'पर्णपाती वन' भी कहा जाता है। कम वर्षा के कारण इन वृक्षों की ऊँचाई 30 से 45 मीटर तक होती है। इन वनों में छोटे आकार के मुलायम लकड़ी प्रदान करने वाले साल, शीशम, खैर, चंदन, सागौन, हल्दू, सेमल तथा महुआ आदि के उपयोगी वृक्ष उगते हैं। इन वनों के वृक्षों से फर्नीचर बनाने के लिए उत्तम और टिकाऊ लकड़ी प्राप्त होती है। भारत में इन वनों का विस्तार 7 लाख वर्ग किमी० क्षेत्र में मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु तथा केरल आदि राज्यों में पाया जाता है। इन उपयोगी वनों को हल और खेती ने समाप्त करना प्रारंभ कर दिया है, अत: इनका क्षेत्र घटता जा रहा है।

2. भारतीय वनों की तीन प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।

उ०– भारतीय वनों की तीन प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) भारत में वन क्षेत्र बहुत कम है। देश के 19.47% क्षेत्र पर ही वनों का विस्तार पाया जाता है।

(ii) भारतीय वन विविध प्रकार के हैं, जिनमें विविध प्रजातियों के वृक्ष उगते हैं। ये वन विविध अन्य जीवों के आश्रय स्थल भी हैं।

(iii) भारतीय वनों का वितरण बहुत असमान है, अधिकांश वन पर्वतीय ढालों और मैदानी क्षेत्रों में पाए जाते हैं।

3. मानसूनी वनों की तीन प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।

उ०– मानसूनी वनों की तीन प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) मानसूनी वन सामान्य तापमान वाले क्षेत्रों में पाए जाते हैं।

(ii) मानसूनी वनों के वृक्ष ग्रीष्म ऋतु का प्रारंभ होते ही गर्मी और वाष्पीकरण के प्रभाव से स्वयं को बचाने के लिए अपनी पत्तियाँ गिरा देते हैं।

(iii) कम वर्ष के कारण इन वनों के वृक्षों की औसत ऊँचाई 30 से 45 मीटर तक होती है।

4. वनों के चार प्रत्यक्ष (आर्थिक) लाभ लिखिए।

उ०– वनों के चार प्रत्यक्ष लाभ निम्नलिखित हैं–

(i) उपयोगी लकड़ी की प्राप्ति।

(ii) उद्योगों के लिए कच्चे माल की प्राप्ति।

(iii) वनों से प्राणदायिनी औषधियों की प्राप्ति।

(iv) पशुओं के लिए हरे चारे की प्राप्ति।

5. वनों के ह्रास से क्या आशय है? वनों के ह्रास से होने वाले दो दुष्प्रभावों को लिखिए।

उ०– तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तथा उद्योगों में लकड़ी की बढ़ती खपत के कारण वनों का अधिक कटना वनों का ह्रास कहलाता है। वनों के ह्रास से होने वाले दो दुष्प्रभाव निम्नवत् हैं–

(i) पर्यावरण प्रदूषण में वृद्धि।

(ii) मृदा अपरदन एवं बाढ़ के प्रकोप में वृद्धि।

(iii) कम वर्ष के कारण इन वनों के वृक्षों की औसत ऊँचाई 30 से 45 मीटर तक होती है।

6. वनों के चार अप्रत्यक्ष लाभ लिखिए।

उ०– वनों के चार अप्रत्यक्ष लाभ निम्नलिखित हैं–

(i) वन वर्षा कराने में सहायक होते हैं।

(ii) वन कार्बन डाइ ऑक्साइड गैस को ग्रहण करके तथा ऑक्सीजन छोड़कर पर्यावरण को शुद्ध बनाए रखते हैं।

(iii) वन मृदा अपरदन को रोकने में सहायक होते हैं।

7. मानसूनी वन किसे कहते हैं? इनके दो महत्व लिखिए।

उ०– मानसूनी जलवायु की विशिष्ट वनस्पति वाले वनों को मानसूनी वन कहते हैं। ये वन वर्षा की कमी के कारण ग्रीष्म ऋतु के आरंभ में अपनी पत्तियाँ गिरा देते हैं। इसलिए इन्हें पर्णपाती या पतझड़ वन भी कहते हैं। मानसूनी वनों के दो महत्व निम्नवत् हैं–

(i) मानसूनी वनों में पाए जाने वाले वृक्षों में साल, शीशम, सागौन, सेमल, महुआ आदि से फर्नीचर बनाने के लिए उत्तम व टिकाऊ लकड़ी प्राप्त होती है।

(ii) मानसूनी वनों से महुआ, चंदन, आँवला, कत्था, शहतूत आदि प्राप्त होता है।

8. जैव विविधता का संरक्षण क्या है? वन्य जीव संरक्षण के दो उपाय लिखिए।

उ०– जैव विविधता के संरक्षण का सीधा अर्थ पशुधन का संरक्षण करना है। दूसरे शब्दों में, ''वन्य पशुओं की प्रजातियों को सुरक्षित रखते हुए उनके विकास और संवर्द्धन के उपाय अपनाना ही जैव संरक्षण है।''

(i) वन्य जीवों का शिकार करने पर कानूनी रोक लगाना।

(ii) पशु अभ्यारण्यों की अधिक संख्या में स्थापना करना।

9. वन्य संसाधन क्या हैं? इनके विकास में सहायक भौगोलिक कारक कौन से हैं?

उ०– प्राकृतिक रूप से पृथ्वी पर स्वत: ही उगने-बढ़ने वाली समस्त वनस्पतियों के समुदाय को वन संसाधन कहते हैं। प्राकृतिक वनस्पति स्वत: उगती और नष्ट होती रहती है, उसके उगने में मानव का कोई प्रयास नहीं होता है। वन संसाधनों का उपहार प्रकृति द्वारा हर राष्ट्र व राज्य को एक समान नहीं दिया गया है। वन संसाधनों के विकास में सहायक भौगोलिक कारक निम्नलिखित हैं–

(i) धरातलीय संरचना। (ii) मृदा की प्रकृति।
(iii) जलवायु, तापमान तथा आर्द्रता। (iv) वर्षा की मात्रा तथा अवधि।

10. भारत में वन संरक्षण के तीन उपाय सुझाइए।

उ०– भारत में वन संरक्षण के तीन उपाय निम्नलिखित हैं–

(i) वनों का नियंत्रित, योजनाबद्ध तथा वैज्ञानिक ढंग से दोहन करना।

(ii) वनों को काटने के साथ-साथ वृक्षारोपण पर ध्यान देना।

(iii) वनों को आरक्षित घोषित कर उनके काटने पर प्रतिबंध लगा देना।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय वनों का वर्णन उदाहरण सहित कीजिए।

उ०– **भारतीय वन का वर्गीकरण–** भारत में कुल क्षेत्रफल के केवल 19.47% भाग पर वन पाए जाते हैं जो विश्व के कुल वन–क्षेत्र का मात्र 1.6% है।

भारत विविधताओं का देश है। यहाँ मृदाओं में विविधता, जलवायु में विविधता तथा वर्षा में विविधता होने के कारण प्राकृतिक वनस्पति में भी विविधता पाई जाती है। भारतीय वन संसाधनों को निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है।

(i) उष्ण कटिबंधीय सदाबहार वन– इन वनों के उगने के लिए आदर्श परिस्थितियाँ-औसत 200 सेमी वर्षा तथा औसत 24° सेंटीग्रेड तापमान है। इसीलिए भारत के जिन भागों में सालभर ऊँचा तापमान और अधिक वर्षा होती है, वहाँ लंबे-लंबे कठोर लकड़ी के सालभर हरे-भरे बने रहने वाले वृक्ष उगते हैं, जिन्हें उष्ण कटिबंधीय सदाबहार या सदाहरित वन कहा जाता है। इन वनों में मुख्य रूप से ताड़, सिनकोना, महोगनी, रबड़ तथा आबनूस के वृक्ष तथा बाँस और बेंत की झाड़ियाँ उगती हैं। सिनकोना वृक्ष का उपयोग मलेरिया की औषधी बनाने में किया जाता है। ये वृक्ष कठोर लकड़ी के 30 से 60 मीटर तक ऊँचे होते हैं। वृक्षों की सघनता इन वनों के शोषण में बाधक बनती है। भारत में ये वन 25000 वर्ग किमी० क्षेत्र में विस्तृत हैं। जो असम, मेघालय, कर्नाटक, केरल, गुजरात, अंडमान-निकोबार द्वीप समूह, मणिपुर तथा त्रिपुरा राज्यों में फैले हुए हैं।

(ii) उष्ण कटिबंधीय पतझड़ वाले (मानसूनी) वन– भारत के जिन भागों में सामान्य तापमान पाया जाता है और मध्यम वर्षा होती है वहाँ उष्ण कटिबंधीय पतझड़ वाले (मानसूनी) वन उगते हैं। ग्रीष्म ऋतु का प्रारंभ होते ही वृक्ष गर्मी और वाष्पीकरण के प्रभाव से स्वयं को बचाने के लिए अपनी पत्तियाँ गिरा देते हैं, इसीलिए इन्हें 'पर्णपाती वन' भी कहा जाता है। कम वर्षा के कारण इन वृक्षों की ऊँचाई 30 से 45 मीटर तक होती है। इन वनों में छोटे आकार के मुलायम लकड़ी प्रदान करने वाले साल, शीशम, खैर, चंदन, सागौन, हल्दू, सेमल तथा महुआ आदि के उपयोगी वृक्ष उगते हैं। इन वनों के वृक्षों से फर्नीचर बनाने के लिए उत्तम और टिकाऊ लकड़ी प्राप्त होती है। भारत में इन वनों का विस्तार 7 लाख वर्ग किमी० क्षेत्र में मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु तथा केरल आदि राज्यों में पाया जाता है। इन उपयोगी वनों को हल और खेती ने समाप्त करना प्रारंभ कर दिया है, अत: इनका क्षेत्र घटता जा रहा है।

(iii) शुष्क मरुस्थलीय काँटेदार वन– शुष्क मरुस्थलीय क्षेत्रों में उच्च तापमान तथा आर्द्रता के अभाव में वृक्षों का आकार छोटा रहता है, तथा पत्तियों के स्थान पर काँटे पनप आते हैं। उष्णता के कारण इनके तनों से गोंद निकलता है। इस वनस्पति को काँटेदार झाड़ियाँ कहा जाता है। इन वनों में बबूल, खजूर, रामबाँस, खेजड़ा, नागफनी, कीकर, करील आदि वृक्ष उगते हैं। खजूर इनमें से सबसे उपयोगी वृक्ष है। भारत में इनका विस्तार दक्षिणी उत्तर प्रदेश, दक्षिण पंजाब, पश्चिमी मध्य प्रदेश तथा राजस्थान राज्य के पश्चिमी भाग में पाया जाता है।

(iv) तटीय या ज्वारीय या डेल्टाई वन– नदियों के डेल्टाओं में एक विशेष प्रकार की वनस्पति उगती है। समुद्रों में आने वाला ज्वार-भाटा सागर के खारे जल को डेल्टाई क्षेत्रों में पहुँचा देता है, अत: यहाँ मैंग्रोव वन उगते हैं। इन वृक्षों के तने कठोर तथा छाल क्षारीय होती है। इन वनों में जल सदैव भरा रहता है। अत: कठोर वृक्षों की लकड़ी से नाव बनाकर इन वनों में आया जाया जाता है। वृक्षों की क्षारीय छाल चमड़ा पकाने के काम आती है। ये वन महानदी, कृष्णा, कावेरी, गोदावरी, तथा गंगा नदी के डेल्टा में और समुद्रतटीय प्रदेशों में पाए जाते हैं। गंगा नदी के डेल्टा में सुंदरी नामक वृक्ष की

अधिकता के कारण इसे **सुंदरवन डेल्टा** भी कहते हैं। यह विश्व का सबसे बड़ा डेल्टा है। इन वनों में ताड़, नारियल, फोनिक्स, गोरेन तथा सुंदरी आदि वृक्ष उगते हैं। ताड़ के बीजों से तेल निकाला जाता है, तथा नारियल का रेशा रस्सी बनाने तथा खोपरा तेल निकालने के काम आता है। नारियल का वृक्ष इस क्षेत्र के लोगों की आजीविका का आधार है।

(v) पर्वतीय वन– हिमालय पर्वत के क्षेत्र में ऊँचाई बढ़ने के साथ-साथ मृदा, तापमान और वर्षा में भिन्नता आने के कारण वनों में भी विविधता आती जाती है। ऊँचाई बढ़ने के साथ ही वृक्षों की जातियाँ और विशेषताएँ बदल जाती हैं। हिमालय के पर्वतीय क्षेत्र में कश्मीर से लेकर असम तक पर्वतीय वन पाए जाते हैं। पर्वतीय वनों का प्रारूप निम्नवत् है–

(क) 1200 मीटर की ऊँचाई तक उष्णकटिबंधीय पतझड़ वन उगते हैं। जिनमें शिवालिक पर्वत क्षेत्र आता है।

(ख) 1200 से 2400 मीटर तक उष्णकटिबंधीय सदाहरित वन उगते हैं। जिनमें ओक, चीड़ तथा पाइन के वृक्ष प्रमुख हैं।

(ग) 2400 से 4500 मीटर तक कोणधारी वन उगते हैं जिसमें स्प्रूस, सनोवर तथा फर आदि वृक्ष प्रमुख हैं।

(घ) 4500 से 6000 मीटर तक अल्पाइन वृक्ष उगते हैं। इनमें फूलदार झाड़ियाँ उगती हैं।

6000 मीटर से ऊपर स्थायी हिम रेखा पाई जाती है, अत: वहाँ वनस्पति के उगने के अनुकूल परिस्थितियाँ नहीं पाई जाती हैं।

2. भारत की प्राकृतिक वनस्पति का वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए।

(क) प्रकार (ख) आर्थिक महत्व (ग) क्षेत्र

उ०– **(क) भारत की प्राकृतिक वनस्पति के प्रकार–** इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर में भारतीय वनों के प्रकार का अवलोकन कीजिए।

(ख) भारत की प्राकृतिक वनस्पति (वनों) का आर्थिक महत्व– भारतीय प्राकृतिक वनस्पति (वनों) का महत्व निम्नलिखित है–

(i) **उपयोगी लकड़ी की प्राप्ति–** वन ईंधन तथा इमारती लकड़ी के स्रोत हैं। वन 15% ईंधन तथा 85% औद्योगिक काष्ठ प्रदान कर हमारी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं।

(ii) **कच्चे माल की सुलभता–** वृक्ष अनेकों उत्पादों का उपहार देकर उद्योगों को कच्चा माल सुलभ कराते हैं। वनों से कागज निर्माण उद्योग, फर्नीचर निर्माण उद्योग, प्लाईवुड निर्माण उद्योग रबड़ निर्माण उद्योग, रंग रोगन निर्माण उद्योग तथा दियासलाई (माचिस) निर्माण उद्योग को कच्चा माल मिलता है। इस प्रकार वन विभिन्न उद्योगों का पोषण करने में सक्षम हैं।

(iii) **उपयोगी वस्तुओं की उपलब्धता–** वनों के वृक्ष गोंद, लाख, कत्था, चंदन, तेंदूपत्ता, रबड़ का दूध आदि पदार्थ देकर हमारा उपकार करते हैं। इन पदार्थों का दैनिक जीवन के साथ–साथ औद्योगिक क्षेत्र में भी उपयोग किया जाता है।

(iv) **हरे चारे की प्राप्ति–** वनों में उगने वाली हरी मुलायम घास पशुओं का प्रिय और पौष्टिक चारा है। वृक्षों की हरी पत्तियाँ भी अनेक पशुओं का आहार बनकर, उन्हें हरा चारा उपलब्ध कराती हैं। वनों के चरागाह राष्ट्र के पशुधन विकास के आधार होते हैं।

(v) **कुटीर उद्योग-धंधों के विकास में सहायक–** वन शहद एकत्र करने, मधुमक्खी पालन करने, गोंद एकत्र करने, तेदूपंता, कच्चा रेशम उगाने, कत्था बनाने, रस्सी तथा टोकरियाँ बनाने जैसे कुटीर उद्योगों को कच्चा माल देकर उनके विकास में सहायक बनते हैं।

(vi) **औषधियों की सुलभता–** वृक्ष रोगों के उपचार के लिए प्राणदायिनी औषधियों के स्रोत हैं। इनसे हरड़ या हर्र बहेड़ा, आँवला, बनफ्शा, शहद, चंदन, नीम आदि औषधीय गुण वाली वस्तुओं के साथ उपयोगी जड़ी बूटियाँ भी मिलती हैं, जो विविध रोगों में संजीवनी का काम करती हैं। भारतीय वनों से 500 प्रकार की औषधियाँ प्राप्त होती हैं।

(vii) **रोजगार के स्रोत–** भारतीय वन जहाँ अनेक जनजातियों और वनवासियों की आजीविका के स्रोत हैं, वहीं ये लगभग 1 करोड़ लोगों को नौकरी प्रदान कर उनके रोजगार के स्रोत बन गए हैं।

(viii) **प्रतिव्यक्ति और राष्ट्रीय आय के स्रोत–** वन लोगों को जहाँ रोजगार तथा आजीविका के स्रोत देकर प्रति

व्यक्ति आय बढ़ाते हैं, वहीं वनों की लकड़ी से सरकार को रॉयल्टी के रूप में करोड़ों रुपयों की आय होती है। वन्य उत्पादों का निर्यात करके भी सरकार राष्ट्रीय आय में वृद्धि करती है। वन राष्ट्र को एक संपन्न अर्थव्यवस्था प्रदान करने में सक्षम होते हैं।

(ix) वन्य जीवों से उपयोगी पदार्थों की प्राप्ति– वन वन्य जीवों के शरण स्थल हैं। वन्य पशु और पक्षी मांस, चमड़ा, बाल, ऊन तथा पंख प्रदान कर हमारे लिए उपयोगी बनते हैं। इन पदार्थों पर अनेक उद्योग धंधे निर्भर होते हैं।

(x) पर्यटन उद्योग का विकास– हरे-भरे वन प्राकृतिक सौंदर्य की खान होते हैं। वृक्षों से घिरे हरे-भरे घास के मैदान पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। भारत में फूलों की घाटी ऐसा ही एक पर्यटनस्थल है। राष्ट्रीय पार्कों में वन्य जीवों को साक्षात आँखों से देखने के लिए लाखों पर्यटक प्रतिवर्ष पहुँच जाते हैं। कार्बेट नेशनल पार्क तथा काजीरंगा पार्क इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। पर्यटन उद्योग राष्ट्रीय आय का उत्तम स्रोत बन जाता है।

(ग) भारत में प्राकृतिक वनस्पति (वनों) के क्षेत्र– देहरादून स्थित फॉरेस्ट सर्वे ऑफ इंडिया प्रति दो वर्षों के अंतराल पर वन स्थिति रिपोर्ट जारी करता है। सन् 2011 की नवीनतम रिपोर्ट के अनुसार देश में वन एवं वृक्षाच्छादित कुल क्षेत्र अब 78.29 मिलियन हेक्टेयर है जो कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 23.81 प्रतिशत है। देश में सर्वाधिक वन-क्षेत्र वाला राज्य मध्य प्रदेश है। जहाँ कुल 77,770 वर्ग किमी० वनाच्छादित है। 67,410 वर्ग किमी० वन-क्षेत्र के साथ अरूणाचल प्रदेश का इस संबंध में दूसरा स्थान है। कुल भौगोलिक क्षेत्र में वन-क्षेत्र के प्रतिशत की दृष्टि से पहला स्थान मिजोरम का है जहाँ 90.68 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र वनाच्छादित है। बिहार, हरियाणा, पंजाब, दिल्ली, गुजरात आदि कम वन-क्षेत्र वाले राज्यों में आते हैं।

रिपोर्ट के अनुसार, अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह में सुनामी के कारण वन-क्षेत्र में कमी आयी है जबकि मध्य प्रदेश में पर्याप्त वन-क्षेत्र के विद्युत परियोजनाओं के अधीन आ जाने के कारण वन-क्षेत्र घटा है।

3. भारतीय वनों का वर्गीकरण कीजिए। किसी एक प्रकार के वन की प्रमुख विशेषताएँ एवं आर्थिक महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का तथा प्रश्न संख्या- 2 के उत्तर में (ख) 'आर्थिक महत्व' का अवलोकन कीजिए।

4. वन संरक्षण से क्या तात्पर्य है? वन संरक्षण का महत्व बताइए तथा संरक्षण हेतु सुझाव दीजिए।

उ०– **वन संरक्षण–** वन संरक्षण से तात्पर्य है कि वनों की अनावश्यक खपत और विनाश की रोकथाम करते हुए उनको वैज्ञानिक उपायों से उपयोगी बनाए रखकर भावी पीढ़ियों के उपभोग के लिए सुरक्षित करना है। वन संरक्षण के अंतर्गत उन प्रयासों को सम्मिलित किया जाता है, जिनमें वनों का विवेकपूर्ण दोहन, परिरक्षण एवं नवीनीकरण संभव होता है।

वनों के प्रत्यक्ष (आर्थिक) लाभ– स्पष्ट दिखाई देने वाले लाभ, वनों के प्रत्यक्ष लाभ कहलाते हैं। वनों के प्रत्यक्ष लाभ निम्नलिखित हैं–

(i) उपयोगी लकड़ी की प्राप्ति– वन ईंधन तथा इमारती लकड़ी के स्रोत हैं। वन 15% ईंधन तथा 85% औद्योगिक काष्ठ प्रदान कर हमारी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं।

(ii) कच्चे माल की सुलभता– वृक्ष अनेकों उत्पादों का उपहार देकर उद्योगों को कच्चा माल सुलभ कराते हैं। वनों से कागज निर्माण उद्योग, फर्नीचर निर्माण उद्योग, प्लाईवुड निर्माण उद्योग रबड़ निर्माण उद्योग, रंग रोगन निर्माण उद्योग तथा दियासलाई (माचिस) निर्माण उद्योग को कच्चा माल मिलता है। इस प्रकार वन विभिन्न उद्योगों का पोषण करने में सक्षम हैं।

(iii) उपयोगी वस्तुओं की उपलब्धता– वनों के वृक्ष गोंद, लाख, कत्था, चंदन, तेंदूपत्ता, रबड़ का दूध आदि पदार्थ देकर हमारा उपकार करते हैं। इन पदार्थों का दैनिक जीवन के साथ-साथ औद्योगिक क्षेत्र में भी उपयोग किया जाता है।

(iv) हरे चारे की प्राप्ति– वनों में उगने वाली हरी मुलायम घास पशुओं का प्रिय और पौष्टिक चारा है। वृक्षों की हरी पत्तियाँ भी अनेक पशुओं का आहार बनकर, उन्हें हरा चारा उपलब्ध कराती हैं। वनों के चरागाह राष्ट्र के पशुधन विकास के आधार होते हैं।

(v) कुटीर उद्योग-धंधों के विकास में सहायक– वन शहद एकत्र करने, मधुमक्खी पालन करने, गोंद एकत्र करने, तेदूपंता, कच्चा रेशम उगाने, कत्था बनाने, रस्सी तथा टोकरियाँ बनाने जैसे कुटीर उद्योगों को कच्चा माल देकर उनके विकास में सहायक बनते हैं।

(vi) औषधियों की सुलभता– वृक्ष रोगों के उपचार के लिए प्राणदायिनी औषधियों के स्रोत हैं। इनसे हरड़ या हर्र बहेड़ा, आँवला, बनफ्शा, शहद, चंदन, नीम आदि औषधीय गुण वाली वस्तुओं के साथ उपयोगी जड़ी बूटियाँ भी मिलती हैं, जो विविध रोगों में संजीवनी का काम करती हैं। भारतीय वनों से 500 प्रकार की औषधियाँ प्राप्त होती हैं।

(vii) रोजगार के स्रोत– भारतीय वन जहाँ अनेक जनजातियों और वनवासियों की आजीविका के स्रोत हैं, वहीं ये लगभग 1 करोड़ लोगों को नौकरी प्रदान कर उनके रोजगार के स्रोत बन गए हैं।

(viii) प्रतिव्यक्ति और राष्ट्रीय आय के स्रोत– वन लोगों को जहाँ रोजगार तथा आजीविका के स्रोत देकर प्रति व्यक्ति आय बढ़ाते हैं, वहीं वनों की लकड़ी से सरकार को रॉयल्टी के रूप में करोड़ों रुपयों की आय होती है। वन्य उत्पादों का निर्यात करके भी सरकार राष्ट्रीय आय में वृद्धि करती है। वन राष्ट्र को एक संपन्न अर्थव्यवस्था प्रदान करने में सक्षम होते हैं।

(ix) वन्य जीवों से उपयोगी पदार्थों की प्राप्ति– वन वन्य जीवों के शरण स्थल हैं। वन्य पशु और पक्षी मांस, चमड़ा, बाल, ऊन तथा पंख प्रदान कर हमारे लिए उपयोगी बनते हैं। इन पदार्थों पर अनेक उद्योग धंधे निर्भर होते हैं।

(x) पर्यटन उद्योग का विकास– हरे-भरे वन प्राकृतिक सौंदर्य की खान होते हैं। वृक्षों से घिरे हरे-भरे घास के मैदान पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। भारत में फूलों की घाटी ऐसा ही एक पर्यटनस्थल है। राष्ट्रीय पार्कों में वन्य जीवों को साक्षात आँखों से देखने के लिए लाखों पर्यटक प्रतिवर्ष पहुँच जाते हैं। कार्बेट नेशनल पार्क तथा काजीरंगा पार्क इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। पर्यटन उद्योग राष्ट्रीय आय का उत्तम स्रोत बन जाता है।

वनों के अप्रत्यक्ष (अनार्थिक) लाभ– वनों के वृक्षों से होने वाले वे लाभ जो स्पष्ट दिखाई नहीं पड़ते, अप्रत्यक्ष लाभ कहलाते हैं। वनों से हमें निम्नलिखित अप्रत्यक्ष लाभ होते हैं–

(i) वर्षा कराने में सहायक– वृक्ष पत्तियों से हवा में नमी छोड़ते हैं जिससे वातावरण में आर्द्रता की मात्रा बढ़ती है। इसी प्रकार वृक्ष बादलों को रोककर वर्षा कराने में सहायक हैं। वनों का विनाश ही वर्षा की कमी तथा सूखा आपदा का कारण बन रहा है।

(ii) पर्यावरण की स्वच्छता– वृक्ष कार्बन डाइऑक्साइड गैस को ग्रहण कर वायुमंडल में ऑक्सीजन तथा नमी छोड़कर उसे स्वच्छ बनाते हैं। पर्यावरण शुद्ध होगा तो पूरा विश्व स्वस्थ्य रहेगा।

(iii) प्रदूषण पर नियंत्रण– वृक्ष वायु प्रदूषण के प्रदूषकों को समाप्त कर वायु को प्रदूषण रहित बनाते हैं। ऑक्सीजन प्राण वायु है, अत: प्रदूषण रहित वायु जीवधारियों के जीवन का आधार होती हैं।

(iv) भूमि की उर्वरता बढ़ाना– वृक्ष पत्तियाँ भूमि पर गिराते हैं, जो सड़-गल कर उर्वरक में बदल कर भूमि की उर्वरता बढ़ाते हैं। इसके अतिरिक्त वन्य जीव भी अपने मल-मूत्र से भूमि को उर्वरक बनाते हैं।

(v) भूक्षरण पर रोक– वृक्ष तीव्र गति से बह रही जल धाराओं की गति को कम करके, भूक्षरण रोकने में सहयोग देते हैं। जिससे कृषि योग्य भूमि की कार्य-क्षमता बनी रहती है।

(vi) बाढ़ों पर नियंत्रण– वृक्ष नदियों से उत्पन्न बाढ़ पर रोक लगाने में सक्षम हैं। ये, बाढ़ों पर नियंत्रण कर भूक्षरण तथा विनाश को रोक देते हैं।

(vii) मरुस्थल प्रसार पर रोक– पवन बालू को उड़ाकर मरुस्थल को आगे बढ़ाने के कार्य में लगी रहती है। किंतु पवन के इस कार्य में वृक्षारोपण द्वारा बनाई गई हरित पट्टियाँ अवरोधक बनकर मरुस्थल के प्रसार को रोकती है जिससे उपजाऊ तथा उपयोगी कृषि–भूमि की सुरक्षा में सहयोग मिलता हैं।

(viii) भूमिगत जल-स्तर में सुधार– भूमिगत जल हमारे लिए बहुत उपयोगी हैं। वृक्षों की जड़ों के माध्यम से वर्षा का जल भूगर्भ में पहुँचकर भूमिगत जल-स्तर में सुधार लाकर हमारा उपकार करता है।

(ix) प्राकृतिक सौंदर्य में वृद्धि– हरी-भरी घास तथा वृक्षों की हरितिमा भूतल को आकर्षक और आनंददायक बनाकर, उसके सौंदर्य में वृद्धि कर देती हैं। हरा-भरा राष्ट्र सौंदर्य और आर्थिक समृद्धि का प्रतीक है।

(x) **वन्य जीवों का शरण स्थल–** वन पशुओं और पक्षियों के, पालक और शरणदाता हैं। वन्य जीव पर्यावरण के आवश्यक अंग है। वन्य जीव हमारा अनेकों प्रकार से उपकार करते हैं।

वन संरक्षण हेतु सुझाव– वन संसाधनों के संरक्षण हेतु निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिए–

(i) वनों का नियंत्रित, योजनाबद्ध तथा वैज्ञानिक ढंग से दोहन करना।

(ii) वन के वृक्षों को भीषण अग्निकांड तथा हानिकारक कीड़ों से बचाना।

(iii) वृक्षों को काटने के साथ-साथ वृक्षारोपण पर ध्यान देना।

(iv) वनों में पशुचारण तथा शिकार करने पर प्रभावी रोक लगाना।

(v) वनों को आरक्षित घोषित कर उनके काटने पर प्रतिबंध लगा देना।

(vi) नगरों में 'ग्रीन एरिया' बनाकर वृक्षों को विकसित कराने के प्रयास करना।

(vii) कृषि, आवास तथा कारखानों के लिए वृक्षों के कटान पर कानूनी रोक लगाना।

(viii) विशाल बाँध बनाने के लिए वन संसाधनों के विनाश को रोकना।

(ix) ''बच्चे दो, वृक्ष सौ'' तथा "घर-घर में गूँजे यह नारा, हरा भरा हो देश हमारा" जैसे नारों से जन-जागृति फैलाना।

(x) सुनियोजित वन-संरक्षण के लिए 'वन प्रबंधन' आवश्यक है। इसके अंतर्गत जिन विषयों को शामिल किया जाता है, वे हैं– वन सर्वेक्षण, वनों का वर्गीकरण, प्रशासनिक व्यवस्था, वनों का आर्थिक उपयोग, वन संरक्षण की नई विधियों का विकास, सामाजिक वानिकी, पर्यटन हेतु वन-क्षेत्रों का विकास, वन अनुसंधान तथा वनों की सुरक्षा व महत्व के बारें में सामाजिक चेतना जागृत करना। अत: सरकार को वन-प्रंबधन कर वनों का संरक्षण करना चाहिए।

5. भारत में वनों के ह्रास के क्या कारण हैं? वनों के संरक्षण के उपाय लिखिए।

उ०– **भारत में वनों का ह्रास–** वन किसी राष्ट्र की अमूल्य संपत्ति हैं। ये वहाँ की जलवायु, कृषि, उद्योग तथा पर्यावरण को अत्यधिक प्रभावित करते हैं। किंतु कुछ कारणों से भारत के वनों का ह्रास होता जा रहा है। इसके लिए उत्तरदायी कुछ कारण निम्नलिखित हैं–

(i) तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या की बढ़ती आवासीय आवश्यकताओं और कृषि तथा उद्योग में लकड़ी की बढ़ती खपत के कारण वृक्षों का अधिक कटान होने से वनों का ह्रास हुआ है।

(ii) बढ़ती जनसंख्या को भोजन सुलभ कराने के लिए, कृषि भूमि बढ़ाने के लिए वनों का सफाया होने से उसके क्षेत्रफल में कमी हो रही है।

(iii) कुकरमुत्ते की तरह बढ़ते बहुमंजिले आवास, कारखाने तथा औद्योगिक संस्थान वनों के ह्रास का कारण बन रहे हैं।

(iv) ईंधन, फर्नीचर तथा भवन निर्माण के लिए, काष्ठ प्राप्त करने के लिए वनों का ह्रास किया जा रहा है।

(v) स्वार्थी मानव ने अपने हित साधने के लिए वृक्षों पर कुल्हाड़ा चलाकर वनों का ह्रास कर डाला है।

(vi) वनों में लगने वाली भीषण आग विशाल वन क्षेत्र को जलाकर वनों के ह्रास का कारण बनती है।

(vii) वृक्षों में लगने वाले घातक रोग तथा हानिकारक कीड़े, वृक्षों को नष्ट कर वनों के ह्रास का कारण बनते हैं।

(viii) वन संरक्षण तथा वृक्षों के प्रति संवेदनशीलता का अभाव होने के कारण, जनसाधारण वनों का सफाया करने में लगा रहता है।

(ix) भारत में वन क्षेत्रों के संवर्द्धन की समुचित व्यवस्था न होने के कारण वनों का ह्रास हुआ है।

(x) भारत में वृक्षारोपण के प्रति उदासीनता का भाव होने के कारण, काटे गए वृक्षों के स्थान पर नए वृक्ष न लगाने से वनों का ह्रास हो गया है।

वन संरक्षण के उपाय– इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 4 के उत्तर में 'वन संरक्षण हेतु सुझाव' का अवलोकन कीजिए।

6. भारतीय वनों के प्रकारों का नाम लिखिए तथा वनों की मुख्य विशेषताएँ लिखिए।

उ०– भारत विविधताओं का देश है। यहाँ मृदाओं में विविधता, जलवायु में विविधता तथा वर्षा में विविधता होने के कारण यहाँ पाई जाने वाली वनस्पति में भी विविधता पाई जाती है। भारतीय वनों को निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है।

(i) उष्ण कटीबंधीय सदाबहार वन
(ii) उष्ण कटीबंधीय पतझड़ वाले (मानसूनी) वन
(iii) शुष्क मरुस्थलीय काँटेदार वन
(iv) तटीय या ज्वारीय या डेल्टाई वन
(v) पर्वतीय वन

भारतीय वनों की विशेषताएँ– भारतीय वनों में कुछ विलक्षणताएँ पाई जाती हैं, जो उनकी निम्नलिखित विशेषताओं की ओर इंगित करती हैं–

(i) भारत में वन क्षेत्र बहुत कम है। देश के 19.47% क्षेत्र पर ही वनों का विस्तार पाया जाता है।
(ii) भारतीय वन विविध प्रकार के हैं, जिनमें विविध प्रजातियों के वृक्ष उगते हैं। ये वन विविध अन्य जीवों के आश्रय स्थल भी हैं।
(iii) भारतीय वनों का वितरण बहुत असमान है, अधिकांश वन पर्वतीय ढालों और मैदानी क्षेत्रों में पाए जाते हैं।
(iv) भारतीय वनों में एक ही प्रजाति के उपयोगी वृक्ष एक स्थान पर न होकर दूर-दूर छिटके हुए हैं।
(v) भारतीय वनों में मुलायम और टिकाऊ लकड़ी के वृक्षों का निरंतर अभाव होता जा रहा है, क्योंकि इन्हें खेती करने के लिए काट दिया जाता है।
(vi) भारत में उष्णकटिबंधीय पतझड़ वाले वनों की अधिकता है। इनमें उगने वाले वृक्ष ग्रीष्म ऋतु के प्रारंभ में अपनी पत्तियाँ गिरा देते हैं।
(vii) भारतीय वन आर्थिक दृष्टि से बड़े उपयोगी हैं। इनसे उपयोगी काष्ठ के साथ–साथ उद्योगों के लिए कच्चे माल, जड़ी बूटियों और वन्य जीवों की प्राप्ति होती है।

7. वन्य जीव संरक्षण क्या है? इसकी क्या आवश्यकता है? वन्य जीव संरक्षण के उपाय सुझाइए।

उ०– **वन्य जीव संरक्षण–** वन्य जीव संरक्षण का सीधा अर्थ वनों में पाए जाने वाले जीवों का संरक्षण करना है। दूसरे शब्दों में, **''वन्य जीवों की प्रजातियों को सुरक्षित करते हुए उनके विकास और संवर्द्धन के उपाय अपनाना ही वन्य जीव संरक्षण कहलाता है।''**

वन्य जीव संरक्षण की आवश्यकता– वन्य-जीव संरक्षण की आवश्यकता निम्नलिखित दो कारणों से होती है।

(i) प्राकृतिक संतुलन में सहायक– वन्य जीवन वर्तमान और भावी पीढ़ियों के लिए प्रकृति का अनुपम उपहार है। किंतु वर्तमान समय में अत्यधिक वन दोहन तथा अनियंत्रित और गैर कानूनी आखेट के कारण भारत की वन्य-संपदा का तेजी से ह्रास हो रहा है। अनेक महत्वपूर्ण पशु-पक्षियों की प्रजातियाँ विलोप के कगार पर हैं। प्राकृतिक संतुलन बनाए रखने के लिए वन्य-जीव संरक्षण की बहुत आवश्यकता है।

(ii) पर्यावरणीय प्रदूषण– पर्यावरण प्रदूषण पर प्रभावी रोक लगाने के लिए भी पशुओं एवं वन्य जीवों का संरक्षण आवश्यक है, क्योंकि इनके द्वारा पर्यावरण में उपस्थित बहुत-से प्रदूषित पदार्थों को नष्ट कर दिया जाता है। इसके साथ ही वन्य–जीव पर्यावरण को स्वच्छ बनाये रखने में अपना अमूल्य योगदान देते हैं।

वन्य जीव संरक्षण के उपाय– वन्य जीवों के संरक्षण हेतु निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं–

(i) वन्य जीवों का शिकार करने पर कानूनी रोक लगाना।
(ii) वन्य जीवों और पक्षियों को पालतू बनाने पर कठोर प्रतिबंध लगाना।
(iii) सर्कस में शेर, चीतों, भालुओं तथा अन्य जीवों के करतब दिखाने पर रोक लगाना।
(iv) राष्ट्रीय पशु-पार्कों की स्थापना करना।
(v) विलुप्त होती प्रजातियों के बचाव और संवर्द्धन के लिए **टाइगर प्रोजेक्ट** जैसे कार्यक्रम लागू कराना।
(vi) पशु अभ्यारण्यों की अधिक संख्या में स्थापना करना।
(vii) वन्य जीव जंतु सुरक्षा अधिनियम 1972 ई० का कठोरता से पालन करवाना।
(viii) वन्य जंतु संरक्षण सप्ताह के माध्यम से वन्य जीव संरक्षण के लिए जन-जागृति फैलाना।

8. भारतीय वनों के पाँच प्रत्यक्ष तथा पाँच अप्रत्यक्ष लाभ लिखिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 4 के उत्तर में 'वन संरक्षण का महत्व' का अवलोकन कीजिए।

❖ प्रोजेक्ट कार्य

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

39 ऊर्जा संसाधन

(कोयला, खनिज तेल, प्राकृतिक गैस, परमाणु खनिज, जल, वैकल्पिक साधन–उपयोग एवं संरक्षण)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 352 व 353 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 353 व 354 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. ऊर्जा संसाधन किसे कहते हैं? दो परंपरागत तथा दो गैर–परंपरागत ऊर्जा के स्त्रोतों के नाम लिखिए।

उ०– **ऊर्जा संसाधन–** जिन पदार्थों से मनुष्य को उद्योग, कृषि, एवं परिवहन के साधनों हेतु ऊर्जा की प्राप्ति होती है, उन्हें ऊर्जा के साधन या शक्ति के साधन कहते हैं।

ऊर्जा के दो परंपरागत साधन– कोयला, खनिज तेल (पेट्रोलियम)।

ऊर्जा के दो गैर-परंपरागत साधन– सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा।

2. ऊर्जा के परंपरागत तथा गैर-परंपरागत स्त्रोतों की तुलना कीजिए।

उ०– **ऊर्जा के परंपरागत तथा गैर-परंपरागत (वैकल्पिक) स्त्रोतों की तुलना–** ऊर्जा के परंपरागत तथा गैर-परंपरागत स्त्रोतों की तुलना उनके निम्नलिखित अंतरों के आधार पर की जाती है–

ऊर्जा के परंपरागत स्त्रोत	ऊर्जा के गैर-परंपरागत स्त्रोत
1. ऊर्जा के प्राचीन तथा परंपरागत रूप से उपयोग में किए जा रहे संसाधन ऊर्जा के परंपरागत स्त्रोत हैं।	1. ऊर्जा के गैर-परंपरागत स्त्रोतों का विकास नवीन वैकल्पिक संसाधन के रूप में किया गया है।
2. कोयला, खनिज तेल, बिजली तथा परमाणु ऊर्जा, ऊर्जा के परंपरागत स्त्रोत हैं।	2. सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, बायोगैस, भूतापीय ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, कूड़े कचरे से बनी ऊर्जा तथा लहरों की शक्ति से विकसित ऊर्जा, ऊर्जा के गैर परंपरागत स्त्रोत हैं।
3. परंपरागत ऊर्जा के स्त्रोत सीमित और नाशवान (अनवीकरणीय) हैं।	3. गैर-परंपरागत ऊर्जा के स्त्रोत असीमित और स्थायी (नवीकरणीय) हैं।
4. परंपरागत ऊर्जा के स्त्रोत एक बार में उपयोग होने पर नष्ट हो जाते हैं।	4. गैर-परंपरागत ऊर्जा के स्त्रोतों का नवीनीकरण किया जा सकता है।
5. परंपरागत ऊर्जा के स्त्रोत सीमित हैं, अत: इनके क्षय और अभाव का भय बना रहता है।	5. गैर-परंपरागत ऊर्जा के स्त्रोत स्थायी और अविरल है, अत: इनके अभाव होने का भय नहीं रहता है।

3. भारत के दो प्रमुख कोयला उत्पादक क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।

उ०– भारत के दो प्रमुख कोयला उत्पादक क्षेत्र निम्नलिखित हैं–

(i) झारखंड– झारखंड भारत का सबसे बड़ा कोयला उत्पादक राज्य है। यहाँ भारत का 36% कोयला झरिया, बोकारो, गिरिडीह, कर्णपुरा तथा डाल्टगंज की खानों से निकलता है। झरिया भारत की सबसे बड़ी कोयला खान है। इस खान से उत्तम कोटि का कोयला निकाला जाता है।

(ii) छत्तीसगढ़– कोयला उत्पादन में छत्तीसगढ़ राज्य का दूसरा स्थान है। यहाँ पर भारत का 28% कोयला निकाला जाता

है। इस राज्य में लखनपुर, सेंदूरगढ़, रामकोला, कुरसिया, चिरमिरी, विश्रामपुर, झिलमिली तथा सोनारहाट जनपदों में कोयले की खानें हैं। यहाँ कोयला उत्पादक प्रसिद्ध क्षेत्र कोरबा, मांड-रायगढ़ एवं हामदी–अरंड़ आदि हैं।

4. भारत में खनिज तेल उत्पादक क्षेत्रों के नाम लिखिए।

उ०– भारत में खनिज तेल उत्पादक क्षेत्रों के नाम निम्नलिखित हैं–

(i) असम तेल क्षेत्र– डिगबोई, नहर कटिया, सूलमा घाटी।

(ii) गुजरात तेल क्षेत्र– अंकलेश्वर, लुनेज, अहमदाबाद-कलोल एवं बड़ोदरा।

(iii) महाराष्ट्र तेल क्षेत्र– अरब सागर, मुंबई-हाई, ट्राम्बे।

(iv) अन्य– कृष्णा बेसिन, कावेरी डेल्टा का नरीमनम एवं कोविलप्पल।

5. भारत के पाँच परमाणु ऊर्जा उत्पादक केंद्रों के नाम लिखिए।

उ०– भारत के पाँच परमाणु ऊर्जा उत्पादक केन्द्र निम्नलिखित हैं–

(i)	मुंबई के निकट तारापुर में	= महाराष्ट्र
(ii)	कोटा के निकट रावतभाटा में	= राजस्थान
(iii)	चेन्नई के निकट कलपक्कम में	= तमिलनाडु
(iv)	बुलंदशहर के निकट नरौरा में	= उत्तर प्रदेश
(v)	काकरापारा में	= गुजरात

6. भारत की किन्हीं चार तेल शोधनशालाओं के नाम उनके राज्यों के नाम सहित लिखिए।

उ०– भारत की चार तेल शोधनशालाओं के नाम उनके राज्यों के नाम सहित निम्नलिखित हैं–

(i)	ट्राम्बे तेल शोधनशाला	= महाराष्ट्र
(ii)	मथुरा तेल शोधनशाला	= उत्तर प्रदेश
(iii)	अंकलेश्वर तेल शोधनशाला	= गुजरात
(iv)	डिगबोई तेल शोधनशाला	= असम

7. ऊर्जा के संसाधनों के महत्व की विवेचना कीजिए।

उ०– आर्थिक विकास की दौड़ लगा रहे राष्ट्रों को औद्योगिकरण का ढ़ाँचा खड़ा करने के लिए सर्वाधिक आवश्यकता ऊर्जा संसाधनों की होती है। ऊर्जा औद्योगिक क्षेत्र का प्राण है। बिजली न होने पर घर के काम रूक जाते हैं, पेट्रोल के अभाव में परिवहन के उपकरण ठप्प पड़ जाते हैं। स्वस्थ शरीर के लिए जितनी ऊर्जा आवश्यक हैं उतने ही ऊर्जा संसाधन देश के आर्थिक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं।

8. भारत में परमाणु ऊर्जा के महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– **भारत में परमाणु ऊर्जा का महत्व–** परमाणु ऊर्जा का विकास जितना अधिक जोखिम भरा है, यह उतना ही उपयोगी और महत्वपूर्ण भी है। यही कारण है, कि प्रत्येक राष्ट्र परमाणु ऊर्जा और शक्ति के विकास में लगा हुआ है। भारत में परमाणु ऊर्जा के महत्व को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) परमाणु ऊर्जा में अपार शक्ति और क्षमता विद्यमान होती है।

(ii) परमाणु ऊर्जा के संयंत्र देश में सुविधानुसार कहीं पर भी स्थापित किए जा सकते हैं। किंतु सामान्यत: इनकी स्थापना ऐसे स्थानों पर की जाती है जहाँ परमाणु ऊर्जा का ईंधन उपलब्ध नहीं होता।

(ii) परमाणु ऊर्जा का उपयोग, ईंधन, ऊर्जा तथा बम बनाने में, विविध ढंग से किया जा सकता है।

(iv) परमाणु शक्ति चिकित्सा तथा अनुसंधानात्मक जैसे क्षेत्रों में अपने शांतिपूर्ण उपयोग के लिए भी प्रयुक्त होती है।

(v) परमाणु शक्ति का भरपूर विकास कर लेने वाला राष्ट्र विश्व में शक्ति संपन्न माना जाता है।

(vi) परमाणु शक्ति राष्ट्र की सुरक्षा के लिए आवश्यक बन गई है।

9. सौर ऊर्जा क्या है? इसके विकास पर अधिक बल क्यों दिया जा रहा है?

उ०– **सौर ऊर्जा–** सूर्य की किरणों की विकिरण शक्ति को प्राप्त कर बनाई गई ऊर्जा को सौर ऊर्जा कहते हैं। वैज्ञानिकों ने सूर्य के प्रकाश की अपार शक्ति को नवीनतम तकनीकी का प्रयोग कर उपयोगी ऊर्जा में बदलकर, मानवता को अनूठा उपहार दिया

है। अतः हम कह सकते हैं कि सूर्य की किरणों से प्राप्त ऊर्जा को सौर ऊर्जा कहते हैं। सौर ऊर्जा प्राप्त करने के लिए फोटो वोल्टाइक सैलों के पैनल का प्रयोग किया जाता है।

सौर ऊर्जा के विकास पर बल– सौर ऊर्जा के विकास पर निम्नलिखित कारणों से बल दिया जा रहा है–

(i) कोयला, गैस तथा खनिज तेल जैसे ऊर्जा के परंपरागत स्रोत सदा के लिए रहने वाले नहीं है।

(ii) सौर ऊर्जा का उपयोग पर्यावरण–प्रदूषण मुक्त है।

(ii) भारत में सूर्य की धूप सालभर चमकती रहती है, अतः यहाँ सौर ऊर्जा के विकास की अधिक संभावना है।

(iv) भारत में कोयला, खनिज तेल और बिजली की खपत अधिक होने के कारण अक्सर ऊर्जा की कमी रहती है। सौर ऊर्जा इस कमी को पूरा करने का उत्तम साधन है।

10. भारत के औद्योगिक विकास में ऊर्जा के महत्व को स्पष्ट कीजिए।

उ०– भारत के औद्योगिक विकास में ऊर्जा के महत्व को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) औद्योगिक विकास का आधार ऊर्जा है।

(ii) ऊर्जा के अभाव में औद्योगिक विकास संभव नहीं है।

(ii) ऊर्जा औद्योगिक क्षेत्र का प्राण है, इसके बिना सभी उपकरण निष्क्रिय हो जाते हैं।

(iv) ऊर्जा संसाधनों से उद्योगों को चलाने तथा वस्तुओं के उत्पादन की शक्ति प्राप्त होती है।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. ऊर्जा संसाधन से आप क्या समझते हैं? भारत के प्रमुख ऊर्जा संसाधनों का वर्णन कीजिए।

उ०– **ऊर्जा संसाधन का अर्थ–** जिस प्रकार शरीर को जीवित तथा सक्रिय रखने के लिए भोजन की आवश्यकता पड़ती है, उसी प्रकार मशीनों को सक्रिय तथा गतिमान बनाने के लिए ईंधन की आवश्यकता पड़ती है। ऊर्जा के संसाधन मशीनों का ईंधन कहलाते हैं। इन संसाधनों से ही मशीनें गतिमान होकर उत्पादन में सहयोग देती हैं। ऊर्जा के संसाधन उन पदार्थों को कहते हैं, जिनसे मनुष्य को उद्योग, कृषि एवं परिवहन के साधनों हेतु ऊर्जा की प्राप्ति होती है। इसीलिए ऊर्जा के संसाधन शक्ति के संसाधन भी कहलाते हैं। कोयला, खनिज तेल और बिजली ऊर्जा संसाधनों के उदाहरण हैं। इनमें कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस एवं परमाणु खनिज भूगर्भ से निकाले जाते हैं तथा इनके भंडार सीमित हैं और ये कभी भी समाप्त हो सकते हैं। इन्हें 'परंपरागत ऊर्जा संसाधन' भी कहा जाता है। सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, बायो ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, भू-तापीय ऊर्जा, आदि ऊर्जा के गैर परंपरागत और अक्षय स्रोत माने जाते हैं। आर्थिक विकास की दौड़ लगा रहे राष्ट्रों को औद्योगिकरण का ढाँचा खड़ा करने के लिए सर्वाधिक आवश्यकता, ऊर्जा संसाधनों की ही होती है। ऊर्जा औद्योगिक क्षेत्र का प्राण है। बिजली न हो, तो घर के सभी काम रुक जाते हैं, पेट्रोल के अभाव में परिवहन के उपकरण ठप पड़ जाते हैं। ऊर्जा शरीर के लिए जितनी आवश्यक है ऊर्जा संसाधन राष्ट्र के आर्थिक स्वास्थ्य के लिए उतने ही आवश्यक हैं।

ऊर्जा के संसाधनों का वर्गीकरण– ऊर्जा के संसाधनों का वर्गीकरण निम्नवत किया जा सकता है–

(i) परंपरागत स्रोत (ii) गैर-परंपरागत स्रोत

(i) ऊर्जा के परंपरागत स्रोत– प्राचीनकाल से ऊर्जा के जिन स्रोतों का प्रयोग होता चला आ रहा है, उन्हें ऊर्जा के परंपरागत स्रोत कहा जाता है। ऊर्जा के परंपरागत स्रोतों में कोयला, पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस ऐसे पदार्थ हैं जिनका एक बार उपभोग करने के उपरांत ये सदैव के लिए समाप्त हो जाते हैं अर्थात् इनका नवीनीकरण संभव नहीं है। दूसरे, इनके उपभोग से निकलने वाली राख, धुआँ आदि पर्यावरण को प्रदूषित करते हैं। ऊर्जा के प्रमुख परंपरागत स्रोत निम्नलिखित हैं–

(क) कोयला– कोयला ऊर्जा के पारंपरिक स्रोतों में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। कोयला ऊर्जा, ताप और शक्ति का स्रोत होते हुए भी अन्य उत्पादों का स्रोत भी बना हुआ है।

कोयले का उपयोग– ऊर्जा तथा तापमान देने के अतिरिक्त कोयले से कोलतार, गंधक, नौसादर, सिंथेटिक धागे, कुकिंग कोल तथा भाप बनाकर विद्युत का उत्पादन किया जाता है। इसलिए प्रत्येक राष्ट्र कोयले के नए भंडारों की खोज तथा उत्पादन बढ़ाने में लगा हुआ है। कोयले के महत्व को जैफरे ने इन शब्दों में व्यक्त किया है, "आधुनिक संस्कृति ऊर्जा के जिन संसाधनों पर टिकी हुई है, उनमें कोयले को प्रथम स्थान मिलना चाहिए।" कोयला समूचे विश्व में ऊर्जा का 40% अंश पूरा करता है।

(ख) खनिज तेल (पेट्रोलियम)– चट्टानों से प्राप्त तेल खनिज तेल कहलाता है। खनिज तेल के निक्षेप भूगर्भीय चट्टानों में पाए जाते हैं, खनिज तेल की उत्पत्ति भूगर्भ में वनस्पतियों तथा जलजीवों के दबने तथा रासायनिक परिवर्तनों के कारण आश्मीकरण के फलस्वरूप हुई है। इसे भूगर्भीय चट्टानों से अशुद्ध रूप में खोदकर निकाला जाता है, इसलिए इसे खनिज तेल या पेट्रोलियम भी कहते हैं। खनिज तेल को शोधनशालाओं में शुद्ध करके विविध उपयोगों के लिए तैयार किया जाता है।

खनिज तेल का उपयोग– पैट्रोलियम ऊर्जा का महत्वपूर्ण स्रोत तथा औद्योगिक विकास का आधार है। औद्योगिक दृष्टि से उपयोगी तथा महत्वपूर्ण होने के कारण खनिज तेल को तरल सोना कहा जाता है। खनिज तेल को साफ करने पर इससे पेट्रोल, डीजल, केरोसिन के अतिरिक्त मोम, ग्रीस तथा क्रूड ऑयल भी मिलता है जिनका उपयोग विविध पेट्रो-रसायन उद्योगों में कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त करके उनसे 3000 से अधिक उपयोगी पदार्थ तैयार किए जाते हैं। खनिज तेल से पेट्रो-रसायन उद्योग चलाया जाता है। इससे उर्वरक, कृत्रिम रेशे, वैसलीन, मोम, सौंदर्य प्रसाधन रंग-रोगन, प्लास्टिक तथा डिटर्जेंट साबुन एवं पाउडर आदि बनाए जाते हैं। पेट्रो-रसायन उद्योग महाराष्ट्र के मुंबई तथा गुजरात के हजीरा में स्थित हैं। उपयोगिता के कारण ही खनिज तेल विश्व राजनीति का केंद्र बिंदु बन रहा है।

(ग) प्राकृतिक गैस– प्रकृति बड़ी उदार है। उसने मानव को खनिज तेल के साथ-साथ प्राकृतिक गैस भी प्रदान की है। भारत के कुछ स्थानों पर प्राकृतिक गैस के भंडार प्राप्त हुए हैं। प्राकृतिक गैस पैराफिन युक्त उच्च **हाईड्रोकार्बन** के मिश्रण का रासायनिक संगठन होती है, जो ऑक्सीजन का संपर्क पाते ही ज्वलनशील बन जाती है। भारत में प्राकृतिक गैस का उपयोग गत तीन दशकों से ऊर्जा के स्रोत के रूप में किया जा रहा है। प्रकृति द्वारा प्रदत्त ज्वलनशील उपयोगी गैस को ही प्राकृतिक गैस कहा जाता है। अब भारत में खनिज तेल के स्थान पर प्राकृतिक गैस की ऊर्जा पर निर्भरता बढ़ती जा रही है। यही कारण है कि "प्राकृतिक गैस वर्तमान ऊर्जा का स्रोत तथा भविष्य की आशा बन गई है।" भारत में प्राकृतिक गैस का परिवहन पाइपलाइन के माध्यम से किया जाता है। भारत में 1,240 किमी० लंबी पाइपलाइन इस कार्य में लगी है। यह पाइपलाइन गुजरात के जामनगर से प्रारंभ होकर गुजरात, राजस्थान, हरियाणा, दिल्ली होती हुई उत्तर प्रदेश राज्य तक जाती है। यह पाइप लाइन 17 लाख 50 हजार टन वार्षिक रसोईगैस की आपूर्ति करती है। वर्तमान में प्राकृतिक गैस का उपयोग निम्न कार्यों के लिए किया जा रहा है–

(अ) घरों में भोजन पकाने के ईंधन के रूप में।
(ब) उद्योगों में ऊर्जा के स्रोत के रूप में।
(स) रासायनिक उद्योग, रासायनिक उर्वरक उद्योग तथा पेट्रो–रसायन उद्योग में कच्चे माल के रूप में।
(द) बस, कार, ट्रक आदि को चलाने के लिए सी.एन.जी. ऊर्जा के रूप में।

(घ) परमाणु खनिज– परमाणु ऊर्जा वर्तमान युग की एक आवश्यक बुराई बनकर उभरी है। सभी राष्ट्र इस महाविनाशक ऊर्जा के विकास में जी-जान से जुटे हैं। परमाणु ऊर्जा कुछ प्रमुख खनिजों के विखंडन से प्राप्त होती है। परमाणु ऊर्जा प्रदान करने वाले खनिज तत्व परमाणु खनिज कहलाते हैं। परमाणुओं के विखंडन तथा संलयन से जो महान शक्ति प्राप्त होती है, उसे परमाणु ऊर्जा या नाभिकीय ऊर्जा कहा जाता है। परमाणु खनिज मुख्य रूप से निम्नलिखित हैं–

यूरेनियम, थोरियम, ग्रेफाइट, एंटीमनी, बोरीलियम, प्लूटोनियम, चेरोलिट, जर्कोनियम, इल्मेनाइट आदि उपर्युक्त खनिजों में यूरेनियम और थोरियम सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इन दोनों खनिजों में अपार परमाणु ऊर्जा छिपी होती है। परमाणु ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त संसाधनों तथा उच्चकोटि की तकनीक की आवश्यकता होती है। परमाणु भट्टी में हुई जरा-सी असावधानी से यह रेडियोधर्मी पदार्थ जन–जीवन तथा पर्यावरण को भारी नुकसान पहुँचा सकता है। कहावत है "सावधानी हटी, दुर्घटना घटी"। सोवियत संघ के चेरनोबिल परमाणु संयत्र में हुआ रिसाव इसका ज्वलंत उदाहरण है।

(ii) ऊर्जा के गैर–परंपरागत (वैकल्पिक) स्रोत– संसार के सभी राष्ट्रों में बढ़ती जनसंख्या की दैनिक तथा औद्योगिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में ऊर्जा के परंपरागत स्रोत असमर्थ सिद्ध हो रहे हैं, अत: ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों को

खोजने की आवश्यकता अनुभव की गई है। "वैज्ञानिकों ने ऊर्जा के जिन नए स्रोतों को खोज निकाला हैं, उन्हें ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत या गैर-परंपरागत स्रोत कहा जाता है।" यदि ऊर्जा के इन वैकल्पिक स्रोतों की खोज न की गई होती, तो समूचा विश्व ऊर्जा संसाधनों के अभाव के भीषण संकट से ग्रसित हो गया होता। जैसे पुरानी और घिसी-पिटी परंपराओं को नई विचारधाराएँ भुलवा देती हैं, वैसे ही नवीन गैर-परंपरागत ऊर्जा के साधनों ने परंपरागत ऊर्जा स्रोतों के महत्व को घटा दिया है। वैकल्पिक ऊर्जा के मुख्य स्रोत निम्नलिखित हैं–

(क) **सौर ऊर्जा–** प्रकृति ने सूर्य की रश्मियों में अपरिमित शक्ति छिपा रखी है। सूर्य की किरणों से प्राप्त ऊर्जा को 'सौर ऊर्जा' कहते हैं। वैज्ञानिकों ने धूप की शक्ति को पहचाना और अपने अथक प्रयासों से उसे ऊर्जा के रूप में परिवर्तित कर उपयोगी बना लिया। सौर ऊर्जा वर्तमान में ऊर्जा के सर्वाधिक महत्वपूर्ण वैकल्पिक ऊर्जा के स्रोत के रूप में उभरी है। जिन देशों में सालभर धूप चमकती है, वे इस ऊर्जा स्रोत से लाभान्वित हो रहे हैं। भारत भी उन्हीं में से एक भाग्यशाली देश है। **सूर्य की किरणों की विकिरण शक्ति प्राप्त कर बनाई गई ऊर्जा ही, सौर ऊर्जा कहलाती है।** वैज्ञानिकों ने सूर्य के प्रकाश की अपार शक्ति को नवीनतम तकनीकी का प्रयोग कर उपयोगी ऊर्जा में बदलकर, मानवता को अनूठा उपहार दिया है। सौर ऊर्जा को प्राप्त करने के लिए फोटो वोल्टाइक सैलों के पैनल का प्रयोग किया जाता है। सौर ऊर्जा पानी गरम करने, सड़कों पर प्रकाश करने, ग्रामीण क्षेत्रों का विद्युतिकरण करने, खाना बनाने तथा घरों के लिए ऊर्जा प्राप्ति में बड़ी उपयोगी सिद्ध हो रही है।

(ख) **पवन ऊर्जा–** पवन संचार, प्रकृति का एक ओर चमत्कार है। पवन वर्षा, सर्दी, गर्मी, के साथ–साथ जीव धारियों को शीतलता और प्राणवायु भी प्रदान करती है। वैज्ञानिकों ने पवन की अपारशक्ति को अनुभव करके उसकी अपरिचित शक्ति को ऊर्जा के रूप में परिवर्तित करके ऊर्जा के अभाव को दूर करने का सफल प्रयास किया है। पवन ऊर्जा पवन-चक्कियों के माध्यम से विण्ड मॉनिटरिंग स्टेशन स्थापित करके उत्पन्न की जाती है। **पवन की शक्ति के प्रयोग से तैयार की जा रही ऊर्जा को पवन ऊर्जा कहा जाता है।** निकट भविष्य में वैज्ञानिक पवन की गति से टरबाइन चलाकर विद्युत उत्पादन कर सकेंगे। इस कार्य में सफलता मिलते ही ऊर्जा आपूर्ति में क्रांतिकारी सुधार आ जाएँगे। पवन ऊर्जा का प्रयोग प्रकाश करने, नलकूप चलाने, दैनिक कार्य संपन्न करने तथा औद्योगिक क्षेत्रों में सुविधाजनक ढंग से किया जा सकता है।

पवन ऊर्जा की स्थापित क्षमता के मामलें में भारत का विश्व में पाँचवा तथा एशिया में दूसरा स्थान है। पवन ऊर्जा उत्पादन में विश्व के चार अग्रणी देश क्रमश: संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, स्पेन तथा चीन हैं।

(ग) **बायोगैस ऊर्जा–** वैज्ञानिकों ने गोबर के उपयोग से गैस बनाकर बायोगैस ऊर्जा की उत्पत्ति की। यह बायोगैस गो-–पालक ग्रामीण क्षेत्रों के लिए ऊर्जा का महत्वपूर्ण स्रोत बनकर प्रकट हुई। ग्रामीण क्षेत्रों में इसका प्रयोग घरों को प्रकाशित करने तथा भोजन पकाने में किया जाता है। इसके महत्व को बढ़ाने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में यह नारा उभरा, "बेटी दो वहाँ, गोबर गैस हो जहाँ।" बायोगैस पक्के गढढों में गोबर को सड़ाकर प्राप्त की जाती है। बाद में सड़ा हुआ गोबर खाद के रूप में प्रयोग में आने के कारण 'आम के आम गुठलियों के दाम' की कहावत चरितार्थ कर देता है। भारत के ग्रामीण अंचल में 40 लाख गोबर गैस प्लांट गाँवों में प्रकाश और ऊर्जा की आपूर्ति कर रहे हैं।

(घ) **भूतापीय ऊर्जा–** पृथ्वी के आंतरिक भाग में गहराई के साथ-साथ ताप में निरंतर वृद्धि होती जाती है। जिन भागों में गर्म जल के स्रोत आदि पाए जाते हैं वहाँ भूताप की मात्रा अधिक पाई जाती है। भूताप की शक्ति के प्रयोग से जो ऊर्जा बनाई जाती है, उसे भूतापीय ऊर्जा कहते हैं। विश्व के अनेक देशों जैसे न्यूजीलैंड, इटली तथा आइसलैंड ने भूतापीय ऊर्जा का खूब विकास कर लिया है। भारत के हिमाचल प्रदेश की काँगड़ा घाटी में ज्वालादेवी में भूतापीय ऊर्जा का विकास किया जा रहा है। सभी देशों में भूतापीय ऊर्जा के उत्पादन की अनुकूल दशाएँ नहीं पाई जाती हैं।

(ङ) **ज्वारीय ऊर्जा–** महासागरों में ज्वार उठने की दैनिक क्रिया है। ज्वार सागर के जल को ऊँचा उठा देता है, जिसमें अपार शक्ति होती है। **ज्वार के जल की गतिज ऊर्जा से टरबाइन चलाकर जो बिजली बनाई जाती है, उसे ज्वारीय ऊर्जा कहते हैं।** फ्रांस और जापान देशों के साथ–साथ भारत में भी ज्वारीय ऊर्जा के विकास की दिशा में शोध कार्य किए जा रहे हैं।

(च) **औद्योगिक कूड़े-कचरे से उत्पन्न ऊर्जा–** महानगरों में दैनिक उपभोग और औद्योगिक उत्पादन के बाद

छिलके, फल-सब्जियों के अवशेष, घरेलू अपशिष्ट, डब्बे तथा पैकिंग्स के रूप में हजारों टन कूड़ा-कचरा उत्पन्न होता है। इसके प्रबंधन की समस्या बड़ी विकट थी। वैज्ञानिकों ने इसे जलाकर जहाँ इसके उचित प्रबंधन की समस्या हल कर ली है, वहीं इससे ऊर्जा उत्पादन की विधि निकालकर एक तीर से दो निशाने लगाए हैं। औद्योगिक कूड़ा-कचरा अब प्रदूषक न रहकर ऊर्जा का स्रोत बन गया है। कूड़े-कचरे को जलाकर शक्ति से जो ऊर्जा बनाई जाती है, उसे कूड़े-कचरे से उत्पन्न ऊर्जा कहते हैं। भारत में मुंबई, कोलकाता, चेन्नई तथा दिल्ली आदि महानगरों में इस ऊर्जा के विकास के सघन प्रयास किए जा रहे हैं।

(छ) सागरीय लहरों से उत्पन्न ऊर्जा– लहरें उठना सागरीय जल की एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। लहरों के आगे बढ़ने पर उनमें गतिज ऊर्जा उत्पन्न हो जाती है। वैज्ञानिकों ने लहरों की इसी शक्ति से टरबाइन चलाकर जो ऊर्जा प्राप्त करने की विधि निकाली है, वह भविष्य के लिए ऊर्जा का एक महत्वपूर्ण स्रोत बन जाएगीं। सागरीय लहरों की शक्ति के उपयोग से बनाई जाने वाली विद्युत को लहरों से उत्पन्न ऊर्जा कहा जाता है।

2. भारत के प्रमुख तीन परंपरागत एवं तीन गैर-परंपरागत ऊर्जा संसाधनों का वर्णन कीजिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

3. भारत में कोयला उत्पादक क्षेत्रों का वर्णन कीजिए तथा कोयले का महत्व बताइए।

उ०– भारत में कोयले का उत्पादन और क्षेत्र– भारत में कोयले के सुरक्षित भंडारों का जो अनुमान 2011 में लगाया गया है उसके अनुसार कोयले का भंडार 25360 करोड़ टन हो सकता है। भारत का 98% कोयला गोंडवाना क्षेत्र से तथा 2% टरशियरी क्षेत्र से प्राप्त किया जाता है। भारत के कुल कोयला उत्पादन में 80% भाग बिटुमिनस कोयले का होता है। भारत के प्रमुख कोयला उत्पादक राज्य निम्नलिखित हैं–

(i) झारखंड– झारखंड भारत का सबसे बड़ा कोयला उत्पादक राज्य है। यहाँ भारत का 36% कोयला झरिया, बोकारो, गिरिडीह, कर्णपुरा तथा डाल्टगंज की खानों से निकलता है। झारिया भारत की सबसे बड़ी कोयला खान है। इस खान से उत्तम कोटि का कोयला निकाला जाता है।

(ii) पश्चिमी बंगाल– कोयला उत्पादन में पश्चिमी बंगाल का भारत में तृतीय स्थान है। यह राज्य भारत का लगभग 13% कोयला निकालता है। यहाँ रानीगंज की खान से सर्वाधिक कोयला निकाला जाता है। बॉकुडा, वर्दवान तथा पुरूलिया जनपद इस राज्य के प्रमुख कोयला उत्पादक जिले हैं।

(iii) छत्तीसगढ़– कोयला उत्पादन में छत्तीसगढ़ राज्य का दूसरा स्थान है। यहाँ पर भारत का 28% कोयला निकाला जाता है। इस राज्य में लखनपुर, सेंदूरगढ़, रामकोला, कुरसिया, चिरमिरी, विश्रामपुर, झिलमिली तथा सोनारहाट जनपदों में कोयले की खानें हैं। यहाँ कोयला उत्पादक प्रसिद्ध क्षेत्र कोरबा, मांड-रायगढ़ एवं हामदी-अरंड़ आदि हैं।

(iv) मध्य प्रदेश– मध्य प्रदेश राज्य भी पर्याप्त मात्रा में कोयला निकालता है। इसके कोयला उत्पादक क्षेत्र पूर्व में छत्तीसगढ़ के कोयला उत्पादक क्षेत्रों से जुड़े हुए हैं। सिंगरौली, सोहागपुर, उमरिया, जोहिल्ला, पेंच घाटी, कान्हन तथा पंथखेड़ा मध्य प्रदेश की प्रमुख कोयला निकालने वाली खानें हैं।

(v) भारत के अन्य कोयला उत्पादक राज्य– महाराष्ट्र, ओडिशा, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, गुजरात तथा असम आदि राज्य भी थोड़ी मात्रा में कोयला निकालते हैं।

कोयले का उपयोग– ऊर्जा तथा तापमान देने के अतिरिक्त कोयले से कोलतार, गंधक, नौसादर, सिंथेटिक धागे, कुकिंग कोल तथा भाप बनाकर विद्युत का उत्पादन एवं लोह-अयस्क के प्रगलन में इसका उपयोग किया जाता है। इसलिए प्रत्येक राष्ट्र कोयले के नए भंडारों की खोज तथा उत्पादन बढ़ाने में लगा हुआ है। कोयले के महत्व को जैफरे ने इन शब्दों में व्यक्त किया है, "आधुनिक संस्कृति ऊर्जा के जिन संसाधनों पर टिकी हुई है, उनमें कोयले को प्रथम स्थान मिलना चाहिए।" कोयला समूचे विश्व में ऊर्जा का 40% अंश पूरा करता है।

कोयले की ऊर्जा से ही विश्व का औद्योगिक विकास संभव हो पाता है। यह औद्योगिक क्रांति का प्रमुख आधार है। इसकी उपयोगिता के कारण इसे काला सोना तथा काला हीरा भी कहते हैं।

4. भारत में खनिज तेल उत्पादक क्षेत्रों का वर्णन करते हुए खनिज तेल के महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– भारत में खनिज तेल का उत्पादन एवं वितरण– भारत में खनिज तेल के स्रोत कम हैं, अत: भारत अपनी आवश्यकता से कम खनिज तेल का उत्पादन कर पाता है। वह अपनी अधिकतम माँग की पूर्ति विदेशों से खनिज तेल आयात करके करता

है, सन् 1890 ई० में असम में डिगबोई तथा ओडिशा में कटक केवल दो ही तेल उत्पादक क्षेत्र थे। भारत में 1956 ई० में तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग की स्थापना उत्तराखंड राज्य के देहरादून नगर में की गई। इस आयोग ने खनिज तेल संभावित क्षेत्रों का सर्वेक्षण कराकर भारत में खनिज तेल उत्पादन के क्षेत्र में क्रांति ला दी। किंतु देश में प्रतिवर्ष नवीन तेल उत्पादक क्षेत्रों की खोज होने पर भी भारत खनिज तेल उत्पादन के क्षेत्र में पिछड़ा हुआ है। भारत के निम्नलिखित राज्यों में खनिज तेल निकाला जाता है–

(i) **असम तेल क्षेत्र–** असम भारत का प्राचीन एवं प्रमुख खनिज तेल उत्पादक राज्य है। यहाँ के खनिज तेल उत्पादक क्षेत्र का विस्तार उत्तरी पूर्वी छोर से प्रारंभ होकर सूरमा नदी की घाटी तक चला गया है। असम के प्रमुख खनिज तेल उत्पादक क्षेत्र डिगबोई, तेल क्षेत्र, नहरकटिया तथा सूलमाघाटी तेल क्षेत्र हैं। इन तेल उत्पादक क्षेत्रों से निकाला गया कच्चा और अशुद्ध खनिज तेल डिगबोई, गुवाहाटी, बरौनी, नूनामती तथा बोगई गाँव आदि तेल शोधनशालाओं को पाइप लाइन द्वारा भेज दिया जाता है।

(ii) **गुजरात तेल क्षेत्र–** गुजरात भारत का प्रमुख खनिज तेल उत्पादक राज्य बनकर उभरा है। यहाँ तेल के नए क्षेत्र खोज निकाले गए हैं, जिनसे पर्याप्त मात्रा में खनिज तेल निकाला जाने लगा है। महासागर में खनिज तेल के नए क्षेत्र खोजने का कार्य यहाँ निरंतर चल रहा है। अंकलेश्वर तेल क्षेत्र, लुनेज तेल क्षेत्र, अहमदाबाद–कलोल तेल क्षेत्र एवं वड़ोदरा खनिज तेल क्षेत्र गुजरात के प्रमुख खनिज तेल उत्पादक क्षेत्र है। यहाँ दूर अरब सागर में स्थित अलियाबेट द्वीप में भी तेल निकाला जाता है। गुजरात का अशुद्ध खनिज तेल अंकलेश्वर और कोयली की तेल शोधनशालाओं में साफ किया जाता है।

(iii) **महाराष्ट्र के तेल क्षेत्र–** महाराष्ट्र भी भारत का उल्लेखनीय खनिज तेल उत्पादक राज्य बन गया है। इस राज्य के पश्चिमी तट पर अरब सागर के गहरे जल से खनिज तेल प्राप्त किया जाता है। मुंबई–हाई यहाँ का प्रमुख खनिज तेल उत्पादक क्षेत्र बन गया है, जहाँ 'सागर सम्राट' नामक जापानी जल मंच की सहायता से खनिज तेल निकालने का कार्य किया जाता है। मुंबई–हाई के निकट बेसीन क्षेत्र में भी खनिज तेल निकालने के प्रयास किए जा रहें हैं। ट्राम्बे में महाराष्ट्र का खनिज तेल शोधन कारखाना है।

(iv) **नवीन खनिज तेल उत्पादक क्षेत्र–** भारत के पूर्वी तटीय क्षेत्र में कृष्णा बेसिन तथा कावेरी बेसिन में खनिज तेल के नए भंडार खोजे गए हैं। कावेरी डेल्टा के नारीमनम एवं कोविलप्पल क्षेत्रों में खनिज तेल निकालने का कार्य प्रारंभ हो चुका है जबकि, कृष्णा बेसिन में शोध कार्य चल रहे हैं।

भारत भारी मात्रा में सऊदी अरब, कुवैत, ईरान, इराक, तथा इंडोनेशिया आदि देशों से खनिज तेल का आयात करता है। उत्तर प्रदेश की मथुरा तेल शोधनशाला को यही कच्चा तेल शोधन के लिए प्राप्त होता है।

खनिज तेल का महत्व– खनिज तेल ऊर्जा का महत्पपूर्ण स्रोत तथा औद्योगिक विकास का आधार है। औद्योगिक दृष्टि से उपयोगी तथा महत्वपूर्ण होने के कारण खनिज तेल को तरल सोना कहा जाता है। खनिज तेल को साफ करने पर इससे पेट्रोल, डीजल, केरोसिन के अतिरिक्त मोम, ग्रीस तथा क्रूड ऑयल भी मिलता है जिनका उपयोग विविध पेट्रो–रसायन उद्योगों में कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त करके उनसे 3000 से अधिक उपयोगी पदार्थ तैयार किए जाते हैं। खनिज तेल से पेट्रो–रसायन उद्योग चलाया जाता है। इससे उर्वरक, कृत्रिम रेशे, वैसलीन, मोम, सौंदर्य प्रसाधन रंग-रोगन, प्लास्टिक तथा डिटर्जेंट साबुन एवं पाउडर आदि बनाए जाते हैं। पेट्रो–रसायन उद्योग महाराष्ट्र के मुंबई तथा गुजरात के हजीरा में स्थित हैं। उपयोगिता के कारण ही खनिज तेल विश्व राजनीति का केंद्र बिंदु बन रहा है।

5. भारत में परमाणु ऊर्जा और सौर ऊर्जा के बारे में विवरण दीजिए।

उ०– भारत में परमाणु ऊर्जा– भारत में सर्वप्रथम सन् 1960 ई० में मुंबई के तारापुर में परमाणु ऊर्जा केंद्र स्थापित किया गया था। भारत ने सन् 1974 तथा 1998 में शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिए राजस्थान के पोखरन नामक स्थान पर चार परमाणु परीक्षण किए जिसके कारण भारत विश्व का छठा परमाणु शक्ति संपन्न राष्ट्र बन गया है। भारत में निम्नलिखित परमाणु ऊर्जा संयंत्रों की स्थापना की गई है–

(i) मुंबई के निकट तारापुर में	=	महाराष्ट्र
(ii) कोटा के निकट रावतभाटा में	=	राजस्थान

(iii) चेन्नई के निकट कलपक्कम में = तमिलनाडु
(iv) बुलंदशहर के निकट नरौरा में = उत्तर प्रदेश
(v) काकरापारा में = गुजरात
(vi) कैगा में = कर्नाटक

उपर्युक्त के अतिरिक्त 6800 मेगावाट क्षमता के 8 नए परमाणु रिएक्टर लगाने की अनुमति सरकार ने दे दी है। भारत की वर्तमान परमाणु ऊर्जा उत्पादन क्षमता 4120 मेगावाट है।

भारत में सौर ऊर्जा का भविष्य (महत्व)– सौर ऊर्जा भारत जैसे विशाल और विकासशील देश के लिए एक अलौकिक उपहार सिद्ध हुई है। भारत में सौर ऊर्जा का महत्व तथा भविष्य उज्ज्वल रहने की संभावनाएँ हैं, क्योंकि–

(i) भारत में सूर्य की धूप सालभर चमकती रहती है, अत: यहाँ सौर ऊर्जा के विकास की संभावनाएँ बहुत उज्ज्वल हैं।
(ii) भारत में फोटो वोल्टेइक सैल पैनल सुविधापूर्वक कम खर्च में तैयार हो जाते हैं।
(iii) भारत गाँवों में बसता हैं। ग्रामीण जन–जीवन में सुख–सुविधा का प्रकाश फैलाने में सौर ऊर्जा प्राकृतिक उपहार से कम नहीं है।
(iv) भारत में कोयला, खनिज तेल और बिजली की भारी खपत है जिसके कारण अक्सर ऊर्जा की कमी रहती है। ऐसे में सौर ऊर्जा उसी कमी को पूरा करने का उत्तम साधन बन गई है।
(v) भारत में घटते जीवांश ईंधन के स्थानापन्न के रूप में सौर ऊर्जा नवजीवन लेकर प्रकट हुई है।

भारत में सौर ऊर्जा उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब, दिल्ली राजधानी क्षेत्र, बिहार, मध्य प्रदेश, तथा छत्तीसगढ़ राज्यों में विकसित की जा रही है। सौर ऊर्जा वर्तमान की आवश्यकता और भविष्य की ऊर्जा बन जाएगी।

6. गैर–परंपरागत ऊर्जा स्रोतों से क्या अभिप्राय है? इन स्रोतों के महत्व बताइए।

उ०– **ऊर्जा के गैर–परंपरागत (वैकल्पिक) स्रोत–** संसार के सभी राष्ट्रों में बढ़ती जनसंख्या की दैनिक तथा औद्योगिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में ऊर्जा के परंपरागत स्रोत असमर्थ सिद्ध हो रहे हैं, अत: ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों को खोजने की आवश्यकता अनुभव की गई है। "वैज्ञानिकों ने ऊर्जा के जिन नए स्रोतों को खोज निकाला हैं, उन्हें ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत या गैर–परंपरागत स्रोत कहा जाता है।" यदि ऊर्जा के इन वैकल्पिक स्रोतों की खोज न की गई होती, तो समूचा विश्व ऊर्जा संसाधनों के अभाव के भीषण संकट से ग्रसित हो गया होता। जैसे पुरानी और घिसी–पिटी परंपराओं को नई विचारधाराएँ भुलवा देती हैं, वैसे ही नवीन गैर–परंपरागत ऊर्जा के साधनों ने परंपरागत ऊर्जा स्रोतों के महत्व को घटा दिया है। वैकल्पिक ऊर्जा के मुख्य स्रोत निम्नलिखित हैं–

(i) सौर ऊर्जा
(ii) पवन ऊर्जा
(iii) बायो गैस ऊर्जा
(iv) भूतापीय ऊर्जा
(v) ज्वारीय ऊर्जा
(vi) औद्योगिक कूड़े–कचरे से उत्पन्न ऊर्जा
(vii) सागरीय लहरों से उत्पन्न ऊर्जा

गैर–परंपरागत (वैकल्पिक) ऊर्जा स्रोतों का महत्व– गैर–परंपरागत ऊर्जा के नवीन स्रोतों ने अंधकार में डूबती मानवता को तिनके का सहारा बनकर उबार लिया है। वर्तमान दैनिक जीवन में उपयोग होने वाले टी०वी०, फ्रिज, माइक्रोवेव, ए.सी. तथा अन्य उपकरण इन साधनों के बिना शांत और निर्जीव पड़े रहते हैं। गैर–परंपरागत ऊर्जा के महत्व को निम्नवत् व्यक्त किया जा सकता है–

(i) गैर–परंपरागत ऊर्जा के स्रोतों ने पारंपरिक ऊर्जा के स्रोतों का स्थान लेकर मानवता को इनके अभाव के गंभीर संकट में फँसने से बचाया है।
(ii) गैर–परंपरागत ऊर्जा के स्रोतों ने मानव के दैनिक जीवन को सुगम और सुखद बना दिया है।
(iii) गैर–परंपरागत ऊर्जा के स्रोतों ने कृषि, परिवहन तथा उद्योगों को नवजीवन दिया है।
(iv) गैर–परंपरागत ऊर्जा के स्रोतों ने धूप, पवन, जल, भूगर्भीय ताप, ज्वारशक्ति तथा लहरों की शक्ति के साथ–साथ कूड़ा–करकट जैसे व्यर्थ पड़े रहने वाले पदार्थों को ऊर्जा में बदलकर इनको महत्वपूर्ण संसाधन बना दिया है।

(v) ऊर्जा के गैर-परंपरागत स्रोत पर्यावरण को स्वच्छ रखते हैं क्योंकि इनसे प्रदूषण बहुत कम होता है।

(vi) ऊर्जा के गैर-परंपरागत स्रोत नवीकरणीय स्रोत हैं, इनकी सेवाएँ मानवमात्र को सदैव मिलती रहेंगी।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

40 खनिज संसाधन

(धात्विक, अधात्विक खनिज, लोह-अयस्क, मैंगनीज, अभ्रक, बॉक्साइट, ताँबा आदि-उपयोग एवं संरक्षण)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 362 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 362 व 363 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. खनिज संसाधन किसे कहते हैं? खनिज संसाधनों के दो महत्व लिखिए।

उ०– खनिज, रासायनिक और भौतिक तत्वों के संगठन हैं, जिन्हें अयस्क के रूप में भू-गर्भ से खोदकर निकाला जाता है। अयस्क को साफ करके और शुद्ध बनाकर, उनसे प्राप्त उपयोगी और मूल्यवान तत्व खनिज पदार्थ कहलाते हैं।

खनिज संसाधनों के दो महत्व निम्नलिखित हैं–

(i) खनिज पदार्थ राष्ट्र की महत्वपूर्ण संपत्ति तथा औद्योगिक उन्नति के आधार हैं।

(ii) बॉक्साइट, अभ्रक, मैंगनीज आदि खनिज पदार्थ विविध उद्योगों को कच्चा माल उपलब्ध कराकर उनका पोषण करते हैं।

2. बॉक्साइट के महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– बॉक्साइट एक महत्वपूर्ण औद्योगिक एवं उपयोगी धात्विक खनिज है। इसे साफ करके एल्यूमिनियम धातु प्राप्त की जाती है, जिसका उपयोग विद्युत उपकरण, वायुयान के इंजन, रेलवे कोचों की बॉडी, मोटर कार, बर्तन तथा वैज्ञानिक उपकरण बनाए जाते हैं। अनेक उद्योगों में कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त होने के कारण एल्युमिनियम की माँग बढ़ने के साथ-साथ बॉक्साइट का महत्व भी बढ़ रहा है।

3. अभ्रक की उपयोगिता लिखिए।

उ०– **अभ्रक की उपयोगिता–** अभ्रक का महत्व औद्योगिक दृष्टि से अधिक होने के कारण यह बहुत उपयोगी खनिज है। इस बहुउपयोगी खनिज की उपादेयता को निम्न बिंदुओं के माध्यम से व्यक्त किया जा सकता है–

(i) अभ्रक विद्युत का कुचालक होने के कारण विद्युत तथा इलैक्ट्रोनिक उपकरण बनाने में प्रयुक्त किया जाता है।

(ii) यह ताप का कुचालक होने के कारण अग्निरोधक वस्त्र बनाने तथा भट्टियों में लगाने में प्रयुक्त होता है।

(iii) अभ्रक का उपयोग नेत्ररक्षक चश्मे बनाने में किया जाता है।

(iv) यह पारदर्शक और चमकीला होने के कारण रंग-रोगन बनाने में प्रयुक्त किया जाता है।

(v) अभ्रक का उपयोग टेलीफोन, रेडियो, वायुयान तथा काँच की चिमनियाँ बनाने में किया जाता है।

(vi) इसका उपयोग अनेक सैन्य उपकरण तथा बेतार का तार उपकरण बनाने में किया जाता है।

(vii) अभ्रक में औषधीय गुण होते हैं, अत: इससे अनेक दवाइयाँ भी बनाई जाती हैं।

(viii) अभ्रक भवनों की खिड़कियाँ बनाने, सजावटी कागज बनाने तथा शीट्स बनाने में भी प्रयुक्त होता है।

4. मैंगनीज की उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।

उ०– **मैंगनीज की उपयोगिता–** विविध कार्यों में प्रयुक्त होने के कारण बहु उपयोगी इस खनिज ने औद्योगिक जगत में बड़ी लोकप्रियता प्राप्त कर ली है। मैंगनीज के महत्व और उपयोगिता को निम्न बिंदुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है–

(i) मैंगनीज वह खनिज है जो अपने सम्मिश्रण से लोहे को इस्पात बना देता है।
(ii) यह अन्य धातुओं के साथ मिलकर उन्हें कठोर और टिकाऊ बना देता है।
(iii) एल्युमीनियम के तारों पर मैंगनीज की परत चढ़ाकर उनसे विद्युत उपकरण बनाए जाते हैं।
(iv) मैंगनीज का उपयोग विद्युत उपकरण बनाने के साथ-साथ काँच बनाने तथा वायुयान बनाने में भी किया जाता है।
(v) मैंगनीज से ब्लीचिंग पाउडर, कीटनाशक दवाइयाँ तथा शुष्क बैटरियाँ बनाई जाती हैं।
(vi) मैंगनीज से सेना के लिए टैंक तथा रेलगाड़ी के डिब्बे भी बनाए जाने लगे हैं।

5. ताँबे का उपयोग लिखिए। यह भारत में कहाँ पाया जाता है?

उ०– **ताँबे का उपयोग–** ताँबा विद्युत का सुचालक और जंग से सुरक्षित बना रहने के कारण एक उपयोगी धातु है। वर्तमान समय में इसका उपयोग मुख्य रूप से विद्युत उपकरण, टेलीफोन तथा टेलीग्राफ उपकरण, बर्तन, मूर्तियाँ बनाने में किया जाता है। आभूषणों को सुदृढ़ता प्रदान करने के लिए ताँबे को स्वर्ण के साथ मिलाया जाता है।

भारत में ताँबे का वितरण– भारत ताँबा उत्पादन में पिछड़ा हुआ है। भारत का 70% ताँबा झारखंड राज्य में निकाला जाता है। यहाँ सिंहभूम तथा हजारीबाग में ताँबा निकाला जाता है। आंध्र प्रदेश के कुर्नूल, अनंतपुर तथा नल्लौर जिलों में ताँबा निकाला जाता है। हिमाचल प्रदेश की कांगडा और कुल्लू घाटियाँ ताँबा उत्पादन में प्रसिद्ध हैं। राजस्थान में खेतड़ी, अलवर, दरीसा क्षेत्र भीलवाड़ा तथा उदयपुर में ताँबा पाया जाता है। मध्य प्रदेश, कर्नाटक तथा तमिलनाडू राज्य भी थोड़ी मात्रा में ताँबा उत्पादन करते हैं।

6. खनिजों के संरक्षण के चार उपाय लिखिए

उ०– **खनिज संसाधनों का संरक्षण–** खनिज संसाधन राष्ट्र के लिए उपयोगी ही नहीं अनिवार्य भी है, अतः इनके संरक्षण की उचित व्यवस्था होना आवश्यक है। खनिज संसाधनों के संरक्षण हेतु निम्नलिखित चार उपाय किए जा सकते हैं–

(i) खनिजों के खनन में नवीनतम् तकनीकी का प्रयोग करके उनकी अधिक से अधिक मात्रा प्राप्त करने का प्रयास किया जाए।
(ii) खनिजों के प्रगलन तथा शुद्धिकरण में उच्चकोटि की तकनीक अपनाकर उनकी अधिकाधिक मात्रा ग्रहण करने का उपाय किया जाना चाहिए।
(iii) खनिज संसाधनों का विदोहन आवश्यकता को ध्यान में रखकर नियंत्रित तथा योजनाबद्ध ढंग से किया जाए।
(iv) ताँबा, सीसा, चाँदी और सोना आदि धातुओं के स्क्रेप को पुनर्चक्रण द्वारा अधिकाधिक उपयोग में लाने का कार्य किया जाए।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. लौह–अयस्क की क्या उपयोगिता है? भारत में लौह–अयस्क के क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।

उ०– **लौह–अयस्क का उपयोग और महत्व–** लौह-अयस्क बहुत ही महत्वपूर्ण और उपयोगी खनिज है। इसकी उपयोगिता को निम्नवत स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) कच्चा लोहा इस्पात बनाने के काम आता है।
(ii) इस्पात का उपयोग मशीनें तथा उपकरण बनाने में किया जाता है।
(iii) बाँध, पुल, कारखाने तथा आवास बिना लोहे के नहीं बनाए जा सकते हैं।
(iv) कृषि उपकरण तथा परिवहन के साधन लोहे से ही बनाए जाते हैं।
(v) लोहा औद्योगीकरण को साकार बनाकर राष्ट्र को आर्थिक दृष्टि से संपन्न बनाता है।
(vi) बंदूक, तोप, पैटन टैंक से लेकर अनेक अस्त्र-शस्त्र लोहे से ही बनाए जाते हैं, अतः राष्ट्र की सुरक्षा की दृष्टि से लौह–अयस्क बड़ा उपयोगी है।

भारत में लौह–अयस्क का उत्पादन और वितरण– भारत को प्रकृति ने लौह-अयस्क के क्षेत्र में धनी बनाया है, क्योंकि विश्व के 25% सुरक्षित लौह–अयस्क के भंडार भारत में पाए जाते हैं। भारत लौह-अयस्क के उत्पादन में अभी भी पिछड़ा हुआ है, क्योंकि यहाँ विश्व का मात्र 5% लौह–अयस्क ही निकाला जाता है। भारत में मैग्नेटाइट और हैमेटाइट प्रकार का उत्तम कोटि का लौह-अयस्क अधिक निकाला जाता है जिसकी माँगें विश्वभर में बनी रहती है। भारत में लौह–अयस्क

निकालने वाले प्रमुख राज्य निम्नलिखित हैं–

(i) **गोवा–** गोवा का भारत में लौह-अयस्क निकालने वाले राज्यों में प्रथम स्थान है। गोवा की खुली खानों से देश का 32% लौह-अयस्क निकाला जाता है। पिरना, अदोल, पालओल्डा, कुडनेम पिसरूलेम तथा कुडनेम सुरला आदि की खानों से लौह-अयस्क का खनन किया जाता है।

(ii) **छत्तीसगढ़–** यह राज्य लौह-अयस्क के उत्पादन में भारत में द्वितीय स्थान रखता है, जहाँ से भारत का 25% लौह–अयस्क प्राप्त होता है। बैलाडिला, दुर्ग, बस्तर, राजहरा तथा सरगुजा आदि छत्तीसगढ़ के प्रमुख लौह-अयस्क निकालने वाले क्षेत्र हैं। यहाँ उत्पादित लौह-अयस्क का उपयोग, भिलाई, राउलकेला तथा विशाखापट्टनम के इस्पात कारखाने में किया जाता है।

(iii) **ओडिशा–** ओडिशा भारत का तृतीय बड़ा लौह-अयस्क उत्पादक राज्य है। यहाँ भारत का 20% लौह-अयस्क निकाला जाता है। इस राज्य में क्योंझर, बोनाई, सुंदरगढ़, सुलपत तथा बादाम पहाड़ी क्षेत्रों में लौह-अयस्क निकाला जाता है। मयूरगंज की खान भारत की सबसे बड़ी लौह-अयस्क की खान है।

(iv) **झारखंड–** झारखंड राज्य वैसे तो सभी खनिजों में धनी है, परंतु लौह-अयस्क के उत्पादन में इसका चौथा स्थान है। यह भारत का 16% लौह-अयस्क निकालता है। यहाँ लौह-अयस्क सिंहभूम जिले की, नोआमंडी, पंसिराबुरु, बुदाबुरु आदि की खानों से लौह-अयस्क निकाला जाता है। यहाँ स्थित नोआमंडी की खान एशिया में सबसे बड़ी है।

(v) **अन्य लौह–अयस्क उत्पादक राज्य–** भारत के अनेक राज्यों में लौह-अयस्क निकाला जाता है, उनमें से प्रमुख राज्य निम्नलिखित हैं– कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान और हिमाचल प्रदेश।

2. बॉक्साइट से कौन–सी धातु प्राप्त होती है? इसका औद्योगिक महत्व बताते हुए भारत में इसके वितरण पर प्रकाश डालिए।

उ०– बॉक्साइट हल्का एवं लचीला धात्विक खनिज है। इसे साफ करके एल्युमीनियम धातु प्राप्त की जाती है।

बॉक्साइट का औद्योगिक महत्व– बॉक्साइट से एल्युमीनियम प्राप्त किया जाता है, जो एक लचीली अलोह धातु है। एल्युमीनियम ऊष्मा और विद्युत कर अच्छी सुचालक होने के कारण उद्योगों के लिए उपयोगी है। भार में हल्की होने के कारण एल्युमीनियम का वायुयान- निर्माण में खूब प्रयोग किया जाता है। एल्युमीनियम का प्रयोग रेल के डब्बे, मोटर, कार, बिजली के तार व उपकरण बर्तन तथा वैज्ञानिक यंत्र व उपकरण बनाने में किया जाता है। एल्युमीनियम की अनेक उद्योगों में कच्चे माल के रूप में माँग बढ़ने के कारण बॉक्साइट का महत्व भी बढ़ रहा है।

भारत में बॉक्साइट का वितरण– बॉक्साइट के भंडारों की दृष्टि से भारत एक धनी देश है। पहले भारत अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए बॉक्साइट का आयात करता था; परंतु अब भारत बॉक्साइट का आयात करने के स्थान पर निर्यात करता है। भारत में बॉक्साइट का वितरण निम्नलिखित है–

(i) **ओडिशा–** ओडिशा भारत का सबसे बड़ा बॉक्साइट उत्पादक राज्य है। यहाँ के कालाहाँडी व संभलपुर जिले बॉक्साइट उत्पादन में अग्रणी हैं। सुंदरगढ़, बोलनगिरी और कोरापुट अन्य महत्वपूर्ण उत्पादक जिले हैं।

(ii) **गुजरात–** गुजरात देश का दूसरा प्रमुख बॉक्साइट उत्पादक राज्य है। यहाँ बॉक्साइट खनन का कार्य खेड़ा, वडोदरा, साबर कोटा, सूरत, राजपीपला और सौराष्ट्र के कच्छ और भावनगर जिलों में होता है।

(iii) **झारखंड–** इस राज्य के लोहारडागा जिले की पैटलैंडस के बॉक्साइट के समृद्ध भंडार हैं। राँची और पलामु यहाँ के प्रमुख उत्पादक जिले हैं।

(iv) **महाराष्ट्र–** महाराष्ट्र भारत का लगभग 10 प्रतिशत बॉक्साइट पैदा करता है। यहाँ इस धातु का खनन पुणे, सतारा, कोल्हापुर, कोलाबा, थाना तथा रत्नागिरी जिलो में दक्कन ट्रेप उत्तरी भागों में किया जाता है।

(v) **छत्तीसगढ़–** छत्तीसगढ़ में बॉक्साइट उत्पादक क्षेत्र दुर्ग जिले की मैकाले पहाडियाँ, बिलासपुर, सरगुजा का पठारी प्रदेश व रायगढ़ है।

(vi) **तमिलनाडु–** तमिलनाडू में प्रमुख उत्पादक जिले नीलगिरी, सेलम तथा मदुरै है। सेलम जिले की शिवराय की पहाड़ियों में साधारण किस्म का बॉक्साइट मिलता है।

(vii) **अन्य राज्य–** कर्नाटक तथा गोवा में भी बॉक्साइट के निक्षेप पाए जाते हैं।

3. धात्विक खनिज से आप क्या समझते हैं? भारत में लौह–अयस्क के क्षेत्रीय वितरण तथा उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।

उ०– **धात्विक खनिज–** जिन खनिजों में धातु का अंश पाया जाता है, उन्हें धात्विक खनिज कहा जाता है। अयस्क को साफ और शुद्ध करके धात्विक खनिज पाए जाते हैं। लोहा, मैंगनीज, सोना, चाँदी, ताँबा और बॉक्साइट आदि धात्विक खनिजों के उदाहरण हैं। इनमें से कुछ खनिज लौह अंश युक्त होते हैं तथा कुछ अलौह अंश युक्त। लौह-अयस्क, मैंगनीज, टंगस्टन व निकिल लौहयुक्त तथा सोना, चाँदी, ताँबा, सीसा, टिन, बाक्साइट व मैंग्नीशियम अलौहयुक्त धात्विक खनिज हैं।

लौह-अयस्क की उपयोगिता एवं भारत में इसका वितरण– इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

4. अभ्रक की उपयोगिता तथा उसके उत्पादक क्षेत्रों पर प्रकाश डालिए।

उ०– अभ्रक अधात्विक, हल्का और बहुउपयोगी खनिज है। इसकी उत्पत्ति भूगर्भ में आग्नेय और कायांतरित शैलों में परतों के रूप में होती है जिन्हें भूगर्भ से खोदकर निकाला जाता है। इसकी परतों को चीरकर प्रयोग में लाया जा सकता है। अभ्रक की परतें हल्की चमकदार और पारदर्शी होती हैं। अभ्रक बिजली और ताप का कुचालक होने के कारण बहुत महत्वपूर्ण खनिज बन गया है।

अभ्रक का महत्व और उपयोगिता– अभ्रक का महत्व औद्योगिक दृष्टि से अधिक होने के कारण यह बहुत उपयोगी खनिज है। इस बहुउपयोगी खनिज की उपादेयता को निम्न बिंदुओं के माध्यम से व्यक्त किया जा सकता है–

(i) अभ्रक विद्युत का कुचालक होने के कारण विद्युत तथा इलैक्ट्रोनिक उपकरण बनाने में प्रयुक्त किया जाता है।

(ii) यह ताप का कुचालक होने के कारण अग्निरोधक वस्त्र बनाने तथा भट्टियों में लगाने में प्रयुक्त होता है।

(iii) अभ्रक का उपयोग नेत्ररक्षक चश्मे बनाने में किया जाता है।

(iv) यह पारदर्शक और चमकीला होने के कारण रंग-रोगन बनाने में प्रयुक्त किया जाता है।

(v) अभ्रक का उपयोग टेलीफोन, रेडियो, वायुयान तथा काँच की चिमनियाँ बनाने में किया जाता है।

(vi) इसका उपयोग अनेक सैन्य उपकरण तथा बेतार का तार उपकरण बनाने में किया जाता है।

(vii) अभ्रक में औषधीय गुण होते हैं, अत: इससे अनेक दवाइयाँ भी बनाई जाती हैं।

(viii) अभ्रक भवनों की खिड़कियाँ बनाने, सजावटी कागज बनाने तथा शीट्स बनाने में भी प्रयुक्त होता है।

भारत में अभ्रक का उत्पादक क्षेत्र– अभ्रक के उत्पादन में भारत को विश्व में प्रथम स्थान पाने का गौरव प्राप्त है। हमारा देश संपूर्ण विश्व का 90% अभ्रक निकालता है। भारतीय अभ्रक उच्चकोटि का होता है, अत: अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में इसकी मांग बहुत बनी रहती है। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में भारतीय अभ्रक की भागीदारी 60% रहती है। भारत के प्रमुख अभ्रक उत्पादक राज्य निम्न हैं–

(i) झारखंड– अभ्रक के उत्पादन में झारखंड का भारत में प्रथम स्थान है। यह राज्य भारत के 40% अभ्रक का उत्पादन करता है। यहाँ का अभ्रक उच्चकोटि का होता है। हजारीबाग, कोडरमा, संथाल परगना तथा गिरिडीह जनपदों में अभ्रक की खानें स्थित हैं। इस राज्य में अभ्रक निकालने वाली लगभग 600 खानें हैं, जिनमें कोडरमा खान विश्व की सबसे बड़ी अभ्रक की खान है। इस खान से सर्वोत्तम किस्म का अभ्रक निकाला जाता है।

(ii) आंध्र प्रदेश– अभ्रक के उत्पादन में आंध्र प्रदेश का भारत में दूसरा स्थान है, जो भारत के 33% अभ्रक का उत्पादन करता है। इस राज्य में विद्युत उपकरण बनाने के उद्योगों में प्रयुक्त होने वाला उत्तम कोटि का अभ्रक निकाला जाता है। यहाँ नेल्लोर, कृष्णा, विशाखापट्टनम जिलों में अभ्रक की खानें हैं। तेलीबाडू तथा कालीचेहू यहाँ की प्रसिद्ध खानें हैं।

(iii) **बिहार–** बिहार भारत का तृतीय बड़ा अभ्रक उत्पादक राज्य है, जो भारत के कुल अभ्रक के उत्पादन का 20% अंश प्रदान करता है। बिहार में अभ्रक की खानें गया, मुंगेर और भागलपुर जिलों में फैली हुई हैं।

(iv) **राजस्थान–** राजस्थान राज्य भी भारी मात्रा में अभ्रक का उत्पादन करता है। अभ्रक के उत्पादन में राजस्थान का चतुर्थ स्थान है, जो भारत का 10% अभ्रक निकालता है। यहाँ जयपुर तथा उदयपुर आदि जिलों में अभ्रक की खानें स्थित हैं।

(v) **अन्य अभ्रक उत्पादक राज्य–** भारत के अनेक अन्य राज्य भी अभ्रक का उत्पादन करते हैं, परंतु उनमें से मुख्य राज्य कर्नाटक, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, ओडिशा तथा केरल आदि हैं।

भारत अभ्रक निर्यातक देशों में विश्व में प्रथम स्थान रखता है। भारत संयुक्त राज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा, रूस, नीदरलैंड, इंग्लैंड, पौलैंड, जर्मनी तथा नार्वे आदि देशों को प्रतिवर्ष लगभग 250 करोड़ रुपए मूल्य का अभ्रक निर्यात करता है।

5. खनिज संसाधनों के महत्व तथा उनके संरक्षण के उपाय बताइए।

उ०– **खनिज संसाधनों का महत्व (उपयोग)–** खनिज संसाधन सभ्यता के लिए प्रकृति का अमूल्य उपहार हैं। वर्तमान औद्योगिक व्यवस्था तथा कारखाना संस्कृति खनिज संसाधनों पर ही टिकी है। खनिज संसाधनों के महत्व को निम्नवत् स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) लोहा मशीनों के निर्माण का आधार बनकर उद्योगों को संचालित करता है।

(ii) बॉक्साइट, अभ्रक तथा मैंगनीज आदि खनिज पदार्थ विविध उद्योगों को कच्चा माल उपलब्ध कराकर उनका पोषण करते हैं।

(iii) **कोयला** तथा **खनिज तेल** जहाँ मशीनों और परिवहन के साधनों को **चालक** शक्ति प्रदान करते हैं, वहीं अनेक उपयोगी पदार्थ उपलब्ध कराकर क्रमश**: काला हीरा** और **तरल सोना** बने हुए हैं।

(iv) सोना, चाँदी, ताँबा आदि धातुएँ आभूषण, मूर्तियाँ तथा मशीनों के निर्माण में सहयोग देकर उपयोगी बनी हुई हैं।

(v) चूना पत्थर और कोयला के मिश्रण से प्राप्त सीमेंट बाँध, सड़क, बिजली घर तथा भवन निर्माण में सहयोग करता है।

(vi) संगमरमर और ग्रेनाइट सुंदर और टिकाऊ भवनों का निर्माण कर अपना महत्व बढ़ाते जा रहे हैं।

(vii) परमाणु खनिज आणविक शक्ति का विकास कर राष्ट्र के आर्थिक विकास और सुरक्षा में सहयोग करने के कारण महत्वपूर्ण बने हुए हैं।

(viii) खनिजों से मशीनें, यंत्र, अस्त्र-शस्त्र तथा अनेक उपयोगी वस्तुएँ बनती हैं।

इस प्रकार खनिज संसाधन राष्ट्र के औद्योगिक और आर्थिक विकास की रीढ़ तथा सुरक्षा के अमोघ अस्त्र हैं।

खनिज संसाधनों का संरक्षण– खनिज संसाधन राष्ट्र के लिए उपयोगी ही नहीं अनिवार्य भी है, अत: इनके संरक्षण की उचित व्यवस्था होना आवश्यक है। खनिज संसाधानों के संरक्षण हेतु निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं–

(i) खनिजों के खनन में नवीनतम् तकनीकी का प्रयोग करके उनकी अधिक से अधिक मात्रा प्राप्त करने का प्रयास किया जाए।

(ii) खनिजों के प्रगलन तथा शुद्धिकरण में उच्चकोटि की तकनीक अपनाकर उनकी अधिकाधिक मात्रा ग्रहण करने का उपाय किया जाना चाहिए।

(iii) खनिज संसाधनों का विदोहन आवश्यकता को ध्यान में रखकर नियंत्रित तथा योजनाबद्ध ढंग से किया जाए।

(iv) ताँबा, सीसा, चाँदी और सोना आदि धातुओं के स्क्रेप को पुर्नचक्रण द्वारा अधिकाधिक उपयोग में लाने का कार्य किया जाए।

(v) बहुमूल्य खनिजों का यथासंभव उत्पादन बढ़ाकर उनका आयात कम से कम किया जाए।

(vi) धातुओं से बनी वस्तुओं के टिकाऊ तथा दीर्घगामी उपयोग द्वारा धातुओं की बचत की जाए।

(vii) ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों का विकास कर ऊर्जा संसाधनों की आपूर्ति बढ़ाई जाए।

(viii) खनिज संसाधनों के खनन, प्रगलन तथा उपयोग में मितव्ययता करके इनका संरक्षण किया जाना चाहिए।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई-2 (क) : मानवीय संसाधन

41

जनसंख्या

(जनसंख्या का घनत्व, वितरण, लिंग अनुपात, बढ़ती जनसंख्या की समस्याएँ, जनसंख्या नियंत्रण के उपाय)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 362 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 362 व 363 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. जनसंख्या विस्फोट से क्या अभिप्राय है?

उ०– जब किसी देश की जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि होती है और वह बढ़कर वहाँ पर उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों की तुलना में बहुत अधिक हो जाती है तथा वहाँ जनसंख्या-वृद्धि के दुष्परिणाम सामने आने लगते हैं, तब ऐसी स्थिति को 'जनसंख्या विस्फोट' कहा जाता है। ऐसी स्थिति में मृत्यु-दर की अपेक्षा जन्म-दर काफी अधिक होती है। पिछले 40 वर्षों (1951-1991) में भारत की जनसंख्या बढ़कर दुगनी से भी अधिक हो गई है। अर्थशास्त्रियों के मतानुसार भारत में सन् 1951 से जनसंख्या विस्फोट की स्थिति प्रारंभ हो गई थी।

2. भारत में जनसंख्या वृद्धि के तीन कारण लिखिए।

उ०– भारत में जनसंख्या वृद्धि के तीन कारण निम्नलिखित हैं–

(i) **उष्ण जलवायु–** भारत की जलवायु उष्ण मानसूनी है। उष्ण जलवायु में युवक-युवतियाँ कम आयु में ही वयस्क हो जाते हैं तथा वैवाहिक सूत्र में बँधकर संतान उत्पन्न कर जनसंख्या बढ़ाने में लग जाते हैं।

(ii) **ऊँची जन्म–दर–** भारत में जन्म-दर 21.8% है जबकि मृत्यु-दर मात्र 7.1% है। ऊँची जन्म-दर के कारण भारत में प्रति वर्ष 5.8 लाख लोग बढ़कर असका आकार बढ़ा देते हैं।

(iii) **अशिक्षा–** भारत की अधिकांश जनसंख्या आज भी अशिक्षित है। इन अशिक्षित लोगों को परिवार नियोजन का ज्ञान नहीं होता। अशिक्षित दंपत्ति परिवार नियोजन में असक्षम होने के कारण अधिक संतान उत्पन्न कर जनसंख्या बढ़ाने में लगे रहते हैं।

3. तीव्र जनसंख्या वृद्धि के किन्हीं दो प्रभावों का उल्लेख कीजिए।

उ०– तीव्र जनसंख्या वृद्धि के दो प्रभाव निम्नलिखित हैं–

(i) **आर्थिक विकास में व्यवधान–** भारत ने आर्थिक क्षेत्र में बहुत प्रगति की है, परंतु तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या ने उन पर पानी फेर दिया है। आर्थिक विकास के लाभ प्रत्येक नागरिक अथवा परिवार तक नहीं पहुँच पाते हैं। यही कारण है कि देश के आर्थिक विकास में सबसे बड़ी बाधा भारत की अधिक जनसंख्या ही है।

(ii) **बेरोजगारों की बढ़ती फौज–** भारत में रोजगार के अवसर इतनी तेजी से नहीं बढ़ रहे हैं जितनी तेजी से भारत की जनसंख्या बढ़ रही है। प्रतिवर्ष विश्वविद्यालयों से डिग्री लेकर निकलने वाले नौजवान रोजगार न मिलने के कारण बेरोजगारों की फौज से जुड़ जाते हैं। इस फौज में इस समय लगभग 6 करोड़ नवयुवक सम्मिलित हैं।

4. भारत में जनसंख्या नियंत्रण के तीन उपाय लिखिए।

उ०– भारत में जनसंख्या नियंत्रण के तीन उपाय निम्नलिखित हैं–

(i) **शिक्षा का प्रसार–** शिक्षा वह सांस्कारिक उपकरण है, जो तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या की बाढ़ को रोक सकती है। शिक्षित दंपत्ति अपना जीवन-स्तर सुधारने के लिए कम बच्चे पैदा करके जनसंख्या को बढ़ने से रोक सकते हैं। शिक्षा का स्तर बढ़ाइए, बढ़ती जनसंख्या की समस्या पर रोक लगाइए। हमारी सरकार और जन-जन का यही नारा होना चाहिए।

(ii) **परिवार नियोजन और परिवार कल्याण कार्यक्रम–** परिवार कल्याण कार्यक्रम के अनुरूप परिवार के सदस्य परिवार-नियोजन कार्यक्रम को मन से अपनाकर तथा परिवार में बच्चों की अधिकतम संख्या दो तक सीमित करके जनसंख्या नियंत्रण में अपनी भागीदारी दे सकते हैं। छोटा परिवार सुखी परिवार के आदर्श का नियोजन करते हुए परिवार-कल्याण कार्यक्रम बढ़ती जनसंख्या के असाध्य रोग का रामबाण इलाज हो सकता है।

(iii) **स्वस्थ मनोरंजन के साधनों की व्यवस्था–** भारत की निर्धन, अशिक्षित और भाग्यवादी जनता के लिए स्वस्थ मनोरंजन के साधनों की व्यवस्था करके तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या पर प्रभावी नियंत्रण लगाया जा सकता है। इस क्षेत्र में दूरदर्शन, रेडियो, समाचार-पत्र, फिल्मों तथा प्रोजेक्टर द्वारा ग्रामीण जनता में परिवार नियोजन के लाभों का व्यापक प्रचार किया जाना चाहिए।

5. जनसंख्या घनत्व किसे कहते हैं? जनसंख्या घनत्व किन–किन बातों पर निर्भर है?

उ०– **जनसंख्या का घनत्व–** जनसंख्या घनत्व का अर्थ है 'मानव भूमि अनुपात'। मानव भूमि अनुपात जनसंख्या के सामान्य वितरण को स्पष्ट कर उसका संबंध भौगोलिक क्षेत्र से बताता है। जनसंख्या के घनत्व से आशय राष्ट्र के भौगोलिक क्षेत्र में एक वर्ग किमी० में निवास करने वाले व्यक्तियों की संख्या से लगाया जाता है। किसी देश की संपूर्ण जनसंख्या को उसके क्षेत्र से भाग देने पर, जो भागफल आता है वही राष्ट्र की जनसंख्या का घनत्व होता है। जनसंख्या के घनत्व को निम्न सूत्र द्वारा ज्ञात किया जाता है–

$$\text{जनसंख्या का घनत्व} = \frac{\text{राष्ट्र की कुल जनसंख्या}}{\text{राष्ट्र का कुल क्षेत्रफल}}$$

किसी राष्ट्र का जनसंख्या घनत्व निम्नलिखित कारकों पर निर्भर करता है–

(i) जलवायु,
(ii) उपजाऊ भूमि,
(iii) वर्षा की मात्रा,
(iv) सिंचाई की सुविधाएँ
(v) परिवहन तंत्र एवं संचार व्यवस्था
(vi) शांति एवं सुरक्षा
(vii) शैक्षिक केंद्र
(viii) धार्मिक एवं ऐतिहासिक स्थल
(ix) खनिजों में संपन्न क्षेत्र
(x) कृषि एवं उद्योग।

6. मानव संसाधन से आप क्या समझते हैं?

उ०– **मानवीय संसाधन–** किसी देश की संपूर्ण जनसंख्या को मानव संसाधन नहीं कहा जाता, अपितु जनसंख्या के केवल उस भाग को मानव संसाधन कहा जाता है जो शिक्षित हो, कुशल हो तथा जिसमें अर्जन या उत्पादन करने की क्षमता हो। इस प्रकार मानव संसाधन वह मानव पूँजी है, जिसे प्राकृतिक साधनों में लगाकर देश का आर्थिक विकास किया जाता है। दूसरे शब्दों में यह भी कह सकते हैं कि देश के संपूर्ण मानव संसाधन को तो जनसंख्या कहा जा सकता है, किन्तु पूरी जनसंख्या को मानव संसाधन नहीं कहा जा सकता।

7. भारत में तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या को नियंत्रित करना क्यों आवश्यक है?

उ०– भारत में तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या से निम्नलिखित समस्याएँ उत्पन्न हो रहीं हैं–

(i) बेरोजगारी में वृद्धि
(ii) निम्न प्रति व्यक्ति आय
(iii) निर्धनता का बढ़ता स्तर
(iv) आवासों का अभाव
(v) वस्तुओं के मूल्यों में वृद्धि
(vi) कृषि विकास में उत्पन्न समस्याओं में वृद्धि
(vii) जन–सुविधाओं का अभाव
(viii) कृषि भूमि पर जनसंख्या भार में वृद्धि
(ix) बचत तथा पूँजी निर्माण में वृद्धि
(x) पर्यावरण प्रदूषण में वृद्धि
(xi) अपराधों में वृद्धि।

उपर्युक्त समस्याओं के निवारण के लिए भारत में तीव्रगति से बढ़ रही जनसंख्या को नियंत्रित करना अत्यंत आवश्यक है।

8. भारत के उस प्रदेश का नाम लिखिए, जहाँ जनसंख्या घनत्व सर्वाधिक है। जहाँ जनसंख्या घनत्व अधिक होने के क्या कारण हैं?

उ०– भारत का सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व वाला राज्य बिहार है। पहले सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व वाला राज्य पश्चिम बंगाल था।

परंतु 2001 में बिहार से झारखंड राज्य पृथक होने के बाद यह भारत का सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व वाला राज्य बन गया है। बिहार में जनसंख्या घनत्व सबसे अधिक होने का मुख्य कारण उच्च जन्मदर एवं निम्न मृत्युदर है।

9. भारत में जन्मदर, मृत्युदर तथा जनसंख्या वृद्धि के बारे में आप क्या जानते हैं?

उ०– **भारत में जन्म-दर–** भारत में एक वर्ष में 1000 स्त्रियों और पुरुषों के पीछे जन्म लेने वाले बच्चों की संख्या को जन्म-दर कहते हैं। भारत में वर्तमान जन्म-दर 21.8% है, जो अधिक है।

मृत्यु-दर– देश में 1000 व्यक्तियों के पीछे मरने वाले व्यक्तियों की संख्या को मृत्यु-दर कहते हैं। भारत में वर्तमान मात्र 7.1% है।

जनसंख्या वृद्धि–दर– देश में एक वर्ष में जनसंख्या में होने वाली वृद्धि को जनसंख्या वृद्धि-दर कहते हैं। भारत में वर्तमान जनसंख्या वृद्धि 1.64% है अर्थात् भारत में प्रतिवर्ष 5.8 लोग बढ़ जाते हैं।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. जनसंख्या घनत्व क्या है? जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।

उ०– **जनसंख्या का घनत्व–** जनसंख्या घनत्व का अर्थ है 'मानव भूमि अनुपात'। मानव भूमि अनुपात जनसंख्या के सामान्य वितरण को स्पष्ट कर उसका संबंध भौगोलिक क्षेत्र से बताता है। जनसंख्या के घनत्व से आशय राष्ट्र के भौगोलिक क्षेत्र में एक वर्ग किमी० में निवास करने वाले व्यक्तियों की संख्या से लगाया जाता है। किसी देश की संपूर्ण जनसंख्या को उसके क्षेत्र से भाग देने पर, जो भागफल आता है वही राष्ट्र की जनसंख्या का घनत्व होता है। जनसंख्या के घनत्व को निम्न सूत्र द्वारा ज्ञात किया जाता है–

$$\text{जनसंख्या का घनत्व} = \frac{\text{राष्ट्र की कुल जनसंख्या}}{\text{राष्ट्र का कुल क्षेत्रफल}}$$

जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करने वाले कारक– भारत के जनसंख्या वितरण के आँकड़ों पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि भारत के सभी क्षेत्रों में जनसंख्या का घनत्व एक समान नहीं है। जनसंख्या के असमान विवतरण को निम्नलिखित कारक प्रभावित करते हैं–

(i) **जलवायु–** जलवायु वह कारक है, जिसका जनसंख्या घनत्व पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। उत्तम और स्वास्थ्यप्रद जलवायु वाले क्षेत्रों में जनसंख्या का घनत्व अधिक तथा विषम जलवायु वाले क्षेत्रों में जनसंख्या घनत्व कम पाया जाता है। यही कारण है कि उत्तर का विशाल मैदान, पर्वतीय, पठारी और मरुस्थलीय क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक घनत्व वाला है।

(ii) **उपजाऊ भूमि–** उपजाऊ भूमि अधिक अन्न उगाकर घनी जनसंख्या का पोषण करती है। यह भूमि अधिक लोगो को वहाँ बसने के लिए भी आकर्षित करती है, वहाँ जनसंख्या का घनत्व बढ़ जाता है। पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार तथा पश्चिम बंगाल राज्य इसके उदाहरण हैं। कम उपजाऊ भूमि कम जनसंख्या का पोषण कर पाती है, अत: यहाँ जनसंख्या का घनत्व भी कम पाया जाता है। जम्मू–कश्मीर, हिमाचल प्रदेश तथा राजस्थान राज्य इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

(iii) **वर्षा की मात्रा–** कहावत है– "भारत में जनसंख्या का घनत्व वर्षा के वितरण का पीछा करता है।" वर्षा, कृषि उपज बढ़ाकर जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करती है। पश्चिम बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश तथा महाराष्ट्र राज्यों में अधिक वर्षा होने के कारण जनसंख्या का घनत्व अधिक जबकि राजस्थान, गुजरात राज्यों में कम वर्षा के कारण कम घनत्व पाया जाता है।

(iv) **सिंचाई की सुविधाएँ–** भारत एक कृषि प्रधान देश है, सिंचाई की सुविधाएँ कृषि का प्राण हैं। अत: पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार आदि राज्यों में सिंचाई की सुविधाएँ होने से अधिक घनत्व तथा दक्षिण भारत के राज्यों में सिंचाई की सुविधा कम होने के कारण कम घनत्व पाया जाता है।

(v) **परिवहन तंत्र एवं संचार व्यवस्था–** जिन राज्यों में परिवहन तंत्र और संचार व्यवस्था का जाल फैला हुआ है वहाँ घनी जनसंख्या के क्षेत्र हैं, जबकि पर्वतीय और मरुस्थलीय क्षेत्र तथा मध्य और दक्षिण भारत के क्षेत्र आदि परिवहन व संचार की उपयुक्त व्यवस्था में पिछड़े होने के कारण कम घनत्व वाले क्षेत्र रह गए हैं।

(vi) **शांति एवं सुरक्षा–** कुछ क्षेत्रों में जान–माल की असुरक्षा के कारण भी जनसंख्या घनत्व कम होता है। चंबल घाटी डाकुओं के आतंक के कारण तथा सीमावर्ती क्षेत्र आंतकवाद, घुसपैठ तथा शत्रु सेनाओं की गोलाबारी के कारण कम जनसंख्या वाले क्षेत्र बन गए हैं। शांति एवं सुरक्षा के आकर्षण के कारण ही कस्बे का विकास होने से ये नगरों में और

नगर महानगरों में बदलते जा रहे हैं।

(vii) **शैक्षिक केंद्र–** कुछ क्षेत्रों में उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा और प्रौद्योगिक संस्थानों का विकास होने से ये क्षेत्र शिक्षा के आकर्षण में घने बस जाते हैं इस कारण दिल्ली, कानपुर, रुड़की, वाराणसी, अहमदाबाद तथा बंगलुरू नगर घनी जनसंख्या के केंद्र बन गए हैं।

(viii) **धार्मिक एवं ऐतिहासिक स्थल–** धर्म मानव की आध्यात्मिक आवश्यकता है। जिसे पूरा करने के लिए वह हरिद्वार, अजमेर, पुष्कर, इलाहाबाद, वाराणसी आदि नगरों में जाकर, वहाँ की जनसंख्या का भाग बन जाता है। आगरा, दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, कोणार्क, खजुराहो अपने ऐतिहासिक महत्व के कारण ही घने बसे हुए हैं।

(ix) **खनिजों में संपन्न क्षेत्र–** खनिज पदार्थ दोहन के लिए जनसंख्या को अपनी तरफ आकर्षित करते रहे हैं, अत: भारत के असम, झारखंड, छोटा नागपुर के पठारी क्षेत्र, विषम जलवायु तथा विषम धरातल के होने पर भी घने बसे हुए हैं।

(x) **कृषि एवं उद्योग–** कृषि एवं उद्योग जनसंख्या घनत्व के पोषक हैं। भारत के जिन क्षेत्रों में कृषि और उद्योगों का अधिक विकास हुआ है वे क्षेत्र घनी जनसंख्या के तथा जहाँ कम विकास हुआ है वे कम जनसंख्या के क्षेत्र बन गए हैं। इसी कारण पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र तथा पश्चिमी बंगाल आदि राज्य अधिक घने बसे हुए हैं, जबकि जम्मू-कश्मीर, सिक्किम, मिजोरम तथा राजस्थान आदि राज्य कम जनसंख्या वाले राज्य रह गए हैं।

जनसंख्या का घनत्व मानव के शैक्षिक, बौद्धिक स्तर के साथ सामाजिक रीति रिवाजों और धार्मिक विश्वासों तथा सरकारी नीतियों पर निर्भर करता है।

2. भारत में जनसंख्या वितरण किन-किन बातों पर निर्भर करता है? भारत में जनसंख्या के वितरण को समझाइए।

उ०– भारत में जनसंख्या वितरण निम्नलिखित बातों पर निर्भर करता है–

(i) जलवायु,
(ii) उपजाऊ भूमि,
(iii) वर्षा की मात्रा,
(iv) सिंचाई की सुविधाएँ
(v) परिवहन तंत्र एवं संचार व्यवस्था
(vi) शांति एवं सुरक्षा
(vii) शैक्षिक केंद्र
(viii) धार्मिक एवं ऐतिहासिक स्थल
(ix) खनिजों में संपन्न क्षेत्र
(x) कृषि एवं उद्योग

भारत में जनसंख्या का वितरण– भारतीय जनसंख्या वितरण की तालिका देखने से पता चलता है कि उसमें कहीं अधिक, कहीं सामान्य तो कहीं कम जनसंख्या वितरण की झलक दिखाई है। भारत के जनसंख्या वितरण की विविधताओं को निम्नलिखित शीर्षकों के माध्यम से भली भाँति समझा जा सकता है–

(i) **अधिक (घनी) जनसंख्या के क्षेत्र–** भारत के जिन राज्यों में जनसंख्या का घनत्व 300 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी० पाया जाता है, अधिक या संघन जनसंख्या के क्षेत्र कहलाते हैं। इन राज्यों में उपजाऊ भूमि, सिंचाई की सुविधाएँ परिवहन, उन्नत कृषि उद्योग तथा व्यापार के उन्नति कर जाने के कारण बिहार, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, केरल, पुडुचेरी, तमिलनाडु तथा चंडीगढ़ आदि भारत के सघन जनसंख्या वाले क्षेत्र बन गए हैं। बिहार, पश्चिम बंगाल को पछाड़ कर सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व वाला राज्य बन गया है। बिहार में जनसंख्या का घनत्व 1102 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी० पाया जाता है। सर्वाधिक जनसंख्या वाला राज्य उत्तर प्रदेश है जिसकी जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार 19.9 करोड़ है।

(ii) **सामान्य (मध्यम) जनसंख्या वाले क्षेत्र–** भारत के वे क्षेत्र जहाँ जनसंख्या का घनत्व 200 से 300 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी० तक पाया जाता है, सामान्य या मध्यम जनसंख्या के क्षेत्र कहलाते हैं। इन क्षेत्रों में जनबसाव की सुविधाएँ अपेक्षाकृत कम हैं। मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, उत्तराखंड ओडिशा, कर्नाटक आदि राज्य मध्यम जनसंख्या घनत्व वाले राज्य हैं।

(iii) **कम (अल्प) जनसंख्या वाले क्षेत्र–** भारत के जिन राज्यों में जनसंख्या का घनत्व 200 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी० से कम पाया जाता है, कम या न्यून जनसंख्या वाले क्षेत्र कहलाते हैं। इन क्षेत्रों में जन को आकर्षित करने वाली सुविधाओं का अभाव पाया जाता है। सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम, त्रिपुरा, जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, झारखंड और राजस्थान आदि राज्य कम जनसंख्या वाले क्षेत्र हैं। 2011 ई० की जनगणना के अनुसार अरुणाचल प्रदेश भारत का

सर्वाधिक कम जनसंख्या घनत्व वाला राज्य है। यहाँ जनसंख्या घनत्व मात्र 17 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी० ही पाया जाता है।

3. **भारत में तीव्र जनसंख्या वृद्धि के कारणों का उल्लेख कीजिए। तीव्र जनसंख्या वृद्धि रोकने के उपाय बताइए।**

उ०– **भारत में तीव्र गति से जनसंख्या वृद्धि के कारण–** भारत में तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या के कारण जनसंख्या विस्फोट की स्थिति आ गई है। यह बात इस तथ्य से प्रमाणित हो जाती है कि भारत में विश्व की 17.6% जनसंख्या निवास करती है। गत 20 वर्षों से भारत में प्रतिवर्ष 5.8 लाख लोग बढ़ जाते हैं। भारत में जनसंख्या 1.64% वार्षिक दर से बढ़कर आदर्श जनसंख्या के आकार की सीमाओं को तोड़कर अधिक जनसंख्या का प्रारूप धारण कर चुकी है। भारत में तीव्र गति से जनसंख्या बढ़ने के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं–

(i) **उष्ण जलवायु–** भारत की जलवायु उष्ण मानसूनी है। उष्ण जलवायु में युवक-युवतियाँ कम आयु में ही व्यस्क हो जाते हैं तथा वैवाहिक सूत्र में बँधकर संतान उत्पन्न कर जनसंख्या बढ़ाने में लग जाते हैं।

(ii) **ऊँची जन्म–दर–** भारत में जन्म-दर 21.8% है जबकि मृत्यु-दर मात्र 7.1% है। ऊँची जन्म-दर के कारण भारत में प्रतिवर्ष 5.8 लाख लोग बढ़कर इसका आकार बढ़ा देते हैं।

(iii) **अल्प आयु में विवाह–** भारत में विवाह एक धार्मिक संस्कार है। अत: माता-पिता युवक को 21 वर्ष तथा युवती को 18 वर्ष के होते ही विवाह के बंधन में बाँध देते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में होने वाले विवाह आज भी बाल विवाह अधिनियम को अँगूठा दिखा रहे हैं। अल्प आयु में विवाह का अर्थ है अधिक संतान और अधिक संतान का सीधा अर्थ हैं अधिक जनसंख्या।

(iv) **विवाह की अनिवार्यता–** भारत में मान्यता है कि व्यक्ति विवाह के पश्चात् ही पूर्ण बन पाता है। अत: पारिवारिक जीवन के सूत्र में बँधकर संतान उत्पन्न करना भारतीय संस्कृति की अनिवार्यता है, जो जनसंख्या वृद्धि का एक बड़ा कारण है।

(v) **पुत्र को महत्व–** भारतीय समाज में पुत्र को वंश चलाने वाला तथा पिता को स्वर्ग में पहुँचाने वाला माना जाता है। अत: परिवार में 3-4 पुत्रियाँ होने पर भी पुत्र उत्पन्न होने की कामना में दंपत्ति अधिक संतान उत्पन्न करने में लगे रहते हैं।

(vi) **अशिक्षा–** भारत की अधिकांश जनसंख्या आज भी अशिक्षित है। इन अशिक्षित लोगों को परिवार नियोजन का ज्ञान नहीं होता। अशिक्षित दंपत्ति परिवार को नियोजित करने में असक्षम होने के कारण अधिक संतान उत्पन्न कर जनसंख्या बढ़ाने में लगे रहते हैं।

(vii) **निर्धनता–** निर्धनता अनेक बुराइयों को जन्म देती है। निर्धन परिवार स्वस्थ मनोरंजन और शिक्षा के अभाव में जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण नहीं लगा पाते हैं।

(viii) **संयुक्त परिवार प्रणाली–** संयुक्त परिवार प्रणाली भारतीय सामाजिक संगठन का मूल आधार रही है। कई पीढ़ियों के लोगों के एक साथ रहने के कारण बालकों का पालन-पोषण सुगम हो जाता है और संयुक्त परिवार अधिक बच्चों के जन्म को बढ़ावा देकर जनसंख्या वृद्धि का कारण बन जाते हैं।

(ix) **परिवार कल्याण कार्यक्रमों के प्रति उपेक्षा–** भारत के ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों की अशिक्षित, अज्ञानी और भाग्यवादी जनता परिवार कल्याण कार्यक्रमों के प्रति उपेक्षा रखकर अधिक संताने पैदा करके जनसंख्या बढ़ाने में लगी रहती है।

(x) **सरकार की तुष्टिकरण की नीति–** भारत की लोकतांत्रिक सरकारें एक संप्रदाय विशेष की तुष्टिकरण की नीति के कारण, जनसंख्या नियंत्रण के लिए कठोर नियम नहीं बना पाईं हैं, जिससे भारत में जनसंख्या अबाध गति से बढ़ती जा रही है।

(xi) **शरणार्थियों का आगमन–** 1971 ई० में भारत पाकिस्तान युद्ध के कारण बांग्लादेश का निर्माण होने के फलस्वरूप लाखों शरणार्थियों के भारत में आकर बस जाने से भारतीय जनसंख्या में एकदम वृद्धि की बाढ़ ही आ गई थी।

भारत में बढ़ती जनसंख्या को नियंत्रित करने के उपाय– भारत में जनसंख्या वृद्धि का चक्रवात विनाशक सुनामी बनकर टूट पड़ा है। तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या को नियंत्रित करने का कारगर उपाय खोजना होगा। जनसंख्या को नियंत्रित करने हेतु निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं–

(i) **शिक्षा का प्रसार–** शिक्षा वह सांस्कारिक उपकरण है, जो तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या की बाढ़ को रोक सकती है। शिक्षित दंपत्ति अपना जीवन-स्तर सुधारने के लिए कम बच्चे पैदा करके जनसंख्या को बढ़ने से रोक सकते हैं। शिक्षा का स्तर बढ़ाइए, बढ़ती जनसंख्या की समस्या पर रोक लगाइए। हमारी सरकार और जन-जन का यही नारा होना चाहिए।

(ii) **परिवार नियोजन और परिवार कल्याण कार्यक्रम–** परिवार कल्याण कार्यक्रम के अनुरूप परिवार के सदस्य परिवार-नियोजन कार्यक्रम को मन से अपनाकर तथा परिवार में बच्चों की अधिकतम संख्या दो तक सीमित करके

जनसंख्या नियंत्रण में अपनी भागीदारी दे सकते हैं। छोटा परिवार सुखी परिवार के आदर्श का नियोजन करते हुए परिवार-कल्याण कार्यक्रम बढ़ती जनसंख्या के असाध्य रोग का रामबाण इलाज हो सकता है।

(iii) स्वस्थ मनोरंजन के साधनों की व्यवस्था– भारत की निर्धन, अशिक्षित और भाग्यवादी जनता के लिए स्वस्थ मनोरंजन के साधनों की व्यवस्था करके तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या पर प्रभावी नियंत्रण लगाया जा सकता है। इस क्षेत्र में दूरदर्शन, रेडियो, समाचार-पत्र, फिल्मों तथा प्रोजेक्टर द्वारा ग्रामीण जनता में परिवार नियोजन के लाभों का व्यापक प्रचार किया जाना चाहिए।

(iv) विवाह योग्य आयु में वृद्धि– अल्प आयु में विवाह तथा बाल विवाहों पर काननूी प्रतिबंध का कठोरता से पालन करके तथा युवक-युवतियों की विवाह योग्य आयु को 25 वर्ष और 21 वर्ष करके प्रजनन दर पर रोक लगाकर जनसंख्या की तीव्र वृद्धि को रोका जा सकता है।

(v) जन्म-दर वृद्धि पर प्रभावी रोक– भारत में तीव्र गति से जनसंख्या वृद्धि में आए उछाल का मुख्य कारण ऊँची जन्म-दर तथा नीची मृत्यु-दर रही है। ऊँची जन्म दर-भारत की जनसंख्या में प्रतिवर्ष 5.8 लाख लोगों की वृद्धि करती जा रही है। जन्म-दर को कम करके जनसंख्या वृद्धि को कम किया जा सकता है।

(vi) स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार– भारत का निर्धन वर्ग धनाभाव के कारण स्वास्थ्य सेवाओं से वंचित रह जाता है। देशवासियों की आर्थिक क्षमता को बनाए रखने के लिए उनके स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सुविधाओं पर विशेष ध्यान देना चाहिए, जिससे देशवासियों की आर्थिक क्षमता सुधरेगी तथा उनका जीवन-स्तर ऊँचा होगा, जो स्वयं ही जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करेगा।

(vii) सुविधाओं का आकर्षण– सरकारी कर्मचारियों को अतिरिक्त वेतन वृद्धि का आकर्षण देकर तथा दो संतान वाले परिवारों को सम्मान आरक्षण, सुविधाएँ, अनुदान तथा उपहार का आकर्षण देकर तीव्र जनसंख्या वृद्धि पर प्रभावी रोक लगाई जा सकती है।

(viii) राष्ट्रीय जनसंख्या नीति का निर्माण– सरकार को राष्ट्रीय जनसंख्या नीति का निर्धारण करके, प्रत्येक जाति और संप्रदाय के लिए परिवार में दो बच्चों की संख्या कानूनी रूप से निश्चित कर देनी चाहिए। इसका उल्लंघन करने वाले दंपत्तियों के विरुद्ध कठोर कानूनी कार्यवाही की जानी चाहिए।

बच्चे देश का भविष्य है, किंतु तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या उन्हीं के हितों का विनाश कर रही हैं। अत: इससे पहले कि जनसंख्या का विस्फोट विनाशक बन जाए, सतर्क बनकर इसे रोकने के लिए सक्रिय हो जाना चाहिए।

4. भारत में तीव्र जनसंख्या वृद्धि के कारण कौन–कौन सी समस्याएँ उत्पन्न हो गईं हैं? इनके समाधान के उपाय बताइए।

उ०– **जनसंख्या वृद्धि के कारण उत्पन्न होने वाली समस्याएँ–** भारत में तीव्रगति से बढ़ रही जनसंख्या एक बीमारी और गंभीर समस्या बन गई है। इस बढ़ती जनसंख्या ने भारत में निम्नलिखित समस्याएँ उत्पन्न कर दी हैं–

(i) आर्थिक विकास में व्यवधान– भारत ने आर्थिक क्षेत्र में बहुत प्रगति की है, परंतु तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या ने उन सब पर पानी फेर दिया है। आर्थिक विकास के लाभ प्रत्येक नागरिक अथवा परिवार तक नहीं पहुँच पाते हैं। यही कारण है कि देश के आर्थिक विकास में सबसे बड़ी बाधा भारत की अधिक जनसंख्या ही है।

(ii) बेरोजगारों की बढ़ती फौज– भारत में रोजगार के अवसर इतनी तेजी से नहीं बढ़ रहे हैं जितनी तेजी से भारत की जनसंख्या बढ़ रही है। प्रतिवर्ष विश्वविद्यालयों से डिग्री लेकर निकलने वाले नौजवान रोजगार न मिलने के कारण बेरोजगारों की फौज से जुड़ जाते हैं। इस फौज में इस समय लगभग 6 करोड़ नवयुवक सम्मिलित हैं।

(iii) निर्धनता का बढ़ता स्तर– बेरोजगारी की समस्या निर्धनता को बढ़ाती है। देश में निम्न प्रतिव्यक्ति आय और निम्न राष्ट्रीय आय निरंतर राष्ट्र को और भी निर्धन बना रही है। निर्धनता राष्ट्र के लिए कलंक बन जाती है।

(iv) आवासों का आभाव– भारत की तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या ने लोगों के रहने के लिए आवासों का अभाव उत्पन्न कर दिया है। आवासों के अभाव ने जहाँ उनके किरायों को आकाश छूने पर विवश कर दिया है, वहीं महानगरों में बढ़ती झुग्गी– झौपड़ियाँ झाड़ियों की तरह बढ़कर गंदगी और प्रदूषण फैलाने में लगी हैं।

(v) **वस्तुओं के मूल्यों में अत्यधिक वृद्धि–** भारत में तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या के कारण वस्तुओं की माँग निरंतर बढ़ने से फल और साग–सब्जियों से लेकर वस्त्र, धातुएँ, चाय, चीनी, खाद्य तेल और औषधियों के मूल्य आकाश को छूने लगे हैं। इससे सामान्य जनता को सबसे अधिक कष्ट उठाने पड़ते हैं।

(vi) **जन–सुविधाओं का अभाव–** बढ़ती हुई जनसंख्या ने पेयजल, आवास, स्वास्थ्य, शिक्षा और परिवहन जैसी जन-सुविधाओं का अभाव उत्पन्न कर दिया है। सभी महानगर पेयजल की समस्या से जूझ रहे हैं। गरीबों को मूलभूत आवश्यकताएँ जैसे– भोजन, वस्त्र, पेयजल, आवास आदि भी पूरा नहीं हो पातीं। जन-सुविधाओं का बढ़ता अभाव जन–कल्याण में बाधक बनकर लोगों के जीवन स्तर को भी गिरा रहा है।

(vii) **कृषि भूमि पर जनसंख्या भार–** कृषि भारत का राष्ट्रीय व्यवसाय है। बढ़ती जनसंख्या रोजगार और पोषण के लिए कृषि भूमि पर दबाव बना कर उसके लिए भार बनती जा रही है जिससे कृषि का विकास बाधित हो जाता है।

(viii) **पूँजी निर्माण की मंद गति–** भारत में बढ़ती निर्धनता और बेरोजगारी बचत में कमी ला रही है। बचत कम होने के कारण पूँजी निर्माण की गति भी मंद हो गई है। पूँजी के अभाव में राष्ट्र का संपूर्ण आर्थिक विकास रुक जाता है। पूँजी का निवेश करके ही प्राथमिक, द्वितीय का और तृतीय स्तर के व्यवसाय को विकसित किया जा सकता है। कहावत है– "आर्थिक विकास दासी बनकर पूँजी स्वामिनी के पीछे दौड़ता है।"

(ix) **नगरीकरण और औद्योगीकरण–** तीव्रगति से बढ़ रही जनसंख्या के कारण ग्रामीण जनसंख्या शिक्षा, स्वास्थ्य आदि जन सुविधाओं और रोजगार पाने के आकर्षण में नगरों की ओर पलायन कर रही हैं, जिससे शहरों की जनसंख्या में तेजी से वृद्धि हुई है जो अनेकों समस्याओं को जन्म दे रहे हैं।

(x) **अपराधों में वृद्धि–** बेरोजगार लोगों की वृद्धि के कारण वे अपराध की अंधी गलियों में प्रवेश कर, समूचे समाज और राष्ट्र को विघटित कर डालते हैं। बढ़ती जनसंख्या अपराधों को जन्म देकर समाज का वातावरण दूषित कर देती है।

(xi) **पर्यावरण प्रदूषण–** बढ़ती जनसंख्या वनों का विनाश करके, दहन क्रियाओं के द्वारा कार्बन डाइआक्साइड गैस की मात्रा को बढ़ाकर तथा विविध प्रदूषकों को जन्म देकर पर्यावरण प्रदूषण जैसी गंभीर समस्या को जन्म दे देती है। वर्तमान में पर्यावरण प्रदूषण की समस्या अंतर्राष्ट्रीय समस्या बन कर उभर रही है।

(xii) **भीड़–तंत्र में बदलता भारत–** तीव्र–गति से बढ़ी जनसंख्या ने रेलों, बसों, वायुयानों में भीड़ का साम्राज्य फैला दिया है। सिनेमाघर, सर्कस या स्टेडियम का टिकट पाना एक गंभीर समस्या बन गई है। प्रदर्शनियों, मेलों, हाट तथा बाजार अनियंत्रितत भीड़ में परिवर्तित होते जा रहे हैं। इस प्रकार तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या ने विश्व के सबसे बड़े गणतंत्र को भीड़–तंत्र में परिवर्तित कर दिया है।

तीव्र गति से बढ़ी जनसंख्या से उत्पन्न समस्याओं के निराकरण के उपाय– इससे पूर्व कि अधिक देर हो जाए, हमें तीव्र गति से बढ़ी जनसंख्या से उत्पन्न समस्याओं का उचित समाधान खोजना होगा। इन समस्याओं के निराकरण हेतु निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिए–

(i) **जनसंख्या पर उचित नियंत्रण–** राष्ट्र के विकास की समस्या के निराकरण का एक मात्र उपाय है, जनसंख्या पर उचित और प्रभावी नियंत्रण लगाना।

(ii) **रोजगार के नए अवसर खोजना–** बेरोजगारी की समस्या का निराकरण, देश में रोजगारपरक शिक्षा लागू करके तथा रोजगार के नए अवसर बढ़ाकर किया जा सकता है।

(iii) **प्रतिव्यक्ति आय और राष्ट्रीय आय बढ़ाना–** देश में प्रतिव्यक्ति आय के साथ-साथ राष्ट्रीय आय बढ़ाने के प्रयास किए जाने चाहिए जिससे निर्धनता की समस्या का निराकरण हो जाएगा। इस प्रकार हम राष्ट्र के इस कलंक को मिटाने में सफल हो सकते हैं।

(iv) **नए आवासों का निर्माण–** भारत में नए साफ–सुथरे तथा सस्ते जनता आवास बनाकर आवासीय अभाव की समस्या का हल खोजा जाना चाहिए। झुग्गी-झोंपड़ी वालों का पुनर्वास करके इस समस्या का हल खोजा जा सकता है।

(v) **मूल्य नियंत्रण की नीति लागू करना–** सरकार वस्तुओं का उत्पादन करके अथवा उन्हें बाहर से आयात करके उनकी पूर्ति बढ़ा सकती है। सरकार द्वारा वस्तुओं का उचित मूल्य निर्धारित करके तथा उन्हें लागू कराकर मूल्य वृद्धि की समस्या का उचित हल खोजा जा सकता है।

(vi) **जन सुविधाओं में वृद्धि–** सरकार द्वारा परिवहन, स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास तथा अन्य जन-सुविधाएँ बढ़ाकर इस समस्या का उचित समाधान खोजा जा सकता है।

(vii) **कृषि–भूमि को जनसंख्या के दबाब से मुक्त करना–** जनसंख्या को आजीविका के लिए उद्योगों, सेवाओं और व्यापार के क्षेत्र में लगाकर, कृषि-भूमि से जनसंख्या के दबाव को कम किया जा सकता है।

(viii) **पूँजी निर्माण की गति बढ़ाना–** भारत में लघु बचत योजनाओं में ब्याज दर बढ़ाकर तथा लोगों को बचत करने के लिए प्रोत्साहित करके, बचत बढ़ाकर पूँजी निर्माण की मंद गति को तीव्र किया जा सकता है।

(ix) **नगरीकरण तथा औद्योगिकरण की प्रवृति को हतोत्साहित करना–** भारत में कुटीर उद्योग-धंधों का विकास करके तथा तृतीयक क्षेत्र के लोगों के लिए रोजगार के अवसर बढ़ाकर नगरीकरण तथा औद्योगीकरण की बढ़ती प्रवृत्ति को रोका जाना चाहिए।

(x) **अपराधों पर नियंत्रण–** अपराधों पर प्रभावी नियंत्रण करने का एकमात्र उपाय है– रोजगार। बेरोजगार लोगों को रोजगार देकर उन्हें आपराधिक कार्यों से विमुख किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त कठोर कानून बनाकर तथा पुलिस प्रशासन को चुस्त बनाकर अपराधों पर नियंत्रण किया जा सकता है।

(xi) **पर्यावरण प्रदूषण पर नियंत्रण–** जनसंख्या-वृद्धि पर प्रभावी नियंत्रण करके, अनियंत्रित दहन क्रियाएँ रोककर तथा वृक्षारोपण करके पर्यावरण प्रदूषण पर नियंत्रण लगाया जा सकता है।

(xii) **भीड़ पर प्रभावी नियंत्रण–** भारत के विविध क्षेत्रों में बढ़ती भीड़ को जनसंख्या-वृद्धि को कम करके तथा सामान्य सुविधाएँ बढ़ाकर भीड़-तंत्र की समस्या से निबटा जा सकता है।

5. भारत में तीव्र जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने के उपाय बताइए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

42 व्यवसाय

(पशुपालन, मत्स्य व्यवसाय, कृषि, खनन)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 388 व 389 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 389 व 390 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. भारत में गेहूँ की खेती के लिए आवश्यक भौगोलिक दशाओं का उल्लेख कीजिए तथा इसके प्रमुख उत्पादक राज्यों के नाम लिखिए।

उ०– **गेहूँ की खेती के लिए आवश्यक भौगोलिक दशाएँ-** गेहूँ की फसल उगाने के लिए निम्नलिखित भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है–

(i) गेहूँ की फसल के लिए 12° सेल्सियस से 17° सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। कोहरा, पाला तथा बदलीयुक्त मौसम इसके लिए हानिकारक होता है।

(ii) गेहूँ के लिए 50 सेमी से 75 सेमी वर्षा की आवश्यकता होती है।

(iii) गेहूँ की फसल के लिए उपजाऊ, समतल और भुरभुरी मिट्टी सर्वोत्तम होती है। चिकनी तथा बलुई दोमट मिट्टी में भी गेहूँ उगाया जा सकता है।

(iv) गेहूँ की फसल के लिए कंपोस्ट खाद या अमोनियम सल्फेट रासायनिक उर्वरक उपयोगी होता है।

(v) गेहूँ की फसल उगाने में ट्रैक्टर, हारवेस्टर तथा थ्रेसर कृषि यंत्रों की भी आवश्यकता होती है।

गेहूँ उत्पादक राज्य– भारत का सर्वाधिक गेहूँ उत्पादक राज्य उत्तर प्रदेश है। इसके अतिरिक्त पंजाब, मध्यप्रदेश, हरियाणा, बिहार, झारखंड, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़ तथा उत्तराखंड राज्यों के नाम भी गेहूँ उत्पादन में उल्लेखनीय हैं।

2. भारत में चावल की खेती के लिए उपयुक्त भौगोलिक दशाओं तथा उत्पादक राज्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– भारत में चावल की खेती के लिए निम्नलिखित भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है –

(i) मिट्टी– चावल की खेती के लिए उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी सर्वाधिक उपयुक्त होती है।

(ii) तापमान– चावल उष्ण व नम जलवायु की फसल है। इसके लिए 20° सेल्सियस से 30° सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। स्वच्छ आकाश और खिली धूप चावल के लिए अच्छी रहती है।

(iii) वर्षा– चावल अधिक वर्षा वाले भागों में उगाया जाता है। चावल के लिए 150 सेमी० से 200 सेमी० तक वर्षा की आवश्यकता होती है।

(iv) उर्वरक– चावल की अच्छी पैदावार के लिए जैविक खाद एवं रासायनिक उर्वरकों का उपयोग किया जाता है।

(v) मानवीय श्रम– चावल की फसल के लिए धान की पौध लगाने से लेकर निराई, गुड़ाई, सिंचाई, कटाई तथा धान की सफाई तक मानवीय श्रम की आवश्यकता होती है।

भारत में चावल उत्पादक– भारत का सबसे बड़ा चावल उत्पादक राज्य है– आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, तमिलनाडु, असम, मेघालय, ओडिशा, उत्तर प्रदेश, पंजाब, गुजरात, कर्नाटक, मणिपुर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड तथा हरियाणा आदि चावल उत्पादक राज्य हैं।

3. भारत में गन्ने की खेती के लिए उपयुक्त तापमान, वर्षा एवं मिट्टी का उल्लेख कीजिए।

उ०– गन्ना उगाने के लिए निम्नलिखित भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती हैं–

(i) तापमान– गन्ना उगाने के लिए 20° सेल्सियस से 30° सेल्सियस तक तापमान चाहिए। बदली, कोहरा तथा धुंध इसकी फसल को हानि पहुँचाते हैं। जाड़ों की गुलाबी धूप तथा चटक मौसम गन्ने के रस में मिठास बढ़ा देता है।

(ii) वर्षा– गन्ना उगाने के लिए अधिक नमी की आवश्यकता होती है। इसकी खेती 100 सेमी० से 200 सेमी० वर्षा वाले क्षेत्रों में सुगमता से हो जाती है। उत्तरी भारत में ग्रीष्म ऋतु में जब वर्षा नहीं होती, इसकी फसल की बार-बार सिंचाई की जाती हैं।

(iii) मिट्टी– गन्ना उगाने के लिए समतल, उपजाऊ, भुरभुरी दोमट जलोढ़ मिट्टी या चिकनी मिट्टी सर्वश्रेष्ठ मानी गई है। इसके खेत को कई बार जोतकर भुरभुरा बनाया जाता है। गन्ना के पौधों की कई बार निराई गुड़ाई करनी आवश्यक होती है। गन्ने की अधिक उपज पाने के लिए कंपोस्ट, सल्फेट एवं सुपर फॉस्फेट उर्वरकों का प्रयोग करना लाभदायक माना जाता है।

4. चाय की खेती के लिए आवश्यक भौगोलिक दशाएँ बताइए तथा दो प्रमुख चाय उत्पादक राज्यों के नाम लिखिए।

उ०– **चाय की फसल के लिए अनुकूल भौगोलिक दशाएँ–** चाय के बागान लगाकर चाय की फसल उगाने के लिए निम्नलिखित भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है–

तापमान– चाय उष्ण-नम मानसूनी जलवायु की मुख्य फसल है। इसके पौधों के लिए 20° सेल्सियस से 30° सेल्सियस तक सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। स्वच्छ मौसम और चटकती धूप चाय की झाड़ियों के लिए लाभकारी होते हैं, जबकि कोहरा और पाला इन्हें विशेष हानि पहुँचाते हैं।

वर्षा– चाय की झाड़ियों के लिए 100 सेमी० से 150 सेमी० वर्षा आवश्यक मानी जाती है। वर्षा हल्की और नियमित होती रहनी चाहिए। चाय की झाँड़ियों की जड़ों में पानी रुकना हानिकारक होता है। इसलिए चाय के बागानों की भूमि ढालदार होनी चाहिए।

मिट्टी– चाय की झाड़ियाँ लगाने के लिए उपजाऊ और ढालू भूमि सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। पहाड़ी ढालू भूमि में जल नहीं ठहर पाता है, जबकि उपजाऊ मिट्टी पौधों का उत्तम पोषण करती है।

सस्ता श्रम– चाय की खेती श्रम पर आधारित है। चाय की झाड़ियाँ लगाने तथा उनसे वर्ष में दो से तीन बार तक पत्तियाँ चुनने के लिए पर्याप्त संख्या में सस्ते श्रमिकों की आवश्यकता होती है। झाड़ियों से पत्तियाँ चुनने का कार्य स्त्रियाँ बड़े मनोयोग से करती हैं।

पूँजी और तकनीक– चाय की खेती पर्याप्त पूँजी और तकनीक का प्रयोग करके व्यापारिक कंपनियों द्वारा कराई जाती है चाय की पत्तियाँ कारखानों में निश्चित प्रक्रिया से गुजरकर चाय बन पाती है। चाय की खेती प्राय: व्यावसायिक संगठनों द्वारा वैज्ञानिक ढंग से तथा व्यापारिक उद्देश्य से की जाती है।

दो प्रमुख चाय उत्पादक राज्य– असम, पश्चिम बंगाल।

5. भारत में कपास किन राज्यों में पैदा होती है? कपास की उपज के लिए आवश्यक भौगोलिक दशाएँ कौन-सी हैं?

उ०– **भारत में कपास उत्पादक राज्य–** महाराष्ट्र भारत का प्रमुख कपास उत्पादक राज्य है। इसके अतिरिक्त कपास मुख्य रूप से गुजरात, पंजाब, हरियाणा, तमिलनाडु, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, असम तथा मेघालय आदि राज्यो में भी उगाई जाती है।

कपास की फसल के लिए अनुकूल भौगोलिक दशाएँ– भारत में कपास की खेती के लिए सभी आदर्श भौगोलिक सुविधाएँ उपलब्ध हैं, जो निम्नलिखित हैं–

तापमान– कपास उष्ण जलवायु की उपज है। इसके लिए 20° सेल्सियस से 35° सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। साफ स्वच्छ मौसम और चटक धूप कपास की खेती के लिए सर्वोत्तम है। बादल, कोहरा या धुंध कपास की फसल को हानि पहुँचाते हैं।

वर्षा– कपास के पौधों के लिए पर्याप्त नमी की आवश्यकता होती है। पौधों की जड़ों में नमी सदैव बनी रहनी चाहिए, परंतु जल का भरा रहना पौधों को गला देता है। इसकी फसल के लिए 50 सेमी० से 100 सेमी० हल्की, परंतु निरंतर वर्षा की आवश्यकता होती है।

मिट्टी– कपास की खेती करने के लिए अधिक नमी धारण करने की क्षमता रखने वाली उपजाऊ काली मिट्टी सर्वोत्तम होती है। काली मिट्टी उपजाऊ और नमी धारण करने की क्षमता रखने के कारण कपास की मिट्टी कहलाती है।

श्रम– कपास की खेती व्यापारिक स्तर पर करने के लिए कपास के पौधों से कपास चुनने तथा कारखानों तक पहुँचाने के लिए सस्ते श्रमिकों की आवश्यकता होती है। कपास चुनने का कार्य स्त्रियाँ सुगमता से कर लेती हैं।

6. जूट की उपज के लिए किन चार आवश्यक भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है? दो प्रमुख जूट उत्पादक राज्य कौन-से हैं?

उ०– **जूट की फसल के लिए अनुकूल भौगोलिक दशाएँ–** जूट की खेती करने के लिए निम्नलिखित भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती हैं–

तापमान– जूट उगाने के लिए उष्ण और नम जलवायु की आवश्यकता होती है। इसकी फसल उगाने के लिए 25° सेल्सियस से 35° सेल्सियस तक तापमान की आवश्यकता होती है। चमचमाती खिली धूप तथा उच्चताप मान में जूट का पौधा खूब विकसित होता है।

वर्षा– जूट का पौधा अधिक नमी ग्रहण करता है। अत: इसकी खेती 200 सेमी० से 250 सेमी० वर्षा वाले क्षेत्रों में खूब की जाती है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में जूट की फसल को सींचना आवश्यक हो जाता है।

मिट्टी– जूट का पौधा मिट्टी से अधिक उर्वरता ग्रहण करता है। अत: उपजाऊ जलोढ़ या डेल्टाई मिट्टी जूट की खेती के लिए आदर्श मानी जाती है।

सस्ता श्रम– जूट की खेती के लिए सस्ता श्रम अपेक्षित है। खेतों से पौधों को काटकर तालाबों के जल में गलने के लिए डालने, उनसे रेशा पृथक करने तक श्रम ही श्रम करना पड़ता है।

जूट उत्पादक दो प्रमुख राज्य– पश्चिम बंगाल व असम।

7. ऑपरेशन फ्लड क्या है? इसके दो महत्व लिखिए।

उ०– **ऑपरेशन फ्लड–** सन् 1964-1965 में 'सघन पशुविकास कार्यक्रम' चलाया गया, जिसके अंतर्गत 'धवल-क्रांति' अथवा

खेत-क्रांति लाने के लिए पशु मालिकों को पशु पालन के विकसित तरीकों का ज्ञान कराया गया तथा दुग्ध उत्पादन की गति तेज करने के लिए एक अभियान चलाया गया, जिसे 'ऑपरेशन फ्लड़' नाम दिया गया। ऑपरेशन फ्लड कार्यक्रम विश्व का सबसे बड़ा समन्वित डेयरी विकास कार्यक्रम है, जिसे 1970 में 'राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड' द्वारा आरंभ किया गया था।

महत्व– ऑपरेशन फ्लड के दो महत्व निम्नलिखित हैं–

(i) ऑपरेशन फ्लड कार्यक्रम के अंतर्गत सहकारी दुग्ध समितियाँ गठित कर दुग्ध उद्योग का विकास किया गया।

(ii) पशुओं की दशा में गुणात्मक सुधार होने से, पशुपालन एक अच्छे लाभ का व्यवसाय बन गया।

8. भारतीय अर्थव्यवस्था में पशुधन के तीन योगदान (महत्व) स्पष्ट कीजिए।

उ०– भारतीय अर्थव्यवस्था में पशुधन का महत्व (लाभ)– पशुओं की संख्या की दृष्टि से विश्व में भारत का प्रथम स्थान तथा पशु-घनत्व की दृष्टि से डेनमार्क के बाद दूसरा स्थान है। भारतीय अर्थव्यवस्था में पशुओं का महत्व निम्न प्रकार से है–

(i) कृषि-कार्यों में विभिन्न पशु चालक-शक्ति प्रदान करते हैं। हल चलाने, सिंचाई, पटेला, ढुलाई, गन्ना पेरने आदि अनेक कृषि-कार्यों में पशुओं का प्रयोग होता है।

(ii) विभिन्न पशुओं के गोबर तथा मूत्र से अच्छी प्रकार की खाद तैयार की जाती है।

(iii) पशुओं के गोबर से उपले बनाकर ईंधन के रूप में उपयोग किए जाते हैं।

9. भारत में पशुओं की हीन दशा सुधारने के उपाय सुझाइए।

उ०– भारत में पशुओं की हीन दशा होने के कारण– भारत में विश्व के सर्वाधिक पशु होते हुए भी वे अत्यंत दीन-हीन दशा में हैं। उनकी हीन दशा के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं–

(i) भारत में पशुओं की संख्या अधिक होना।

(ii) भारत की उष्ण जलवायु होना।

(iii) भारतीय पशुपालकों का अशिक्षित और निर्धन होना।

(iv) भारत में पशु चरागाह न होना।

(v) पशुओं को प्राणघातक रोग लगना।

(vi) पशुओं के लिए पौष्टिक और हरा चारा न मिलना।

(vii) पशु-बाड़ों की समुचित व्यवस्था न होना।

(viii) पशु-चिकित्सालयों का अभाव होना।

(ix) पशुपालन करने की वैज्ञानिक विधि का ज्ञान न होना।

(x) सरकार द्वारा पशु-बीमा योजना व अन्य पशु-सुधार योजनाएँ न चलाए जाना।

10. भारत में हरित क्रांति की प्रमुख उपलब्धियों पर प्रकाश डालिए।

उ०– हरित क्रांति की उपलब्धियाँ– हरित क्रांति भारत की मृतप्राय कृषि में नव जीवन लाने में सहायक सिद्ध हुई है। हरित क्रांति ने भारतीय कृषि व्यवसाय में आमूलचूल परिवर्तन करके इसकी गौरवशाली प्रतिष्ठा को पुन: स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हरित क्रांति की उपलब्धियाँ को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) हरित क्रांति ने भारतीय कृषि की दयनीय स्थिति को सुधारकर, उसमें गुणात्मक सुधार ला दिया है।

(ii) हरित क्रांति ने कृषि उत्पादन में आश्चर्यजनक वृद्धि करके इसे लाभकारी व्यवसाय बना दिया है।

(iii) हरित क्रांति के कारण कृषकों की आय के साथ-साथ, राष्ट्रीय आय में भी वृद्धि हो गई है।

(iv) भारत पहले खाद्यान्नों का आयात करता था, हरित क्रांति ने उसे खाद्यान्नों का निर्यातक बना दिया है।

(v) हरित क्रांति ने कृषि व्यवसाय को लाभकारी व्यवसाय बनाकर, एक सुदृढ़ अर्थव्यवस्था के निर्माण का सुदृढ़ आधार प्रदान किया है।

हरित क्रांति की सफलता देखते हुए, भारत में द्वितीय हरित क्रांति लागू करने की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी है।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. पशुधन का भारतीय अर्थव्यवस्था में क्या महत्व है? भारतीय पशुओं की हीन दशा के क्या कारण हैं? पशुओं की दशा सुधारने के उपाय बताइए।

उ०– भारतीय अर्थव्यवस्था में पशुधन का महत्व (लाभ)– पशुओं की संख्या की दृष्टि से विश्व में भारत का प्रथम स्थान तथा पशु-घनत्व की दृष्टि से डेनमार्क के बाद दूसरा स्थान है। भारतीय अर्थव्यवस्था में पशुओं का महत्व निम्न प्रकार से है–

(i) कृषि-कार्यों में विभिन्न पशु चालक-शक्ति प्रदान करते हैं। हल चलाने, सिंचाई, पटेला, ढुलाई, गन्ना पेरने आदि अनेक कृषि-कार्यों में पशुओं का प्रयोग होता है।

(ii) विभिन्न पशुओं के गोबर तथा मूत्र से अच्छी प्रकार की खाद तैयार की जाती है।

(iii) पशुओं के गोबर से उपले बनाकर ईंधन के रूप में उपयोग किए जाते हैं।

(iv) गाय, भैंस तथा बकरियों से दूध प्राप्त होता है जिससे घी, मट्ठा, मक्खन, मावा आदि तैयार किए जाते हैं। दुग्ध अथवा डेयरी उद्योग पशुओं पर भी आधारित होते हैं।

(v) बकरा, मुर्गा, सुअर आदि पशुओं का मांस तथा मुर्गियों के अंडों का खाद्य-पदार्थ के रूप में उपयोग होता है।

(vi) आधुनिक युग में भी परिवहन के साधन के रूप में बैल, भैंसे, ऊँट, घोड़े, गधे, खच्चर आदि अपना अलग ही महत्व रखते हैं।

(vii) भारत में अनेक उद्योग पशुओं पर ही आधारित है; जैसे– डेयरी उद्योग, ऊन उद्योग, चमड़ा उद्योग, मछली पालन उद्योग, मुर्गी पालन तथा मांस उद्योग।

(viii) पशुओं से हमें चमड़ा, हड्डियाँ, बाल व खाल प्राप्त होती है जो औद्योगिक व व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

(ix) पशु-पदार्थों के निर्यात से देश को लगभग 1200 करोड़ रूपए की वार्षिक आय होती है जिससे राष्ट्रीय आय में वृद्धि के साथ-साथ विदेशी मुद्रा की प्राप्ति भी होती है।

भारत में पशुओं की हीन दशा होने के कारण– भारत में विश्व के सर्वाधिक पशु होते हुए भी वे अत्यंत दीन-हीन दशा में हैं। उनकी हीन दशा के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं–

(i) भारत में पशुओं की संख्या अधिक होना।

(ii) भारत की उष्ण जलवायु होना।

(iii) भारतीय पशुपालकों का अशिक्षित और निर्धन होना।

(iv) भारत में पशु चरागाह न होना।

(v) पशुओं को प्राणघातक रोग लगना।

(vi) पशुओं के लिए पौष्टिक और हरा चारा न मिलना।

(vii) पशु-बाड़ों की समुचित व्यवस्था न होना।

(viii) पशु-चिकित्सालयों का अभाव होना।

(ix) पशुपालन करने की वैज्ञानिक विधि का ज्ञान न होना।

(x) सरकार द्वारा पशु-बीमा योजना व अन्य पशु-सुधार योजनाएँ न चलाए जाना।

पशुओं की हीन दशा सुधारने के उपाय– भारतीय पशुओं की हीन दशा सुधारने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिए–

(i) पशुओं की नस्लों में सुधार किया जाए।

(ii) साफ, स्वच्छ और शीतल पशु-बाड़े बनाए जाएँ।

(iii) पशु चरागाहों की व्यवस्था कराई जाए।

(iv) पशुओं के लिए पौष्टिक और हरे चारे की व्यवस्था की जाए।

(v) पशुओं के लिए पशु-चिकित्सालयों की व्यवस्था की जाए।

(vi) पशुपालन के वैज्ञानिक प्रशिक्षण की व्यवस्था कराई जाए।

(vii) पशु-उत्पादों को सुरक्षित रखने के लिए शीतलन की व्यवस्था कराई जाए।

(viii) पशु-उत्पादों पर आधारित उद्योगों का समुचित विकास कराया जाए।

(ix) पशुपालकों को आर्थिक तथा तकनीकी सहायता प्रदान की जाए।

(x) सरकार द्वारा पशु-सुधार हेतु योजनाएँ चलायी जानी चाहिए।

2. भारत में जूट उत्पादन के लिए अनुकूल भौगोलिक दशाओं तथा उत्पादन क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।

उ०– **भारत में जूट उत्पादन के लिए अनुकूल भौगोलिक दशाएँ–** जूट की खेती करने के लिए निम्नलिखित भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती हैं–

तापमान– जूट उगाने के लिए उष्ण और नम जलवायु की आवश्यकता होती है। इसकी फसल उगाने के लिए 25° सेल्सियस से 35° सेल्सियस तक तापमान की आवश्यकता होती है। चमचमाती खिली धूप तथा उच्चताप मान में जूट का पौधा खूब विकसित होता है।

वर्षा– जूट का पौधा अधिक नमी ग्रहण करता है। अत: इसकी खेती 200 सेमी० से 250 सेमी० वर्षा वाले क्षेत्रों में खूब की जाती है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में जूट की फसल को सींचना आवश्यक हो जाता है।

मिट्टी– जूट का पौधा मिट्टी से अधिक उर्वरता ग्रहण करता है। अत: उपजाऊ जलोढ़ या डेल्टाई मिट्टी जूट की खेती के लिए आदर्श मानी जाती है।

सस्ता श्रम– जूट की खेती के लिए सस्ता श्रम अपेक्षित है। खेतों से पौधों को काटकर तालाबों के जल में गलने के लिए डालने, उनसे रेशा पृथक करने तक श्रम ही श्रम करना पड़ता है।

भारत में जूट उत्पादन वाले क्षेत्र– भारत के निम्नलिखित क्षेत्रों में जूट की खेती बड़े पैमाने पर की जाती है–

(i) पश्चिम बंगाल– जूट पश्चिम बंगाल के कृषकों की महत्वपूर्ण नकदी फसल है। यह राज्य भारत की 65% जूट उगाकर भारत में पहले स्थान पर है। यहाँ हुगली, जलपाईगुड़ी, नदिया, हावड़ा, कूचबिहार तथा मालदा आदि जिलों में जूट उगाई जाती है।

(ii) असम– असम भारत की 12% जूट का उत्पादन करता है। यहाँ गोलपाडा, नौगाँव, कामरूप आदि जिलों में जूट की खेती की जाती है।

(iii) बिहार तथा झारखंड– बिहार तथा झारखंड दोनों राज्य मिलकर भारत की 10% से अधिक जूट उगाते हैं, यहाँ कोसी नदी तथा गंगा नदी की घाटी में खूब जूट उगाई जाती है।

(iv) अन्य जूट उत्पादक क्षेत्र– भारत के अन्य जूट उत्पादक क्षेत्रों में मणिपुर, त्रिपुरा, उत्तर प्रदेश, ओडिशा, आंध्र प्रदेश तथा मेघालय आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

3. खनन व्यवसाय से आपका क्या आशय है? भारत में खनन व्यवसाय की मुख्य विशेषताएँ लिखिए।

उ०– **खनन व्यवसाय**- मानव के आर्थिक विकास की गाथा, प्रकृति के साथ उसके संघर्ष से जुड़ी है। उसे प्रकृति से जहाँ भी लाभ मिला, उसने प्रकृति से जीभर लाभ उठाया। खनन धरती का सीना चीरकर खनिज पदार्थों को निकालने की व्यवस्था को कहा जाता है। उपयोगी और मूल्यवान खनिज मानव के बहुमुखी आर्थिक विकास के स्रोत बन गए हैं। अत: मानव ने इस लुटेरे उद्योग खनन को एक व्यवसाय के रूप में ग्रहण कर लिया। खनन उद्योग का आधार खान होती है। खान वह क्षेत्र है, जिसमें छेद बनाकर भूगर्भ से अयस्क निकाले जाते हैं। अयस्क खान से निकाले गए अशुद्ध पदार्थ हैं। इस प्रकार खान से खोदकर अयस्कों को निकालना ही खनन व्यवसाय है। भारत में भारी मात्रा में खनिज; जैसे– लोहा, मैंगनीज, अभ्रक, कोयला आदि खानों मे से निकाले जाते हैं। वर्तमान समय में खनन प्राथमिक व्यवसाय न रहकर एक गौण व्यवसाय बन गया है। वर्तमान समय में इस खनन कार्य में बहुत अधिक लोग लगे हुए हैं।

विशेषताएँ–

(i) भारत खनिजों के मामले में एक भाग्यशाली देश है, परंतु यहाँ खनन कार्य में आधुनिक तकनीक का प्रयोग बहुत ही कम किया जाता है। देश में 3,600 खदानों में से मात्र 880 खदानें की यन्त्रीकृत है, जो देश के 85% खनिजों का

उत्पादन करतीं हैं। शेष 2,720 खदानों से केवल 15% खनिज उत्पादन प्राप्त होता है।

(ii) भारत का अधिकांश खनन व्यवसाय व्यक्तिगत क्षेत्र में हैं, जिसके कारण वह व्यवस्थित नहीं है। इसी कारण भारत सरकार ने अभ्रक व कोयले की खदानों का राष्ट्रीयकरण कर दिया है।

(iii) भारत के अधिकांश खनिज छोटानगर का पठार, झारखण्ड, पश्चिम बंगाल, छत्तीसगढ़ व मध्यप्रदेश में पाये जाते हैं। कुछ राज्य खनिज प्राप्ति में शून्य है। तथा कुछ राज्यों- ओडिशा, आन्ध्रप्रदेश, गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, असम कर्नाटक, गोआ आदि में विविध प्रकार के खनिज पदार्थ मिलते हैं।

(iv) भारत में हिमालय क्षेत्र में विभिन्न खनिजों के विशाल भंडार है। भारत में बॉम्बे हाई से खनिज तेल प्राप्त कर लिया गया है। यहाँ अनेक क्षेत्रों में खनिजों के अन्वेषण का काम चल रहा है।

(v) भारत में लौह-अयस्क, मैंगनीज व अभ्रक के विशाल भंडार हें। भारत इन खनिजों का निर्यात करता है।

4. भारत में कम कृषि उत्पादकता के क्या कारण हैं? उत्पादकता बढ़ाने के उपाय सुझाइए।

उ०– भारत में कम कृषि उत्पादकता के कारण– भारत में कृषि उत्पादकता कम होने के कारण निम्नलिखित हैं–

(i) कृषि भूमि पर जनसंख्या का अत्यधिक दबाव– भारत में कृषि भूमि पर जनसंख्या का अत्यधिक दबाव है। यह दबाव मुख्यत: दो कारणों से है– पहला भारत की जनसंख्या में तीव्र वृद्धि तथा दूसरा गैर-कृषि क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों का विकास न होना। 2001 में लगभग तीन चौथाई ग्रामीण जनसंख्या कृषि क्षेत्र में रोजगार पाए हुए थी। भारत में कृषि भूमि के बंटवारे का मुख्य कारण जनसंख्या में वृद्धि है जिसकी वजह से प्रति हेक्टेयर उत्पादन कम रहता है।

(ii) सामाजिक वातावरण– भारत में सामाजिक वातावरण जैसे– निरक्षरता, आधुनिक तकनीकी के प्रति उदासीनता, आदि कृषि उत्पादकता में कमी के कारण हैं। कृषि क्षेत्र में रोजगार कृत व्यक्ति खराब स्वास्थ्य की वजह से सबसे ज्यादा असंतुष्ट है।

(iii) भूमि की गुणवत्ता में कमी– ग्रामीण क्षेत्रों में प्राकृतिक संसाधनों की गुणवत्ता में लगातार ह्रास हुआ है। गुणवत्ता में यह ह्रास मुख्यत: दो कारणों से हुआ है। पहला कारण जनसंख्या दबाव है जिसकी वजह से वन क्षेत्रों में कमी हुई है तथा दूसरा कारण भूमि की ऊपरी परत का कटाव है। भूमि की गुणवत्ता में कमी का मुख्य कारण कृषि रसायनों का उपयोग तथा नहर के पानी की खराब गुणवत्ता है। इसकी वजह से भूमि में पोषक तत्वों में कमी हुई है तथा उत्पादकता में कमी दर्ज की गई है।

(iv) सामान्यत: आधारभूत संरचना की सुविधाओं का अभाव, भारत में सड़क, बिजली, ऊर्जा तथा यातायात आदि जैसी आर्थिक आधारभूत संरचनाओं की कमी है। ग्रामीण क्षेत्रों पर होने वाला सरकारी व्यय लगातार कम हुआ है। कृषि क्षेत्रों में पूँजी निर्माण की कमी हुई है। कृषि क्षेत्रों में निवेश जो 1990 में कुल व्यय का 1.92 प्रतिशत था, जो कम होकर 2003 में 1.31 प्रतिशत रह गया है।

संस्थागत कारण–

(i) खराब भूमि व्यवस्था– भारत में जमींदारी के रूप में प्रचलित भूमि व्यवस्था ने उत्पादकता को कम बनाए रखने में अहम भूमिका अदा की है। जमींदारी प्रथा के कारण कृषकों में भूमि की उत्पादकता बढ़ाने के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं था। जमींदारी व्यवस्था के अंतर्गत ज्यादा भूमि लगान, भूमि पट्टे की असुरक्षा और भूमि पर कोई स्वामित्व अधिकार न होने के कारण, कृषकों को अपनी फसल का एक बड़ा हिस्सा जमींदारों को देना पड़ता था। इसके कारण उनके पास संसाधनों की कमी रहती थी और वे कृषि में नयी तकनीकी का प्रयाग करने में असमर्थ रहते थे। कृषि में नयी तकनीकी का प्रयोग न होने के कारण उत्पादकता में कमी बनी रही।

(ii) आर्थिक भूमि वितरण– भारत में औसत भूमि वितरण छोटा है। भूमि का वितरण छोटा ही नहीं है अपितु यह छोटे-छोटे खेतों के रूप में भी बिखरा हुआ है। भारत में औसम भूमि उपलब्धता 2.30 हेक्टेयर है। जब कृषि योग्य खेतों का आकार छोटा हो तो उसमें नयी तकनीकी के प्रयोग की संभावना कम रहती है जिससे भूमि उत्पादकता में कमी होती है।

(iii) वित्त व विपणन सुविधाओं का अभाव– भारत में कृषि के लिए वित्त सुविधाओं का अभाव रहा है। संस्थागत वित्त सुविधाओं में कमी कृषि में उत्पादकता का कम होने का एक महत्वपूर्ण कारण है। यदि हम तथ्यों पर नजर डालें तो यह

स्पष्ट है कि 1990 के दशक में कृषि को उपलब्ध संस्थागत वित्त, 1980 के दशक में उपलब्ध वित्तर से कम था। बैंक व अन्य वित्तीय संस्था कृषि को कम ब्याज दर पर ऋण देने के लिए सहर्ष तैयार नहीं रहे। यद्यपि 2003 के पश्चात सभी व्यापारिक बैंकों द्वारा कृषि को दिए जाने वाले ऋण में निरपेक्ष वृद्धि हुई है परंतु इन वर्षों में सबसे खतरनाक प्रवृत्ति जो उभरकर सामने आई वह इन संस्थानों द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से दिए जाने में वृद्धि है। कृषि को प्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध वित्त में लगातार कमी हुई है। इस कारण से, कृषकों के एक बड़े समूह को गैर-संस्थागत वित्त पर निर्भर रहना पड़ता है। यह गैर संस्थागत वित्त ज्यादातर उच्च ब्याज दर पर होता है। इससे किसानों की बचत करने की क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। कृषि अलाभकारी होती जा रही है। क्योंकि वित्त तथा ऋण की कमी है जो भी उपलब्ध है वह ऊँची ब्याज दर पर ही उपलब्ध है तो इस स्थिति में कृषि सुधार कार्यक्रमों में निवेश कर पाना बहुत मुश्किल हो जाता है। निवेश की कमी के कारण कृषि उत्पादकता में वृद्धि बहुत कठिन है तथा कृषि उत्पादकता निम्न स्तर पर बनी रहती है।

तकनीकी कारण–

(i) **तकनीकी पिछड़ापन–** भारत में ज्यादातर कृषक परंपरावादी तकनीक का प्रयोग करते हैं क्योंकि उनके पास संसाधनों की कमी है अत: वे नयी तकनीक का प्रयोग नहीं कर पाते हैं। उच्च उत्पादकता वाले बीजों व रासायनिक उर्वरक का प्रयोग बहुत ही सीमित है। 1990 के दशक में आर्थिक सुधारों के पश्चात कृषि व अनुसंधान व ट्रेनिंग कार्यक्रमों में सरकारी निवेश कम हुआ जिसके कारण तकनीक की खोज व प्रयोग और भी सीमित हो गए है। कृषि विश्वविद्यालय तथा अन्य संसाधनों की कमी महसूस कर रहे हैं जिसका कृषि उत्पादकता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। कृषक को नई तकनीकी के लिए, सरकारी प्रयासों के अभाव में ज्यादा कीमत चुकानी पड़ रही है इसलिए नई तकनीकी को उपयोग में लाने की उसकी क्षमता व इच्छाशक्ति दोनों में ही कमी हो रही है। जिसके कारण कृषि उत्पादकता का स्तर निम्न है।

(ii) **आगत लागतों में वृद्धि–** उर्वरक, उच्च गुणवत्ता के बीज व कीटनाशकों आदि को मिलने वाली आर्थिक सहायता में लगातार कमी हो रही है। जिसकी वजह से इनकी कीमतों में वृद्धि हो रही है क्योंकि ये कृषि उत्पादन में प्रयोग होने वाले महत्वपूर्ण आगत हैं। जिसके कारण कृषि उत्पादन की लागत में वृद्धि हो रही है। जिसके कारण कृषि लगातार अलाभकारी होती जा रही है। अलाभकारी कृषि का उत्पादकता पर नकारात्मक प्रभाव देखने को मिलता है।

भारत में उत्पादकता बढ़ाने के लिए सुझाव- भारत में कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते हैं–

(i) चकबंदी।
(ii) उन्नतशील तथा परिष्कृत बीजों का प्रयोग।
(iii) खेतों में रसायनों एवं कीटनाशकों, कृमिनाशकों तथा खरपतवारनाशकों का उपयोग।
(iv) रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग एवं मिट्टी का परीक्षण करने वाली प्रयोगशालाइों की सुविधा।
(v) नवीन कृषि-पद्धतियों का विकास।
(vi) आधुनिक कृषि यंत्रों तथा उपकरणों का प्रयोग।
(vii) बहुफसली कृषि प्रणाली को अपनाया जाना।
(viii) शीतभंडार गृहों की सुविधाओं में वृद्धि।
(ix) सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि।
(x) जिसमें गेहूँ, चावल, चना, मटर, मक्का एवं मोटे अनाजों का महत्वपूर्ण स्थान है।

5. भारत में चाय अथवा कपास की खेती का वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए–

(क) उपज की भौगोलिक दशाएँ

(ख) उपज के क्षेत्र

उ०– **कपास की फसल के लिए अनुकूल भौगोलिक दशाएँ–** भारत में कपास की खेती के लिए सभी आदर्श भौगोलिक

सुविधाएँ उपलब्ध हैं, जो निम्नलिखित हैं–

तापमान– कपास उष्ण जलवायु की उपज है। इसके लिए 20° सेल्सियस से 35° सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। साफ स्वच्छ मौसम और चटक धूप कपास की खेती के लिए सर्वोत्तम है। बादल, कोहरा या धुंध कपास की फसल को हानि पहुँचाते हैं।

वर्षा– कपास के पौधों के लिए पर्याप्त नमी की आवश्यकता होती है। पौधों की जड़ों में नमी सदैव बनी रहनी चाहिए, परंतु जल का भरा रहना पौधों को गला देता है। इसकी फसल के लिए 50 सेमी० से 100 सेमी० हल्की, परंतु निरंतर वर्षा की आवश्यकता होती है।

मिट्टी– कपास की खेती करने के लिए अधिक नमी धारण करने की क्षमता रखने वाली उपजाऊ काली मिट्टी सर्वोत्तम होती है। काली मिट्टी उपजाऊ और नमी धारण करने की क्षमता रखने के कारण कपास की मिट्टी कहलाती है।

श्रम– कपास की खेती व्यापारिक स्तर पर करने के लिए कपास के पौधों से कपास चुनने तथा कारखानों तक पहुँचाने के लिए सस्ते श्रमिकों की आवश्यकता होती है। कपास चुनने का कार्य स्त्रियाँ सुगमता से कर लेती हैं।

भारत में कपास उगाने वाले क्षेत्र– भारत के विविध क्षेत्रों में कपास की कृषि की जाती है। यहाँ कपास उगाने के लिए प्रसिद्ध राज्य निम्नवत हैं–

(i) महाराष्ट्र– कपास महाराष्ट्र राज्य की प्रमुख नकदी फसल है। यह राज्य भारत की 30% कपास उगाता है। यहाँ नागपुर, शोलापुर, वर्धा, पुणे, नासिक तथा अमरावती जिलों में कपास की खूब खेती की जाती है। कपास के बल पर ही यह राज्य सूती वस्त्र उद्योग का केंद्र बन गया है।

(ii) गुजरात– गुजरात के कृषक बड़े परिश्रम से कपास की खेती करते हैं। यह राज्य देश की 22% कपास उगाने के कारण भारत का दूसरा बड़ा कपास उत्पादक राज्य बन गया है। यहाँ अहमदाबाद, सूरत, भड़ुँच, तथा औरंगाबाद जिलों में पर्याप्त कपास उगाई जाती है। कपास की खपत के लिए यहाँ पर्याप्त कपड़ा मिलें भी हैं।

(iii) पंजाब– पंजाब उत्तरी भारत का सबसे बड़ा तथा भारत का तृतीय बड़ा कपास उत्पादक राज्य है। यह राज्य भारत की 12% उत्तम कोटि की कपास उगाता है।

(iv) अन्य कपास उत्पादक राज्य– भारत के अन्य कपास उत्पादक राज्यों में हरियाणा, तमिलनाडु, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, असम तथा मेघालय आदि उल्लेखनीय हैं।

अथवा

चाय की फसल के लिए अनुकूल भौगोलिक दशाएँ– चाय के बागान लगाकर चाय की फसल उगाने के लिए निम्नलिखित भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है–

तापमान– चाय उष्ण-नम मानसूनी जलवायु की मुख्य फसल है। इसके पौधों के लिए 20° सेल्सियस से 30° सेल्सियस तक सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। स्वच्छ मौसम और चटकती धूप चाय की झाड़ियों के लिए लाभकारी होते हैं, जबकि कोहरा और पाला इन्हें विशेष हानि पहुँचाते हैं।

वर्षा– चाय की झाड़ियों के लिए 100 सेमी० से 150 सेमी० वर्षा आवश्यक मानी जाती है। वर्षा हल्की और नियमित होती रहनी चाहिए। चाय की झाँड़ियों की जड़ों में पानी रुकना हानिकारक होता है। इसलिए चाय के बागानों की भूमि ढ़ालदार होनी चाहिए।

मिट्टी– चाय की झाड़ियाँ लगाने के लिए उपजाऊ और ढालू भूमि सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। पहाड़ी ढालू भूमि में जल नहीं ठहर पाता है, जबकि उपजाऊ मिट्टी पौधों का उत्तम पोषण करती है।

सस्ता श्रम– चाय की खेती श्रम पर आधारित है। चाय की झाड़ियाँ लगाने तथा उनसे वर्ष में दो से तीन बार तक पत्तियाँ चुनने के लिए पर्याप्त संख्या में सस्ते श्रमिकों की आवश्यकता होती है। झाड़ियों से पत्तियाँ चुनने का कार्य स्त्रियाँ बड़े मनोयोग से करती हैं।

पूँजी और तकनीक– चाय की खेती पर्याप्त पूँजी और तकनीक का प्रयोग करके व्यापारिक कंपनियों द्वारा कराई जाती है चाय की पत्तियाँ कारखानों में निश्चित प्रक्रिया से गुजरकर चाय बन पाती है। चाय की खेती प्राय: व्यावसायिक संगठनों द्वारा

वैज्ञानिक ढंग से तथा व्यापारिक उद्देश्य से की जाती है।

भारत में चाय उत्पादक क्षेत्र– भारत का उत्तर पूर्वी और दक्षिणी क्षेत्र चाय उगाने में अग्रणी हैं। भारत की 53% चाय असम उगाता है। यहाँ सूरमा और ब्रह्मपुत्र नदियों की घाटियों में चाय के बागान लगे हैं। पश्चिम बंगाल भारत की 20% चाय उगाता है। इनके अतिरिक्त तमिलनाडु, केरल, बिहार, झारखंड, महाराष्ट्र, मणिपुर तथा अरुणाचल प्रदेश आदि राज्यों में भी चाय उगाई जाती है।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

43 मानव व्यवसाय (गौण व्यवसाय)

(विनिर्माण उद्योग, सूती वस्त्र, चीनी, कागज, लोह-इस्पात, सीमेंट, पेट्रोरसायन, ईंजीनियरिंग)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 402 व 403 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 403 व 404 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. लोह-इस्पात उद्योग को आधारभूत उद्योग क्यों कहा जाता है? कोई तीन कारण बताइए।

उ०– लोह-इस्पात उद्योग एक आधारभूत उद्योग है, इसके तीन कारण निम्नवत् हैं–

(i) लोह-इस्पात उद्योग अपने उतपादों से अन्य उद्योगों को स्थापित करने में सहयोग प्रदान करते हैं।

(ii) लोह-इस्पात उद्योग प्राथमिक उद्योगों से प्राप्त कच्चे माल का उपयोग कर उनका पोषण करते हैं।

(iii) लोह-इस्पात उद्योग राष्ट्र में औद्योगिकरण को प्रोत्साहित करते हैं।

2. सार्वजनिक क्षेत्र में स्थापित किन्हीं दो लोह-इस्पात उद्योग के केंद्रों का वर्णन कीजिए।

उ०– **सार्वजनिक क्षेत्र में स्थापित दो लोह-इस्पात उद्योग के केन्द्र निम्नवत् हैं–**

(i) इंडियन आयरन एंड स्टील कम्पनी– सार्वजनिक क्षेत्र के इस लोह-इस्पात केंद्र पश्चिम बंगाल में बर्नपुर, कुल्टी तथा हीरापुर में तीन कारखाने हैं। वर्तमान में ये तीनों इकाइयाँ 15 लाख टन ढ़लवाँ लोहा तथा 110 लाख टन इस्पात बनाती हैं।

(ii) राउरकेला इस्पात लिमिटेड– ओडिशा राज्य का गौरव कहलाने वाला 1959 में स्थापित सार्वजनिक क्षेत्र का यह इस्पात कारखाना भारी इस्पात की चादरें तथा रेल के उपकरण बनाता है।

3. भारत में लोह-इस्पात के स्थानीयकरण के कोई तीन कारण बताइए।

उ०– भारत में लोह-इस्पात क स्थानीयकरण के तीन कारण निम्नलिखित हैं–

(i) लोह-अयस्क तथा कोयला जैसे कच्चे मालों की सन्निकटता।

(ii) अन्य उपयोगी खनिज पदार्थों जैसे- मैंगनीज, अभ्रक, डोलोमाइट व चूना पत्थर आदि की उपलब्धता।

(iii) सस्ती एवं सुलभ जल विद्युत शक्ति।

4. भारत में कागज उद्योग के स्थानीयकरण के कोई तीन कारण बताइए।

उ०– भारत में कागज उद्योग के स्थानीयकरण के तीन कारण निम्नलिखित हैं–

(i) कागज उद्योग की स्थापना के लिए वनों से प्राप्त कोमल लकड़ी, बाँस, रद्दी कागज एवं चितड़े आदि कच्चे माल की उपलब्धता।

(ii) परिवहन के विकसित साधन।

(iii) शक्ति के साधनों की उपलब्धता।

5. पश्चिम बंगाल में जूट उद्योग के केंद्रित होने के तीन कारणों का वर्णन कीजिए।

उ०– पश्चिम बंगाल में जूट उद्योग के केंद्रित होने के तीन कारण निम्नलिखित हैं–

(i) गंगा की निम्न घाटी में जूट उत्पादन के लिए सभी अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियाँ मिलती हैं। अत: यहाँ कच्चा जूट भारी मात्रा में पैदा किया जाता है।

(ii) जूट उद्योग में पर्याप्त स्वच्छ जल की आवश्यकता होती है। पश्चिम बंगाल में यह हुगली नदी से मिल जाता है।

(iii) जूट की मीलों को चालक शक्ति के रूप में कोयला रानीगंज तथा झरिया की खादानों से प्राप्त हो जाता है।

6. भारत में जूट उद्योग हुगली नदी के तट पर केंद्रित होने के तीन कारण स्पष्ट कीजिए।

उ०– उत्तर के लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 5 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

7. आधारभूत उद्योग क्या है? इसका क्या महत्व है?

उ०– **आधारभूत उद्योग–** ऐसे उद्योग जिन पर अन्य विनिर्माण उद्योग आधारित होते हैं, आधारभूत उद्योग कहलाते हैं। इन उद्योगों के उत्पाद दूसरे उद्योगों का पोषण कर उनके विकास का कारण बनते हैं। दूसरे शब्दों में, "जिन महत्वपूर्ण उद्योगों पर अन्य उद्योगों की स्थापना और विकास निर्भर होता है, आधारभूत उद्योग कहलाते हैं।" जिस प्रकार भवन-निर्माण में नींव की उपादेयता है, वैसे ही उद्योगों की स्थापना में आधारभूत उद्योगों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। लोहा-इस्पात उद्योग, सीमेंट उद्योग, इंजीनियरिंग उद्योग, तेलशोधन उद्योग तथा पेट्रो रसायन उद्योग आधारभूत उद्योगों के उदाहरण हैं।

आधारभूत उद्योगों का महत्व– आधारभूत उद्योग वे उद्योग हैं, जिन पर राष्ट्र का औद्योगिक ढाँचा खड़ा किया जाता है। इनके महत्व निम्नलिखित हैं–

(i) आधारभूत उद्योग प्राथमिक उद्योगों से प्राप्त कच्चे माल का उपयोग कर उनका पोषण करते हैं।

(ii) आधारभूत उद्योग प्राथमिक उद्योगों को विकास के पथ पर आगे बढ़ने का अवसर प्रदान करते हैं।

(iii) आधारभूत उद्योग अपने उत्पादों से अन्य उद्योगों को स्थापित करने में सहयोग देते हैं।

(iv) आधारभूत उद्योग राष्ट्र में औद्योगीकरण को प्रोत्साहित करते हैं।

(v) आधारभूत उद्योग रोजगार के नए अवसर उत्पन्न करके, प्रति व्यक्ति आय और राष्ट्रीय आय बढ़ाने में अद्वितीय सहयोग देते हैं।

(vi) आधारभूत उद्योगों से पोषण पाकर विविध विनिर्माण उद्योग, विविध वस्तुओं का निर्माण कर जन कल्याण के साथ-साथ राष्ट्र के आर्थिक विकास को भी सुदृढ़ बनाते हैं।

8. भारत में सूती वस्त्र उद्योग महाराष्ट्र और गुजरात राज्यों में केंद्रित होने के किन्ही तीन कारणों का उल्लेख कीजिए।

उ०– यद्यपि सूती वस्त्र उद्योग भारत के अनेक राज्यों में स्थापित है, परंतु इसका सर्वाधिक विकास गुजरात और महाराष्ट्र राज्यों में हुआ है। सूती वस्त्र के उत्पादन में गुजरात राज्य का भारत में प्रथम स्थान तथा महाराष्ट्र राज्य का दूसरा स्थान है। भारत में सूती वस्त्र महाराष्ट्र और गुजरात में केंद्रित होने के दो कारण निम्नवत् हैं–

(i) पर्याप्त कच्चे माल की उपलब्धता।

(ii) अनुकूल जलवायु तथा स्वच्छ जल की आवश्यकता।

(iii) वस्त्र मशीनरी की आवश्यकता।

9. उत्तर प्रदेश में चीनी उद्योग के केंद्रित होने के लिए उत्तरदायी तीन कारण स्पष्ट कीजिए।

उ०– उत्तर प्रदेश में चीनी उद्योग के केंद्रित होने के लिए उत्तरदायी तीन कारण निम्नलिखित हैं–

(i) पर्याप्त गन्ना– उत्तर प्रदेश भारत में गन्ना उत्पादन में अग्रणी राज्य है। अत: यहाँ चीनी बनाने के लिए सस्ता गन्ना मिलों को मिल जाता है।

(ii) सस्ता श्रम– उत्तर प्रदेश की सघन जनसंख्या चीनी उद्योग को सस्ता ओर कुशल श्रम उपलब्ध कराकर इस उद्योग के स्थानीयकरण में सहायक बनी है।

(iii) ऊर्जा और मशीनें– उत्तर प्रदेश राज्य में चीनी की मिलों को सस्ती ऊर्जा तथा मशीनें सुलभ हो जाने से यहाँ चीनी उद्योग उन्नति कर रहा है।

10. पेट्रोरसायन उद्योग पर एक टिप्पणी लिखिए।

उ०– **पेट्रोरसायन उद्योग–** आधुनिक समय में पेट्रोरसायन एक महत्वपूर्ण उद्योग बनता जा रहा है। आज पेट्रोरसायन उत्पाद अपने गुणों के कारण औद्योगिक विकास में अपना विशिष्ट स्थान बनाए हुए है। अपने उत्कृष्ट गुणों के कारण पेट्रोरसायन उत्पाद परंपरागत कच्चे माल, लकड़ी, शीशा और धात्विक खनिजों द्वारा निर्मित उत्पादों के विकल्प या पूरक पदार्थों का रूप लेते जा रहे हैं। खेत–खलिहानों, कल–कारखानों तथा घरेलू कार्यों में इनका उपयोग बढ़ता ही जा रहा है। आज हम दैनिक जीवन में पेट्रोरसायन उद्योग में निर्मित अनेक वस्तुओं का उपयोग करते हैं। विभिन्न प्रकार की चिकनाई वाले तेल, ग्रीस, मोम, मोबिल ऑयल, कृत्रिम रबड़, वस्त्र तथा प्लास्टिक की अनेक वस्तुएँ पेट्रोरसायन उद्योग की ही देन हैं। विभिन्न क्षेत्रों में प्लास्टिक उत्पादों ने क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया है। इसी कारण दिनोंदिन इसके उपयोग में भी वृद्धि होती जा रही है। पेट्रोरसायन उद्योग में बड़ी–बड़ी वस्तुओं का निर्माण किया जाने लगा है, जिससे देश की अर्थव्यवस्था में इनका स्थान सर्वोपरि हो गया है। यह एक ऐसा उद्योग है, जिसमें उपभोग करने से बचे बेकार के पदार्थों को पुनचक्रित कर विभिन्न वस्तुओं का निर्माण किया जाता है, जिससे इसकी महत्ता में और भी वृद्धि हो गई है।

भारत में पेट्रोरसायन के केंद्र महाराष्ट्र में ट्राम्बे एवं कोयली, गुजरात में बड़ोदरा एवं अंकलेश्वर, बिहार में बरौनी, पश्चिम बंगाल में हल्दिया, असम में डिगबोई, नूनमाटी एवं बोगाईगाँव, केरल में कोच्चि, आन्ध्र प्रदेश में विशाखापट्टनम, तमिलनाडु में चेन्नई, हरियाणा में करनाल, उत्तर प्रदेश में मथुरा तथा गोवा में मार्मागाओ हैं। धीरे–धीरे इस उद्योग का प्रसार देश के अन्य भागों में भी होता जा रहा है।

11. इंजीनियरिंग उद्योग क्या है? भारत में वायुयान निर्माण के दो प्रमुख केन्द्रों के नाम बताइए।

उ०– **इंजीनियरिंग उद्योग–** मशीनें तथा उपकरण कारखानों के आवश्यक अंग और औद्योगीकरण के आधार है। मशीनें तथा उपकरणों का निर्माण करके ही राष्ट्र में उद्योगों के विकास का मार्ग खोला जा सकता है। मशीनें, वाहन, यंत्र तथा उपकरण जिस उद्योग द्वारा निर्मित किए जाते हैं, उसे इंजीनियरिंग उद्योग कहते हैं। एक समय था जब भारत छोटी–छोटी मशीनों और उपकरणों का विदेशों से आयात करके काम चलाता था, परंतु इंजीनियरिंग उद्योग ने भारत को सुई से लेकर विशाल जलयान तथा भीमकाय मशीनें बनाने में आत्मनिर्भर बना दिया है। अब भारत मशीनों का आयातक नहीं है, वरन वह उनका निर्यातक बन गया है।

भारत में वायु निर्माण के दो प्रमुख केंद्र कानपुर तथा बंगलूरू हैं

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. भारत में लोहा-इस्पात उद्योग का वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों में दीजिए।

(क) उद्योग का महत्व तथा विकास

(ख) उत्पादन एवं उद्योग के प्रमुख केंद्र

उ०– **लोहा व इस्पात उद्योग (Iron and Steel Industry) –**

महत्व– लौह–इस्पात उद्योग एक महत्वपूर्ण **आधारभूत उद्योग** है। किसी देश के औद्योगिकरण के लिए इस उद्योग का विकास अत्यावश्यक होता है। कोई भी ऐसा उद्योग नहीं है जिसमें किसी न किसी रूप में लोके व इस्पात का प्रयोग न होता हो। राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से भी यह उद्योग अत्यंत महत्वपूर्ण है।

प्रादुर्भाव एवं विकास– अशोक की लाट, जो लगभग 325 वर्ष पूर्व दिल्ली में स्थापित की गई थी, प्राचीन भारत में इस उद्योग की प्रगति का प्रतीक है। आधुनिक ढंग का प्रथम लोहा–इस्पात कारखाना सन् 1830 में अरकाडू में खोला गया। उसके बाद सन् 1870 में बंगाल में आयरन वर्क्स कम्पनी ने झरिया के निकट कुलटी में संयंत्र की स्थापना की। इस उद्योग का वास्तविक आरंभ सन् 1907 में झारखंड के जमशेदपुर (पहले साँकची गाँव) नामक स्थान में **टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी** (Tisco) की स्थापना से हुआ। तत्पश्चात् सन् 1919 में आसनसोल (बंगाल) के निकट **इंडियन आयरन स्टील कंपनी** ने अन्य कारखाना स्थापित किया। सन् 1923 में **भद्रावती में विश्वेश्वरैया आयरन एंड स्टील वर्क्स** की स्थापना के साथ सार्वजनिक क्षेत्र की पहली इकाई ने कार्य प्रारंभ किया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं में इस उद्योग के विकास पर पर्याप्त ध्यान दिया है। **द्वितीय योजना** में विदेशी कम्पनियों की सहायता से सार्वजनिक क्षेत्र में तीन कारखाने स्थापित किए गए– (i) रूस की सरकार की

सहायता से मध्य प्रदेश में **भिलाई** (अब छत्तीसगढ़ में), (ii) ब्रिटेन की सहायता से बंगाल के **दुर्गापूर** नामक स्थान में, (iii) पश्चिमी जर्मनी की सहायता से **राउरकेला** (ओडिशा में)। तीसरी योजना में रूस की सहायता से झारखंड में **बोकारो इस्पाम कारखाना** स्थापित किया गया। चौथी योजना में सार्वजनिक क्षेत्र के इस्पात के कारखानों के प्रबंध के लिए केंद्र सरकार ने जनवरी, 1974 में **भारतीय इस्पात प्राधिकरण लिमिटेड** (Steel Authority of India Limited– SAIL) की स्थापना की। पाँचवी योजनावधि में सरकार ने सन् 1976 में इंडियन आयरन एंड स्टल कंपनी बर्नपुर का प्रबंध अपने हाथों में ले लिया। छठी योजना में सरकार ने **विशाखापट्टनम** (आन्ध्र प्रदेश) में अत्यंत आधुनिक इस्पात कारखाना लगाया।

भारत में लोहा-इस्पात उद्योग का वितरण– भारत का लोहा इस्पात बनाने में विश्व में चतुर्थ स्थान है। देश के विभिन्न राज्यों में लोहा इस्पात बनाने की इकाइयाँ स्थापित की गई हैं। भारत की प्रमुख लोहा इस्पात निर्माण करने वाली इकाइयाँ अग्रलिखित हैं–

(i) **टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी, जमशेदपुर–** झारखंड राज्य के जमशेदपुर में सन् 1907 ई० में स्थापित यह निजी क्षेत्र का लोहा–इस्पात बनाने वाला कारखाना एशिया का सबसे बड़ा कारखाना है।

(ii) **इंडियन आयरन एंड स्टील कंपनी–** सार्वजनिक क्षेत्र की इस कंपनी के पश्चिमी बंगाल में बर्नपुर, कुल्टी तथा हीरापुर में तीन कारखानें हैं। वर्तमान में ये तीनों इकाइयाँ 15 लाख टन ढलवाँ लोहा तथा 10 लाख टन इस्पात बनाती है।

(iii) **विश्वेश्वरैया आयरन एंड स्टील वर्क्स–** कर्नाटक राज्य के भद्रावती नामक स्थान पर सन् 1923 में भद्रा नदी पर बना यह कारखाना मिश्रित इस्पात बनाता है।

(iv) **राउरकेला इस्पात लिमिटेड–** ओडिशा राज्य का गौरव कहलाने वाला सन् 1959 में स्थापित सार्वजनिक क्षेत्र का यह इस्पात कारखाना भारी इस्पात की चादरें तथा रेल के उपकरण बनाता है।

(v) **भिलाई इस्पात लिमिटेड–** छत्तीसगढ़ में रूस की सरकार के सहयोग से सन् 1957 में स्थापित भिलाई नगर का यह कारखाना इस्पात के साथ–साथ अन्य उपयोगी पदार्थ भी बनाता है। **(vi) दुर्गापुर इस्पात लिमिटेड–** पश्चिम बंगाल के दुर्गापुर नामक स्थान पर सन् 1959 में ब्रिटिश सहायता से स्थापित सार्वजनिक क्षेत्र का यह कारखाना इस्पात पिंड तथा रेल की पटरियाँ बनाता है।

(vii) **बोकारो इस्पात लिमिटेड–** पश्चिम बंगाल के बोकारो स्थान पर रूस के सहयोग से सन् 1964 में स्थापित यह कारखाना इस्पात बनाता है।

(viii) **विजयनगर इस्पात प्लांट–** आंध्र प्रदेश के विजयनगर में स्थापित यह कारखाना उत्तम कोटि का 'स्टेनलेस स्टील' बनाता है।

(ix) **विशाखापट्टनम् इस्पात प्लांट–** तेलंगाना प्रदेश के विशाखापट्टनम नगर में स्थापित यह कारखाना मुलायम इस्पात बनाता है।

(x) **सेलम इस्पात प्लांट–** तमिलनाडु राज्य के सेलम नामक स्थान पर स्थापित यह कारखाना उत्तम कोटि का रंगीन इस्पात बनाता है।

(xi) **दैत्तारी इस्पात प्लांट–** ओडिशा राज्य में दैत्तारी नामक स्थान पर यह नया इस्पात कारखाना स्थापित किया गया है।

(xii) **कोठागुडम् स्पॉज आयरन प्लांट–** ओडिशा राज्य के कोठागुडम् नामक स्थान पर यह भी इस्पात बनाने का नया प्लांट स्थापित किया गया है।

इस्पात के उत्पादन में भारत का विश्व में चौथा स्थान है। भारत प्रतिवर्ष भारी मात्रा में इस्पात का निर्यात करता है।

2. भारत में सूती वस्त्र उद्योग का वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों में दीजिए।

(क) महत्व, विकास एवं उत्पाद

(ख) उत्पादन के क्षेत्र एवं प्रमुख केंद्र

उ०– **सूती वस्त्र उद्योग**- सूती वस्त्र उद्योग भारत का प्राचीन और सुविकसित उद्योग है। भारत की उष्ण जलवायु सूती वस्त्र पहनने के अनुकूल होने के कारण भारत में इस उद्योग का पर्याप्त विकास हुआ है। इस उद्योग के विकास का वास्तविक आरंभ सन् 1854 में मुंबई में एक सूती वस्त्र मिल की स्थापना से हुआ। इसके बाद धीरे–धीरे अहमदाबाद, नागपुर, शोलापुर, इंदौर, कानपुर आदि स्थानों पर कपड़ा कारखाने लगने लगे। सन् 1917 से सन् 1923 तक इस उद्योग का पर्याप्त विस्तार हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इस उद्योग ने तीव्र प्रगति की है। सन् 2012 तक देश में 2708 सूती वस्त्र मिलें थीं।

महत्व– भारत का सूती वस्त्र उद्योग सबसे बड़ा संगठित उपभोक्ता उद्योग है। यह देश के औद्योगिक उत्पादन के 14%, सकल घरेलू उत्पादन में 4%, कुल विनिर्मित औद्योगिक उत्पादन के 20% एवं कुल निर्यात-व्यापार के लगभग 25% भाग की आपूर्ति करता है। देश के कुल आयात-व्यय में इसका हिस्सा मात्र 3% है। इस उद्योग में लगभग 3.5 करोड़ लोगों को रोजगार मिला हुआ है। सूती वस्त्र उद्योग वास्तव में देश का सबसे बड़ा शुद्ध विदेशी मुद्रा अर्जित करने वाला उद्योग है। आज इस उद्योग का विस्तार कच्चे माल से लेकर सिले-सिलाए वस्त्रों के सर्वोच्च मूल्य संवर्धित उत्पादों तक हो चुका है।

(ख) सूती वस्त्र उत्पादन के क्षेत्र एवं प्रमुख केंद्र– भारत के निम्नलिखित राज्यों में सूती वस्त्र उद्योग ने अधिक उन्नति की है–

(i) महाराष्ट्र– महाराष्ट्र भारत का सबसे बड़ा सूती वस्त्र उत्पादक राज्य है। सूती वस्त्र निर्माण उद्योग इस राज्य के नागरिकों का आजीविका का मुख्य स्रोत बन गया है। यह राज्य भारत का 30% सूत तथा 40% सूती वस्त्र बनाता है। यहाँ सूती वस्त्र उद्योग मुख्य रूप से मुंबई, नागपुर, शोलापुर, पुणे, सतारा, कोल्हापुर, अमरावती, वर्धा, जलगाँव तथा औरंगाबाद नगरों में स्थापित हुआ है। मुंबई नगर सूती वस्त्रों का सबसे बड़ा केंद्र है। महाराष्ट्र की 165 सूती वस्त्रों की मिलों में से 65 मिलें अकेले मुंबई नगर में स्थित हैं। यही कारण है कि मुंबई को सूती वस्त्र के कारखानों की नगरी तथा महाराष्ट्र को सूती वस्त्र निर्माण का केंद्र कहा जाता है।

(ii) गुजरात– गुजरात राज्य के उद्योगों में जिस उद्योग को सर्वाधिक महत्व दिया जाता है, वह सूती वस्त्र निर्माण उद्योग है। गुजरात राज्य के आर्थिक विकास में सूती वस्त्र उद्योग ने बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। गुजरात भारत का 30% सूती वस्त्र बनाकर भारत का दूसरा बड़ा सूती वस्त्र उत्पादक राज्य बन गया है। यहाँ सूती वस्त्र निर्माण उद्योग के प्रधान केंद्र अहमदाबाद, सूरत, बड़ोदरा, भरूच, भावनगर, नाड़ियाद, राजकोट, कलोल, पोरबंदर आदि हैं। अहमदाबाद गुजरात का सबसे बड़ा सूती वस्त्र उत्पादक क्षेत्र है। गुजरात की 120 सूती मिलों में से 73 सूती मिलें अकेले अहमदाबाद नगर में स्थित हैं। इसी कारण अहमदाबाद भारत का 'मानचेस्टर' तथा 'पूर्व का बोस्टन' कहलाता है। सूरत इस राज्य के सूती वस्त्रों की व्यापारिक मंडी है।

(iii) उत्तर प्रदेश– सूती वस्त्र उद्योग का विकास पश्चिमी उत्तर प्रदेश में अधिक हुआ है। **कानपुर** उद्योग का उत्तर प्रदेश में सबसे बड़ा केंद्र है। इसी कारण कानपुर को उत्तर प्रदेश का मानचेस्टर कहा जाता है। उत्तर प्रदेश में सूती वस्त्र उद्योग के अन्य केंद्र मुरादाबाद, मोदीनगर, सहारनपुर, वाराणसी, लखनऊ, आगरा, बरेली, हाथरस एवं अलीगढ़ हैं।

(iv) तमिलनाडु– भारत में सबसे अधिक सूती कपड़े की मिलें इसी राज्य में हैं, परंतु ये मिलें छोटी हैं। अत: यहाँ कुल उत्पादन भी कम है। यहाँ की ज्यादातर मिलें सूत का उत्पादन करतीं हैं। **कोयम्बटूर** सूती वस्त्र उद्योग का सबसे बड़ा केंद्र है। यहाँ तमिलनाडु की आधे से ज्यादा मिलें लगी हुई हैं। अन्य प्रमुख केंद्र, चेन्नई मदुरै, तिरूवन्नतपुरम्, अलेप्पी, थंजावूर, क्विलोन, अलवाए, रामानाथपुरम्, तिरूनेलवेली, तिरुचिरापल्ली तुतीकोरिन इत्यादि हैं।

कर्नाटक में सूती वस्त्र उद्योग का विकास राज्य के उत्तर-पूर्वी भागों के कपास उत्पादक क्षेत्रों में हुआ है, जहाँ देवणगेरे, हुबली, बेलारी, मैसूर और बंगलौर महत्वपूर्ण केन्द्र हैं।

आंध्र प्रदेश में सूती वस्त्र उद्योग कपास उत्पादक तेलंगाना क्षेत्र में स्थित है। इस प्रदेश की अधिकतर मिलें कताई करके सूत का उत्पादन करतीं हैं। हैदराबाद, सिकंदराबाद, वारंगल और गुणटूर महत्वपूर्ण केंद्र हैं।

पश्चिम बंगाल में कोलकाता के आस-पास 48 किमी० की परिधि में हुगली नदी के किनारे सूती वस्त्र बनाने की मिलें हैं।

3. भारत में चीनी उद्योग का वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए–

(क) उद्योग का विकास **(ख) स्थानीयकरण**

(ग) उत्पादन के केंद्र **(घ) समस्याएँ**

उ०– **भारत में चीनी उद्योग–** सूती वस्त्र उद्योग के बाद चीनी उद्योग कृषि पर आधारित भारत का दूसरा सबसे बड़ा उद्योग है। यह

उद्योग लाखों लोगों को रोजगार प्रदान कर रहा है। भारत विश्व में ब्राजील के बाद चीनी का उत्पादन करने वाला सबसे बड़ा देश है।

(क) भारत में चीनी उद्योग का विकास– भारत में चीनी का आधुनिकतम कारखाना सर्वप्रथम सन् 1903 में स्थापित किया गया। इस उद्योग की वास्तविक प्रगति वर्ष 1931-32 से प्रारंभ हुई जब इसे संरक्षण प्रदान किया गया। सन् 1939 से इस उद्योग ने निरंतर प्रगति की है। सन् 1951 में भारत में चीनी की 138 मिलें थीं, जिनकी उत्पादन-क्षमता 15 लाख टन तथा उत्पादन 11 लाख टन था। इसके बाद इसका तीव्र गति से विकास हुआ। वर्तमान में देश में 250 चीनी मिलें निजी क्षेत्र में, 62 चीनी मिलें सार्वजनिक क्षेत्र में जबकि 320 चीनी मिलें सहकारी क्षेत्र में संचालित की जा रहीं हैं।

(ख) भारत में चीनी उद्योग का स्थनीयकरण– भारत में चीनी उद्योग के स्थानीयकरण के लिए निम्नलिखित कारण हैं–

- **(i) पर्याप्त गन्ना–** भारत में चीनी उद्योग के स्थानीयकरण का मुख्य कारण गन्ने की पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता है।
- **(ii) अनुकूल जलवायु–** भारत की नम तथा उष्ण जलवायु चीनी उद्योग को विकसित करने में सहायक बनी है।
- **(iii) सस्ता श्रम–** भारत की सघन जनसंख्या चीनी उद्योग को सस्ता एवं कुशल श्रमिक उपलब्ध कराकर इस उद्योग के स्थानीयकरण में सहायक बनीं हैं।
- **(iv) ऊर्जा एवं मशीनें–** भारत में चीनी मिलों को सस्ती ऊर्जा तथा मशीनें सुलभ हो जाने से चीनी उद्योग ने उन्नति की है।
- **(v) परिवहन की सुलभता–** भारत में सड़कों तथा रेलमार्गों का जाल बिछा हुआ है। रेलमार्गों तथा सड़कों के द्वारा गन्ने को चीनी मिलों तक तथा चीनी को खपत केंद्रों तक पहुँचाने में सहयोगी बनकर, चीनी उद्योग के स्थानीयकरण में सहायक सिद्ध हुई है।
- **(vi) पर्याप्त माँग–** चीनी की माँग भारत के सभी क्षेत्रों में होने के कारण, चीनी उद्योग लाभकारी बन जाने से दनादन स्थापित होता चला गया।

(ग) भारत में चीनी उत्पादन के केंद्र– भारत के अनेक राज्यों में चीनी निर्माण उद्योग चलाया जाता है। भारत में चीनी उद्योग की दृष्टि से निम्नलिखित राज्य विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं–

- **(i) महाराष्ट्र–** महाराष्ट्र राज्य चीनी उत्पादन के क्षेत्र में भारत में प्रथम स्थान पर है। यह राज्य भारत की 35% चीनी का उत्पादन करता है। यहाँ पुणे, सतारा, सांगली, नासिक, अहमदनगर, मनमाड़ तथा रावलगाँव आदि क्षेत्रों में चीनी मिलें स्थापित की गई हैं। यहाँ कुल 119 चीनी मिलें हैं।
- **(ii) उत्तर प्रदेश–** उत्तर प्रदेश चीनी के उत्पादन में भारत में द्वितीय स्थान रखता है। यह राज्य भारत की 32% चीनी का निर्माण करता है। यहाँ चीनी की मिलें सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, बुलंदशहर, बागपत, अलीगढ़, मुरादाबाद, रामपुर, पीलीभीत, गोंडा, देवरिया और गोरखपुर आदि जिलों में स्थापित की गई हैं।
- **(iii) तमिलनाडु–** तमिलनाडु राज्य की जलवायु गन्ना उगाने के लिए सर्वाधिक अनुकूल होने के कारण, यह राज्य भारत में चीनी उत्पादन के क्षेत्र में तीसरा स्थान पा गया है। यहाँ चीनी की मिलें कोयंबटूर दक्षिणी अर्काट, त्रिरूचिरापल्ली तथा बैल्लोर जिलों में स्थापित की गई हैं।
- **(iv) अन्य राज्य–** भारत के अन्य चीनी उत्पादक राज्यों में कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, बिहार, पंजाब, हरियाणा तथा उत्तराखंड आदि राज्यों के नाम उल्लेखनीय हैं।

भारत में चीनी उद्योग की समस्याएँ (बाधाएँ)– भारत में वर्तमान समय में चीनी उद्योग अनेक बाधाओं से ग्रसित है। इस उद्योग को वर्तमान समय में निम्नलिखित समस्याओं का सामाना करना पड़ रहा है–

- (i) भारत में गन्ना उत्पादन का लागत मूल्य बढ़ जाने से सरकार प्रतिवर्ष गन्ना मूल्य बढ़ा देती है।
- (ii) गन्ना मूल्य बढ़ने से चीनी मिल मालिकों का लाभ घट जाता है।
- (iii) गन्ने का उचित मूल्य दिलाने के लिए किसानों को कई बार, न्यायालय की शरण तक लेनी पड़ जाती है।

(iv) गन्ना उत्पादन बढ़ जाने से चीनी मिलें किसानों का संपूर्ण गन्ना नहीं खरीद पातीं, अत: कभी-कभी किसानों को खेतों में खड़ा गन्ना जलाना पड़ता है।

(v) चीनी मिलें समय से न चल पाने के कारण, गन्ना उत्पादक किसान गन्ना सस्ती दरों पर कोल्हुओं क्रेशरों को बेचने पर विवश हो जाते हैं।

(vi) श्रमिक यूनियन प्रतिवर्ष वेतन तथा अन्य सुविधाएँ बढ़ाने के लिए हड़ताल कर, चीनी उत्पादन में बाधा डालती हैं।

(vii) सरकार **लेवी** के रूप में सस्ती चीनी तथा शीरा खरीदकर चीनी मिलों को हानि पहुँचाती है।

(viii) सरकार, मिल मालिक तथा गन्ना उत्पादक किसान आमने-सामने आकर विवाद पैदा कर देते हैं। इन समस्याओं को हल करने के लिए किसानों को कम क्षेत्रफल में गन्ना बोना चाहिए। सरकार को गन्ने का उचित मूल्य निश्चित कर देना चाहिए। बाजार में चीनी तथा शीरे का उचित मूल्य तय हो जाना चाहिए।

4. भारत में कागज उद्योग का वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए।

(क) स्थानीयकरण के कारण (ख) उद्योग के प्रमुख केंद्र

उ०- **भारत में कागज उद्योग के स्थानीकरण के कारण-** कागज उद्योग की स्थापना के लिए कच्चा माल वनों से प्राप्त कोमल लकड़ी, बाँस, रद्दी कागज एवं चिथड़े आदि, स्वच्छ जल, रासायनिक पदार्थ, शक्ति के संसाधन, सस्ते एवं कुशल श्रमिक, परिवहन के विकसित साधन, पयाप्त माँग तथा सरकारी सहायता व संरक्षण आवश्यक होते हैं। भारत में कागज उद्योग के लिए कच्चे माल के रूप में बगाई घास, गन्ने की खोई, फटे-पुराने चिथड़े, रद्दी कागज, बाँस तथा कोमल लकड़ी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। विशेषकर पश्चिम बंगाल में हुगली नदी के तट पर ये सुविधाएँ पर्याप्त उपलब्ध हैं। यहीं रद्दी कागज तथा फटे-पुराने कपडों का पुनर्चक्रण कर उनका उपयोग कच्चे माल के रूप में किया जाता है।

भारत में कागज उद्योग के प्रमुख केंद्र- वर्तमान समय में भारत में कागज बनाने वाले लगभग 700 कारखानें हैं, जो भारत के निम्नलिखित राज्यों में स्थित हैं-

(i) पश्चिम बंगाल- पश्चिम बंगाल राज्य कागज निर्माण उद्योग के क्षेत्र में भारत में प्रथम स्थान पर है। इस राज्य की 19 विशाल कागज मिलों में देश का लगभग 20% कागज बनाया जाता है। यहाँ टीटागढ़, नैहाटी, कोलकाता, हावड़ा, त्रिवेणी तथा चंद्रहाटी नगरों में कागज उद्योग स्थापित किए गए हैं।

(ii) महाराष्ट्र- महाराष्ट्र राज्य कागज उद्योग के क्षेत्र में भारत में द्वितीय स्थान पर है। इस राज्य की 50 कागज मिलों में देश का 13% कागज बनाया जाता है। यहाँ बल्लारपुर, पुणे, मुंबई, गोरेगाँव, कल्याण तथा साँगली नगरों में कागज की मिलें स्थापित की गई हैं। बल्लारपुर देश की सबसे बड़ी अखबारी कागज बनाने की मिल है।

(iii) आंध्र प्रदेश- आंध्र प्रदेश को भारत में कागज उद्योग के क्षेत्र में तृतीय स्थान प्राप्त है। यहाँ की 22 कागज की मिलों में देश का 13% कागज बनाया जाता है। यहाँ तिरुपति, सिरपुर, राजमेहंद्री, कुर्नूल, श्रीकाकुलम, नैल्लोर तथा बोधन आदि नगरों में कागज बनाने की मिलें लगाई गई हैं।

(iv) मध्य प्रदेश- मध्य प्रदेश कागज उद्योग की प्रगति के अनुसार भारत में चौथा स्थान रखता है। यहाँ 8 विशाल कागज मिलों से देश का 6% कागज प्राप्त होता है। यहाँ भोपाल, रतलाम, इंदौर, नेपानगर आदि नगरों में कागज बनाने की मिलें लगाई गईं हैं। नेपानगर पेपर मिल में अखबारी कागज बनाया जाता है।

(v) अन्य राज्य- भारत में कागज उद्योग के लिए बिहार, उत्तर प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, केरल, उत्तराखंड तथा हरियाणा आदि राज्यों के नाम भी उल्लेखनीय हैं।

5. भारत में सीमेंट उद्योग के महत्व तथा क्षेत्रीय वितरण पर प्रकाश डालिए।

उ०- **भारत में सीमेंट उद्योग का महत्व-** किसी भी विकासोन्मुख राष्ट्र के लिए सीमेंट का अत्यधिक महत्व है। सीमेंट भवन-निर्माण का सस्ता एवं टिकाऊ मसाला है। बाँध, सड़क, भवन तथा कारखाने बनाने में सीमेंट की विशेष भूमिका रहती है। सीमेंट उद्योग एक आधारभूत उद्योग है अत: देश में सीमेंट की कमी होने पर आर्थिक विकास की गति पर अत्यंत प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। परिवहन तथा उद्योगों के विकास में सीमेंट उद्योग मुख्य भूमिका निभाता है। भारत जैसे

विकासशील देश में सीमेंट व्यापारिक स्तर पर बनाया जाता है। भारत में सीट की बढ़ती माँग को पूरा करने के लिए लघु संयंत्र तथा विशाल कारखाने स्थापित किए गए हैं। सीमेंट उत्पादन में भारत का विश्व में द्वितीय स्थान है।

भारत में सीमेंट उद्योग के केंद्रों का वितरण– संपूर्ण भारत में सीमेंट कारखानों की स्थापना तथा विकास किया गया है। भारत के प्रमुख सीमेंट उत्पादक राज्य निम्नलिखित हैं–

(i) **आंध्र प्रदेश–** आंध्र प्रदेश भारत का एक महत्वपूर्ण सीमेंट उत्पादक राज्य है। इस राज्य में सीमेंट के 18 विशाल कारखानें हैं। यहाँ विजयवाड़ा, चेरागुंटल, करीमनगर, कृष्णा आदि सीमेंट उद्योग के प्रसिद्ध केंद्र हैं।

(ii) **मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़–** ये दोनों राज्य सीमेंट उद्योग के विकास में अग्रणी हैं। यहाँ भारत का 15% सीमेंट बनाया जाता है। इन दोनों राज्यों में कटनी, सतना, ग्वालियर, दुर्ग, वनमौर तथा जबलपुर आदि नगरों में सीमेंट उद्योग स्थापित किए गए हैं।

(iii) **राजस्थान–** यह राज्य सीमेंट उद्योग के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति कर गया है। यहाँ सीमेंट के 10 कारखाने हैं। जो सवाई माधोपुर, लखेरी, निंबाहेडा तथा उदयपुर आदि स्थानों पर लगाए गए हैं।

(iv) **अन्य राज्य–** भारत के अन्य सीमेंट उत्पादक राज्यों में तमिलनाडु, गुजरात, कर्नाटक, महाराष्ट्र, झारखंड, उत्तर प्रदेश, ओडिशा तथा हिमाचल प्रदेश आदि उल्लेखनीय हैं।

भारत के सीमेंट उद्योग के विषय में एक रोचक तथ्य भी जानने योग्य है, "भारत में सीमेंट उद्योग का विकास दक्कन के पठार के चारों ओर हुआ है।" इसका प्रमुख कारण, इस क्षेत्र में सीमेंट निर्माण में काम आने वाला कच्चा माल है। ये कच्चे माल भारी और सस्ते होते हैं। अत: परिवहन व्यय बचाने के लिए सीमेंट उद्योग का विकास इन्हीं कच्चे मालों के निकटतर्वी क्षेत्रों में किया गया है।

6. भारत के किसी एक आधारभूत उद्योग का वर्णन कीजिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर में आधारभूत उद्योग लोहा-इस्पात उद्योग का अवलोकन कीजिए।

7. पेट्रोरसायन उद्योग तथा इंजीनियरिंग उद्योग का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उ०– पेट्रोरसायन उद्योग- वर्तमान युग में जिस नए उद्योग का अवतार हुआ है, उसे पेट्रोरसायन उद्योग का नाम दिया गया है। खनिज तेल तथा प्राकृतिक गैस से प्राप्त विविध पदार्थों पर आधारित उद्योग पेट्रोरसायन उद्योग कहलाता है। भारत में पेट्रोरसायन उद्योग का विकास गत दो दशकों की देन है। सन् 1960 में देश में कार्बनिक रसायनों की माँग इतनी बढ़ गई थी कि कोयला, एल्कोहॉल और कैल्सियम कार्बाइड से तैयार रसायनों से उसे पूरा करना कठिन हो गया। उसी समय पेट्रोलियम परिष्करण उद्योग तेजी से विकसित हुआ। इसी के चलते सन् 1961 में मुंबई में नैफ्था पर आधारित पहला कारखाना 'द नेशनल आर्गेनिक कैमिकल्स इंडस्ट्रीज लिमिटेड' लगाया गया। सन् 1966 में यूनियन कार्बाइड इंडिया लिमिटेड ने मुंबई के ट्रांबे में पैट्रो रसायन संयत्र लगाया। सन् 1969 में कोयली में भी ऐसा ही कारखाना लगाया गया। इसके बाद बड़ोदरा में सार्वजनिक क्षेत्र का पहला विशाल पेट्रोरसायन सयंत्र लगाया गया, जो अनेक प्रकार के उत्पाद बनाता था। इसका नाम इंडियन पेट्रोकैमिकल्स कार्पोरेशन लिमिटेड है। इसके बाद कई स्थानों पर बड़े-बड़े पेट्रोरसायन संयत्र लगाए गए। इस उद्योग के अंतर्गत प्लास्टिक, कृत्रिम रेशा, कृत्रिम रबड़ तथा डिटर्जेंट पाउडर आदि बनाने के उद्योग सम्मिलित किए जाते हैं।

भारत में पेट्रोरसायन उद्योग का नियंत्रण– भारत में पेट्रोरसायन उद्योग का विकास करने तथा उस पर नियंत्रण बनाए रखने के लिए निम्न संस्थाओं की स्थापना की गई है–

(i) **इंडियन पेट्रोकैमिकल्स कॉर्पोरेशन लिमिटेड–** यह सार्वजनिक क्षेत्र की यह संस्था पॉलिमर्स, रसायन रेशों व रेशों की मध्यवर्ती वस्तुओं का उत्पादन और वितरण करता था किंतु लगातार घाटा उठाने के कारण 4 जून, 2002 ई० को बंद कर दिया गया है।

(ii) **पेट्रो फिल्स काऑपरेटिव लिमिटेड–** यह संगठन गुजरात राज्य के नलधारी और बड़ोदरा में स्थित कारखानों में पोलिस्टर फिलामेंट धागा एवं नायलॉन चिप्स के उत्पादन का कार्य करता है।

(iii) **सेंट्रल इंस्टिट्यूट ऑफ प्लास्टिक इंजीनियरिंग एंड टेक्नोलॉजी–** इस संस्थान का मुख्य कार्य प्लास्टिक के ज्ञान-विज्ञान के विकास हेतु छात्रों को प्रशिक्षण प्रदान करना है।

पेट्रोरसायन उद्योग का महत्व– पेट्रोरसायन उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास का प्रमुख घटक बन गया है। इस उद्योग ने भारतीय औद्योगीकरण को न केवल गति प्रदान की है, वरन् उसका स्वरूप ही बदल दिया है। भारत में पेट्रोरसायन उद्योग के अंतर्गत भवन निर्माण में प्रयुक्त होने वाली संश्लेषित वस्तुएँ, प्लास्टिक तथा कृत्रिम रेशा बनाया जाने लगा है। प्लास्टिक, लकड़ी का स्थानापन्न स्रोत बन गया है। नायलॉन के धागे, फाइबर पदार्थ बनाने के उद्योग तथा डिटर्जेंट बनाने का कार्य वृहद स्तर के उद्योगों के रूप में विकसित हो गया है। यह उद्योग भारतीय उद्योगों तथा अर्थव्यवस्था को निरंतर प्रगति के मार्ग पर अग्रसर करता चला जा रहा है।

भारत में पेट्रोरसायन उद्योग के केंद्र– भारत में पेट्रोरसायन उद्योग से एल्कोहल, कैल्सियम कार्बाइड तथा अनेक रासायनिक पदार्थों के अभाव को पूरा करने के लिए इस उद्योग के केंद्रों तथा संयंत्रों की स्थापना मुंबई, ट्रांबे, भोपाल, कोयली, बड़ोदरा, हल्दिया, बोंगई गाँव, बरौनी, औरैया, जामनगर, गाँधीनगर, हजीरा, रत्नागिरी तथा विशाखपट्टनम आदि नगरों में की गई है। पेट्रोरसायन पदार्थों की बढ़ती माँग ने इस उद्योग के भविष्य को उज्ज्वल बना दिया है। धीरे-धीरे इस उद्योग का विकेंद्रीकरण समूचे देश में किया जा रहा है।

इंजीनियरिंग उद्योग– मशीनें तथा उपकरण कारखानों के आवश्यक अंग और औद्योगीकरण के आधार है। मशीनें तथा उपकरणों का निर्माण करके ही राष्ट्र में उद्योगों के विकास का मार्ग खोला जा सकता है। मशीनें, वाहन, यंत्र तथा उपकरण जिस उद्योग द्वारा निर्मित किए जाते हैं, उसे इंजीनियरिंग उद्योग कहते हैं। एक समय था जब भारत छोटी-छोटी मशीनों और उपकरणों का विदेशों से आयात करके काम चलाता था, परंतु इंजीनियरिंग उद्योग ने भारत को सुई से लेकर विशाल जलयान तथा भीमकाय मशीनें बनाने में आत्मनिर्भर बना दिया है। अब भारत मशीनों का आयातक नहीं है, वरन वह उनका निर्यातक बन गया है।

देश में भारी इंजीनियरिंग उद्योग का वास्तविक विकास सन् 1958 में हैवी इंजीनियरिंग कार्पोरेशन (राँची) की स्थापना के बाद हुआ। इसकी तीन इकाइयाँ हैं– (i) भारी मशीनरी निर्माण संयत्र, (ii) फांउड्री फोर्ज का संयत्र तथा (iii) भारी मशीन उपकरण। सन् 1965 में आस्ट्रिया के सहयोग से त्रिवेणी स्ट्रक्चरल्स लि० नैनी, सन् 1947 में तुंगभद्रा स्टील प्रोडक्टस लि० तथा सन् 1966 में चेकोस्लोवाकिया के सहयोग से भारत हैवी प्लेट एंड वैसल्स लि० विशाखापट्टनम स्थापित किया गया। भारी इंजीनियरिंग उद्योगों में क्रेन, इस्पात के ढाँचे, ट्रांसमिशन टावर तथा ढलाई में काम आने वाले उपकरण आदि बनाए जाते है। दुर्गापुर में स्थापित माइनिंग एंड एलाइड मशीनरी कार्पोरेशन लि० खनन कार्य में काम आने वाली मशीनों का निर्माण करता है।

भारत के इंजीनियरिंग उद्योग– भारत में विभिन्न प्रकार के इंजीनियरिंग उद्योग स्थापित किए गए हैं, जिनमें प्रमुख उद्योग निम्नलिखित हैं–

(i) भारी मशीनरी निर्माण उद्योग– इन कारखानों में विद्युत टरबाइंस, वाष्प टैंक, विशालकाय चक्र, इंजन, ट्रांसफार्मर्स तथा विद्युत उपकरण बनाए जाते हैं। भारी मशीनरी उद्योग के केंद्र हरिद्वार, मुंबई, कोलकाता, भोपाल, चंडीगढ़, अंबाला, बंगलुरू तथा कानपुर नगरों में स्थापित किए गए हैं।

(ii) वायुयान निर्माण उद्योग– भारत में विविध प्रकार के वायुयान बनाए जाते हैं। भारत में चेतक और चीता आदि हेलीकॉप्टर भी बनाए जाते हैं। कानपुर, बंगलुरू, कोरापुट, हैदराबाद, कोरबा (लखनऊ), कोच्चि आदि नगरों में वायुयान निर्माण उद्योग स्थापित और विकसित किया गया है।

(iii) जलयान निर्माण उद्योग– जलयान निर्माण उद्योग भारत में पर्याप्त रूप से विकसित हो गया है। भारत में कोलकाता, विशाखापट्टनम, मुंबई, गोवा तथा कोच्चि में जलयान निर्माण केंद्रों की स्थापना की गई हैं। सन् 1941 में सिंधिया कंपनी ने जलयान निर्माण का पहला कारखाना आंध्र प्रदेश के विशाखापट्टनम नगर में खोला जिसका भारतीय सरकार ने सन् 1947 में राष्ट्रीयकरण करके इसका नाम 'हिंदुस्तान शिपयार्ड' रख दिया। इसके अतिरिक्त पश्चिम बंगाल के कोलकाता में 'गार्डन रीच शिप बिल्डर्स' नामक कारखाने में भी विशालकाय जलयानों, मालवाहक नौकाओं तथा

तटपोतों का निर्माण किया जा रहा है। मझगाँव (मुंबई) के जलयान निर्माण केंद्र में सेना के लिए जलयान तथा नौकाएँ बनाई जाती हैं।

भारत में वाराणसी में डीजल रेल इंजन तथा चितरंजन, पेरांबूर तथा कपूरथला में रेलवे के कोच बनाए जाते हैं। मुंबई, कोलकाता, गुरुग्राम, फरीदाबाद, जमशेदपुर तथा गुजरात में मोटरकार बनाने के विशाल कारखाने हैं। भारत भारी संख्या में स्कूटर, मोटरकार, ट्रक, सिलाई मशीनें, बिजली के पंखे, ट्रांसफामर्स, विद्युत मोटर्स तथा टरबाइंस का निर्यात करता है।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

44 सेवाएँ

(परिवहन, दूरसंचार, व्यापार)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 417 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 417, 418 व 419 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. "परिवहन के साधन अर्थव्यवस्था की जीवन रेखा कहलाते हैं।" स्पष्ट कीजिए।

उ०– परिवहन के साधनों से अभिप्राय उन साधनों से है, जो व्यक्तियों, सामानों तथा समाचारों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते हैं। परिवहन तृतीयक क्षेत्र की महत्वपूर्ण सेवा है। परिवहन के साधनों में मानव-शक्ति, पशु-शक्ति तथा यांत्रिक-शक्ति के परिवहन साधनों को सम्मिलित किया जाता है। परिवहन के ये साधन किसी देश के सामाजिक, आर्थिक एवं औद्योगिक विकास को प्रोत्साहित करते हैं। इसलिए परिवहन के साधन किसी देश की अर्थव्यवस्था की जीवन रेखा कहलाते हैं।

2. भारत में सड़क परिवहन रेल परिवहन की अपेक्षा क्यों महत्वपूर्ण है? एक कारण लिखिए।

उ०– यद्यपि रेल परिवहन, सड़क परिवहन की तुलना में सस्ता है किंतु सड़क परिवहन की कुछ अलग विशेषताएँ एवं महत्व हैं जिनके कारण यह रेलों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है–

(i) सड़कों का निर्माण रेलमार्गों की अपेक्षा सस्ता पड़ता है। इसके रख-रखाव में भी अपेक्षाकृत कम खर्च आता है।

(ii) सड़क निर्माण किसी भी प्रकार के धरातल; जैसे–मैदानी, पर्वतीय, पठारी, मरुस्थलीय, ढ़ालू, बीहड़ और ऊँची-नीची भूमि पर भी संभव है, जबकि रेलमार्गों का निर्माण ऊँचे पर्वतीय एवं मरुस्थलीय क्षेत्रों में संभव नहीं।

(iii) रेलें केवल निर्धारित स्थानों पर बने स्टेशनों पर ही रूकती हैं जबकि सड़कें व्यक्ति व उसके सामान को घर के द्वार तक छोड़ सकती हैं।

(iv) उद्योगों अथवा निर्माण केंद्रों में उत्पादित वस्तुओं को सड़कें सीधे उपभोक्ताओं तक पहुँचाती हैं, जब कि रेलों द्वारा वस्तुओं को केवल रेलवे स्टेशनों तक ही पहुँचाया जाता है जिससे उन्हें गंतव्य स्थान तक पहुँचने के लिए पुन: उतारना या चढ़ाना पड़ता है। इससे वस्तुओं के टूटने-फूटने का खतरा बना रहता है।

(v) सड़क यातायात इच्छानुसार कभी भी संभव है जब कि रेलों का आवागमन तथा संचालन नियत समय के अनुसार ही होता है।

(vi) छोटी दूरी की यात्राओं के लिए सड़क परिवहन ही उपयुक्त होता है जबकि रेलों में ऐसी सुविधा नहीं है।

3. स्वर्णिम चतुर्भुज सड़क योजना बनाने के दो उद्देश्य लिखिए।

उ०– स्वर्णिम चतुर्भुज सड़क योजना बनाने के दो उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

(i) देश के आर्थिक विकास को बढ़ावा देना।

(ii) देश के चार महानगरों- दिल्ली, मुंबई, चेन्नई और कोलकाता को छः लेन वाले राष्ट्रीय राजमार्गों से जोड़ना।

4. देश के आर्थिक विकास में रेलमार्गों के योगदान का वर्णन कीजिए।

उ०– **भारत के आर्थिक विकास में रेलमार्गों का योगदान–** भारत की विकासशील अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण में रेल परिवहन ने बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारतीय अर्थव्यवस्था में रेलों की महत्व को निम्नलिखित रूप से अंतर्गत स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) रेल परिवहन ने भारत की कृषि के विकास में योगदान करके राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाया है।
(ii) रेल परिवहन ने उद्योगों की स्थापना में योगदान देकर, भारत को औद्योगिक क्षेत्र में संपन्न बना दिया है।
(iii) रेल परिवहन द्वारा लकड़ी, कोयला तथा अन्य खनिजों का परिवहन सस्ता एवं सुगम है, जिससे प्राकृतिक संसाधनों के विदोहन में तेजी आई है।
(iv) रेल परिवहन ने तैयार और कच्चे मिल को मंडियों तक तथा बंदरगाहों तक पहुँचाकर व्यापार को बढ़ावा दिया है।
(v) रेल परिवहन ने लाखों लोगों को नौकरियाँ, व्यापार तथा अन्य प्रकार से लाभ पहुँचाकर राष्ट्रीय आय को बढ़ा दिया है।
(vi) रेल परिवहन ने उद्योगों के विकेंद्रीकरण में सहयोग देकर राष्ट्र के संतुलित विकास का मार्ग खोल दिया है।
(vii) रेल परिवहन ने डाक व्यवस्था को सुचारु बनाकर, श्रम की गतिशीलता बढ़ाकर तथा पर्यटन को बढ़ावा देकर राष्ट्र को आर्थिक दृष्टि से संपन्न बना दिया है।

5. स्थल या भूतल परिवहन के दो प्रकारों का वर्णन कीजिए।

उ०– स्थल या भूतल परिवहन के दो प्रकार निम्नलिखित हैं–

सड़क परिवहन– धरातल पर कच्ची तथा पक्की सड़कें बनाकर बस, कार, ट्रक, स्कूटर, ट्रैक्टर तथा बैलगाड़ी द्वारा यात्रा करने और सामान ढोने के व्यवस्था-तंत्र को सड़क परिवहन कहा जाता है। भारत ने देश में सड़क तंत्र का विकास करके सड़कों का 46.90 लाख किमी० लंबा जाल फैला लिया है। इस समय देश में कुल यात्री यातायात का 85% तथा माल परिवहन का 70% सड़क परिवहन द्वारा ही संपन्न होता है। सड़कों की कुल लंबाई की दृष्टि से महाराष्ट्र राज्य प्रथम स्थान पर है, जहाँ सड़कों की कुल लंबाई 3,61,893 किमी० है। प्रबंध की दृष्टि से भारतीय सड़कों को निम्नवत वर्गीकृत किया गया है–

(i) राष्ट्रीय राजमार्ग (ii) प्रदेशीय राजमार्ग
(iii) जिला सड़कें (iv) ग्रामीण सड़कें

रेल परिवहन– भूतल परिवहन के क्षेत्र में रेल परिवहन का विशेष स्थान है। लोहे की पटरियों पर द्रुत गति से सरपट दौड़ने वाली रेलगाड़ियाँ, रेल परिवहन तंत्र का निर्माण करती हैं। भारत में प्रथम रेलगाड़ी 16 अप्रैल, 1853 ई० में मुंबई से ठाणें स्टेशनों के बीच केवल 34 किमी० के छोटे से रेलमार्ग पर चलाई गई थी। वर्तमान समय में भारतीय रेल परिवहन तंत्र एशिया महाद्वीप में प्रथम तथा विश्व में द्वितीय स्थान पर है। सन् 2012 तक भारत में रेलवे स्टेशनों की संख्या 7146 तथा कुल रेलमार्गों की लंबाई 64,600 किमी० थी जिसमें 55,956 किमी० ब्रॉड गेज (बड़ी) लाइनें, 6,347 किमी० मीटर गेज लाइनें तथा 2,297 किमी० लंबी नैरो गेज (छोटी) लाइनें थीं। रेलवे भारत का सबसे बड़ा सरकारी प्रतिष्ठान है। भारत में समस्त रेलमार्गों के 45% भाग का विद्युतिकरण कर दिया गया है। सभी बड़े स्टेशन कंप्यूटर नेटवर्क्स से जोड़ दिए गए हैं। भारत में राजधानी एक्सप्रेस, जन शताब्दी, दूरंतो गाड़ियों के साथ-साथ बुलट ट्रेन चलाने की योजनाएँ भी बनाई जा रही हैं। महानगरों में चलने वाली मैट्रो ट्रेन परिवहन के महत्व के कारण इन नगरों की जीवन रेखा बन गई है। भारतीय रेल संस्थान देश के 16 लाख लोगों को रोजगार देकर राष्ट्रीय आय में अपना भारी योगदान दे रहा है।

6. परिवहन सेवा के तीन भागों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उ०– परिवहन सेवा के तीन भाग निम्नलिखित हैं–

(i) स्थल परिवहन

(क) सड़क परिवहन (ख) रेल परिवहन (ग) पाइप लाइन परिवहन

(ii) जल परिवहन

(क) अंतर्देशीय जल परिवहन (ख) महासागरीय अंतर्राष्ट्रीय जल परिवहन

(iii) वायु परिवहन

(क) अंतर्देशीय वायु परिवहन (ख) अंतर्राष्ट्रीय वायु परिवहन

7. संचार के साधन क्या हैं? संचार के चार साधनों के नाम लिखिए।

उ०– विचारों और संदेशों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने वाले उपकरण संचार के साधन कहलाते हैं। संचार के चार साधन निम्नलिखित हैं–

(i) डाक सेवाएँ (ii) टेलीफोन

(iii) रेडियो (iv) कंप्यूटर

8. विदेशी व्यापार में आयात-निर्यात को स्पष्ट कीजिए।

उ०– **आयात-निर्यात**– देश की भौगोलिक सीमाओं के पार दो या दो से अधिक देशों के मध्य वस्तुओं, सेवाओं और तकनीकी का आयात-निर्यात विदेशी या अंतर्राष्ट्रीय व्यापार कहलाता है। विदेशी व्यापार के दो घटक आयात और निर्यात हैं। दूसरे देशों से माल मँगाना आयात कहलाता है तथा दूसरे देशों को माल भेजना निर्यात कहलाता है।

9. भारत के आयात की चार प्रमुख वस्तुओं के नाम लिखिए।

उ०– भारत के आयात की चार प्रमुख वस्तुएँ निम्नलिखित हैं–

(i) खनिज तेल (ii) इस्पात निर्मित सामान

(iii) रेडियो (iv) कागज

10. भारत के चार रेल मंडलों के नाम लिखिए।

उ०– भारत के चार रेल मंडलों के नाम निम्नलिखित हैं–

(i) उत्तर रेलवे (ii) पूर्वी रेलवे

(iii) उत्तर-पूर्वी सीमांत रेलवे (iv) पश्चिम रेलवे

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय सड़कों के प्रकार एवं उनके महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– प्रबंध की दृष्टि से भारतीय सड़कों को निम्नलिखित वर्गों में वर्गीकृत किया गया है–

(i) राष्ट्रीय राजमार्ग– राज्यों की राजधानियों, व्यापारिक केंद्रों, वायु अड्डों तथा बंदरगाहों को जोड़ने वाली सड़कें राष्ट्रीय राजमार्ग कहलाती हैं। इनका निर्माण तथा रख रखाव केंद्रीय सरकार के सार्वजनिक निर्माण विभाग द्वारा किया जाता है। इन्हें हाईवे के रूप में चार या छः लेन में बनाया गया है। भारत में राष्ट्रीय राजमार्गों की कुल लंबाई 79,116 किमी० है। ये राजमार्ग कुल सड़क परिवहन का लगभग 40% भाग वहन करते हैं। देश में कुल 77 राष्ट्रीय राजमार्ग हैं देश का सबसे लंबा राष्ट्रीय राजमार्ग एन०एच०- 7 है, जो वाराणसी से कन्याकुमारी तक 2,369 किमी० लंबा है। ग्रांड ट्रंक रोड का निर्माण शेरशाह सूरी ने कराया था जो कोलकाता से अमृतसर तक जाती है।

(ii) प्रदेशीय राजमार्ग– राष्ट्रीय राजमार्गों, मुख्य व्यापारिक केंद्रों तथा राज्य के प्रमुख नगरों को जोड़ने वाली सड़कें प्रदेशीय राजमार्ग कहलाती हैं। इनका निर्माण तथा रखरखाव राज्य के सार्वजनिक निर्माण विभाग द्वारा किया जाता है। वर्तमान में इन सड़कों की कुल लंबाई 1,55,716 किमी० है।

(iii) जिला सड़कें– जिला तथा जिले के प्रमुख नगरों को अन्य जिलों से जोड़ने वाली सड़कें जिला सड़कें कहलाती हैं। इनकी व्यवस्था जिला प्रशासन करता है। वर्तमान में जिला सड़कों की अन्य सड़कों की कुल लंबाई 44,55000 किमी० है।

(iv) ग्रामीण सड़कें– एक गाँव को दूसरे गाँव तथा उन्हें कस्बों और नगरों से जोड़ने वाली कच्ची तथा पक्की सड़कें ग्रामीण सड़कें कहलाती हैं। इनकी व्यवस्था तथा देखभाल ग्राम पंचायतों द्वारा की जाती है।

उपर्युक्त चार प्रकार की सड़कों के अतिरिक्त, सीमावर्ती क्षेत्रों में भी सड़कों का निर्माण किया जाता है, जिसे सीमावर्ती सड़क विकास संगठन की देख-रेख में किया जाता है।

2. भारत के आर्थिक विकास में रेलमार्गों के महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– **भारत के आर्थिक विकास में रेलमार्गों का महत्व–** भारत में रेल-प्रणाली के विकास एवं विस्तार के परिणामस्वरूप

क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं। देश की विकासोन्मुख अर्थव्यवस्था में परिवहन की आवश्यकताओं को पूरा करने में इसनें महत्वपूर्ण योगदान दिया है। भारतीय अर्थव्यवस्था में रेलों के महत्व का विवरण नीचे प्रस्तुत है–

(i) **कृषि का प्रभाव–** रेल परिवहन के विकास से भारतीय कृषि को निम्न लाभ प्राप्त हुए हैं–

(क) **व्यापारिक कृषि को प्रोत्साहन–** अब किसान उन वस्तुओं का उत्पादन करने में लगे हैं जिनकी माँग देश के विभिन्न भागों में ही नहीं वरन् विदेशों में भी है। रेलों के विस्तार से कपास, गन्ना, जूट, तिलहन, चाय आदि नकद फसलों के उत्पादन को प्रोत्साहन मिला है।

(ख) **बाजारों का विस्तार–** कृषि-पदार्थों के बाजार विस्तृत हो गए हैं। अब कृषि-उत्पादों की बिक्री विदेशों में भी होने लगी है।

(ग) **नाशवान वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि–** रेल परिवहन के विकास में घी, दूध, फल, शाक-सब्जी, अंडे आदि नाशवान वस्तुओं का उत्पादन बढ़ा है। अब ऐसी वस्तुओं को शीघ्रातीशीघ्र दूर स्थित विभिन्न बाजारों में पहुँचा दिया जाता है।

(घ) **कृषि-उत्पादन में वृद्धि–** रेलों के विकास से अब किसानों को उन्नत बीज, रासायनिक खाद, कृषि-यंत्र आदि समय पर मिल जाते हैं जिससे कृषि-उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि हुई है।

(ङ) **कृषि-विधियों में सुधार–** रेल-सुविधाएँ उपलब्ध होने से ग्रामीण लोग दूर-दूर लगने वाले कृषि मेलों तथा प्रदर्शनियों में जाने लगे हैं जिससे उनके रहन-सहन के स्तर में सुधार हुआ है।

(च) **कृषकों के रहन-सहन में सुधार–** कृषि के व्यापारीकरण तथा कृषि-उत्पादन में वृद्धि होने से कृषकों की आय में वृद्धि हुई है जिससे उनके रहन-सहन के स्तर में सुधार हुआ है।

(छ) **कुटीर व ग्राम उद्योगों का विकास–** रेलों के विकास से इन उद्योगों को कच्च माल, औजार, मशीनें आदि साधन उचित समय तथा कीमत पर मिल जाते हैं। रेलों द्वारा इन उद्योगों में निर्मित माल को दूर स्थित बाजारों में पहुँचाया जाता है।

(ज) **दुर्भिक्ष की संभावनाओं में कमी–** अब मालगाड़ियों से खाद्य-पदार्थों को शीघ्रता से कमी वाले स्थानों में पहुँचा दिया जाता है। इससे दुर्भिक्ष (famines) की संभावनाएँ एकदम कम हो गई हैं।

(ii) **वन संपदा का अधिक उपयोग–** देश के वन-क्षेत्रों तक रेल सुविधाओं के विकास एवं विस्तार से अब वन संपदा का पहले से कहीं अधिक तथा समुचित उपयोग हो पा रहा है। वनों की लकड़ी को रेलों की सहायता से उत्पादक एवं उपभोक्ता केंद्रों तक पहुँचाया जाता है। इससे कागज, दियासलाई, फर्नीचर आदि उद्योगों का पर्याप्त विकास हुआ है।

(iii) **खनिज संपदा का उपयोग–** खनिज पदार्थों को देश के विभिन्न क्षेत्रों में पहुँचाने में रेलें अत्यंत सहायक सिद्ध होती हैं। खानों से निकाले गए कोयले की ढुलाई रेलों द्वारा ही देश के विभिन्न भागों में की जाती है।

(iv) **उद्योग-धंधों पर प्रभाव–** रेलों ने उद्योगों के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है–

(क) **कच्चे माल की व्यवस्था–** देश में रेलों की समुचित व्यवस्था होने पर देश के विभिन्न भागों मे उत्पन्न कच्चे माल को सरलता से औद्योगिक संस्थानों तक पहुँचाया जा सकता है।

(ख) **शक्ति के साधनों की पूर्ति–** रेलों द्वारा औद्योगिक केंद्रों तक आवश्यकतानुसार कोयला, तेल, लकड़ी आदि शक्ति के साधनों को पहुँचाया जा सकता है।

(ग) **निर्मित माल की ढुलाई–** कारखानों में बड़े पैमाने पर तैयार की जाने वाली वस्तुओं को रेलों द्वारा बिक्री के लिए देश के कोने-कोने में पहुँचाया जाता है।

(घ) **देश का औद्योगिकरण–** लोहा-इस्पात, सीमेंट, कागज, सूती वस्त्र, जूट, चीनी आदि उद्योगों के विकास में रेलों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। कई बड़े सार्वजनिक उपक्रम रेलवे उद्योग से संबंधित हैं, जैसे– चितरंजन इंजन कारखाना, पैरामबूर कोच कारखाना, डीजल इंजन कारखाना इत्यादि।

(ङ) **लघु उद्योगों के विकास में सहायक–** भारतीय रेलें प्रतिवर्ष लघु उद्योगों में तैयार अरबों रुपए के माल को देश के विभिन्न भागों में पहुँचाती हैं।

(च) **श्रमिकों की गतिशीलता में वृद्धि–** रेल सुविधाओं के कारण श्रमिक काम करने के लिए दूर-दूर स्थित कारखानों में जाने लगे हैं। श्रमिकों की गतिशीलता के बढ़ने से श्रमिकों के रहन-सहन के स्तर में सुधार हुआ है।

(छ) **उद्योगों का विकेंद्रीकरण–** रेलों के विकास तथा विस्तार से उद्योगों का विकेन्द्रीकरण (decentralisation) को प्रोत्साहन मिला है। इससे विकेंद्रीकरण के गंभीर दोषों में कमी आई है।

(iv) **व्यापार का विकास एवं विस्तार–** रेल सुविधाओं के विस्तार के कारण भारत के आंतरिक व्यापार तथा विदेशी व्यापार की भारी उन्नति हुई है।

(v) **रोजगार में वृद्धि–** देश में कृषि, उद्योग-धंधों, व्यापार, वाणिज्य, बैंकिंग आदि के विकास के कारण रोजगार-सुविधाओं में बड़ी संख्या में वृद्धि हुई है। स्वयं रेल उद्योग मे ंलगभग 15.5 लाख व्यक्तियों को रोजगार मिला हुआ है।

(vi) **अन्य आर्थिक लाभ–**

(क) रेलों के आगमन से **नए-नए आविष्कारों तथा अनुसंधानों** को प्रोत्साहन मिला है।

(ख) **नई-नई तकनीकों** का प्रसार हुआ है।

(ग) **सहकारिता** को प्रोत्साहन मिला है।

(घ) देश में नियमित, सस्ती, द्रुत तथा कुशल **डाक-व्यवस्था** के विकास में रेलों ने उल्लेखनीय योगदान दिया है।

(ङ) **बैंकिंग एवं बीमा सेवाओं** का देशव्यापी विस्तार हुआ है।

(च) नए औद्योगिक केंद्रों तथा नगरों का प्रादुर्भाव हुआ है।

(छ) दैनिक **उपभोक्ता-वस्तुओं की पूर्ति** में वृद्धि हुई है।

(ज) **निर्यात संवर्धन** में रेलों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

(झ) सरकार की आय तथा **राष्ट्रीय आय में वृद्धि** हुई है।

(ण) **पर्यटन उद्योग** का विकास तथा विस्तार हुआ है।

3. भारत में संचार के साधन तथा उनके महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– भारत में संचार के साधन– भारतीय अर्थव्यवस्था का दूसरा महत्वपूर्ण स्तंभ है, संचार व्यवस्था। भारत के घर-घर में टेलीफोन और जन-जन के हाथ में सेलफोन संचार तंत्र की अद्‌भुत देन है। घर हो या कार्यालय, रेलवे स्टेशन हो या हवाई अड्‌डा, कारखाना हो या खलिहान सर्वत्र सेलफोन की घंटियाँ सुनाई पड़ती हैं। विचारों और संदेशों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने वाले उपकरण संचार के साधन कहलाते हैं। दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मध्य दूरस्थ स्थानों पर बात करने की प्रणाली को दूर संचार व्यवस्था कहते हैं। यातायात व्यवस्था यदि राष्ट्र की अर्थव्यवस्था का ताना है, तो संचार व्यवस्था उसे पूर्ण स्वरूप प्रदान करने वाला बाना है। संचार के साधन दूर-दूर स्थित लोगों के विचारों और संदेशों का प्रसारण करते हैं। **प्रो० लुईस ए० एलन** ने संचार व्यवस्था को इन शब्दों में परिभाषित किया है, "संचार उन सब बातों का योग है जो एक व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को अपनी बात समझाने के लिए करता है।" इसमें कहने, सुनने और समझने की विधिवत् क्रिया निरंतर चलती रहती है। संचार के साधन वार्तालाप को अबाध और निरंतर बनाए रखते हैं। संचार तंत्र ने समूची मानवता को मुखर बना दिया है।

विज्ञान के विकास ने मानव को अपनी आवश्यकता और सुविधा के अनुरूप निम्नलिखित संचार के साधनों का विकास करने में सक्षम बना दिया है–

(i) डाक सेवाएँ– भारतीय डाक प्रणाली विश्व की सबसे बड़ी प्रणाली है। डाकघरों के माध्यम से पत्र, पार्सल, पत्रिकाएँ, दवाइयाँ तथा मनीआर्डर देशभर में भेजे जाते हैं। डाकघर बचत बैंक तथा जीवन बीमा की सुविधाएँ भी प्रदान करते हैं। भारत में शीघ्र तथा सुगमता से डाक वितरण के लिए 'पिनकोड' का प्रयोग किया जाता है। देश के प्रत्येक नगर तथा कस्बों को 6 अंकों के पिनकोड आवंटित किए गए हैं। जो राज्य, जनपद तथा तहसील एवं डाकघर का ज्ञान करा देते हैं।

(ii) टेलीफोन– भारत में टेलीफोन द्वारा संदेश पहुँचाने का नेटवर्क टेलीफोन लाइनों द्वारा देशभर में फैलाया जा चुका है। टेलीफोन संचार का एक महत्वपूर्ण और सशक्त माध्यम बनकर उभरा है। मोबाइल फोन सेवा का विकास होने से

टेलीफोन सेवाएँ अधिक उपयोगी और सार्वजनिक बन गई हैं। मोबाइल फोन की सेवाएँ अधिकारी, कर्मचारी, व्यापारी, श्रमिक और कृषक सभी को सहज रूप से उपलबध हो गई हैं।

(iii) **बेतार का तार–** मारकोनी ने वायरलैस उपकरण का आविष्कार करके, बिना तारों का जाल फैलाए ही संचार प्रणाली खोज निकाली थी। बेतार के तार का प्रयोग अब मुख्यतया पुलिस विभाग तथा सेना के द्वारा किया जाता है।

(iv) **केबिल ग्राम–** समुद्रों की तली में तार बिछाकर विदेशों से संदेश प्राप्त करने तथा पहुँचाने की जो व्यवस्था की जाती है, उसे केबिलग्राम नाम दिया गया है।

(v) **रेडियो–** आकाशवाणी ने भारतीय जनता को संचार के साधन के रूप में रेडियो तथा ट्रांजिस्टर प्रदान किए। रेडियो संदेशवाहक के साथ-साथ शिक्षा, मनोरंजन, खेलों का आँखों देखा प्रसारण करने का उपयोगी माध्यम है। रेडियो सामाजिक और सांस्कृतिक विकास करने के साथ मनोरंजन का उपयोगी तथा महत्वपूर्ण साधन भी है।

(vi) **टेलीविजन–** दूरदर्शन ने संचार प्रणाली में क्रांतिकारी युग का शुभारंभ किया है। इसके माध्यम से समाचारों, भाषणों, खेलों, दृश्यों, प्राकृतिक आपदाओं के बारे में न केवल सुन सकते हैं, वरन उनके चित्र भी देख सकते हैं। लंदन में खेले जा रहे मैच को पूरी दुनियाँ दूरदर्शन पर सीधा देख सकती है। देश में दूरदर्शन के 900 से अधिक ट्रांसमीटर हैं तथा 90% जनसंख्या तक इसकी पहुँच हो चुकी है। वर्तमान में दूरदर्शन के विभिन्न चैनलों के अतिरिक्त कुछ व्यक्तिगत चैनल भी देशभर में फैले अपने नेटवर्क के माध्यम से प्रसारण करते हैं। भारत में 'प्रसार भारती' द्वारा रेडियो और दूरदर्शन की सेवाएँ नियंत्रित की जाती हैं। टेलीविजन वर्तमान में घर-घर की आवश्यकता बन गया है। टेलीविजन मनोरंजन के साथ-साथ विद्वानों के विचारों, अनुसंधानों तथा विद्वानों और शिक्षाविदों के विचारों का प्रसारण कर शैक्षिक क्षेत्र में भी लाभ पहुँचाता है।

(vii) **कंप्यूटर–** कंप्यूटर वर्तमान युग का चमत्कार है। अनेक कंप्यूटरों को जोड़कर इंटरनेट व्यवस्था का जाल फैलाया गया है। इंटरनेट अलादीन का वह जादुई चिराग है, जिसके पास समस्त समस्याओं का हल है। प्रत्येक कार्यालय, विद्यालय और कारखाने में कंप्यूटर की पैठ बन चुकी है। इसने लैपटॉप, टेबलेट तथा फेसबुक, आदि उपकरण व सुविधाएँ देकर अपनी गतिशीलता को बढ़ा दिया है। वर्तमान युग में कंप्यूटर सबसे उपयोगी और महत्वपूर्ण संचार का साधन बन गया है।

(viii) **ई-मेल–** इलेक्ट्रोनिक उपकरणों के माध्यम से संदेश भेजने की प्रक्रिया को ई-मेल कहते हैं। ई-मेल संचार क्रांति का नवीनतम उपहार है। यह प्रक्रिया शीघ्र और सस्ता संदेश भेजने या प्राप्त करने में सक्षम है।

(ix) **टेलेक्स–** टेलेक्स मशीनों द्वारा लिखित रूप में समाचार दूसरी मशीन तक पहुँचाने की व्यवस्था होती है। समाचार पत्रों के कार्यालयो में टेलेक्स और फैक्स प्रक्रिया का भरपूर प्रयोग किया जाता है।

रेडियो, टेलीविजन, कंप्यूटर, इंटरनेट, ई-मेल तथा टेलेक्स सभी इक्लेट्रॉनिक मीडिया कहलाते हैं। वर्तमान में इनकी शक्ति और महत्व को सभी देश जान चुके हैं।

(x) **प्रिंट मीडिया–** पुस्तकों, पत्रिकाओं और समाचार पत्रों की दुनिया को प्रिंट मीडिया कहा जाता है। प्राचीन काल से आज तक प्रिंट मीडिया संचार तंत्र के रूप में अपनी उपयोगिता बनाए हुए है। समाचार पत्र हमें देश-विदेश की नवीनतम् घटनाओं और ताजा समाचारों से अवगत कराकर देश-परदेश से जोड़े रहते हैं। समाचार पत्र और पत्रिकाएँ संदेशवाहक, ज्ञानवर्द्धक तथा विज्ञापन के सशक्त माध्यम हैं। उत्पादक वर्ग आकर्षक विज्ञापन देकर उपभोक्ताओं तक अपने उत्पाद पहुँचाने में सफल हो जाता है। समाचार पत्र, पत्रिकाएँ शिक्षा का प्रसार करने तथा जनता को सस्ता मनोरंजन सुलभ कराने की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

दूरसंचार उपग्रह– दूरदर्शन, मोबाइल फोन तथा इंटरनेट का जाल फैलाने में दूरसंचार उपग्रहों का सर्वाधिक योगदान रहा है। कृत्रिम उपग्रह अंतरिक्ष में स्थापित कर दूरसंचार की जो प्रणाली विकसित की जाती है, उसे दूरसंचार उपग्रह कहा जाता है। ये उपग्रह मौसम का पूर्वानुमान, प्राकृतिक आपदाओं की निगरानी के साथ-साथ, राष्ट्र की सीमाओं की जासूसी भी करते हैं। भारत दूरसंचार उपग्रह के क्षेत्र में अग्रणी बन चुका है। भारत की सूचना-प्रौद्योगिकी का लोहा समूचा विश्व मानता है। भारत में 'इनसैट' तथा 'इसरों' इस कार्य में लगी दो महत्वपूर्ण संस्थाएँ हैं।

दूरसंचार साधनों का भारत के लिए आर्थिक महत्व– सूचना ज्ञानवर्द्धन करती हैं, जबकि दूरसंचार साधन राष्ट्र को

ज्ञानवान और सक्रिय बनाती हैं। जैसे चलने के लिए दोनों पैर, कार्य करने के लिए दोनों हाथ आवश्यक होते हैं, वैसे ही राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिए परिवहन तथा संचार तंत्र दो आवश्यक उमंग होते हैं। भारत के लिए संचार के साधनों का आर्थिक महत्व निम्नलिखित है–

(i) संचार के साधन राष्ट्र की परिवहन व्यवस्था को संचालित करने में सहयोग देकर, राष्ट्र के आर्थिक विकास का मार्ग खोल देते हैं।

(ii) डाक, टेलीफोन, कंप्यूटर तथा इंटरनेट आदि का फैलता जाल उद्योगों की स्थापना तथा विकास में सहयोगी बनकर राष्ट्र के औद्योगिक ढाँचे को सुदृढ़ बनाते हैं।

(iii) संचार के साधन उत्पादों के आकर्षक विज्ञापन उपभोक्ताओं तक पहुँचाकर ,उत्पादों के विक्रय तथा उद्योगों के विकास में सहभागिता निभाते हैं।

(iv) संचार के साधन राष्ट्र के नागरिकों को रोजगार उपलब्ध कराकर प्रति व्यक्ति आय और राष्ट्रीय आय को बढ़ाते हैं।

(v) व्यापार के क्षेत्र में माँग और पूर्ति का ज्ञान कराकर संचार के साधन, देशी और विदेशी व्यापार का विस्तार करा देते हैं।

(vi) संचार के साधन शिक्षा का प्रसार कर ज्ञान-विज्ञान का आलोक फैलाने के साथ-साथ नागरिकों को स्वस्थ्य मनोरंजन भी प्रदान कराते हैं।

(vii) संचार उपग्रह मौसम के पूर्वानुमान, प्राकृतिक आपदाओं की पूर्व सूचना तथा सीमा-क्षेत्रों की निगरानी में सहायक बनकर राष्ट्र के जन-धन की सुरक्षा करते हैं।

(viii) संचार के साधन-वन, खनिज तथा जल संसाधनों का ज्ञान कराकर उनके उचित विदोहन में सहयोग देकर राष्ट्र को संपन्नता के मार्ग पर ले जाते हैं।

4. भारत में वायु परिवहन का आर्थिक महत्व बताइए।

उ०– **भारत में वायु परिवहन का आर्थिक महत्व–** वायु परिवहन उच्चावच, जलवायु तथा क्षेत्रीय बाधाओं को पार करके कम समय में परिवहन सुविधाएँ प्रदान करने की दृष्टि से बहुत उपयोगी है। भारत के आर्थिक विकास में इस परिवहन का महत्व निम्नलिखित है।

(i) वायु परिवहन भारत के पर्वतीय, पठारी, मरुस्थलीय तथा वन प्रांतों को सुगमता से पार कर राष्ट्र के आर्थिक विकास में सहायक बनता है।

(ii) वायु परिवहन बहुमूल्य और शीघ्र खराब होने वाली वस्तुओं का त्वरित परिवहन करके इनको आर्थिक महत्व प्रदान करता है।

(iii) भारत के सुदूर क्षेत्रों में स्थित नगरों और पर्यटक स्थलों को जोड़ने में वायु परिवहन का कोई मुकाबला नहीं है क्योंकि वायुयान परिवहन का तीव्रतम गति वाला साधन है।

(iv) बाढ़, सुनामी, भूकंप तथा अन्य प्राकृतिक आपदाओं के आने पर तथा स्थल परिवहन के असफल रहने पर वायु परिवहन बचाव कार्यों में अद्वितीय सहयोग देता है।

(v) खड़ी हुई फसलों को हानिकारक कीड़ों तथा रोगों से बचाने के लिए, हेलीकॉप्टर से कीटनाशकों का छिड़काव ही फसलों को बचा पाता है।

(vi) देश की सीमाओं की सुरक्षा तथा शत्रु सेना पर त्वरित कार्यवाही करके वायुयान ही राष्ट्र की सुरक्षा करने में सक्षम होते हैं।

(vii) अंतर्राष्ट्रीय व्यापार तथा विदेशी यात्राओं के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को वायुयान ही संभव बनाते हैं।

(viii) राष्ट्र के आर्थिक विकास तथा विदेशी व्यापार में वायु परिवहन ने अपनी सार्थक भूमिका निभाकर भारत की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में अद्वितीय योगदान दिया है।

5. पाइपलाइन परिवहन प्रणाली क्या है? इसके क्या महत्व हैं?

उ०– **पाइपलाइन परिवहन प्रणाली–** खनिज तेल, प्राकृतिक गैस तथा अन्य पेट्रोलियम पदार्थों का परिवहन करने के लिए भूमि के भीतर पाइप बिछाकर जो व्यवस्था अपनाई गई है, उसे पाइपलाइन परिवहन प्रणाली कहते हैं। वर्तमान में कोयला तथा अन्य अयस्कों को चूरा बनाकर तथा पानी में घोलकर उनका भी परिवहन पाइपलाइन से किया जाने लगा है। भारत में ऑयल

इंडिया लिमिटेड ने कच्चे तेल के परिवहन के लिए खनिज तेल उत्पादक क्षेत्रों से तेल शोधनशालाओं तक तथा अन्य क्षेत्रों तक पाइपलाइनें बिछाने का शुभारंभ किया था। भारत में अब तक निम्नलिखित पाइपलाइनें बिछाई जा चुकी हैं–

(i) असम के नहरकटिया तेल क्षेत्र से नूनामती तथा बरौनी के तेल-शोधक कारखानों तक की पाइपलाइन।

(ii) बरौनी, हल्दिया तथा कानपुर पाइपलाइन।

(iii) लाकवा, रूद्रसागर तथा बरौनी पाइपलाइन।

(iv) अंकलेश्वर से कोयली, कलोल, साबरमती, मुंबई हाई अंकलेश्वर, बड़ोदरा तथा अहमदाबाद पाइपलाइन।

(v) मुंबई हाई, सलाया तथा मथुरा पाइन लाइन।

(vi) मथुरा, दिल्ली, पानीपत, अंबाला तथा जालंधर पाइपलाइन।

सन् 1984 में स्थापित भारतीय गैस प्राधिकरण लिमिटेड ने भारत में प्राकृतिक गैस का परिवहन करने के लिए अनेक गैस पाइपलाइनें भी बिछाई हैं; जैसे–

(i) मुंबई हाई से मुंबई तट तक तेल लाइन के साथ-साथ 210 किमी लंबी गैस पाइपलाइन।

(ii) गुजरात में अंकलेश्वर-वडोडरा, कोयली-अहमदाबाद, अंकलेश्वर-उत्तरण तथा कैंबे-धुवरन गैस पाइपलाइनें।

(iii) हजीरा-विजयपुर-जगदीशपुर गैस पाइपलाइन विश्व में सबसे लंबी गैस पाइपलाइन है, जो 1750 किमी० लंबी है।

पाइपलाइन परिवहन का महत्व– द्रव पदार्थों के परिवहन के लिए पाइपलाइन परिवहन एक आदर्श परिवहन सिद्ध हो रहा है। इस परिवहन का आर्थिक महत्व निम्नलिखित है–

(i) पाइपलाइन परिवहन के लिए पाइपों को भूमि के नीचे तथा जलाशयों के नीचे भी बिछाया जा सकता है।

(ii) इनसे द्रव पदार्थों का निर्बाध तथा सस्ता परिवहन किया जाता है।

(iii) पाइपलाइन परिवहन को तैयार करने में एक बार ही व्यय करना पड़ता है, तथा इसके रखरखाव पर बार-बार व्यय नहीं करना पड़ता।

(iv) पाइपलाइन में पदार्थों के नष्ट होने का भय नहीं रहता।

(v) भूमिगत होने के कारण पाइपलाइनों में दुर्घटनाएँ घटने की संभावना क्षीण हो जाती है।

(vi) पाइपलाइन परिवहन में ऊर्जा का उपयोग कम मात्रा में होने से ऊर्जा की बचत होती है।

(vii) पाइपलाइन का संचालन प्राय: निरंतर बना रहता है।

6. व्यापारिक सेवाएँ क्या हैं? व्यापार का वर्गीकरण करते हुए विदेशी व्यापार का भारत के आर्थिक विकास में योगदान बताइए।

उ०– **व्यापारिक सेवाएँ–** व्यापार का सामान्य अर्थ है लाभ-प्राप्ति के उद्देश्य से वस्तुओं को खरीदना और बेचना। इस प्रकार क्रय-विक्रय ने व्यापार को जन्म दिया। धन के माध्यम से वस्तुओं को खरीदना और बेचना व्यापार कहलाता है। दूसरे शब्दों में वस्तुओं, सेवाओं और तकनीकी का लेनदेन धन कमाने के उद्देश्य से करना व्यापार है। यदि वस्तु या सेवा का लेन-देन प्रेम भावना, सेवा भावना धार्मिक भावना तथा सांस्कृतिक उद्देश्य से किया जाता है तो उसे व्यापार नहीं कहेंगे। व्यापार में क्रेता और विक्रेता परस्पर धन कमाने के उद्देश्य से जुड़ते हैं। अकेला क्रय अथवा विक्रय व्यापार की पूर्णता को सार्थक नहीं बनाता।

व्यापार का वर्गीकरण– व्यापार का वर्गीकरण निम्नवत् किया जा सकता है–

(i) देशी या राष्ट्रीय व्यापार– देश की भौगोलिक सीमाओं के अंतर्गत दो या दो से अधिक राज्यों के मध्य होने वाला वस्तुओं, तकनीकों और सेवाओं का क्रय-विक्रय देशी या राष्ट्रीय या आंतरिक व्यापार कहलाता है। उत्तर प्रदेश का महाराष्ट्र को चीनी बेचकर उससे सूती वस्त्र खरीदना देशी व्यापार का एक उदाहरण है।

(ii) विदेशी या अंतर्राष्ट्रीय व्यापार– देश की भौगोलिक सीमाओं के पार दो या दो से अधिक देशों के मध्य वस्तुओं, सेवाओं और तकनीकी का आयात-निर्यात विदेशी या अंतर्राष्ट्रीय व्यापार कहलाता है। विदेशी व्यापार के दो घटक आयात और निर्यात हैं। दूसरे देशों से माल मगाँना **आयात** तथा दूसरे देशों को माल भेजना **निर्यात** कहलाता है। जैसे

भारत खनिज तेल इस्पात निर्मित समान, मोती एवं बहुमूल्य रत्न, सोना, चाँदी, उर्वरक, कागज, खाद्य तेल, कच्चा जूट, मशीनरी आदि वस्तुएँ बाहर से मँगाता है। अत: भारत इन वस्तुओं का आयात करता है, जबकि वह चाय, लौह अयस्क, चमड़े की वस्तुएँ, अभ्रक, मशीनरी, सूती वस्त्र, चीनी, जूट का सामान, वनस्पति तेल, भारी संयंत्र, इंजीनियरिंग का सामान आदि वस्तुएँ बाहर भेजता है अत: भारत इन वस्तुओं का निर्यात करता है। आयात-निर्यात के अंतर को व्यापार संतुलन कहा जाता है। आयात कम, निर्यात अधिक होने को अनुकूल व्यापार संतुलन तथा आयात अधिक और निर्यात कम होने की दशा को प्रतिकूल व्यापार संतुलन कहते हैं। भारत के कुल निर्यात का 51.04% निर्यात एशिया और ओशियाना को हुआ, इसके बाद यूरोप 23.8% और अमेरिका 16.05% का स्थान रहा। इसी अवधि में भारत का आयात भी एशिया और ओशियाना से सबसे अधिक 61.7% रहा, उसके बाद यूरोप 18.7% और अमेरिका 9.5% का स्थान रहा।

विदेशी व्यापार का भारत के आर्थिक विकास में योगदान (महत्व)– भारत के विदेशी व्यापार का उसके आर्थिक विकास में निम्नलिखित (महत्व) योगदान रहा है–

(i) विदेशी व्यापार के कारण कच्चे माल तथा तकनीकी का आयात करके भारत ने आर्थिक विकास की नई दिशा प्राप्त की है।

(ii) विदेशी व्यापार के माध्यम से भारत ने अतिरिक्त उत्पादों का निर्यात करके देशी उद्योगों का विकास किया है।

(iii) विदेशी व्यापार के द्वारा भारत ने कृषिगत उपजों तथा तैयार माल का निर्यात करके पर्याप्त विदेशी मुद्रा अर्जित की है।

(iv) विदेशी व्यापार ने रोजगार के नए अवसर प्रदान करके बेरोजगारी की समस्या को कम किया है।

(v) विदेशी व्यापार के कारण उद्योग, कृषि तथा देशी व्यापार ने पर्याप्त उन्नति की है।

(vi) मशीनों, पूँजीगत वस्तुओं और नवीनतम तकनीकी का आयात करके भारत की औद्योगिक स्थिति सुदृढ़ और संपन्न बन गई है।

(vii) विदेशी व्यापार ने भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में प्रगति और संपन्नता की धाराएँ प्रवाहित की हैं।

(viii) विदेशी व्यापार ने व्यापारियों और सरकार दोनों को आय प्रदान कर समृद्ध बनाने में अद्वितीय भूमिका निभाई है।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई-1 (ख) : विकसित देशों की ओर अग्रसर भारत

45 विकसित एवं विकासशील देश तथा इनकी विशेषताएँ

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 425 व 426 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 426 व 427 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. विकसित देश किसे कहते हैं? किन्हीं दो विकसित देशों के नाम लिखिए।

उ०– सामान्य रूप से वह देश जिसने अपने विकास का संपूर्ण लक्ष्य प्राप्त कर लिया है, एक विकसित देश कहलाता है। विकसित देश को लक्षित करने का राष्ट्रीय मापक न होकर अंतर्राष्ट्रीय मापक है। ''विकसित देश वह है, जिसने अपने प्राकृतिक

संसाधनों का उचित दोहन करके तथा अपनी श्रमिक शक्ति का भरपूर उपयोग करके आर्थिक समृद्धि का लक्ष्य पूर्ण कर लिया है।'' विश्व बैंक ने विकसित देश का इन शब्दों में परिभाषित किया है, ''जिन देशों की प्रति व्यक्ति वार्षिक आय 10,000 डॉलर या इससे अधिक हैं उन्हें विकसित देश कहा जाता है।

दो विकसित देश– संयुक्त राज्य अमेरिका व जापान हैं।

2. विकासशील देश किसे कहते हैं? किन्हीं दो विकासशील देशों के नाम लिखिए।

उ०– निर्धनता का दुष्चक्र तोड़कर तथा आर्थिक विकास की बाधाओं को दूर करके आर्थिक विकास के लक्ष्य का पीछा करने वाला देश, विकासशील देश कहलाता है। दूसरे शब्दों में, ''जो देश धीरे-धीरे आर्थिक एवं औद्योगिक क्षेत्रों में प्रगति वरके आगे बढ़ रहा है अर्थात् विकास के लिए प्रयत्नशील है, वह देश विकासशील देश कहलाता है। विश्व बैंक ने विकसित देश को इन शब्दों में परिभाषित किया है, ''वह राष्ट्र जिसकी प्रति व्यक्ति वार्षिक आय 4,000 डॉलर या इससे कम है, विकासशील राष्ट्र कहलाता है।'' विकासशील देशों की श्रेणी में दो देश भारत व चीन हैं।

3. विकासशील देशों की चार प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।

उ०– विकासशील देशों की चार विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) प्रति व्यक्ति निम्न आय– विकासशील देशों में प्रति व्यक्ति आय बहुत कम होती है, जिसके कारण गरीब लोगों की संख्या अधिक पाई जाती है। भारत की एक-तिहाई से अधिक जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन करती है।

(ii) जन-सुविधाओं का अभाव– विकासशील देशों में जन-सुविधाओं; जैसे– भोजन, वस्त्र, मकान, परिवहन, उपकरण आदि का अभाव रहता है। अत: लोगों की कार्यक्षमता कम होती है।

(iii) कृषि-प्रधान अर्थव्यवस्था– कृषि में अधिक जनसंख्या का लगा होना इन देशों की एक प्रमुख विशेषता है। अत: इन देशों में आय के अन्य स्रोत; जैसे– कुटीर उद्योग, व्यापार, तथा कृषि-आधारित उद्योगों के विकास की दर भी नीची होती है।

(iv) औद्योगीकरण का निम्न स्तर– विकासशील देशों में औद्योगीकरण हीन अवस्था में होता है। अधिकांश देश, विदेशी उपनिवेश रहने के कारण आधुनिक औद्योगिक विकास नहीं कर पाते। भारत इसका उदाहरण है। यहाँ शासन द्वारा संचालित औद्योगिक संस्थानों की दशा शोचनीय है। जबकि पाँच दशकों से उद्योगों के प्रति उदार नीति के द्वारा औद्योगिक विकास को प्रोत्साहित किया जाता रहा है।

4. विकासशील देशों की तीन प्रमुख समस्याएँ लिखिए।

उ०– विकासशील देशों की तीन प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित हैं–

(i) अत्यधिक जनसंख्या

(ii) जन सुविधाओं का अभाव

(iii) कृषि प्रधान व्यवस्था

5. जापान को एक विकसित देश कहने के तीन प्रमुख कारण लिखिए।

उ०– जापान को एक विकसित देश कहने के तीन प्रमुख कारण निम्नलिखित है–

(i) उच्चकोटि का औद्योगीकरण– जापान की अर्थव्यवस्था उद्योग प्रधान है। इस देश ने उच्चकोटि का औद्योगीकरण करके 'एशिया का ग्रेट ब्रिटेन' बनने का यश पा लिया है। उच्चकोटि के औद्योगिक विकास ने ही इसे विकसित राष्ट्र बना दिया है।

(ii) प्राकृतिक संसाधनों का योजनाबद्ध विदोहन– यद्यपि जापान प्राकृतिक संसाधनों के क्षेत्र में निर्धन है और देश की केवल 16% भूमि ही कृषि-योग्य है, फिर भी इसने अपने प्राकृतिक संसाधनों का योजनाबद्ध ढंग से विदोहन करके तथा वैज्ञानिक ढंग से खाद्यान्न तथा व्यापारिक फसलों का उत्पादन करके अपने विकसित बनने के द्वार खोल लिए हैं।

(iii) उच्चकोटि की तकनीकी और प्रौद्योगिकी का विकास– जापान ने शिक्षा, विज्ञान और अनुसंधानों को बढ़ावा देकर देश में तकनीकी तथा नवीन प्रौद्योगिकी का विकास करके स्वयं को विकसित राष्ट्रों की पंक्ति में लाकर खड़ा कर दिया है।

6. विकसित तथा विकासशील देशों के तीन अंतर लिखिए।

उ०– विकसित एवं विकासशील देशों के तीन अंतर निम्नलिखित हैं–

विकास के क्षेत्र	विकसित देश	विकासशील देश
1. कृषि	इन देशों में जनसंख्या का अल्पभाग कृषि में संलग्न रहता है, फिर भी देश की कुल जनसंख्या के लिए पर्याप्त उत्पादन कर लिया जाता है।	इन देशों में जनसंख्या का अधिकांश भाग कृषि में संलग्न रहता है, फिर भी उत्पादन देश की आवश्यकता से कम बना रहता है।
2. उद्योग	इन देशों में उत्पादन बड़े पैमाने पर होता है। प्रति इकाई औसत उत्पादन-लागत कम होती है। प्रति श्रमिक उत्पादकता अधिक होती है।	इन देशों में उत्पादन छोटे पैमाने पर होता है। प्रति इकाई औसत उत्पादन-लागत अधिक होती है। प्रति श्रमिक उत्पादकता कम होती है।
3. तकनीकी स्तर	इन देशों में तकनीकी स्तर उच्च होता है और पूँजी-प्रधान तकनीक का प्रयोग किया जाता है।	इन देशों में तकनीकी स्तर परंपरागत होता है और मुख्यत: श्रम-प्रधान तकनीक का प्रयोग किया जाता है।

7. विकासशील देशों के विकास हेतु तीन सुझाव दीजिए।

उ०– विकासशील देशों के विकास हेतु तीन सुझाव निम्नलिखित हैं–

(i) जनसंख्या के बढ़ते आकार पर तुरंत प्रभावी नियंत्रण लगाया जाना चाहिए।

(ii) विकासशील देशों में शिक्षा का प्रचार-प्रसार करके नारी की दशा को सुधारा जाना चाहिए।

(iii) यातायात, संचार-तंत्र और औद्योगिकरण का विकास किया जाना चाहिए।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. विकसित देश किसे कहते हैं? विकसित देशों की विशेषताएँ लिखिए।

उ०– **संयुक्त राष्ट्र संघ** विश्व के समस्त देशों के आर्थिक विकास और संपन्नता पर दृष्टि बनाए रखता है। उसने आर्थिक विकास को आधार मानकर विश्व के सभी देशों को विकसित राष्ट्र और विकासशील राष्ट्र के रूप में वर्गीकृत किया है। विकास प्रकृति का नियम तथा संसार की स्वाभाविक प्रक्रिया है। प्रत्येक राष्ट्र आर्थिक विकास का लक्ष्य निर्धारित कर उसे पाने का प्रयास करता है। सामान्य रूप से वह राष्ट्र जिसने अपने विकास का संपूर्ण लक्ष्य प्राप्त कर लिया है, एक विकसित राष्ट्र कहलाता है। विकसित राष्ट्र को लक्षित करने का राष्ट्रीय मापक न होकर अंतर्राष्ट्रीय मापक है। "विकसित राष्ट्र वह है, जिसने अपने प्राकृतिक संसाधनों का उचित दोहन करके तथा अपनी श्रमिक शक्ति का भरपूर उपयोग करके आर्थिक समृद्धि का लक्ष्य पूर्ण कर लिया है।" विकसित राष्ट्र पर्याप्त पूँजी तथा तकनीकी का उपयोग कर अपनी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बना लेते हैं। विश्व बैंक ने विकसित राष्ट्र को इन शब्दों में परिभाषित किया है, "जिन राष्ट्रों की प्रतिव्यक्ति वार्षिक आय 10,000 डॉलर या इससे अधिक है, उन्हें विकसित राष्ट्र कहा जाता है।" विश्व के वर्तमान 216 राष्ट्रों में से मात्र 41 राष्ट्र ही विकसित राष्ट्र की श्रेणी में आते हैं। जापान, रूस, जर्मनी, फ्रांस, कनाडा, नार्वे, स्वीडन, फिनलैंड और संयुक्त राज्य अमेरिका विकसित राष्ट्र हैं। इन सभी देशों ने उच्च स्तरीय आर्थिक विकास करके प्रति व्यक्ति आय का ऊँचा स्तर पा लिया है। आर्थिक विकास का अर्थ दीर्घकाल में होने वाली प्रति व्यक्ति आय और राष्ट्रीय आय की वृद्धि से लगाया जाता है।

विकसित राष्ट्र की विशेषताएँ– विकसित राष्ट्र की अर्थव्यवस्था की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) अधिक प्रतिव्यक्ति आय तथा राष्ट्रीय आय– विकसित राष्ट्र की मुख्य विशेषता वहाँ प्रति व्यक्ति आय और राष्ट्रीय आय का स्तर ऊँचा होना है। इसीलिए ये राष्ट्र समृद्ध और संपन्न होते हैं।

(ii) उन्नत विज्ञान तथा तकनीकी द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग– प्राकृतिक संसाधन किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास की आधारशिला होते हैं। पर्याप्त संसाधन राष्ट्र के आर्थिक विकास की कुँजी हैं। विकसित देश उन्नत विज्ञान तथा तकनीकी द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करके आर्थिक विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल होते हैं।

(iii) **वृहत् स्तर पर औद्योगीकरण–** सभी विकसित राष्ट्रों ने आर्थिक स्तर की उच्चता को प्राप्त करने की दृष्टि से बड़े पैमाने के उद्योगों की स्थापना विशाल स्तर पर कर ली है। ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान तथा जर्मनी आदि देशों ने औद्योगीकरण की ओर विशेष ध्यान दिया है।

(iv) **कृषि का यंत्रीकरण–** इन राष्ट्रों में बड़े-बड़े फार्मों में आधुनिक कृषि-यंत्रों तथा उन्नत तकनीकों द्वारा विस्तृत तथा सघन खेती की जाती है, जिसे व्यापारिक कृषि भी कहते हैं। कृषि उत्पादन का बड़ा हिस्सा निर्यात कर दिया जाता है।

(v) **व्यापारिक आधार पर उद्यानों का विकास–** विकसित देशों में बड़े-बड़े महानगरीय क्षेत्रों में निवास करने वाली जनसंख्या के लिए फल एवं सब्जियों के उत्पादन के लिए व्यापारिक स्तर पर उद्यानों का विकास किया गया है। इस प्रकार की कृषि को बाजार के लिए बागवानी या फलों की कृषि कहते हैं। अमेरिका एवं यूरोप के बड़े नगरों के चारों ओर ऐसे उद्यान स्थित हैं।

(vi) **उन्नत स्तर पर पशुपालन तथा दुग्ध व्यवसाय का विकास–** शीतोष्ण जलवायु, उत्तम चरागाह तथा उत्तम नस्ल के पशुओं के कारण विकसित देशों में पशुपालन तथा दुग्ध व्यवसाय बहुत प्रगति कर गया है। बड़े स्तर पर पशुओं से दूध, माँस, चमड़ा तथा ऊन आदि पदार्थ प्राप्त होते हैं।

(vii) **अत्यधिक विकसित यातायात एवं संचार-व्यवस्था–** विकसित देशों में यातायात एवं संचार व्यवस्था का अत्यधिक विकास कर लिया गया है। इन देशों में सड़कों तथा वृहत रेल मार्गों का जाल बिछा है। ट्रांस साइबेरियन रेलमार्ग विश्व का सबसे लंबा रेलमार्ग विकसित देशों में ही स्थित है। इन देशों में जल तथा वायुपरिवहन का भी विकास कर लिया गया है। विकसित संचार व्यवस्था ने भी इन देशों को विकसित देशों की श्रेणी में ला दिया है।

(viii) **शिक्षा विज्ञान एवं तकनीकी का उच्च स्तरीय विकास–** विकसित देशों में शिक्षा, विज्ञान एवं तकनीकी का विकास चरम सीमा तक हो चुका है। ये राष्ट्र विज्ञान एवं तकनीकी के कारण उद्योग एवं संचार के क्षेत्र में नए-नए रिकार्ड बनाते हैं। इन देशों में कुशल एवं उच्चकोटि की उत्पादक श्रम-शक्ति पाई जाती है।

(ix) **जनसंख्या का लघु आकार–** विकसित राष्ट्र अल्प जनसंख्या या आदर्श जनसंख्या के आकार वाले देश हैं। अत: यहाँ जनसंख्या की समस्याएँ सिर नहीं उठाती हैं।

(x) **नारी की उन्नत दशा–** विकसित राष्ट्रों में शिक्षा तथा विज्ञान का भरपूर लाभ नारी को भी मिलता है। अत: इन देशों में नारी पुरुषों के समान लाभों का उपभोग करने के कारण समाज में सम्मान पाती हैं। अत: इन राष्ट्रों में नारी की दशा उन्नत है।

(xi) **अन्य विशेषताएँ–** विकसित राष्ट्रों में अपेक्षाकृत अधिक प्रशासनिक कार्यकुशलता होती है, पूँजी निर्माण की ऊँची दर होती है तथा बैंकिंग, बीमा, वाणिज्य आदि की सुविधाएँ उन्नत स्तर की पाई जाती हैं।

2. विकासशील देश से क्या तात्पर्य हैं? विकासशील देशों की विशेषताएँ लिखिए।

उ०– **विकासशील देश**-विकास एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। मानव का स्वभाव प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने का रहा है। प्रत्येक राष्ट्र विकास के पथ पर आगे बढ़ते हुए विकास का चरम लक्ष्य प्राप्त करना चाहता है। विकासशील राष्ट्र उस राष्ट्र को कहा जाता है, जो चरम विकास का लक्ष्य पाने के लिए विकास की दौड़ में भाग रहा है। प्रत्येक राष्ट्र को निर्धनता, बेरोजगारी आदि के दुष्चक्रों से होकर गुजरना पड़ता है। विकासशील राष्ट्र विकास के पथ पर आगे तो बढ़ रहा होता है, परंतु आर्थिक विकास की दृष्टि से उसका स्तर विकसित राष्ट्रों की अपेक्षा नीचा रहता है। विकासशील राष्ट्र का लक्ष्य औद्योगिक और व्यापारिक क्षेत्रों में आर्थिक विकास का लक्ष्य प्राप्त करना होता है। अत: "निर्धनता का दुष्चक्र तोड़कर तथा आर्थिक विकास की बाधाओं को दूर करके आर्थिक विकास के लक्ष्य का पीछा करने वाला राष्ट्र, विकासशील राष्ट्र कहलाता है।" दूसरे शब्दों में, ''जो राष्ट्र धीरे-धीरे आर्थिक एवं औद्योगिक क्षेत्रों में प्रगति कर आगे बढ़ रहा है अर्थात् विकास के लिए प्रयत्नशील है, वह राष्ट्र विकासशील राष्ट्र कहलाता है।'' विकासशील राष्ट्र सदैव उत्तरोत्तर आर्थिक विकास की ओर बढ़ने का प्रयास करता रहता है। विश्व बैंक ने विकासशील राष्ट्र को इन शब्दों में परिभाषित किया है, "वह राष्ट्र जिसकी प्रति व्यक्ति आय 4,000 डॉलर वार्षिक या इससे कम है, विकासशील राष्ट्र कहलाता है।" विकासशील राष्ट्र आर्थिक विकास

की विविध अवस्थाओं से होकर गुजरता है। भारत, चीन, पाकिस्तान, मिस्त्र, ब्राजील, बांग्लादेश, हांगकाग, साइप्रस, सिंगापुर आदि विकासशील देशों के उदाहरण हैं।

विकासशील देशों की विशेषताएँ– विकासशील देश को निम्नलिखित विशेषताओं के माध्यम से पहचाना जा सकता है–

(i) प्रति व्यक्ति निम्न आय– विकासशील देशों में प्रति व्यक्ति आय बहुत कम होती है, जिसके कारण गरीब लोगों की संख्या अधिक पाई जाती है। भारत की एक-तिहाई से अधिक जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन करती है।

(ii) जन-सुविधाओं का अभाव– विकासशील देशों में जन-सुविधाओं; जैसे– भोजन, वस्त्र, मकान, परिवहन, उपकरण आदि का अभाव रहता है। अत: लोगों की कार्यक्षमता कम होती है।

(iii) कृषि-प्रधान अर्थव्यवस्था– कृषि में अधिक जनसंख्या का लगा होना इन देशों की एक प्रमुख विशेषता है। अत: इन देशों में आय के अन्य स्रोत; जैसे– कुटीर उद्योग, व्यापार, तथा कृषि-आधारित उद्योगों के विकास की दर भी नीची होती है।

(iv) औद्योगीकरण का निम्न स्तर– विकासशील देशों में औद्योगीकरण हीन अवस्था में होता है। अधिकांश देश, विदेशी उपनिवेश रहने के कारण आधुनिक औद्योगिक विकास नहीं कर पाते। भारत इसका उदाहरण है। यहाँ शासन द्वारा संचालित औद्योगिक संस्थानों की दशा शोचनीय है। जबकि पाँच दशकों से उद्योगों के प्रति उदार नीति के द्वारा औद्योगिक विकास को प्रोत्साहित किया जाता रहा है।

(v) प्रतिकूल व्यापार संतुलन– विकासशील देशों में आयात की तुलना में निर्यात कम होने से व्यापार संतुलन प्रतिकूल बना रहता है।

(vi) ऋण की अधिकता– इन देशों को पूँजी और प्रौद्योगिकी के आयात के लिए अत्यधिक विदेशी ऋण लेना पड़ता है। जिसके कारण इन्हें आर्थिक विकास का पूरा लाभ नहीं मिलता है।

(vii) खराब अर्थव्यवस्था– विकासशील देशों में लंबे समय तक औपनिवेशिक दासता होने के कारण क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था खराब अवस्था में रही है। अत: स्वावलंबन की भावना निराशाजनक स्थिति में पहुँच गई है।

(viii) निम्नकोटि की यातायात एवं संचार व्यवस्था– विकासशील देशों में यातायात एवं संचार व्यवस्था का पर्याप्त विकास नहीं हो जाता है क्योंकि इन देशों के पास संसाधन और तकनीकी का अभाव पाया जाता है। यातायात एवं संचार व्यवस्था के पिछड़ेपन के कारण इन देशों का आर्थिक विकास बाधित बना रहता है।

(ix) प्राकृतिक संसाधनों का अनुचित दोहन– विकासशील देश पूँजी की कमी तथा तकनीकी क्षेत्र में पिछड़े होने के कारण अपने प्राकृतिक संसाधनों का समुचित उपयोग नहीं कर पाते। प्राकृतिक संसाधनों की कमी के कारण भी इन देशों में उद्योग तथा व्यापार पनप नहीं पाते हैं।

(x) नारी की हीन दशा– बेरोजगारी, अशिक्षा तथा अज्ञानता के कारण विकासशील देशों में नारी की दशा बड़ी दीन-हीन होती है। अधिक संतान पैदा करने के कारण उसका स्वास्थ्य भी बिगड़ जाता है।

(xi) अधिक जनसंख्या– विकासशील देशों में जनसंख्या में निरंतर वृद्धि के कारण जनाधिक्य के कारण जनाधिक्य की स्थिति पाई जाती है। चिकित्सा-सुविधाओं में जन्म-दर में कमी तथा औसत आयु में तो वृद्धि हो गई हैं किंतु जन्म-दर में कमी नहीं होने से इन देशों की जनसंख्या बढ़ती जाती हैं जिसका भार कृषि-भूमि पर पड़ता है।

3. मिस्त्र देश का सामान्य परिचय देते हुए इसे विकासशील राष्ट्र कहने के लिए उत्तरदायी कारणों पर प्रकाश डालिए।

उ०– **मिस्त्र एक विकासशील राष्ट्र के रूप में–** विश्व की आदि सभ्यता वाला देश मिस्त्र अफ्रीका महाद्वीप के उत्तर-पूर्वी भाग में स्थित एक प्रमुख विकासशील देश है। इसका कुल क्षेत्रफल 9,97,667 वर्ग किमी० है। यहाँ की 94% जनसंख्या मुस्लिम है तथा अरबी यहाँ की राजभाषा है। लगभग 5.10 करोड़ जनसंख्या वाले इस राष्ट्र की राजधानी काहिरा है। मिस्त्र को **नील नदी का वरदान** कहा जाता है क्योंकि इसी नदी द्वारा सिंचाई के सहारे यहाँ कृषि फसलों का उत्पादन किया जाता है। इसी कारण यहाँ की अर्थव्यवस्था में नील नदी का महत्वपूर्ण स्थान है। राष्ट्रीय आय का 45% भाग कृषि-उत्पादों से प्राप्त होता है

तथा यहाँ की 50% जनसंख्या कृषि-कार्यों में संलग्न है। गेहूँ, चावल, मोटे अनाज तथा कपास यहाँ की प्रमुख फसलें हैं। भारत की तरह मिस्र की अर्थव्यवस्था भी विकासशील है। मिस्र को विकासशील राष्ट्र कहने के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं–

(i) मिस्र एक कृषि-प्रधान अर्थव्यवस्था का देश होने के कारण विकासशील राष्ट्रों के कुल का सदस्य माना जाता है।

(ii) मिस्र में औद्योगीकरण का स्तर नीचा होने के कारण उसे विकासशील राष्ट्र कहना उचित है।

(iii) मिस्र में परिवहन व्यवस्था तथा संचार-तंत्र अल्प विकसित अवस्था में है अत: यह एक विकासशील राष्ट्र है।

(iv) मिस्र में लोगों की प्रति व्यक्ति आय तथा राष्ट्रीय आय कम होने के कारण यह एक विकासशील राष्ट्र माना जाता है।

(v) मिस्र में शिक्षा और विज्ञान का स्तर सामान्य होने के कारण यह एक विकासशील राष्ट्र ही है।

(vi) मिस्र में पर्दा प्रथा का प्रचलन होने तथा स्त्री शिक्षा पर ध्यान न दिए जाने के कारण नारी की दशा खराब हैं, जो इसे एक विकासशील राष्ट्र बनाने के लिए पर्याप्त है।

(vii) मिस्र में पूँजी का निर्माण बहुत मंद गति से हो रहा है अत: इसे एक विकासशील राष्ट्र कहना सर्वथा उचित है।

(viii) मिस्र कपास, खजूर तथा खनिज पदार्थों का निर्यात करने के कारण एक विकासशील राष्ट्र ही बना हुआ है, यद्यपि संसाधनों के उचित दोहन और औद्योगीकरण में वृद्धि के फलस्वरूप यहाँ सूती वस्त्र, सीमेंट, काँच, रासायनिक उर्वरक, कागज, सिगरेट, पेट्रोलियम परिष्करण, विद्युत उपकरण, चीनी, टायर, रेफ्रीजरेटर तथा संचार उपकरणों के उत्पादन में तीव्र वृद्धि हुई है।

4. विकसित और विकासशील देशों की तुलना करते हुए उनमें अंतर बताइए।

उ०– विकसित एवं विकासशील देशों की तुलना–

विकास के क्षेत्र	विकसित देश	विकासशील देश
1. कृषि	इन देशों में जनसंख्या का अल्पभाग कृषि में संलग्न रहता है, फिर भी देश की कुल जनसंख्या के लिए पर्याप्त उत्पादन कर लिया जाता है।	इन देशों में जनसंख्या का अधिकांश भाग कृषि में संलग्न रहता है, फिर भी उत्पादन देश की आवश्यकता से कम बना रहता है।
2. उद्योग	इन देशों में उत्पादन बड़े पैमाने पर होता है। प्रति इकाई औसत उत्पादन-लागत कम होती है। प्रति श्रमिक उत्पादकता अधिक होती है।	इन देशों में उत्पादन छोटे पैमाने पर होता है। प्रति इकाई औसत उत्पादन-लागत अधिक होती है। प्रति श्रमिक उत्पादकता कम होती है।
3. तकनीकी स्तर	इन देशों में तकनीकी स्तर उच्च होता है और पूँजी-प्रधान तकनीक का प्रयोग किया जाता है।	इन देशों में तकनीकी स्तर परंपरागत होता है और मुख्यत: श्रम-प्रधान तकनीक का प्रयोग किया जाता है।
4. आर्थिक स्तर	इन देशों में प्रति आय अधिक होती है। राष्ट्रीय आय के अनुपात में बचत व निवेश का उच्च स्तर पाया जाता है।	इन देशों में प्रति व्यक्ति आय कम होती है। राष्ट्रीय आय के अनुपात में बचत व निवेश का निम्न स्तर पाया जाता है।
5. प्राकृतिक संसाधन	न देशों में प्राकृतिक संसाधन पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध होते हैं और उनका पूर्ण दोहन किया जाता है।	इन देशों में प्राकृतिक संसाधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होते हैं, किंतु उनका पूर्ण दोहन संभव नहीं होता।
6. जनसंख्या	इन देशों में कम जनसंख्या पाई जाती है और वह कार्यकुशल होती है।	इन देशों में अधिक जनसंख्या पाई जाती है किंतु वह कम कार्यकुशल होती है।
7. निर्यात	इन देशों में अधिकांश निर्मित माल का निर्यात किया जाता है तथा आयात पर निर्भरता कम होती है।	इन देशों में अधिकांश कच्चे माल का निर्यात किया जाता है तथा आयात पर निर्भरता अधिक होती है।

8. पूँजी-निर्माण	इन देशों में पूँजी-निर्माण की दर अधिक होती है।	इन देशों में पूँजी-निर्माण की दर कम होती है।
9. आयात	इन देशों में आयात की मात्रा कम रहती है। कच्चे माल का अधिक आयात होता है।	इन देशों में आयात की मात्रा अधिक रहती है। तैयार माल का अधिक आयात होता है।
10. पूँजी एवं तकनीकी	इन देशों में पूँजी एवं तकनीक का निर्यात होता है।	इन देशों में पूँजी एवं तकनीक दूसरे देशों से मँगायी जाती है।
11. निर्भरता	ये राष्ट्र विभिन्न क्षेत्रों में आत्मनिर्भर होते हैं।	ये राष्ट्र विभिन्न वस्तुओं के लिए दूसरे राष्ट्रों पर निर्भर होते हैं।
12. जीवन-स्तर	इन देशों में रहन-सहन का स्तर ऊँचा और सुखदायी होता है।	इन देशों के निवासियों का जीवन-स्तर नीचा और संघर्षमय होता है।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

46 विकसित देश के रूप में उभरता भारत
(कृषि, उद्योग, परिवहन, दूरसंचार, शिक्षा, स्वास्थ्य बौद्धिक संपदा-वैश्वीकरण के संदर्भ में)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 433 व 434 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 434 व 435 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. "भारत एक विकसित देश के रूप में उभर रहा है।'' इस कथन की पुष्टि में तीन तर्क दीजिए।

उ०– ''भारत एक विकासत देश के रूप में उभर रहा है'' इस कथन की पुष्टि में तीन तर्क निम्नलिखित हैं–

(i) भारत ने स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कृषि का यंत्रीकरण करके, नवीनतम व उन्नत बीजों कर प्रयोग करके तथा रासायनिक उर्वरक व कीटनाशकों की खपत बढ़ाकर कृषि विकास को नया स्वरूप प्रदान करके स्वयं विकसित राष्ट्र के मार्ग पर अग्रसर किया है।

(ii) भारत ने अपने आधारभूत ढ़ाँचे का विकास कर पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से तीव्र औद्योगिकरण का ताना-बाना बुना, जो उसके विकसित राष्ट्र बनने का द्योतक है।

(iii) भारत ने भूतल परिवहन, वायु परिवहन तथर जल परिवहन का नए ढ़ंग से विकास किया है। भारत ने एकीकृत एवं संमवित परिचवहन-तंत्र का विकास कर विकसित राष्ट्र बनने का मार्ग प्रशस्त किया है।

2. वैश्वीकरण ओर उदारीकरण को स्पष्ट कीजिए।

उ०– वैश्वीकरण– समूचे विश्व को एक विशाल इकाई के रूप में परिवर्तित करने की महत्वाकांक्षा और प्रणाली को वैश्वीकरण या भूमंडलीकरण कहा जाता है। यह भावना भारत के वसुधैव कुटुम्बकम् के सिद्धांत से प्रभावित है। वैश्वीकरण को अर्थव्यवस्था तथा बाजार के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। अत: राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को विश्व की अर्थव्यवस्था के साथ

एकजुट करके अपने बाजारों को विश्व के सभी देशों के लिए खोलने की अवधारणा का नाम ही वैश्वीकरण है। 'वैश्वीकरण' वह प्रक्रिया है, जो उत्पादों, सेवाओं तथा प्रौद्योगिकी को समूचे विश्व के साथ एकीकृत कर देती है, जिससे एक देश के बाजार संपूर्ण राष्ट्रों के लिए स्वतंत्र और निर्बाध रूप से खुल जाते हैं तथा आयात-निर्यात पर लगे अनावश्यक प्रतिबंधों को हटा दिया जाता है।

उदारीकरण– उदारीकरण का अर्थ ऐसे नियंत्रण में ढील देना या उन्हें हटा लेना है, जिससे आर्थिक विकास को बढ़ावा मिले। उदारीकरण में वे सारी क्रियाएँ सम्मिलित हैं, जिसके द्वारा किसी देश के आर्थिक विकास में बाधा पहुँचाने वाली आर्थिक नीतियों, नियमों, प्रशासनिक नियंत्रणों, प्रक्रियाओं आदि को समाप्त किया जाता है या उनमें शिथिलता दी जाती है। इस प्रक्रिया में विश्व के साथ व्यापार की शर्तों को उदार बनाया जाता है जिससे ना केवल अर्थव्यवस्था का विकास सुनिश्चित होता है बल्कि देश का व्यापक विकास तथा बहुमुखी उन्नति होती है।

3. भारत के एक विकसित देश बनने की किन्हीं तीन संभावनाओं को स्पष्ट कीजिए।

उ०– भारत के एक विकसित देश बनने की किन्हीं तीन संभावनाएँ निम्नलिखित हैं–

(i) भारत को प्रकृति ने पर्याप्त उपजाऊ मृदा, वन, जल संसाधन, खनिज तथा ऊर्जा संसाधन, वन्य जीव संसाधन आदि प्राकृतिक संसाधनों के रूप में उपहार स्वरूप प्रदान किए हैं, जिनका वह योजनाबद्ध विदोहन करके निःसंदेह विकसित राष्ट्र बनने की संभावनाओं को साकार रूप प्रदान कर सकता है।

(ii) भारत की जनसंख्या 125 करोड़ हैं, जिसमें पर्याप्त युवा शक्ति और अर्जक जनसंख्या है। भारत अपने इंजीनियरों, डॉक्टरों वैज्ञानिकों तथा तकनीशीयनों की टोली के आधार पर विकसित राष्ट्र बनने की संभावनों को पूर्ण कर सकता है।

(iii) भारत ने कृषि का यंत्रीकरण करके तथा हरित क्रांति अपनाकर कृषि के विकास के द्वार खोल लिए हैं। उसने पशुपालन व्यवसाय को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान कर विकसित राष्ट्र बनने की संभावना जुटा ली है।

4. "भारत ने विकसित राष्ट्र बनने की ओर कदम बढ़ा दिया है।" इस कथन की पुष्टि के लिए उद्योगों के संदर्भ में उदाहरण दीजिए।

उ०– "भारत ने विकसित राष्ट्र बनने की ओर कदम बढ़ा दिया है।" इस कथन की पुष्टि के लिए उद्योगों के संदर्भ में निम्नलिखित उदाहरण दिए जा सकते हैं–

(i) भारत ने अपने आधारभूत ढाँचे का विकास कर पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से तीव्र औद्योगीकरण का ताना-बाना बुना, जो उसके विकसित राष्ट्र बनने का द्योतक है।

(ii) भारत ने लोहा, इस्पात, सीमेंट, इंजीनियरी, तेलशोधन तथा पेट्रो रसायन जैसे आधारभूत उद्योगों का विकास करके विकसित राष्ट्र बनने का मार्ग खोल लिया है।

(iii) भारत ने बिजली, जल, खनिज, अणुशक्ति का विकास करके औद्योगीकरण की नींव रख दी है। औद्योगीकरण के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता पाने का जो प्रयास भारत ने किया है वह उसे शीघ्र ही विकसित राष्ट्रों के समकक्ष लाने में सफल रहेगा।

(iv) भारत ने पूँजी निर्माण की दर में वृद्धि करके तथा पूँजी का निवेश करके उद्योगों की स्थापना को बढ़ावा दिया है, जो उसे विकसित राष्ट्र बनाने में सहायक सिद्ध होगा।

(v) भारत ने उद्योगों के क्षेत्र में उत्पादन की नवीनतम प्रौद्योगिकी का विकास करके उनकी गुणवत्ता तथा उत्पादन क्षमता बढ़ाकर स्वयं को विकसित राष्ट्रों के साथ जोड़ने का प्रयास किया है।

(vi) भारत ने औद्योगिक क्षेत्र में उदारीकरण की नीति अपनाकर तथा अपने उत्पादों के लिए विश्व-बाजार के द्वार खोलकर, उद्योग तथा वाणिज्य के क्षेत्र में एक विकसित राष्ट्र के पथ पर आगे कदम बढ़ा दिए हैं।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. "भारत एक विकसित राष्ट्र की ओर अग्रसर हो रहा है।" इस कथन की पुष्टि कीजिए।

उ०– विकसित देश के रूप में उभरता भारत– व्यक्ति हो या राष्ट्र सभी विकास के मार्ग पर सदैव आगे बढ़ने का प्रयास करते हैं। भारत भी इसका एक उदाहरण है। स्वतंत्रता के पश्चात भारत अशिक्षा, अज्ञानता, भाग्यवादिता, कुरीतियों और

अंधविश्वासों के मकड़जाल से निकलकर आर्थिक विकास और प्रगति के मार्ग पर चल निकला। भारत के पूर्व प्रधानमंत्री स्व० राजीव गाँधी ने इक्कीसवीं शताब्दी में भारत को विकसित राष्ट्र बनाने का जो सपना देखा था, अब वह सत्य बनता प्रतीत हो रहा है। भारत का लक्ष्य अपनी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाकर आर्थिक दृष्टि से शक्तिसंपन्न और समृद्ध बनने का है। अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत एक शक्तिशाली और समृद्ध राष्ट्र का उदाहरण प्रस्तुत कर रहा है। उसने कृषि, उद्योग, परिवहन, संचार, शिक्षा, स्वास्थ्य, अंतरिक्ष विज्ञान, परमाणु शक्ति के विकास के साथ-साथ सूचना प्रौद्योगिकी में भी क्रांति लाकर अपनी सफलता के झंडे गाड़ दिए हैं।

(i) कृषि के संदर्भ में– कृषि भारत का राष्ट्रीय व्यवसाय ही नहीं लोगों की आजीविका का आधार भी है। कृषि भारत की 65% जनशक्ति को आजीविका प्रदान करती है तथा यह सकल घरेलू उत्पादन का 25% भाग प्रदान करती है। भारतीय कृषि कम उत्पादन, मृदा कटाव, अनुपजाऊपन तथा सिंचाई सुविधाओं के अभाव में पिछड़ गई थी, परंतु स्वतंत्रता के पश्चात भूमि-सुधार कार्यक्रम लागू करके तथा सिंचाई की सुविधाओं का विस्तार करके भारत की निर्वाहमूलक कृषि को व्यावसायिक कृषि का स्वरूप दिया गया है।

भारत ने कृषि-विकास की नई-नई योजनाएँ लागू करके कृषि के स्वर्णिम युग का शुभारंभ कर दिया है, उसका यह प्रयास निश्चय ही विकसित राष्ट्र बनने का सफल प्रयास होगा। भारत ने कृषि के क्षेत्र में निम्नलिखित उपब्धियाँ प्राप्त की हैं।

(क) भारत स्वतंत्रता प्राप्ति के समय खाद्यान्नों का आयात करता था, परंतु उसने कृषि का यंत्रीकरण करके, नवीनतम व उन्नत बीजों का प्रयोग करके तथा रासायनिक उर्वरक व कीटनाशकों की खपत बढ़ाकर कृषि विकास को नया स्वरूप देकर भारत को खाद्यान्न आयातक से निर्यातक बना दिया है।

(ख) भारत ने 'अधिक अन्न उपजाओ' के उद्‌देश्य से हरित क्रांति का सूत्रधार करके कृषि व्यवसाय की सभी समस्याओं का अंत कर दिया है। हरित क्रांति भारतीय कृषि के विकास के लिए वह क्रांतिकारी कदम सिद्ध हुई है, जिसने भारत को कृषि उत्पादन में आत्मनिर्भर बना दिया है। यह प्रयास निश्चय ही विकसित राष्ट्र बनने के लक्ष्य में सहायक सिद्ध होगा।

(ग) भारत ने भूमि-सुधार तथा मृदा-संरक्षण हेतु चकबंदी, हदबंदी, जमींदारी उन्मूलन, सहकारी खेती, भूदान आंदोलन आदि के माध्यम से कृषि विकास के क्षेत्र में ऊँची छलांग लगाकर एक विकसित राष्ट्र बनने की ओर पग बढ़ा दिए हैं।

(घ) भारत ने कृषि प्रौद्योगिकी का विकास करके, जैविक खेती का शुभारंभ किया है। कृषि में गहन क्षेत्र विकास कार्यक्रम लागू करके, जहाँ कृषि को नया स्वरूप प्रदान किया है वहीं कृषकों को नवीनतम कृषि प्रौद्योगिकी, कृषि यंत्र, ऋण, फसल बीमा तथा उन्नतशील बीज उपलब्ध कराकर कृषि के सर्वांगीण विकास के द्वार खोल दिए हैं। सरकार द्वारा किए गए ये सभी प्रयास भारत को एक विकसित राष्ट्र के रूप में खड़ा करने में सक्षम रहेंगे।

(ii) उद्योगों के संदर्भ में– ब्रिटिश शासकों ने भारत को आर्थिक दृष्टि से निर्बल बनाने के लिए कुटीर उद्योग-धंधों का विनाश कर दिया। जिसके कारण भारतीय शिल्पी बेरोजगार हो गए तथा कच्चा माल इंग्लैंड जाने लगा। इंग्लैंड में बना माल भारत में बिकने से इंग्लैंड में औद्योगीकरण तीव्र गति से होने लगा। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में कुटीर उद्योगों के साथ-साथ लघु तथा वृहद पैमाने के उद्योगों का विकास किया गया। भारत ने अपने औद्योगिक ढाँचे को सुदृढ़ बनाकर विकसित राष्ट्रों के साथ जुड़ने का प्रयास किया। औद्योगीकरण को ध्यान में रखते हुए भारत के विकसित राष्ट्र बनने की संभावनाओं को निम्नवत् जाना जा सकता है–

(क) भारत ने अपने आधारभूत ढाँचे का विकास कर पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से तीव्र औद्योगीकरण का ताना-बाना बुना, जो उसके विकसित राष्ट्र बनने का द्योतक है।

(ख) भारत ने लोहा, इस्पात, सीमेंट, इंजीनियरी, तेलशोधन तथा पेट्रो रसायन जैसे आधारभूत उद्योगों का विकास करके विकसित राष्ट्र बनने का मार्ग खोल लिया है।

(ग) भारत ने बिजली, जल, खनिज, अणुशक्ति का विकास करके औद्योगीकरण की नींव रख दी है। औद्योगीकरण के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता पाने का जो प्रयास भारत ने किया है वह उसे शीघ्र ही विकसित राष्ट्रों के समकक्ष लाने में सफल रहेगा।

(घ) भारत ने पूँजी निर्माण की दर में वृद्धि करके तथा पूँजी का निवेश करके उद्योगों की स्थापना को बढ़ावा दिया है, जो उसे विकसित राष्ट्र बनाने में सहायक सिद्ध होगा।

(ङ) भारत ने उद्योगों के क्षेत्र में उत्पादन की नवीनतम प्रौद्योगिकी का विकास करके उनकी गुणवत्ता तथा उत्पादन क्षमता बढ़ाकर स्वयं को विकसित राष्ट्रों के साथ जोड़ने का प्रयास किया है।

(च) भारत ने औद्योगिक क्षेत्र में उदारीकरण की नीति अपनाकर तथा अपने उत्पादों के लिए विश्व-बाजार के द्वार खोलकर, उद्योग तथा वाणिज्य के क्षेत्र में एक विकसित राष्ट्र के पथ पर आगे कदम बढ़ा दिए हैं।

(iii) परिवहन के संदर्भ में– राष्ट्र का समूचा आर्थिक विकास तथा व्यापारिक स्वरूप परिवहन व्यवस्था पर निर्भर करता है। भारत ने अपनी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ तथा संपन्न बनाने के लिए यातायात व्यवस्था के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया है। इस क्षेत्र में भारत द्वारा किए गए प्रयासों को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है–

(क) भारत ने भूतल परिवहन, वायु परिवहन तथा जल परिवहन का नए ढंग से विकास किया है। भारत ने एकीकृत एवं समन्वित परिवहन-तंत्र का विकास कर विकसित राष्ट्र बनने का मार्ग प्रशस्त कर लिया है।

(ख) भारत ने 4 लेन तथा 6 लेन वाले एक्सप्रेस वे तथा राष्ट्रीय राजमार्गों का निर्माण करके सड़क परिवहन में क्रांतिकारी परिवर्तन कर दिए हैं।

(ग) स्वर्णिम चतुर्भुज सड़क परियोजना भारत की एक अद्वितीय और महत्वाकांक्षी परियोजना है, जो विकसित राष्ट्र का प्रतीक बन चुकी है।

(घ) भारत ने रेलमार्गों का विद्युतीकरण करके, स्टेशनों को कंप्यूटरों से जोड़कर, कोयले के इंजनों को विद्युत चालित तथा डीजल चालित इंजनों में बदलकर प्रगति और क्रांति का बिगुल बजा दिया है।

(ङ) भारत ने सुपरफास्ट, राजधानी एक्सप्रेस, जनशताब्दी तथा दूरंतो रेलगाड़ियाँ चलाकर रेल परिवहन को द्रुतगामी, आरामदायक तथा आधुनिकतम बना दिया है। बुलेट ट्रेन का सपना साकार होते ही भारत निश्चय ही विकसित राष्ट्र बनने की ओर अग्रसर होगा।

(च) भारत की रेल व्यवस्था एशिया में प्रथम तथा विश्व में चौथा स्थान पाने का गौरव पा चुकी है, जो उसके विकसित राष्ट्र बनने के स्वप्न को पूरा करेगी।

(छ) भारत ने वायु परिवहन तथा जल परिवहन के विकास के लिए नवीनतम राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डों तथा बदंरगाहों का निर्माण करवाया है, जो एक विकसित राष्ट्र बनने की दिशा में उसके दृढ़ निश्चय का प्रतीक है।

वायु परिवहन तथा महासागरीय जल परिवहन ने भारत को अंतर्राष्ट्रीय जगत से जोड़कर इसे विकसित राष्ट्र बनाने के मार्ग में अपना सहयोग देना प्रारंभ कर दिया है।

(iv) दूरसंचार के संदर्भ में– दूरसंचार राष्ट्र के सर्वांगीण विकास और आर्थिक संपन्नता का सुदृढ़ स्रोत बनकर उभरा है। भारत ने दूरसंचार-तंत्र के विकास में जी-जान लगाकर विकास किया है। दूरसंचार-तंत्र ने भारत को एक विकसित राष्ट्र बनाने के संदर्भ में निम्नवत भागीदारी निभानी प्रारंभ की है–

(क) भारत ने एक सुदृढ़ डाक-प्रणाली का विकास कर देश के कोने-कोने और गाँव-गाँव को डाकघरों की सेवाओं से जोड़कर अभूतपूर्व कार्य किया है।

(ख) भारत की 'प्रसार भारती' संस्था तथा 'सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय' प्रिंट मीडिया तथा इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के विकास में निरंतर प्रयासरत रहकर इसे विश्व स्तरीय बनाने में जुटे हैं।

(ग) भारत ने आकाशवाणी तथा दूरदर्शन प्रसारण के माध्यम से दूरसंचार-तंत्र के रूप में अपनी साख विश्वभर में जमा ली है।

(घ) भारत ने अंतरिक्ष में कृत्रिम उपग्रह स्थापित कर सूचना प्रौद्योगिकी तथा सॉफ्टवेयर के क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का ज्ञान समूचे विश्व को करा दिया है।

(ङ) भारत के इंजीनियर विश्वभर में सॉफ्टवेयर के लिए जाने जाते हैं। हजारों वैज्ञानिक और इंजीनियर संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैंड, जापान तथा ऑस्ट्रेलिया आदि विकसित देशों में अपनी सेवाएँ देकर भारत का गौरव बढ़ा रहे हैं।

(v) शिक्षा और स्वास्थ्य के संदर्भ में– शिक्षा और स्वास्थ्य वह गुण है, जो राष्ट्र को प्रतिभावान और स्वस्थ नागरिक प्रदान कराते हैं। स्वस्थ नागरिक ही शिक्षित होकर समाज, संस्कृति और आर्थिक विकास का पथ प्रशस्त करते हैं। भारत ने अपनी अज्ञानी, निरक्षर तथा पिछड़ी जनशक्ति को प्रबुद्ध और ज्ञानवान बनाने के लिए शिक्षा रूपी पारसमणी का सहयोग लिया है। भारत के निर्माताओं ने भली प्रकार समझ लिया था, कि राष्ट्र की वास्तविक शक्ति सोना-चाँदी न होकर उसके स्वस्थ, शिक्षित तथा परिश्रमी नागरिक होते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत ने 'साक्षरता कार्यक्रम' पर विशेष बल दिया है।

भारत सरकार ने राष्ट्र को पूर्ण साक्षर बनाने के उद्देश्य से कई योजनाएँ चलाई हैं, जिनमें प्रमुख हैं–

(क) सर्वशिक्षा अभियान के तहत 6 से 14 वर्ष की आयु वाले बच्चों को निशुल्क तथा अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का मौलिक अधिकार देना।

(ख) ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड के नाम से सन् 1987-88 में प्रारंभ की गई योजना जिसके अंतर्गत विद्यालयों में उपलब्ध मानव तथा भौतिक संसाधनों में सुधार करना है।

(ग) नए स्कूलों की स्थापना, नई कक्षाओं का गठन, अध्यापक प्रशिक्षण तथा नए अध्यापकों की नियुक्ति के लिए सन् 1994 में शुरू किया गया जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम।

(घ) कक्षा 1 से 5 तक के बच्चों के पोषण-स्तर में सुधार तथा विद्यालय में उनकी उपस्थिति बढ़ाने के उद्देश्य से सभी राज्यों तथा केंद्रशासित प्रदेशों में दोपहर भोजन योजना (मिड-डे मील योजना) की शुरुआत।

(ङ) 15 अगस्त, 1997 को आरंभ की गई कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय योजना, जिसमें अनुसूचितजाति, जनजाति, अन्य पिछड़े वर्ग तथा अल्पसंख्यकों की बालिकाओं हेतु दुर्गम क्षेत्रों में आवासीय सुविधाओं वाले विद्यालय खोलने की व्यवस्था है।

(च) सर्वशिक्षा अभियान का एक महत्वपूर्ण घटक– शिक्षा गारंटी तथा वैकल्पिक एवं अनूठी शिक्षा के तहत स्कूल नहीं जा रहे बच्चों को 'बुनियादी शिक्षा कार्यक्रम' के अंतर्गत लाना।

देश में प्राथमिक, जूनियर हाई स्कूल, माध्यमिक विद्यालय, विश्वविद्यालय, कृषि विश्वविद्यालय तथा मेडीकल कॉलेजों की स्थापना कर 2011 ई० की जनगणना के अनुसार राष्ट्र की साक्षरता की दर को 74.04% तक पहुँचा दिया है, जो निश्चत रूप से भारत को एक विकसित राष्ट्र बनाने की दिशा में प्रशंसनीय प्रयास कहा जा सकता है।

राष्ट्र की सामाजिक और आर्थिक स्थिति स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता पर निर्भर करती है। भारत ने प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं का विकास कर बाल मृत्यु-दर में कमी करने तथा जीवन प्रत्याशा बढ़ाने में अद्भुत सफलता प्राप्त कर ली है। देश में स्वास्थ्य सेवा केंद्रों का संचालन केंद्र तथा राज्य सरकारें करती हैं। भारत ने चेचक, मलेरिया, हैजा, पोलियो आदि घातक रोगों पर रोकथाम लगाने में पूर्ण सफलता प्राप्त कर ली है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश के सामान्य जन के स्वास्थ्य में सुधार तथा महामारियों का रूप लेने वाली अनेक बीमारियों के उन्मूलन हेतु अनेक स्वास्थ्य कार्यक्रम चलाए गए हैं, जिनमें प्रमुख हैं– राष्ट्रीय संक्रामक रोग नियंत्रण, राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम, राष्ट्रीय फाइलेरिया कार्यक्रम, कालाजार नियंत्रण कार्यक्रम, संशोधित राष्ट्रीय क्षय रोग नियंत्रण कार्यक्रम, राष्ट्रीय कुष्ठ रोग उन्मूलन कार्यक्रम, पल्स पोलियो अभियान, विभिन्न टीकाकरण कार्यक्रम, राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम, प्रजनन तथा बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम आदि। इसके अतिरिक्त जन्म देने वाली माताओं तथा उनके नवजात शिशुओं की सुरक्षा हेतु चलाई गई जननी सुरक्षा योजना का उद्देश्य गर्भवती महिलाओं को एकीकृत प्रसूति सेवा उपलब्ध कराना है।

यद्यपि जनसंख्या के अनुपात में जन स्वास्थ्य सेवाएँ अभी भी कम हैं, परंतु भारत उनके विकास के लिए निरंतर प्रयत्नशील बना हुआ है, वह दिन दूर नहीं है जब भारत में स्वास्थ्य सेवाओं का स्तर एक विकसित राष्ट्र के समरूप बन जाएगा।

(vi) **बौद्धिक संपदा के संदर्भ में–** शारीरिक और मानसिक विकास के साथ-साथ नागरिकों का बौद्धिक विकास भी होना नितांत आवश्यक है। शिक्षा, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में पूँजी का निवेश कर, बौद्धिक संपदा का अर्जन किया जा सकता है। बौद्धिक विकास के बिना व्यक्ति अपूर्ण ही बना रहता है। विकास का युद्ध शरीर से नहीं, बुद्धि से जीता जा सकता है। कहावत है कि 'स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन बसता है।' स्वस्थ नागरिकों को बौद्धिक विकास का उपहार देकर ही राष्ट्र के आर्थिक विकास के द्वार खोले जा सकते हैं। भारत ने मानव संसाधन के बौद्धिक विकास हेतु योजनाबद्ध प्रयास किए हैं। बौद्धिक विकास व्यक्ति में चिंतन, मनन तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का बीज अंकुरित कर उसे प्रतिभावान और विचारवान बना देता है। भारत ने उच्चकोटि के विज्ञान और प्रौद्योगिकी संस्थान स्थापित कर अपने नागरिकों में बौद्धिक कौशल जगाया है। भारत के पास इस समय इंजीनियरों, तकनीशियनों तथा वैज्ञानिकों की एक सशक्त टीम विद्यमान है। 2014 ई० में भारतीय वैज्ञानिकों ने प्रथम प्रयास में ही मंगलयान को मंगल ग्रह पर पहुँचाकर अपनी प्रखर बौद्धिकता का लोहा पूरे विश्व को मनवा दिया। इससे भारत को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर गौरव प्राप्त हुआ है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी बौद्धिक संपदा के विकास तथा सुरक्षा में विश्व व्यापार संगठन तथा विश्व बौद्धिक संपदा संगठन आदि संस्थाएँ पर्याप्त सहयोग करती हैं। भारत के इंजीनियर, डॉक्टर, तकनीशियन तथा वैज्ञानिक विदेशों में सेवा कर अपनी बौद्धिकता का झंडा ऊँचा करने में लगे हैं, जो भारत को एक विकसित राष्ट्र के रूप में पहचान दिलाने में नींव का पत्थर सिद्ध होगा।

(vii) **वैश्वीकरण के संदर्भ में–** समूचे विश्व को एक विशाल इकाई के रूप में परिवर्तित करने की महत्वाकांक्षा और प्रणाली को वैश्वीकरण या भूमंडलीकरण कहा जाता है। यह भावना भारत के वसुधैव कुटुम्बकम् के सिद्धांत से प्रभावित है। वैश्वीकरण को अर्थव्यवस्था तथा बाजार के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। अत: राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को विश्व की अर्थव्यवस्था के साथ एकजुट करके अपने बाजारों को विश्व के सभी देशों के लिए खोलने की अवधारणा का नाम ही वैश्वीकरण है। 'वैश्वीकरण' वह प्रक्रिया है, जो उत्पादों, सेवाओं तथा प्रौद्योगिकी को समूचे विश्व के साथ एकीकृत कर देती है, जिससे एक देश के बाजार संपूर्ण राष्ट्रों के लिए स्वतंत्र और निर्बाध रूप से खुल जाते हैं तथा आयात-निर्यात पर लगे अनावश्यक प्रतिबंधों को हटा दिया जाता है।

वैश्वीकरण का लक्ष्य एवं लाभ भारत का प्राचीन आदर्श ही समूचे विश्व को एक विशाल परिवार मानने से जुड़ा रहा है अत: भारत ने आर्थिक उदारीकरण की नीति अपनाकर वैश्वीकरण का मार्ग पुष्ट कर दिया है। भारत में सन् 1991 ई० की आर्थिक उदारीकरण नीति के अनुसार, तत्कालीन वित्त मंत्री श्री मनमोहन सिंह के नेतृत्व में विदेश निवेश नीति का उदारीकरण किया गया। इसी प्रकार विदेशी मुद्रा बाजार में लेन-देन को आसान बनाने तथा विदेशी मुद्रा के बाजार को देश में सुव्यवस्थित करने के लिए विदेशी मुद्रा प्रबंधन अधिनियम (फेम) लागू किया गया, तथा उद्योगों को कठोर नियमों से मुक्त किया गया। वैश्वीकरण के कारण भारत के उद्योग, परिवहन, दूरसंचार, प्रौद्योगिकी तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में क्रांतिकारी प्रगति दर्ज की गई। इसी के बल पर भारत को सुदृढ़ अर्थव्यवस्था के रूप में विश्व की चतुर्थ अर्थव्यवस्था बनने का गौरव प्राप्त हुआ। वैश्वीकरण के फलस्वरूप भारत केंद्र अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का क्षेत्र कई गुना बढ़ गया, भारत में बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने पूँजी निवेश किया, पूँजी का अंतर्राष्ट्रीय प्रवाह बन गया, भारत में उदारीकरण, निजीकरण तथा सार्वभौमिकरण का दौर चल निकला। भारत ने वैश्वीकरण को अपनाकर सिद्ध कर दिया, कि वह निकट भविष्य में विकसित राष्ट्रों के क्लब का सदस्य बनने वाला राष्ट्र होगा।

भारतीय जनता पार्टी की सरकार के केंद्र में सत्ता रूढ़ हो जाने तथा कर्मठ और नई सोच के धनी प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र दामोदर दास मोदी के कुशल नेतृत्व में भारत इस लक्ष्य के निकट पहुँचता प्रतीत हो रहा है। सरकार का लक्ष्य देश को डिजिटल बनाने तथा ई० कामर्स को बढ़ावा देने का है, जो भारत को नि:संदेह आधुनिकतम बनाकर विकसित राष्ट्रों की टोली में ले जाकर खड़ा कर देगा।

2. वैश्वीकरण से आपका क्या आशय है? इसका मुख्य लक्ष्य क्या है? भारत को वैश्वीकरण से क्या-क्या लाभ हुए हैं?

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

3. भारत द्वारा एक विकसित राष्ट्र बनने की संभावनाओं की विवेचना कीजिए।

उ०– **भारत के विकसित राष्ट्र बनने की संभावनाएँ–** उपर्युक्त विवेचना करने के पश्चात यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि भारत में एक विकसित राष्ट्र बनने के पथ पर अपने पग तो बढ़ा दिए, परंतु यह ज्ञात होना भी आवश्यक है कि उसमें विकसित राष्ट्र बनने की कौन-कौन सी संभावनाएँ विद्यमान हैं। भारत में एक विकसित राष्ट्र बनने की निम्नलिखित संभावनाएँ विद्यमान हैं–

(i) भारत को प्रकृति ने पर्याप्त उपजाऊ मृदा, वन, जल संसाधन, खनिज तथा ऊर्जा संसाधन, वन्य जीव संसाधन आदि प्राकृतिक संसाधनों के रूप में उपहार स्वरूप प्रदान किए हैं, जिनका वह योजनाबद्ध विदोहन करके नि:संदेह विकसित राष्ट्र बनने की संभावनाओं को साकार रूप प्रदान कर सकता है।

(ii) भारत की जनसंख्या 125 करोड़ हैं, जिसमें पर्याप्त युवा शक्ति और अर्जक जनसंख्या है। भारत अपने इंजीनियरों, डॉक्टरों वैज्ञानिकों तथा तकनीशीयनों की टोली के आधार पर विकसित राष्ट्र बनने की संभावनों को पूर्ण कर सकता है।

(iii) भारत ने कृषि का यंत्रीकरण करके तथा हरित क्रांति अपनाकर कृषि के विकास के द्वार खोल लिए हैं। उसने पशुपालन व्यवसाय को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान कर विकसित राष्ट्र बनने की संभावना जुटा ली है।

(iv) भारत ने कुटीर उद्योगों के विकास से रोजगार के नए अवसर जुटा लिए हैं। उसने लघु तथा वृहद पैमाने के उद्योगों का चरम विकास करके विकसित राष्ट्र बनने की संभावनाएँ बढ़ा ली हैं।

(v) भारत ने शिक्षा, साहित्य, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का उच्च स्तरीय विकास करके एक विकसित राष्ट्र बनने की पूर्ण संभावनाएँ जुटा ली हैं।

(vi) भारत ने आर्थिक उदारीकरण की नीति अपनाकर तथा वैश्वीकरण के माध्यम से अपने बाजारों का अंतर्राष्ट्रीय बाजारों के साथ एकीकरण करके विकसित राष्ट्र बनने की संभावनाएँ जुटा ली हैं।

(vii) भारत ने एशियाई विकास बैंक तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर की महत्वपूर्ण संस्था, विश्व बैंक से ऋण लेकर राष्ट्र के सर्वांगीण विकास के कार्यों में निवेश कर विकसित राष्ट्र बन जाने की पूर्ण संभावना बना ली है।

(viii) भारत ने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में तैयार माल, मशीनों तथा आभूषणों के निर्यात की मात्रा बढ़ाकर पर्याप्त मात्रा में विदेशी मुद्रा अर्जित करके, एक विकसित राष्ट्र बनने की संभावनाओं को जन्म दे दिया है।

भारत ने विकसित राष्ट्र बनने की राह में जो कदम बढ़ाया है, वह उसे शीघ्र ही विकसित राष्ट्रों की अग्रिम पंक्ति में खड़ा करने में सफल सिद्ध होगा। एक विकासशील राष्ट्र के रूप में भारत का वर्तमान गौरवमय है, जो भविष्य में एक विकसित राष्ट्र के रूप में उज्ज्वल होगा। भारत निरंतर आर्थिक क्षेत्र, प्रौद्योगिकी के क्षेत्र, सूचना प्रौद्योगिकी, मिसाइल निर्माण, अणु शक्ति के विकास तथा अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में शक्तिसंपन्न बनता जा रहा है। उसने सेना के लिए नवीनतम अस्त्रों-शस्त्रों, विमानों और जलपोतों का निर्माण कर अपनी सुरक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ बना लिया है, अत: वह दिन दूर नहीं जब समूचा विश्व उसे विकसित राष्ट्र मान लेगा।

4. 'विकासशील राष्ट्र के रूप में भारत', इस संदर्भ में भारत के प्राकृतिक संसाधनों का वर्णन कीजिए।

उ०– **भारत के प्राकृतिक संसाधन–** भारत में प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुरता है, इसी कारण इसे सोने की चिड़िया कहा जाता था। भारत के प्रमुख संसाधनों का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित है–

(i) विशाल क्षेत्रफल को देखते हुए भारत को उपमहाद्वीप की संज्ञा दी जाती है। यह विश्व का सातवाँ सबसे बड़ा राष्ट्र है।

(ii) यद्यपि भारत की जलवायु को 'उष्ण कटिबंधीय जलवायु' कहा जाता है, किंतु इसके विशाल आकार के कारण यहाँ विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न जलवायु पाई जाती हैं।

(iii) उपजाऊ मिट्टियों के कारण भारत में कई प्रकार की खाद्य तथा व्यापारिक फसलें उगाई जाती हैं। यहाँ की जलोढ़ (दोमट), काली, लाल, लैटराइट, मरुस्थलीय तथा पर्वतीय मिट्टियों में गेहूँ, चावल, गन्ना, तिलहन, जूट, कपास, मूंगफली, तंबाकू, सोयाबीन, चाय, रबड़, कहवा, ज्वार, बाजरा तथा फल-सब्जियाँ प्रचुर मात्रा में उगाए जाते हैं।

(iv) भारत में बड़ी तथा सदानीरा नदियों व नहरों का जाल बिछा हुआ है जो कृषि की सिंचाई तथा जल-परिवहन की सुविधाओं से युक्त हैं।

(v) वन संपदा में भारत संपन्न है। इसका लगभग 7,70,000 वर्ग किमी० क्षेत्र वनाच्छादित है। वनों से इमारती व ईंधन-योग्य लकड़ी, अनेक प्रकार की जड़ी-बूटियाँ, उद्योगों के लिए कच्चा माल तथा पशुओं के लिए चारा प्राप्त होता है।

(vi) खनिज संपदा में भी भारत-भूमि संपन्न है। यहाँ कोयला, लोहा, अभ्रक, मैंगनीज, बॉक्साइट, जिप्सम, यूरेनियम, थोरियम के संपन्न भंडार हैं। अल्प मात्रा में खनिज तेल, ताँबा, टिन, सीसा, जस्ता, गंधक तथा निकिल भी उपलब्ध है।

(vii) पशु-धन की दृष्टि से भारत का विश्व में प्रथम स्थान है। पशुओं पर आधारित अनेक उद्योग, जैसे- डेयरी, ऊन, मांस, चमड़ा, शहद और मुर्गी पालन भी भारत में चलाए जाते हैं।

(viii) मानवीय संसाधनों की दृष्टि से विश्व में भारत का दूसरा स्थान है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 121.07 करोड़ थी। यह अपार जन-शक्ति राष्ट्र के विकास कार्यों में तेजी लाने में सक्षम है।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई- 3: मानचित्र कार्य

भारत के मानचित्र में भौगोलिक तथ्यों का अंकन

अभ्यास

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

प्रोजेक्ट कार्य एवं आंतरिक मूल्यांकन (मासिक परीक्षण) (भूगोल)

प्रोजेक्ट- 2

आंतरिक मूल्यांकन (मासिक परीक्षण) हेतु प्रश्न

1. आपदा किसे कहते हैं?

उ०- **आपदा-** प्राणलेवा संकट को सामान्य शब्दों में आपदा कहते हैं। यह संकट या विपत्ति जब प्रकृति के द्वारा उत्पन्न की जाती है, तब उसे प्राकृतिक आपदा कहा जाता है। आपदा या संकट आंग्ल भाषा के शब्द डिसास्टर (Disaster) का हिंदी रूपांतरण है। डिसास्टर अनिष्ट का सूचक है। दूसरे शब्दों में, "आपदा वह अनिष्टकारी दुर्घटना है, जो भारी जन-धन का विनाश करने के कारण अखबारों की सुर्खियाँ बन जाती है।" ऐसी संकटदायक विपत्तियाँ मनुष्यों पशुओं, बस्तियों तथा संस्थानों का विनाश कर देती हैं।

2. वैश्विक तापन का क्या अर्थ है? इसके दो कारण बताइए।

उ०- **वैश्विक तापन-** औद्योगिक विकास, दहन क्रियाओं और वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड गैस की मात्रा बढ़ने से जैवमंडल के ताप में जो निरंतर वृद्धि हो रही है, उसे वैश्विक तापन अथवा ग्लोबल वार्मिंग या भूमंडलीय तापन कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, "वायुमंडल के औसत तापमान में निरंतर वृद्धि होने की प्रक्रिया को, वैश्विक तापन कहा जाता है।" भूमंडलीय तापन की यह समस्या धीरे-धीरे आपदा का रूप धारण करती जा रही है।

वैश्विक तापन के कारण- वैश्विक तापन के दो कारण निम्नलिखित हैं-

(i) वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड गैस की मात्रा में भारी वृद्धि हो जाना।

(ii) वनों का भारी विनाश हो जाना।

3. ओजोन परत में क्षरण से क्या तात्पर्य है?

उ०– **ओजोन क्षरण आपदा–** ओजोन एक ऐसी गैस है, जो ऑक्सीजन के तीन परमाणुओं से बनी है। जबकि साधारण ऑक्सीजन केवल दो परमाणुओं से बनी है। गंधयुक्त हलके नीले रंग की यह गैस वातावरण में बहुत थोड़ी मात्रा (0.02%) में पाई जाती है। वायुमंडल में अवस्थित ओजोन गैस की परत 'पृथ्वी' का रक्षाकवच कही जाती है। ओजोन गैस की यह परत क्षोभमंडल तथा समतापमंडल के बीच पृथ्वी तल से 12 से 35 किमी० की ऊँचाई पर एक झीने से आवरण के रूप में विद्यमान रहती है। ओजोन परत सूर्य की ओर से आने वाली हानिकारक पराबैंगनी किरणों को रोककर उनके दुष्प्रभाव से पृथ्वी को बचाती है। वैश्विक तापन तथा ग्रीन हाउस के प्रभाव से यह परत पतली होती जा रही है। ओजोन परत के पतली होने की क्रिया को, ओजोन परत में क्षरण कहते हैं।

4. ग्रीन हाउस प्रभाव के दुष्प्रभाव तथा इसे रोकने के उपाय लिखिए।

उ०– **ग्रीन हाउस प्रभाव के दुष्प्रभाव–** ग्रीन हाऊस प्रभाव से उत्पन्न संकट एक विश्वव्यापी समस्या है। इसके कारण वायुमंडल में अब तक 36 लाख टन कार्बन डाइऑक्साइड की बढ़ोत्तरी हो चुकी है और वायुमंडल में से 24 लाख टन ऑक्सीजन समाप्त हो चुकी है। ग्रीन हाउस प्रभाव के मानव जीवन पर अन्य दुष्प्रभाव निम्नलिखित हैं–

(i) ग्रीन हाउस के कारण वायुमंडल के तापमान में वृद्धि हो गई है।

(ii) वायुमंडल में तापमान के बढ़ने से वैश्विक तापन की समस्या विकट बन गई है।

(iii) ग्रीन हाउस प्रभाव के कारण पर्यावरण की जलवायु व्यवस्था और जल-चक्र बदल रहा है।

(iv) वायुमंडल में एलनिनों प्रभाव बढ़ जाने से हिमनदों की बर्फ तेजी से पिघलने लगी है।

(v) हिमनद पिघलने से महासागरीय जल का स्तर ऊँचा हो गया है।

(vi) महासागरीय जल का स्तर ऊँचा होने से तटवर्ती क्षेत्रों के जलमग्न होने की समस्या उत्पन्न हो गई है।

ग्रीन हाउस दुष्प्रभावों को नियंत्रित करने के उपाय– ग्रीन हाउस दुष्प्रभावों को नियंत्रित करने के लिए निम्नलिखित उपाय काम में लाए जा सकते हैं–

(i) वायुमंडल में बढ़ रही कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा को कम करना।

(ii) वृक्षारोपण द्वारा हरित पट्टी क्षेत्र को बढ़ाना।

(iii) कारखानों से निकलने वाली घातक तथा विषैली गैसों पर प्रभावी नियंत्रण लगाना।

(iv) जेट वायुयानों से छोड़ी जाने वाली विषैली गैसों पर रोक लगाना।

(v) क्लोरोफ्लोरोकार्बन तथा मोनो ऑक्साइड गैसों को वायुमंडल में मिलने से रोकना।

5. मानवीय आपदाओं के प्रबंधन में आपकी भूमिका की विवेचना कीजिए।

उ०– **मानवीय आपदाओं के प्रबंधन में आपकी भूमिका–** त्रुटि और भूल करना मानव का स्वभाव है। यही मानव आपदाओं को जन्म देने का मुख्य कारण है, क्योंकि कहा जाता है, "सावधानी हटी, दुर्घटना घटी।" न तो गलती कीजिए और न आपदा को बुलाइए। किसी की भी सामान्य-सी भूल आपदाओं को आमंत्रित कर सकती है। अत: इस कार्य में प्रत्येक को एक सक्रिय भूमिका निभानी होगी। मैं इस आपदा प्रबंधन के कार्य में अपनी भूमिका निम्नवत् निभा सकता/सकती हूँ।

(i) मैं प्रत्येक कार्य में सावधानी रखकर आपदाओं को पनपने का अवसर ही नहीं दूँगा/दूँगी।

(ii) विद्युत उपकरणों के प्रयोग, मोमबत्ती तथा दीपक आदि जलाने में विशेष सावधानी रखूँगा/रखूँगी।

(iii) आतिशबाजी, पटाखे तथा फुलझड़ियाँ बड़ी सावधानीपूर्वक प्रौढ़ सदस्यों की देखरेख में चलाऊँगा/चलाऊँगी।

(iv) सड़कों, चौराहों तथा रेलवे फाटकों को पार करते हुए विशेष सावधानी रखूँगा/रखूँगी।

(v) यातायात के नियमों का सावधानीपूर्वक पालन करूँगा/करूँगी।

(vi) जैविक ईंधन के जलाने में विशेष सावधानी रखूँगा/रखूँगी तथा अन्य लोगों को भी सावधान करूँगा/करूँगी।

(vii) तेजाब आदि पदार्थों के प्रयोग में पूरी सावधानी रखूँगा/रखूँगी।

(viii) ग्रीन हाउस प्रभाव को कम करने के लिए शीतलन उपकरणों का प्रयोग कम से कम करूँगा/करूँगी।

(ix) वृक्षारोपण की ओर विशेष ध्यान दूँगा/दूँगी।

(x) अपने घर, नगर तथा विद्यालय को आपदाओं से मुक्त बनाने का अभियान चलाऊँगा/चलाऊँगी।

(xi) अग्निकांड, सड़क दुर्घटना, रासायनिक विस्फोट तथा अन्य मानवीय आपदाएँ घटित होने पर अपने स्काउट दल के साथ राहत तथा बचाव कार्यों में सक्रिय सहयोग दूँगा/दूँगी।

(xii) नगर के चौराहों तथा विद्यालय के प्रांगण में आपदाओं से सुरक्षा तथा बचाव के उपाय लिखवाकर बड़े-बड़े होर्डिंग्स लगवाऊँगा/लगवाऊँगी।

(xiii) आपदा घटित हो जाने पर मैं स्थानीय प्रशासन तथा जिला प्रशासन को सूचित कर सहायता पाने का भरसक प्रयास करूँगा/करूँगी।

(xiv) नगर तथा मुहल्लों में आपदा प्रबंधन एवं निवारण समितियों का गठन कराऊँगा/कराऊँगी।

प्रोजेक्ट कार्य एवं आंतरिक मूल्यांकन (मासिक परीक्षण) (भूगोल)

प्रोजेक्ट– 2

आंतरिक मूल्यांकन (मासिक परीक्षण) हेतु प्रश्न

1. भारत में उगाई जाने वाली खाद्यान्न फ़सलों के नाम लिखिए।

उ०– भारत में अनेक खद्यान्न फसलें उगाईं जातीं हैं। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण खद्यान्न फसलें निम्नलिखित हैं–
गेहूँ, चावल, जौ, मक्का, बाजरा, ज्वार, चना आदि।

2. भारत में गेहूँ की खेती कब की जाती है तथा उसके उत्पादक राज्यों के नाम लिखिए।

उ०– भारत में गेहूँ की खेती शीत ऋतु (बुवाई दिसंबर व जनवरी एवं कटाई अप्रैल) में की जाती है। भारत में गेहूँ उत्पादक राज्य निम्नलिखित हैं–

उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब, मध्यप्रदेश, बिहार, झारखंड, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़ तथा उत्तराखंड आदि उल्लेखनीय हैं।

3. चावल की खेती के लिए मिट्टी कैसी होनी चाहिए?

उ०– चावल की खेती के लिए चिकनी (चिकायुक्त) जलोढ़ उपजाऊ मिट्टी जिसमें जल धारण की क्षमता अधिक होती है, सबसे उपयुक्त होती है।

4. बाजरा के उत्पादन के लिए क्या भौगोलिक दशाएँ होनी चाहिए?

उ०– बाजरा के उत्पादन के लिए शुष्क जलवायु प्रदेश, 25° से 30° सेल्सियस तापमान, लगभग 45° सेमी० वर्षा तथा उपजाऊ मिट्टी आदि भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता होती है।

5. ज्वार की फसल के लिए क्या दशाएँ हानिकारक होती हैं?

उ०– ज्वार की फसल के लिए अत्यधिक वर्षा या लंबी अवधि तक सूखा पड़ना दोनों ही स्थिति इसके लिए हानिकारक होती है।

इकाई-1 (क) : अर्थव्यवस्था की समस्याएँ

47 उत्पादन और उपभोक्ता में संबंध
(वस्तु-विनिमय, क्रय-विक्रय, विनिमय बाजार)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 468 व 469 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 469 व 470 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. विनिमय की परिभाषा दीजिए तथा उसके लक्षण या विशेषताएँ बताइए।

उ०– **विनिमय–** दो पक्षों के मध्य वस्तुओं और सेवाओं के एच्छिक आदान-प्रदान की प्रणाली को विनिमय कहते हैं। दूसरे शब्दों में, अर्थशास्त्र में प्रत्येक वस्तु धन है, जो सीमित, उपयोगी और विधिवत गृाहय है। धन का पारस्परिक एच्छिक और वैधानिक लेन-देन ही विनिमय के नाम से जाना जाता है।

विनिमय के लक्षण या विशेषताएँ– विनिमय में निम्नलिखित लक्षण या विशेषताएँ पाई जाती हैं–

(i) दो पक्ष– विनिमय की क्रिया में दो पक्षों का होना अनिवार्य है।

(ii) हस्तांतरण– विनिमय में वस्तु, सेवा या धन का परस्पर हस्तांतरण होता है।

(iii) वैधानिकता– विनिमय में वस्तु या धन का वैधानिक हस्तांतरण होता है।

(iv) ऐच्छिक– विनिमय में वस्तुओं, सेवाओं और धन का हस्तांतरण स्वेच्छापूर्वक होता है।

2. वस्तु-विनिमय को उदाहरण सहित समझाइए।

उ०– **वस्तु-विनिमय-** वस्तुओं का स्वैच्छिक एवं पारस्परिक आदान-प्रदान को वस्तु-विनिमय कहते हें। प्रो0 जेवेन्स के शब्दों में, **''कम आवश्यक वस्तुओं से अधिक आवश्यक वस्तुओं का आदान-प्रदान वस्तु-विनिमय कहलाता है।''** वस्तु-विनिमय में दो पक्ष कम उपयोगी वस्तु देकर अधिक उपयोगी वस्तु प्राप्त करते हैं।

उदाहरण के लिए मोहन के पास 5 कुंतल गेहूँ हैं, जबकि उसका खर्च 3 कुंतल ही है। 2 कुंतल गेहूँ उसके लिए कम उपयोगी तथा अतिरिक्त हैं। श्याम के पास 5 कुंतल चावल हैं, जबकि उसका खर्च 3 कुंतल का है। मोहन कम उपयोगी 2 कुंतल गेहूँ देकर श्याम से चावल लेता है, जबकि श्याम कम उपयोगी चावल देकर गेहूँ प्राप्त करता है। इस प्रकार मोहन को अधिक उपयोगी चावल तथा श्याम को अधिक उपयोगी गेहूँ मिलने से दोनों ही पक्ष लाभांवित हो जाते हैं।

3. वस्तु-विनिमय तथा मुद्रा विनिमय (क्रय-विक्रय) प्रणाली को स्पष्ट कीजिए।

उ०– **वस्तु-विनिमय-** इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या– 2 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

मुद्रा-विनिमय- वस्तुओं और सेवाओं का लेन-देन द्रव्य या मुद्रा के माध्यम से होने की व्यवस्था को मुद्रा-विनिमय या क्रय-विक्रय प्रणाली कहते हैं।

4. वस्तु-विनिमय तथा क्रय-विक्रय प्रणाली के अंतर को समझाइए।

उ०– **विनिमय की शर्तें–** विनिमय को संभव करने वाली शर्तें या दशाएँ निम्नलिखित हैं–

(i) दो पक्ष– विनिमय में दो पक्ष, लेने वाला और देने वाला होना आवश्यक है।

(ii) तत्परता– दोनों पक्ष वस्तु या सेवाएँ लेने और देने के लिए तत्पर अर्थात इच्छुक होने चाहिए।

(iii) **दो वस्तुएँ–** विनिमय में कम से कम दो वस्तुएँ अवश्य होनी चाहिए अन्यथा यह प्रक्रिया संभव नहीं है।

(iv) **लाभ–** विनिमय में दोनों पक्षों को लाभ होना आवश्यक है अन्यथा वस्तुओं का लेन-देन संभव नहीं होगा।

5. वस्तु-विनिमय की आवश्यक शर्तों को लिखिए।

उ०– वस्तु-विनिमय प्रणाली में दो पक्षों के मध्य एक वस्तु का लेन-देन दूसरी वस्तु से होता है जबकि क्रय-विक्रय प्रणाली में वस्तुओं का लेन-देन मुद्रा के माध्यम से होता है।

6. वस्तु-विनिमय प्रणाली की कठिनाइयों का वर्णन कीजिए।

उ०– **वस्तु-विनिमय प्रणाली की निम्नलिखित कठिनाइयाँ हैं–**

(i) वस्तु-विनिमय प्रणाली दो पक्षों के संयोग से संभव हो पाती थी। मनुष्य ऐसे व्यक्ति की खोज में घूमता रहता था, जो उसकी वस्तु लेकर, उसे दूसरी उपयोगी वस्तु देने को तैयार हो जाए।

(ii) वस्तु-विनिमय प्रणाली में वस्तुओं के मूल्य के मापन की समस्या थी। एक वस्तु का मूल्य दूसरी वस्तु के सापेक्ष निश्चित करने में बड़ी कठिनाई होती थी।

(iii) वस्तु-विनिमय में वस्तुओं के विभाजन में कठिनाई आती थी। उदाहरण के लिए एक गाय का मूल्य ढाई बकरियों के बराबर था, तब आधी बकरी देना संभव नहीं होता था।

(iv) वस्तु-विनिमय प्रणाली में नाशवान वस्तुओं को अधिक समय तक सुरक्षित रखना संभव नहीं था। उनके मूल्य भी उनकी उपयोगिता के आधार पर निश्चित होते थे।

(v) वस्तु-विनिमय प्रणाली में भूमि, भवन तथा भारी वस्तुओं के हस्तांतरण में श्रम और समय का अपव्यय होता था।

(vi) वस्तु-विनिमय प्रणाली में वस्तुओं के मूल्य परिवर्तनशील होते थे। अत: मूल्य-मापन के अभाव में उधार लेना-देना भी संभव नहीं था। यदि व्यक्ति के पास कम उपयोगी वस्तु नहीं है, तब वह अधिक उपयोगी वस्तु पाने के लिए तरसता रहता था।

7. वस्तु-विनिमय प्रणाली की कठिनाइयों को मुद्रा के चलन से किस प्रकार दूर किया गया?

उ०– **मुद्रा के प्रचलन से वस्तु-विनिमय की कठिनाइयों का निवारण–** 'आवश्यकता आविष्कार की जननी है।' वस्तु-विनिमय की कठिनाइयों से छुटकारा पाने के लिए मानव ने मुद्रा की खोज कर डाली। मुद्रा या द्रव्य, भुगतान का माध्यम बनकर जनकल्याण में लग गया। द्रव्य के प्रचलन से अप्रत्यक्ष विनिमय (क्रय-विक्रय) का जन्म हुआ। द्रव्य एक ऐसा अवतार बनकर उदित हुआ, जिसने वस्तु-विनिमय की समस्त कठिनाईयों का अंत कर दिया। हेन्सन के शब्दों में, "मुद्रा का जन्म वस्तु-विनिमय की कठिनाइयों से संबंधित है।" निम्न विवरण के अनुसार मुद्रा प्रचलन से वस्तु-विनिमय की समस्त कठिनाइयों का निवारण हो गया है–

(i) द्रव्य के प्रचलन ने वस्तु-विनिमय के दोहरे संयोग ढूँढ़ने की समस्या को हल कर डाला।

(ii) द्रव्य वस्तुओं के मूल्य का मापन करने में सक्षम है। अत: मूल्य-मापन की समस्या जड़ से समाप्त हो गई।

(iii) द्रव्य ने वस्तुओं के विभाजन की समस्या का भी सुगम हल खोज निकाला। द्रव्य के माध्यम से चाहे जितनी वस्तुएँ खरीदी या बेची जा सकती हैं।

(iv) द्रव्य के प्रचलन ने मुद्रा संग्रह की समस्या को हल कर दिया। व्यक्ति अतिरिक्त तथा शीघ्र नष्ट होने वाली वस्तुओं को तुरंत बेचकर द्रव्य प्राप्त कर सकता है तथा आवश्यकता पड़ने पर द्रव्य के माध्यम से उपयोगी वस्तुएँ खरीद सकता है।

(v) द्रव्य के प्रचलन से उधार लेकर, बाद में मूल्य चुकाना भी सुगम हो गया।

(vi) द्रव्य के प्रचलन से वस्तुओं के हस्तांतरण की समस्या भी हल हो गई है। इसके माध्यम से चल तथा अचल संपत्ति को आसानी से खरीदा-बेचा जा सकता है।

8. विनिमय के चार लाभों पर प्रकाश डालिए।

उ०– विनिमय के चार लाभ निम्नलिखित हैं–

(i) वस्तु-विनिमय प्रणाली में वस्तुओं का प्रत्यक्ष लेन-देन होने से समाज में परस्पर प्रेम आरे सहयोग बढ़ता है।

(ii) विनिमय प्रणाली अनपढ़ व्यक्ति के लिए भी उपयोगी वस्तु प्राप्त करने का सरल माध्यम है।

(iii) वस्तु-विनिमय प्रणाली पूँजीवाद के दोषों से मुक्त समाज कल्याण का पथ तैयार करती है।

(iv) वस्तु-विनिमय प्रणाली में व्यक्ति कम उपयोगी वस्तु देकर, अधिक उपयोगी वस्तु प्राप्त कर लेता है।

9. बाजार क्या होता है? बाजार की चार आवश्यक विशेषताएँ व तत्व लिखिए।

उ०– बाजार उस स्थान को कहते हैं, जहाँ वस्तु की माँग करने वाले क्रेता तथा उसे बेचने के लिए प्रस्तुत करने वाले विक्रेता रहते हैं।

बाजार के तत्व अथवा विशेषताएँ (लक्षण)– बाजार की चार विशेषताएँ व तत्व निम्नलिखित हैं–

(i) क्षेत्र– बाजार का एक विशेष क्षेत्र होता है, जिसमें वस्तुओं और सेवाओं के क्रेता और विक्रेता फैले होते हैं तथा क्रय-विक्रय करते हैं।

(ii) एक वस्तु– वस्तु की उपस्थिति बाजार का आधार है। बाजार में उपस्थित वस्तु का ही क्रय-विक्रय होता है। सामान्य रूप से एक ही बाजार में अनेक वस्तुएँ खरीदी बेची जाती हैं, परंतु अर्थशास्त्र की भाषा में प्रत्येक वस्तु का अलग बाजार होता है; जैसे– सर्राफा बाजार, किराना बाजार, कपड़ा बाजार, गुड़ मंडी तथा आनाज मंडी।

(iii) क्रेता तथा विक्रेता– क्रेता तथा विक्रेता बाजार के आवश्यक तत्व हैं। इन्हीं के क्रय-विक्रय से बाजार मुखर होता है।

(iv) स्वतंत्र प्रतियोगिता– बाजार का एक प्रमुख लक्षण क्रेता-विक्रेता में स्वतंत्र एवं पूर्ण प्रतियोगिता होना है। स्वतंत्र प्रतियोगिता द्वारा ही बाजार में वस्तु का मूल्य एकसमान पाया जाता है।

10. पूर्ण तथा अपूर्ण बाजार को परिभाषित कीजिए।

उ०– **(i) पूर्ण प्रतियोगिता बाजार–** जिस बाजार में क्रेता और विक्रेता बड़ी संख्या में विद्यमान होते हैं, उन्हें बाजार का पूर्ण ज्ञान होने के कारण उनमें परस्पर स्वतंत्र एवं पूर्ण प्रतियोगिता पाई जाती है। इस बाजार में सामान्य मूल्य एक समान पाया जाता है। इसे ही पूर्ण प्रतियोगिता बाजार कहा जाता है।

प्रो० वेन्हम ने पूर्ण प्रतियोगिता बाजार को इन शब्दों में परिभाषित किया है, **"किसी वस्तु का बाजार उस समय पूर्ण होता है, जबकि क्रेता और विक्रेता को इस बात का ज्ञान होता है कि वस्तु के सौदे किस मूल्य पर किए जा रहे हैं।"**

(ii) अपूर्ण प्रतियोगिता बाजार– जिस बाजार में क्रेताओं और विक्रेताओं की संख्या अपेक्षाकृत कम होती है तथा उनमें पूर्ण प्रतियोगिता का अभाव पाया जाता है, अपूर्ण प्रतियोगिता बाजार कहलाता है। इस बाजार में वस्तुओं का मूल्य एक समय में अलग-अलग रहता है। प्रो० लर्नर ने अपूर्ण प्रतियोगिता को इन शब्दों में परिभाषित किया है, **"अपूर्ण प्रतियोगिता तब पाई जाती है, जबकि एक विक्रेता अपनी वस्तु के लिए गिरती हुई माँग रेखा का सामना करता है।"**

11. निम्नांकित तालिका का अध्ययन कीजिए और संबंधित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(क) वस्तु का मूल्य बढ़ने पर माँग और पूर्ति पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

(ख) मूल्य का निर्धारण किस बिंदु पर होगा?

मूल्य प्रति किग्रा (रुपयों में)	वस्तु की माँग (किग्रा में)	वस्तु की पूर्ति (किग्रा में)
38	1200	2400
35	1500	2100
33	1800	1800
30	2100	1500
27	2400	1200

उ०– (क) प्रश्न में दी गई तालिका से स्पष्ट है कि वस्तु का मूल्य बढ़ने पर वस्तु की माँग घट जाती है और पूर्ति बढ़ जाती है।

(ख) वस्तु के मूल्य का निर्धारण उस बिन्दू पर होता है, जहाँ वस्तु पूर्ति उसकी माँग के बराबर होती है। दी गई तालिका में 30 रूपए प्रति किग्रा० पर वस्तु की माँग 1800 किग्रा० तथा पूर्ति भी 1800 किग्रा० है। अत: इसी बिन्दु पर मूल्य का निर्धारण होगा।

12. निम्नांकित तालिका का अध्ययन कीजिए और संबंधित प्रश्नों के उत्तर लिखिए–

(क) वस्तु के मूल्य बढ़ने पर माँग व पूर्ति की मात्रा पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

(ख) मूल्य का निर्धारण किस बिंदु पर होगा?

वस्तु की माँग (किग्रा में)	वस्तु का मूल्य (रुपयों में)	वस्तु की पूर्ति (किग्रा में)
100	10	1200
600	8	1000
800	6	800
1000	4	600
1200	2	400

उ०– (क) दी गई तालिका से स्पष्ट है कि वस्तु का मूल्य बढ़ने पर वस्तु की माँग घटती है जबकि वस्तु की पूर्ति बढ़ेगी।

(ख) 6 रूपए प्रति किग्रा० पर वस्तु की माँग 800 किग्रा० तथा पूर्ति भी 800 किग्रा० है। अत: इसी बिन्दू पर वस्तु का मूल्य निर्धारित होगा।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. विनिमय का अर्थ बताइए। इसकी प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।

उ०– **विनिमय का अर्थ–** पाषाण युग में आदिमानव की आवश्यकताएँ बहुत सीमित थीं। तब वह स्वयं उत्पादक और स्वयं ही उपभोक्ता था। जनसमूह बढ़ने के साथ-साथ मानव की आवश्यकताएँ भी बढ़ती गईं। सभ्यता के पग जैसे-जैसे बढ़े, आवश्यकताएँ उनके साथ दोगुनी और चार गुनी हो गई। बढ़ती आवश्यकताओं के कारण मानव को ऐसे माध्यम खोजने पड़े, जो उसे उसकी आवश्यकता की वस्तुएँ दे तथा बदले में उससे अतिरिक्त वस्तुएँ प्राप्त कर ले। बस इसी प्रवृत्ति ने वस्तुओं के अदल-बदल की प्रणाली को जन्म दे दिया। इस प्रणाली को अर्थशास्त्रियों ने वस्तु-विनिमय का नाम दिया। दूसरे शब्दों में, दो पक्षों के मध्य वस्तुओं और सेवाओं के ऐच्छिक अदल-बदल की प्रणाली विनिमय के नाम से प्रसिद्ध हो गई।

विनिमय की परिभाषाएँ– विनिमय का सही अर्थ जानने के लिए विभिन्न अर्थशास्त्रियों द्वारा प्रस्तुत की गई उनकी परिभाषाओं के अध्ययन की आवश्यकता है–

"हम एक-दूसरे के पक्ष में स्वामित्व के दो ऐच्छिक हस्तांतरण विनिमय के रूप में परिभाषित कर सकते हैं।"

–ए० ई० बाघ

"दो पक्षों के मध्य होने वाले ऐच्छिक, वैधानिक एवं पारस्परिक हस्तांतरण को विनिमय कहते हैं।" **–प्रो० मार्शल**

मार्शल ने विनिमय की उचित परिभाषा दी है, अर्थशास्त्र में प्रत्येक वह वस्तु धन है, जो सीमित, उपयोगी और विधिवत ग्राह्य है। धन का पारस्परिक ऐच्छिक और वैधानिक लेन-देन ही विनिमय के नाम से जाना जाता है।

विनिमय के प्रकार– विनिमय के निम्नलिखित दो रूप या प्रकार पाए जाते हैं–

(i) प्रत्यक्ष विनिमय– प्रत्यक्ष विनिमय को वस्तु-विनिमय कहा जाता है। एक वस्तु के बदले में दूसरी वस्तु लेना, वस्तु विनिमय कहलाता है। वस्तुओं के स्वैच्छिक एवं पारस्परिक आदान-प्रदान को वस्तु-विनिमय कहते हैं। प्रो० जेवेन्स के शब्दों में, "कम आवश्यक वस्तुओं से अधिक आवश्यक वस्तुओं की अदल-बदल को वस्तु-विनिमय कहा जाता है।" वस्तु-विनिमय में दो पक्ष कम उपयोगी वस्तु देकर अधिक उपयोगी वस्तु प्राप्त करते हैं। प्राचीनकाल में अधिकांशत: क्षेत्रों में प्रत्यक्ष विनिमय ही प्रचलित था।

(ii) अप्रत्यक्ष विनिमय– विनिमय की यह व्यवस्था क्रय-विक्रय के नाम से जानी जाती है। इस व्यवस्था में वस्तुओं और सेवाओं का लेन-देन द्रव्य के माध्यम से होता है। द्रव्य देकर वस्तु प्राप्त करना **क्रय** तथा द्रव्य लेकर वस्तु देना **विक्रय** कहलाता है। अर्थात् द्रव्य के माध्यम से होने वाला क्रय-विक्रय अप्रत्यक्ष विनिमय कहलाता है।

वर्तमान समय में द्रव्य के चलन ने प्रत्यक्ष विनिमय के स्थान पर अप्रत्यक्ष (क्रय-विक्रय) विनिमय को प्रचलन में ला दिया है।

विनिमय के लक्षण या विशेषताएँ– विनिमय में निम्नलिखित लक्षण या विशेषताएँ पाई जाती हैं–

(i) **दो पक्ष–** विनिमय की क्रिया में दो पक्षों का होना अनिवार्य है।

(ii) **हस्तांतरण–** विनिमय में वस्तु, सेवा या धन का परस्पर हस्तांतरण होता है।

(iii) **वैधानिकता–** विनिमय में वस्तु या धन का वैधानिक हस्तांतरण होता है।

(iv) **ऐच्छिक–** विनिमय में वस्तुओं, सेवाओं और धन का हस्तांतरण स्वेच्छापूर्वक होता है।

2. वस्तु-विनिमय (प्रत्यक्ष विनिमय) प्रणाली क्या है? इसके प्रमुख लाभ (गुण) लिखिए।

उ०– **अप्रत्यक्ष विनिमय**- इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 का अवलोकन कीजिए।

वस्तु-विनिमय प्रणाली के गुण– वस्तु-विनिमय प्रणाली निम्नलिखित गुणों के कारण प्राचीनकाल में दीर्घकाल तक प्रचलित रही–

(i) **सरसता–** वस्तु-विनिमय प्रणाली अनपढ़ व्यक्ति के लिए भी उपयोगी वस्तु प्राप्त करने का सरल माध्यम है।

(ii) **पारस्परिक सहयोग–** वस्तु विनिमय प्रणाली में वस्तुओं का प्रत्यक्ष लेन-देन होने से समाज में परस्पर प्रेम और सहयोग बढ़ता है।

(iii) **धन का विकेंद्रीकरण–** वस्तुओं के नष्ट होने के भय के कारण वस्तुओं का संग्रहण नहीं होता। मुद्रा के अभाव में वस्तु ही धन का कार्य करती है। अत: धन का विकेंद्रीकरण हो जाता है।

(iv) **पूँजी संचय–** वस्तु-विनिमय प्रणाली पूँजीवाद के दोषों से मुक्त समाज कल्याण का पथ तैयार करती है।

(v) **मौद्रिक पद्धति के दोषों से मुक्त–** वस्तु-विनिमय प्रणाली में महँगाई तथा मंदी के दोषों से सदैव सुरक्षा बनी रहती है, जबकि मौद्रिक पद्धति में मुद्रा प्रसार व मुद्रा संकुचन होता रहता है।

(vi) **अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के अनुकूल–** अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में वस्तु देकर वस्तु प्राप्त करना एक सरल और सुगम उपाय है, जबकि विभिन्न देशों की मुद्राओं में भिन्नता के कारण भुगतान की समस्या बनी रहती है।

(vii) **द्विपक्षीय लाभ–** वस्तु-विनिमय प्रणाली में व्यक्ति कम उपयोगी वस्तु देकर, अधिक उपयोगी वस्तु प्राप्त कर लेता है। अत: यह प्रणाली दोनों पक्षों के लिए लाभकारी सिद्ध होती है।

उदाहरण के लिए मोहन के पास 5 कुंतल गेहूँ हैं, जबकि उसका खर्च 3 कुंतल ही है। 2 कुंतल गेहूँ उसके लिए कम उपयोगी तथा अतिरिक्त हैं। श्याम के पास 5 कुंतल चावल हैं, जबकि उसका खर्च 3 कुंतल का है। मोहन कम उपयोगी 2 कुंतल गेहूँ देकर श्याम से चावल लेता है, जबकि श्याम कम उपयोगी चावल देकर गेहूँ प्राप्त करता है। इस प्रकार मोहन को अधिक उपयोगी चावल तथा श्याम को अधिक उपयोगी गेहूँ मिलने से दोनों ही पक्ष लाभांवित हो जाते हैं।

3. वस्तु-विनिमय की प्रमुख कठिनाइयों का वर्णन कीजिए।

उ०– वस्तु-विनिमय के दोष या कठिनाइयाँ (Demerits or Difficulties of Barter)- इस प्रणाली की प्रमुख कठिनाइयाँ अथवा दोष निम्न हैं–

(i) **आवश्यकताओं के दोहरे संयोग का अभाव–** वस्तु-विनिमय प्रणाली के अंतर्गत प्रत्येक व्यक्ति को अपनी फालतू वस्तु को बेचने के लिए किसी ऐसे व्यक्ति की खोज करनी पड़ती है जो उसकी फालतू वस्तु को लेकर उसे इच्छित वस्तु दे सके। उदाहरणार्थ, यदि संजीव के पास चावल हैं ओर वह उनके बदले कंबल चाहता है तो उसे ऐसे व्यक्ति की खोज करनी पड़ेगी जो उससे चावल लेकर उसे कंबल दे सके। संभव है उसे कंबल देने वाला व्यक्ति मिल जाए, किन्तु वह बदले में गेहूँ चाहता हो। अत: आवश्यकताओं का यह दोहरा संयोग प्राय: अत्यंत कठिन होता था, और जैसे-जैसे मानवीय आवश्यकताओं में वृद्धि होती गई वैसे-वैसे यह कठिनाई अधिकाधिक अनुभव की जाने लगी।

(ii) **वस्तुओं की अविभाज्यता–** विनिमय की जाने वस्तुओं में कुछ वस्तुएँ ऐसी होती हैं जिन्हें छोटी-छोटी इकाइयों में बाँटना संभव नहीं होता और यदि उनका विभाजन कर दिया जाए तो उनकी उपयोगिता कम या समाप्त हो जाती है। उदाहरणार्थ, यदि गोपाल के पास भैंस है जिसके बदले वह गेहूँ, कपड़ा व जूता लेना चाहता है, तो उसके लिए यह अत्यंत कठिन होगा कि वह किसी ऐसे व्यक्ति को ढूँढ़ निकाले जो उसकी भैंस के बदले उसे गेहूँ, कपड़ा व जूता प्रदान

कर सके। यदि भैंस के टुकड़े करके विभिन्न व्यक्तियों से तीनों वस्तुएँ प्राप्त की जाएँ तो भैंस की उपयोगिता ही समाप्त हो जाएगी।

(iii) सामान्य मूल्य-मापक का अभाव– वस्तु-विनिमय प्रणाली में कोई ऐसा सर्वमान्य मापदंड नहीं होता जिसकी सहायता से वस्तुओं के मूल्य के अनुपातों को निर्धारित किया जा सके, अर्थात् कोई ऐसा मापदंड नहीं होता जिसके द्वारा यह तय किया जा सके कि एक वस्तु के बदले में अन्य वस्तु या वस्तुओं अथवा सेवाओं की कितनी मात्रा ली या दी जाएगी। उदाहणार्थ, यह तय करना कठिन होता है कि कितने गेहूँ के बदले कितना कपड़ा दिया जाएगा।

(iv) मूल्य संचय का अभाव– आजकल तो मुद्रा के रूप में 'क्रय-शक्ति' या धन का संचय कर लिया जाता है किन्तु वस्तु-विनिमय व्यवस्था में धन का संचय केवल वस्तुओं के रूप में ही संभव होता है। इस संबंध में कई **कठिनाइयाँ** सामने आती हैं- (i) वस्तुओं के नाशवान होने के कारण उन्हें दीर्घकाल तक संचित करके सुरक्षित नहीं रखा जा सकता। (ii) वस्तुओं को रखने के लिए काफी स्थान की आवश्यकता पड़ती है। (iii) धन के संचय के अभाव में पूँजी-निर्माण (Capital formation) नहीं हो पाता जिस कारण देश का आर्थिक विकास नहीं किया जा सकता।

(v) मूल्य-हस्तांतरण की समस्या– वस्तु-विनिमय प्रणाली में अचल-संपत्तियों के मूल्य के हस्तांतरण में बहुत अधिक कठिनाई आती है। जब कोई व्यक्ति एक स्थान को छोड़कर किसी दूसरे स्थान पर जाकर बसना चाहता है तो उसे अपनी अचल संपत्ति को छोड़कर ही जाना पड़ता है, क्योंकि उसे अपनी भूमि, मकान, दुकान आदि के बदले में समुचित मात्रा में उपयोगी वस्तुएँ प्राप्त करना अत्यंत कठिन होता है।

(vi) स्थगित भुगतानों संबंधी कठिनाई– 'स्थगित भुगतान' से अभिप्राय है वस्तुओं एवं सेवाओं का भुगतान वर्तमान में न करके भविष्य में करना अर्थात् वस्तुओं व सेवाओं का उधार लेन-देन करना। वस्तु-विनिमय प्रणाली में उधार लेन-देन संभव नहीं होता। उधार (ऋण) वस्तुओं के रूप में लिया जाएगा और वस्तुओं के रूप में ही उसका भुगतान करना होगा किन्तु वस्तुओं के मूल्य में स्थिरता तथा टिकाऊपन के गुण नहीं होते जिस कारण वे स्थगित भुगतानों के लिए उपयोगी नहीं होतीं।

(vii) सेवाओं के विनिमय में कठिनाई– नाई, अध्यापक, डॉक्टर आदि की सेवाओं का परस्पर विनिमय किस आधार पर किया जाए, यह तय करना लगभग असंभव होता है।

4. 'बाजार' शब्द का अर्थशास्त्र में क्या अर्थ है? इसके आवश्यक तत्व कौन-कौन से हैं?

उ०– **अर्थशास्त्र में 'बाजार' का अर्थ–** अर्थशास्त्र में 'बाजार' शब्द का प्रयोग अत्यंत व्यापक अर्थ में किया जाता है। अर्थशास्त्र में 'बाजार' से अभिप्राय किसी स्थान-विशेष से नहीं होता बल्कि ऐसे संपूर्ण क्षेत्र से होता है जहाँ किसी वस्तु के क्रेता तथा विक्रेता फैले होते हैं तथा उनके मध्य इस प्रकार का संपर्क पाया जाता है जिससे उस क्षेत्र में उस वस्तु की कीमत में समान होने की प्रवृत्ति पाई जाती है।

इस प्रकार अर्थशास्त्रियों की दृष्टि में बाजार के लिए क्रेताओं तथा विक्रेताओं का भौतिक रूप में किसी स्थान पर उपस्थित होना अनिवार्य नहीं होता। वस्तुओं का क्रय-विक्रय तो डाक, तार, टेलीफोन, फैक्स, इंटरनेट आदि के द्वारा भी किया जा सकता है।

बाजार के तत्व या विशेषताएँ– बाजार की निम्न विशेषताएँ प्रकट होती हैं–

(i) क्षेत्र– अर्थशास्त्र में बाजार से अभिप्राय किसी स्थान से नहीं लिया जाता जहाँ पर क्रेता तथा विक्रेता एकत्रित होते हैं, बल्कि उस समस्त क्षेत्र को बाजार कहा जाता है जिसमें किसी वस्तु के क्रेता या विक्रेता फैले होते हैं। यह क्षेत्र एक शहर, जिला, राज्य, राष्ट्र या समस्त विश्व हो सकता है।

(ii) क्रेता या विक्रेता– किसी बाजार में क्रेता-विक्रेता दोनों ही होने चाहिए। किसी वस्तु का क्रय-विक्रय तभी संभव है जबकि उसके खरीदने वाले तथा बेचने वाले व्यक्ति हों। अत: क्रेता या विक्रेता दोनों बाजार के अनिवार्य तत्व हैं।

(iii) एक वस्तु– व्यवहार में तो हम एक ही स्थान से अनेक प्रकार की वस्तुएँ खरीद लेते हैं किंतु अर्थशास्त्र में प्रत्येक वस्तु का बाजार पृथक् होता है। जैसे- चीनी का बाजार, गेहूँ का बाजार इत्यादि। इस प्रकार जितनी वस्तुएँ होती हें अर्थशास्त्र मे ंउनके उतने ही बाजार होते हैं।

(iv) स्वतंत्र तथा पूर्ण प्रतियोगिता– किसी बाजार में क्रेता या विक्रेता के बीच स्वतंत्र प्रतियोगिता होनी चाहिए। जबकि क्रेता वस्तु को कम से कम कीमत पर खरीदने का प्रयत्न करते हैं, तब विक्रेता वस्तु को अधिक से अधिक कीमत पर बेचने का प्रयत्न करते हैं, अर्थात् क्रेताओं तथा विक्रेताओं पर सौदा करने संबंधी कोई प्रतिबंध नहीं होना चाहिए।

(v) एक कीमत– क्रेताओं तथा विक्रेताओं के मध्य स्वतंत्र प्रतियोगिता के परिणामस्वरूप समस्त बाजार में किसी वस्तु की कीमत में समान होने की प्रवृत्ति पाई जाती है। यदि बाजार के विभिन्न स्थानों में वस्तु की कीमत अलग-अलग होगी, तो माँग व पूर्ति की स्वतंत्र क्रियाशीलता के कारण शीघ्र ही समूचे बाजार में कीमत समान हो जाएगी।

(vi) बाजार का पूर्ण ज्ञान होना– वस्तु की कीमत बाजार में एकसमान रहे इसके लिए क्रेताओं तथा विक्रेताओं को बाजार का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।

5. किसी वस्तु के मूल्य निर्धारण में माँग और पूर्ति की भूमिका स्पष्ट कीजिए।

उ०– वस्तु का मूल्य निर्धारण– वस्तु के मूल्य निर्धारण के संबंध में अर्थशास्त्रियों ने निम्नलिखित विचार व्यक्त किए हैं–

(i) एडम स्मिथ और रिकार्डो ने उत्पादन व्यय को मूल्य निर्धारण का मुख्य घटक माना है।

(ii) जेवन्स और वालरस ने सीमांत उपयोगिता को मूल्य निर्धारण के लिए उत्तरदायी माना है।

(iii) प्रो. मार्शल ने उत्पादन लागत (पूर्ति) तथा सीमांत उपयोगिता (माँग) की शक्तियों को मूल्य निर्धारण के लिए उत्तरदायी माना है। इसे 'संतुलन कीमत' या 'साम्य कीमत' कहते हैं।

संतुलन मूल्य– वास्तव में बाजार मूल्य माँग और पूर्ति के संतुलन द्वारा निर्धारित होता है। वस्तु की माँग और पूर्ति के बराबर होने को साम्य बिंदु कहा जाता है। इसी साम्य बिंदु पर वस्तु का मूल्य तय होता है। इसे संतुलन मूल्य कहा जाता है। मार्शल के शब्दों में, "संतुलन मूल्य वह मूल्य है जिस पर वस्तु की मात्रा, जिसे विक्रेता बेचने को इच्छुक है, उस मात्रा के बराबर होती है, जिसे क्रेता खरीदना चाहता है।" इस प्रकार बाजार मूल्य के निर्धारण में माँग और पूर्ति की शक्तियाँ कार्य करती हैं–

(क) वस्तु की माँग– उपभोक्ता अपनी आवश्यकता की संतुष्टि करने के लिए किसी वस्तु की माँग करता है। अर्थात् वस्तु की माँग उसमें निहित उपयोगिता या तुष्टिगुण के कारण होती है। उपभोक्ता के लिए वस्तु जितनी अधिक उपयोगी होगी, उसकी माँग उतनी ही तीव्र होगी तथा वह उसके लिए उतना ही अधिक मूल्य चुकाने के लिए तैयार होगा। उपभोक्ता की सामान्य प्रवृत्ति वस्तु का कम से कम मूल्य चुकाने की होती है। अत: वह वस्तु के सीमांत तुष्टिगुण से अधिक मूल्य नहीं देना चाहता। अत: वस्तु का मूल्य, वस्तु की सीमांत उपयोगिता द्वारा निर्धारित होता है। इसीलिए वस्तु की सीमांत उपयोगिता (तुष्टिगुण) ही वस्तु का उच्चतम मूल्य निर्धारित करती है।

(ख) वस्तु की पूर्ति– विक्रेता या उत्पादक वस्तु की बाजार में पूर्ति करते हैं। उत्पादक वस्तु का मूल्य लागत मूल्य से कम नहीं लेना चाहता। अत: वस्तु का न्यूनतम मूल्य वस्तु की उत्पादन लागत से निर्धारित होता है। कम मूल्य पर बाजार में वस्तु की कम पूर्ति तथा अधिक मूल्य पर अधिक पूर्ति होती है।

मूल्य निर्धारण बिंदु– प्रो० मार्शल के अनुसार, "वस्तु का मूल्य सीमांत उपयोगिता तथा सीमांत उत्पादन लागत के मध्य माँग और पूर्ति की सापेक्षिक शक्तियों द्वारा उस स्थान पर तय होता है, जहाँ वस्तु की पूर्ति, माँग के बराबर होती है।" क्रेता वस्तु का मूल्य सीमान्त उपयोगिता के बराबर देना चाहता है, जबकि विक्रेता सीमांत उत्पादन के बराबर मूल्य चाहता है। दोनों पक्षों में सौदेबाजी होने पर, जिस बिंदु पर माँग और पूर्ति बराबर हो जाती हैं, उसी साम्य बिंदु पर वस्तु का मूल्य निर्धारित हो जाता है।

यही बाजार का संतुलन मूल्य कहा जाता है। आइए, इसे उदाहरण तथा रेखाचित्र के माध्यम से समझें–

आम का मूल्य प्रति किग्रा (रुपयों में)	आमों की माँग (किग्रा में)	आमों की पूर्ति (किग्रा में)
20	500	200
25	300	225
30	250	250
35	150	350
40	100	500

स्पष्टीकरण– 30 रुपये प्रति किग्रा पर आमों की माँग 250 किग्रा तथा पूर्ति भी 250 किग्रा है, अत: माँग-पूर्ति बराबर होने के कारण यही साम्य बिंदु है। इसी साम्य बिंदु पर आम का मूल्य 30 रुपये प्रति किग्रा तय होगा। मूल्य बढ़ने से माँग घटती है और पूर्ति बढ़ती है।

6. पूर्ण तथा अपूर्ण प्रतियोगिता बाजार का वर्णन कीजिए।

उ०– **पूर्ण प्रतियोगिता बाजार–** जिस बाजार में क्रेता और विक्रेता बड़ी संख्या में विद्यमान होते हैं, उन्हें बाजार का पूर्ण ज्ञान होने के कारण उनमें परस्पर स्वतंत्र एवं पूर्ण प्रतियोगिता पाई जाती है। इस बाजार में सामान्य मूल्य एक समान पाया जाता है। इसे ही पूर्ण प्रतियोगिता बाजार कहा जाता है।

प्रो० वेन्हम ने पूर्ण प्रतियोगिता बाजार को इन शब्दों में परिभाषित किया है, "किसी वस्तु का बाजार उस समय पूर्ण होता है, जबकि क्रेता और विक्रेता को इस बात का ज्ञान होता है कि वस्तु के सौदे किस मूल्य पर किए जा रहे हैं।"

पूर्ण प्रतियोगिता की विशेषताएँ– पूर्ण प्रतियोगिता बाजार में निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाती हैं–

(i) पूर्ण प्रतियोगिता बाजार में क्रेताओं और विक्रेताओं की संख्या अधिक होती है।
(ii) क्रेता और विक्रेताओं में परस्पर पूर्ण प्रतियोगिता पाई जाती है।
(iii) पूर्ण प्रतियोगिता बाजार में वस्तु का मूल्य उपयोगिता (क्रेता की माँग) तथा उत्पादन लागत (आपूर्ति) द्वारा तय होता है।
(iv) पूर्ण प्रतियोगिता बाजार में कोई भी फर्म प्रवेश कर सकती है तथा कोई भी उसे कभी भी छोड़कर जा सकती है।
(v) क्रेता सामान्यत: उस विक्रेता से वस्तु या सेवा क्रय करता है, जो उसे कम से कम मूल्य पर बेचने को तैयार होता है।
(vi) विक्रेताओं की वस्तुएँ एक समान गुणों वाली होती हैं।

विशेष– उपर्युक्त समस्त विशेषताएँ किसी भी बाजार में नहीं मिलती। अत: इसे काल्पनिक बाजार कहा जाता है।

अपूर्ण प्रतियोगिता बाजार– जिस बाजार में क्रेताओं और विक्रेताओं की संख्या अपेक्षाकृत कम होती है तथा उनमें पूर्ण प्रतियोगिता का अभाव पाया जाता है, अपूर्ण प्रतियोगिता बाजार कहलाता है। इस बाजार में वस्तुओं का मूल्य एक समय में अलग-अलग रहता है। प्रो० लर्नर ने अपूर्ण प्रतियोगिता को इन शब्दों में परिभाषित किया है, "अपूर्ण प्रतियोगिता तब पाई जाती है, जबकि एक विक्रेता अपनी वस्तु के लिए गिरती हुई माँग रेखा का सामना करता है।"

अपूर्ण प्रतियोगिता की विशेषताएँ– अपूर्ण प्रतियोगिता में निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाती हैं–

(i) अपूर्ण प्रतियोगिता में क्रेता-विक्रेताओं की संख्या कम होती है।
(ii) क्रेता-और विक्रेता में स्वतंत्र प्रतियोगिता का अभाव पाया जाता है।
(iii) क्रेता और विक्रेताओं को बाजार का पूर्ण ज्ञान नही होता।
(iv) अपूर्ण प्रतियोगिता मे वस्तुएँ एक समान नहीं होती।
(v) वस्तुओं की स्थानापन्न वस्तुएँ उपलब्ध होने के कारण विक्रेता, क्रेताओं से अलग-अलग मूल्य वसूलते हैं।

विशेष– वास्तविक जगत में अपूर्ण प्रतियोगिता बाजारों का ही अस्तित्व पाया जाता है।

7. बाजार को स्थान के आधार पर वर्गीकृत करते हुए, उनका संक्षिप्त विवरण लिखिए।

उ०– **क्षेत्र के आधार पर बाजार का वर्गीकरण–** बाजार जिस क्षेत्र में फैला हुआ होता है, उसके आधार पर उसका वर्गीकरण निम्नवत् किया जा सकता है–

(i) स्थानीय बाजार– किसी वस्तु की स्थानीय माँग होने अथवा उसके क्रेता और विक्रेता किसी स्थान विशेष तक सीमित होने पर, वस्तु का बाजार स्थानीय माना जाता है। शीघ्र नष्ट होने वाली, भारी तथा कम मूल्य की वस्तुएँ एक छोटे से क्षेत्र में बेची-खरीदी जाती हैं। दूध, फल, सब्जी, ईंट तथा रेत का बाजार स्थानीय बाजार की श्रेणी में आता है।

(ii) प्रांतीय बाजार– जिन वस्तुओं का क्रय-विक्रय किसी राज्य विशेष की भौगोलिक सीमाओं में ही होता है, वह वस्तु का प्रांतीय बाजार कहलाता है; जैसे– राजस्थान में पगड़ी का बाजार, पंजाब में चूड़ा बाजार आदि।

(iii) राष्ट्रीय बाजार– जिन वस्तुओं का क्रय-विक्रय देश के समस्त क्षेत्रों में किया जाता है, उनका बाजार राष्ट्रीय बाजार कहा जाता है। गेहूँ, चावल, सूती वस्त्र, साबुन, घी तथा तेल आदि का बाजार राष्ट्रव्यापी रहता है।

(iv) अंतर्राष्ट्रीय बाजार– जिन वस्तुओं के क्रेता-विक्रेता देश की भौगोलिक सीमाओं के पार अनेक देशों में फैले होते हैं, उनका व्यापार अंतर्राष्ट्रीय बाजार कहलाता है। सोना, चाँदी, चीनी, चाय, खनिज तेल तथा मशीनों का बाजार इसी श्रेणी में आता है।

8. बाजार को विस्तृत करने के छः उपाय सुझाइए।

उ०– किसी वस्तु के बाजार का विस्तार एक बडी सीमा तक उसके आंतरिक गुणों पर निर्भर करता है। आंतरिक गुणों में मुख्यतया निम्न बातों को शामिल किया जाता है–

(i) व्यापक तथा नियमित माँग– यदि किसी वस्तु की माँग व्यापक तथा नियमित है तो उसका बाजार विस्तृत होगा। इसके विपरित, जिस वस्तु की माँग सीमित तथा अनियमित होती है उसका बाजार संकीर्ण होता है, किंतु साड़ियों, चूड़ियों, चना, बर्तन आदि की माँग राष्ट्रीय जबकि सब्जियाँ, मिठाई, ईंट आदि की माँग क्षेत्रीय होती है।

(ii) टिकाऊपन– साना, चाँदी, जवाहरात, कपड़ा जैसी टिकाऊ वस्तुओं का बाजार अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत होता है, जबकि ऐसी वस्तुओं को काफी समय तक रखा जा सकता है तथा दूर-दूर तक भेजा जा सकता है। इसके विपरित दूध, फल, सब्जी आदि जल्दी नष्ट होने वाली वस्तुओं का बाजार अपेक्षाकृत संकुचित होता है।

(iii) पर्याप्त पूर्ति– जिस वस्तु की पूर्ति को माँग के अनुसार आसानी से बढ़ाया जा सकता है उसका बाजार विस्तृत होगा, जैसे- कपड़ा, कागज आदि। इसके विपरित जिस वस्तु की मात्रा को आसानी से नहीं बढ़ाया जा सकता, उसका बाजार संकुचित होगा, जैसे-दूध, फल, सब्जी, दुर्लभ चित्र व सिक्के आदि।

(iv) वहनीयता– जिस वस्तु को आसानी से तथा कम लागत पर एक स्थान से दूसरे स्थान को भेजा जा सकता है उसका बाजार विस्तृत होता है, जैसे– सोना, चाँदी, हीरे, घड़ी, कपड़ा आदि। इसके विपरीत जिन वस्तुओं में वहनीयता का गुण कम होता है उनका बाजार संकुचित होता है, जैसे– ईंट, बालू-रेत, पीली-मिट्टी आदि।

(v) ग्रेडिंग तथा नमूने की सुविधा– जिन वस्तुओं के नमूने बनाए जा सकते हैं तथा विभिन्न ग्रेडों में विभाजित किया जा सकता है उनका बाजार विस्तृत होता है, जैसे-गेहूँ, चावल, कपास आदि।

(vi) वस्तुओं की ख्याति– जो वस्तुएँ लोकप्रिय हो जातीं हें उनका बाजार विस्तृत हो जाता है, जैसे- हल्दीराम की नमकीन, कोका कोला, लक्स व सर्फ साबुन, जापानी व चीनी खिलौने, स्विस घड़ियाँ आदि।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

48 उत्पादन का उसके साधनों में वितरण (भूमि, श्रम, पूँजी, संगठन, लगान, मजदूरी, ब्याज तथा लाभ)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 481 व 482 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 482 व 483 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. उत्पादन को परिभाषित कीजिए तथा उत्पादन के उपादानों के नामों का उल्लेख कीजिए।

उ०– **उत्पादन-** किसी वस्तु के तुष्टिगुण में वृद्धि करने की प्रक्रिया को उत्पादन कहते हैं। अर्थशास्त्र में 'उत्पादन का अर्थ किसी वस्तु के आर्थिक तुष्टिगुण में वृद्धि करना है।

उत्पादन के उपादान– भूमि, श्रम, पूँजी, संगठन, उद्यम आदि को उत्पादन के उपादान के नाम से जाना जाता है।

2. **उत्पादन के साधनों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।**

उ०– उत्पादन के साधनों का संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित हैं–

(i) **भूमि**– अर्थशास्त्र की भाषा में वे सभी पदार्थ जो प्रकृति ने मनुष्य को नि:शुल्क प्रदान किए हैं भूमि कहलाते हैं। सामान्य रूप से भूमि का अर्थ पृथ्वी की ऊपरी सतह से लगाया जाता है। भूमि मानव का जन्म स्थल, क्रियाकलापों का केन्द्र व शरण स्थली है।

(ii) **श्रम**– मुद्रा रूपी फल का स्वाद चखने हेतु किया गया शारीरिक एवं मानसिक कार्य रम कहलाता है।

(iii) **पूँजी**– पूँजी मनुष्य द्वारा अर्जित किए गए धन का वह भाग है, जो भविष्य के लिए धन उत्पादन में लगा है।

(iv) **संगठन**– उत्पादन प्रणाली में संगठन उत्पादन का वह साधन है, जिसका महत्वपूर्ण कार्य उत्पत्ति के साधनों को सर्वोत्तम आकार में जुटाना है।

(v) **उद्यम**– किसी व्यवसाय को प्रारंभ करने तथा उसमें निहित जोखित उठाने के कार्य को 'उद्यम' कहते हैं।

3. **वितरण का क्या अर्थ है? वितरण की परिभाषा लिखिए।**

उ०– **वितरण का अर्थ**– वितरण का शाब्दिक अर्थ है, 'बँटवारा'। प्रश्न उठता है किसका बँटवारा और किसमें कितना बँटवारा? अर्थशास्त्र में वितरण का अर्थ है, "संयुक्त उत्पादन का उनके साधनों में उचित बँटवारा करना।" वितरण के माध्यम से उत्पादन के प्रत्येक साधन को उसका उचित अंश दिया जाता है। उत्पादन संयुक्त प्रयत्नों का प्रतिफल होता है। अत: उत्पादन के सभी उपादानों को उनका उचित प्रतिफल दिया जाता है। यह कार्य जिस व्यवस्था के माध्यम से किया जाता है, अर्थशास्त्र में उसे **वितरण** नाम दिया गया है।

वितरण की परिभाषाएँ– अर्थशास्त्रियों ने वितरण को निम्नवत् परिभाषित किया है–

"वितरण में इस बात का अध्ययन किया जाता है कि समाज में उत्पादन के विभिन्न साधनों के सहयोग से जिस संपत्ति का उत्पादन होता है, उसका बँटवारा इन साधनों के बीच कैसे किया जाए।" **–प्रो० चैपमैन**

चैपमैन का मत है कि समाज में उत्पादन के उपादान जो उत्पादित करते हैं, उसी को इन साधनों के बीच बाँटने को अर्थशास्त्र में वितरण कहा गया है।

"वह समस्त धन, जिसका किसी समाज में उत्पादन होता है, अंतत: कुछ रीतियों या अन्य सूत्रों के द्वारा व्यक्तियों के पास पहुँच जाता है। यही वितरण की प्रक्रिया कहलाती है।" **–प्रो० सेलिगमैन**

प्रो० सेलिगमैन के अनुसार वितरण वह प्रक्रिया है, जिसमें कुछ सिद्धांतों और सूत्रों के माध्यम से समाज में उत्पादित धन को अपेक्षित साधनों तक पहुँचाया जाता है।

4. **श्रम की परिभाषा लिखिए तथा उत्पादक और अनुत्पादक श्रम में अंतर बताइए।**

उ०– **श्रम की परिभाषा**– श्रम को विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने निम्नवत् परिभाषित किया है–

"श्रम का अर्थ मनुष्य के आर्थिक कार्य से है, चाहे वह हाथ से किया जाए या मस्तिष्क से।" **–प्रो० मार्शल**

प्रो० मार्शल के अनुसार आर्थिक कार्य के लिए शरीर अथवा मस्तिष्क से किए समस्त प्रयास श्रम हैं। श्रम धन कमाने के लक्ष्य से जुड़ा होता है।

"श्रम का अर्थ मानव के उस शारीरिक अथवा मानसिक प्रयत्न से है, जो प्रतिफल की आशा से किया जाता है।"

–प्रो० टॉमस

प्रो० टॉमस के अनुसार मनुष्य शरीर या मस्तिष्क से धन पाने की इच्छा से जो कार्य करता है, श्रम कहलाता है।

श्रम का आशय मानव की उन शारीरिक या मानसिक चेष्टाओं से लगाया जाता है, जिनके बदले में उसे धन प्राप्त होता है। भीख माँगना, जुआ खेलना तथा लोगों की सेवा करना श्रम की श्रेणी में नहीं आते। इन्हें अनुत्पादक श्रम कहा जाता है।

उत्पादक और अनुत्पादक में अंतर– ऐसा शारीरिक अथवा मानसिक कार्य जिसे करने से किसी वस्तु अथवा सेवा का उत्पादक होता है, उत्पादन श्रम कहलाता है। उत्पादक श्रम के बदले आय प्राप्त होती है; जैसे– बढ़ई द्वारा लकड़ी का सामान बनाना, सुनार द्वारा स्वयं आभूषण बनाना, शिक्षक द्वारा अध्यापन कराना आदि। इसके विपरित ऐसा श्रम जिसे करने से किसी वस्तु या सेवा का उत्पादन नहीं होता को और न कोई आय प्राप्त होती हो, अनुत्पादक श्रम कहलाता है; जैसे– माँ का बच्चे का पालन करना। मनोरंजन हेतु खेल खेलना, गीत गाना आदि।

5. कुशल तथा अकुशल श्रम के अंतर को स्पष्ट कीजिए।

उ०– **कुशल और अकुशल श्रम में अंतर–** जब किसी कार्य को करने के लिए किसी विशेष प्रकार के प्रशिक्षण अथवा शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है तो इस प्रकार का श्रम कुशल श्रम कहलाता है; जैसे– डॉक्टर, इंजीनियर आदि। इसके विपरित जब किसी कार्य को करने हेतु किसी विशेष प्रशिक्षण अथवा शिक्षा की आवश्यकता नहीं पड़ती तो ऐसा श्रम अकुशल श्रम कहलाता है; जेसे– मजदूर, नौकर, किसान आदि का श्रम।

6. अर्थशास्त्र में लगान से क्या आशय है? लगान की एक परिभाषा लिखिए।

उ०– **लगान का अर्थ–** भूमि का स्वामी भूमिपति कहलाता है। वह भूमि के उपयोग के बदले, उत्पादन में से जो प्रतिफल प्राप्त करता है, उसे **लगान** कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, "लगान वह किराया है, जो भूमिपति को भूमि के उपयोग के बदले में भुगतान किया जाता है।" अर्थात् संयुक्त उत्पादन में से जो अंश भूमिपति को दिया जाता है, लगान के नाम से जाना जाता है।

लगान की परिभाषा– विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने लगान की अनेक परिभाषाएँ दीं हैं, उनमें से एक निम्नवत है–

लगान भूमि की उपज का वह भाग है, जो भूमि की मौलिक तथा अविनाशी शक्तियों के उपयोग के बदले भूस्वामी को दिया जाता है।

7. रिकोर्डों के लगान सिद्धांत की विवेचना कीजिए।

उ०– **रिकोर्डों का लगान सिद्धांत–** रिकोर्डों ने अपना लगान सिद्धांत उपर्युक्त शब्दों के माध्यम से प्रतिपादित किया, उनके लगान सिद्धांत की मान्यताएँ निम्नवत् हैं–

(i) लगान केवल भूमि को ही दिया जाता है।

(ii) लगान भूमि की उर्वरता में पाए जाने वाले अंतर का प्रतिफल है।

(iii) जनसंख्या बढ़ने से जैसे खाद्य सामग्री की खपत बढ़ती है, कृषि व्यवसाय में अंततः प्रतिफल ह्रासमान नियम लागू हो जाता है।

सिद्धांत की व्याख्या– रिकोर्डों के लगान सिद्धांत की व्याख्या निम्नलिखित तीन आधारों पर की जाती है–

(i) विस्तृत खेती

(ii) गहन खेती

(iii) भूखंडों की स्थिति।

विशाल भूखंडों में मशीनों से खेती करना विस्तृत खेती कहलाता है। जनसंख्या बढ़ने पर कम उपजाऊ भूमि भी खेती करने में प्रयुक्त की जाने लगती है, जिसमें अपेक्षाकृत उत्पादन कम होता है। उपजाऊ भूमि और कम उपजाऊ भूमि की उपज की मात्रा के अंतर को रिकार्डो ने लगान नाम दिया है। उपजाऊ भूमि का स्वामी सर्वाधिक लगान प्राप्त करता है। कम उपजाऊ भूमि उसके अनुसार सीमांत भूमि होती है। यह भूमि लगान रहित भूमि कहलाती है। लगान का निर्धारण उपजाऊ भूमि की उपज तथा सीमांत भूमि की उपज के अंतर से किया जाता है।

8. मजदूरी से क्या आशय है? नकद मजदूरी तथा असल या वास्तविक मजदूरी में अंतर स्पष्ट कीजिए।

उ०– **मजदूरी का अर्थ–** उत्पादन प्रक्रिया में श्रम द्वारा सक्रिय सहयोग देने के बदले में संयुक्त उत्पादन में से जो अंश उसे प्राप्त होता है, उसे मजदूरी कहते हैं। अर्थशास्त्र की भाषा में, "संयुक्त उत्पादन में से श्रम को प्राप्त होने वाला भाग मजदूरी है।" मजदूरी श्रम के प्रयोग के बदले में दी जाने वाली 'कीमत' का नाम है।

नकद मजदूरी तथा असल या वास्तविक मजदूरी में अंतर– श्रमिक को उसके श्रम के प्रतिफल के रूप में, जो मुद्रा का भुगतान किया जाता है उसे नकद मजदूरी कहते हैं जबकि श्रमिक को नकद मजदूरी के रूप में प्राप्त मुद्रा के बदले में प्रचलित मूल्य पर जितनी वस्तुएँ और सेवाएँ प्राप्त होती हैं, वे सब मिलाकर उसकी असल या वास्तविक मजदूरी को सूचित करती हैं। वास्तविक मजदूरी के अंतर्गत उन सभी वस्तुओं और सेवाओं को सम्मिलित किया जाता है जो श्रमिक को नकद मजदूरी के अतिरिक्त प्राप्त होती हैं; जैसे- कम कीमत पर मिलने वाला राशन, बिना किराए का मकान, पहनने के लिए मुफ्त वस्त्र व अन्य सुविधाएँ।

9. पूँजी की परिभाषा लिखिए। धन तथा पूँजी के अंतर को स्पष्ट कीजिए।

उ०– **पूँजी की परिभाषा–** प्रो० चैपमैन के अनुसार ''पूँजी वह धन है, जो आय का साधन बनता है या भावी आय प्रदान कराने में सहयोग देता है।''

पूँजी व धन में अंतर– वे सभी वस्तुएँ जो उपयोगी, दुर्लभ तथा विनिमय साध्य होती हैं, धन कहलातीं हैं; चाहे उत्पादन-कार्य में उनका उपयोग किया जाए अथवा नहीं। परंतु पूँजी धन का केवल वह भाग है जो उत्पादन-कार्य में लगा हुआ होता है। इस प्रकार पूँजी और धन के अंतर को स्पष्ट करते हुए कहा जा सकता है कि समस्त पूँजी धन होती है, परंतु समस्त धन को पूँजी नहीं कहा जा सकता है। पूँजी धन का एक अंग है। उदाहरण के लिए, यदि रुपए-पैसे हमारे पास हैं, तो यह धन कहा जाएगा, परंतु यदि रुपए-पैसे को जमीन में गाड़कर रख दिया जाए तो वह पूँजी नहीं होगा, क्योंकि उसका उपयोग उत्पादन के लिए नहीं हो रहा है। वही धन पूँजी है जो उत्पादन में लगी हो। इस प्रकार समस्त धन पूँजी नहीं होता, परंतु समस्त पूँजी धन होती है।

10. संगठन से आपका क्या आशय है? आधुनिक युग में इसका क्या महत्व है?

उ०– **संगठन का अर्थ–** उत्पादन के समस्त उपादानों (भूमि, श्रम, पूँजी) को एकत्रित करके उन्हें उचित व आदर्श अनुपात में उत्पादन कार्य में लगाना संगठन कहलाता है।

आधुनिक युग में संगठन का महत्व– आधुनिक युग में उत्पादन में संगठन के महत्व को निम्नवत् समझा जा सकता है–

(i) उत्पादन प्रक्रिया को ठीक से संचालित करने के लिए संगठनकर्ता रूपी महावत आवश्यक हो जाता है।
(ii) संगठनकर्ता उपादानों का आनुपातिक समन्वय तथा उन पर समुचित नियंत्रण बनाकर उत्पादन प्रक्रिया को सफल बनाने में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
(iii) कुशल संगठन ही उद्योग का विस्तार तथा विकास करने में सहभागी बनता है।
(iv) व्यावसायिक तथा औद्योगिक क्षेत्र के सुखद वातावरण के निर्माण का भार संगठन के कंधों पर टिका होता है।
(v) संगठनकर्ता उत्पादों की श्रेष्ठता तथा मात्रा बढ़ाकर लाभ कमाने में सहायक बनता है।
(vi) संगठनकर्ता की सृजनशीलता उद्योग को उन्नति के चरम शिखर तक पहुँचाने में सक्षम होती है।

11. संगठन के कार्यों पर प्रकाश डालिए।

उ०– **संगठनकर्ता के कार्य–** संगठनकर्ता के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) उत्पादन के लिए सफल योजना का ताना बाना-तैयार करना।
(ii) उत्पादन के लिए श्रेष्ठ उपादान जुटाना।
(iii) उपादानों का उचित अनुपात तथा समन्वय बनाना।
(iv) उद्योग के लिए नवीनतम मशीनें, यंत्र तथा कच्चे मालों की समुचित व्यवस्था करना।
(v) श्रम का उसकी कार्यक्षमता और कौशल के आधार पर दोहन करना।
(vi) उत्पादन की समस्त व्यवस्था का सूक्ष्म निरीक्षण नियमित रूप से करते रहना।
(vii) व्यवसाय की प्रगति के लिए नवीनतम प्रौद्योगिकी के लिए अनुसंधानों की समुचित व्यवस्था करना।
(viii) उत्पादित माल के विपणन हेतु नेटवर्क तैयार करना।

12. उद्यमी कौन होता है? एक सफल उद्यमी के गुणों का वर्णन कीजिए।

उ०– उत्पादन की क्रिया में, जो उपादान साहस के साथ जुटता है, उसे साहसी या उद्यमी कहा जाता है। प्रत्येक व्यवसाय में कुछ न कुछ जोखिम अवश्य रहता है। अत: व्यवसाय में अनिश्चितता का जोखिम वहन करने वाला उपादान साहसी या उद्यमी कहलाता है। उद्यमी व्यवसाय का सूत्रधार और स्वामी होता है।

सफल उद्यमी के गुण– एक आदर्श तथा सफल उद्यमी में निम्नलिखित गुण होने चाहिए–

(i) सफल उद्यमी में जोखिम वाले कार्यों को हाथ में लेने का साहस तथा व्यवसाय में जोखिम, अनिश्चितता, व संकटों का सामना करने का साहस, धैर्य तथा दृढ़ निश्चय होना आवश्यक है।

(ii) सफल उद्यमी के अंदर दूरदर्शिता का गुण आवश्यक है, ताकि बाजार में होने वाले परिवर्तनों जैसे– उपभोक्ताओं की रुचि तथा फैशन का पूर्वानुमान लगाकर वह अपने उत्पादों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर सके।

(iii) सफल उद्यमी को अपने व्यवसाय से संबंधित समस्याओं का समुचित ज्ञान तथा बारीकियों की पूर्ण जानकारी होनी चाहिए।

(iv) उद्यमी अपने उद्योग रूपी जहाज का कप्तान होता है। उसमें लोगों को प्रभावित करने और उनका विश्वास जीतने की योग्यता होनी चाहिए।

(v) संगठन की योग्यता किसी उद्यमी का वह गुण है, जिसका उपयोग करके वह श्रमिकों की योग्यता तथा क्षमतानुसार काम लेने में सफल होता है।

(vi) एक सफल उद्यमी को अर्थशास्त्र, वाणिज्य, बैंकिग तथा प्रबंधन के क्षेत्र का अच्छा ज्ञान होना चाहिए, तभी वह दैनिक वित्तिय जटिलताओं को सुलझा सकेगा।

(vii) अपने व्यवसाय में पर्याप्त अनुभव रखने वाला उद्यमी सदैव सफल रहता है। उद्यमी जितना अनुभवी होगा, उसका व्यवसाय उतना की कुशलतापूर्वक संचालित होगा।

(viii) सफल उद्यमी में उचित निर्णय लेने की क्षमता के साथ-साथ नवीनतम् सुधारों, आविष्कारों व तकनीकों के प्रति सचेत रहने का गुण होना चाहिए, ताकि उनका प्रयोग करके वह न्यूनतम लागत पर अधिकाधिक उत्पादन कर सके।

13. निम्नांकित तालिका का अध्ययन कीजिए तथा उससे संबंधित दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

दैनिक मजदूरी (रुपयों में)	श्रम की माँग (श्रमिकों की संख्या)	श्रम की पूर्ति (श्रमिकों की संख्या)
60	300	60
70	160	70
80	100	100
90	50	150
100	25	200

(क) जब मजदूरी की दर बढ़ती है, तो श्रम की माँग एवं पूर्ति पर क्या प्रभाव पड़ता है?

(ख) मजदूरी का निर्धारण किस बिंदु पर होगा?

उ०– (क) दी गई तालिका से स्पष्ट है कि जब मजदूरी की दर बढ़ती है, तो श्रम की माँग घटती है और श्रम की पूर्ति बढ़ जाती है।

(ख) दी गई तालिका से स्पष्ट है कि दैनिक मजदूरी 80 रुपए होने पर श्रम की माँग और श्रम की पूर्ति दोनों बराबर हैं। अत: इसी बिंदु (मजदूरी 80 रूपए) पर मजदूरी का निर्धारण होगा।

14. निम्नांकित तालिका का अध्ययन कीजिए तथा उससे संबंधित प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

दैनिक मजदूरी (रुपयों में)	श्रम की माँग (श्रमिकों की संख्या)	श्रम की पूर्ति (श्रमिकों की संख्या)
150	300	700
130	400	600
100	500	500
80	600	400
70	700	300

(क) मजदूरी का निर्धारण किस बिंदु पर होगा?

(ख) मजदूरी की दर कम होने पर श्रम की माँग और पूर्ति पर क्या प्रभाव पड़ेगा।

उ०– (क) दी गई तालिका में मजदूरी 100 रुपए पर श्रम की मांग और श्रम की पूर्ति दोनों बराबर अर्थात् 100 हैं। अत: इसी बिंदु पर मजदूरी का निर्धारण होगा।

(ख) दी गई तालिका से स्पष्ट है कि मजदूरी की दर कम होने पर श्रम की माँग बढ़ती है और श्रम की पूर्ति घटती है।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. उत्पत्ति (उत्पादन) से आपका क्या आशय है? उत्पत्ति के साधनों का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

उ०– **उत्पादन–** साधारण बोलचाल की भाषा में उत्पादन का अर्थ किसी वस्तु या पदार्थ के निर्माण से होता है। उदाहरण के लिए, कृषकों द्वारा गेहूँ, चावल आदि पैदा करना तथा कारखाने में श्रमिकों द्वारा कपड़ा बनाना, चूड़ी अथवा अन्य औद्योगिक वस्तुओं के निर्माण को उत्पादन कहा जाता है। किन्तु वैज्ञानिकों का मत है कि मनुष्य न तो किसी वस्तु या पदार्थ को उत्पन्न कर सकता है और न ही नष्ट कर सकता है। वह केवल पदार्थ या वस्तुओं के स्वरूप को बदलकर उन्हें अधिक उपयोगी बना सकता है। दूसरे शब्दों में, वह वस्तु में उपयोगिता का सृजन कर सकता है। **मार्शल** के शब्दों में, ''मनुष्य पदार्थ उत्पन्न नहीं कर सकता, वह केवल उसके अंदर विद्यमान उपयोगिता का सृजन कर सकता है।'' अत: अर्थशास्त्र में उत्पादन का अर्थ वस्तु-निर्माण से नहीं है, वरन् वस्तु में उपयोगिता का सृजन करना ही उत्पादन कहलाता है। **थॉमस** के अनुसार, ''वस्तु की उपयोगिता में वृद्धि करना ही उत्पादन है।''

उत्पादन के साधन– उत्पादन की प्रक्रिया में पाँच उपादान (साधन) सहयोग देते हैं– (i) भूमि, (ii) श्रम, (iii) पूँजी, (iv) प्रबंध या संगठन तथा (v) साहस या उद्यम।

(i) भूमि– भूमि उत्पादन का अनिवार्य और निष्क्रिय साधन है। सामान्य रूप से भूमि का अर्थ पृथ्वी की ऊपरी सतह से लगाया जाता है। अर्थशास्त्र में भूमि शब्द का अर्थ बहुत व्यापक है। अर्थशास्त्र की भाषा में वे सभी पदार्थ जो प्रकृति ने मुनष्य को नि:शुल्क प्रदान किए हैं, भूमि कहलाते हैं। भूमि प्रकृति का अत्यंत उपयोगी और नि:शुल्क उपहार है। भूमि मानव का जन्म स्थल, क्रियाकलापों का केंद्र और शरण स्थली है।

(ii) श्रम– मुद्रा रूपी फल का स्वाद चखने हेतु किया गया शारीरिक एवं मानसिक कार्य श्रम कहलाता है। श्रम उत्पादन का अनिवार्य और सक्रिय साधन है। श्रम उत्पादन का जन्मदाता है, श्रम वह पारस पत्थर है, जिसका स्पर्श पाते ही उत्पादन के निष्क्रिय साधन भी सोना उगलने लगते हैं। धन कमाने के लिए श्रमिक, कुली, डॉक्टर, वकील अथवा इंजीनियर का प्रयास श्रम की श्रेणी में आता है। दूसरे शब्दों में, "आर्थिक क्रियाओं के लिए किए गए समस्त प्रयास श्रम कहे जाते हैं।" शिक्षित तथा प्रशिक्षित श्रम, कुशल-श्रम कहलाता है, जबकि अप्रशिक्षित श्रम को अकुशल श्रम कहते हैं।

(iii) पूँजी– अर्थशास्त्र में धन संपत्ति तथा मुद्रा को पूँजी नहीं कहा जाता। "पूँजी मनुष्य द्वारा अर्जित किए गए धन का वह भाग है, जो भविष्य के लिए धन उत्पादन में लगा है।" उदाहरण के लिए एक किसान के पास 20 कुंतल गेहूँ है– उसमें से 5 कुंतल गेहूँ उसने बीज के रूप में खेतों में बो दिया। अत: 5 कुंतल गेहूँ उसकी पूँजी होगी। कृषक का ट्रैक्टर, नलकूप, खाद तथा अन्य उपकरण, जो वह कृषि उत्पादन में प्रयुक्त करता है, पूँजी माने जाते हैं।

(iv) **संगठन–** उत्पादन के साधनों को उचित अनुपात में व्यवस्थित कर उत्पादन प्रक्रिया को सुचारु रूप से चलाने वाला उपादान 'संगठनकर्ता' या प्रबंधक कहा जाता है। संगठनकर्ता उत्पत्ति रूपी रेल के इंजन का चालक होता है। उत्पत्ति की रेल की गति एवं उसे सफलतापूर्वक गंतव्य तक पहुँचाने का दायित्व उसी पर निर्भर है।

(v) **उद्यम या साहस–** प्रत्येक व्यवसाय या उत्पादन कार्य में कुछ जोखिम या अनिश्चित्ता होती है, क्योंकि उत्पादन की मात्रा भविष्य की माँग पर आधारित होती है। यदि माँग का अनुपात ठीक रहता है तब उद्यमी को लाभ होता है, अन्यथा हानि ही होती है। उत्पादन कार्य में लाभ व हानि दोनों की संभावना होती है। इस प्रकार अर्थशास्त्र में ''किसी उत्पादन या व्यवसाय की अनिश्चितत या जोखिम को उद्यम या साहस कहते हैं।'' इस अनिश्चितता को सहन करने वाले व्यक्ति को उद्यमी या साहसी कहते हैं।

2. वितरण किसे कहते हैं? वितरण की दो परिभाषाएँ लिखिए।

उ०– उत्तर के लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

3. उत्पादन के साधन के रूप में भूमि के लक्षणों तथा महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– **भूमि के लक्षण एवं महत्व–** उत्पादन के साधन के रूप में भूमि के मुख्य लक्षण तथा महत्व इस प्रकार हैं–

(i) **भूमि प्रकृति का नि:शुल्क उपहार है–** भूमि मनुष्य के उपयोग के लिए प्रकृति का नि:शुल्क उपहार है। मनुष्य को इसके लिए कोई मूल्य नहीं चूकाना पड़ता। पानी, वायु, प्रकाश, गर्मी, सर्दी आदि को प्राप्त करने के लिए मनुष्य को कुछ नहीं करना पड़ता है। ये सभी उपहार प्रकृति ने स्वेच्छा से मनुष्य की सहायता के लिए नि:शुल्क दिए हैं। कुछ अर्थशास्त्रियों का विचार है कि आधुनिक युग में मनुष्य जिस भूमि को उपयोग में ला रहा है, वह उसे निर्मूल्य नहीं मिलती, वरन् अन्य साधनों की भाँति मूल्य देने से ही प्राप्त होती है।

(ii) **भूमि की मात्रा सीमित है–** भूमि प्रकृति की देन है। भूमि के क्षेत्र को घटाया-बढ़ाया नहीं जा सकता । भूमि का क्षेत्रफल उतना ही रहता है जितना प्रकृति ने हमें प्रदान किया है। भूमि मानव-निर्मित नहीं है और न ही मानव द्वारा इसे निर्मित किया जा सकता है। भूमि का स्वरूप प्राकृतिक कारणों से बदल सकता है, परंतु भूमि के क्षेत्र या मात्रा में वृद्धि नहीं हो सकती है।

(iii) **भूमि स्थायी है–** भूमि में स्थायित्व का गुण पाया जाता है। सृ ष्टि के आदिकाल से आज तक भूमि किसी-न-किसी रूप में सदैव विद्यमान रही है। भूकम्प या प्राकृतिक प्रकोपों से जल के स्थान पर स्थल तथा पहाड़ के स्थन पर समुद्र बन सकते हैं। भूमि के स्वाभावित गुण होते हैं, जिन्हें **रिकार्डो** ने 'मौलिक तथा अविनाशी' कहा है। भूमि अक्षय है तथा कभी नष्ट नहीं होती। इसके लगातार प्रयोग से इसकी उर्वरा शक्ति में कुछ कमी आ जाती है अथवा इसी ऊपरी सतह में कुछ परिवर्तन भी हो जाता है। इन्हें उपयुक्त उपायों द्वारा ठीक किया जा सकता है। वस्तुत: भूमि अविनाशी है।

(iv) **भूमि उत्पादन का निष्क्रिय साधन है–** भूमि स्वयं उत्पादन कार्य करने में असमर्थ है। जब तक अन्य साधनों का इसे सहयोग प्राप्त नहीं होता, यह उत्पादन कार्य नहीं कर सकती। मनुष्य द्वारा श्रम और पूँजी लगाने से उत्पादन किया जाता है। इस दृष्टि से भूमि उत्पादन का निष्क्रिय उत्पादन है।

(v) **भूमि विविध प्रकार की होती है–** उत्पादकता, स्थिति तथा प्रयोग की दृष्टि से भूमि में विविधता पाई जाती है। भूमि अधिक या कम उपजाऊ हो सकती है। शहर के अंदर या समीप की भूमि मकान बनाने के लिए अधिक उपयुक्त होती है, जबकि गाँव की भूमि कृषि कार्य के लिए। इसी प्रकार किसी स्थान पर भूमि में खनिज पदार्थ अधिक मात्रा में उपलब्ध होते हैं तो समतल भूमि में उत्तम खेती होती है। भूमि को विविध प्रयोगों में भी लाया जा सकता है; जैसे-कृषि के लिए, मकान बनाने के लिए या उद्योगों को स्थापित करने के लिए।

(vi) **भूमि में गतिशीलता का अभाव है–** भूमि में गतिशीलता का गुण नहीं पाया जाता। भूमि को एक स्थान से दूसरे स्थान पर नहीं ले जाया जा सकता। हिमालय पर्वत को इंग्लैंड नहीं ले जाया जा सकता। इसी प्रकार गंगा नदी को दूसरे महाद्वीप में प्रवाहित नहीं किया जा सकता तथा कोलार की सोने की खान उत्तर प्रदेश में नहीं लायी जा सकती।

(vii) **भूमि की स्थिति सापेक्ष होती है–** भूमि की कीमत स्थिति के अनुसार होती है। शहरी भूमि की कीमत अधिक होतीहै, जबकि गाँव की भूमि की कीमत शहर की अपेक्षा कम। इसी प्रकार समतल या दोमट मिट्टी वाली भूमि की कीमत ऊसर तथा बंजर भूमि की अपेक्षा अधिक होती है। भूमि की स्थिति की तुलना करके ही लगान व कीमत निर्धारित की जाती है।

(viii) **भूमि उत्पादन का प्रमुख उपादान है–** भूमि उत्पादन का एक अनिवार्य और आधारभूत उपादान है। भूमि के अभाव में उत्पादन को सम्पादित करना असंभव है। आर्थिक दृष्टि से प्रत्येक प्रकार का उत्पादन; जैसे- कृषि, उद्योग, व्यापार, व्यवसाय आदि अंतत: भूमि की उपलब्धता पर निर्भर करते हैं।

4. उत्पादन के साधन के रूप में श्रम की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

उ०– उत्पादन के साधन के रूप में श्रम की विशेषताएँ–

श्रम के लक्षण या विशेषताएँ– श्रम के प्रमुख लक्षण या विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) श्रम उत्पादन का सक्रिय साधन है। श्रम ही उत्पादन के अन्य साधनों को सक्रिय बनाता है।

(ii) श्रम उत्पादन का अनिवार्य साधन है, उसके बिना उत्पादन का कार्य करना असंभव है।

(iii) श्रम नाशवान है, उसका संचय नहीं किया जा सकता है।

(iv) श्रमिक थक जाता है। अत: श्रम का निरंतर प्रयोग करना संभव नहीं है।

(v) श्रम को श्रमिक से पृथक नहीं किया जा सकता है।

(vi) श्रम वस्तुओं का उत्पादक और उपभोक्ता दोनों होता है।

(vii) श्रम गतिशील होता है। वह एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय में चला जाता है।

(viii) श्रम को प्रशिक्षण तथा नवीनतम प्रौद्योगिकी का ज्ञान कराकर अधिक कार्यकुशल बनाया जा सकता है।

(ix) श्रम की पूर्ति को धीरे-धीरे घटाया जा बढ़ाया जा सकता है।

(x) श्रम शक्ति, बुद्धि, तर्क तथा विवेक का स्रोत होता है।

(xi) श्रम के अभाव में उत्पादन प्रक्रिया संपन्न होनी संभव नहीं है।

(xii) श्रम ही वह उपादान है, जो उत्पादन में अन्य उपादानों को सक्रिय कर, उत्पादन कार्य पूरा करता है।

(xiii) श्रम अपनी कुशलता और योग्यता से श्रेष्ठ उत्पादन करके, उत्पादन का लक्ष्य पूरा कर सकता है।

(xiv) श्रम मशीनों तथा यंत्रों का कुशलतापूर्वक संचालन करके उत्पादन प्रक्रिया का चक्र पूरा करता है।

(xv) श्रम नवीनतम मशीनों तथा आधुनिक तकनीकी के प्रयोग से उत्पादन प्रणाली को जीवंत बना देता है।

5. श्रम की परिभाषा दीजिए तथा उत्पादन में उसके महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– **श्रम की परिभाषा–** इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 4 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

श्रम का उत्पादन में महत्व- इसके लिए विस्तृत उततरीय प्रश्न संख्या- 4 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

6. मजदूरी किसे कहते हैं? मजदूरी का निर्धारण कैसे होता है?

उ०– **मजदूरी का अर्थ–** उत्पादन प्रक्रिया में श्रम द्वारा सक्रिय सहयोग देने के बदले में संयुक्त उत्पादन में से जो अंश उसे प्राप्त होता है, उसे मजदूरी कहते हैं। अर्थशास्त्र की भाषा में, "संयुक्त उत्पादन में से श्रम को प्राप्त होने वाला भाग मजदूरी है।" मजदूरी श्रम के प्रयोग के बदले में दी जाने वाली 'कीमत' का नाम है।

मजदूरी की परिभाषाएँ– विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने मजदूरी को निम्नवत् परिभाषित किया है–

"श्रम की सेवा के बदले में दिया गया मूल्य मजदूरी है।" **–प्रो० मार्शल**

प्रो० मार्शल के शब्दों में मजदूरी श्रम प्रयोग का मूल्य है, जो श्रमिक को चुकाया जाता है।

"श्रम की सेवाओं के लिए प्रदान की जाने वाली कीमतें मजदूरी कहलाती हैं।" **–प्रो० एली**

प्रो० एली के अनुसार श्रमिक की शारीरिक अथवा मानसिक सेवाओं के लिए, जो मूल्य चुकाया जाता है, उसे ही मजदूरी कहा जाता है।

मुद्रा की वह मात्रा, जो श्रमिक को प्रतिदिन, प्रति सप्ताह या प्रतिमाह चुकाई जाती है, नकद मजदूरी कहलाती है, जबकि नकद मजदूरी के रूप में प्राप्त होने वाली मुद्रा के बदले में प्रचलित मूल्य पर जितनी वस्तुएँ एवं सेवाएँ प्राप्त होती हैं, असल मजदूरी कहलाती है।

मजदूरी का निर्धारण– श्रम को उसके प्रतिफल के रूप में, जो मजदूरी दी जाती है, उसका निर्धारण कैसे हो, इसके लिए अर्थशास्त्रियों ने सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है। इन सभी सिद्धांतों में 'माँग एवं पूर्ति का सिद्धांत' सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। मजदूरी -निर्धारण के इस आधुनिक सिद्धांत के अनुसार, "मजदूरी का निर्धारण श्रम की माँग तथा पूर्ति की सापेक्षिक शक्तियों के द्वारा होता है। यह उस साम्य बिन्दु पर निर्धारित की जाती है, जहाँ श्रम की माँग और पूर्ति एक समान होती हैं।"

(i) श्रम की माँग– उत्पादक श्रम की माँग करता है। वह उत्पादन में श्रम की नई इकाइयाँ तब तक लगाता है, जब तक अतिरिक्त इकाई से प्राप्त उत्पादन सीमांत उत्पादक श्रम के मूल्य के बराबर न हो जाए। अर्थात् मजदूरी की न्यूनतम सीमा श्रम की सीमांत उत्पादकता के बराबर होगी। यही श्रमिक की अधिकतम मजदूरी होगी, क्योंकि इसके बाद श्रम की माँग नहीं रहेगी।

(ii) श्रम की पूर्ति– श्रमिक अपने जीवन स्तर को बनाए रखने के लिए व्यय के बराबर मजदूरी मिलने पर, स्वयं को प्रस्तुत करता है। इसे श्रम की पूर्ति कहा जाता है। "श्रम की पूर्ति के अनुरूप मजदूरी की न्यनूतम सीमा श्रमिकों के जीवन स्तर द्वारा तय होती है।" जीवन स्तर की लागत से कम मजदूरी पर श्रम की पूर्ति नहीं होती।

मजदूरी-निर्धारण का तालिका द्वारा स्पष्टीकरण– मजदूरी-निर्धारण के माँग और पूर्ति के सिद्धांत को अग्रलिखित तालिका द्वारा स्पष्ट किया जा रहा है–

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट हो जाता है कि मजदूरी बढ़ने के साथ श्रम की पूर्ति बढ़ती है तथा मजदूरी घटने के साथ श्रम की पूर्ति घट जाती है। मजदूरी का निर्धारण श्रम की माँग और पूर्ति के बराबर होने पर साम्य बिंदु 80 रुपए पर होगा।

दैनिक मजदूरी (रुपयों में)	श्रम की माँग (श्रमिकों की संख्या)	श्रम की पूर्ति (श्रमिकों की संख्या)
40	200	25
60	150	50
80	100 ← साम्य बिंदु →	100
100	50	125
120	25	175

मजदूरी निर्धारण सिद्धांत का रेखाचित्र द्वारा स्पष्टीकरण– रेखाचित्र में OX रेखा पर DD श्रम की माँग एवं SS पूर्ति को दर्शाया गया है। जबकि OY लंब पर मजदूरी रुपयों में दर्शाई गई है। मजदूरी बढ़ने पर श्रम की माँग घटती है, जबकि पूर्ति बढ़ती है। 80 रुपए की दैनिक मजदूरी पर श्रम की माँग 100 श्रमिक है, जबकि श्रम की पूर्ति भी 100 श्रमिक है। अत: P बिंदु श्रम की माँग और श्रम की पूर्ति का साम्य बिंदु है। इसी साम्य बिंदु पर दैनिक मजदूरी 80 रुपए निश्चित होगी।

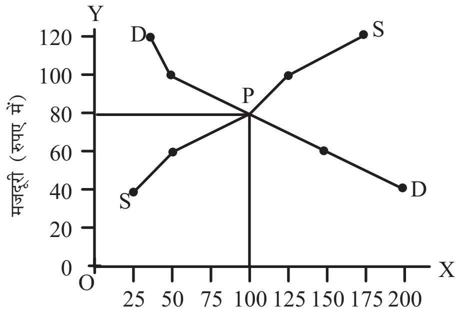

7. लगान क्या है? लगान के आधुनिक सिद्धांत को समझाइए।

उ०– **लगान–** भूमि का स्वामी भूमिपति कहलाता है। वह भूमि के उपयोग के बदले, उत्पादन में से जो प्रतिफल प्राप्त करता है, उसे **लगान** कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, "लगान वह किराया है, जो भूमिपति को भूमि के उपयोग के बदले में भुगतान

किया जाता है।" अर्थात् संयुक्त उत्पादन में से जो अंश भूमिपति को दिया जाता है, लगान के नाम से जाना जाता है।

लगान का आधुनिक सिद्धांत– रिकार्डो के लगान सिद्धांत की कटु आलोचनाओं ने अर्थशास्त्रियों को एक नया सिद्धांत प्रस्तुत करने के लिए तैयार किया, जिसे लगान का आधुनिक सिद्धांत कहा गया। आधुनिक अर्थशास्त्री मानते हैं कि लगान का निर्धारण माँग और पूर्ति के आधार पर किया जाता है। उनका मत है कि उत्पादन का प्रत्येक साधन अपनी विशिष्टता के आधार पर लगान पाने का अधिकारी है। क्योंकि "लगान विशिष्टता का पुरस्कार होता है।" आधुनिक लगान के सिद्धांत की मुख्य प्रतिपादक जॉन रॉबिन्सन हैं। उन्होंने लगान को इन शब्दों में परिभाषित किया है, "उत्पादन के साधन की एक इकाई का लगान, उसे प्राप्त वह आधिक्य है, जो उसे उस कार्य के बनाए रखने के लिए दिए जाने वाले आवश्यक न्यूनतम पारिश्रमिक से अधिक है।" आधुनिक लगान के सिद्धांत को प्रो० बोल्डिंग ने इन शब्दों में व्यक्त किया है, "आर्थिक लगान, उत्पादन के साधन को प्राप्त होने वाले किसी भी भुगतान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो कि इसके कुल प्रति मूल्य से अधिक होता है अर्थात् साधन को वर्तमान उपयोग में बनाए रखने के लिए न्यूनतम् राशि के अतिरिक्त प्राप्त होता है।" लगान के आधुनिक सिद्धांत को निम्न सूत्र के माध्यम से समझा जा सकता है–

लगान = वास्तविक आय – अवसर लागत

वर्तमान आय को वास्तविक आय कहते हैं। साधन को किसी अन्य प्रयोग में लगाने से, जो आय प्राप्त होती है, उसे अवसर लागत या हस्तांतरण आय कहा जाता है।

उदाहरण द्वारा स्पष्टीकरण– मान लीजिए एक प्रबंधक को एक कारखाने में 80,000 रुपये मासिक वेतन मिलता है, जबकि वह दूसरे व्यवसाय से 60,000 रुपए मासिक ही प्राप्त कर पाएगा। इस प्रकार, 80,000 रुपए – 60,000 रुपए = 20,000 रुपए उसकी अवसर आय के ऊपर बचत है। यही लगान कहा जाता है। मान लीजिए कि एक भूखंड से गेहूँ उगाने पर 40,000 रुपये की आय प्राप्त हुई, यदि भूमि के उसी खंड में गन्ना बोया जाता, तो उसे मात्र 30,000 रुपए की ही आय प्राप्त हो पाती है। अत: 40,000 रुपए – 30,000 रुपए = 10,000 रुपए आर्थिक लगान होगा, जिसे विशिष्टता का भुगतान कहा जाता है।

8. पूँजी से आप क्या समझते हैं? उत्पादन में पूँजी के महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– पूँजी– इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

पूँजी का उत्पादन में महत्व– पूँजी उत्पादन का अनिवार्य और महत्वपूर्ण साधन है, उसके बिना उत्पादन चक्र पूरा ही नहीं होता। अत: उत्पादन में उसके महत्व को निम्नवत् स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) बड़े पैमाने के उत्पादन में मशीनें तथा उपकरण पूँजी के माध्यम से ही उपलब्ध कराए जाते हैं।

(ii) पूँजी ही अपने बल पर उद्योगों को कच्चे माल सुलभ कराती है।

(iii) परिवहन तथा संचार-तंत्र का जाल फैलाने में पूँजी का अद्वितीय योगदान रहता है।

(iv) भूमि का लगान, श्रमिक की मजदूरी, प्रबंधक का वेतन तथा उद्यमी का लाभ पूँजी द्वारा ही संभव बन पाते हैं।

(v) पूँजी ही वह तंत्र है, जो कारखानों में उत्पादन की निरंतरता को बनाए रखता है।

(vi) पूँजी के प्रयोग से ही उत्पादक अपने उत्पाद की बिक्री के लिए नेटवर्क का निर्माण कर पाता है।

(vii) पूँजी का विनिवेश व्यक्तिगत आय तथा राष्ट्रीय आय के साथ-साथ रोजगार के नए अवसर जुटाने में भी सहायक बनता है।

पूँजी वह आधारशिला है, जिस पर राष्ट्र का भव्य औद्योगिक भवन खड़ा हो पाता है।

9. संगठन से आप क्या समझते हैं? संगठनकर्ता में कौन-कौन से गुण होने चाहिए?

उ०– संगठनकर्ता के गुण– एक संगठनकर्ता में निम्नलिखित गुण होने की अपेक्षा की जाती है–

(i) संगठनकर्ता दूरदर्शी होना चाहिए, ताकि वह उत्पादन में होने वाले परिवर्तनों का पूर्व अनुमान लगा सके।

(ii) संगठनकर्ता में संगठन करने की प्रतिभा तथा कौशल कूट-कूटकर भरा होना चाहिए।

(iii) संगठनकर्ता में मनोवैज्ञानिक क्षमता होनी चाहिए, ताकि वह श्रमिकों की मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों को जानकर उनकी क्षमता, योग्यता व रुचि के अनुसार काम करवा सके।

(iv) संगठनकर्ता संबंधित उद्योग के बारे में सामान्य ज्ञान रखता हो। उसे प्रौद्योगिकी, तकनीकी जानकारी तथा विपणन की कला में पारंगत होना चाहिए।

(v) संगठनकर्ता जितना साहसी और आत्मविश्वास से परिपूर्ण होगा, वह उद्योग को उतनी ऊँची सफलता दिलाने में सक्षम होगा।

(vi) संगठनकर्ता व्यवहार-कुशल, ईमानदार, मृदुभाषी, निष्पक्ष तथा चरित्रवान होना चाहिए। उसमें श्रमिकों व ग्राहकों आदि को संतुष्ट रखने की क्षमता होनी चाहिए।

10. साहस या उद्यमी से आप क्या समझते हैं? उद्यमी के प्रमुख कार्यों पर प्रकाश डालिए।

उ०– **साहसी या उद्यमी का अर्थ–** उत्पादन की क्रिया में, जो उपादान साहस के साथ जुटता है, उसे साहसी या उद्यमी कहा जाता है। प्रत्येक व्यवसाय में कुछ न कुछ जोखिम अवश्य रहता है। अतः व्यवसाय में अनिश्चितता का जोखिम वहन करने वाला उपादान साहसी या उद्यमी कहलाता है। उद्यमी व्यवसाय का सूत्रधार और स्वामी होता है।

साहसी या उद्यमी की परिभाषा– साहसी या उद्यमी को अर्थशास्त्रियों ने निम्नवत् परिभाषित किया है–

''उत्पादन में जोखिम उठाने वाला उपादान उद्यम होता है।'' **–हैने**

हैने के अनुसार प्रत्येक उद्यम में जोखिम निहित रहता है, इस जोखिम को वहन करने वाले साधन को साहसी या उद्यमी कहते हैं।

''उत्पादन में सदैव कुछ न कुछ जोखिम रहता है। इस जोखिम से उत्पन्न होने वाली हानियों को सहन करने के लिए किसी न किसी व्यक्ति की आवश्यकता होती है। जो व्यक्ति इन हानियों को सहन करता है, उसे साहसी या उद्यमी कहते है।''

–प्रो० जे० के० मेहता

प्रो० मेहता के अनुसार उत्पादन में जो व्यक्ति हानि उठाने का जोखिम वहन करने के लिए तैयार होता है, उसे साहसी या उद्यमी कहा जाता है।

उद्यमी के कार्य– उद्यमी द्वारा अग्रलिखित कार्य संपन्न किए जाते हैं–

(i) उद्यमी का मुख्य कार्य उत्पादन में जोखिम को वहन करना होता है।

(ii) उद्यमी अपने साधनों, अनुभवों, योग्यताओं तथा जोखिमों को ध्यान में रखकर व्यवसाय का चुनाव करता है।

(iii) उद्यमी उत्पादन हेतु उचित वस्तु का चुनाव करता है।

(iv) उद्यमी उत्पादन हेतु उचित कार्य-स्थल का चुनाव बड़े ध्यानपूर्वक करता है।

(v) उद्यमी को उत्पादन की इकाई का आकार और उत्पादन का पैमाना चुनना होता है।

(vi) उद्यमी मशीनों, उपकरणों, कच्चे माल तथा श्रम की उचित व्यवस्था करता है।

(vii) उद्यमी नए-नए आविष्कारों की व्यवस्था के साथ-साथ विपणन तंत्र की भी समुचित व्यवस्था करता है।

(viii) उद्यमी को समस्त व्यवसाय पर नियंत्रण रखना होता है। व्यवसाय में नीतियों का निर्धारण तथा सभी विभागों को निर्देश देना भी उसका कार्य है।

(ix) उत्पादन से प्राप्त आय को भूमि, श्रम, पूँजी तथा संगठन आदि उपादानों को लगान, मजदूरी, ब्याज तथा वेतन के रूप में वितरित करना भी उद्यमी का दायित्व है।

❖ प्रोजेक्ट कार्य

अध्यापक की सहायतास से विद्यार्थी स्वयं करें।

49 आर्थिक विकास में राजस्व की आवश्यकता
(केंद्र, राज्य, स्थानीय निकायों की आय के स्रोत; व्यय की मदें, प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष कर)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 494 व 495 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 495 व 496 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. कर का अर्थ तथा महत्व बताइए।

उ०– **'कर' का अर्थ–** नागरिकों द्वारा सरकार को दिया जाने वाला अनिवार्य भुगतान 'कर' कहलाता है। दूसरे शब्दों में, "कर वह अनिवार्य अंशदान है, जो एक करदाता सरकार को चुकाता है।" कर चुकाने के लिए करदाता कानूनी रूप से बाध्य होता है।

कर का महत्व– 'कर' लगाने का महत्व निम्नवत् है–

(i) करों द्वारा सरकार को आय प्राप्त होती है।

(ii) करारोपण से सरकार हानिकारक पदार्थों के उपयोग पर नियंत्रण लगाती है।

(iii) करारोपण से समाज में व्याप्त आर्थिक विषमता दूर हो जाती है।

(iv) करों से प्राप्त आय का उपयोग सरकार राष्ट्र के आर्थिक विकास में करती है।

(v) करारोपण वस्तुओं की मूल्य वृद्धि पर नियंत्रण लगाने का रामबाण उपाय है।

(vi) 'कर' बचतों को बढ़ावा देकर पूँजी निर्माण में सहायक बनाते हैं।

2. कर की परिभाषा और प्रकार लिखिए।

उ०– **कर की परिभाषा-** "कर सरकार को दिए जाने वाले उस अनिवार्य अंशदान को कहते हैं, जो सबके सामान्य हित के लिए किए जाने वाले खर्चों के भुगतान में अदा किया जाता है और जिसका मिलने वाले विशेष लाभों से कोई संबंध नहीं होता।"

कर मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं– प्रत्यक्ष कर तथा अप्रत्यक्ष कर।

3. प्रत्यक्ष कर से क्या तात्पर्य है? प्रत्यक्ष कर की दो विशेषताएँ लिखिए।

उ०– **प्रत्यक्ष कर का अर्थ–** वह कर प्रत्यक्ष कर कहलाता है, जिसका भुगतान उसी व्यक्ति को करना पड़ता है, जिस पर यह लगाया जाता है। दूसरे शब्दों में, "करदाता जिस कर का भुगतान दूसरों पर नहीं टाल सकता, प्रत्यक्ष कर कहलाता है।"

प्रत्यक्ष कर की दो विशेषताएँ–

(i) प्रगतिशीलता– प्रत्यक्ष कर करदाता की क्षमता के अनुसार लगाए जाने के कारण प्रगतिशील होते हैं। ये कर आय की असमानता को दूर करने के गुण के कारण प्रगतिशीलता को वहन करते हैं।

(ii) मितव्ययिता– प्रत्यक्ष करों के पीछे कानूनी बाध्यता होने के कारण, इन्हें करदाता स्वयं अदा कर देता है। अत: इनके एकत्रीकरण में सरकार की मितव्ययिता बनी रहती है।

4. अप्रत्यक्ष कर से क्या आशय है? इसकी दो विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उ०– **अप्रत्यक्ष कर का अर्थ–** वह कर जिसका भार करदाता दूसरे लोगों पर टाल देता है, अप्रत्यक्ष या परोक्ष कर कहलाता है। एक दुकानदार को विविध वस्तुओं पर सरकार को वाणिज्यकर (बिक्री कर) देना पड़ता है, जिसे वह अपने ग्राहकों से वसूलकर सरकार के पास जमा कर देता है। दूसरे शब्दों में, "वह कर, जिसे करदाता दूसरों पर टालने में सफल हो जाता है,

अप्रत्यक्ष या परोक्ष कर कहा जाता है।" बिक्री कर, उत्पाद कर, वाणिज्य कर, सीमा शुल्क, मनोरंजन कर तथा सेवा कर इन करों के उदाहरण है।

अप्रत्यक्ष कर की दो विशेषताएँ–

(i) **सुविधाजनक–** अप्रत्यक्ष कर सुविधाजनक होते हैं, क्योंकि सरकार इन्हें नागरिकों की बजाय उत्पादकों, आयातकों और व्यापारियों से सुगमता से प्राप्त कर लेती है।

(ii) **न्यायपूर्ण–** परोक्ष कर न्यायपूर्ण होते हैं। ये कर उपभोक्ता वस्तुओं पर लगाए जाते हैं, अत: इनका भार समाज के सभी वर्गों को झेलना पड़ता है।

5. प्रत्यक्ष कर तथा अप्रत्यक्ष कर में चार अंतर लिखिए।

उ०– **प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कर में चार अंतर निम्नवत् हैं–**

प्रत्यक्ष कर	अप्रत्यक्ष (परोक्ष कर
1. प्रत्यक्ष करों का भार उसी व्यक्ति पर पड़ता है, जिसके लिए ये देय होते हैं। 2. प्रत्यक्ष करों का भार अन्य व्यक्तियों पर टालना संभव नहीं होता है। 3. प्रत्यक्ष करों में करदाता की कर चुकाने का क्षमता को ध्यान रखा जाता है। 4. प्रत्यक्ष करदाता को स्वयं भुगतान करने पड़ते हैं।	1.अप्रत्यक्ष करों का भार करदाता दूसरों पर टाल सकता है। 2. अप्रत्यक्ष करों का भार अन्य व्यक्तियों पर टालना संभव होता है। 3. अप्रत्यक्ष करों में करदाता की क्षमता को ध्यान में नहीं रखा जाता है। 4. अप्रत्यक्ष करों का भुगतान दूसरे लोग करते हैं।

6. अप्रत्यक्ष करों के चार गुणों का वर्णन कीजिए।

उ०– अप्रत्यक्ष करों के चार गुण निम्नलिखित हैं–

(i) **चोरी की संभावना कम–** परोक्ष करों की चोरी करना संभव नहीं है। उदाहरण के लिए, जब भी उपभोक्ता कोई वस्तु खरीदता है, वाणिज्य कर का भुगतान उसे करना ही पड़ता है।

(ii) **विविधता–** अप्रत्यक्ष करों में विविधता का गुण निहित रहता है, क्योंकि नागरिकों को इन्हें विविध रूपों में चुकाना ही पड़ता है।

(iii) **लोचदार–** अप्रत्यक्ष कर लोचदार होते हैं। सरकार इन करों में वृद्धि करके पर्याप्त आय प्राप्त करने में सफल हो जाती है।

(iv) **विस्तृत आधार–** अप्रत्यक्ष कर समाज के सभी वर्गों के लोगों द्वारा चुकाए जाते हैं। अत: इनका आधार विस्तृत रहता है।

7. राजस्व का अर्थ बताइए।

उ०– लोकतंत्र में सरकार जनहित तथा समाज कल्याण के साथ-साथ आर्थिक विकास हेतु अनेक कार्य करती है। यह कार्य वह विभिन्न संसाधनों द्वारा पूरा करती है। ये संसाधन धन के माध्यम से तथा धन राजस्व के माध्यम से जुटाया जाता है। राजस्व का शाब्दिक अर्थ है, 'राज्य का धन' अर्थात् राजस्व राज्य का वह धन है, जो वह विभिन्न साधनों से जुटाता है। अर्थशास्त्र की भाषा में सरकार की आय-व्यय की क्रियाओं का लेखा-जोखा राजस्व कहलाता है। राजस्व को लोक वित्त या सार्वजनिक वित्त भी कहते हैं।

8. केंद्र सरकार की आय के किन्हीं दो स्रोतों का उल्लेख कीजिए।

उ०– केंद्र सरकार की आय के चार स्रोत निम्नवत् हैं–

(i) **आयकर–** आय पर लगने वाला प्रत्यक्ष कर आयकर केंद्र सरकार लगाती है, जो उसकी आय का मुख्य स्रोत है। केंद्र सरकार कृषि की आय को छोड़कर निर्धारित न्यूनतम आय की सीमा से ऊपर की आय पर कर लगाकर आय प्राप्त करती है। केंद्र सरकार प्रत्येक वित्तीय वर्ष में अपने वार्षिक बजट में आयकर की दरें निश्चित करती है। आयकर से

प्राप्त राजस्व का कुछ भाग वित्त आयोग की सिफारिश पर राज्यों को बाँटा जाता है।

(ii) निगम कर– केंद्र सरकार राष्ट्रीय और विदेशी व्यावसायिक कंपनियों की वार्षिक आय पर जो कर लगाती है, उसे 'निगम कर या कार्पोरेट टैक्स' कहा जाता है। यह प्रत्यक्ष कर निगम की संपूर्ण आय पर एक निश्चित दर से लगाया जाता है।

9. राज्य सरकार के चार स्रोत लिखिए।

उ०– राज्य सरकार की आय के चार स्रोत निम्नवत् हैं–

(i) भू-राजस्व– सरकार राज्य के किसानों से उनकी भूमि पर लगान लगाकर भू-राजस्व प्राप्त करती है। भू-राजस्व राज्य सरकार की आय का एक प्रमुख स्रोत है। जमींदारी उन्मूलन के बाद से सरकार के भू-राजस्व में बहुत वृद्धि हुई है।

(ii) राज्य उत्पाद शुल्क– राज्य सरकार मादक पदार्थ; जैसे– शराब, भाँग तथा अफीम आदि पर आबकारी शुल्क लगाकर राज्य उत्पाद शुल्क वसूल करके भारी आय प्राप्त करती है।

(iii) व्यापार कर– राज्य सरकार व्यापारियों तथा दुकानदारों से व्यापार कर प्राप्त कर अपनी आय बढ़ाती है।

(iv) मनोरंजन कर– राज्य सरकार सिनेमाओं, सर्कसों, मेलों तथा प्रदर्शनियों से मनोरंजन कर वसूलकर आय प्राप्त करती है।

10. राज्य सरकार के व्यय की प्रमुख मदें लिखिए।

उ०– राज्य सरकार के व्यय की प्रमुख मदें निम्नलिखित हैं–

(i) कृषि विकास
(ii) पशुपालन
(iii) सहकारिता एवं सामूहिक विकास कार्य
(iv) सिंचाई की व्यवस्था
(v) उद्योग एवं व्यापार
(vi) शिक्षा तथा जीवन
(vii) चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाएँ
(viii) परिवहन का विकास
(ix) प्रशासनिक कार्य
(x) कानून व्यवस्था
(xi) ऋणों का भुगतान
(xii) कर संग्रह आदि

11. नगरपालिका परिषद् की आय के चार स्रोतों का उल्लेख कीजिए।

उ०– **(i) सीमा या सीमांत कर से आय–** बाहर से रेलवे द्वारा ढोकर लाए जाने वाले माल पर सीमांत कर लगता है, जो स्थानीय निकाय की आय का स्रोत होता है।

(ii) मार्ग कर– स्थानीय निकाय मार्ग में पड़ने वाले पुलों, सड़कों, नदियों से गुजरने वाले वाहनों से टोल टैक्स वसूलकर आय बढ़ाते हैं।

(iii) यात्री कर– तीर्थ स्थलों पर बाहर से आने वाले यात्रियों से यात्री कर वसूलकर स्थानीय निकाय अपनी आय बढ़ाते हैं।

(iv) तहबजारी– सड़क किनारे ठेले लगाने वालों तथा फुटपाथ पर दुकान लगाने वालों से स्थानीय निकाय के अधिकारी तहबजारी वसूलकर, उसकी आय बढ़ाते हैं।

12. ग्राम पंचायत की आय के चार स्रोत तथा व्यय की चार मदों का उल्लेख कीजिए।

उ०– ग्राम पंचायत की आय के चार स्रोत–

(i) भूमि पर उपकर– राज्य सरकार जो भूमिकर लेती है, उसका कुछ अंश स्थानीय निकायों को वितरित कर दिया जाता है, जो उनकी आय का स्रोत बन जाता है।

(ii) काँजी हाउस– जिला पंचायत काँजी हाउस में आवारा पशुओं को रखने तथा बाद में छोड़ने के लिए जुर्माना लेकर आय प्राप्त करती है।

(iii) संपत्ति कर– यह कर ग्रामीण स्थानीय निकाय व्यक्तियों की कुल संपत्ति अथवा व्यापार और उद्योग से प्राप्त होने वाली आय से वसूल करते है।

(iv) पथकर से प्राप्त आय– पुलों, सड़कों तथा घाटों पर ग्रामीण निकाय पथकर वसूलकर आय जुटाते हैं।

13. प्रत्यक्ष करों के चार अवगुण लिखिए।

उ०– प्रत्यक्ष करों के चार अवगुण निम्नवत हैं–

(i) असुविधाजनक– प्रत्यक्ष कर विस्तृत लेखा-जोखा तैयार कर उनका विस्तृत विवरण रखने के कारण असुविधाजनक रहते हैं। इसके लिए करदाता आयकर अधिकारी या सी.ए. की मदद लेता है।

(ii) कष्टदायक– प्रत्यक्ष कर कष्टदायक होते हैं, क्योंकि इनका भुगतान करदाता को स्वयं प्रत्यक्ष रूप से करना पड़ता है। वेतनभोगी लोगों के वेतन से ही कर की निश्चित राशि काटकर वेतन का भुगतान किया जाता है, जो उन्हें कष्टकर लगता है।

(iii) कर चोरी की संभावना– प्रत्यक्ष कर आय के अनुरूप निश्चित दर पर अनिवार्य रूप से चुकाने पड़ते हैं। अत: व्यापारी वर्ग अपनी आय को कम दिखाकर करों की चोरी करने में सफल हो जाता है।

(iv) अधिक खर्चीले– प्रत्यक्ष करों का क्षेत्र व्यापक होने के कारण, इन्हें एकत्र करने में सरकार को भारी व्यय करना पड़ता है।

14. प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष करों का पारस्परिक संबंध स्पष्ट कीजिए।

उ०– प्रत्यक्ष कर और अप्रत्यक्ष कर एक-दूसरे के पूरक हैं। एक संतुलित और न्यायोचित कर प्रणाली का अस्तित्व दोनों ही करों के समन्वय पर टिका होता है। प्रो० डी. मार्को के शब्दों में, "प्रत्यक्ष और परोक्ष कर एक-दूसरे के पूरक हैं और परस्पर एक-दूसरे के दोषों को दूर करते हैं।" दोनों ही प्रकार के करों से समाज में धन और आय के वितरण की असमानता को दूर करना सुगम होता है। प्रो० प्रेस्ट के शब्दो में, "प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कर सरकार द्वारा आय के पुनवितरण के दो परस्पर पूरक ढंग हैं।"

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. क्रेंद्र सरकार की आय के स्त्रोतों का वर्णन कीजिए।

उ०– **केंद्र सरकार की आय के स्त्रोत–** केंद्र सरकार की आय के स्त्रोतों को निम्नलिखित दो भागों में बाँटा गया है–

कर स्त्रोत– केंद्र सरकार को करों के स्त्रोतों के माध्यम से निम्नवत् आय प्राप्त होती है–

(i) आयकर– आय पर लगने वाला प्रत्यक्ष कर आयकर केंद्र सरकार लगाती है, जो उसकी आय का मुख्य स्त्रोत है। केंद्र सरकार कृषि की आय को छोड़कर निर्धारित न्यूनतम आय की सीमा से ऊपर की आय पर कर लगाकर आय प्राप्त करती है। केंद्र सरकार प्रत्येक वित्तीय वर्ष में अपने वार्षिक बजट में आयकर की दरें निश्चित करती है। आयकर से प्राप्त राजस्व का कुछ भाग वित्त आयोग की सिफारिश पर राज्यों को बाँटा जाता है।

(ii) निगम कर– केंद्र सरकार राष्ट्रीय और विदेशी व्यावसायिक कंपनियों की वार्षिक आय पर जो कर लगाती है, उसे 'निगम कर या कार्पोरेट टैक्स' कहा जाता है। यह प्रत्यक्ष कर निगम की संपूर्ण आय पर एक निश्चित दर से लगाया जाता है।

(iii) उपहार कर– किसी व्यक्ति द्वारा दिए गए कुल उपहारों के एक निश्चित मूल्य से अधिक राशि होने पर, केंद्र सरकार उस पर जो कर लगाती है, उसे उपहार कर कहते हैं। शिक्षण संस्थाएँ तथा धार्मिक संस्थान इस कर से मुक्त रहते हैं।

(iv) संपत्ति कर– केंद्र सरकार अविभाजित हिंदू परिवारों की निर्धारित मूल्य से अधिक संपत्ति पर जो कर लगाती है, उसे संपत्ति कर कहा जाता है।

(v) केंद्रीय उत्पाद शुल्क– केंद्र सरकार नशीली वस्तुओं को छोड़कर अन्य सभी वस्तुओं के उत्पादन पर जो कर लगाती है, उसे केंद्रीय उत्पाद शुल्क कहा जाता है। उत्पाद शुल्क से प्राप्त आय का एक निश्चित भाग वित्त आयोग की सिफारिश पर राज्य सरकारों को दिया जाता है।

(vi) सीमा शुल्क– केंद्र सरकार देश से बाहर जाने वाले माल पर निर्यात शुल्क तथा बाहर से आने वाले माल पर आयात शुल्क लगाती है। सामूहिक रूप से दोनों करों को सीमा शुल्क कहा जाता है।

(vii) **सेवा कर–** केंद्र सरकार टेलीफोन सेवा, शेयर्स दलालों, जनरल इंश्योरेंस आदि सेवाओं पर जो कर लगाती है, उसे सेवा कर कहा जाता है।

गैर-कर स्रोत– केंद्र सरकार को गैर-कर स्रोतों से अग्रलिखित आय प्राप्त होती है–

(i) **ब्याज से प्राप्त आय–** केंद्र सरकार राज्य सरकारों, केंद्र शासित क्षेत्रों तथा केंद्रीय प्रतिष्ठानों को ऋण देकर जो आय प्राप्त करती है, उसे ब्याज से प्राप्त आय कहा जाता है।

(ii) **करेंसी तथा सिक्कों से प्राप्त आय–** केंद्र सरकार एक रुपए का नोट छापने तथा सिक्के ढालने का अधिकार रखती है। सरकार को प्रमाणिक सिक्कों तथा पत्र-मुद्रा के निर्गमन से आय प्राप्त होती है।

(iii) **जन-सेवाओं के शुल्क से प्राप्त आय–** केंद्र सरकार शिक्षा, सार्वजनिक चिकित्सा तथा जन-स्वास्थ्य की सुविधाएँ सुलभ कराने के लिए शुल्क वसूलकर आय प्राप्त करती है।

(iv) **आर्थिक सेवाओं से प्राप्त आय–** केंद्र सरकार सड़क, भवन निर्माण, बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं, सहकारिता, लघु सिंचाई, भू-संरक्षण, पशुपालन, डेयरी विकास आदि के लिए सेवाएँ देकर उनके बदले में जो शुल्क वसूलती है, उससे प्राप्त आय को आर्थिक सेवाओं से प्राप्त आय कहते हैं।

(v) **प्रशासनिक सेवाओं से प्राप्त आय–** भारत सरकार प्रशासनिक व्यवस्था तथा केंद्रशासित क्षेत्रों में प्रशासनिक सेवाएँ देकर जो शुल्क वसूल करती है, उससे प्राप्त आय को प्रशासनिक सेवाओं से प्राप्त आय कहा जाता है।

(vi) **विनिवेश से प्राप्त आय–** केंद्र सरकार सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों का विनिवेश करके आय प्राप्त करती है।

(vii) **अन्य स्रोतों से प्राप्त आय–** केंद्र सरकार को रेलवे विभाग से, डाक तार विभाग से, सार्वजनिक उपक्रमों से भी आय प्राप्त होती है।

2. केंद्र सरकार के व्यय की मुख्य मदों का वर्णन कीजिए।

उ०– **केंद्र सरकार की व्यय की मदें–** केंद्र सरकार निम्नलिखित मदों पर व्यय करती है–

(i) **प्रशासनिक सेवाओं पर व्यय–** केंद्र सरकार प्रशासन चलाने, सामाजिक सेवाओं तथा राज्य सरकारों को अनुदान देने पर राजस्व खाते से व्यय करती है।

(ii) **सार्वजनिक हित तथा परियोजनाओं पर व्यय–** केंद्र सरकार रेल, डाक-तार, सामाजिक हित, बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं के लिए पूँजी खाते से व्यय करती है।

(iii) **प्रतिरक्षा सेवाओं पर व्यय–** भारत सरकार सेना के तीनों अंगों के रख-रखाव, तथा युद्धक सामग्री खरीदने पर भारी व्यय करती है।

(iv) **सामान्य सेवाओं पर व्यय–** केंद्र सरकार संसद, विविध मंत्रालयों, विदेशों में भारतीय राजदूतों, राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति आदि के लिए भारी व्यय करती है।

(v) **ऋण सेवाओं पर व्यय–** केंद्र सरकार राष्ट्र की विकास योजनाओं तथा प्रतिरक्षा के लिए मूल्यवान तथा उपयोगी उपकरण क्रय करने के लिए देशवासियों तथा विदेशियों से भारी मात्रा में ऋण लेकर व्यय करती है।

(vi) **सामाजिक तथा सामुदायिक सेवाओं पर व्यय–** केंद्र सरकार शिक्षा, स्वास्थ्य, श्रम कल्याण तथा पिछड़ी जातियों के कल्याण हेतु चलाई जाने वाली योजनाओं पर भारी व्यय करती है।

(vii) **राज्य सरकारों के अनुदान पर व्यय–** केंद्र सरकार वित्त आयोग की सिफारिशों पर राज्य सरकारों को अनुदान देकर व्यय करती है।

(viii) **कर एकत्र करने पर व्यय–** केंद्र सरकार को कर वसूलने के लिए अनेक प्रशासनिक कार्यालयों तथा अधिकारियों पर व्यय करना पड़ता है।

(ix) **कृषि तथा उद्योगों के विकास पर व्यय–** केंद्र सरकार को कृषि तथा उद्योगों के विकास के लिए कार्यक्रम चलाने पर भी भारी व्यय करना पड़ता है।

(x) **अन्य मदों पर व्यय–** केंद्र सरकार रेल, सड़क, वायु तथा जल परिवहन के विकास पर, संचार तथा दूर-संचार का जाल फैलाने पर, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विकास पर, अंतरिक्ष विज्ञान के प्रसार पर तथा ऊर्जा, खाद, कुकिंग गैस एवं सार्वजनिक वितरण प्रणाली आदि मदों पर भी भारी व्यय करती है।

3. **राज्य सरकार की आय के स्रोतों का वर्णन कीजिए।**

उ०– **राज्य सरकार की आय के स्रोत–** राज्य सरकार को भी प्रशासनिक व्यवस्था चलाने के लिए आय के स्रोत जुटाने होते हैं। प्राय: सभी राज्य सरकारों की आय के स्रोत निम्नवत् होते हैं–

(i) **कर स्रोत–** राज्य सरकार को कर स्रोतों से प्राप्त होने वाली आय का विवरण निम्नवत् है–

(क) **भू-राजस्व–** सरकार राज्य के किसानों से उनकी भूमि पर लगान लगाकर भू-राजस्व प्राप्त करती है। भू-राजस्व राज्य सरकार की आय का एक प्रमुख स्रोत है। जमींदारी उन्मूलन के बाद से सरकार के भू-राजस्व में बहुत वृद्धि हुई है।

(ख) **राज्य उत्पाद शुल्क–** राज्य सरकार मादक पदार्थ; जैसे– शराब, भाँग तथा अफीम आदि पर आबकारी शुल्क लगाकर राज्य उत्पाद शुल्क वसूल करके भारी आय प्राप्त करती है।

(ग) **व्यापार कर–** राज्य सरकार व्यापारियों तथा दुकानदारों से व्यापार कर प्राप्त कर अपनी आय बढ़ाती है।

(घ) **मनोरंजन कर–** राज्य सरकार सिनेमाओं, सर्कसों, मेलों तथा प्रदर्शनियों से मनोरंजन कर वसूलकर आय प्राप्त करती है।

(ङ) **व्यवसाय कर तथा कृषि आयकर–** राज्य सरकार व्यवसायियों से व्यवसाय कर तथा बड़े कृषकों से कृषि आयकर वसूल करती है।

(च) **स्टांप तथा रजिस्ट्रेशन शुल्क–** सरकार मकान, दुकान तथा भूमि के कर-विक्रय पर स्टांप तथा रजिस्ट्रेशन फीस वसूलकर अपनी आय बढ़ाती है।

(छ) **व्यापारिक स्टांप शुल्क–** राज्य सरकार विनिमय पत्रों, प्रतिज्ञा पत्रों तथा हुंडियों पर शुल्क वसूलकर आय प्राप्त करती है।

(ज) **न्यायिक तथा न्यायालयों से प्राप्त शुल्क–** राज्य सरकार दीवानी तथा फौजदारी मुकदमे दायर होने पर उनसे शुल्क वसूल करती है।

(झ) **वाहन कर–** राज्य सरकार मोटर, कार, ट्रक, ट्रैक्टर व मोटर साइकिलों के विक्रय पर कर लगाकर आय प्राप्त करती है।

(ण) **विद्युत शुल्क–** राज्य सरकार विद्युत उपभोक्ताओं से प्रति यूनिट बिजली खर्च करने पर शुल्क वसूलकर आय प्राप्त करती है।

(त) **केंद्र सरकार से प्राप्त होने वाली आय–** राज्य सरकार को आयकर तथा केंद्रीय उत्पाद कर से एक निश्चित भाग प्राप्त होता है, जो राज्य की आय का स्रोत बनता है।

(ii) **गैर-कर स्रोत–** राज्य सरकार को करों के अतिरिक्त निम्नलिखित स्रोतों से आय प्राप्त होती है–

(क) **सिंचाई के साधनों से प्राप्त आय–** राज्य सरकार को नहरों तथा नलकूपों से सिंचाई व्यवस्था करने के बदले में आय प्राप्त होती है।

(ख) **वन संसाधनों से आय–** राज्य सरकार वनों को काटने तथा उनसे वन-उत्पादन एकत्र करने का ठेका देकर आय प्राप्त करती है।

(ग) **नागरिक प्रशासन से आय–** राज्य सरकार जेल, न्याय, पुलिस, चिकित्सा, कृषि तथा पशुपालन के माध्यमों से भी आय प्राप्त करती है।

(घ) **सरकारी उपक्रमों से प्राप्त आय–** राज्य में स्थापित होने वाले सार्वजनिक उपभोग की वस्तुओं का निर्माण करने वाले सरकारी उपक्रमों तथा सार्वजनिक निर्माण-कार्यों से कर के रूप में आय प्राप्त करती है।

(ङ) **ब्याज से प्राप्त आय–** राज्य सरकार अपने विभागीय तथा गैर-विभागीय उपक्रमों, कृषकों, स्थानीय निकायों सरकारों को ऋण देकर, उसके बदले में ब्याज वसूलकर आय प्राप्त करती है।

(च) **केंद्र से प्राप्त होने वाले आय के स्रोत–** राज्य सरकार को केंद्र सरकार से प्राप्त होने वाले अनुदान तथा ऋण भी आय के स्रोत बन जाते हैं।

4. राज्य सरकार अथवा उत्तर प्रदेश सरकार के व्यय की मुख्य मदों का वर्णन कीजिए।

उ०– **राज्य सरकार (उत्तर प्रदेश सरकार) की व्यय की मदें–** राज्य सरकार को निम्नलिखित मदों पर व्यय करना पड़ता है–

(i) **कृषि के विकास पर व्यय–** राज्य सरकार कृषि के विकास हेतु विविध योजनाएँ चलाने पर भारी धन व्यय करती है।

(ii) **पशुपालन पर–** सरकार पशु चिकित्सालयों, प्रजनन केंद्रों, गौशालाओं के सुधार तथा पशु-चिकित्सा संबंधी शिक्षा तथा अनुसंधान की मदों पर व्यय करती है।

(iii) **सहकारिता तथा सामुदायिक विकास कार्य–** राज्य सरकार सहकारी संस्थाओं के विकास तथा राज्य में सामुदायिक विकास और जन कल्याण की योजनाएँ चलाने पर भारी व्यय करती है।

(iv) **सिंचाई की व्यवस्था–** राज्य सरकार नहरें बनाने एवं नलकूप स्थापित करने तथा उनके रख-रखाव पर भारी व्यय करती है।

(v) **उद्योग तथा व्यापार–** राज्य सरकार कुटीर उद्योग धंधों के विकास, सार्वजनिक उपक्रमों के संचालन तथा व्यापार की सुविधाएँ जुटाने पर भारी व्यय करती है।

(vi) **शिक्षा तथा विज्ञान–** राज्य सरकार शिक्षण संस्थानों की स्थापना तथा उनके संचालन पर भारी धन व्यय करती है।

(vii) **चिकित्सा तथा स्वास्थ्य सेवाएँ–** राज्य सरकार सरकारी अस्पतालों में रोगियों के इलाज, दवाई तथा डॉक्टरों और कर्मचारियों को वेतन देने पर भारी धन व्यय करती है।

(viii) **परिवहन का विकास–** राज्य सरकार सड़कें बनवाने, पुल बनवाने तथा उनके रख-रखाव की व्यवस्था करने पर भारी व्यय करती है।

(ix) **प्रशासनिक कार्य–** राज्य सरकार राज्यपाल, मंत्रियों तथा सचिवों, पुलिस, न्याय विभाग, राजस्व विभाग के अधिकारियों और कर्मचारियों के वेतन पर भारी धन व्यय करती है।

(x) **कानून व्यवस्था–** राज्य सरकार न्याय, पुलिस तथा जेल आदि पर भारी व्यय करती है।

(xi) **कर संग्रह–** राज्य सरकार विविध प्रकार के कर संग्रह की व्यवस्था तथा उनके कर्मचारियों के वेतन पर व्यय करती है।

(xii) **ऋणों का भुगतान–** राज्य सरकार जो ऋण लेती है, उनका ब्याज चुकाने पर व्यय करती है।

(xiii) **व्यय की अन्य मदें–** राज्य सरकार सेवानिवृत कर्मचारियों को पेंशन का भुगतान करने पर, प्राकृतिक आपदाओं के प्रबंधन तथा विस्थापितों के पुनर्वास पर भारी व्यय करती है।

5. नगर निगम अथवा नगरपालिका परिषद् की आय के स्रोतों तथा व्यय की मदों का वर्णन कीजिए।

उ०– **नगरीय स्थानीय निकायों (नगर निगम, नगरपालिका परिषद्, नगर पंचायत) की आय के स्रोत–** नगरीय स्थानीय निकायों की आय के स्रोत निम्नवत् हैं–

(i) **सीमा या सीमांत कर से आय–** बाहर से रेलवे द्वारा ढोकर लाए जाने वाले माल पर सीमांत कर लगता है, जो स्थानीय निकाय की आय का स्रोत होता है।

(ii) **मार्ग कर–** स्थानीय निकाय मार्ग में पड़ने वाले पुलों, सड़कों, नदियों से गुजरने वाले वाहनों से टोल टैक्स वसूलकर आय बढ़ाते हैं।

(iii) **यात्री कर–** तीर्थ स्थलों पर बाहर से आने वाले यात्रियों से यात्री कर वसूलकर स्थानीय निकाय अपनी आय बढ़ाते हैं।

(iv) **तहबजारी–** सड़क किनारे ठेले लगाने वालों तथा फुटपाथ पर दुकान लगाने वालों से स्थानीय निकाय के अधिकारी तहबजारी वसूलकर, उसकी आय बढ़ाते हैं।

(v) **भवन कर तथा जल कर–** स्थानीय निकाय मकान के मालिकों से भवन कर(गृहकर) तथा जल कर वसूलकर अपनी आय में सम्मिलित करते हैं।

(vi) **वाहन कर–** नगर निगम मोटरों, ऊँट गाड़ियों, घोड़ों-ताँगों तथा रिक्शा आदि से वाहन कर के रूप में आय प्राप्त करते हैं।

(vii) **संपत्ति कर–** स्थानीय निकाय नगर निगमों तथा नगर परिषदों की सीमा में स्थित भूमि तथा मकान मालिकों से वार्षिक किराये के रूप में भवन कर तथा विकास कर वसूल करके आय कमाते हैं।

(viii) **सेवा कर तथा विकास कर–** स्थानीय निकाय सड़क, पुल, नालियाँ बनवाने, जल तथा प्रकाश की व्यवस्था करने के बदले में विकास कर तथा शिक्षा, बिजली, पेयजल, प्रकाश तथा सफाई सेवाओं के बदले में सेवा कर वसूलकर आय प्राप्त करते हैं।

(ix) **शुल्क तथा अनुज्ञा-पत्र–** स्थानीय निकाय नोटिस शुल्क, नकल लेने का शुल्क एवं ताँगा, साइकिल, ठेला, रिक्शा आदि से अनुज्ञा-पत्र देने का शुल्क वसूलकर आय बढ़ाते हैं।

(x) **आय के अन्य स्रोत–** स्थानीय निकाय नगर बस सेवा चलवाकर तथा दुकानें, भवन, कार्यालय किराए पर चढ़ाकर भी आय प्राप्त करती हैं।

(xi) **सरकारी अनुदान व ऋण–** स्थानीय निकायों को राज्य सरकार तथा केंद्र सरकार अनुदान तथा ऋण देकर, उनकी आय के स्रोत बढ़ाती हैं।

(xii) **अन्य स्रोतों से प्राप्त आय–** स्थानीय निकायों को निवेशों पर मिलने वाले ब्याज की आय, भूमि तथा मकानों से आय, डाक-बँगलों के किरायों से आय तथा बाजारों और बूचड़खानों से भी आय प्राप्त होती है।

नगर निकायों (नगर निगम, नगर पालिका परिषद्, नगर पंचायत) की व्यय की मदें– नगर निकायों की समस्त संस्थाएँ संविधान में निर्धारित निम्नलिखित कार्य-क्षेत्रों में व्यय करती हैं–

(i) भूमि के विविध उपयोग तथा भवनों के निर्माण पर व्यय।
(ii) सुरक्षा की दृष्टि से पुराने तथा जर्जर भवनों को सुरक्षात्मक ढंग से गिरवाने पर व्यय।
(iii) सड़क, पुल, नालियाँ तथा खड़ंजे बनाने पर व्यय।
(iv) जन-स्वास्थ्य, सफाई, कूड़ा-कर्कट प्रबंधन, नालियाँ, शौचालय तथा मूत्रालय बनवाने पर व्यय।
(v) पेयजल तथा औद्योगिक संस्थाओं को जलापूर्ति कराने पर व्यय।
(vi) क्षेत्र के आर्थिक विकास तथा जन कल्याण के कार्यों पर व्यय।
(vii) चिकित्सालयों के निर्माण, रोगों के इलाज तथा संक्रामक रोगों की रोकथाम पर व्यय।
(viii) सामाजिक वानिकी के विकास, पर्यावरण सुरक्षा तथा पारिस्थितिकी सुधारों पर व्यय।
(ix) दुर्बलवर्ग, मंदबुद्धि तथा दिव्यांग लोगों के कल्याण पर व्यय।
(x) गंदी बस्तियों के सुधार तथा विकास कार्यों पर व्यय।
(xi) नगरों में पार्क, उद्यान तथा क्रीड़ा-स्थलों के विकास एवं रख-रखाव पर व्यय।
(xii) कब्रिस्तान, शमशान तथा शवदाह गृहों की व्यवस्था पर व्यय।
(xiii) नगरों में गरीबी उन्मूलन करने तथा रोजगार के नए साधन जुटाने पर व्यय।
(xiv) अलाव जलवाने, पेयजल की व्यवस्था करने तथा रैन बसेरे बनवाने पर व्यय।
(xv) पशु चिकित्सालयों तथा गौशालाओं के रख-रखाव पर व्यय।
(xvi) जन्म-मृत्यु का रजिस्ट्रेशन करने पर व्यय।
(xvii) बस स्टॉप बनवाने, रिक्शा स्टैंड तथा ताँगा स्टैंड बनवाने तथा उनके रख-रखाव कराने पर व्यय।
(xviii) मृतक पशुओं को उठवाने तथा उनका चमड़ा निकलवाने पर व्यय।
(xix) नगर के सौंदर्यीकरण पर होने वाला व्यय।
(xx) समस्त व्यवस्थाओं में लगे अधिकारियों, कर्मचारियों तथा सफाई कर्मचारियों के वेतन भुगतान पर होने वाला व्यय।

6. प्रत्यक्ष करों के गुण और दोषों की विवेचना कीजिए।

उ०– प्रत्यक्ष करों के गुण– प्रत्यक्ष करों में मुख्य रूप से निम्नलिखित गुण पाए जाते हैं–

(i) प्रगतिशीलता– प्रत्यक्ष कर करदाता की क्षमता के अनुसार लगाए जाने के कारण प्रगतिशील होते हैं। ये कर आय की असमानता को दूर करने के गुण के कारण प्रगतिशीलता को वहन करते हैं।

(ii) मितव्ययिता– प्रत्यक्ष करों के पीछे कानूनी बाध्यता होने के कारण, इन्हें करदाता स्वयं अदा कर देता है। अत: इनके एकत्रीकरण में सरकार की मितव्ययिता बनी रहती है।

(iii) निश्चितता– प्रत्यक्ष कर देने में करदाता को पता रहता है कि उसे कहाँ कब और कितना कर देना है।

(iv) लोचकता– प्रत्यक्ष करों की दरों को सरकार आवश्यकता के अनुसार कम-अधिक कर सकती है। अत: इनमें लोचकता का गुण पाया जाता है।

(v) न्यायशीलता– प्रत्यक्ष कर सामाजिक न्यायशीलता का अनुपालन करते हैं, क्योंकि धनवानों को अधिक तथा निर्धनों को कम कर देना होता है।

(vi) उत्पादकता– आर्थिक वृद्धि के साथ-साथ राष्ट्र में जैसे समृद्धि बढ़ती है, करों में भी वृद्धि होती जाती है, जो राष्ट्र की उत्पादकता को बढ़ाने में सहायक होती है।

(vii) सुविधाजनक– प्रत्यक्ष करों का भुगतान उन लोगों को करना पड़ता है, जिनकी आय अधिक होने के साथ-साथ कर देने की क्षमता भी अधिक होती है। अत: ये कर सुविधाजनक होते हैं।

प्रत्यक्ष करों के दोष– प्रत्यक्ष करों में निम्नलिखित दोष पाए जाते हैं–

(i) असुविधाजनक– प्रत्यक्ष कर विस्तृत लेखा-जोखा तैयार कर उनका विस्तृत विवरण रखने के कारण असुविधाजनक रहते हैं। इसके लिए करदाता आयकर अधिकारी या सी.ए. की मदद लेता है।

(ii) कष्टदायक– प्रत्यक्ष कर कष्टदायक होते हैं, क्योंकि इनका भुगतान करदाता को स्वयं प्रत्यक्ष रूप से करना पड़ता है। वेतनभोगी लोगों के वेतन से ही कर की निश्चित राशि काटकर वेतन का भुगतान किया जाता है, जो उन्हें कष्टकर लगता है।

(iii) कर चोरी की संभावना– प्रत्यक्ष कर आय के अनुरूप निश्चित दर पर अनिवार्य रूप से चुकाने पड़ते हैं। अत: व्यापारी वर्ग अपनी आय को कम दिखाकर करों की चोरी करने में सफल हो जाता है।

(iv) अधिक खर्चीले– प्रत्यक्ष करों का क्षेत्र व्यापक होने के कारण, इन्हें एकत्र करने में सरकार को भारी व्यय करना पड़ता है।

(v) जटिलता– प्रत्यक्ष कर अधिक जटिल होते हैं। इन्हें सरकार मनमानी दर से वसूल करती है। इनकी जटिलता भ्रष्टाचार को जन्म देती है।

(vi) पूँजी-निर्माण में बाधक– प्रत्यक्ष करों की दर ऊँची होने पर लोग बचत नहीं कर पाते, जिससे पूँजी-निर्माण में बाधा पड़ती है।

(vii) सीमित आधार– प्रत्यक्ष कर केवल धनवान लोगों पर ही लगाए जाते हैं। अत: इन करों का आधार बहुत सीमित हो जाता है।

7. अप्रत्यक्ष करों के गुण और दोषों पर प्रकाश डालिए।

उ०– अप्रत्यक्ष करों के गुण– अप्रत्यक्ष करों में निम्नलिखित गुण पाए जाते हैं–

(i) सुविधाजनक– अप्रत्यक्ष कर सुविधाजनक होते हैं, क्योंकि सरकार इन्हें नागरिकों की बजाय उत्पादकों, आयातकों और व्यापारियों से सुगमता से प्राप्त कर लेती है।

(ii) न्यायपूर्ण– परोक्ष कर न्यायपूर्ण होते हैं। ये कर उपभोक्ता वस्तुओं पर लगाए जाते हैं, अत: इनका भार समाज के सभी वर्गों को झेलना पड़ता है।

(iii) चोरी की संभावना कम– परोक्ष करों की चोरी करना संभव नहीं है। उदाहरण के लिए, जब भी उपभोक्ता कोई वस्तु खरीदता है, वाणिज्य कर का भुगतान उसे करना ही पड़ता है।

(iv) **विविधता–** अप्रत्यक्ष करों में विविधता का गुण निहित रहता है, क्योंकि नागरिकों को इन्हें विविध रूपों में चुकाना ही पड़ता है।

(v) **लोचदार–** अप्रत्यक्ष कर लोचदार होते हैं। सरकार इन करों में वृद्धि करके पर्याप्त आय प्राप्त करने में सफल हो जाती है।

(vi) **विस्तृत आधार–** अप्रत्यक्ष कर समाज के सभी वर्गों के लोगों द्वारा चुकाए जाते हैं। अत: इनका आधार विस्तृत रहता है।

(vii) **मितव्ययिता–** अप्रत्यक्ष करों को एकत्र करने में सरकार को अधिक व्यय नहीं करना पड़ता। अत: ये कम व्यय में ही सुलभ हो जाते हैं।

(viii) **सामाजिक कल्याण में सहायक–** सरकार शराब, बीड़ी, सिगरेट, अफीम आदि मादक पदार्थों पर अधिक कर लगाकर, इनके उपभोग को सीमित करके सामाजिक कल्याण का पथ प्रशस्त कर देती है।

अप्रत्यक्ष करों के दोष– अप्रत्यक्ष करों में निम्नलिखित दोष पाए जाते हैं–

(i) **असमानता–** प्रत्यक्ष कर उपभोक्ता पदार्थों पर लगाए जाते हैं। अत: समाज के दुर्बल वर्ग पर इनका बुरा प्रभाव पड़ता है। इनमें असमानता का दोष विद्यमान रहता है।

(ii) **अनिश्चितता–** अप्रत्यक्ष कर समाज के लोगों के उपभोग पर निर्भर होते हैं। अत: सरकार इनसे प्राप्त होने वाली आय का निश्चित अनुमान लगाने में असफल रहती है।

(iii) **चोरी की संभावना–** अप्रत्यक्ष करों की चोरी की संभावनाएँ अधिक रहती हैं। विक्रेता ग्राहक को बिना रसीद के माल बेचकर, प्राइवेट बस वाले सवारियों को टिकट न देकर करों की चोरी करते हैं।

(iv) **मितव्ययिता का अभाव–** अप्रत्यक्ष करों के एकत्रीकरण तथा करों की चोरी रोकने के लिए सरकार को भारी व्यय करने के कारण इन करों में मितव्ययिता का अभाव पाया जाता है।

(v) **मंदी और मँहगाई काल में अनिश्चितता–** मंदी आने पर उपभोग घटता है। अत: परोक्ष करों की मात्रा भी घटती है, जबकि मँहगाई बढ़ने से जनता पर करों का भार अधिक पड़ जाता है।

(vi) **शोषण को बढ़ावा–** व्यापारी वर्ग परोक्ष करों के नाम पर उपभोक्ताओं से अधिक मूल्य वसूलकर, उनका शोषण करते हैं।

(vii) **आर्थिक अनिश्चितता–** परोक्ष कर बढ़ने से उपभोक्ता वस्तुओं की माँग घट जाती है, जिससे बेरोजगारी तथा आर्थिक क्षेत्र में अनिश्चितता फैल जाती है।

8. कर किसे कहते हैं? करारोपण के महत्व की विवेचना कीजिए।

उ०– कर एक अनिवार्य अंशदान हैं, जिसे सरकार व्यक्तियों से उन खर्चों की पूर्ति के लिए वसूल करती है जो सामान्य हित के लिए किए जाते हैं। इसका संबंध किसी विशेष लाभ की प्राप्ति से नहीं होता है।

करारोपण के उद्देश्य– करारोपण के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

(i) **आय प्राप्त करना–** प्रत्येक सरकार को अपने कार्यों को पूरा करने के लिए धनराशि की आवश्यकता होती है। सरकार द्वारा आय प्राप्त करने का एक मुख्य साधन करारोपण है।

(ii) **नियमन तथा नियंत्रण करना–** करारोपण का उद्देश्य उपभोग, आयातों, निर्यातों, लाभ आदि को नियमित करना भी होता है। उदाहरणार्थ, शराब या नशीली वस्तुओं के उपभोग को नियमितम करने के लिए सरकार शराब पर भारी मात्रा में कर लगा देती है। सरकार जिन वस्तुओं के आयातों को कम करना चाहती है उन पर अधिक आयात-कर लगा देती है। इसके फलस्वरूप आयातित-वस्तुओं की कीमतें बढ़ जाती हैं तथा माँग कम हो जाती है।

(iii) **साधनों का आवंटन–** करारोपण का उद्देश्य उत्पादन के साधनों के आवंटन में परिवर्तन करना भी है। यदि सरकार विलासिता की वस्तुओं के उत्पादन से साधनों को हटाकर अनिवार्य वस्तुओं के उत्पादन में उनका प्रयाग करना चाहती है, तो वह विलासिता-वस्तुओं पर अधिक कर लगा देती है तथा अनिवार्य वस्तुओं से कर हटा देती है। विलासिता-वस्तुओं पर अधिक कर लगाए जाने से उनकी कीमतें बढ़ जाती हैं तथा उनकी माँग कम हो जाती है।

(iv) **आर्थिक असमानताएँ कम करना–** करारोपण का एक मुख्य उद्देश्य आय तथा संपत्ति की असमानताओं को कम करना है। एक ओर सरकार करों की ऊँची दर द्वारा धनी वर्ग से अधिक धनराशि प्राप्त करके उनकी आय तथा संपत्ति

को कम करती है। दूसरी ओर, निर्धनों की आय को कर मुक्त रखकर तथा धनी वर्ग से करों के रूप में प्राप्त धनराशि से निर्धन वर्ग को अधिक सुविधाएँ देकर उनके जीवन-स्तर को ऊँचा उठा सकती है।

(v) **आर्थिक विकास–** सरकार करों द्वारा प्राप्त आय का प्रयोग उत्पादक क्रियाओं में करती है। फलस्वरूप देश की उत्पादन क्षमता बढ़ती है तथा आर्थिक विकास की दर में वृद्धि होती है।

(vi) **कीमत-वृद्धि पर नियंत्रण–** करारोपण का एक उद्देश्य कीमत-वृद्धि को नियंत्रित करना है। करों द्वारा सरकार जनता के पास मुद्रा की मात्रा को कम कर देती है, जिससे वस्तुओं की माँग कम हो जाती है तथा कीमत वृद्धि को नियंत्रित करना संभव हो जाता है।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई-1 (ख) : भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का योगदान

50 अर्थव्यवस्था में कृषि का स्थान

(भूमि सुधार, जमींदारी उन्मूलन, चकबंदी, हदबंदी, कृषि-श्रमिक, कृषि में निविष्टियाँ)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 504 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 504 व 505 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के कोई तीन महत्व लिखिए।

उ०– भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के तीन महत्व निम्नलिखित हैं–

(i) **राष्ट्रीय आय का महत्वपूर्ण स्रोत–** भारत के 65% लोगों को रोजगार कृषि क्षेत्र से प्राप्त होता है। कृषि भारत की राष्ट्रीय आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत है, जो राष्ट्रीय आय का 14% प्रदान करती है।

(ii) **रोजगार का प्रमुख साधन–** कृषि भारत में रोजगार देने वाला प्रमुख साधन है। देश की 58% जनसंख्या प्रत्यक्ष रूप से कृषि व्यवसाय से रोजगार पाती है।

(iii) **उद्योगों के विकास का आधार–** कृषि उत्पादों का प्रयोग लघु, कुटीर एवं बड़े विनिर्माण उद्योगों में कच्चे माल के रूप में किया जाता है। यह चीनी उद्योग, सूती वस्त्र उद्योग, खाद्य तेल उद्योग, जूट उद्योग, चाय तथा कॉफी उद्योग, रबड़ उद्योग तथा रेशम उद्योग को कच्चे माल देकर उनका पोषण करती है।

2. भारत में किए जा रहे भूमि सुधार कार्यक्रमों के नाम लिखिए।

उ०– भारत में किए जा रहे भूमि सुधार कार्यक्रमों के नाम निम्नलिखित हैं–

(i) जमींदारी उन्मूलन (ii) भूमि जोतों की हदबंदी

(iii) जोतों की चकबंदी (iv) काश्तकारी व्यवस्था में सुधार

3. भूमि सुधार कार्यक्रम क्या हैं? उनके दो उद्देश्य लिखिए।

उ०– **भूमि सुधार कार्यक्रम–** भूमि सुधार कार्यक्रम से आशय भूमि के स्वामित्व एवं कृषि क्षेत्र में व्याप्त बुराइयों को दूर करने से लगाया जाता है। दूसरे शब्दों में, "भूमि सुधार उन संस्थागत परिवर्तनों से जुड़ा है, जिनमें भूमि का स्वामित्व कृषकों को

सौंपना तथा कृषि प्रणाली में व्याप्त दोषों को दूर करना है।" भूमि सुधार कार्यक्रम भूमि प्रबंधन के साथ-साथ कृषि प्रणाली में सुधारों से भी जुड़ा है।

प्रो० गुन्नार मिर्डल ने भूमि सुधार को इन शब्दों में परिभाषित किया है, "भूमि सुधार से आशय व्यक्ति और भूमि के संबंधों में नियोजन और संस्थागत पुनर्गठन से है।" भूमि सुधार कार्यक्रमों का लक्ष्य मध्यस्थों की समाप्ति, कृषि जोतों की सुरक्षा चकबंदी, जोतों की उच्चतम सीमा का निर्धारण, सहकारी खेती तथा कृषि व्यवस्था में आमूलचूल सुधार लाना है।

भूमि सुधार कार्यक्रमों के दो उद्देश्य निम्नलिखित है।

(i) भूस्वामित्व व्यवस्था को कानूनी रूप से चुस्त बनाना।

(ii) भूमि के दोषों और कृषि व्यवस्था की कठिनाइयों को दूर करना।

4. चकबंदी से आप क्या समझते हैं? चकबंदी के दो प्रकारों का उल्लेख कीजिए।

उ०– **जोतों की चकबंदी–** भारत में कृषि जोतें छोटी और दूर-दूर छिटकी हुई थीं। अलग-अलग व दूर-दूर खेतों में कृषि व उसकी देखभाल करने में समय और श्रम की अनावश्क बर्बादी थी। सरकार ने इससे छुटकारा पाने का जो उपाय खोज निकाला, उसे चकबंदी नाम दिया गया। चकबंदी के माध्यम से दूर-दूर बिखरे खेत, एक विशाल चक में बदल दिए जाते हैं। दूसरे शब्दों में, "चकबंदी उस प्रक्रिया को कहते हैं, जिसके द्वारा कृषकों की दूर-दूर बिखरी अनार्थिक जोतों को एक विशाल चक में बदल दिया जाता है।" चकबंदी एक ऐसी अनूठी तकनीक है, जो एक परिवार की छोटी-छोटी जोतों के टुकड़ों को एक विशाल खेत में बदल देती है।

चकबंदी के दो रूप हैं– एच्छिक चकबंदी तथा अनिवार्य चकबंदी। कृषक की इच्छा होने पर की जाने वाली चकबंदी ऐच्छिक चकबंदी कही जाती है, जबकि अनिवार्य रूप से लागू की गई चकबंदी की प्रक्रिया अनिवार्य चकबंदी कही जाती है। भारत में अब तक 600 हेक्टेयर भूमि की चकबंदी की जा चुकी है। पंजाब तथा हरियाणा राज्यों में चकबंदी का लक्ष्य पूरा किया जा चुका है, जबकि उत्तर प्रदेश में इसका 90% कार्य पूरा हो चुका है।

5. कृषि-श्रमिक किसे कहते हैं? कृषि-श्रमिकों की दो समस्याएँ लिखिए।

उ०– **कृषि-श्रमिक–** दूसरे किसानों के खेतों में श्रम बेचकर मजदूरी पाने वाला व्यक्ति कृषि-श्रमिक के नाम से जाना जाता है। दूसरे शब्दों, "वह व्यक्ति जो कृषि क्षेत्र में श्रमिक का कार्य कर आजीविका कमाता है, कृषि-श्रमिक कहलाता है। कृषि-श्रमिक दो प्रकार के होते हैं। पहले वे, जिनके पास भूमि का छोटा-सा टुकड़ा होता है, जिसमें वे साल के कुछ माह खेती करते हैं तथा शेष समय दूसरे किसानों के खेतों में श्रमिक का कार्य करते हैं। दूसरे वे, जिनके पास भूमि नहीं होती। ऐसे भूमिहीन श्रमिक सालभर दूसरों के खेतों में श्रम बेचकर अपनी आजीविका कमाते हैं। कृषि जाँच समिति ने कृषि-श्रमिक को इन शब्दों में परिभाषित किया है, "कृषि-श्रमिक वह व्यक्ति है, जो वर्ष पर्यंत अपने कार्य के समस्त दिनों में आधे से अधिक दिन किराए के श्रमिक के रूप में कृषि कार्यों में लगा रहता है।" 2011 ई० की जनगणना के अनुसार भारत में कृषि-श्रमिकों की संख्या 9.7 करोड़ है।

भारतीय कृषि-श्रमिकों की समस्याएँ– भारतीय कृषि-श्रमिक अनेक कठिनाइयों से ग्रसित हैं। उनकी मुख्य दो समस्याएँ निम्न हैं–

(i) मौसमी व्यवसाय– कृषि-श्रमिकों की मुख्य समस्या यह है कि उन्हें केवल फसल के मौसम में ही रोजगार मिल पाता है, मौसमी रोजगार के कारण वर्ष के शेष समय में वे बेरोजगार बने रहते हैं।

(ii) कम मजदूरी– कृषि क्षेत्र असंगठित क्षेत्र है। अत: उसमें मजदूरी की दर कम है, कृषि-श्रमिकों को कम मजदूरी की समस्या को झेलना पड़ता है।

6. कृषि-श्रमिकों की समस्याओं को दूर करने के लिए तीन उपाय सुझाइए।

उ०– **कृषि-श्रमिकों की समस्याओं के निवारण के उपाय–** कृषि-श्रमिकों की दशा सुधारने के लिए उनकी समस्याओं का उचित निवारण खोजना आवश्यक है। श्रमिकों की समस्याओं के निवारण हेतु निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं–

(i) न्यूनतम मजदूरी अधिनियम का पालन– 1948 ई० में श्रमिकों के लिए, न्यूनतम मजदूरी अधिनियम पारित किया गया था, किंतु इस अधिनियम के प्रावधानों का कड़ाई से पालन नहीं किया गया। उसका कठोरता से पालन करके कृषि-श्रमिकों की समस्या का हल किया जा सकता है।

(ii) **कुटीर उद्योग-धंधों का विकास–** ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के अनुरूप कुटीर उद्योग-धंधों का विकास कर कृषि-श्रमिकों की बेरोजगारी और निर्धनता की समस्याओं का हल खोजा जा सकता है।

(iii) **कार्य के घंटों का निर्धारण–** कृषि-श्रमिकों के लिए कार्य के घंटे निश्चित कर दिए जाने चाहिए। उन्हें अतिरिक्त समय में काम करने के लिए अतिरिक्त मजदूरी मिलनी चाहिए, जिससे उनमें शारीरिक क्षमता का विकास हो सके।

7. जमींदारी उन्मूलन क्या है? इसके दो लाभों का उल्लेख कीजिए।

उ०– **जमींदारी उन्मूलन–** स्वतंत्रता प्राप्ति के समय तक भारत की कृषि जमींदारों के चंगुल में फँसी थी। जमींदार सरकार और किसानों का वह मध्यस्थ था, जो कृषकों को मनमाने ढंग से भूमि देकर, मनमाना लगान वसूलता था। जमींदार सरकार को थोड़ा-सा लगान देकर, किसानों से मनमाना लगान वसूलता, साथ ही उन्हें बेगार करने के लिए भी विवश करता था। जमींदारी प्रथा अन्याय और शोषण के स्तंभों पर खड़ी थी। इस अन्यायी प्रथा के नीचे दबा भारतीय कृषक बेबसी और गरीबी के बोझ में दबा दयनीय जीवन जी रहा था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने कृषकों के इन दु:खों को गंभीरता से अनुभव करते हुए 1952 ई० में जमींदारी उन्मूलन अधिनियम पारित करके भारतीय कृषकों को मध्यस्थों के चंगुल से स्वतंत्र कर दिया। जमींदारी उन्मूलन के कारण लगभग 2.5 करोड़ किसान भूस्वामी बन गए। भारत भले ही 1947 ई० में स्वतंत्र हुआ हो, परंतु भारतीय कृषकों को पूर्ण स्वतंत्रता का स्वाद 1952 ई० में ही चखने को मिला।

जमींदारी उन्मूलन के लाभ– जमींदारी उन्मूलन से दो लाभ निम्नलिखित हैं–

(i) **मध्यस्थों का अंत–** भारत सरकार ने जमींदारी उन्मूलन के द्वारा भारतीय कृषकों का खून चूसने वाले मध्यस्थों (जमींदारों) का सफाया करके जमीन का स्वामी उन कृषकों को बना दिया, जो उस पर खेती करते आ रहे थे।

(ii) **अन्याय और शोषण की समाप्ति–** जमींदारी उन्मूलन ने जमींदारी प्रथा को समाप्त कर भारतीय कृषकों को उनके अन्याय और शोषण से मुक्ति दिला दी।

8. चकबंदी के कोई तीन महत्व बताइए।

उ०– चकबंदी के तीन महत्व निम्नलिखित हैं–

(i) चकबंदी ने अनार्थिक जोतों को आर्थिक जोतों के रूप में विशाल चक में परिवर्तित कर दिया।

(ii) एक स्थान पर बने चक में खेती करने में समय और श्रम की बचत हुई है।

(iii) चकों में बड़े पैमाने की खेती का चलन बढ़ने से कृषि उत्पादन में कई गुना वृद्धि हुई है।

9. कृषि-निविष्टि किसे कहते हैं? किन्हीं दो कृषि-निविष्टियों का महत्व बताइए।

उ०– **कृषि की निविष्टियाँ–** खेती करना उत्पादन की एक प्रक्रिया है, जिसमें अनेक साधनों की आवश्यकता होती है। कृषि कार्य के लिए जिन-जिन साधनों का उपयोग किया जाता है, उन्हें कृषि की निविष्टियाँ कहा जाता है।

जैसे– तकनीकी ज्ञान, कृषि-यंत्र तथा उपकरण, श्रम, बीज, खाद तथा रासायनिक उर्वरक, सिंचाई, कीटनाशक, वित्त, भंडारा विपणन, फसल-बीम आदि। दो कृषि निविष्टियों का महत्व निम्नलिखित है–

दो कृषि निविष्टियों का महत्व निम्नलिखित है–

(i) कृषि-यंत्र एवं उपकरणों के बिना फसल उगाना असंभव है।

(ii) कृषि में उत्तम किस्म के बीच का प्रयोग अधिक और श्रेष्ठ कृषि उत्पादन के लिए अति आवश्यक है।

10. जोतों की हदबंदी क्या है? इसके दो लाभ लिखिए।

उ०– **भूमि जोतों की हदबंदी–** सरकार द्वारा कृषि जोतों की अधिकतम सीमा निर्धारित करने की व्यवस्था को भूमि जोतों की हदबंदी नाम दिया गया। सरकार जोतों की अधिकतम हदबंदी निश्चित करके, फालतू भूमि को स्वयं अधिगृहीत कर लेती है। अब तक 30 लाख हेक्टेयर भूमि का अधिग्रहण करके, उसे भूमिहीन लोगों में वितरित किया जा चुका है।

भूमि जोतों की हदबंदी के दो लाभ निम्नलिखित हैं–

(i) अतिरिक्त भूमि का सदुपयोग।

(ii) भूमि के असमान वितरण में कमी आना।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के योगदान का वर्णन कीजिए।

उ०– **भारतीय अर्थव्यवस्था और कृषि–** भारत की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था है। भारत की लगभग 75% जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। यहाँ 70% लोग कृषि तथा कृषि से संबद्ध कार्यों में लगे हुए हैं। भारत को सुदृढ़ अर्थव्यवस्था देने तथा राष्ट्र के आर्थिक विकास का पथ प्रशस्त करने में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। आइए जानें कि भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का क्या योगदान है–

(i) **राष्ट्रीय आय का महत्वपूर्ण स्रोत–** भारत के 65% लोगों को रोजगार कृषि क्षेत्र से प्राप्त होता है। कृषि भारत की राष्ट्रीय आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत है, जो राष्ट्रीय आय का 14% प्रदान करती है।

(ii) **रोजगार का प्रमुख साधन–** कृषि भारत में रोजगार देने वाला प्रमुख साधन है। देश की 58% जनसंख्या प्रत्यक्ष रूप से कृषि व्यवसाय से रोजगार पाती है।

(iii) **उद्योगों के विकास का आधार–** कृषि उत्पादों का प्रयोग लघु, कुटीर एवं बड़े विनिर्माण उद्योगों में कच्चे माल के रूप में किया जाता है। यह चीनी उद्योग, सूती वस्त्र उद्योग, खाद्य तेल उद्योग, जूट उद्योग, चाय तथा कॉफी उद्योग, रबड़ उद्योग तथा रेशम उद्योग को कच्चे माल देकर उनका पोषण करती है।

(iv) **खाद्य पदार्थों की आपूर्ति–** कृषि देश की 125 करोड़ जनसंख्या को खाद्यान्न, चीनी, चाय, खाद्य तेल, मसाले, दालें तथा सूखे मेवे देकर उसका पालन पोषण करती है।

(v) **पशुपालन उद्योग का विकास–** कृषि पशुओं को हरा चारा तथा पौष्टिक दाना देकर गाय, भैंस, बकरी तथा मुर्गीपालन आदि उद्योगों को विकसित करने में सहयोग करती है। विश्व के सर्वाधिक पशु भारत में पाले जाते हैं। अत: दुग्ध उत्पादन में भारत विश्व में सभी देशों से आगे है।

(vi) **व्यापार को बढ़ावा–** कृषि उत्पाद राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का आधार हैं। वर्ष 2011-12 में कृषि उत्पादों का निर्यात देश के कुल निर्यात का 12.4% था। कृषि उत्पादों का निर्यात भारत को पर्याप्त विदेशी मुद्रा अर्जित कराता है।

(vii) **परिवहन व्यवस्था का पोषण–** ट्रक, मोटर, ट्रैक्टर तथा रेलगाड़ियों आदि परिवहन के विभिन्न साधनों द्वारा भारी मात्रा में खाद्यान्नों, विभिन्न कृषि उत्पादों, कृषि यंत्रों, कीटनाशकों, रासायनिक खाद आदि की ढुलाई की जाती है, जिससे परिवहन के साधनों की आय बढ़ने से परिवहन व्यवस्था का विकास होता है।

(viii) **लोकवित्त में योगदान–** मालगुजारी, कृषि उत्पाद शुल्क, कृषि आयकर, संपत्ति कर तथा सिंचाई कर के रूप में कृषि लोकवित्त के संवर्द्धन में अपना योगदान करती है।

(ix) **आर्थिक विकास में सहभागिता–** भारतीय कृषि रोजगार, कच्चे माल, उद्योग, व्यापार, परिवहन तथा संचार-तंत्र को विकसित करके राष्ट्र के आर्थिक विकास में बड़ी महत्वपूर्ण सहभागिता निभाती है।

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का प्राण है। कृषि का विकास ही राष्ट्र के आर्थिक विकास का आधार है। सरकार और भारत के जन-जन को कृषि विकास के इस महायज्ञ में अपने सहयोग और श्रम की आहूति देनी चाहिए।

2. भूमि सुधार से क्या तात्पर्य है? भारत में भूमि सुधार कार्यक्रमों का उल्लेख कीजिए।

उ०– **भूमि सुधार कार्यक्रम का अर्थ–** भूमि सुधार कार्यक्रम से आशय भूमि के स्वामित्व एवं कृषि क्षेत्र में व्याप्त बुराइयों को दूर करने से लगाया जाता है। दूसरे शब्दों में, "भूमि सुधार उन संस्थागत परिवर्तनों से जुड़ा है, जिनमें भूमि का स्वामित्व कृषकों को सौंपना तथा कृषि प्रणाली में व्याप्त दोषों को दूर करना है।" भूमि सुधार कार्यक्रम भूमि प्रबंधन के साथ-साथ कृषि प्रणाली में सुधारों से भी जुड़ा है।

प्रो० गुन्नार मिर्डल ने भूमि सुधार को इन शब्दों में परिभाषित किया है, "भूमि सुधार से आशय व्यक्ति और भूमि के संबंधों में नियोजन और संस्थागत पुनर्गठन से है।" भूमि सुधार कार्यक्रमों का लक्ष्य मध्यस्थों की समाप्ति, कृषि जोतों की सुरक्षा चकबंदी, जोतों की उच्चतम सीमा का निर्धारण, सहकारी खेती तथा कृषि व्यवस्था में आमूलचूल सुधार लाना है।

भारत में भूमि सुधार कार्यक्रम– भारत एक कृषि प्रधान देश है। भारतीय कृषि सदियों से दीनता का दंश झेलती आ रही थी। अत: कृषि व्यवस्था को पारंपरिक कठिनाइयों से मुक्त बनाकर प्रगतिशील तथा आधुनिकता के पथ पर आगे बढ़ाने के

लिए भारत में निम्नलिखित भूमि सुधार कार्यक्रम आयोजित किए गए–

(i) **जमींदारी उन्मूलन–** स्वतंत्रता प्राप्ति के समय तक भारत की कृषि जमींदारों के चंगुल में फँसी थी। जमींदार सरकार और किसानों का वह मध्यस्थ था, जो कृषकों को मनमाने ढंग से भूमि देकर, मनमाना लगान वसूलता था। जमींदार सरकार को थोड़ा-सा लगान देकर, किसानों से मनमाना लगान वसूलता, साथ ही उन्हें बेगार करने के लिए भी विवश करता था। जमींदारी प्रथा अन्याय और शोषण के स्तंभों पर खड़ी थी। इस अन्यायी प्रथा के नीचे दबा भारतीय कृषक बेबसी और गरीबी के बोझ में दबा दयनीय जीवन जी रहा था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने कृषकों के इन दु:खों को गंभीरता से अनुभव करते हुए 1952 ई० में जमींदारी उन्मूलन अधिनियम पारित करके भारतीय कृषकों को मध्यस्थों के चंगुल से स्वतंत्र कर दिया। जमींदारी उन्मूलन के कारण लगभग 2.5 करोड़ किसान भूस्वामी बन गए। भारत भले ही 1947 ई० में स्वतंत्र हुआ हो, परंतु भारतीय कृषकों को पूर्ण स्वतंत्रता का स्वाद 1952 ई० में ही चखने को मिला।

जमींदारी उन्मूलन के लाभ– जमींदारी उन्मूलन से निम्नलिखित लाभ प्राप्त हुए–

(क) **मध्यस्थों का अंत–** भारत सरकार ने जमींदारी उन्मूलन के द्वारा भारतीय कृषकों का खून चूसने वाले मध्यस्थों (जमींदारों) का सफाया करके जमीन का स्वामी उन कषकों को बना दिया, जो उस पर खेती करते आ रहे थे।

(ख) **अन्याय और शोषण की समाप्ति–** जमींदारी उन्मूलन ने जमींदारी प्रथा को समाप्त कर भारतीय कृषकों को उनके अन्याय और शोषण से मुक्ति दिला दी।

(ग) **कृषि में गुणात्मक सुधार–** जमींदारी प्रथा का अंत कृषकों को भूस्वामी बना गया। भूपति बनकर कृषक ने अपने खेतों में यत्न और लगन से कृषि कार्य करके कृषि उत्पादन को कई गुना बढ़ा दिया।

(घ) **अर्थव्यवस्था में सुधार–** कृषि उत्पादन बढ़ने से प्रतिव्यक्ति आय और राष्ट्रीय आय बढ़ जाने से देश की अर्थव्यवस्था भी सुदृढ़ बन गई।

(ङ) **भूमिहीन कृषकों की दशा में सुधार–** जमींदारी प्रथा समाप्त होने का सर्वाधिक लाभ भूमिहीन कृषकों को मिला। उन्हें कृषि करने के लिए भूखंड प्राप्त होने से वे श्रमिक से कृषक बन गए।

(च) **भू-राजस्व में वृद्धि–** जमींदारों के बीच से हट जाने के बाद कृषक भू-राजस्व सीधा सरकार को देने लगे। अत: अधिक राजस्व मिलने से राजकोष संपन्न हो गया।

(छ) **कृषकों का सर्वांगीण विकास–** जमींदारी उन्मूलन ने कृषकों को भूपति बनाकर, उनके सर्वांगीण विकास के द्वार खोल दिए। उनकी आय, आवास व्यवस्था तथा जीवन-स्तर में गुणात्मक सुधार आ गया।

(ज) **भूमि सुधार कार्यक्रमों को गति–** जमींदारों के हट जाने से सरकार के लिए चकबंदी, भूमिजोतों की हदबंदी सहकारी खेती आदि कार्यक्रम संचालित कराना सुगम हो गया।

(ii) **भूमि जोतों की हदबंदी–** सरकार द्वारा कृषि जोतों की अधिकतम सीमा निर्धारित करने की व्यवस्था को भूमि जोतों की हदबंदी नाम दिया गया। सरकार जोतों की अधिकतम हदबंदी निश्चित करके, फालतू भूमि को स्वयं अधिगृहीत कर लेती है। अब तक 30 लाख हेक्टेयर भूमि का अधिग्रहण करके, उसे भूमिहीन लोगों में वितरित किया जा चुका है।

भूमि जोतों की हदबंदी के लाभ– भूमि जोतों की हदबंदी से निम्नलिखित लाभ हुए–

(क) अतिरिक्त भूमि का सदुपयोग।

(ख) भूमि के असमान वितरण में कमी आना।

(ग) भूमिहीन लोगों को भूमि की प्राप्ति होना।

(घ) कृषि उत्पादन बढ़ जाना।

(ङ) बेरोजगार लोगों का कृषि व्यवसाय से जुड़ जाना।

(च) आर्थिक विषमता में कमी आना।

(छ) चकबंदी कार्यक्रम को प्रोत्साहन मिलना।

(ज) प्रतिव्यक्ति आय तथा राष्ट्रीय आय में वृद्धि होना।

(iii) जोतों की चकबंदी– भारत में कृषि जोतें छोटी और दूर-दूर छिटकी हुई थीं। अलग-अलग व दूर-दूर खेतों में कृषि व उसकी देखभाल करने में समय और श्रम की अनावश्यक बर्बादी थी। सरकार ने इससे छुटकारा पाने का जो उपाय खोज निकाला, उसे चकबंदी नाम दिया गया। चकबंदी के माध्यम से दूर-दूर बिखरे खेत, एक विशाल चक में बदल दिए जाते हैं। दूसरे शब्दों में, "चकबंदी उस प्रक्रिया को कहते हैं, जिसके द्वारा कृषकों की दूर-दूर बिखरी अनार्थिक जोतों को एक विशाल चक में बदल दिया जाता है।" चकबंदी एक ऐसी अनूठी तकनीक है, जो एक परिवार की छोटी-छोटी जोतों के टुकड़ों को एक विशाल खेत में बदल देती है।

चकबंदी के दो रूप हैं– एच्छिक चकबंदी तथा अनिवार्य चकबंदी। कृषक की इच्छा होने पर की जाने वाली चकबंदी ऐच्छिक चकबंदी कही जाती है, जबकि अनिवार्य रूप से लागू की गई चकबंदी की प्रक्रिया अनिवार्य चकबंदी कही जाती है। भारत में अब तक 600 हेक्टेयर भूमि की चकबंदी की जा चुकी है। पंजाब तथा हरियाणा राज्यों में चकबंदी का लक्ष्य पूरा किया जा चुका है, जबकि उत्तर प्रदेश में इसका 90% कार्य पूरा हो चुका है।

चकबंदी के लाभ– खेतों की चकबंदी होने से निम्नलिखित लाभ प्राप्त हुए हैं–

(क) चकबंदी ने अनार्थिक जोतों को आर्थिक जोतों के रूप में विशाल चक में परिवर्तित कर दिया है।

(ख) एक स्थान पर बने चक में खेती करने में समय और श्रम की बचत हो गई है।

(ग) बड़े चक में सिंचाई की सुविधाएँ जुटाना, फसलों की चौकसी करना तथा मशीनों से खेती करना संभव और सुगम बन गया है।

(घ) चकों में बड़े पैमाने की खेती का चलन बढ़ने से कृषि उत्पादन कई गुना बढ़ गया है।

(ङ) कृषि उत्पादकता और कृषि उत्पादन में वृद्धि होने से कृषकों तथा राष्ट्र की आय बढ़ गई है।

(च) कृषकों की आय बढ़ने से उनके रहन-सहन का स्तर ऊँचा हो गया है।

चकबंदी कृषि व्यवसाय और भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए वह प्राकृतिक वरदान बन गई है, जिसने समूचे राष्ट्र में संपन्नता और समृद्धि के बीच बो दिए हैं। चकबंदी के मार्ग में आने वाली कतिपय बाधाएँ उसकी सफलता को धूमिल करना चाहती हैं परंतु जागरुक सरकार उन्हें शीघ्र दूर कर चकबंदी की सफलता के मार्ग को निष्कंटक बनाने में जुटी हुई है।

(iv) काश्तकारी व्यवस्था में सुधार– सरकार ने कृषि क्षेत्र को अधिक विकसित और लाभकारी बनाने के उद्देश्य से काश्तकारी व्यवस्था में निम्नलिखित सुधार किए हैं–

(क) लगान का नियमन– कृषकों का आर्थिक भार कम करने के उद्देश्य से सरकार ने लगान की राशि निश्चित कर दी। अब किसी भी राज्य में लगान 2.5% से अधिक नहीं लिया जाएगा।

(ख) भूस्वामित्व की सुरक्षा– सरकार ने कृषकों तथा पट्टेदारों को भूमि संबंधी स्थायी अधिकार दे दिए हैं।

3. भारत में भूमि सुधार तथा उत्पादन वृद्धि के लिए किए गए प्रयासों का वर्णन कीजिए।

उ०– **भारत में भूमि सुधार के लिए किए गए प्रयास–** इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

भारत में कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए किए गए प्रयास– भारत सरकार ने कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए बहुमुखी प्रयास किए हैं। इन प्रयासों की अपनी महत्ता है, जो निम्नवत् हैं–

(i) सिंचाई और जल संसाधन– भारत सरकार सिंचाई की क्षमता को निरंतर बढ़ाने का प्रयास कर रही है। वर्ष 1999-2000 तक देश की सृजित सिंचाई क्षमता 94.7 मिलियन हेक्टेयर तक बढ़ गई है जो अंतिम सिंचाई-क्षमता का लगभग 68% है। अभी सृजित क्षमता से लगभग 62 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र की हम सिंचित कर पा रहे हैं। सरकार का प्रयास है कि सृजित क्षमता और उसके उपयोग के बीच के अंतर को पूरा किया जाए।

(ii) बीज- कृषि में प्रति एकड़ उच्च्व उत्पादकता के लिए अच्छी किस्म के बीजों का प्रयोग महत्वपूर्ण है। राष्ट्रीय बीज नीति, किसानों को बीज की श्रेष्ठ किस्में और पौधारोपण की सामग्री पर्याप्त मात्रा में प्रदान कीती है। वर्ष 2001-2002 में 10,996 हजार क्विण्टल प्रमाणित गुणवत्तापूर्ण बीजों का वितरण किया गया था।

(iii) उर्वरक– पिछले वर्षों से उर्वरक (एन०पी०के०) की खपत में निरंतर वृद्धि हो रही है। वर्ष 1999-2000 में इसकी

खपत 18.07 मिलियन टल थी जो वर्ष 2000-01 में देश के कई भांगों में सूखें के कारण घटकर 16.7 मिलियन टन रह गई थी। वर्ष 2001-02 में खपत 19.03 मिलियन टन तक पुहँच गई है। उर्वरकों पर सरकार अनुदान दे रही है, जिससे किसान लोग अधिक से अधिक इसका प्रयोग करें।

(iv) कृषि यांत्रिकीकरण– पिछले दस वर्षों के दौरान (1991-2001) देश में लगभग 2.05 मिलियन ट्रैक्टर और 11,700 विद्युत टिलर बेचे गये। 2000-01 में देश में लगभग 2,54,825 ट्रैक्टर बेचे गए, जिसमें उत्तर प्रदेश सबसे आगे था।

इससे स्पष्ट है कि कृषि में अब पशु-शक्ति का योगदान घटता जा रहा है। वर्ष 1971 के 43.03% से घटकर अब यह 9.89% ही रह गया है। सिंचाई और फसल काटने तथा गाहने के प्रचालनों में भी पर्याप्त यांत्रिकीकरण की ओर प्रगति की गई है। सरकार कम ब्याज दर पर किसानों को यंत्र उपलब्ध करा रही है।

(v) कृषि ऋण का प्रवाह– कृषि और संबद्ध कार्यकलापों के लिए संस्थागत ऋण का प्रवाह वर्ष 2001-02 में ₹ 66.771 करोड़ के स्तर तक पहुँच गया।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना वर्ष 1998 में प्रारंभ की गई। इस योजना ने बड़ी लोकप्रियता प्राप्त की और 27 वाणिज्यिक बैंकों, 373 जिला केंद्रीय सहकारी बैंकों, राज्य सहकारी बैंकों और 196 ग्रामीण बैंको द्वारा इसको प्रारंभ किया गया है। 30 नवंबर, 2001 ई0 की स्थिति के अनुसार 20.4 मिलियन किसान क्रेडिट कार्ड, जिनमें ₹ 43,392 करोड़ की ऋण मंजूरियाँ सम्मिलित हैं, जारी किए गए थे। देश में 31 मार्च, 2011 तक बैंक द्वारा ₹ 1038 करोड़ किसान क्रेडिट कार्ड जारी किए जा चुके हैं। किसान क्रेडिट कार्ड धारकों के लिए द ुर्घटना से होने वाली मृत्यु अथवा स्थायी अपंगता के लिए ₹ 50,000 तथा ₹ 2,50,000 के व्यक्तिगत बीमा कवच को भी अंतिम रूप दे दिया गया है।

(vi) कृषि- बीमा– किसानों के हित और कृषि को एक व्यवसाय का रूप प्रदान करने की दिशा में **राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना** सरकार द्वारा उठाया गया एक सराहनीय कदम है। यह योजना रबी मौसम वर्ष 1999-2000 से देश में आरंभ की जाएगी।

(vii) शिक्षण-प्रशिक्षण– देश में कृषि शिक्षण के लिए 21 विश्वविद्यालय खोले गए हैं। **'भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्'** भी इस ओर प्रयत्नशील है। इसके अतिरिक्त रेडियो तथा दूरदर्शन पर भी प्रतिदिन कृषि उत्पादन बढ़ाने के उपाय बताए गए हैं।

देश में कृषि एवं सहायक गतिविधियों को प्रोत्साहित करने के लिए प्रधानमंत्री द्वारा निम्नलिखित कार्यक्रमों की घोषणा की गई–

(i) कृषि उपजों के भावी बाजार को सुदृढ़ करना।

(ii) कृषि क्षेत्रों में सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग करना।

(iii) कृषि सहकारिता के संबंध में राष्ट्रीय नीति में सुधार करना।

(iv) कृषिगत निर्यातों को बढ़ावा देना।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि सरकार देश में कृषि उत्पादन बढ़ाने हेतु निरंतर प्रयास कर रही है। इन्हीं प्रयासों का परिणाम है कि भारत के कृषि उत्पादन में निरंतर वृद्धि हो रही है। भारत कुछ कृषि उत्पादों के क्षेत्र में आत्मनिर्भर ही नहीं हो पाया है, वरन् वह निर्यात करने की स्थिति में भी पहुँच गया है।

4. भारत में किए जा रहे भूमि सुधारों का वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए–

(क) जमींदारी उन्मूलन (ख) चकबंदी (ग) हदबंदी

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

5. कृषि-श्रमिक से क्या तात्पर्य है? कृषि-श्रमिकों की आर्थिक दशा में सुधार हेतु कोई चार सुझाव दीजिए।

उ०– **कृषि श्रमिक–** इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या-5 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

कृषि-श्रमिकों की दशा सुधारने हेतु किए गए सरकारी प्रयास– भारत सरकार ने कृषि-श्रमिकों की समस्याओं को गंभीरता से लिया है। उसने कृषि-श्रमिकों की समस्याओं और दीन-हीन दशा को सुधारने हेतु निम्नलिखित उपाय किए हैं–

(i) भारत सरकार ने 1948 ई० में पारित न्यूनतम मजदूरी अधिनियम कृषि पर भी लागू किया है, जिसमें कृषि-श्रमिकों की मजदूरी की न्यूनतम दर निश्चित की गई है।

(ii) 1952 ई० में संत विनोबा भावे ने 'भूदान आंदोलन' चलाया। उन्हीं के विचारों से प्रेरित होकर भारत सरकार ने जमींदारी उन्मूलन तथा कृषि जोतों की उच्चतम सीमा निर्धारित करके फालतू भूमि को तथा बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाकर भूमिहीन कृषकों में वितरित किया।

(iii) सरकार ने 1976 ई० में बँधुवा श्रमिक उन्मूलन अधिनियम पारित करके बँधुवा मजदूरी प्रथा का अंत कर दिया।

(iv) सरकार ने भूमिहीन कृषि-श्रमिकों के लिए सस्ते आवासों की समुचित व्यवस्था कराई।

(v) सरकार ने 1975 ई० में ऋण मुक्ति अधिनियम पारित कर कृषि-श्रमिकों को साहूकारों के शोषण से मुक्त कराया।

(vi) सरकार ने एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम चलाया, जिसे 2000 ई० में 'स्वर्ण जयंती स्वरोजगार योजना' में मिलाकर श्रमिक-विकास के द्वार खोल दिए।

(vii) सरकार द्वारा 1977-78 ई० में 'अंत्योदय अन्न कार्यक्रम', 1980 ई० में 'राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम' 1983 में 'राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम', 1983 में 'ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम', 1989 ई० में 'जवाहर रोजगार कार्यक्रम', 2 अक्टूबर, 1993 ई० में 'रोजगार आश्वासन योजना', 1 अप्रैल, 1999 ई० में 'स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना' एवं 'जवाहर ग्राम समृद्धि योजना', 2001 ई० में 'संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना', 2 फरवरी, 2006 ई० में 'महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना' प्रारंभ की गई। इसका शुभारंभ सर्वप्रथम आंध्रप्रदेश में किया गया, जिसमें आवेदन मिलने पर सरकार द्वारा 15 दिन में आवेदक को रोजगार दिलाने की व्यवस्था है। बाद में इस योजना को 1 अप्रैल, 2008 ई० से समस्त देश में लागू कर दिया गया।

सरकार ने श्रमिक सामाजिक सुरक्षा योजना चलाकर कृषि सेवा समितियों तथा कृषि श्रमिक संघों की स्थापना करवाकर कृषि-श्रमिकों की दशा सुधारने के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रयास किए हैं।

6. भारत में भूमि सुधार के उद्देश्य तथा कोई दो कार्यक्रम बताइए।

उ०– भूमि सुधार कार्यक्रमों के उद्देश्य– निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु भूमि सुधार कार्यक्रम चलाए गए–

(i) भूस्वामित्व व्यवस्था को कानूनी रूप से चुस्त बनाना।

(ii) भूमि के दोषों और कृषि व्यवस्था की कठिनाइयों को दूर करना।

(iii) कृषि उत्पादन में गुणात्मक सुधार लाना।

(iv) लघु कृषक परिवारों, भूमिहीन कृषि-श्रमिकों तथा कृषकों की समस्याओं का निराकरण करना।

(v) कृषि को व्यवसाय का रूप देकर अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाना।

भूमि सुधार कार्यक्रम- इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

7. कृषि-निविष्टियों से क्या तात्पर्य है? भारतीय कृषि निविष्टियों की विस्तृत विवेचना कीजिए।

उ०– कृषि की निविष्टियाँ– खेती करना उत्पादन की एक प्रक्रिया है, जिसमें अनेक साधनों की आवश्यकता होती है। कृषि कार्य के लिए जिन-जिन साधनों का उपयोग किया जाता है, उन्हें कृषि की निविष्टियाँ कहा जाता है। कृषि की प्रमुख निविष्टियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) तकनीकी ज्ञान– उत्तम ढंग से कृषि करने के लिए कृषक को कृषि की नवीनतम तकनीक तथा प्रविधि का ज्ञान होना आवश्यक है, इनके अभाव में कृषि व्यवसाय और कृषक दोनों असफल रह जाएँगे।

(ii) कृषि-यंत्र तथा उपकरण– कृषि के आधुनिकीकरण के लिए कृषि-यंत्र तथा उपकरणों की आवश्यकता होती है। ट्रैक्टर, नलकूप, सीडड्रिल तथा थ्रेशर कृषि की प्रमुख निविष्टियाँ बन गई हैं।

(iii) श्रम– कृषि कार्य करने के लिए कृषक को अपने श्रम के अतिरिक्त भाड़े का श्रम भी लेना पड़ता है। बिना श्रम के कृषि कार्य करना असंभव है। अत: श्रम कृषि की महत्वपूर्ण निविष्टि है।

(iv) बीज– उन्नत तथा लाभप्रद खेती करने के लिए उन्नतशील बीजों की आवश्यकता है। बीज जितने उन्नत किस्म के होंगे, कृषि उत्पादन उतना ही अधिक और श्रेष्ठ होगा। अत: बीज कृषि की एक महत्वपूर्ण निविष्टि है।

(v) **खाद तथा रासायनिक उर्वरक–** भूमि की उर्वरता बनाए रखने के लिए कंपोस्ट तथा जैविक खाद एवं पौधों से अधिक उपज प्राप्त करने के लिए रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता होती है। इस प्रकार खाद तथा रासायनिक उर्वरक कृषि की महत्वपूर्ण निविष्टि हैं।

(vi) **सिंचाई–** जल पौधों के जीवन का आधार है। वर्षा न होने की स्थिति में फसलों को चौपट होने से बचाने का एक मात्र उपाय है, उन्हें सींचना। अत: सिंचाई व्यवस्था भी कृषि की प्रमुख निविष्टि है।

(vii) **कीटनाशक–** फसल में लगने वाले रोग और कीड़े हरी-भरी फसलों को चौपट कर डालते हैं। अत: उन पर कीटनाशकों का छिड़काव करके, उन्हें बचाया जाता है। वर्तमान समय में कीटनाशक पदार्थ भी कृषि-निविष्टि की सूची में जुड़ गए हैं।

(viii) **वित्त–** कृषि जैसे-जैसे व्यवसाय का रूप लेती जा रही है, वित्त उसकी आवश्यकता बनता जा रहा है। सहकारी समितियाँ, साहूकार, व्यावसायिक बैंक तथा कृषि-साख समितियाँ किसानों को बीज, खाद, कृषि-यंत्रों आदि के लिए ऋण देते हैं। बीज, उर्वरक, कीटनाशक, सिंचाई तथा यंत्रों को सुलभ कराने में वित्त एक महत्वपूर्ण कृषि-निविष्टि बनकर उभरा है।

(ix) **भंडारण–** कृषि उपजों को मौसम, नमी तथा कीड़ों से बचाने और भावी विक्रय तथा उपयोग के लिए उनका वैज्ञानिक ढंग से भंडारण करना होता है। आलू, फल तथा अन्य सब्जियों को शीत भंडारों में रखा जाता है। अत: भंडारण भी कृषि की महत्वपूर्ण निविष्टि बन गया है।

(x) **विपणन–** कृषि उपजों को उपभोक्ताओं तक पहुँचाने तथा किसानों को उनके उत्पादों का उचित मूल्य दिलवाने की व्यवस्था का नाम है, विपणन। विपणन ही कृषि की वह निविष्टि है, जो कृषक को आर्थिक दृष्टि से संपन्न बना सकती है।

(xi) **फसल-बीमा–** सूखा, बाढ़, अतिवृष्टि, फसलों के रोग तथा हानिकारक कीट कृषक की फसलों को नष्ट कर उसके श्रम और आय को चौपट कर सकते हैं। फसल-बीमा कृषकों को इन सभी समस्याओं से छुटकारा दिला देता है। अत: फसल-बीमा भी एक महत्वपूर्ण कृषि-निविष्टि बन गया है।

8. कृषि उत्पादन बढ़ाने में किन्हीं पाँच कृषि-निविष्टियों का महत्व समझाइए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या-3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

9. भूमि सुधार कार्यक्रम क्या है? भारत में भूमि सुधार की कमियों का उल्लेख कीजिए तथा इनकी सफलता हेतु सुझाव दीजिए।

उ०– **भूमि सुधार कार्यक्रम–** इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 2 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

भारत में भूमि सुधार कार्यक्रमों की कमियाँ– निम्नलिखित कारणों से भारत में भूमि-सुधार कार्यक्रमों को अपेक्षित सफलता नहीं मिल पाई है–

(i) भारत में भूमि सुधार कार्यक्रम समन्वित रूप से लागू नहीं किए गए। अधिनियमों का क्रियान्वयन सदैव विलंब से हुआ।

(ii) भू-प्रलेखों को अद्यतन नहीं किया गया, जिससे छोटे किसान भूमि सुधार कार्यक्रमों के लाभों से वंचित हो गए।

(iii) जमीदारों ने भूमि का हस्तांतरण अवैधानिक ढंग से कर दिया, जिससे भू-जोतों की सीमा का निर्धारण (हदबंदी) उचित प्रकार से नहीं हो सका।

(iv) भूमि सुधारों के कारण अधिकतर भूस्वामियों में अनिश्चितता की भावना उत्पन्न हो गई।

(v) भारत में भूमि के स्वामित्व में संबंधित रिकार्ड अभी भी अधूरे हैं।

भूमि सुधार कार्यक्रमों की सफलता के सुझाव–

(i) भूमि सुधार संबंधी अधिनियम समन्वित रूप से सभी राज्यों में समान रूप से लागू किए जाने चाहिए।

(ii) संपूर्ण भारत में भूमि सुधारों के कार्यक्रमों का क्रियान्वयन समयबद्ध तरीके से होना चाहिए।

(iii) भूस्वामित्व से संबंधित अभिलेखों को पूर्ण करके उनमें सुधार किए जाएँ।

(iv) भूमि सुधार संबंधी नियमों को प्रभावी ढंग से लागू करना चाहिए और उनका उल्लंघन करने वालों के विरुद्ध कठोर कदम उठाए जाने चाहिए।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

51 कृषि उत्पादकता

(पिछड़ेपन के कारण, सुधार के उपाय, कृषि विकास के कार्यक्रम, कृषि में विकास की संभावनाएँ, कृषि में आधुनिकता)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 512 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 512 व 513 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. भारत में कृषि की निम्न उत्पादकता के तीन प्रमुख कारण लिखिए।

उ०– भारत में कृषि की निम्न उत्पादकता के तीन प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

(i) कृषि जोतों का आकार

(ii) कृषि का वर्षा पर निर्भर होना।

(iii) अनार्थिक जोतों की अधिकता

2. भारतीय कृषि उत्पादकता में वृद्धि करने के तीन उपाय बताइए।

उ०– भारतीय कृषि उत्पादकता में वृद्धि करने के तीन उपाय निम्नलिखित हैं–

(i) कृषि योग्य क्षेत्र में वृद्धि करना।

(ii) सिंचाई सुविधाओं का विस्तार करना।

(iii) उन्नतशील सुधरे हुए बीजों का प्रयोग करना।

3. हरित क्रांति क्या है? हरित क्रांति की दो उपलब्धियाँ लिखिए।

उ०– **हरित क्रांति का अर्थ–** भारतीय कृषि को अल्प उत्पादकता के दोषों से मुक्त करने के लिए सरकार ने 1967-68 में, जो अद्वितीय कार्यक्रम चलाया, उसे हरित क्रांति नाम दिया गया। हरित क्रांति से आशय कृषि विकास तथा कृषि उत्पादन बढ़ाने के क्रांतिकारी कार्यक्रम से है, जिसने कृषि व्यवस्था को बदलकर रख दिया। हरित क्रांति का उद्देश्य कृषि उत्पादन बढ़ाने के साथ-साथ कृषि की परंपरागत तकनीकी को छोड़कर संरचनात्मक परिवर्तनों के साथ नवीनतम तकनीकी को अपनाना तथा कृषि यंत्रों, सुधरे हुए बीजों, रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों के प्रयोग से भारत को कृषि उत्पादों में आत्म-निर्भर बनाना था।

(i) हरित क्रांति के कारण भारत कृषि उत्पादन में आत्म-निर्भर बन गया।

(ii) हरित क्रांति ने भारतीय निर्वाहमूलक कृषि को लाभदायक व्यवसाय में बदल दिया।

4. भारत में कृषि की तीन भावी संभावनाओं को लिखिए।

उ०– भारत में कृषि की तीन भावी संभावनाएँ निम्नलिखित हैं–

(i) कृषि क्षेत्र में नवीनतम प्रौद्योगिकी का विस्तार।

(ii) उन्नतशील तथा अधिक उपज देने वाले बीजों का उपयोग।

(iii) कृषि का पारंपरिक स्वरूप बदलने की संभावना।

5. कृषि का यंत्रीकरण क्या है? कृषि के यंत्रीकरण के दो लाभ लिखिए।

उ०– सरकार द्वारा कृषि में नवीनतम तकनीकी, आधुनिकतम प्रविधियों एवं नवीनतम कृषि के यंत्रों का उपयोग करना, कृषि का यंत्रीकरण कहलाता है।

कृषि के यंत्रीकरण के दो लाभ निम्नलिखित हैं–

(i) कृषि यंत्रीकरण से उत्पादकता में वृद्धि।

(ii) श्रम एवं समय की बचत।

6. हरित क्रांति को सफल बनाने के कोई तीन उपाय लिखिए।

उ०– हरित क्रांति को सफल बनाने के तीन उपाय निम्नलिखित हैं–

(i) हरित क्रांति का क्षेत्र बढ़ाकर, उसे संपूर्ण देश में लागू करने की व्यवस्था की जाए।

(ii) हरित क्रांति के अन्तर्गत कृषि की सभी फसलों को सम्मिलित किया जाए।

(iii) भूमि सुधार कार्यक्रमों को गंभीरता से लागू किया जाए।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. भारत में कृषि के पिछड़ेपन (निम्न उत्पादकता) के क्या कारण हैं? कृषि उत्पादकता में वृद्धि करने के सुझाव दीजिए।

उ०– **भारत में कृषि के पिछड़ेपन (निम्न उत्पादकता) के कारण–** भारत में कृषि की निम्न उत्पादकता के निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं–

(i) कृषि जोतों का आकार– भारत में कृषि जोतों का आकार विभाजित होते-होते बहुत छोटा रह गया है, जिनमें कृषि यंत्रों से खेती करना संभव नहीं है। वैज्ञानिक ढंग से कृषि न हो पाने तथा सिंचाई के अभाव में इनमें प्रति हेक्टेअर उत्पादन बहुत कम रहता है।

(ii) वर्षा पर निर्भरता– भारत में 50% कृषि भूमि अपने उत्पादन के लिए वर्षा पर निर्भर है। वर्षा की अनिश्चितता के कारण भारतीय कृषि 'वर्षा का जुआ' बन कर रह गई है। इस क्षेत्र को सिंचाई की सुविधाएँ उपलब्ध न हो पाने के कारण कृषि में उत्पादकता कम है।

(iii) कृषि भूमि पर जनसंख्या का दबाव– भारत में जनसंख्या विस्फोट की स्थिति बन जाने से कृषि भूमि पर जनसंख्या का अधिक दबाव बन गया है। आज भी देश की लगभग 70% जनसंख्या आजीविका के लिए कृषि पर ही निर्भर है। भूमि पर आश्रित लोगों की संख्या बढ़ते जाने से ग्रामीण क्षेत्रों में अदृश्य बेरोजगारी तथा अल्प-रोजगार की समस्या बढ़ी है। भारत में प्रतिव्यक्ति की भूमि की उपलब्धता 2.1 एकड़ है, जिससे यहाँ प्रति हेक्टेयर उत्पादन अपेक्षाकृत कम है।

(iv) अनार्थिक जोतों की अधिकता– भारत के अनेक राज्यों में चकबंदी न हो पाने के कारण छोटी-छोटी जोतें अनार्थिक हैं, जिनमें उत्पादन बहुत कम रह गया है। देश में कृषि-जोतों का औसत आकार केवल 1.55% हेक्टेअर है। कुल कार्यशील जोतों में से लगभग 59% जोतों का आकार तो एक हेक्टेअर से भी कम है। खेतों के बिखरे व छोटे होने के कारण भूमि का अपव्यय तो होता ही है, स्थायी सुधार भी संभव नहीं होता।

(v) दोषपूर्ण भूस्वामित्व– भारत में दीर्घकाल तक लगभग 40% भूमि जमींदारों के चंगुल में रही, उन्होंने भूमि की उर्वरकता बनाए रखने के लिए कोई प्रयास ही नहीं किया, जिससे इसकी प्रति हेक्टेअर उत्पादकता कम हो गई है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद यद्यपि मध्यस्थों को हटाने के लिए अनेक अधिनियम पारित किए गए किंतु वास्तव में जमींदारों से बहुत कम भूमि ही खेती करने वालों को मिल पाई है। वास्तविक कृषकों की विशेष सुरक्षा भी उपलब्ध नहीं कराई गई।

(vi) पुराने कृषि यंत्र– भारतीय परंपरावादी निर्धन कृषक आज भी प्राचीन दोषपूर्ण कृषि यंत्रों का प्रयोग करके कृषि से कम उत्पादन पा रहा है। कृषक या तो आधुनिक यंत्रों को खरीद ही नहीं पाता और खरीद पाता है तो उसके पास उनके उपयोग लायक विस्तृत खेत नहीं है।

(vii) कृषकों की अज्ञानता और साधनहीनता– भारतीय कृषि और कृषक लंबे समय तक जमींदारों का शोषण सहते-सहते अज्ञानी और साधनहीन बन गया है। उसे कृषि की नवीनतम प्रविधियों का न तो ज्ञान है और न उन्हें सुलभ करने के संसाधन हैं। अतः भारतीय कृषि आज भी अपनी अल्प उत्पादकता पर आँसू बहा रही है।

(viii) उन्नतशील तथा सुधरे बीजों का अभाव– भारतीय कृषक आज भी अपनी उत्पादित फसल को ही बीजों के रूप में प्रयोग कर रहा है, जो प्रायः अच्छे बीज नहीं होते। उन्नतशील तथा सुधरे बीजों के अभाव में भारतीय कृषि अल्प उत्पादकता के रोग से ग्रसित है।

(ix) उर्वरकों तथा कीटनाशकों का प्रयोग न होना– साधनहीन कृषक न तो रासायनिक उर्वरक खरीद पाता है और न कीटनाशक। अतः उसकी कम उर्वरक भूमि होने के कारण तथा फसल कीड़े-मकोड़ों के दुष्प्रभाव से कम उत्पादन ही दे पाती है।

(x) अन्य कारण– भारतीय कृषकों को वित्त, भंडारण, भूक्षरण, फसल बीमा की सुविधाएँ तथा फसल की उचित कीमत न मिल पाने से भी कृषि में अल्प उत्पादकता की समस्या बनी हुई है।

भारत में कृषि उत्पादन बढ़ाने के उपाय (सुझाव)– भारत के राष्ट्रीय व्यवसाय-कृषि की दशा में गुणात्मक सुधार लाना आवश्यक है। यह कार्य भूमि की उर्वरता बढ़ाकर तथा कृषि व्यवस्था में वैज्ञानिक प्रविधियों का प्रयोग करके ही किया जा सकता है। भारतीय कृषि की उत्पादकता बढ़ाने हेतु निम्न उपाय किए जा सकते हैं–

(i) कृषि जोतों के आकार में वृद्धि– भारत में कृषि की उत्पादकता बढ़ाने का सर्वोत्तम उपाय कृषि की छोटी-छोटी जोतों को चकबंदी के माध्यम से विशाल जोतों में बदलना है।

(ii) सिंचाई की सुविधाओं का विस्तार– भारतीय कृषि की वर्षा पर से निर्भरता दूर करने का उपाय है– सिंचाई की सुविधाओं में विस्तार करना। सिंचाई की सुविधाएँ बढ़ते ही कृषि की उत्पादता कई गुना बढ़ जाएगी।

(iii) जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण– भारत में तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण लगाकर, कृषि भूमि पर उसके दबाव को कम किया जा सकता है, जिससे कृषि उत्पादन में गुणात्मक सुधार आ जाएगा।

(iv) अनार्थिक जोतों को आर्थिक जोतों में बदलना– भारत में अनार्थिक जोतों को आर्थिक जोतों में बदलकर कृषि उत्पादन में भारी वृद्धि दर्ज की जा सकती है।

(v) भूस्वामित्व में सुधार– हदबंदी तथा भूदान कार्यक्रमों के माध्यम से भारत में भूमि स्वामित्व की व्यवस्था में गुणात्मक सुधार लाकर कृषि में प्रति हेक्टेअर उत्पादन शीघ्रता से बढ़ाया जा सकता है।

(vi) नवीनतम कृषि यंत्रों का प्रयोग– भारतीय कृषक को परंपरागत प्राचीन हल को छोड़कर ट्रैक्टर, ट्रिलर, थ्रेशर तथा हारवेस्टर्स आदि कृषि यंत्रों का प्रयोग कर कृषि के उत्पादन को बढ़ाना चाहिए।

(vii) कृषकों को नवीनतम तकनीकी का ज्ञान– सरकार को चाहिए कि प्रत्येक जिला स्तर पर एक प्रशिक्षण केंद्र खोलकर कृषकों को नवीनतम तकनीकी तथा कृषि प्रविधियों का प्रशिक्षण देकर कृषि को कम उत्पादकता की समस्या से छुटकारा दिलाना चाहिए।

(viii) उन्नतशील तथा सुधरे हुए बीजों का प्रयोग– सरकार को चाहिए कि कृषि विश्वविद्यालयों में उन्नतशील तथा सुधरे हुए बीजों का विकास करके, उन्हें कृषकों को वितरित करे। उन्नतशील तथा सुधरे हुए बीज कृषि की दिशा और दशा को बदलने में सक्षम रहेंगे।

(ix) उर्वरक तथा कीटनाशकों का प्रयोग– भारतीय कृषकों को उचित दर एवं मात्रा में रासायनिक तथा जैविक उर्वरक और कीटनाशक सुलभ कराए जाएँ। इनका उपयोग करके भारतीय कृषक कृषि की कम उत्पादकता के कलंक को मिटाने में सफल होंगे।

(x) अन्य सुझाव– भारतीय कृषकों को दीर्घकालीन ऋण, उचित भंडारण तथा विपणन की सुविधाएँ देकर एवं मृदा क्षरण पर नियंत्रण लगाकर और फसलों को रोगों व कीड़े-मकोड़ों के विनाश से बचाकर कृषि से अधिक उत्पादन पाया जा सकता है।

2. हरित क्रांति के लाभों एवं हानियों का वर्णन कीजिए।

उ०– **हरित क्रांति के लाभ–** हरित क्रांति से निम्नलिखित लाभ प्राप्त हुए हैं–

(i) हरित क्रांति के कारण कृषि उत्पादन में इतनी वृद्धि हो गई है कि भारत कृषि उत्पादों में आत्म-निर्भर बन गया है।

(ii) हरित क्रांति ने भारतीय निर्वाहमूलक कृषि को लाभदायक व्यवसाय में बदल दिया है।

(iii) हरित क्रांति के फलस्वरूप खाद्यान्नों का उत्पादन इतना बढ़ गया है कि भारत उन्हें आयात करने के स्थान पर उनका निर्यात करने लगा है।

(iv) हरित क्रांति के कारण कृषि उत्पादन बढ़ने से कृषक धनवान बन गया है।

(v) अधिक मात्रा में उगने वाले कई कृषि उत्पादों ने उद्योगों के लिए कच्चा माल सुलभ कराकर उनकी स्थापना का मार्ग खोल दिया है।

(vi) हरित क्रांति के कारण रोजगार के नए अवसर बढ़े हैं तथा व्यापार का विस्तार हो गया है।

(vii) हरित क्रांति भारत में बेरोजगारी और निर्धनता की समस्याएँ दूर करने में सफल रही है।

(viii) हरित क्रांति के कारण प्रति व्यक्ति आय और राष्ट्रीय आय में भारी वृद्धि हो गई है।

हरित क्रांति से हानियाँ (दोष)– हरित क्रांति के लाभों के अतिरिक्त कुछ दोष भी हैं, जिनके कारण निम्नलिखित हानियाँ हुई हैं–

(i) हरित क्रांति कुछ फसलों तक सीमित रहने के कारण सभी फसलों को इसका लाभ नहीं मिल सका है।

(ii) हरित क्रांति का प्रभाव क्षेत्र भी कुछ राज्यों तक ही सीमित रह गया है। इससे वंचित राज्यों में आर्थिक विषमताएँ बढ़ गई हैं।

(iii) हरित क्रांति से बड़े कृषक ही लाभान्वित हो सके हैं, जिससे वे अधिक धनवान हो गए हैं।

(iv) हरित क्रांति ने कृषि का यंत्रीकरण करके बेरोजगारी को बढ़ावा दिया है।

(v) हरित क्रांति कृषि उत्पादन बढ़ाने का जो लक्ष्य लेकर चली थी, उसमें वह पूर्णत: सफल नहीं हुई है।

(vi) कृषि के यंत्रीकरण तथा फसलों में रासायनिक उर्वरक तथा कीटनाशकों के अधिक उपयोग से पर्यावरण प्रदूषण की समस्या पनप गई है।

3. भारत में कृषि के विकास के लिए किए गए सरकारी प्रयासों का विवरण दीजिए।

उ०– **भारत में कृषि विकास के लिए किए गए सरकारी प्रयास–** भारतीय सरकार ने कृषि की कम उत्पादकता की समस्या के निराकरण के लिए निम्नलिखित प्रयास किए–

(i) कृषि क्षेत्र में वृद्धि– भारत सरकार ने बंजर भूमि, परती भूमि तथा कटाव से बेकार भूमि को फसलें उगाने योग्य बनाकर कृषि क्षेत्र को 38% बढ़ाने का सफल प्रयास किया।

(ii) सिंचाई सुविधाओं का विस्तार– सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत अनेक बड़ी, मध्यम तथा लघु सिंचाई परियोजनाएँ प्रारंभ करके सिंचाई की सुविधाएँ बढ़ाई हैं। 18% सिंचित क्षेत्र को बढ़ाकर 55% तक कर दिया है। सिंचाई की सुविधाएँ बढ़ जाने से कृषि की उत्पादकता बढ़ गई है।

(iii) उन्नतशील सुधरे हुए बीजों का विकास– सरकार ने उन्नतशील तथा सुधरे हुए अधिक उपज देने वाले बीजों का विकास कर तथा उन्हें कृषकों को उपलब्ध कराकर कृषि उत्पादन बढ़ाने का प्रयास किया है।

(iv) रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों की उपलब्धता– सरकार ने कृषकों के लिए रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों की उपलब्धता बढ़ाकर कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए अच्छे प्रयास किए हैं।

(v) हरित क्रांति– सरकार ने कृषि व्यवसाय में हरित क्रांति जैसा चमत्कारी कार्यक्रम लागू करके भारतीय कृषि को अल्प उत्पादकता के रोग से सदैव के लिए मुक्त बना दिया है।

(vi) भूमि सुधार कार्यक्रम– सरकार ने जमींदारी उन्मूलन, चकबंदी, हदबंदी तथा भूस्वामित्व व्यवस्था में सुधार लाकर कृषि उत्पादन में आशातीत वृद्धि कर ली है।

(vii) कृषि का यंत्रीकरण– सरकार ने कृषि को नवीनतम तकनीकी, आधुनिक प्रविधियों तथा नई-नई विधाओं का लाभ देने के लिए उसका यंत्रीकरण कर दिया है। यंत्रीकरण कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए रामबाण सिद्ध हुआ है।

(viii) कृषि वित्त की व्यवस्था– सरकार ने राष्ट्रीयकृत बैंकों, ग्रामीण बैंकों, कृषि विकास बैंकों तथा कृषि-साख समितियों के माध्यम से कृषकों को दीघकालीन ऋण दिलाकर वित्त की सुविधाएँ जुटा दी हैं। वित्त की सुलभता कृषि उत्पादन बढ़ाने में बड़ी सहायक सिद्ध हो रही है। साख की सहायता से कृषक यंत्र, बीज, खाद तथा सिंचाई की सुविधाएँ जुटाकर कृषि उत्पादन बढ़ाने में सफल हो रहा है।

(ix) राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना– सरकार ने 1985 ई० में व्यापक फसल बीमा योजना लागू करके कृषकों को प्राकृतिक आपदाओं तथा अन्य अनिश्चितताओं से मुक्त करके कृषि उत्पादन बढ़ाने के लक्ष्य की ओर अग्रसर कर दिया है।

(x) भंडारण तथा विपणन व्यवस्था में सुधार– भारत सरकार ने केंद्रीय भंडारगृह बनाकर तथा कृषि उपजों की सरकारी खरीद कराकर कृषि उत्पादों के भंडारण तथा विपणन व्यवस्था को चाक-चौबंद करके कृषकों को अधिक से अधिक उत्पादन करने के मार्ग पर आगे बढ़ा दिया है।

(xi) उत्पादन वृद्धि के प्रयास– भारत सरकार ने भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, राष्ट्रीय बीज निगम आदि सरकारी संस्थान स्थापित करके कृषि उत्पादन में वृद्धि करने के प्रयास किए हैं। उसने गहन कृषि जिला कार्यक्रम तथा गहन कृषि क्षेत्रीय कार्यक्रम चलाकर कृषि उत्पादन के नए आयाम बनाए हैं।

4. भारतीय कृषि की भावी संभावनाओं पर प्रकाश डालिए।

उ०– **भारतीय कृषि में विकास की संभावनाएँ–** कृषि विकास के लिए चलाए गए कार्यक्रमों से भारत में कृषि विकास की निम्नलिखित संभावनाएँ बढ़ गई हैं–

(i) नवीनतम प्रौद्योगिकी का विस्तार– भारत में कृषि क्षेत्र में नवीनतम प्रौद्योगिकी की खोज तथा अनुसंधान कार्यों पर बल दिया जा रहा है। अत: कृषि क्षेत्र में नवीनतम प्रौद्योगिकी के विस्तार और प्रयोग की संभावनाएँ बढ़ गई हैं।

(ii) उन्नतशील तथा अधिक उपज देने वाले बीज– सरकार ने कृषि के लिए उन्नतशील तथा सुधरे हुए अधिक उपज देने वाले बीजों का भारी मात्रा में संग्रह कर लिया है। अत: उनके उपयोग की संभावनाएँ बलवती हो गई हैं।

(iii) उर्वरकों तथा कीटनाशकों का समुचित उपयोग– सरकार रासायनिक उर्वरक, जैविक उर्वरक तथा कीटनाशकों की आपूर्ति बढ़ाकर, उन्हें कृषकों को कम मूल्य पर देने की व्यवस्था कर रही है। अत: उनका समुचित उपयोग होने से कृषि उत्पादन बढ़ने की संभावना बन गई है।

(iv) सिंचाई की सुविधाओं का विस्तार– भारत सरकार बड़ी तथा लघु सिंचाई योजनाओं को संचालित करने के लिए कटिबद्ध है। अत: कृषि क्षेत्र के लिए सिंचाई सुविधाओं के विस्तार की संभावनाएँ बढ़ गई हैं। सिंचाई कृषि क्षेत्र की वास्तव में कायापलट कर सकती है।

(v) कृषि क्षेत्र का विस्तार– सरकार नवीन प्रौद्योगिकी के उपयोग से बंजर भूमि, परती भूमि, ऊबड़-खाबड़ भूमि, अनुपजाऊ भूमि तथा खेती के लिए बेकार भूमि को कृषि योग्य बना रही है। अत: कृषि भूमि का क्षेत्र बढ़ जाने की पूरी संभावनाएँ बन गई हैं।

(vi) कृषि का पारंपरिक स्वरूप बदलने की संभावना– भारत में कृषि का यंत्रीकरण होने, नवीनतम प्रौद्योगिकी तथा सुधरे बीजों का प्रयोग होने से भारतीय कृषि का पारंपरिक निर्वाहमूलक स्वरूप अब व्यावसायिक बनता जा रहा है। भारतीय कृषि, खाद्यान्न के साथ-साथ उद्योगों के लिए कच्चे माल उगाने के कारण अपने पारंपरिक स्वरूप को बदल रही है। निश्चय ही भारतीय कृषि का रूप व्यावसायिक बन जाने की पूर्ण संभावना है।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई-1 (ग) : भारतीय अर्थव्यवस्था में उद्योगों का योगदान

52

भारतीय अर्थव्यवस्था का औद्योगीकरण

संतुलित औद्योगिक ढाँचे की आवश्यकता, वर्तमान औद्योगिक ढाँचा, कुटीर तथा लघु उद्योग, बड़े पैमाने के उद्योग)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 521 व 522 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 522, 523 व 524 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. कृषि तथा उद्योगों की पारस्परिक निर्भरता को समझाइए।

उ०– कृषि और उद्योगों की अनुपूरकता से आशय दोनों के परस्पर अटूट संबंध से लगाया जाता है। जिस प्रकार प्राण के बिना देह और देह के बिना प्राण व्यर्थ हैं, वैसे ही कृषि के बिना उद्योग और उद्योगों के बिना कृषि व्यर्थ है। कृषि जो कच्चे माल उगाती है, उद्योग उनका प्रसंस्करण करके नए उत्पाद बना देते हैं, जिनका उपयोग कृषि क्षेत्र में भी किया जाता है। कृषि उद्योगों का पोषण करती है और उद्योग कृषि के विकास में अपना सहयोग देते हैं। इस प्रकार कृषि और उद्योगों में परस्पर गहरा संबंध पाया जाता है।

2. उद्योगों के विकास में कृषि की भूमिका पर प्रकाश डालिए।

उ०– उद्योगों के विकास में कृषि की निम्नलिखित भूमिका है–

(i) कृषि उद्योगों की स्थापना में सहयोग करती है।

(ii) कृषि उद्योगों को कच्चा माल उपलब्ध कराकर उनका पोषण करती है।

(iii) कृषि उद्योगों के उत्पादों की माँग में वृद्धि करती हैं।

(iv) कृषि पशुपालन, दुग्ध उद्योग, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, खंडसारी आदि कुटीर उद्योगों के विकास में सहायक है।

(v) कृषि में अनेक यंत्र, उपकरण, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक तथा नवीनतम प्रौद्योगिकी का प्रयोग होने से उद्योगों की प्रगति होती है।

3. भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु एवं कुटीर उद्योगों के तीन प्रमुख महत्व बताइए।

उ०– भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु एवं कुटीर उद्योगों के तीन महत्व निम्नलिखित हैं–

(i) लघु एवं कुटीर उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए सर्वथा उपयुक्त हैं। इन्हें कम पूँजी तथा अधिक मानवीय श्रम से चलाया जा सकता है।

(ii) लघु एवं कुटीर उद्योग लोगों को रोजगार देकर भारतीय जनसंख्या की शक्ति का सदुपयोग करने में सहायक हैं।

(iii) कुटीर तथा लघु उद्योग स्थानीय संसाधनों पर निर्भर होते हैं, जिससे व्यर्थ चले जाने वाले संसाधनों का सदुपयोग हो जाता है।

4. कुटीर तथा लघु उद्योगों के तीन अंतर स्पष्ट कीजिए।

उ०– कुटीर तथा लघु उद्योगों के तीन अंतर निम्नलिखित हैं–

कुटीर उद्योग	लघु उद्योग
1. कुटीर उद्योगों में उत्पादन हाथों से अथवा सामान्य औजारों से होता है।	1. लघु उद्योगों में उत्पादन के लिए मशीनों का प्रयोग किया जाता है।
2. कुटीर उद्योग घर की चारदीवारी में चलाए जाते हैं।	2. लघु उद्योग छोटे-छोटे कारखानों में चलाए जाते हैं।
3. कुटीर उद्योगों में विशेष पूँजी और ऊर्जा की आवश्यकता नहीं होती।	3. लघु उद्योगों के लिए पूँजी निवेश की सीमा 5 करोड़ रुपए तक होती है।

5. भारतीय अर्थव्यवस्था में बड़े पैमाने के उद्योगों के तीन प्रमुख महत्व बताइए।

उ०– भारतीय अर्थव्यवस्था में बड़े पैमाने के उद्योगों के तीन महत्व निम्नलिखित हैं–

(i) तीव्र एवं संतुलित विकास में सहायक

(ii) रोजगार के अवसरों में वृद्धि में सहायक

(iii) राष्ट्रीय आय वृद्धि में सहायक

6. भारत में तीव्र संतुलित औद्योगिक विकास की आवश्यकता के तीन प्रमुख कारण दीजिए।

उ०– भारत एक विकासशील देश है। उसके तीव्र एवं संतुलित औद्योगिक विकास की आवश्यकता के तीन प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

(i) तीव्र एवं संतुलित औद्योगिक विकास राष्ट्र के सर्वांगीण विकास को प्रोत्साहित करता है।

(ii) संतुलित विकास से प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग ठीक ढंग से हो सकता है।

(iii) संतुलित औद्योगिक विकास से राष्ट्र संपन्न बनता है।

7. निजी क्षेत्र तथा सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों में तीन अंतर बताइए।

उ०– निजी क्षेत्र तथा सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों में अंतर–

निजी क्षेत्र के उद्योग	सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग
1. इन उद्योगों पर निजी व्यक्तियों का स्वामित्व होता है। 2. ये उद्योग निजी कल्याण में सहायक हैं 3. इन उद्योगों का उद्देश्य अधिक धन कमाना होता है।	1. इन उद्योगों पर सरकार का पूर्ण नियंत्रण होता है। 2. ये उद्योग सार्वजनिक कल्याण में सहायक हैं। 3. इन उद्योगों का उद्देश्य देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाना होता है।

8. आधारभूत उद्योग किसे कहते हैं? इसके दो महत्व लिखिए।

उ०– जो उद्योग अन्य उद्योगों की स्थापना तथा विकास के लिए स्थापित किए जाते हैं, आधारभूत उद्योग कहलाते हैं। जैसे- लोहा-इस्पात, कोयला व सीमेंट उद्योग।

(i) आधारभूत उद्योग अन्य उद्योगों के विकास में सहायक हैं।

(ii) आधारभूत उद्योग रोजगार के अवसर उपलब्ध कराते हैं।

9. भारत में कुटीर तथा लघु उद्योगों की तीन कठिनाइयाँ बताइए।

उ०– भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों की तीन कठिनाइयाँ निम्नलिखित हैं–

(i) कुटीर एवं लघु उद्योगों को कच्चा माल उचित मूल्य एवं उचित मात्रा में नहीं मिल पाता।

(ii) कुटीर एवं लघु उद्योगों को ऊर्जा एवं आधुनिकतम शक्ति के साधनों की समस्या बनी रहती है।

(iii) कुटीर एवं लघु उद्योगों में उत्पादन बहुत छोटी मात्रा में होने के कारण व्यय अधिक आता है।

10. कुटीर तथा लघु उद्योगों की कठिनाइयाँ दूर करने के तीन उपाय सुझाइए।

उ०– कुटीर एवं लघु उद्योगों की कठिनाइयाँ दूर करने के तीन उपाय निम्नलिखित हैं–

(i) कुटीर एवं लघु उद्योगों को उचित मूल्य पर तथा उचित मात्रा में कच्चा माल सुलभ कराया जाए।

(ii) वुटीर एवं लघु उद्योगों को ऊर्जा तथा आधुनिकतम उपकरण उपलब्ध कराए जाएं।

(iii) कुटीर एवं लघु उद्योगों में बने उत्पादों के प्रचार तथा विज्ञापन की समुचित व्यवस्था की जाए।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. कृषि और औद्योगिक विकास के मध्य संबंध स्थापित कीजिए।

उ०– **कृषि और उद्योगों का संबंध–** कृषि और उद्योगों की अनुपूरकता से आशय दोनों के परस्पर अटूट संबंध से लगाया जाता

है। जिस प्रकार प्राण के बिना देह और देह के बिना प्राण व्यर्थ हैं, वैसे ही कृषि के बिना उद्योग और उद्योगों के बिना कृषि व्यर्थ है। कृषि जो कच्चे माल उगाती है, उद्योग उनका प्रसंस्करण करके नए उत्पाद बना देते हैं, जिनका उपयोग कृषि क्षेत्र में भी किया जाता है। कृषि उद्योगों का पोषण करती है और उद्योग कृषि के विकास में अपना सहयोग देते हैं। इस प्रकार कृषि और उद्योगों में परस्पर गहरा संबंध पाया जाता है। कृषि नागरिकों को भोजन और वस्त्र देकर उनका पालन-पोषण करती है, जबकि उद्योग, सुख-सुविधा की वस्तुओं का उत्पादन करके सामाजिक कल्याण, प्रगति तथा समृद्धि का परिवेश बनाते हैं। इन्हीं दोनों के माध्यम से राष्ट्र में आर्थिक विकास की गंगा, जन कल्याण और संपन्नता की जमुना प्रवाहित होती है। दोनों की पारस्परिक अनुपूरकता को निम्नवत् समझा जा सकता है।

निम्नलिखित तथ्यों से स्पष्ट हो जाता है कि किस प्रकार कृषि उद्योगों पर निर्भर है–

(i) **कृषि का पोषण–** उद्योग कृषि को विविध निविष्टियाँ और साधन देकर उसका पोषण करते हैं। कृषि को यंत्र, उपकरण, सुधरे हुए बीज, रासायनिक उर्वरक तथा कीटनाशक, उद्योगों द्वारा ही सुलभ कराए जाते हैं।

(ii) **कृषि विकास–** उद्योग, कृषि क्षेत्र को परिवहन, उत्पादन की नवीनतम प्रविधियाँ तथा सिंचाई की सुविधाओं का संयोजन करके, उसके विकास का पथ प्रशस्त करते हैं।

(iii) **कृषि का आधुनिकीकरण–** भारतीय कृषि क्षेत्र को परंपरागत निर्वाहमूलक जाल से निकालकर उद्योगों ने कृषि का पूर्ण यंत्रीकरण कर दिया है, जिससे वह आधुनिकीकरण के पथ पर सरपट दौड़ने लगी है।

(iv) **कृषि उत्पादकता–** भारतीय कृषि सदियों से कम उत्पादक और अविकसित थी। उद्योगों ने उसे मशीनें, उपकरण, सिंचाई सुविधाएँ, नए सुधरे हुए बीज, उर्वरक, कीटनाशक तथा उत्पादन की नवीनतम प्रविधियाँ सुलभ कराकर उसकी उत्पादकता को कई गुना बढ़ा दिया है।

(v) **लाभकारी व्यवसाय–** उद्योगों के विकास के साथ ही कृषि उत्पादों की उनमें खपत होने से, कृषि उत्पादों की माँग बढ़ गई है। उत्पादों की बढ़ती माँग ने कृषि को एक लाभकारी व्यवसाय बनने में बड़ा सहयोग दिया है।

(vi) **हरित क्रांति की सफलता–** हरित क्रांति कृषि विकास का एक अनूठा और क्रांतिकारी कार्यक्रम था, जिसने कृषि के पुराने चोले को बदलकर उसे प्रगति और विकास के पथ पर अग्रसर कर दिया। हरित क्रांति को सफल बनाने में उद्योगों ने जो सहभागिता निभाई है, वह हरित क्रांति की सफलता का आधार बनी।

उद्योगों की कृषि पर निर्भरता– कृषि, उद्योगों की स्थापना को ही प्रोत्साहित नहीं करती, वरन् उनका पालन-पोषण भी करती है। अत: उद्योग कृषि पर निम्नवत् निर्भर होते हैं–

(i) **स्थापना में सहयोग–** कृषि उत्पादों की बहुलता तथा सुगमता, उद्योगों की स्थापना में पूरा सहयोग देती है। उदाहरण के लिए, चीनी उद्योग–गन्ना उत्पादक क्षेत्रों में, जूट उद्योग– जूट उत्पादक क्षेत्रों में तथा सूती वस्त्र उद्योग– कपास उत्पादक क्षेत्रों में सुगमता और तेजी से स्थापित हो जाते हैं।

(ii) **कच्चे मालों की आपूर्ति–** कृषि उत्पाद, उद्योगों के लिए कच्चा माल है। कृषि कच्चे माल की आपूर्ति करके उद्योगों का पोषण करती है तथा उनकी सफलता में सहभागी बनती है।

(iii) **जनसंख्या के दबाव में कमी–** उद्योग अनेक लोगों को रोजगार के अवसर सुलभ कराकर, कृषि क्षेत्र से उनकी निर्भरता समाप्त कर देते हैं। अत: कृषि क्षेत्र से जनसंख्या आजीविका के लिए उद्योगों की ओर चली जाती है, जिससे कृषि भूमि को जनसंख्या के दबाव से छुटकारा मिल जाता है।

(iv) **माँग में वृद्धि–** उद्योगों में बने आवश्यक उत्पादों की माँग कृषि क्षेत्र में बढ़ जाने से उद्योगों को उन्नति करने के साथ-साथ लाभ कमाने का भी अवसर मिल जाता है। इस प्रकार, कृषि उद्योगों के विकास में अद्वितीय योगदान करती है।

(v) **उद्योगों की प्रगति–** उद्योग कृषि को यंत्र, उपकरण, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक तथा नवीनतम प्रौद्योगिकी प्रदान करते हैं। इन सबका कृषि क्षेत्र में उपभोग जैसे-जैसे बढ़ता है, उद्योग प्रगति और विकास की सीढ़ियाँ चढ़ते चले जाते हैं।

(vi) **कुटीर उद्योग धंधों का विकास–** कृषि पशुपालन, दुग्ध उद्योग, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, खांडसारी निर्माण जैसे कुटीर उद्योगों के विकास में सहायक बनकर उद्योगों का पोषण करती है।

निष्कर्ष– अत: निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है, कि कृषि और उद्योग एक-दूसरे के पूरक हैं। एक का अस्तित्व दूसरे के बिना अधूरा है। कृषि राष्ट्र के आर्थिक विकास की गंगा है और उद्योग जमुना। दोनों के मिलन से ही आर्थिक विकास का संगम बनता है। कृषि और उद्योगों के परस्पर संयोग से ही राष्ट्र का आर्थिक विकास पुष्ट होता है। कृषि का विकास किए बिना औद्योगिक विकास संभव नहीं और औद्योगिक विकास के बिना कृषि का विकास संभव नहीं।

2. उद्योगों के विकास में कृषि के महत्व को उदाहरण सहित लिखिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 में उद्योगों की कृषि पर निर्भरता का अवलोकन कीजिए।

3. भारत में लघु उद्योगों की समस्याओं का वर्णन कीजिए।

उ०– **कुटीर तथा लघु उद्योगों की कठिनाइयों के निवारण के उपाय–** कुटीर उद्योगों तथा लघु उद्योगों को उनकी कठिनाइयों (समस्याओं) से उबारने हेतु निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं–

(i) कुटीर तथा लघु उद्योगों को उचित मूल्य पर तथा उचित मात्रा में कच्चा माल सुलभ कराया जाए।

(ii) कुटीर तथा लघु उद्योगों को ऊर्जा तथा आधुनिकतम उपकरण उपलब्ध कराए जाएँ।

(iii) कुटीर उद्योगों को सहकारी बैंकों तथा औद्योगिक बैंकों से कम ब्याज की दर पर दीर्घकालीन ऋण स्वीकृत कराए जाएँ।

(iv) इन उद्योगों को उत्पादन लागत व्यय नीची रखने के उपाय सुझाए जाएँ तथा इस कार्य में उन्हें दक्ष बनाया जाए।

(v) इन उद्योगों में बने उत्पादों को मिल में बने उत्पादों की प्रतिस्पर्द्धा से बचाया जाए।

(vi) कुटीर उद्योगों तथा लघु उद्योगों के लिए उत्पादन की नवीनतम प्रविधियाँ सुलभ कराई जाएँ।

(vii) कुटीर तथा लघु उद्योगों में बने माल के प्रचार तथा विज्ञापन की समुचित व्यवस्था कराई जाए।

(viii) इन उद्योगों को उपभोक्ता वस्तुओं के साथ-साथ फैशन की वस्तुएँ बनाने की सुविधाएँ भी उपलब्ध कराई जाएँ।

(ix) कुटीर तथा लघु उद्योगों के उत्पाद बेचने के लिए प्रदर्शनियाँ तथा मेले आयोजित किए जाएँ तथा उनके द्वारा बना माल खरीदने वालों को सरकार की ओर से छूट देने की व्यवस्था की जाए।

(x) कुटीर तथा लघु उद्योगों को कुशल तकनीशियनों की सेवाएँ नियंत्रित शुल्क पर उपलब्ध कराई जाएँ।

4. भारत के लघु उद्योगों की छ: विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

उ०– **कुटीर उद्योगों के लक्षण (विशेषताएँ)–** कुटीर उद्योगों को निम्नलिखित लक्षणों से पहचाना जा सकता है–

(i) कुटीर उद्योग घर की चारदीवारी में चलाए जाते हैं।

(ii) ये ग्रामीण क्षेत्रों में या नगरों की निर्धन बस्तियों में चलाए जाते हैं।

(iii) इनमें ऊर्जा तथा पूँजी का प्रयोग बहुत अल्प मात्रा में होता है।

(iv) कुटीर उद्योगों में स्थानीय संसाधनों का प्रयोग किया जाता है।

(v) कुटीर उद्योग, कृषि क्षेत्र पर निर्भर होते हैं।

(vi) ये उद्योग परिवार के सदस्यों द्वारा पूर्णकालिक अथवा अंशकालिक रूप से चलाए जाते हैं।

5. भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु उद्योगों के योगदान का वर्णन कीजिए।

उ०– **भारतीय अर्थव्यवस्था में कुटीर तथा लघु उद्योगों का महत्व–** कुटीर तथा लघु उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था की आधारशिला हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था में इनका महत्व निम्नलिखित है–

(i) **भारतीय अर्थव्यवस्था के उपयुक्त–** लघु तथा कुटीर उद्योग, भारत की मिश्रित अर्थव्यवस्था की दृष्टि से सर्वथा उपयुक्त हैं। इन्हें कम पूँजी तथा अधिक मानवीय श्रम से चलाया जा सकता है।

(ii) **जनशक्ति का सदुपयोग–** कुटीर उद्योग धंधों और लघु उद्योगों में श्रम की अधिक आवश्यकता पड़ती है। अत: ये दोनों उद्योग लोगों को रोजगार देकर भारतीय जनसंख्या की शक्ति का सदुपयोग करने में सक्षम हैं।

(iii) **कृषि भूमि पर जनसंख्या के भार में कमी–** कुटीर उद्योग धंधे एवं लघु उद्योग कृषि पर आश्रित अतिरिक्त लोगों को रोजगार के साधन सुलभ कराकर कृषि भूमि पर जनसंख्या के दबाव को कम कर देते हैं।

(iv) **बड़े पैमाने के उद्योगों के पूरक–** कुटीर उद्योगों तथा लघु उद्योगों में बना माल बड़े पैमाने के उद्योगों में कच्चे माल के रूप में प्रयोग होता है, जिससे कुटीर उद्योग बड़े उद्योगों के पूरक बनकर स्वयं का भी विकास करते हैं।

(v) **उद्योगों के विकेंद्रीकरण में सहायक–** कुटीर तथा लघु उद्योग देश के विस्तृत क्षेत्रों में फैले होते हैं, जिससे युद्ध आदि के समय इनके नष्ट होने का भी भय नहीं होता। इस प्रकार ये उद्योग देश में उद्योगों के विकेंद्रीकरण में सहायक होते हैं तथा देश का संतुलित विकास करते हैं।

(vi) **तीव्र एवं संतुलित आर्थिक विकास में सहायक–** कुटीर उद्योग तथा लघु उद्योग तीव्र गति से विकसित होने की प्रवृत्ति रखते हैं। इनके द्वारा सभी क्षेत्रों में विकास का प्रवाह होता है। अत: ये दोनों राष्ट्र के तीव्र एवं संतुलित आर्थिक विकास में सहायक बनते हैं।

(vii) **स्थानीय संसाधनों का सदुपयोग–** कुटीर तथा लघु उद्योग स्थानीय संसाधनों पर निर्भर होते हैं, जिससे व्यर्थ चले जाने वाले संसाधनों का सदुपयोग हो जाता है।

(viii) **आर्थिक विषमता का अंत–** कुटीर उद्योग तथा लघु उद्योग चंद लोगों के हाथों में केंद्रित नहीं होते। इस कारण इनका लाभ समाज के सभी वर्गों को समान रूप से मिलता है और समाज में धन का वितरण न्यायपूर्वक होने के कारण आर्थिक विषमता का अंत हो जाता है।

(ix) **शिल्प का विकास–** कुटीर उद्योगों में बनने वाली वस्तुएँ कलात्मक होती हैं। इनमें बनी वस्तुओं से समाज में शिल्पकलाओं के विकास को बढ़ावा मिलता है।

(x) **निर्यात को प्रोत्साहन–** कुटीर उद्योगों तथा लघु उद्योगों में निर्मित कलात्मक वस्तुओं की माँग विदेशों में खूब रहती है। अत: ये दोनों उद्योग राष्ट्र के निर्यात को बढ़ाकर विदेशी मुद्रा अर्जित करने में सहयोग करते हैं।

6. कुटीर उद्योग व लघु उद्योग में अंतर बताइए। कुटीर उद्योगों के विकास के लिए चार सुझाव दीजिए।

उ०– लघु एवं कुटीर उद्योग में अंतर–

कुटीर उद्योग	लघु उद्योग
1. कुटीर उद्योगों में उत्पादन हाथों से अथवा सामान्य औजारों से होता है।	1. लघु उद्योगों में उत्पादन के लिए मशीनों का प्रयोग किया जाता है।
2. कुटीर उद्योग घर की चारदीवारी में चलाए जाते हैं।	2. लघु उद्योग छोटे-छोटे कारखानों में चलाए जाते हैं।
3. कुटीर उद्योगों में विशेष पूँजी और ऊर्जा की आवश्यकता नहीं होती।	3. लघु उद्योगों के लिए पूँजी निवेश की सीमा 5 करोड़ रुपए तक होती है।
4. कुटीर उद्योग अधिकतर गाँवों और कस्बों में चलाए जाते हैं।	4. लघु उद्योग कस्बों और नगरों में स्थापित करके चलाए जाते हैं। लघु उद्योगों में भाड़े के मजदूर उत्पादन का कार्य करते हैं।

कुटीर एवं लघु उद्योगों के विकास के लिए चार सुझाव निम्नलिखित हैं–

(i) कुटीर तथा लघु उद्योगों को उचित मूल्य पर तथा उचित मात्रा में कच्चा माल सुलभ कराया जाए।

(ii) कुटीर तथा लघु उद्योगों को ऊर्जा तथा आधुनिकतम उपकरण उपलब्ध कराए जाएँ।

(iii) कुटीर उद्योगों को सहकारी बैंकों तथा औद्योगिक बैंकों से कम ब्याज की दर पर दीर्घकालीन ऋण स्वीकृत कराए जाएँ।

(iv) इन उद्योगों को उत्पादन लागत व्यय नीची रखने के उपाय सुझाए जाएँ तथा इस कार्य में उन्हें दक्ष बनाया जाए।

7. भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु एवं कुटीर उद्योगों के महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– उत्तर के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 5 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

8. भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि एवं कुटीर उद्योग-धंधों के महत्व पर प्रकाश डालिए।

उ०– भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्व- इसके लिए अध्याय– 50 के विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

भारतीय अर्थव्यवस्था में कुटीर उद्योग-धंधों का महत्व- इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या- 5 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

9. लघु उद्योग किसे कहते हैं? उनके विकास के लिए चार सुझाव दीजिए।

उ०– लघु उद्योग का अर्थ– लघु उद्योग वे उद्योग हैं, जिनमें मशीनों, श्रमिकों, कच्चे मालों के साथ-साथ निश्चित पूँजी का भी प्रयोग किया जाता है। लघु उद्योग कस्बों और नगरों में स्थापित किए जाते हैं। दूसरे शब्दों में, "लघु उद्योगों में उन समस्त औद्योगिक इकाइयों का समावेश किया जाता है, जिनमें 1 करोड़ रुपए तक की स्थिर पूँजी का निवेश किया गया है।" 2005 ई० में लघु औद्योगिक इकाइयों के निवेश की सीमा 1 करोड़ से बढ़ाकर 5 करोड़ कर दी गई, जबकि 5 करोड़ से 10 करोड़ निवेश वाली इकाई 'मध्यम श्रेणी की औद्योगिक इकाई' कहलाएगी। सेवा क्षेत्र में 2 से 5 करोड़ निवेश वाली इकाई 'मध्यम उपक्रम' कही जाएगी।

लघु उद्योगों के विकास हेतु सुझाव- लघु उद्योगों को उनकी कठिनाइयों से उबारने तथा विकास के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते हैं–

(i) लघु उद्योगों को उचित मूल्य पर तथा उचित मात्रा में कच्चा माल सुलभ कराया जाए।

(ii) लघु उद्योगों को ऊर्जा तथा आधुनिकतम उपकरण उपलब्ध कराए जाएँ।

(iii) लघु उद्योगों को सहकारी बैंकों तथा औद्योगिक बैंकों से कम ब्याज की दर पर दीर्घकालीन ऋण स्वीकृत कराए जाएँ।

(iv) इन उद्योगों को उत्पादन लागत व्यय नीची रखने के उपाय सुझाए जाएँ तथा इस कार्य में उन्हें दक्ष बनाया जाए।

(v) इन उद्योगों में बने उत्पादों को मिल में बने उत्पादों की प्रतिस्पर्द्धा से बचाया जाए।

(vi) उद्योगों तथा लघु उद्योगों के लिए उत्पादन की नवीनतम प्रविधियाँ सुलभ कराई जाएँ।

(vii) लघु उद्योगों में बने माल के प्रचार तथा विज्ञापन की समुचित व्यवस्था कराई जाए।

(viii) इन उद्योगों को उपभोक्ता वस्तुओं के साथ-साथ फैशन की वस्तुएँ बनाने की सुविधाएँ भी उपलब्ध कराई जाएँ।

(ix) लघु उद्योगों के उत्पाद बेचने के लिए प्रदर्शनियाँ तथा मेले आयोजित किए जाएँ तथा उनके द्वारा बना माल खरीदने वालों को सरकार की ओर से छूट देने की व्यवस्था की जाए।

(x) लघु उद्योगों को कुशल तकनीशियनों की सेवाएँ नियंत्रित शुल्क पर उपलब्ध कराई जाएँ।

10. औद्योगीकरण से आप क्या समझते हैं? उद्योगों तथा कृषि की पारस्परिक निर्भरता की विवेचना कीजिए।

उ०– औद्योगीकरण का अर्थ– जब उद्योगों की शृंखला व्यापक रूप धारण कर लेती है, तो यह एक प्रक्रिया बन जाती है, जिसे 'औद्योगीकरण' कहा जाता है। सामान्य अर्थों में 'औद्योगीकरण' का आशय केवल विनिर्माण-उद्योगों की स्थापना तथा उनके विकास से है, किंतु व्यापक अर्थों में 'औद्योगीकरण' का आशय केवल विनिर्माण-उद्योगों की स्थापना तक ही सीमित नहीं है, अपितु किसी राष्ट्र की संपूर्ण अर्थव्यवस्था के परिवर्तन हेतु जीवन के प्रत्येक क्षेत्र का आधुनिकीकरण करना है। औद्योगीकरण से नए-नए रोजगारों का सृजन, प्रति व्यक्ति तथा राष्ट्रीय आय में वृद्धि एवं नागरिकों की क्रय-शक्ति बढ़ाने के कारण सामान्यजन के जीवन-स्तर में सुधार होता है। संक्षेप में औद्योगीकरण किसी राष्ट्र के आर्थिक विकास का आधार है।

उद्योगों और कृषि की पारस्परिक निर्भरता– इसके लिए विस्तृत उततरीय प्रश्न संख्या- 1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

11. बड़े पैमाने के उद्योगों से आप क्या समझते हैं? भारतीय अर्थव्यवस्था में उनका महत्व स्पष्ट कीजिए।

उ०– **बड़े पैमाने के उद्योग–** विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास तथा औद्योगिक क्रांति ने जिस कारखाना पद्धति को जन्म दिया, उसी का परिणाम हैं, 'बड़े पैमाने के उद्योग'। विशालकाय मशीनों, पूँजी, श्रम तथा नवीनतम तकनीकी का प्रयोग करके व्यापारिक स्तर पर उत्पादन करने वाले उद्योग, बड़े पैमाने के उद्योग कहलाते हैं। दूसरे शब्दों में ''बड़े पैमाने के उद्योग से आशय उस औद्योगिक इकाई से लगाया जाता है, जिसमें 10 करोड़ से अधिक की पूँजी का निवेश किया जाता है, इन्हें वृहद या विनिर्माण उद्योग भी कहते हैं।'' इनमें बड़ी-बड़ी मशीनें, विद्युत, पर्याप्त पूँजी तथा हजारों श्रमिक लगाकर भारी मात्रा में उत्पादन किया जाता है। लोहा-इस्पात उद्योग, सीमेंट उद्योग, चीनी उद्योग तथा सूती वस्त्र उद्योग, बड़े पैमाने के उद्योगों के उदाहरण हैं। बड़े पैमाने के उद्योगों में आधारभूत उद्योग, पूँजीगत उद्योग, मध्यवर्ती वस्तु निर्माण उद्योग और उपभोक्ता-वस्तु निर्माण उद्योग आते हैं। इन उद्योगों का संचालन निजी क्षेत्र, सार्वजनिक क्षेत्र एवं संयुक्त क्षेत्र के रूप में तीनों ही क्षेत्रों द्वारा किया जाता है। बड़े पैमाने के उद्योग ही राष्ट्र के औद्योगीकरण को सुदृढ़ बनाते हैं।

भारतीय अर्थव्यवस्था में बड़े पैमाने के उद्योगों का महत्व– कुटीर उद्योग-धंधे तथा लघु उद्योग भारत के औद्योगीकरण की यदि नींव हैं, तो बड़े पैमाने के उद्योग उस नींव पर बना औद्योगीकरण का विशाल भवन हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था को उन्नत, सुदृढ़ और संपन्न बनाने में इन उद्योगों का विशेष महत्व रहा है। बड़े पैमाने के उद्योगों का भारतीय अर्थव्यवस्था में निम्नलिखित महत्व है–

(i) **तीव्र एवं संतुलित आर्थिक विकास–** बड़े पैमाने के उद्योग भारत में तीव्र एवं संतुलित आर्थिक विकास की धारा प्रवाहित करने में सफल रहे हैं। इन उद्योगों ने भारतीय अर्थव्यवस्था में व्याप्त अनिश्चितताओं का अंत कर दिया है।

(ii) **सुदृढ़ अर्थव्यवस्था का निर्माण–** बड़े पैमाने के उद्योगों ने रोजगार, उत्पादन, व्यापार तथा राष्ट्रीय आय को कई गुना बढ़ाकर एक सुदृढ़ अर्थव्यवस्था का निर्माण किया है। वर्तमान में भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व की चतुर्थ सुदृढ़ अर्थव्यवस्था बन चुकी है।

(iii) **रोजगार के अवसरों में वृद्धि–** बड़े पैमाने के उद्योगों ने रोजगार के नए अवसरों का सृजन कर और रोजगार के नए स्रोत खोलकर, बेरोजगारी की समस्या का निराकरण कर दिया है। वर्तमान में निजी क्षेत्र के व्यवसाय नवयुवकों को ऊँचे वेतन देकर उनका जीवन सुखद बनाने में सक्षम हैं।

(iv) **उत्पादन में भारी वृद्धि–** बड़े पैमाने के उद्योगों ने राष्ट्रीय उत्पादन को कई गुना बढ़ा दिया है। उत्पादन बढ़ने से कृषि, परिवहन, व्यापार तथा वाणिज्य के क्षेत्र में उन्नति और विकास के नए क्षितिज खुल गए हैं।

(v) **पूँजी निर्माण की दर में वृद्धि–** बड़े पैमाने के उद्योगों ने रोजगार तथा आय में वृद्धि करके लोगों को बचत करने में सक्षम बना दिया है। नागरिक अल्प बचतों में धन लगाकर पूँजी निर्माण में सहायक बन रहे हैं, जिससे देश में पूँजी निर्माण की दर बढ़ गई है।

(vi) **राष्ट्रीय आय में वृद्धि–** बड़े पैमाने के उद्योगों का सबसे सुखद लाभ प्रतिव्यक्ति आय और राष्ट्रीय आय में भारी वृद्धि हो जाना है। बढ़ती राष्ट्रीय आय ने भारत में एक सुदृढ़ अर्थव्यवस्था का निर्माण कर दिया है।

(vii) **कृषि भूमि से जनसंख्या का दबाव घटना–** भारत में तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या अपने भरण-पोषण के लिए कृषि भूमि पर आश्रित हो गई थी। बड़े पैमाने के उद्योगों ने करोड़ों लोगों को रोजगार देकर जनसंख्या के भारी दबाव से कृषि भूमि को मुक्त कर दिया है, जिससे कृषि की उन्नति तथा विकास के स्वर्णिम द्वार खुल गए हैं।

(viii) **नागरिकों के जीवन-स्तर में सुधार–** बड़े पैमाने के उद्योगों ने आवश्यक, आरामदायक तथा विलासिता की वस्तुओं का सस्ते मूल्य में निर्माण कर उन्हें नागरिकों को उपभोग के लिए सुलभ बना दिया है, जिससे नागरिकों के जीवन-स्तर में गुणात्मक सुधार आ गया है।

(ix) **सुदृढ़ प्रतिरक्षा–** बड़े पैमाने के उद्योगों ने सैन्य सामग्री तथा सुरक्षा के आधुनिकतम उपकरण बनाकर सेना के तीनों अंगों को सुदृढ़ बनाया है। इन्होंने युद्धपोत, पनडुब्बी, मिसाइलें, वायुयान, आधुनिक आग्नेयास्त्र, आदि युद्धक सामग्री बनाकर प्रतिरक्षा क्षेत्र को सुदृढ़ बनाने में अभूतपूर्व योगदान दिया है।

(x) **निर्यात में वृद्धि–** बड़े पैमाने के उद्योगों ने व्यावसायिक दृष्टि से उत्पादन करके, वस्तुओं के उत्पादन में भारत को न केवल आत्मनिर्भर बनाया है, वरन् राष्ट्र के निर्यात व्यापार को भी बढ़ाया है। निर्यात बढ़ने से भारत का विदेशी मुद्रा भंडार बढ़ गया है, जो अर्थव्यवस्था की संपन्नता का शुभ लक्षण है।

12. भारत में तीव्र और संतुलित आर्थिक विकास आवश्यक है? इस कथन को छः तर्क देकर पुष्ट कीजिए।

उ०– **भारत में तीव्र एवं संतुलित औद्योगिक ढाँचे की आवश्यकता-** तीव्र एवं संतुलित ढाँचे से तात्पर्य उद्योगों की ऐसी व्यवस्था से है जिसमें उद्योगों का तेजी से विकास हो तथा अर्थव्यवस्था का ढाँचा ऐसा हो जिसमें उद्योगों को अपना पूर्ण विकास करने के पर्याप्त अवसर मिलें। इसके साथ ही, उद्योगों के विकास में संतुलन भी रहे। भारत जैसे विकासशील देश में संतुलित औद्योगिकरण की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से है–

(i) भारत एक विकासशील देश है। कृषि देश के अर्थतंत्र की धुरी है जो पिछड़ी तथा परपंरागत अवस्था में है। देश की जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है, अतएव देश में आर्थिक विकास की दर को बढ़ाना आवश्यक है, जिसका एकमात्र उपाय तीव्र तथा संतुलित औद्योगिकरण है।

(ii) भारत के आर्थिक विकास में प्रादेशिक असंतुलन मिलता है। जो क्षेत्र कच्चे माल तथा शक्ति के साधनों से संपन्न हैं, वहाँ औद्योगिकरण अधिक हुआ है। छोटा नागपुर के पठारी क्षेत्र में कोयला तथा लोहे की प्राप्ति के कारण लोहा-इस्पात उद्योग स्थापित हो गया है तथा अन्य उद्योग भी सेकेंद्रीत हो गए हैं किंतु राजस्थान, जम्मू-कश्मीर, उत्तर-पूर्वी भारत, उड़ीसा, उत्तरी बिहार, मध्य प्रदेश आदि राज्य अविकसित और पिछड़े ही रह गए हैं। देश के संतुलित विकास के लिए इन पिछड़े क्षेत्रों में औद्योगिकरण की आवश्यकता है।

(iii) देश की विशाल आबादी को केवल कृषि से रोजगार प्राप्त नहीं हो सकता। उद्योगों के विकास से ही अतिरिक्त रोजगार के अवसर पैदा किए जा सकते हैं, अन्यथा निर्धनता की समस्या उग्र होती जाएगी। अमीरों तथा गरीबों का अंतर सामाजिक विषमता को और भी उग्र बना देता है।

(iv) भारत में राष्ट्रीय आय तथा प्रति व्यक्ति आय अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। इसका एक प्रमुख कारण उद्योगों का विकास असंतुलित विकास ही है। अत: उद्योगों का संतुलित विकास करके देश की राष्ट्रीय आय और उसके साथ-साथ प्रति व्यक्ति आय में भी वृद्धि की जा सकती है।

(v) निर्यात से देश की राष्ट्रीय व प्रति व्यक्ति आय बढ़ती है। निर्यात देश के विकास का सूचक होता है। यदि देश में उद्योगों का विकास संतुलित ढ़ंग से किया जाए तो उद्योगों के उत्पादों में भी वृद्धि होगी, परिणामस्वरूप निर्यात भी बढ़ेगा।

(vi) भारत में प्रति व्यक्ति वार्षिक औसत आय वर्ष 2001-02 में ₹ 17,978 तथा वर्ष 2003-04 में ₹ 20,989 थी किन्तु आज भी भारत की 26% जनसंख्या गरीबी की रेखा से नीचे जीवन-यापन करने पर मजबूर है, जिसकी वार्षिक औसत आय केवल ₹ 3,228 ही है। इसका प्रमुख कारण है देश की शीर्ष 10% जनसंख्या द्वारा देश की आय का एक बड़ा भाग ग्रहण कर लेना। उदाहरण के लिए– शहरी व औद्योगिक क्षेत्र की अधिकांश सम्पत्ति देश के 20 बड़े औद्योगिक घरानों के पास केंद्रित है और यह केंद्रीकरण बढ़ता ही जा रहा है। धन व आय की असमानता को रोकने के लिए देश में उद्योगों का ढाँचा संतुलित होना चाहिए।

13. सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र के उद्योगों में अंतर स्पष्ट कीजिए तथा सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों के चार महत्व लिखिए।

उ०– **सार्वजनिक व निजी क्षेत्र के उद्योगों में अंतर–** जिन उद्योगों पर किसी निजी व्यक्ति का स्वामित्व होता है, उन्हें निजी क्षेत्र के उद्योग कहते हैं जबकि जिन उद्योगों पर सरकार का स्वामित्व होता है, वे सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग कहलाते हैं।

सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों के महत्व– सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों के चार महत्व निम्नलिखित हैं–

(i) **नियोजित आर्थिक विकास में सहायक–** किसी भी देश के नियोजित आर्थिक विकास में सार्वजनिक उद्योगों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। प्रो० हेन्सन के अनुसार – **''सार्वजनिक उद्योगों के बिना नियोजन के केवल कागज पर ही रहने की संभावना है''**

(ii) **माँग तथा पूर्ति में सन्तुलन–** वस्तुओं की माँग तथा पूर्ति में सन्तुलन से कीमतों में अत्यधिक उतार-चढ़ाव को रोका जा सकता है। इस संतुलन को बनाए रखने में सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग महत्वपूर्ण योगदान देते हैं क्योंकि उनके पास पर्याप्त मात्रा में पूँजी होने के कारण माँग तथा पूर्ति में संतुलन आसानी से बनाए रखा जा सकता है।

(iii) **राष्ट्रीय साधनों का उचित उपयोग–** राष्ट्रीय साधनों का उपयोग सरकार द्वारा सावधानीपूर्वक किया जा सकता है जिसके परिणामस्वरूप राष्ट्रहित की दृष्टि से देश के दुर्लभ साधनों का सावधानीपूर्वक उपयोग किया जा सके और देश के विकास में किसी भी प्रकार बाधा न आ सके। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु भारत सरकार ने कई उद्योगों को अपने स्वामित्व एवं नियंत्रण में लिया है तथा कई उद्योगों का राष्ट्रीयकरण भी कर दिया है; जैसे-कोयला खानों का राष्ट्रीयकरण इसी का एक उदाहरण है।

(iv) **रोजगार के साधनों का विकास–** सार्वजनिक उद्योगों के विकास के साथ-साथ लोगों का पर्याप्त मात्रा में रोजगार के साधन उपलब्ध हो जाते हैं जिसके कारण देश में व्याप्त निर्धनता उन्मूलन कार्यों को बल मिलता है। रोजगार के साधनों के विस्तार के साथ-साथ लोगों की आय में वृद्धि होती है तथा उनके जीवन स्तर में भी सुधार होता है।

14. कुटीर उद्योग और बड़े पैमाने के उद्योग में अंतर बताइए तथा कुटीर उद्योगों के विकास हेतु सुझाव दीजिए।

उ०– कुटीर उद्योग और बड़े पैमाने के उद्योग में अंतर–

कुटीर उद्योग	बड़े पैमाने के उद्योग
1. कुटीर उद्योगों में कम पूँजी का निवेश होता है।	1. बड़े पैमाने के उद्योगों में करोड़ों रूपए का निवेश किया जाता है।
2. कुटीर उद्योग घर की चारदीवारी में चलाए जाते हैं।	2. बड़े पैमाने के उद्योग बड़े-बड़े औद्योगिक संसाधन बनाकर चलाए जाते हैं।
3. कुटीर उद्योग बिना ऊर्जा और उपकरण के चलाए जाते हैं।	3. बड़े पैमाने के उद्योग ऊर्जा और उपकरणों, मशीनों आदि की सहायता से चलाए जाते हैं।
4. कुटीर उद्योगों में स्थानीय माँग की वस्तुएँ बनाई जाती हैं। जैसे– टोकरी बनाना, रस्सी बाँटना, सूत कातना आदि।	4. बड़े पैमाने के उद्योग में राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय स्तर (माँग) की वस्तुएँ बनाई जाती हैं; जैसे– चीनी उद्योग, सीमेंट उद्योग, सूती वस्त्र उद्योग लोहा-इस्पात उद्योग

कुटीर उद्योगों के विकास के लिए सुझाव– कुटीर उद्योगों के विकास के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते हैं–

(i) कुटीर उद्योगों को उचित मूल्य पर तथा उचित मात्रा में कच्चा माल सुलभ कराया जाए।

(ii) कुटीर उद्योगों को ऊर्जा तथा आधुनिकतम उपकरण उपलब्ध कराए जाएँ।

(iii) कुटीर उद्योगों को सहकारी बैंकों तथा औद्योगिक बैंकों से कम ब्याज की दर पर दीर्घकालीन ऋण स्वीकृत कराए जाएँ।

(iv) इन उद्योगों को उत्पादन लागत व्यय नीची रखने के उपाय सुझाए जाएँ तथा इस कार्य में उन्हें दक्ष बनाया जाए।

(v) इन उद्योगों में बने उत्पादों को मिल में बने उत्पादों की प्रतिस्पर्द्धा से बचाया जाए।

(vi) कुटीर उद्योगों के लिए उत्पादन की नवीनतम प्रविधियाँ सुलभ कराई जाएँ।

(vii) कुटीर उद्योगों में बने माल के प्रचार तथा विज्ञापन की समुचित व्यवस्था कराई जाए।

(viii) इन उद्योगों को उपभोक्ता वस्तुओं के साथ-साथ फैशन की वस्तुएँ बनाने की सुविधाएँ भी उपलब्ध कराई जाएँ।

(ix) कुटीर तथा लघु उद्योगों के उत्पाद बेचने के लिए प्रदर्शनियाँ तथा मेले आयोजित किए जाएँ तथा उनके द्वारा बना माल खरीदने वालों को सरकार की ओर से छूट देने की व्यवस्था की जाए।

(x) कुटीर तथा लघु उद्योगों को कुशल तकनीशियनों की सेवाएँ नियंत्रित शुल्क पर उपलब्ध कराई जाएँ।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

53 औद्योगिक उत्पादकता
(कार्यकुशलता, अकुशलता, निम्न उत्पादन के कारण)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 528 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 529 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. औद्योगिक उत्पादकता की परिभाषा लिखिए।

उ०– **औद्योगिक उत्पादकता की परिभाषा–** विभिन्न विद्वानों ने औद्योगिक उत्पादकता को निम्नवत् परिभाषित किया है–

"उत्पादकता से आशय प्राय: उस अनुपात से लगाया जाता है, जोकि वस्तुओं और सेवाओं के रूप में धनोत्पादन और ऐसे उत्पादन में लगे उत्पादन के साधनों के बीच विद्यमान होता है।" **–एम० बनर्जी**

"औद्योगिक उत्पादकता से आशय उत्पादन की संपूर्ण निविष्टियों तथा उनके उत्पादन के अनुपात से लगाया जाता है।"

–लेखिका

एक समय विशेष में उत्पादन की संपूर्ण इकाइयों तथा उत्पादन के उपादानों के अनुपातिक अंश को उद्योग की उत्पादकता कहते हैं।

2. भारत में निम्न उत्पादकता के लिए उत्तरदायी तीन कारण लिखिए।

उ०– **भारत में निम्न उत्पादकता के लिए उत्तरदायी तीन कारण निम्नलिखित हैं–**

(i) भारत को दीर्घकाल तक विदेशी शासन को झेलना पड़ा था। विदेशी शासकों ने औद्योगिक विकास की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। अंग्रेज सरकार ने भारत को केवल कच्चे माल की मंडी के रूप में विकसित किया। अत: भारत औद्योगिक क्षेत्र में पिछड़ गया।

(ii) भारत में अधिकतर लोग निर्धन हैं, जो कोई बचत नहीं कर पाते। कतिपय पूँजीपति लोग अपनी पूँजी को उद्योगों में लगाने के बजाय सुरक्षित निवेशों, जैसे– संपत्ति, व्यापार, सरकारी बाँड आदि में लगाना पसंद करते हैं। इसलिए भारत में पूँजी का अभाव रहने के कारण औद्योगीकरण का स्तर पिछड़ा ही रहा है।

(iii) भारत में बड़े पैमाने के उद्योगों की स्थापना बहुत देर से हुई। हमारे उद्योग मशीन, औजार, इस्पात, रासायनिक सामान आदि के लिए विदेशों पर निर्भर रहे हैं। इसी कारण यहाँ औद्योगिक पिछड़ापन बना रहा।

3. औद्योगिक उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारकों को संक्षेप में लिखिए।

उ०– **औद्योगिक उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारक–** औद्योगिक उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारक निम्न हैं–

(i) सुविकसित तकनीक,

(ii) पर्याप्त वित्त की उपलब्धता,

(iii) श्रेष्ठ प्रबंधन एवं व्यवस्था,

(iv) उत्पादन के उपादानों का श्रेष्ठ समन्वय,

(v) सरकार की उदार नीतियाँ,

(vi) प्राकृतिक व सामाजिक कारक।

4. भारत में औद्योगिक पिछड़ेपन के लिए उत्तरदायी कारण कौन-से हैं?

उ०– भारत में औद्योगिक पिछड़ेपन के लिए उत्तरदायी कारण निम्नलिखित हैं–

(i) विदेशी शासन

(ii) पूँजी की कमी

(iii) भारी तथा आधारभूत उद्योगों का अभाव

(iv) कुशल श्रमिकों की कमी

(v) सस्ते शक्ति साधनों का अभाव

(vi) कुशल-प्रबंधकों की कमी

(vii) कच्चे माल की कमी

(viii) निर्धनता

(ix) वित्तीय संगठनों का अभाव

(x) योजना रहित विकास

(xi) परिवहन एवं संचार का कम विकास

(xii) नव-प्रवृतकों एवं अनुसंधान की कमी

(xiii) आधुनिक मशीनों की कमी

5. भारत के औद्योगिक विकास की तीन उपलब्धियाँ लिखिए।

उ०– भारत के औद्योगिक विकास की तीन उपलब्धियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) भारत में सुदृढ़ औद्योगिक अवसंरचना का तेजी से विकास हुआ है।

(ii) भारत तीव्र तथा संतुलित औद्योगिक विकास करने में सफल हुआ है।

(iii) भारत ने सार्वजनिक उपक्रमों का विकास करके निजी क्षेत्र को विकसित कर लिया है।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. औद्योगिक उत्पादकता क्या है? इसे कौन-कौन से कारक प्रभावित करते हैं?

उ०– औद्योगिक उत्पादकता का अर्थ– उत्पादन के विभिन्न साधनों की अनुपातिक उत्पादन की मात्रा को उत्पादकता कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, "निश्चित समय सीमा में उत्पादन के एक साधन द्वारा वस्तुओं और सेवाओं को उत्पन्न करने की क्षमता को ही औद्योगिक उत्पादकता का नाम दिया जाता है।" उत्पादकता को वस्तुओं और सेवाओं के माध्यम से अथवा मुद्रा के माध्यम से मापा जा सकता है। वस्तुओं और सेवाओं से मापी जाने वाली उत्पादकता को **भौतिक उत्पादकता** तथा मुद्रा से मापी जाने वाली उत्पादकता को **आय उत्पादकता** कहा जाता है। राष्ट्र में विद्यमान समस्त संसाधनों से प्राप्त होने वाली वस्तुओं और सेवाओं के अनुपात को औद्योगिक उत्पादकता का नाम दिया जाता है। भारत धीरे-धीरे अल्प औद्योगिक उत्पादकता के मकड़जाल से मुक्त होता जा रहा है।

औद्योगिक उतपादकता को प्रभावित करने वाले कारक- इसके लिए लघु उततरीय प्रश्न संख्या-3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

2. औद्योगिक कार्यकुशलता से क्या आशय है? औद्योगिक कार्यकुशलता को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।

उ०– औद्योगिक कार्यकुशलता का अर्थ– औद्योगिक कार्यकुशलता का सामान्य अर्थ किसी उपक्रम या इकाई के औद्योगिक उत्पादन में दक्ष होने से लगाया जाता है। दूसरे शब्दों, "औद्योगिक कार्यकुशलता से आशय किसी उपक्रम की उस उत्तम

स्थिति से होता है, जिसमें वह उपलब्ध साधनों से अधिकतम तथा श्रेष्ठ उत्पादन प्राप्त करता है।" किसी भी उपक्रम का लाभ उसकी कार्यकुशलता पर ही निर्भर करता है।

औद्योगिक कार्यकुशलता को प्रभावित करने वाले कारक– औद्योगिक कार्यकुशलता एक तुलनात्मक स्थिति है, जो निम्न कारकों से प्रभावित होती है–

(i) उत्पादन इकाई में श्रम जितना कुशल और प्रशिक्षित होगा, उसकी औद्योगिक कार्यकुशलता उतनी ही अधिक होगी।

(ii) जिन उत्पादन इकाइयों के पास वित्तीय संसाधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होते हैं, उनकी औद्योगिक कार्यकुशलता ऊँची रहती है।

(iii) उच्च कोटि की प्रौद्योगिकी वह कारक है, जिसका उपयोग कर श्रम, पूँजी तथा प्रबंधन की उत्तम व्यवस्था करके औद्योगिक कार्यकुशलता का उच्च स्तर पाया जा सकता है।

3. भारत में औद्योगिक पिछड़ेपन के लिए कौन-कौन से कारण उत्तरदायी हैं? विस्तार से समझाइए।

उ०– भारत में औद्योगिक पिछड़ेपन के कारण– भारत में औद्योगिक विकास की गति बड़ी मंद रही है, जिससे राष्ट्र औद्योगिक पिछड़ेपन की समस्या से ग्रसित है। इसके लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं–

(i) भारत को दीर्घकाल तक विदेशी शासन को झेलना पड़ा था। विदेशी शासकों ने औद्योगिक विकास की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। अंग्रेज सरकार ने भारत को केवल कच्चे माल की मंडी के रूप में विकसित किया। अत: भारत औद्योगिक क्षेत्र में पिछड़ गया।

(ii) भारत में अधिकतर लोग निर्धन हैं, जो कोई बचत नहीं कर पाते। कतिपय पूँजीपति लोग अपनी पूँजी को उद्योगों में लगाने के बजाय सुरक्षित निवेशों, जैसे– संपत्ति, व्यापार, सरकारी बाँड आदि में लगाना पसंद करते हैं। इसलिए भारत में पूँजी का अभाव रहने के कारण औद्योगीकरण का स्तर पिछड़ा ही रहा है।

(iii) भारत में बड़े पैमाने के उद्योगों की स्थापना बहुत देर से हुई। हमारे उद्योग मशीन, औजार, इस्पात, रासायनिक सामान आदि के लिए विदेशों पर निर्भर रहे हैं। इसी कारण यहाँ औद्योगिक पिछड़ापन बना रहा।

(iv) भारत में कोयला घटिया किस्म का मिलता है और इसके क्षेत्र कुछ ही प्रदेशों में केंद्रित हैं। खनिज तेल के लिए देश को आयात पर निर्भर रहना पड़ता है। बिजली का उत्पादन पर्याप्त नहीं है। इसीलिए भारत में ऊर्जा के संसाधन सीमित होने के कारण यहाँ औद्योगिक पिछड़ापन बना रहा।

(v) भारत का परंपरागत श्रम अकुशल है। कृषि कार्यों को छोड़कर निकला श्रम उद्योगों में काम करने के लिए प्रशिक्षण लेने के प्रयास नहीं करता, जिससे औद्योगिक पिछड़ापन दूर नहीं हो सका।

(vi) भारत में बड़े पैमाने के उद्योगों के लिए पर्याप्त तथा उत्तम किस्म का कच्चा माल सुलभ न हो पाने के कारण पर्याप्त तथा उत्तम उत्पादन नहीं हो पाता। अत: यहाँ औद्योगिक पिछड़ापन बना हुआ है।

(vii) भारत में परिवहन तथा संचार के साधनों का अल्प विकास होने के कारण औद्योगिक पिछड़ापन विद्यमान है।(v i i i) भारत में उद्योगों को नवीनतम विधियों तथा नवीन तकनीकों का लाभ न मिल पाने के कारण औद्योगिक उत्पादन पिछड़ा ही रहा है।

(ix) भारत में नए-नए आविष्कारों तथा अनुसंधानों का लाभ औद्योगिक क्षेत्र को न मिल पाने के कारण औद्योगिक पिछड़ापन पाया जाता है।

(x) भारत में असफल आर्थिक नियोजन, कुशल प्रबंधन की कमी, वित्तीय संगठनों के अभाव, जनसंख्या विस्फोट तथा कुछ सामाजिक कुरीतियों के कारण औद्योगिक पिछड़ापन पाया जाता है।

4. भारत के औद्योगिक पिछड़ेपन को दूर करने के उपायों को विस्तार से बताइए?

उ०– भारत में औद्योगिक पिछड़ेपन को दूर करने के उपाय– भारत में औद्योगिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिए

निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं–

(i) भारतीय उद्योगों के पिछड़ेपन को दूर करने के लिए विदेशी निवेश को आकर्षित किया जाए।

(ii) भारत में ऊर्जा के परंपरागत तथा गैर-परंपरागत साधनों; जैसे– जल विद्युत, ताप विद्युत तथा अणु विद्युत के साथ-साथ पवन ऊर्जा और सौर ऊर्जा का विकास कर औद्योगिक पिछड़ेपन को दूर किया जा सकता है।

(iii) भारत में सड़क, रेल तथा वायु परिवहन का कुशलतम विकास करके औद्योगिक पिछड़ेपन को दूर किया जा सकता है।

(iv) भारत में सार्वजनिक क्षेत्र को चुस्त-दुरूस्त तथा प्रशिक्षित बनाकर उसकी कार्यक्षमता में गुणात्मक सुधार लाकर औद्योगिक पिछड़ेपन को हटाया जा सकता है।

(v) भारत में आर्थिक उदारीकरण तथा वैश्वीकरण की नीतियों का अनुसरण करके औद्योगिक पिछड़ेपन के रोग से छुटकारा पाया जा सकता है।

(vi) भारत में वित्तीय संस्थाओं, औद्योगिक बैंकों तथा व्यापारिक बैंकों को उद्योगों को सस्ती दर पर वित्तीय सुविधाएँ देने की व्यवस्था कराकर औद्योगिक पिछड़ेपन से मुक्त हुआ जा सकता है।

(vii) भारत में निजी क्षेत्र को बढ़ावा देकर तथा औद्योगिक क्षेत्र में स्वस्थ प्रतिस्पर्द्धा जगाकर औद्योगिक पिछड़ेपन को समाप्त किया जा सकता है।

(viii) भारत में आधारभूत संरचना का मजबूत ढाँचा खड़ा करके, परिवहन, संचार के साधनों का विकास तथा विद्युत आपूर्ति में वृद्धि करके औद्योगिक पिछड़ेपन के कलंक को धोया जा सकता है।

(ix) भारतीय उद्योगों को नवीनतम स्वचालित मशीनें तथा नवीनतम तकनीकी उपलब्ध कराकर औद्योगिक पिछड़ेपन से मुक्ति दिलाई जा सकती है।

(x) भारत में कृषि उत्पादन में वृद्धि करके कृषि आधारित उद्योगों; जैसे– चीनी, कपड़ा, जूट, चाय आदि उद्योगों का विकास करके तथा प्राकृतिक संसाधनों का कुशलतम उपयोग करके औद्योगिक पिछड़ेपन से सदैव के लिए मुक्त हुआ जा सकता है।

5. भारत में औद्योगिक विकास की संभावनाओं पर प्रकाश डालिए।

उ०– **भारत में औद्योगिक विकास की संभावनाएँ–** भारत में औद्योगिक विकास भले ही मंद गति से हुआ हो, फिर भी यहाँ औद्योगिक विकास की अत्यधिक संभावनाएँ विद्यमान हैं। इस संबंध में निम्नलिखित तथ्य उल्लेखनीय हैं–

(i) भारत के ग्रामीण अँचलों में कुटीर उद्योगों के विकास की पूर्ण संभावनाएँ विद्यमान हैं।

(ii) भारत में लघु उद्योगों के विकास के लिए पर्याप्त श्रम, पूँजी, कच्चा माल तथा ऊर्जा के संसाधन विद्यमान होने से, उनके विकास की पूर्ण संभावनाएँ हैं।

(iii) उद्योगों में श्रम की कार्यकुशलता से भारत में औद्योगिक उत्पादन बढ़ने की पूरी संभावनाएँ हैं।

(iv) भारत में तीव्र एवं संतुलित औद्योगिक विकास की गति बढ़ने से औद्योगिक पिछड़ापन समाप्त करने की पूरी-पूरी संभावनाएँ हैं।

(v) भारत में होने वाले नए-नए आविष्कार तथा अनुसंधान भारत को औद्योगिक क्षेत्र में सफल बनाने की पूर्ण संभावनाएँ रखते हैं।

(vi) भारत ने भारतीय उद्योगों के लिए विदेशी पूँजी निवेश के द्वार खोलकर इनके विकास की पूर्ण संभावनाएँ जुटा ली हैं।

(vii) भारत ने आधुनिक उद्योगों की स्थापना करके तथा उनमें नवीनतम तकनीकी का प्रयोग करके औद्योगिक विकास की सभी संभावनाएँ जुटा ली हैं।

(viii) भारत ने आर्थिक उदारीकरण की नीति अपनाकर बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए उद्योगों के द्वार खोलकर, औद्योगिक

विकास की संभावनाएँ जुटा ली हैं।

(ix) औद्योगिक विकास के कारण रोजगार के नए अवसर सृजित होने से राष्ट्र से बेरोजगारी और निर्धनता दूर होने की पूर्ण संभावनाएँ बन गई हैं।

(x) भारत में उद्योगों के साथ-साथ कृषि, व्यापार, वाणिज्य की उन्नति होने तथा समाज कल्याण बढ़ने की संभावनाएँ भी बन गई हैं।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

54 औद्योगिक विकास

(उठाए गए कदम, उपलब्धियाँ एवं विकास की संभावनाएँ)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 536 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 536 व 537 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. औद्योगिक विकास की परिभाषा दीजिए।

उ०– **औद्योगिक विकास की परिभाषा**- किसी देश में, **''कृषि का यंत्रीकरण, कुटीर तथा लघु उद्योगों की नींव पर बनी मशीनों तथा विनिर्माण उद्योगों की श्रृंखला का दूसरा नाम औद्योगिक विकास है।''** दूसरे शब्दों में, **''मानवीय संसाधन एवं प्राकृतिक संसाधनों के समन्वय से राष्ट्र में जो औद्योगिकरण का विशाल भवन खड़ा होता है, उसे औद्योगिक विकास कहा जाता है।''**

2. औद्योगिक विकास की तीन प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।

उ०– औद्योगिक विकास की तीन प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) औद्योगिक विकास के लिए विविध उद्योगों का विकास और विस्तार किया जाता है।

(ii) उद्योगों के विकास के साथ-साथ देश के सर्वांगीण आर्थिक विकास का लक्ष्य रखा जाता है।

(iii) औद्योगिक विकास का उद्देश्य देश की अर्थव्यवस्था में समग्र परिवर्तन करना होता है।

3. भारत में औद्योगिक विकास के मार्ग की तीन बाधाओं का विवरण दीजिए।

उ०– भारत में औद्योगिक विकास के मार्ग की तीन बाधाएँ निम्नलिखित हैं–

(i) पूँजी की कमी– औद्योगिक विकास के लिए उद्योगों में भारी पूँजी निवेश की आवश्यकता होती है। अधिकतर भारतीय निर्धन हैं, जो अधिक बचत नहीं कर पाते। धनी और पूँजीपति लोग जोखिम वाले उद्योगों के बजाय सुरक्षित निवेश के कामों; जैसे– संपत्ति, व्यापार या सरकारी बाँड में पूँजी निवेश करना अधिक पसंद करते हैं।

(ii) विदेशी शासन– भारत लगभग 200 वर्षों तक अंग्रेजी शासन से त्रस्त रहा। अंग्रेज शासक भारतीय उद्योगों के विकास

के प्रति उदासीन रहे। उन्होंने भारतीय कुटीर एवं घरेलू उद्योग-धंधों को नष्ट करके भारत को कच्चा माल निर्यात करने वाली मंडी बना दिया। विदेशी शासन के कारण ही भारतीय उद्योग तीव्र विकास नहीं कर सके।

(iii) कुशल श्रमिकों का अभाव– उद्योगों का तीव्र विकास मजदूरों की कुशलता पर भी निर्भर होता है, किंतु भारत में कुशल श्रमिकों का अभाव है। यहाँ के अधिकतर श्रमिक कृषि कार्यों से जुड़े हैं। कृषि क्षेत्र में बेरोजगारी हो जाने के कारण वे उद्योगों की ओर रुख करते हैं। ऐसे श्रमिक उद्योगों में काम करने लायक भी प्रशिक्षण प्राप्त नहीं करते। निष्कर्षत: उद्योगों में अकुशल श्रमिकों की अधिकता होने के कारण औद्योगिक विकास की गति मंद ही रहती है।

4. भारत में औद्योगिक विकास हेतु उठाए गए तीन कदमों पर प्रकाश डालिए।

उ०– भारत में औद्योगिक विकास हेतु उठाए गए तीन कदम निम्नलिखित हैं–

(i) उद्योगों के लिए औद्योगिक बैंकों, वित्तीय संस्थाओं तथा राष्ट्रीयकृत बैंकों से वित्तीय सुविधाएँ उपलब्ध कराई गई हैं।

(ii) उद्योगों के विकास हेतु अनेक औद्योगिक बस्तियाँ, विशेष आर्थिक क्षेत्र तथा औद्योगिक केंद्रों की स्थापना की गई है।

(iii) सरकार द्वारा उद्योगों को तकनीकी सहयोग उपलब्ध कराने के लिए 'केंद्रीय लघु उद्योग विकास संगठन' बनाया गया है।

5. भारत में औद्योगिक विकास की तीन प्रमुख उपलब्धियाँ क्या रही हैं?

उ०– भारत में औद्योगिक विकास की तीन प्रमुख उपलब्धियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) भारत ने औद्योगिक विकास हेतु एक सुदृढ़ तथा आधुनिकतम अवसंरचना का ढाँचा खड़ा कर लिया है।

(ii) अवसंरचना के इस सुदृढ़ ढाँचे पर कभी भी औद्योगिक इकाइयों का जाल फैलाया जा सकता है।

(iii) भारत में 'सर्वजनहिताय सर्वजन सुखाय' को दृष्टिगत करते हुए, सार्वजनिक उपक्रमों की एक श्रृंखला खड़ी करने में सफलता प्राप्त कर ली है।

6. उदारवादी औद्योगिक नीति क्या है?

उ०– **उदारीकरण–** आर्थिक दृष्टि से 'उदारीकरण' एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें देश के तीव्र आर्थिक विकास हेतु नियंत्रण, कोटा, लाइसेंस, विभिन्न शुल्क, उपकर आदि प्रशासकीय रुकावटों को कम किया जाता है। दूसरे शब्दों में, ''औद्योगिक क्षेत्र की विभिन्न नीतियों, जैसे– कराधान, आयात-निर्यात, श्रम आदि में परिवर्तनों के द्वारा उत्पादन, वितरण, निवेश पर अपने प्रतिबंधों के नियमों में ढील देने की नीति को 'उदारीकरण' कहा जाता है।''

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. औद्योगिक विकास का अर्थ और उसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

उ०– **औद्योगिक विकास का अर्थ–** औद्योगिक विकास दीर्घकाल तक चलने वाली वह सतत प्रक्रिया है, जो राष्ट्र की आर्थिक संपन्नता के माध्यम से दिखाई पड़ती है। दूसरे शब्दों में, "मानवीय संसाधन और प्राकृतिक संसाधनों के समन्वय से राष्ट्र में जो औद्योगीकरण का विशाल भवन खड़ा होता है, उसे औद्योगिक विकास कहा जाता है।" औद्योगिक विकास एक तुलनात्मक शब्द है। पश्चिमी देशों में यह अधिक हुआ है, जबकि पूर्व के राष्ट्र अभी पिछड़े हुए हैं। जापान ने द्वितीय विश्वयुद्ध में अणु बम का विनाश सहकर भी जो सुदृढ़ औद्योगिक ढाँचा तैयार किया है, वह उसके औद्योगिक विकास का प्रतीक बन गया है। भारत भी औद्योगिक विकास की दौड़ में भाग ले रहा है। अत: उसे भी लक्ष्य तक पहुँचने में अधिक देर नहीं लगेगी।

औद्योगिक विकास के लक्षण या विशेषताएँ– औद्योगिक विकास को उसकी निम्न विशेषताओं की कसौटी पर जाँचा-परखा जा सकता है–

(i) औद्योगिक विकास के लिए विविध उद्योगों का विकास तथा विस्तार किया जाता है।

(ii) उद्योगों के विकास के साथ-साथ देश के सर्वांगीण आर्थिक विकास का लक्ष्य रखा जाता है।

(iii) औद्योगिक विकास का उद्देश्य देश की अर्थव्यवस्था में समग्र परिवर्तन करना होता है।

(iv) पूँजी के गहन तथा व्यापक प्रयोग हेतु देश में पूँजी निर्माण की दर में वृद्धि के प्रयास किए जाते हैं।

(v) औद्योगिक विकास के द्वारा राष्ट्र के सर्वांगीण विकास हेतु क्षेत्रीय विषमताओं को दूर करना होता है।

(vi) राष्ट्रीय उद्योगों के विकास तथा अपने माल बेचने के लिए नए-नए बाजारों की खोज करनी पड़ती है।

(vii) राष्ट्र में औद्योगिक स्थिरता आना, सामाजिक न्याय तथा सुरक्षा की स्थापना होना और नागरिकों के जीवन-स्तर में गुणात्मक सुधार आना औद्योगिक विकास की विशेषताएँ हैं।

(viii) राष्ट्र के आंतरिक तथा विदेशी व्यापार में वृद्धि होना, औद्योगिक विकास की एक प्रमुख विशेषता है।

2. भारत में औद्योगिक विकास के मार्ग में आने वाली बाधाओं का वर्णन कीजिए।

उ०– भारत के औद्योगिक विकास के मार्ग में आने वाली बाधाएँ निम्नलिखित हैं–

(i) पूँजी की कमी– औद्योगिक विकास के लिए उद्योगों में भारी पूँजी निवेश की आवश्यकता होती है। अधिकतर भारतीय निर्धन हैं, जो अधिक बचत नहीं कर पाते। धनी और पूँजीपति लोग जोखिम वाले उद्योगों के बजाय सुरक्षित निवेश के कामों; जैसे– संपत्ति, व्यापार या सरकारी बाँड में पूँजी निवेश करना अधिक पसंद करते हैं।

(ii) विदेशी शासन– भारत लगभग 200 वर्षों तक अंग्रेजी शासन से त्रस्त रहा। अंग्रेज शासक भारतीय उद्योगों के विकास के प्रति उदासीन रहे। उन्होंने भारतीय कुटीर एवं घरेलू उद्योग-धंधों को नष्ट करके भारत को कच्चा माल निर्यात करने वाली मंडी बना दिया। विदेशी शासन के कारण ही भारतीय उद्योग तीव्र विकास नहीं कर सके।

(iii) कुशल श्रमिकों का अभाव– उद्योगों का तीव्र विकास मजदूरों की कुशलता पर भी निर्भर होता है, किंतु भारत में कुशल श्रमिकों का अभाव है। यहाँ के अधिकतर श्रमिक कृषि कार्यों से जुड़े हैं। कृषि क्षेत्र में बेरोजगारी हो जाने के कारण वे उद्योगों की ओर रुख करते हैं। ऐसे श्रमिक उद्योगों में काम करने लायक भी प्रशिक्षण प्राप्त नहीं करते। निष्कर्षत: उद्योगों में अकुशल श्रमिकों की अधिकता होने के कारण औद्योगिक विकास की गति मंद ही रहती है।

(iv) अकुशल उद्यम और प्रबंधन– भारत में योग्य उद्यमियों तथा कुशल प्रबंधकों की बहुत कमी है। इसके अतिरिक्त शिक्षित व कुशल नागरिक कोई व्यवसाय या उद्योग लगाने के बजाय नौकरी करना अधिक पसंद करते हैं।

(v) आधारभूत उद्योगों की कमी– विदेशी शासन के कारण स्वतंत्रता के समय तक भारत में भारी तथा आधारभूत उद्योगों का अभाव था। मशीनों, औजारों, रासायनिक सामानों तथा इस्पात के पुर्जों आदि के लिए उद्योगों को विदेशों पर आश्रित रहना पड़ता था। इसी कारण भारतीय उद्योगों का विकास मंद गति से हुआ।

(vi) ऊर्जा के सस्ते साधनों का अभाव– उद्योगों के तीव्र विकास हेतु सस्ते शक्ति के साधनों की आवश्यकता होती है। अच्छी किस्म के कोयले तथा खनिज तेलों के लिए भारत को विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है। विद्युत उत्पादन की पर्याप्त क्षमता का विकास भी देश अभी तक नहीं कर पाया है।

(vii) वित्तीय संगठनों का अभाव– उद्योगों के तीव्र विकास हेतु उन्हें कम ब्याज वाले दीर्घकालीन ऋणों की आवश्कता होती है किंतु भारत में औद्योगिक विकास बैंकों और पर्याप्त सुदृढ़ वित्तीय संगठनों की कमी रही है।

(viii) कच्चे माल का अभाव– भारत में उद्योगों के लिए कच्चा माल पर्याप्त मात्रा में नहीं मिल पाता। इसके अतिरिक्त उसकी किस्म भी घटिया होती है। घटिया कच्चे माल के कारण वस्तुएँ भी घटिया किस्म की होती हैं। कपास, पटसन तथा टिन, सीसा, गंधक, जस्ता आदि खनिजों की कमी देश के औद्योगीकरण में बाधक है।

(ix) अविकसित परिवहन तथा संचार तंत्र– कच्चा माल कारखानों तक लाने तथा तैयार माल को बाजारों तक भेजने के लिए पर्याप्त और विकसित परिवहन प्रणाली तथा संचार तंत्र की आवश्यकता होती है। किंतु भारत में इनके साधनों का पर्याप्त विकास नहीं होने के कारण औद्योगिक विकास की गति मंद ही रही।

(x) सामाजिक कारण– भारतीय समाज की कई कुरीतियाँ तथा मान्यताएँ भी औद्योगिक विकास में बाधक रही हैं; जैसे–

(क) सामाजिक कुरीतियों तथा रीति-रिवाजों में लोगों को अपनी आय का एक अच्छा अंश खर्च करना पड़ता है, इसी कारण वे बचत नहीं कर पाते।

(ख) जनसंख्या वृद्धि तथा निर्धनता भी उनकी बचत करने की क्षमता को समाप्त कर देती है।

(ग) जाति-व्यवस्था तथा अंधविश्वासी होने के कारण भारतीय श्रमिक गतिशील नहीं होते, अत: उनकी कार्यकुशलता में कोई वृद्धि नहीं हो पाती।

3. भारत में औद्योगिक विकास हेतु उठाए गए कदमों का विस्तृत विवरण दीजिए।

उ०– **भारत में औद्योगिक विकास हेतु सरकार द्वारा उठाए गए कदम–** भारत में औद्योगिक विकास हेतु सरकार की ओर से निम्नलिखित कदम उठाए गए हैं–

(i) उद्योगों के लिए औद्योगिक बैंकों, वित्तीय संस्थाओं तथा राष्ट्रीयकृत बैंकों से वित्तीय सुविधाएँ उपलब्ध कराई गई हैं।

(ii) उद्योगों के विकास हेतु अनेक औद्योगिक बस्तियाँ, विशेष आर्थिक क्षेत्र तथा औद्योगिक केंद्रों की स्थापना की गई है।

(iii) सरकार द्वारा उद्योगों को तकनीकी सहयोग उपलब्ध कराने के लिए 'केंद्रीय लघु उद्योग विकास संगठन' बनाया गया है।

(iv) सरकार ने औद्योगिक लाइसेंस व्यवस्था को सुगम तथा उदार बना दिया है।

(v) सरकार ने औद्योगिक विकास को सुदृढ़ता प्रदान करने के लिए प्रशिक्षण संस्थान तथा अनुसंधानशालाओं की स्थापना की है।

(vi) सरकार ने अपनी राजकोषीय नीति औद्योगिक विकास के अनुकूल बनाई है।

(vii) सरकार ने उद्योगों के लिए औद्योगिकी तकनीकी सुलभ कराने हेतु राजकोषीय वित्तीय सुविधाएँ देने की व्यवस्था कर दी है।

(viii) सरकार ने उद्योगों के लिए नवीनतम तकनीकी तथा उनके आधुनिकीकरण की समुचित व्यवस्थाएँ की हैं।

(ix) उद्योगों में उत्पादन लागतों को न्यूनतम रखने में सरकार द्वारा मदद दी गई है।

(x) सरकार ने औद्योगिक विकास को गतिशील बनाने के लिए 'प्रौद्योगिक सुधार कोष' तथा 'पूँजी आधुनिकीकरण कोष' की स्थापना की है।

(xi) भारत सरकार ने भारतीय अर्थव्यवस्था का वैश्वीकरण करके औद्योगिक विकास के लिए अद्वितीय कार्य किया है।

(xii) भारतीय अर्थव्यवस्था को स्वतंत्र विदेशी पूँजी प्रवाह, विदेशी तकनीकी तथा स्वतंत्र अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता से जोड़ दिए जाने के कारण आर्थिक विकास में तेजी आई है।

4. भारत में औद्योगिक विकास की उपलब्धियों पर प्रकाश डालिए।

उ०– **भारत के औद्योगिक विकास की उपलब्धियाँ–** भारत के औद्योगिक विकास की प्रमुख उपलब्धियाँ निम्नवत् रही हैं–

(i) भारत ने औद्योगिक विकास हेतु एक सुदृढ़ तथा आधुनिकतम अवसंरचना का ढाँचा खड़ा कर लिया है।

(ii) अवसंरचना के इस सुदृढ़ ढाँचे पर कभी भी औद्योगिक इकाइयों का जाल फैलाया जा सकता है।

(iii) भारत में 'सर्वजनहिताय सर्वजन सुखाय' को दृष्टिगत करते हुए, सार्वजनिक उपक्रमों की एक शृंखला खड़ी करने में सफलता प्राप्त कर ली है।

(iv) भारत में खनन, लोहा-इस्पात, इंजीनियरिंग तथा रासायनिक उर्वरक बनाने की इकाइयाँ खड़ी कर ली गई हैं।

(v) भारत ने विविध औद्योगिक क्षेत्रों में आत्म-निर्भरता बढ़ाकर पूँजीगत वस्तुओं का आयात कम किया है।

(vi) भारत की प्रमुख उपलब्धि परंपरागत सामानों के स्थान पर तैयार तथा नवीन वस्तुओं का निर्यात करना है।

(vii) भारत ने इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट की स्थापना कर तकनीकी प्रबंधन की सुविधाएँ जुटा ली हैं।

(viii) भारत में औद्योगीकरण का स्तर ऊँचा उठने से उद्योगों में विविधता झलकने लगी है।

(ix) भारत एक सुदृढ़ विश्वस्तरीय अर्थव्यवस्था का निर्माण करने में सक्षम हो गया है।

5. भारत में औद्योगिक विकास की भावी संभावनाओं का लेखा-जोखा प्रस्तुत कीजिए।

उ०– **भारत में औद्योगिक विकास की संभावनाएँ–** समूचा आर्थिक और औद्योगिक ढाँचा भावी विकास की संभावनाओं पर टिका हुआ है। भारत में औद्योगिक विकास की निम्नलिखित संभावनाएँ भविष्य के गर्भ में छिपी हुई हैं–

(i) भारत के प्राकृतिक संसाधन, कृषि तथा प्राथमिक उद्योग, जो उत्पाद उपलब्ध करा रहे हैं, उनके प्रयोग से भारत में औद्योगिक विकास की भावी संभावनाएँ विद्यमान हैं।

(ii) भारत की 125 करोड़ जनसंख्या में से अनेक कुशल, दक्ष तथा प्रतिभाशाली तकनीशियन निकल रहे हैं। वे भारत के औद्योगिक विकास की संभावनाओं को निश्चित कर देते हैं।

(iii) भारत ने कुटीर तथा लघु उद्योगों को विकास के शिखर तक ले जाकर, भावी औद्योगिक विकास की संभावनाओं को बलवती बना दिया है।

(iv) भारत में नए आविष्कार, प्रशिक्षण केंद्र तथा प्रौद्योगिकी संस्थान, कुशल एवं श्रेष्ठ श्रम उपलब्ध करा रहे हैं, जिससे औद्योगिक विकास की संभावनाओं में वृद्धि हो रही है।

(v) भारत ने परंपरागत तथा गैर-परंपरागत ऊर्जा के स्रोतों का विकास करके, आर्थिक विकास की संभावनाओं के कपाट ही खोल दिए हैं।

(vi) भारतीय उद्योगों ने अंतर्राष्ट्रीय मानकों को दृष्टिगत रखते हुए अपने उत्पादों की गुणवत्ता बढ़ाकर तथा उत्पादन के तरीकों का आधुनिकीकरण करके औद्योगिक विकास की संभावनाओं को मजबूत बना दिया है।

(vii) भारत के प्रधानमंत्री, श्री नरेंद्र मोदी ने मेक इन इंडिया, मेड इन इंडिया, जीरो डिफेक्ट आदि का नारा देकर, भारतीय औद्योगिक विकास की संभावनाओं को और भी बल प्रदान कर दिया है।

6. नई औद्योगिक नीति में औद्योगिक विकास हेतु किए गए मुख्य प्रयासों का वर्णन कीजिए।

उ०– **नई औद्योगिक नीति–** नई औद्योगिक नीति की घोषणा भारत सरकार द्वारा 24 जुलाई, 1991 में की गई। भारतीय अर्थव्यवस्था में व्यापक परिवर्तनों के प्रावधानों से युक्त इस नीति को 'उदारवादी औद्योगिक नीति' बनाने का प्रयास किया गया। इसके दो प्रमुख उद्देश्य थे– (क) भारतीय औद्योगिक अर्थव्यवस्था को अनावश्यक नियंत्रणों से मुक्त कराना तथा (ख) देश के उत्पादन को अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में विदेशी उत्पादन से प्रतिस्पर्धा योग्य बनाने के लिए औद्योगिक कार्यकुशलता में पर्याप्त वृद्धि करना।

औद्योगिक विकास की गति तीव्र करने तथा देश को आर्थिक संकट से उबारने के लिए इस नीति में किए गए उपाय निम्न हैं–

(i) नियंत्रणों से मुक्ति देकर उदारता की नीति अपनाना अर्थात उदारीकरण करना।

(ii) निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित करने हेतु सार्वजनिक क्षेत्र की व्यापकता को कम करना अर्थात निजीकरण को बढ़ावा।

(iii) विदेशी व्यापार से प्रतिबंधों को हटाकर विदेशी निवेश को बढ़ावा देना अर्थात वैश्वीकरण।

(iv) उत्पादन की उन्नत प्रविधियों को अपनाना।

(v) सरकारी घाटे को कम करना।

(vi) कृषि व्यवसाय को आधुनिक बनाना।

(vii) मौद्रिक, व्यापार तथा राजकोषीय नीतियों में व्यापक फेरबदल करना।

संक्षेप में नई आर्थिक नीति के केवल तीन उपाय ही प्रमुख हैं– उदारीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई-2 (क) : आर्थिक विकास की दिशा

55 आर्थिक नियोजन

(अर्थ, आवश्यकता एवं उद्देश्य, भारतीय पंचवर्षीय योजनाएँ एवं उपलब्धियाँ)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 548 व 549 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 549 व 550 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. आर्थिक नियोजन का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

उ०– **आर्थिक नियोजन का अर्थ–** आर्थिक नियोजन का शाब्दिक अर्थ है, 'आर्थिक कार्यों को योजनाबद्ध ढंग से लागू करना'। आर्थिक विकास के कार्यों को जितना अधिक सोच समझकर व्यवस्था से चलाया जाएगा, सफलता भी उतनी ही अधिक मिलेगी। दूसरे शब्दों में, "उपलब्ध संसाधनों के योजनाबद्ध उपयोग से एक निश्चित अवधि में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए किए गए प्रयास को आर्थिक नियोजन कहा जाता है।" अर्थात् संतुलित आर्थिक विकास और अधिकतम सामाजिक कल्याण को योजनाबद्ध ढंग से प्राप्त करना ही आर्थिक नियोजन है। वर्तमान में औद्योगिक विकास जटिलता का स्वरूप धारण कर चुका है। अतः आज पूँजी नहीं, आर्थिक नियोजन उसका नियामक बन चुका है।

2. आर्थिक नियोजन के तीन उद्देश्य लिखिए।

उ०– आर्थिक नियोजन के तीन उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

(i) आर्थिक नियोजन का मुख्य उद्देश्य है- 'न्यायपूर्ण आर्थिक विकास और अधिकतम समाज कल्याण'।

(ii) आर्थिक नियोजन का मुख्य उद्देश्य राष्ट्र के आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करना है।

(iii) आर्थिक नियोजन का उद्देश्य भारत की रुग्ण अर्थव्यवस्था को विकास की औषधि पिलाकर स्वस्थ बनाना है।

3. आर्थिक नियोजन की तीन विशेषताएँ लिखिए।

उ०– आर्थिक नियोजन की तीन विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) निश्चित उद्देश्य– आर्थिक नियोजन, आर्थिक विकास की गति को तीव्र करने के लिए निश्चित उद्देश्यों का निर्धारण कर लेता है।

(ii) केंद्रीय नियोजन सत्ता– आर्थिक नियोजन में एक केंद्रीय सत्ता का अस्तित्व होता है, यही सत्ता नियोजन के कार्यों का निर्देशन और संचालन करती है। भारत में यह कार्य योजना आयोग करता है।

(iii) निर्धारित कार्यक्रम– आर्थिक नियोजन अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु पूर्व में ही कार्यक्रम का निर्धारण कर लेता है।

4. भारत के लिए आर्थिक नियोजन के तीन महत्व बताइए।

उ०– भारत के लिए आर्थिक नियोजन के तीन महत्व निम्नलिखित हैं–

(i) तीव्र एवं संतुलित आर्थिक विकास– भारत में तीव्र एवं संतुलित आर्थिक विकास की नितांत आवश्यकता है। यह कार्य करने में आर्थिक नियोजन की सहभागिता बहुत महत्वपूर्ण हो सकती है।

(ii) अर्थव्यवस्था का सुधार एवं विकास– भारत की अर्थव्यवस्था विदेशी शासन के कारण सदियों से जर्जर हो रही थी। भारत की जर्जर अर्थव्यवस्था में सुधार और विकास का संचार करने के लिए आर्थिक नियोजन का विशेष महत्व है।

(iii) समाज कल्याण में वृद्धि– भारत में सामाजिक न्याय की स्थापना कर समाज कल्याण का पथ प्रशस्त करने में आर्थिक नियोजन का महत्व अद्वितीय है।

5. भारत में पाँचवीं पंचवर्षीय योजना की दो उपलब्धियाँ लिखिए।

उ०– भारत में पाँचवी पंचवर्षीय योजना की दो उपलब्धियाँ निम्न हैं–

(i) पाँचवी पंचवर्षीय योजना में वार्षिक विकास दर 55.2% रही।

(ii) इस योजना में कृषि उत्पादन की वार्षिक वृद्धि दर 4.2% रही।

6. भारतीय योजना आयोग के तीन प्रमुख कार्य लिखिए।

उ०– भारतीय योजना आयोग के तीन मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) राष्ट्र के भौतिक, पूँजीगत तथा मानवीय संसाधनों का ठीक-ठीक आकलन करना।

(ii) प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों में तालमेल बैठाकर उनकी क्षमता के दोहन के लिए उपयुक्त योजनाएँ बनाना।

(iii) योजना बनाते समय विकास के चरणों की व्यवस्था करना।

7. भारत में आर्थिक नियोजन के मार्ग में आने वाली तीन कठिनाइयों का उल्लेख कीजिए।

उ०– भारत में आर्थिक नियोजन के मार्ग में आने वाली तीन कठिनाइयाँ निम्नलिखित हैं–

(i) भारत में तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या आर्थिक नियोजन में सर्वाधिक बाधा उत्पन्न कर रही है।

(ii) सरकार को जो संसाधन आर्थिक नियोजन की मदों में व्यय करने होते हैं, वे अतिरिक्त जनसंख्या का पोषण करने में समाप्त हो जाते हैं। अत: आर्थिक नियोजन अपने लक्ष्य में पिछड़ जाता है।

(iii) भारत में सर्वत्र बेरोजगारी का साम्राज्य है, जो आर्थिक नियोजन के विकास मार्ग में बाधा उत्पन्न करती है।

8. आर्थिक नियोजन के मार्ग में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने के तीन उपाय लिखिए।

उ०– आर्थिक नियोजन के मार्ग की बाधाओं को दूर करने हेतु निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते हैं–

(i) योजना आयोग को वर्तमान परिस्थितियों के अनुरूप नए ढंग से संगठित किया जाए।

(ii) इस संस्था को राज्यों के सहयोग तथा ईमानदार सदस्यों के द्वारा संचालित कराया जाए।

(iii) आर्थिक विकास की योजनाओं के क्रियान्वयन में जनसामान्य की सहभागिता को अपनाया जाए।

9. बारहवीं पंचवर्षीय योजना की कार्यावधि तथा दो उद्देश्य लिखिए।

उ०– बारहवहीं पंचवर्षीय योजना की कार्यावाही– 1 अप्रैल, 2012 से 31 मार्च 2017 तक

उद्देश्य– बारहवीं पंचवर्षीय योजना के दो उद्देश्य निम्नलिखित हैं।

(i) वार्षिक विकास दर को 8.00% तक बढ़ाना।

(ii) गैर कृषि क्षेत्रों में रोजगार के 5 करोड़ नए अवसरों का सृजन करना।

10. भारत की 10वीं पंचवर्षीय योजना के किन्हीं तीन प्रमुख उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।

उ०– भारत की 10वीं पंचवर्षीय योजना के तीन प्रमुख उद्देश्य निम्न रखे गए हैं–

(i) वार्षिक वृद्धि दर को 8% करना।

(ii) उद्योग क्षेत्र की वृद्धि दर का लक्ष्य 10% तक ले जाना।

(iii) सभी को प्राथमिक शिक्षा दिलाने की व्यवस्था करना।

11. आर्थिक नियोजन के तीन महत्व बताइए।

उ०– उत्तर के लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 4 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

❖ विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. आर्थिक नियोजन क्या है? आर्थिक नियोजन की विशेषताओं की विवेचना कीजिए।

उ०– आर्थिक नियोजन– इसके लिए लघु उततरीय प्रश्न संख्या-1 के उततर का अवलोकन कीजिए।

आर्थिक नियोजन की विशेषताएँ– उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर आर्थिक नियोजन में निम्न विशेषताएँ पाई जाती हैं–

(i) निश्चित उद्देश्य– आर्थिक नियोजन, आर्थिक विकास की गति को तीव्र करने के लिए निश्चित उद्देश्यों का निर्धारण कर लेता है।

(ii) केंद्रीय नियोजन सत्ता– आर्थिक नियोजन में एक केंद्रीय सत्ता का अस्तित्व होता है, यही सत्ता नियोजन के कार्यों का निर्देशन और संचालन करती है। भारत में यह कार्य योजना आयोग करता है।

(iii) निर्धारित कार्यक्रम– आर्थिक नियोजन अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु पूर्व में ही कार्यक्रम का निर्धारण कर लेता है।

(iv) निश्चित अवधि– आर्थिक नियोजन में निर्धारित लक्ष्यों को पूरा करने के लिए समय अवधि निश्चित कर ली जाती है।

(v) साधनों का विवेकपूर्ण आवंटन– आर्थिक नियोजन में सीमित संसाधनों का बँटवारा विवेकपूर्ण ढंग से इस प्रकार किया जाता है, जिससे अधिकतम सामाजिक कल्याण का लक्ष्य पाया जा सके।

(vi) सरकारी नियंत्रण– आर्थिक नियोजन केंद्रीय सत्ता के हाथों में होता है। अत: उसके संपूर्ण क्रिया-कलापों पर सरकार का नियंत्रण बना रहता है।

(vii) सर्वांगीण विकास– आर्थिक नियोजन की मुख्य विशेषता होती है– बहुमुखी विकास की व्यवस्था कर राष्ट्र के सर्वांगीण विकास का पथ प्रशस्त करना होता है।

(viii) दीर्घकालीन प्रक्रिया– आर्थिक नियोजन में जो लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं, उन्हें पाने में समय लगता है, अत: दीर्घकालीन प्रक्रिया होना भी आर्थिक नियोजन की एक प्रमुख विशेषता है।

2. भारत के योजना आयोग पर विस्तृत टिप्पणी लिखिए।

उ०– **योजना आयोग–** भारतीय संविधान योजना आयोग का कोई उल्लेख नहीं है। इसका गठन परामर्शदात्री तथा विशेषज्ञ संस्था के रूप में 15 मार्च, 1950 ई० को सरकार के उक प्रलेख द्वारा हुआ। भारत का प्रधानमंत्री आयोग का पदेन अध्यक्ष होता है। योजना आयोग के प्रथम अध्यक्ष तत्कालीन प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू थे।

भारतीय योजना आयोग का लक्ष्य राष्ट्र का संतुलित और सर्वांगीण आर्थिक विकास करना था। योजना आयोग ने पंचवर्षीय योजनाएँ बनाकर राष्ट्र को सुख और समृद्धि के मार्ग पर अग्रसर करने का मार्ग चुना। देश में 1 अप्रैल, 1951 ई० को प्रथम पंचवर्षीय योजना लागू की गई। योजना को सफलतापूर्वक संचालित करने के उद्देश्य से सरकार ने 6 अगस्त, 1952 ई० को राष्ट्रीय विकास परिषद् की स्थापना की, जिससे योजना आयोग और राज्यों के मध्य ठीक से समन्वय का वातावरण बन सके। योजना आयोग अब तक देश में बारह पंचवर्षीय योजनाएँ तथा सात एक वर्षीय योजनाएँ लागू कर चुका है। देश में अब तक बारह पंचवर्षीय योजनाएँ पूर्ण हो चुकी हैं। 2014 ई० में केंद्र सरकार ने योजना आयोग को नीति आयोग 'नेशनल इंस्टीट्यूट फॉर ट्रांसफॉर्मिंग इंडिया' नाम दिया है। बदलते भारतीय अर्थव्यवस्था के परिवेश में योजना आयोग निष्क्रिय और असफल बनता जा रहा था। अत: उसे परिवर्तन का चोला पहनाना समय और आवश्यकता की माँग बन गया था। शीघ्र ही निकट भविष्य में उसका नया स्वरूप हमारे सामने होगा। नीति आयोग भारत के विकास मॉडल पर आधारित होगा। इसका अध्यक्ष भी पदेन प्रधानमंत्री है।

योजना आयोग के कार्य– भारतीय योजना आयोग के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) राष्ट्र के भौतिक, पूँजीगत तथा मानवीय संसाधनों का ठीक-ठीक आकलन करना।
(ii) प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों में तालमेल बैठाकर उनकी क्षमता के दोहन के लिए उपयुक्त योजनाएँ बनाना।
(iii) योजना बनाते समय विकास के चरणों की व्यवस्था करना।
(iv) प्राथमिकता के आधार पर कार्यों के लिए संसाधनों का उचित आवंटन करना।
(v) आर्थिक विकास में बाधक बनने वाले कारकों से सरकार को अवगत कराना।
(vi) योजना के सफल संचालन हेतु अनुकूल परिस्थितियों का ठीक ढंग से निर्धारण करना।
(vii) योजना के प्रत्येक चरण में संपन्न हुए कार्यो की समीक्षा करना।
(viii) योजना के लक्ष्यों की प्राप्ति में बाधक बनने वाले कारकों को दूर करने के लिए सुझाव देना।
(ix) केंद्र तथा राज्य सरकारों द्वारा समस्याओं पर सलाह माँगने पर अपने सुझाव देना।
(x) राष्ट्र के लिए पंचवर्षीय योजनाएँ बनाना और उन्हें ढंग से लागू करवाना।

3. भारतीय अर्थव्यवस्था में आर्थिक नियोजन क्यों आवश्यक है? इसके उद्देश्य भी लिखिए।

उ०– **भारत में आर्थिक नियोजन की आवश्यकता–** जिस प्रकार रोगग्रस्त व्यक्ति को औषधि की आवश्यकता होती है, ठीक वैसे ही आर्थिक व्यवस्था में व्याप्त रोगों के उपचार के लिए आर्थिक नियोजन की आवश्यकता होती है। भारत में आर्थिक नियोजन की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से है–

(i) प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों का उचित प्रयोग– भारत में प्राकृतिक संसाधन सीमित तथा मानवीय संसाधन पर्याप्त हैं। अत: दोनों में उचित तालमेल बैठाकर उनका समुचित प्रयोग करने के लिए आर्थिक नियोजन आवश्यक है।

(ii) राष्ट्र का तीव्र एवं संतुलित औद्योगिक विकास– भारत में औद्योगीकरण पिछड़ा हुआ है। अत: तीव्र एवं संतुलित औद्योगिक विकास का पथ प्रशस्त करने के लिए आर्थिक नियोजन प्रासंगिक बन गया है।

(iii) बेरोजगारी और निर्धनता की समस्या का निराकरण– भारत में बेरोजगारी और निर्धनता की समस्याएँ बनी हुई हैं।

आर्थिक नियोजन के माध्यम से रोजगार के नए अवसर जुटाकर इन दोनों के निराकरण हेतु आर्थिक नियोजन आवश्यक है।

(iv) प्रतिव्यक्ति आय तथा राष्ट्रीय आय में वृद्धि– भारत में आर्थिक नियोजन के माध्यम से जैसे ही रोजगार के नए अवसर बढ़ेंगे, राष्ट्र में प्रतिव्यक्ति आय और राष्ट्रीय आय में वृद्धि हो जाएगी। अत: इन दोनों में वृद्धि करने के लिए आर्थिक नियोजन नितांत आवश्यक है।

(v) आर्थिक विषमता को दूर करना– भारत में राष्ट्रीय आय का वितरण बड़ा असमान है। समाज की आर्थिक विषमता दूर करने का कारगर उपाय आर्थिक नियोजन ही है। अत: यह देश के लिए आवश्यक है।

(vi) आत्मनिर्भरता– भारत को कृषि उत्पादन, आर्थिक विकास, औद्योगिक उत्पादन तथा आयात-निर्यात के क्षेत्रों में आत्मनिर्भर बनाने के लिए आर्थिक नियोजन आवश्यक है।

आर्थिक नियोजन के उद्देश्य– आर्थिक नियोजन की प्रक्रिया को निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अपनाया जाता है–

(i) आर्थिक नियोजन का मुख्य उद्देश्य है- 'न्यायपूर्ण आर्थिक विकास और अधिकतम समाज कल्याण'।

(ii) आर्थिक नियोजन का मुख्य उद्देश्य राष्ट्र के आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करना है।

(iii) आर्थिक नियोजन का उद्देश्य भारत की रुग्ण अर्थव्यवस्था को विकास की औषधि पिलाकर स्वस्थ बनाना है।

(iv) आर्थिक नियोजन का उद्देश्य राष्ट्र को निर्धनता के दुष्चक्र से निकालकर प्रतिव्यक्ति आय और राष्ट्रीय आय को बढ़ाना है।

(v) आर्थिक नियोजन का मुख्य उद्देश्य राष्ट्र के प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों का उचित विदोहन करके राष्ट्र को आर्थिक दृष्टि से आत्म निर्भर बनाना है।

(vi) राष्ट्र का तीव्र, संतुलित और योजनाबद्ध विकास करना आर्थिक नियोजन का उद्देश्य है।

(vii) राष्ट्र में रोजगार के नए अवसर सृजित करके निर्धनता और बेकारी का अंत करना।

(viii) आर्थिक नियोजन का मुख्य लक्ष्य राष्ट्र का सर्वांगीण विकास करना है।

(ix) राष्ट्र में शिक्षा, विज्ञान, प्रशिक्षण, अनुसंधान तथा प्रौद्योगिकी को उन्नत बनाकर समाज कल्याण की धारा प्रवाहित करना है।

(x) आर्थिक नियोजन का लक्ष्य संविधान के लोकतांत्रित सिद्धांतों का अनुपालन करते हुए राष्ट्र में लोकतांत्रिक समाजवाद की स्थापना करना है।

आर्थिक नियोजन का लक्ष्य आर्थिक विकास के कपाट खोलकर सर्वोदय का महान सिद्धांत लागू कराना है। प्रो. रॉबिन्स के शब्दों में, "आर्थिक नियोजन हमारे देश में एक महान औषधि है।" इस महान औषधि से ही राष्ट्र के आर्थिक पिछड़ेपन, अल्प औद्योगिक विकास, बेरोजगारी तथा निर्धनता आदि रोगों का रामबाण इलाज करना, आर्थिक नियोजन का लक्ष्य रहेगा।

4. भारतीय अर्थव्यवस्था में आर्थिक नियोजन के महत्वों की विवेचना कीजिए।

उ०– **आर्थिक नियोजन का महत्व–** भारत की मिश्रित और विकासशील अर्थव्यवस्था के विकास में आर्थिक नियोजन संजीवनी बनकर उभरा है। भारत के लिए आर्थिक नियोजन के महत्व को निम्नवत् स्पष्ट किया जा सकता है–

(i) संसाधनों का योजनाबद्ध विदोहन– भारत में प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों के योजनाबद्ध विदोहन में आर्थिक नियोजन एक आदर्श और महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

(ii) अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक सहयोग प्राप्त करना– भारत के लिए आर्थिक नियोजन अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक सहयोग प्राप्त करने में एक पुल के समान महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

(iii) तीव्र एवं संतुलित आर्थिक विकास– भारत में तीव्र एवं संतुलित आर्थिक विकास की नितांत आवश्यकता है। यह कार्य करने में आर्थिक नियोजन की सहभागिता बहुत महत्वपूर्ण हो सकती है।

(iv) अर्थव्यवस्था का सुधार एवं विकास– भारत की अर्थव्यवस्था विदेशी शासन के कारण सदियों से जर्जर हो रही थी। भारत की जर्जर अर्थव्यवस्था में सुधार और विकास का संचार करने के लिए आर्थिक नियोजन का विशेष महत्व है।

(v) समाज कल्याण में वृद्धि– भारत में सामाजिक न्याय की स्थापना कर समाज कल्याण का पथ प्रशस्त करने में आर्थिक नियोजन का महत्व अद्वितीय है।

(vi) **पूँजी निर्माण की दर में वृद्धि–** भारत में निर्धनता का दुष्चक्र तथा निर्धनता का साम्राज्य होने के कारण पूँजी निर्माण की दर मंद रही है। आर्थिक नियोजन उत्पादन तथा आय बढ़ाकर एवं अल्प बचतों को प्रोत्साहन देकर पूँजी निर्माण की दर में वृद्धि करने वाला महत्वपूर्ण घटक बन सकता है।

(vii) **आधारिक ढाँचे की संरचना–** भारत के आर्थिक विकास तथा औद्योगीकरण के लिए आधारिक ढाँचा बनाने में आर्थिक नियोजन महत्वपूर्ण सहयोग दे सकता है।

(viii) **तकनीकी तथा प्रौद्योगिकी का विकास–** भारत में उद्योगों का आधुनिकीकरण करने के लिए आर्थिक नियोजन तकनीकी तथा प्रौद्योगिकी के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है।

(ix) **आर्थिक स्थिरता–** आर्थिक नियोजन कृषि, उद्योग तथा व्यापार में विकास करके राष्ट्र को आर्थिक स्थिरता देने में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

(x) **सुदृढ़ अर्थव्यवस्था का निर्माण–** भारत की मिश्रित और विकासशील अर्थव्यवस्था को आर्थिक नियोजन, एक सुदृढ़ अर्थव्यवस्था बनाने तथा राष्ट्र में संपन्नता लाने में बड़ा महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है, ''भारत की विकासशील अर्थव्यवस्था के पिछड़ेपन को दूर करने का एकमात्र समाधान नियोजन ही है।'' आर्थिक नियोजन कृषि, कुटीर उद्योग, बड़े पैमाने के उद्योगों को विकसित कर भारत को विकसित राष्ट्र बनाने में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

5. भारत में आर्थिक नियोजन की उपलब्धियों पर प्रकाश डालिए।

उ०– **भारत में आर्थिक नियोजन (पंचवर्षीय योजनाओं) की उपलब्धियाँ–** भारत में आर्थिक नियोजन का कार्य भले ही शिथिल रहा हो, परंतु उसकी मुख्य उपलब्धियाँ निम्नवत् रही हैं–

(i) **विकास दर में वृद्धि–** आर्थिक नियोजन से भारत ने अधिकतर योजनाओं में निर्धारित विकास दर को प्राप्त कर लिया है। प्रारंभ में भारत की विकास वृद्धि दर जो 3.6% वार्षिक थी, वह अब 8% तक पहुँच गई है।

(ii) **प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि–** आर्थिक नियोजन के कारण भारत का सकल राष्ट्रीय उत्पाद कई गुना बढ़ गया है, जिसके कारण प्रतिव्यक्ति आय वर्तमान मूल्यों के अनुसार जो 249 रुपए थी, अब 68,747 तक पहुँच चुकी है।

(iii) **सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि–** आर्थिक नियोजन ने कृषि, उद्योग तथा तृतीय क्षेत्र में सकल घरेलू उत्पादों को 11,09,983 करोड़ रुपए के मूल्य से बढ़ाकर 55,03,476 करोड़ रुपए तक पहुँचा दिया है।

(iv) **खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता–** आर्थिक नियोजन कार्यक्रमों में कृषि विकास को प्राथमिकता दी गई। अत: कृषि उत्पादन में इतनी अधिक वृद्धि हुई है, कि खाद्यान्न आयात करने वाला भारत अब उनका निर्यात करने लगा है।

(v) **सिंचाई क्षमताओं का विकास–** आर्थिक नियोजन का मुख्य लक्ष्य भारत के कृषि क्षेत्र का विकास करना था। अत: सिंचाई की क्षमता जो पहले 2 करोड़ 26 लाख हेक्टेअर थी, उसे बढ़ाकर 12 करोड़ हेक्टेअर तक पहुँचाया गया है।

(vi) **ऊर्जा के उत्पादन में वृद्धि–** भारत ऊर्जा संसाधनों के स्रोतों के अभाव से ग्रसित था। आर्थिक नियोजन में कोयला उत्पादन, खनिज तेल उत्पादन, प्राकृतिक गैस उत्पादन में वृद्धि करने के साथ-साथ जलविद्युत, ताप विद्युत एवं परमाणु विद्युत उत्पादन में वृद्धि कर ली गई है। सन् 2013 तक कुल विद्युत उत्पादन 2,28,722 मेगावाट था।

(vii) **गाँवों का विद्युतीकरण–** सदियों से अंधकार में रात गुजार रहे भारतीय गाँवों में विद्युत का प्रकाश फैलाने के लिए आर्थिक नियोजन के माध्यम से अब तक लगभग 85.5% गाँवों का विद्युतीकरण करने का लक्ष्य पूरा कर लिया गया है।

(viii) **तीव्र औद्योगीकरण–** भारत में कृषि उत्पाद बढ़ाकर, आर्थिक नियोजन के सहयोग से कुटीर उद्योगों, लघु उद्योगों तथा बड़े पैमाने के उद्योगों की स्थापना करके औद्योगीकरण की गति को तीव्र बनाया गया है। 1991 ई० की नई औद्योगिक नीति लागू होने के बाद से भारत के औद्योगिक उत्पादन में कई गुना वृद्धि हो गई है।

(ix) **परिवहन तथा संचार तंत्र–** आर्थिक नियोजन के माध्यम से भारत में सड़कों, राष्ट्रीय राजमार्गों, एक्सप्रेस वे, रेलवे लाइनों के साथ-साथ दूरसंचार के साधनों का सुदृढ़ जाल फैल गया है। इन दोनों ने राष्ट्र की जीवन रेखाएँ बनकर आर्थिक विकास का स्वर्णिम अध्याय प्रारंभ कर दिया है।

(x) **शिक्षा, प्रशिक्षण, अनुसंधान एवं तकनीकी का विकास–** आर्थिक नियोजन ने भारत में बहुस्तरीय शिक्षण संस्थाओं अनुसंधान केंद्रों तथा उच्च प्रौद्योगिकी संस्थानों की स्थापना करके इन क्षेत्रों में भारत को अग्रणी बना दिया है। सन् 2011 तक भारत की साक्षरता दर 17% से बढ़ाकर 73% हो गई थी।

(xi) **तृतीय क्षेत्र का प्रसार–** भारत ने आर्थिक नियोजन के सहयोग से भारतीय अर्थव्यवस्था का आधुनिकीकरण करने के लिए परिवहन, संचार तंत्र, प्रशासन, बीमा तथा बैंकिंग क्षेत्र का पर्याप्त विकास कर सेवा क्षेत्र का प्रसार कर लिया है।

(xii) **तीव्र एवं संतुलित आर्थिक विकास–** भारत ने आर्थिक नियोजन के माध्यम से सर्वांगीण विकास का जो मार्ग चुना, उसने राष्ट्र में तीव्र एवं संतुलित आर्थिक विकास की धारा प्रवाहित की है।

(xiii) **सामाजिक न्याय एवं जनकल्याण का विकास–** भारत में आर्थिक नियोजन का लक्ष्य समाज कल्याण, विकास तथा सुरक्षा रखा गया था। योजनाकाल में भारत ने सामाजिक न्याय और जनकल्याण के साथ-साथ निर्धन वर्ग का उत्थान, गरीबी व बेरोजगारी की भयावह समस्याओं के समाधान हेतु अनेक योजनाएँ चलाईं, जिनके सकारात्मक परिणाम प्राप्त हुए हैं।

(xiv) **आत्म-निर्भरता–** आर्थिक नियोजन की मुख्य उपलब्धि भारत को विविध क्षेत्रों में आत्म-निर्भर बनाना रहा है। भारत कृषि उत्पादन तथा औद्योगिक उत्पादन के क्षेत्र में आत्म-निर्भर बन गया है। पहले वह जिन वस्तुओं का आयात करता था, अब उनका निर्यात करने लगा है।

(xv) **सुदृढ़ अर्थव्यवस्था का निर्माण–** आर्थिक नियोजन के बल पर भारत ने एक सुदृढ़ और समृद्ध अर्थव्यवस्था के निर्माण में सफलता प्राप्त कर ली है। भारत ने विश्व की चौथी बड़ी अर्थव्यवस्था वाला राष्ट्र बनने का गौरव पा लिया है।

6. भारत में आर्थिक नियोजन के मार्ग में कौन-कौन सी बाधाएँ हैं?

उ०– **भारत में आर्थिक नियोजन के मार्ग की कठिनाइयाँ (बाधाएँ)–** बारह पंचवर्षीय एवं सात एकवर्षीय योजनाएँ पूरी हो जाने के बाद भी भारत आर्थिक नियोजन के लक्ष्यों को पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं कर सका है। भारत में आर्थिक नियोजन के मार्ग में मुख्य रूप से निम्नलिखित कठिनाइयाँ रही हैं–

(i) भारत में तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या आर्थिक नियोजन में सर्वाधिक बाधा उत्पन्न कर रही है।

(ii) सरकार को जो संसाधन आर्थिक नियोजन की मदों में व्यय करने होते हैं, वे अतिरिक्त जनसंख्या का पोषण करने में समाप्त हो जाते हैं। अत: आर्थिक नियोजन अपने लक्ष्य में पिछड़ जाता है।

(iii) भारत में सर्वत्र बेरोजगारी का साम्राज्य है, जो आर्थिक नियोजन के विकास मार्ग में बाधा उत्पन्न करती है।

(iv) भारत में बेरोजगारी और अत्यधिक जनसंख्या के कारण निर्धनता का दुष्चक्र बना रहता है, जो आर्थिक नियोजन को प्रगति के पथ पर बढ़ने से रोक लेता है।

(v) भारत में आर्थिक नियोजन को दोषपूर्ण विधि से लागू किया गया। विकास योजनाओं का आकार बड़ा होने के कारण उन्हें पूरा कर पाना कठिन हो जाता है।

(vi) बेरोजगारी, निर्धनता तथा कृषि एवं उद्योगों में अल्प उत्पादकता के कारण आवश्यक वस्तुओं के मूल्यों में वृद्धि हो जाने से पंचवर्षीय योजनाओं का खर्चा बढ़ जाता है। अत: संसाधनों का अभाव इनके मार्ग में बाधा उत्पन्न कर देता है।

(vii) भारत में समाज में संपत्ति तथा धन का वितरण बड़ा विषम है, जिससे सामाजिक न्याय और जनकल्याण का लक्ष्य पाने में बाधा पड़ जाती है।

(viii) आर्थिक नियोजन की योजनाओं के क्रियान्वयन का कार्य सरकारी अधिकारियों और कर्मचारियों के हाथों में रहता है। उनकी भ्रष्ट प्रवृत्ति तथा कार्यों के प्रति उदासीनता आर्थिक नियोजन को असफल बना डालते हैं।

(ix) भारत में सार्वजनिक उपक्रमों की स्थापना पर बल दिया गया था। ये उपक्रम दोषपूर्ण प्रबंध के कारण हानि उठाते रहे हैं, जिससे आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न होती है।

(x) भारत को विदेशी ऋण लेकर आर्थिक नियोजन की योजनाओं को पूरा करना पड़ता है। विदेशी ऋणों का भार आर्थिक नियोजन की सफलता के मार्ग में बाधाएँ उत्पन्न कर देता है।

भारतीय नियोजन के मार्ग में आने वाली कठिनाइयों तथा इसकी अकुशलता को दृष्टिगत रखते हुए, नई सरकार ने नीति आयोग को नया और कार्यकुशल संगठन बनाने का निर्णय ले लिया है। आशा है यह नया संगठन देश की आवश्यकता और परिवेश के अनुसार आर्थिक विकास के क्षेत्र में नव संचार करने वाला सिद्ध होगा।

7. भारत के आर्थिक नियोजन के मार्ग में आने वाली बाधाओं के निराकरण के उपाय सुझाइए।

उ०– **भारत के आर्थिक नियोजन को सफल बनाने के लिए सुझाव–** भारत में तीव्र आर्थिक विकास की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए योजना आयोग को चुस्त-दुरुस्त बनाना होगा। आर्थिक नियोजन के मार्ग की बाधाओं को दूर करने हेतु निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते हैं–

(i) योजना आयोग को वर्तमान परिस्थितियों के अनुरूप नए ढंग से संगठित किया जाए।
(ii) इस संस्था को राज्यों के सहयोग तथा ईमानदार सदस्यों के द्वारा संचालित कराया जाए।
(iii) आर्थिक विकास की योजनाओं के क्रियान्वयन में जनसामान्य की सहभागिता को अपनाया जाए।
(iv) आर्थिक नियोजन के कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए निजी क्षेत्र तथा सार्वजनिक क्षेत्र का पूरा-पूरा सहयोग प्राप्त किया जाए।
(v) योजनावधि में वस्तुओं की आपूर्ति तथा मूल्यों पर प्रभावी नियंत्रण बनाकर रखा जाए।
(vi) विदेशी ऋण तथा पूँजी पर निर्भरता को कम किया जाए।
(vii) शिक्षा प्रणाली को रोजगारपरक बनाकर स्वरोजगार की महत्वाकांक्षा को बढ़ाया जाए।
(viii) विकास योजनाओं को ईमानदार और कार्यकुशल अधिकारियों के हाथों में सौंपा जाए, ताकि वे गंभीरतापूर्वक उन्हें पूरा करा सकें।
(ix) आर्थिक नियोजन को राष्ट्र के सर्वांगीण विकास के लक्ष्य से जोड़ा जाए।
(x) आर्थिक विकास तथा औद्योगिक उत्पादन बढ़ाने के साथ समाज कल्याण के कार्यक्रमों को ईमानदारी से लागू कराया जाए।

8. ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना का वर्णन कीजिए।

उ०– **ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना–**

कार्यावधि– 1 अप्रैल, 2007 से 31 मार्च, 2012 तक

उद्देश्य– ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के लिए निम्नलिखित उद्देश्य रखे गए–

(i) तीव्र औद्योगिक विकास के साथ-साथ समावेशी संवृद्धि पर बल देना।
(ii) निर्धनता अनुपात को 15% तक घटाना।
(iii) श्रम शक्ति को उच्च गुणवत्तायुक्त रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना।
(iv) जनसंख्या वृद्धि की दशकीय दर घटाकर 16.2% तक लाना।
(v) साक्षरता दर को बढ़ाकर 75% तक ले जाना।
(vi) समस्त गाँवों में स्वच्छ जल की अविरत आपूर्ति की व्यवस्था करना।
(vii) रोजगार के 7 करोड़ नए अवसर सृजित करना।

उपलब्धियाँ– ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में निम्नलिखित उपलब्धियाँ ही प्राप्त की जा सकीं–

(i) औसत वार्षिक वृद्धि दर 7.9% रही।
(ii) कृषि की वार्षिक वृद्धि दर 3.2% तक ही पहुँची।
(iii) खाद्यान्न उत्पादन बढ़ गया, जो अनुमानत: 250.4 मिलियन टन था।
(iv) विशेष आर्थिक क्षेत्रों ने 4.9 लाख लोगों को रोजगार के नए अवसर सुलभ कराए।
(v) इस दशक को नवप्रवर्तन दशक घोषित किया गया।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

56 आर्थिक विकास में राज्य की भूमिका
(राज्य का हस्तक्षेप, उत्पादन एवं वितरण का नियंत्रण, औद्योगिक लाइसेंसिग, सार्वजनिक वितरण प्रणाली एवं राशनिंग)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 557 व 558 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 558 व 559 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. औद्योगिक विकास में राज्य के हस्तक्षेप की आवश्यकता को स्पष्ट करने वाले तीन तर्क प्रस्तुत कीजिए।

उ०– **आर्थिक विकास में राज्य के हस्तक्षेप की आवश्यकता–** आर्थिक विकास में राज्य (सरकार) के हस्तक्षेप की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से होती है–

(i) **विकास का वातावरण बनाने के लिए–** विकासशील राष्ट्र अशिक्षा, अंधविश्वास, भाग्यवादिता तथा सड़ी-गली परंपराओं से ग्रसित होते हैं। अत: वहाँ आर्थिक विकास का वातावरण नहीं होता। ऐसे में राज्य ही आर्थिक विकास का वातावरण अपने हस्तक्षेप द्वारा बना सकता है।

(ii) **प्रेरणा का स्रोत बनने के लिए–** राज्य सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा राजनीतिक मूल्यों में परिवर्तन लाकर अपने हस्तक्षेप द्वारा राष्ट्र में आर्थिक विकास के लिए प्रेरणा का स्रोत बन जाता है।

(iii) **योग्य तथा कुशल नेतृत्व देने के लिए–** राज्य आर्थिक विकास के लिए अपने हस्तक्षेप द्वारा देश को योग्य और कुशल नेतृत्व देकर देश में आर्थिक विकास को गतिमान बना सकता है।

2. राजकोषीय नीति क्या है? इसके मुख्य उपकरण बताइए।

उ०– राजकोषीय नीति सरकार की आय, व्यय, सार्वजनिक ऋण तथा वित्त व्यवस्थाओं का समूह होती है। प्रो० आर्थर स्मिथीज ने राजकोषीय नीति को इन शब्दों में परिभाषित किया है, "राजकोषीय नीति वह नीति है, जिसमें सरकार अपने व्यय तथा आगम के कार्यक्रम को राष्ट्रीय आय, उत्पादन अथवा रोजगार पर वांछित प्रभाव डालने और अवांच्छित प्रभावों को रोकने के लिए प्रयुक्त करती है।" सरकार की राजकोषीय नीति करारोपण (आय), सार्वजनिक व्यय तथा सार्वजनिक ऋणों के द्वारा आर्थिक विकास पर वांछित प्रभाव डालने का उपाय होती है।

राजकोषीय नीति के उपकरण– सरकार राजकोषीय नीति के अनुपालन हतु निम्न उपकरणों को प्रयोग में लाती है–

(i) करारोपण, (ii) सार्वजनिक ऋण, (iii) सार्वजनिक व्यय

3. राजकोषीय नीति के तीन महत्वपूर्ण तथ्यों को स्पष्ट कीजिए।

उ०– **राजकोषीय नीति के महत्वपूर्ण तथ्य–** राजकोषीय नीति के तीन महत्वपूर्ण तथा निम्नलिखित तथ्यों को जानना आवश्यक होता है–

(i) कर लगाकर उपभोग को नियंत्रित करना तथा पूँजी-निर्माण को बढ़ाना।

(ii) प्रगतिशील करों द्वारा आय की विषमताओं को घटाना।

(iii) आय तथा व्यय में परिवर्तन करके निजी निवेश को हतोत्साहित या प्रोत्साहित करके आवश्यक उद्योगों की स्थापना पर बल देना।

4. मौद्रिक नीति से क्या अभिप्राय है? इसे किसके माध्यम से लागू किया जाता है?

उ०– **मौद्रिक नीति–** सरकार अथवा केंद्रीय बैंक की वह नीति, जिसके द्वारा आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु मुद्रा की मात्रा, ब्याज

दर तथा उसके उपभोग की मात्रा पर नियंत्रण बनाया जाता है, मौद्रिक नीति कहलाती है। केंद्रीय बैंक मौद्रिक नीति में परिवर्तन करके भुगतान संतुलन को बनाए रखने तथा मुद्रा प्रसार पर नियंत्रण लगाने के उपाय अपना सकता है। प्रो. हैरी जी जॉन्सन ने मौद्रिक नीति को इन शब्दों में परिभाषित किया है, "मौद्रिक नीति का अर्थ केंद्रीय बैंक की उस नियंत्रण नीति से है, जिसके द्वारा केंद्रीय बैंक आर्थिक नीति के लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से मुद्रा की पूर्ति पर नियंत्रण करता है।" मौद्रिक नीति साख की पूर्ति तथा उपभोग पर नियंत्रण बनाने का कार्य करती है। मौद्रिक नीति को भारत सरकार अथवा केंद्रीय बैंक, भारतीय रिजर्व बैंक के द्वारा लागू किया जाता है।

5. भारत का केंद्रीय बैंक कौन-सा है? उसके तीन प्रमुख कार्य लिखिए।

उ०– भारत का केंद्रीय बैंक भारतीय रिजर्व बैंक है। इसके तीन प्रमुख कार्य निम्नलिखित है–

(i) केंद्रीय सरकार तथा राज्य सरकारों के नकद कोष रखना।

(ii) सार्वजनिक ऋणों की व्यवस्था करना।

(iii) बैंकों को लाइसेंस प्रदान करना।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. भारत के आर्थिक विकास में राज्य के हस्तक्षेप की आवश्यकताओं का वर्णन कीजिए।

उ०– **भारत के आर्थिक विकास में राज्य के हस्तक्षेप की आवश्यकता–** भारत के आर्थिक विकास में राज्य (सरकार) के हस्तक्षेप की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से होती है–

(i) विकास का वातावरण बनाने के लिए– भारत जैसे विकासशील राष्ट्र अशिक्षा, अंधविश्वास, भाग्यवादिता तथा सड़ी-गली परंपराओं से ग्रसित होते हैं। अत: वहाँ आर्थिक विकास का वातावरण नहीं होता। ऐसे में राज्य ही आर्थिक विकास का वातावरण अपने हस्तक्षेप द्वारा बना सकता है।

(ii) प्रेरणा का स्रोत बनने के लिए– राज्य सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा राजनीतिक मूल्यों में परिवर्तन लाकर अपने हस्तक्षेप द्वारा राष्ट्र में आर्थिक विकास के लिए प्रेरणा का स्रोत बन जाता है।

(iii) योग्य तथा कुशल नेतृत्व देने के लिए– राज्य आर्थिक विकास के लिए अपने हस्तक्षेप द्वारा देश को योग्य और कुशल नेतृत्व देकर देश में आर्थिक विकास को गतिमान बना सकता है।

(iv) प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों का श्रेष्ठतम उपयोग करने के लिए– राज्य अपने कुशल नेतृत्व तथा उचित हस्तक्षेप द्वारा राष्ट्र में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों एवं मानवीय संसाधनों के कुशल सामंजस्य तथा श्रेष्ठतम उपयोग करने का मार्ग प्रशस्त कर सकता है।

(v) औद्योगिक लाइसेंसिंग तथा उचित कर-प्रणाली के निर्धारण के लिए– सरकार आर्थिक विकास तथा औद्योगिक उत्पादन पर नियंत्रण बनाए रखने के लिए उचित लाइसेंसिंग तथा कर-प्रणाली लागू कर आर्थिक विकास में अपना उचित निर्देशन सुलभ करा सकती है।

(vi) उपर्युक्त कानूनों का निर्माण करने के लिए– आर्थिक विकास पर नियंत्रण रखना तथा औद्योगिक उत्पादन की मात्रा का उचित निर्धारण करना, सरकार द्वारा निर्मित कानूनों पर निर्भर करता है। अत: इन सब कार्यों के लिए उचित कानून बनाने हेतु सरकार का हस्तक्षेप आवश्यक हो जाता है।

(vii) विदेशी व्यापार के लिए उचित नीति का निर्धारण करने के लिए– राष्ट्र का आर्थिक विकास अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर सर्वाधिक निर्भर करता है। विदेशी व्यापार व्यापारिक समझौतों द्वारा संपन्न किए जाते हैं। इन समझौतों को क्रियान्वित करने के लिए सरकार का आर्थिक विकास में हस्तक्षेप आवश्यक है।

(viii) विदेशी निवेश को कानूनी रूप से आकर्षित करने के लिए– आर्थिक विकास को गति देने के लिए सरकार अपने उद्योगों में विदेशी निवेश को आकर्षित कर औद्योगीकरण को बढ़ावा देती है। विदेशी पूँजी के निवेश के लिए उचित कानून बनाने हेतु आर्थिक विकास में सरकार का हस्तक्षेप आवश्यक बन जाता है।

(ix) अधिकतम सामाजिक कल्याण का मार्ग प्रशस्त करने के लिए– आर्थिक विकास तभी सार्थक है, जब इसका

लक्ष्य सामाजिक न्याय की स्थापना कर अधिकतम सामाजिक कल्याण से जुड़ा हो। सरकार अपने वैध हस्तक्षेप से इस लक्ष्य को पाने में सहभागिता निभा सकती है। अत: उसका हस्तक्षेप आवश्यक बन जाता है।

2. आर्थिक विकास में राज्य के हस्तक्षेप के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।

उ०– **आर्थिक विकास में राज्य के हस्तक्षेप के उद्देश्य–** आर्थिक विकास में राज्य अपना हस्तक्षेप निम्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए करता है–

(i) सीमित एवं उपयोगी प्राकृतिक संसाधनों का योजनाबद्ध और विवेकपूर्ण विदोहन करने के लिए।

(ii) मानवीय संसाधनों पर पूँजी निवेश कर उन्हें कुशल तथा दक्ष बनाकर आर्थिक विकास में भागीदार बनाने के लिए।

(iii) क्षेत्रीय असमानताओं को न्यूनतम करने के लिए उद्योगों का उचित ढंग से विकेंद्रीकृत करने हेतु।

(iv) राष्ट्र का सर्वांगीण आर्थिक तथा औद्योगिक विकास करने के लिए।

(v) एकाधिकारी कुप्रवृत्तियों पर प्रभावी अंकुश लगाने के लिए।

(vi) आर्थिक विषमता का अंत करने के लिए।

(vii) विदेशी विनिमय का विवेकपूर्ण उपयोग करने के लिए।

(viii) राष्ट्रहित में विदेशी निवेश को आकर्षित करने के लिए।

(ix) सामाजिक न्याय और समाज कल्याण की स्थापना के लिए।

3. राजकोषीय नीति क्या है? उसके उपकरणों पर प्रकाश डालिए।

उ०– **राजकोषीय नीति–** इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या- 2 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

राजकोषीय नीति के उपकरण- सरकार राजकोषीय नीति के अनुपालन हेतु निम्न उपकरणों को प्रयोग में लाती है–

(i) करारोपण– कर सरकार की आय का मुख्य स्रोत तथा नागरिकों द्वारा दिए जाने वाला अनिवार्य अंशदान है। सरकार इसे राजकोषीय नीति के एक उपकरण के रूप में निम्नवत् प्रयोग करती है–

(क) धनवान लोगों पर अधिक कर लगाकर धन के वितरण में समानताएँ लाई जाती हैं।

(ख) प्रगतिशील कर प्रणाली का अनुसरण करते हुए तथा न्यूनतम आय के स्तर को कर मुक्त रखकर, आय की असमानता घटाई जाती है।

(ग) विलासिता की वस्तुओं पर ऊँचे कर लगाकर आय की असमानता कम की जाती है।

(घ) ऊँचे प्रत्यक्ष कर लगाकर आयात मदों को कम करना।

(ङ) कर लगाकर आर्थिक विकास और औद्योगिक विकास हेतु पूँजी जुटाना।

(च) करारोपण द्वारा निवेश में वृद्धि कर आर्थिक एवं सामाजिक आधारिक संरचना का ढाँचा खड़ा करना।

(ii) सार्वजनिक व्यय– राज्य सरकार, केंद्र सरकार एवं स्थानीय निकायों द्वारा किए जाने वाले व्यय को सार्वजनिक व्यय की संज्ञा दी जाती है। इसके विषय में निम्न बातें जानने योग्य हैं–

(क) सार्वजनिक व्यय उपभोग के स्तर, जीवन-स्तर, उत्पादकता के स्तर तथा नागरिकों की कार्यक्षमता के स्तर को बढ़ाने में सक्षम होता है।

(ख) सार्वजनिक व्यय आर्थिक संसाधनों के स्थानांतरण में सहायक बन जाता है।

(ग) प्रगतिशील सार्वजनिक व्यय आर्थिक विषमताओं को घटाने में सहायक बन जाता है।

(घ) सार्वजनिक व्यय वह स्रोत है, जो सार्वजनिक निर्माण कार्यों में सहयोग देकर रोजगार के नए अवसर बढ़ा सकता है।

(ङ) सार्वजनिक व्यय आर्थिक विकास का प्रेरणा-स्रोत बन जाता है।

(iii) सार्वजनिक ऋण– जब सरकार वित्तीय आवश्यकताओं को अपनी आय की मदों से पूरा करने में असमर्थ होती है, तब वह जिन बाह्य स्रोतों का सहारा लेती है, उसे सार्वजनिक ऋण कहा जाता है। इस ऋण का स्रोत देशी तथा विदेशी दोनों

हो सकते हैं। इस विषय में निम्न बातें जानने योग्य हैं–

(क) सार्वजनिक ऋण को उत्पादक कार्यों में व्यय करके उत्पादन शक्ति को बढ़ाया जाता है।

(ख) सार्वजनिक ऋण अल्प बचतों को प्रोत्साहित करते हैं।

(ग) सार्वजनिक ऋण का व्यय निर्धन वर्ग के उत्थान के लिए करके आर्थिक विषमताएँ मिटाई जा सकती हैं।

(घ) ऋणों के माध्यम से वर्तमान उपभोग को स्थगित किया जा सकता है।

(ङ) ऋणों से उपलब्ध वित्तीय संसाधनों का उपयोग करके उद्योग तथा व्यापार के क्षेत्रों में आवश्यक परिवर्तन किए जा सकते हैं।

4. भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना कब हुई? इसके कार्यों का वर्णन कीजिए।

उ०– भारतीय रिजर्व बैंक भारत का केंद्रीय बैंक है, जो 1 अप्रैल, 1935 ई० में स्थापित किया गया था। बाद में 1 अप्रैल, 1949 ई० में इसका राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। इसके द्वारा निम्नलिखित कार्य किए जाते हैं–

(i) पत्र-मुद्रा का निर्गमन– भारतीय रिजर्व बैंक 1 रुपए के नोट को छोड़कर समस्त नोटों का निर्गमन न्यूनतम कोष प्रणाली के आधार पर करता है।

(ii) सरकार के बैंक के रूप में कार्य– भारतीय रिजर्व बैंक इस संदर्भ में निम्नलिखित कार्य करता है–

(क) केंद्रीय सरकार तथा राज्य सरकारों के नकद कोष रखना।

(ख) सार्वजनिक ऋणों की व्यवस्था करना।

(ग) केंद्रीय सरकार तथा राज्य सरकारों को ऋण देना।

(घ) सरकारी प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय करना।

(ङ) सरकार को मौद्रिक तथा साख के लिए परामर्श देना।

(च) अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं के सम्मेलनों में भारत का प्रतिनिधित्व करना।

(iii) बैंकों के बैंक के रूप में कार्य– भारतीय रिजर्व बैंक देश की संपूर्ण बैंकिंग व्यवस्था पर नियंत्रण बनाए रखने के लिए निम्नलिखित कार्य करता है–

(क) विभिन्न बैंकों से उनके पास रिजर्व धनराशि जमा करवाना।

(ख) बैंकों को लाइसेंस प्रदान करना।

(ग) बैंकों के कार्यों का निरीक्षण करना।

(घ) बैंकों को आर्थिक सहायता प्रदान करना।

(iv) विदेशी विनिमय पर नियंत्रण– इस क्षेत्र में रिजर्व बैंक निम्नलिखित कार्य संपन्न करता है–

(क) भारतीय रुपए की बाह्य कीमत को स्थिर रखना।

(ख) विदेशी भुगतानों के लिए विदेशी विनिमय का प्रबंध करना।

(ग) भारत सरकार तथा राज्य सरकारों हेतु विदेशी विनिमय की व्यवस्था करना।

(v) साख पर नियंत्रण– भारतीय रिजर्व बैंक साख पर नियंत्रण बनाए रखने के लिए **परिणात्मक साख नियंत्रण** एवं **गुणात्मक साख नियंत्रण के उपाय** अपनाता है।

(vi) समाशोधन-गृह का कार्य– यह देश के व्यापारिक बैंकों के आपसी लेन-देन को निपटाता है। जिन स्थानों पर रिजर्व बैंक की शाखा नहीं है, यह कार्य भारतीय स्टेट बैंक द्वारा संपन्न किया जाता है।

5. भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली को स्पष्ट कीजिए तथा इसके लाभ बताइए।

उ०– **सार्वजनिक वितरण प्रणाली (राशनिंग) का अर्थ–** सरकार, सरकारी उचित मूल्य की दुकानों के माध्यम से उपभोक्ताओं को राशनकार्ड पर आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धता उचित मूल्य तथा उचित माप पर कराने की जो व्यवस्था करती है, उसे सार्वजनिक वितरण प्रणाली या राशनिंग व्यवस्था कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, "सार्वजनिक वितरण प्रणाली सरकारी व्यवस्था का वह जाल है, जिसके माध्यम से दैनिक उपभोग की आवश्यक वस्तुओं को सरकारी उचित मूल्य की दुकानों की श्रृंखला द्वारा उपभोक्ताओं तक पहुँचाया जाता है।" सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत निम्नलिखित वस्तुएँ उपलब्ध कराई जाती हैं–

(i) गेहूँ तथा चावल, (ii) दालें तथा खाद्य तेल, सॉफ्ट कोक,
(iii) चीनी, (iv) मिट्टी का तेल,
(v) आलू, प्याज, कपड़ा तथा कागज आदि।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के लाभ– सार्वजनिक वितरण प्रणाली से निम्नलिखित लाभ प्राप्त हुए हैं–

(i) सार्वजनिक वितरण प्रणाली से आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धता सस्ते मूल्यों पर सुनिश्चित हो गई।
(ii) सार्वजनिक वितरण प्रणाली के कारण वस्तुओं की मूल्य वृद्धि पर रोक लग गई है।
(iii) सार्वजनिक वितरण प्रणाली उत्पादकों द्वारा वस्तुओं के मनचाहे मूल्य वसूलने में बाधक बन गई है।
(iv) सार्वजनिक वितरण प्रणाली ने चोरबाजारी पर रोक लगाकर आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धता सुनिश्चित कर दी है।
(v) सरकार आवश्यक वस्तुएँ उत्पादकों से उचित मूल्य पर क्रय करके सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा जनसामान्य को सस्ते मूल्य पर सुलभ कराती है।
(vi) सार्वजनिक वितरण प्रणाली निर्धनों तथा दुर्बल वर्गों के लिए 'प्राणरक्षक उपहार' बन गई है।
(vii) यह वितरण प्रणाली नागरिकों को खाद्य-सुरक्षा दिलाने में रामबाण सिद्ध हुई है।
(viii) इस वितरण प्रणाली ने आर्थिक विकास को सामाजिक न्याय तथा कल्याण के साथ जोड़ दिया है।
(ix) सार्वजनिक वितरण प्रणाली अल्प आय वाले निम्न वर्ग के लोगों के लिए उपभोग संरक्षण का आधार बनकर प्रकट हुई है।
(x) सार्वजनिक वितरण प्रणाली भारत में भुखमरी तथा कुपोषण की समस्याओं के समक्ष ढाल बन गई है।

6. भारत की सार्वजनिक वितरण प्रणाली में क्या दोष हैं? इन्हें दूर करने के उपाय सुझाइए।

उ०– भारत की सार्वजनिक वितरण प्रणाली के दोष– भारत की सार्वजनिक वितरण प्रणाली निम्नलिखित कठिनाइयों के कारण दोषपूर्ण बन गई है–

(i) उचित मूल्य की दुकानों पर ठीक समय पर वस्तुओं की आपूर्ति न होने से उपभोक्ताओं को बार-बार चक्कर काटने पड़ते हैं।
(ii) उचित मूल्य की दुकानों को पर्याप्त माल की आपूर्ति नहीं हो पाती।
(iii) भ्रष्ट दुकानदार राशन की वस्तुओं को खुले बाजार में बेचकर लोगों के अधिकारों का हनन करते हैं।
(iv) सार्वजनिक वितरण प्रणाली से जुड़े सरकारी अधिकारी तथा कर्मचारी भ्रष्ट हैं, जिनके कारण यह कल्याणकारी योजना सफल नहीं हो पा रही है।
(v) उचित मूल्य की दुकानों की शृंखला दूरदराज के गाँवों तक नहीं पहुँच पाई है, जिससे उन्हें इसकी सुविधाओं से वंचित रहना पड़ता है।
(vi) उचित मूल्य की दुकान वाले नकली राशनकार्ड बनवाकर उनका सामान स्वयं हड़प कर जाते हैं।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के दोषों को दूर करने के उपाय– सार्वजनिक वितरण प्रणाली के दोषों को दूर करने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं–

(i) उचित मूल्य की दुकानों के खुलने का समय निश्चित कराया जाए।
(ii) उचित मूल्य की दुकानों को वस्तुओं की भरपूर आपूर्ति समयबद्ध रूप से की जाए।
(iii) भ्रष्ट दुकानदारों के विरुद्ध कठोर कार्यवाही की जाए।
(iv) राशन का सामान खुले बाजार में बेचने वाले दुकानदारों को जेल भेजा जाए।
(v) भ्रष्ट सरकारी तंत्र को ईमानदार तथा कार्यशील बनाया जाए।
(vi) सहकारी उपभोक्ता भंडारों को अधिक क्रियाशील बनाया जाए।
(vii) दूरदराज के गाँवों को उचित मूल्य की दुकानों से जोड़ा जाए।
(viii) आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति पर्याप्त मात्रा में सुनिश्चित कराई जाए।
(ix) सार्वजनिक वितरण प्रणाली को चुस्त-दुरूस्त बनाकर उपभोक्ताओं के हितों का संरक्षण किया जाए।

❖ प्रोजेक्ट कार्य

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

57

विदेशी व्यापार

(तात्पर्य, महत्व, विदेशी व्यापार की नीति, आयात-निर्यात की मुख्य मदें, आयात-निर्यात की दिशा)

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या- 557 व 558 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या-567 व 568 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. विदेशी व्यापार से आप क्या समझते हैं?

उ०– देश की भौगोलिक सीमाओं के पार दो या दो से अधिक देशों के मध्य वस्तुओं और सेवाओं का आयात-निर्यात विदेशी या अंतर्राष्ट्रीय व्यापार कहलाता है। दूसरे शब्दों में ''दो देशों के मध्य होने वाला व्यापार विदेशी व्यापार है।'' भारत का ब्रिटेन को चाय भेजना तथा वहाँ से ऊनी वस्त्र मँगाना विदेशी या अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का उदाहरण है।

2. विदेशी व्यापार में आयात-निर्यात को उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।

उ०– **आयात–** किसी देश द्वारा अन्य देशों में निर्मित वस्तुओं और सेवाओं को खरीदकर मँगाना, आयात कहलाता है। भारत का सऊदी अरब से खनिज तेल खरीदना, भारत का आयात कहलाएगा।

निर्यात– किसी देश द्वारा अन्य देशों को अपने यहाँ निर्मित उतपाद और सेवाओं को बेचना तथा बाहर भोजना, निर्यात कहलाता है। भारत का ग्रेट ब्रिटेन तथा संयुक्त राज्य अमेरिका का चाय भेजना, भारत का निर्यात कहलाएगा।

3. अंतर्राष्ट्रीय व्यापार तथा देशी व्यापार का अंतर स्पष्ट कीजिए।

उ०– किसी देश की भौगोलिक सीमाओं के पार दो या दो से अधिक देशों के मध्य वस्तुओं और सेवाओं का आयात-निर्यात अंतर्राष्ट्रीय व्यापार कहलाता है। जैसे– भारत का ब्रिटेन को चाय भेजना तथा वहाँ से ऊनी वस्त्र मँगाना अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का उदाहरण है। जबकि एक देश की भौगोलिक सीमाओं के बीच विविध क्षेत्रों अथवा राज्यों के मध्य होने वाला क्रय-विक्रय आर्तरिक या देशी व्यापार कहलाता है। जैसे– उत्तर प्रदेश के व्यापारी द्वारा चीनी बेचकर पश्चिम बंगाल के व्यापारी से जूट का बना सामान खरीदना देशी व्यापार का उदाहरण है।

4. भारत के आयात और निर्यात की तीन-तीन वस्तुएँ लिखिए।

उ०– **भारत के आयात की वस्तुएँ–** खनिज तेल, मशीनरी एवं परिवहन उपकरण, रासायनिक उर्वरक।

भारत के निर्यात की वस्तुएँ– चाय, चमड़ा तथा उससे निर्मित सामान, तंबाकू।

5. भारत के विदेशी व्यापार की तीन विशेषताएँ लिखिए।

उ०– भारत के विदेशी व्यापार की तीन विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) भारत का 90% व्यापार समुद्री मार्ग द्वारा संपन्न किया जाता है।

(ii) भारत के निर्यात की मदों में कच्चा और तैयार माल दोनों सम्मिलित हैं।

(iii) भारत 190 देशों को अपने उत्पादों का निर्यात करता है, जबकि 140 देशों से उनके उतपाद आयात करता है। भारत का सर्वाधिक व्यापार संयुक्त राज्य अमेरिका तथा ग्रेट ब्रिटेन के देशों के साथ होता है।

6. भारत के निर्यात व्यापार की तीन विशेषताएँ बताइए।

उ०– भारत के निर्यात व्यापार की तीन विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) भारत विश्व के 190 देशों को अपने उत्पादों का निर्यात करता है।

(ii) भारत के निर्यात की मदों में कच्चा और तैयार माल दोनों सम्मिलित होते हैं।

(iii) भारत का अधिकांश निर्यात व्यापार समुद्री मार्गों द्वारा संपन्न किया जाता है।

7. व्यापार संतुलन के तीन प्रकारों का वर्णन कीजिए।

उ०– व्यापार संतुलन तीन प्रकार का होता है–

(i) प्रतिकूल अथवा घाटे का व्यापार संतुलन– जब किसी देश के कुल आयातों का मूल्य उसके कुल निर्यातों के मूल्य से अधिक होता है, तब यह उस देश का प्रतिकूल अथवा घाटे का व्यापार संतुलन कहा जाता है। इसे उस देश के विपक्ष में होना कहा जाता है।

(ii) अनुकूल व्यापार संतुलन– जब किसी देश के निर्यातों का मूल्य उसके आयातों के मूल्य से अधिक होता है, तब उसका व्यापार संतुलन अनुकूल अर्थात बचत का माना जाता है।

(iii) संतुलित व्यापार संतुलन– जब किसी देश के आयातों का मूल्य उसके निर्यातों के मूल्य के बराबर हो जाता है, तब उस देश काव्यापार संतुलन संतुलित कहा जाता है।

8. भारतीय अर्थव्यवस्था में विदेशी व्यापार (आयात-निर्यात) के तीन महत्व लिखिए।

उ०– भारतीय अर्थव्यवस्था में विदेशी व्यापार के तीन महत्व निम्नलिखित हैं–

(i) अतिरिक्त वस्तुओं की बिक्री– राष्ट्र जिन वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन आवश्यकता से अधिक करता है, उन अतिरिक्त वस्तुओं और सेवाओं को विदेशों में बेचने के लिए विदेशी व्यापार सर्वोत्तम साधन है।

(ii) सस्ती वस्तुओं की उपलब्धि– विदेशी व्यापार के माध्यम से अतिरिक्त वस्तुएँ उचित मूल्य में बिक जातीं हैं तथा आवश्यक वस्तुएँ अन्य देशों से सस्ते मूल्य पर सुलभ हो जाती हैं।

(iii) विदेशी मुद्रा की प्राप्ति– भारत अपनी वस्तुओं और सेवाओं का निर्यात करके पर्याप्त मात्रा में विदेशी मुद्रा अर्जित करने में सफल हो जाता है। विदेशी मुद्रा का भंडार, देश की अर्थव्यवस्था का पोषण करता है।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. विदेशी व्यापार से क्या आशय है? भारत के आयात की मुख्य मदों का वर्णन कीजिए।

उ०– **विदेशी व्यापार–** इसके लिए लघु उततरीय प्रश्न संख्या-1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

भारत के आयात की मुख्य मदें- भारत के आयात की मुख्य मदें निम्नलिखित हैं–

(i) पेट्रोलियम पदार्थ– भारत अपनी खपत का 35% ईरान, इराक, कुवैत, सऊदी अरब, रूस तथा संयुक्त राज्य अमेरिका आदि देशों से पेट्रोलियम पदार्थ मँगाकर पूरा करता है।

(ii) पूँजीगत वस्तुएँ– भारत अपने औद्योगीकरण को सुदृढ़ बनाने के लिए जापान, रूस, जर्मनी, इंग्लैंड तथा संयुक्त राज्य अमेरिका आदि देशों से भारी मात्रा में पूँजीगत वस्तुओं का आयात करता है।

(iii) खाद्य तेल– भारत तिलहन के उत्पादन में पिछड़ा हुआ होने के कारण पर्याप्त मात्रा में खाद्य तेल और तिलहन का आयात कनाडा तथा संयुक्त राज्य अमेरिका आदि देशों से करता है।

(iv) कागज, गत्ता तथा लुगदी– भारत में कागज का उत्पादन कम और खपत अधिक होने के कारण वह कागज, गत्ता तथा कागज बनाने की लुगदी का आयात, कनाडा, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा रूस आदि देशों से करता है।

(v) रासायनिक उर्वरक– भारत में रासायनिक उर्वरकों का उत्पादन कम तथा कृषि क्षेत्र में खपत अधिक है। अत: उसे रासायनिक उर्वरकों का आयात यूरोपीय देशों, रूस तथा संयुक्त राज्य अमेरिका से करना पड़ता है।

(vi) **हीरे तथा बहुमूल्य रत्न–** भारत पर्याप्त मात्रा में कच्चे हीरे तथा बहुमूल्य रत्न श्रीलंका, बेल्जियम, दक्षिणी अफ्रीका तथा संयुक्त राज्य अमेरिका आदि देशों से आयात करता है।

(vii) **मशीनरी एवं परिवहन उपकरण–** बढ़ते औद्योगीकरण तथा परिवहन के विकास के लिए भारत मशीनरी तथा उपकरणों का आयात ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, जापान, रूस तथा संयुक्त राज्य अमेरिका आदि देशों से करता है।

(viii) **लौह-अयस्क एवं अलौह धातुएँ–** भारत लौह तथा अलौह धातुओं का आयात ग्रेट ब्रिटेन, स्वीडन, बेल्जियम, कनाडा, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा कांगो आदि देशों से करता है।

(ix) **रासायनिक पदार्थ–** भारत अपनी औद्योगिक माँग को पूरी करने के लिए रासायनिक पदार्थ, रंग-रोगन का सामान तथा औषधियाँ रूस, जापान, ग्रेट ब्रिटेन तथा संयुक्त राज्य अमेरिका आदि देशों से मँगाता है।

2. भारत के निर्यात की मुख्य मदों पर प्रकाश डालिए।

उ०– भारत के निर्यात की मुख्य मदें निम्नलिखित हैं–

(i) **चाय–** भारत विश्व का सबसे बड़ा चाय निर्यातक देश है। भारत चाय का निर्यात ग्रेट ब्रिटेन, मिस्र, इराक, कनाडा, आस्ट्रेलिया तथा संयुक्त राज्य अमेरिका आदि देशों को भारी मात्रा में करता है।

(ii) **सिले-सिलाए वस्त्र–** भारत में सूती वस्त्र तथा कृत्रिम रेशे के वस्त्र अधिक बनते हैं, अतः भारत सिले-सिलाए वस्त्रों का निर्यात म्यांमार, मलाया, श्रीलंका, इण्डोनेशिया, पूर्वी अफ्रीका के देशों तथा यूरोपीयन समुदाय के देशों को करता है।

(iii) **जूट का बना सामान–** भारत जूट के बोरे तथा जूट से बने अन्य सामानों का निर्यात अर्जेन्टीना, रूस, ग्रेट ब्रिटेन, कनाडा तथा संयुक्त राज्य अमेरिका आदि देशों को पर्याप्त मात्रा में करता है।

(iv) **चमड़ा तथा चमड़ा निर्मित सामान–** भारत से प्रतिवर्ष भारी मात्रा में चमड़ा तथा चमड़े से बना सामान संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैंड, फ्रांस, जर्मनी एवं रूस आदि देशों को निर्यात किया जाता है।

(v) **तंबाकू–** भारत प्रतिवर्ष पर्याप्त मात्रा में तंबाकू का निर्यात जापान, नेपाल, रूस तथा ग्रेट ब्रिटेन आदि देशों को करता है।

(vi) **गरम मसाले–** भारत अनेक प्रकार के गरम मसालों का निर्यात ईरान, सऊदी अरब, इटली, फ्रांस, ग्रेट ब्रिटेन तथा संयुक्त राज्य अमेरिका आदि देशों को करता है।

(vii) **कहवा और काजू–** भारत कहवा तथा काजू गिरी का निर्यात संयुक्त राज्य अमेरिका, इटली, ग्रेट ब्रिटेन, रूस तथा जापान आदि देशों को प्रतिवर्ष भारी मात्रा में करता है।

(viii) **खनिज पदार्थ–** भारत अभ्रक, मैंगनीज, लौह-अयस्क तथा अन्य धात्विक खनिजों का निर्यात चीन, जापान तथा संयुक्त राज्य अमेरिका आदि देशों को करता है।

(ix) **आभूषण–** भारत हीरों के आभूषणों तथा स्वर्ण आभूषणों का निर्यात ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, इटली तथा रूस आदि देशों को करता है।

(x) **मशीनरी–** भारत बिजली की मोटरें, पंखे, स्कूटर, साइकिलें तथा अन्य मशीनों का निर्यात म्यांमार, श्रीलंका, मिस्र, सऊदी अरब तथा मलेशिया आदि देशों को करता है।

3. भारतीय अर्थव्यवस्था में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का महत्व स्पष्ट कीजिए।

उ०– **भारतीय अर्थव्यवस्था में विदेशी व्यापार (अंतर्राष्ट्रीय) का महत्व–** विदेशी व्यापार राष्ट्र के औद्योगिक उत्पादन का प्रेरक तथा आर्थिक विकास का द्योतक होता है। राष्ट्र में आर्थिक विकास का भव्य भवन खड़ा करने के लिए विदेशी व्यापार की सुदृढ़ नींव तैयार करने की नितांत आवश्यकता होती है। विदेशी व्यापार राष्ट्र के आर्थिक विकास में निम्नवत् महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है–

(i) **अतिरिक्त वस्तुओं की बिक्री–** राष्ट्र जिन वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन आवश्यकता से अधिक करता है, उन अतिरिक्त वस्तुओं और सेवाओं को विदेशों में बेचने के लिए विदेशी व्यापार सर्वोत्तम साधन है।

(ii) **आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धि–** कोई भी राष्ट्र समस्त वस्तुओं की आपूर्ति में आत्मनिर्भर नहीं है, अत: आवश्यक तथा उपयोगी वस्तुओं और सेवाओं को विदेशों से मँगाकर नागरिकों तक पहुँचाना होता है। अत: विदेशी व्यापार आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धि का सर्वोत्तम स्रोत होता है।

(iii) **सस्ती वस्तुओं की उपलब्धि–** विदेशी व्यापार के माध्यम से अतिरिक्त वस्तुएँ उचित मूल्य में बिक जाती हैं तथा आवश्यक वस्तुएँ अन्य देशों से सस्ते मूल्य पर सुलभ हो जाती हैं।

(iv) **विदेशी बाजारों की सुलभता–** देश में बने अनेक उत्पाद जो अपने देश में नहीं बिक पाते, विदेशी व्यापार उन्हें अन्य देशों में बाजार सुलभ करा देता है। उत्पादों की बिक्री अधिक उत्पादन को, और अधिक उत्पादन अधिक लाभ कमाने को प्रोत्साहन देता है।

(v) **विदेशी मुद्रा की प्राप्ति–** देश अपनी वस्तुओं और सेवाओं का निर्यात करके पर्याप्त मात्रा में विदेशी मुद्रा कमाने में सफल हो जाते हैं। विदेशी मुद्रा का भंडार, राष्ट्र की अर्थव्यवस्था का पोषण करता है।

(vi) **प्राकृतिक संसाधनों का समुचित उपयोग–** विदेशी व्यापार के लिए निर्यात पदार्थ जुटाने के लिए राष्ट्र में निहित प्राकृतिक संसाधनों का समुचित उपयोग करना पड़ता है। प्राकृतिक संसाधन उद्योगों को कच्चा माल सुलभ कराकर उनके पोषण में सहयोग करते हैं।

(vii) **प्राकृतिक आपदाओं के समय सुरक्षा–** राष्ट्र में बाढ़, अकाल, सूखा, भूकंप आदि प्राकृतिक आपदा आने पर, राष्ट्र बाहर से आवश्यक सामान, उपकरण तथा औषधियाँ मँगाकर संकट से उबरने में सक्षम हो जाता है।

(viii) **रोजगार के अवसरों में वृद्धि–** विदेशी व्यापार के कारण कृषि, उद्योग, परिवहन, संचार, बैंकिंग, बीमा तथा औद्योगिक क्षेत्र का विस्तार होने से रोजगार के नए अवसर सृजित होते हैं, जिससे राष्ट्र में रोजगार के अवसर बढ़ जाते हैं।

(ix) **प्रतिव्यक्ति आय तथा राष्ट्रीय आय में वृद्धि–** विदेशी व्यापार का बढ़ता आकार विनिर्माण क्षेत्र तथा तृतीय क्षेत्र में रोजगार के अवसर पैदा करता है, जिससे प्रतिव्यक्ति आय तथा राष्ट्रीय आय में भारी वृद्धि हो जाती है। इससे अर्थव्यवस्था सुदृढ़ और समृद्ध बन जाती है।

(x) **राष्ट्र का सर्वांगीण विकास–** विदेशी व्यापार हेतु निर्यात की मदों और मात्राओं में वृद्धि करने के लिए कृषि उत्पादों, कुटीर उद्योगों, लघु उद्योगों तथा बड़े पैमाने के उद्योगों के उत्पादों में वृद्धि का चक्र चलने के कारण राष्ट्र का सर्वांगीण विकास हो जाता है।

(xi) **अंतर्राष्ट्रीय सहयोग एवं शांति–** विदेशी व्यापार के कारण विभिन्न देशों के बीच परस्पर मैत्री भाव उत्पन्न होता है, जिससे उनमें सांस्कृतिक संबंधों को बढ़ावा मिलने से विश्व-शांति की स्थापना होती है।

राष्ट्र के आर्थिक विकास में विदेशी व्यापार के महत्व को जी. हेबरलर ने इन शब्दों में व्यक्त किया है, "उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार ने कम विकसित राष्ट्रों के विकास में अत्यधिक योगदान दिया है।" भारत के आर्थिक विकास का स्वर्णिम युग अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर ही निर्भर करेगा।

4. **भुगतान संतुलन तथा व्यापार संतुलन पर विस्तृत टिप्पणी लिखिए।**

उ०– **भुगतान संतुलन तथा व्यापार संतुलन–**

भुगतान संतुलन– 'भुगतान संतुलन' से अभिप्राय किसी देश के द्वारा विश्व के अन्य देशों से किए गए व्यापार अथवा आर्थिक लेन-देन के लेखों से है। आर्थिक लेन-देन के परिणामस्वरूप एक देश को अन्य देशों को कुछ भुगतान करने पड़ते हैं तथा उसे अन्य देशों से कुछ प्राप्तियाँ भी होती हैं। इन भुगतानों तथा प्राप्तियों के अंतर को ही 'भुगतान संतुलन' कहते हैं।

विदेशी व्यापार की मदें– प्राय: सभी देश एक-दूसरे के साथ तीन प्रकार की मदों का व्यापार करते हैं–

(i) **दृश्य मदें–** आयात-निर्यात की जाने वाली सभी भौतिक वस्तुएँ इनके अंतर्गत आती हैं।

(ii) **अदृश्य मदें–** बीमा, बैंकिंग, परिवहन, शिक्षा आदि की सेवाओं का आयात-निर्यात इन मदों के अंतर्गत आता है।

(iii) पूँजी अंतरण– पूँजी के लेन-देन से संबंधित मदें, इन मदों के अंतर्गत रखी जाती हैं।

व्यापार संतुलन अथवा शेष– भौतिक वस्तुओं के आयात-निर्यात के मूल्यों के 'कुल अंतर शेष' को व्यापार संतुलन कहते हैं। व्यापार संतुलन वास्तव में भुगतान संतुलन का ही एक भाग है। आयात-निर्यात की केवल दृष्य मदें अर्थात भौतिक वस्तुएँ ही व्यापार संतुलन में सम्मिलित होती हैं।

व्यापार संतुलन के प्रकार– व्यापार संतुलन या व्यापार शेष तीन प्रकार का होता है–

(i) प्रतिकूल अथवा घाटे का व्यापार संतुलन– जब किसी देश के कुल आयातों का मूल्य उसके कुल निर्यातों के मूल्य से अधिक होता है, तब यह उस देश का प्रतिकूल अथवा घाटे का व्यापार संतुलन होगा। इसे ही उस देश के विपक्ष में होना कहा जाता है।

(ii) अनूकूल व्यापार संतुलन– जब किसी देश के निर्यातों का मूल्य उसके आयातों के मूल्य से अधिक होता है, तब उसका व्यापार संतुलन अनुकूल अर्थात बचत का माना जाता है।

(iii) संतुलित व्यापार संतुलन– जब किसी देश के आयातों का मूल्य उसके निर्यातों के मूल्य के बराबर हो जाता है, तब उस देश का व्यापार संतुलन संतुलित माना जाता है।

❖ **प्रोजेक्ट कार्य**

अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

परिशिष्ट

अनुभाग-4 (आर्थिक विकास) की इकाई-1 (क) 'अर्थव्यवस्था की समस्याएँ' के अंतर्गत क्रम (iii) 'आर्थिक विकास, राजस्व की आवश्यकता' की पाठ्यवस्तु में निम्नलिखित को सम्मिलित किया गया है–

आयकर के स्तर, आयकर दाखिल करने के फार्मों के प्रकार, पर आधारित अभ्यास प्रश्नों का हल!

अभ्यास

❖ **बहुविकल्पीय प्रश्न**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य परिशिष्ट पुस्तिका के पृष्ठ संख्या- 18 का अवलोकन कीजिए।

❖ **अतिलघुउत्तरीय प्रश्न**

अतिलघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर के लिए पाठ्य परिशिष्ट पुस्तिका के पृष्ठ संख्या-18 का अवलोकन कीजिए।

❖ **लघुउत्तरीय प्रश्न**

1. ITR-1 फार्म के बारे में बताइए।

उ०– **ITR-1:** यह आयकर विभाग में आयकर दाखिल करने के लिए दाखिल किया जाने वाला फार्म है। यह किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा दाखिल किया जाता है, जिसको वेतन/पेंशन के अतिरिक्त किसी अन्य साधन से किसी भी प्रकार की कोई आय प्राप्त नहीं होती है।

2. ITR-2 फार्म के बारे में बताइए।

उ०– **ITR-2:** यह आयकर दाखिल करने के फार्मों में से एक है। यदि फार्म किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा दाख्सिल किया जाता है, जिसको कोई व्यापारिक आय प्राप्त नहीं है, बल्कि अन्य विभिन्न मदों से आय प्राप्त होती है।

3. जनरल कैटेगरी के तहत आने वालों के लिए आयकर के सभी स्लैब बताइए।

उ०– **जनरल कैटेगरी के तहत आने वालों के लिए–** आयकर स्लैब 60 वर्ष तक आयु वाले किसी भी व्यक्ति की आय यदि सालाना 2.5 लाख रुपए तक है, तब वह टैक्स छूट के दायरे से बाहर माना जाएगा। यानी, केवल 2.5 लाख रुपए तक की आय ही करमुक्त है। इसके बाद 5 लाख रुपए तक की सालाना आय वाले व्यक्ति को 5 फीसदी टैक्स चुकाना होगा। साथ ही, 5 लाख

रुपए तक की कर योग्य आय पर पहले 5 हजार रुपए का रिबेट मिलता था, जोकि अब घटाकर 2500 रुपए कर दिया गया है और यह 3.5 लाख रुपए तक की करयोग्य आय पर मिलेगा। इसका मतलब यह हुआ कि यदि किसी शख्स की सालाना आय 3 लाख रुपए है तो उसकी टैक्स लायबिलिटी जीरो होगी। इसे ऐसे समझे— 50 हजार रुपए पर 5% टैक्स का मतलब हुआ 2500 रुपए, जिस पर मिली 2500 रुपए की छूट, तो ऐसी स्थिति में कोई कर नहीं देना होगा।

5 लाख से 10 लाख रुपए की इनकम पर 20% का इनकम टैक्स होगा और 10 लाख रुपए से अधिक की आय पर 30% का इनकम टैक्स लागू होगा। लेकिन यदि आपकी आय 50 लाख रुपए से ज्यादा है (सालाना) लेकिन 1 करोड़ रुपए से कम है, तब आपको 30% टैक्स तो देना ही होगा, साथ ही 10 फीसदी का सरचार्ज भी देना होगा। इसके अलावा यदि करयोग्य आय 1 करोड़ रुपए है, तब सरचार्ज बढ़कर 15 फीसदी हो जाएगा। यह बढ़ा हुआ 5% सरचार्ज एजुकेशन सेस और हायर एजुकेशन सेस है।

4. मूल्य वर्धित कर और बिक्री कर में अंतर बताइए।

उ०— **मूल्य वर्धित कर व बिक्री कर में अंतर—** बिक्री कर आमतौर पर उपभोक्ताओं पर उत्पाद की अंतिम बिक्री के समय लगाया जाता है। अत: बिक्री कर को Single Point Tax भी कहा जाता है। केवल अंतिम उपभोक्ता ही इस कर को वहन करता है, जबकि मूल्य वर्धित कर (VAT) किसी उत्पाद के तैयार होने के प्रत्येक चरण पर उसके अलग-अलग विक्रेताओं को अनुपातिक रूप से वहन करना होता है। किसी भी उत्पाद के प्रत्येक उत्पादन चरण पर वैट लगाने के कारण मूल्य वर्धित कर (VAT) को Multi Point Tax कहा जाता है।

VAT उत्पादन के हर चरण में योजित मूल्य पर कर लगाकर बिक्री कर के सोपान असर से बचाता है। मूल्य वर्धित कर (VAT) किसी उत्पाद की आपूर्ति श्रृंखला से जुड़े प्रत्येक व्यवसाय पर लगता है। पारंपरिक बिक्री कर की बजाय मूल्य वर्धित कराधान को दुनिया भर में पसंद किया जा रहा है। सिद्धांत रूप में, मूल्य वर्धित कर उन सभी वाणिज्यिक गतिविधियों पर लागू होते हैं, जिसमें माल का उत्पादन और वितरण तथा सेवाओं का प्रावधान शामिल होता है। एक व्यवसाय के प्रत्येक लेन-देन में माल में जुड़े मूल्य पर VAT का मूल्यांकन और एकत्रण किया जाता है। इस अवधारणा के तहत सरकार को प्रत्येक लेन-देन के सकल मार्जिन पर कर दिया जाता है।

5. व्यापार और उद्योग के लिए GST के लाभ बताइए।

उ०— **व्यापार और उद्योग के लिए GST के लाभ—**

(i) **आसान अनुपालन—** जीएसटी का पंजीकरण, रिटर्न, भुगतान आदि जैसी सभी कर भुगतान सेवाएँ करदाताओं को ऑनलाइन उपलब्ध होंगी, जिससे इसका अनुपालन बहुत सरल और पारदर्शी हो जाएगा।

(ii) **कर दरों और संरचनाओं की एकरूपता—** जीएसटी यह सुनिश्चित करेगा कि अप्रत्यक्ष कर दरें और ढाँचे पूरे देश मे एकसमान हैं। जीएसटी देश में व्यापार के कामकाज को कर तटस्थ बना देगा, फिर चाहे व्यापार करने की जगह का चुनाव कहीं भी करें, सभी जगह कर समान रूप से देय होगा।

(iii) **करों पर कराधान (कैसकेडिंग) की समाप्ति—** मूल्य श्रृंखला और समस्त राज्यों की सीमाओं से बाहर टैक्स क्रेडिट की सुचारु प्रणाली से यह सुनिश्चित होगा कि करों पर कम से कम कराधान हों। इससे व्यापार करने में आने वाली छुपी हुई लागत कम होगी।

(iv) **विनिर्माताओं और निर्यातकों को लाभ—** जीएसटी में केंद्र और राज्यों के करों के शामिल होने और इनपुट वस्तुएँ और सेवाएँ पूर्ण और व्यापक रूप से समाहित होने और केंद्रीय बिक्री कर चरणबद्ध रूप से बाहर हो जाने से स्थानीय रूप से निर्मित वस्तुओं और सेवाओं की लागत कम हो जाएगी। इससे भारतीय वस्तुओं और सेवाओं की अंतर्राष्ट्रीय बाजार में होने वाली प्रतिस्पर्धा में बढ़ोतरी होगी और भारतीय निर्यात को भी बढ़ावा मिलेगा।

❖ **विस्तृत उत्तरीय प्रश्न**

1. सेवा कर क्या है? इसके पंजीकरण एवं जमा करने के नियम लिखिए।

उ०— **सेवा कर (Service Tax)—** सेवा कर केंद्र सरकार का एक अप्रत्यक्ष कर है, जिसको किसी सेवा प्रदाता द्वारा सेवा प्राप्त करने वाले व्यक्ति से लेकर केंद्र सरकार के खाते में जमा किया जाता है। यह कर सेवा कर नियमावली— 1994 के अनुसार वसूल किया जाता है। वर्तमान में यह 15% की दर से लिया जाता है।

भारत में 1994 के दौरान सेवा कर की प्रणाली आरंभ की गई थी, जिसे वित्त अधिनियम, 1994 के अध्याय V में जोड़ा गया था। यह आरंभ में तीन सेवाओं के आरंभिक समूह पर लगाया गया था तथा तब से वित्त अधिनियमों द्वारा निरंतर सेवा कर का

विस्तार किया जाता रहा है। वित्त अधिनियम को जम्मू और कश्मीर राज्य के अलावा पूरे भारत में सेवा कर की वसूली के लिए विस्तारित किया गया है।

पंजीकरण एवं जमा करने के नियम–

- सेवा कर चुकाने वाले व्यक्ति विशेषकर योग्य सेवा पर कर लगाए जाने की तारीख के तीस दिनों के अंदर अथवा उसकी गतिविधि शुरू होने के तीस दिनों के अंदर पंजीकरण के लिए आवेदन प्रस्तुत करें।
- कर योग्य सेवा के प्रत्येक सेवा प्रदाता को फार्म एसटी— 1 दोहरी प्रतियों में अधिकारिक केंद्रीय उत्पाद शुल्क कार्यालय को प्रस्तुत करके पंजीकरण प्राप्त करना पड़ता है।
- पंजीकृत सेवा प्रदाता को निर्धारिती कहा जाएगा।
- निर्धारिती द्वारा एक से अधिक कर योग्य सेवाएँ प्रदान किए जाने पर भी सेवा कर के लिए एकल पंजीकरण ही काफी होता है। हालाँकि, वह पंजीकरण के लिए किए गए आवेदन में उन सभी सेवाओं का उल्लेख करेगा, जो उसके द्वारा प्रदान की जा रही हैं और क्षेत्रीय कार्यालय पंजीकरण प्रमाण-पत्र में उपयुक्त प्रविष्टियाँ/अनुमोदन अंकित करेगा।
- किसी अन्य व्यक्ति के नाम पर व्यवसाय का अंतरण किए जाने के मामले में नए सिरे से पंजीकरण प्राप्त करना आवश्यक है।
- कोई भी पंजीकृत निर्धारिती जब कर योग्य सेवा प्रदान करना बंद कर देता है तो उसे पंजीकरण प्रमाणपत्र को तत्काल अभ्यार्पित करना होगा।

  यदि कोई निर्धारिती उसी स्थान से कोई नई सेवा प्रदान करना प्रारंभ करता है तो उसे नए सिरे से पंजीकरण के लिए आवेदन करने की जरूरत नहीं होती। वह अपनी वर्तमान सूचना में ही आवश्यक संशोधन कर, उन्हें एसटी— 1 फार्म में भर भेज सकता है। नया फार्म उनके पंजीकरण में नई सेवा श्रेणी के लिए आवश्यक मंजूरी हेतु आधिकारिक अधीक्षक को प्रस्तुत किया जाएगा।

व्यक्तियों अथवा संबंधित स्वामी और साझेदार फर्म के मामले में सेवा कर तिमाही आधार पर अदा किया जाता है। सेवा कर के भुगतान की निश्चित तारीख संबंधित तिमाही के बिलकुल बाद के महीने की पाँच तारीख होती है। (तिमाहियाँ हैं— अप्रैल से जून, जुलाई से सितंबर, अक्टूबर से दिसंबर और जनवरी से मार्च) मार्च के लिए भुगतान 31 मार्च को ही किया जाता है। सेवा प्रदाता की ऊपर निर्दिष्ट श्रेणी के अलावा, कोई अन्य श्रेणी होने पर सेवा कर का भुगतान मासिक आधार पर अर्थात् अगले महीने की पाँच तारीख को किया जाता है। लेकिन मार्च माह के संबंध में भुगतान 31 मार्च को ही किया जाएगा। सेवा कर का भुगतान निर्धारिती द्वारा संबंधित अवधि (अर्थात् महीना अथवा तिमाही, निर्धारिती की श्रेणी के अनुसार) के दौरान प्राप्त की गई राशि पर किया जाएगा।

2. जीएसटी क्या है? इसमें कौन-कौन से कर सम्मिलित हैं? इसके लाभ लिखिए।

उ०– **जीएसटी (Goods and Service Tax)–** वस्तु एवं सेवा कर प्रणाली को भारत सरकार द्वारा जुलाई— 2017 से लागू किया जाना प्रस्तावित है। 'एक देश एक कर प्रणाली' GST को लागू किए जाने का आधार है। वर्तमान में भारत के अलग-अलग राज्यों में भिन्न-भिन्न कर भिन्न-भिन्न दरों से वसूल किए जाते हैं। जैसे एक ही वस्तु पर अलग-अलग राज्यों में VAT भिन्न-भिन्न दर से वसूल किया जाता है परंतु जीएसटी में यह व्यवस्था होगी कि एक वस्तु पर पूरे भारत में एक दर से कर वसूल किया जाएगा। जीएसटी के अंतर्गत केंद्रीय स्तर पर केंद्रीय उत्पाद शुल्क, अतिरिक्त उत्पाद शुल्क, सेवा कर, अतिरिक्त सीमा शुल्क और सीमा शुल्क का विशेष अतिरिक्त शुल्क आदि करों को शामिल किया गया हैं।

इसके अंतर्गत राज्य स्तर पर, राज्य मूल्य संवर्धन कर/बिक्री कर, मनोरंजन कर (स्थानीय निकायों द्वारा लागू करों को छोड़कर), केंद्रीय बिक्री कर (केंद्र द्वारा लागू और राज्य द्वारा वसूल किए जाने वाला), चुंगी और प्रवेश कर, खरीद कर, विलासिता कर तथा लाटरी सट्टा, जुए पर लगने वाले करों को सम्मिलित किया गया है।

इस प्रकार जीएसटी के अंतर्गत, उत्पादक, उपभोक्ता सेवा प्राप्तकर्ता, सेवा प्रदाता, क्रेता, विक्रेता आदि सभी को सम्मिलित किया गया है।

जीएसटी के लाभ– जीएसटी के लाभों को निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकृत करके बताया जा सकता है—

व्यापार और उद्योग के लिए–

(i) **आसान अनुपालन–** जीएसटी का पंजीकरण, रिटर्न, भुगतान आदि जैसी सभी कर भुगतान सेवाएँ करदाताओं को ऑनलाइन उपलब्ध होंगी, जिससे इसका अनुपालन बहुत सरल और पारदर्शी हो जाएगा।

(ii) **कर दरों और संरचनाओं की एकरूपता–** जीएसटी यह सुनिश्चित करेगा कि अप्रत्यक्ष कर दरें और ढाँचे पूरे देश मे

एकसमान हैं। जीएसटी देश में व्यापार के कामकाज को कर तटस्थ बना देगा, फिर चाहे व्यापार करने की जगह का चुनाव कहीं भी करें, सभी जगह कर समान रूप से देय होगा।

(iii) करों पर कराधान (कैसकेडिंग) की समाप्ति– मूल्य शृंखला और समस्त राज्यों की सीमाओं से बाहर टैक्स क्रेडिट की सुचारु प्रणाली से यह सुनिश्चित होगा कि करों पर कम से कम कराधान हों। इससे व्यापार करने में आने वाली छुपी हुई लागत कम होगी।

(iv) विनिर्माताओं और निर्यातकों को लाभ– जीएसटी में केंद्र और राज्यों के करों के शामिल होने और इनपुट वस्तुएँ और सेवाएँ पूर्ण और व्यापक रूप से समाहित होने और केंद्रीय बिक्री कर चरणबद्ध रूप से बाहर हो जाने से स्थानीय रूप से निर्मित वस्तुओं और सेवाओं की लागत कम हो जाएगी। इससे भारतीय वस्तुओं और सेवाओं की अंतर्राष्ट्रीय बाजार में होने वाली प्रतिस्पर्धा में बढ़ोतरी होगी और भारतीय निर्यात को भी बढ़ावा मिलेगा।

उपभोक्ताओं के लिए–

(i) वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य के अनुपाती एकल एवं पारदर्शी कर– केंद्र और राज्यों द्वारा लगाए गए बहुल अप्रत्यक्ष करों या मूल्य संवर्धन के प्रगामी चरणों में उपलब्ध गैर-इनपुट कर क्रेडिट के कारण आज देश में अनेक छिपे करों से अधिकांश वस्तुओं और सेवाओं की लागत पर प्रभाव पड़ता है। जीएसटी के अधीन विनिर्माता से लेकर उपभोक्ताओं तक केवल एक ही कर लगेगा, जिससे अंतिम उपभोक्ता पर लगने वाले करों में पारदर्शिता को बढ़ावा मिलेगा।

(ii) समग्र कर भार में राहत– निपुणता बढ़ने और कदाचार पर रोक लगने के कारण अधिकांश उपभोक्ता वस्तुओं पर समग्र कर भार कम होगा, जिससे उपभोक्ताओं को लाभ मिलेगा।

केंद्र और राज्य सरकारों के लिए–

(i) सरल और आसान प्रशासन– केंद्र और राज्य स्तर पर बहुआयामी अप्रत्यक्ष करों को जीएसटी लागू करके हटाया जा रहा है। मजबूत सूचना प्रौद्योगिकी प्रणाली पर आधारित जीएसटी केंद्र और राज्यों द्वारा अभी तक लगाए गए सभी अन्य प्रत्यक्ष करों की तुलना में प्रशासनिक नजरिए से बहुत सरल और आसान होगा।

(ii) अधिक राजस्व निपुणता– जीएसटी से सरकार के कर राजस्व की वसूली लागत में कमी आने की उम्मीद है। इसलिए इससे उच्च राजस्व निपुणता को बढ़ावा मिलेगा।

3. आयकर दाखिल करने के लिए कितने प्रकार के फार्म भरे जाते हैं? उन सभी के बारे में विस्तार से बताइए।

उ०– **आयकर दाखिल करने के फार्मों के प्रकार–** आयकर विभाग में आयकर दाखिल करने के लिए जो प्रपत्र (फार्म) दाखिल किए जाते हैं, उनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार से है—

ITR-1: यह आयकर फार्म किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा दाखिल किया जाता है, जिसको वेतन/पेंशन के अतिरिक्त किसी अन्य साधन से किसी भी प्रकार की कोई आय प्राप्त नहीं होती है।

ITR-2: यह आयकर फार्म किसी ऐसे व्यक्ति के द्वारा दाखिल किया जाता है, जिसको कोई व्यापारिक आय प्राप्त नहीं हैं, बल्कि अन्य विभिन्न मदों से आय प्राप्त होती है।

ITR-3: यह आयकर फार्म किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा व्यक्तिगत रूप से दाखिल किया जाता है, जो किसी फर्म (Firm) में साझीदार है।

ITR-4: यह आयकर फार्म किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा व्यक्तिगत रूप से दाखिल किया जाता है, जिसे किसी व्यापारिक कार्य से आय प्राप्त होती है।

ITR-5: यह आयकर फार्म कुछ व्यक्तियों द्वारा बनाई गई किसी संस्था, व्यक्तिगत संस्था, स्थानीय निकाय जैसे— नगरपालिका, किसी विभाग आदि की आय के विवरण हेतु दाखिल किया जाता है।

ITR-6: यह आयकर फार्म किसी कंपनी के द्वारा दाखिल किया जाता है।

ITR-7: यह आयकर फार्म किसी ट्रस्ट के द्वारा दाखिल किया जाता है।

ITR-8: यह आयकर फार्म केवल फ्रिंज बैनिफिट टैक्स के लिए दाखिल किया जाता है।

4. वेट के बारे में एक विस्तृत टिप्पणी लिखिए।

उ०– **वैल्यू एडेड टैक्स या मूल्य वर्धित कर (VAT)–** मूल्य वर्धित कर (VAT) को भारत में वर्ष 2005 में प्रारंभ किया गया। सामान्य कर नियमों को इसमें सम्मिलित किया गया है। प्रारंभ में गुजरात, तमिलनाडु, राजस्थान, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश राज्यों ने मूल्य वर्धित कर प्रणाली को नहीं अपनाया था, परंतु बाद में इन राज्यों की सरकारों ने भी इसको लागू कर दिया था। 2 जून, 2014 से अंडमान निकोबार तथा लक्षद्वीप समूह को छोड़कर भारत के सभी राज्यों में

मूल्य वर्धित कर लागू है, परंतु यदि जुलाई 2017 में GST लागू हो जाता है तो VAT भी GST में ही सम्मिलित हो जाएगा।
मूल्य वर्धित कर (वैट) किसी उत्पाद या सेवा के वर्धित मूल्य पर लगाया गया अप्रत्यक्ष कर है। वैट अपेक्षाकृत नया कर है, जिसे 1960 के दशक में यूरोप में लगाया गया था। मूल्य वर्धित कर राज्य सरकार द्वारा लगाया जाने वाला कर है।
वैट (VAT) की प्रणाली कुछ ऐसी है कि जो उत्पाद किसी राज्य में आयात या उपयोग किए जाते हैं, वहाँ का पहला विक्रेता सबसे पहले कर देता है और बाद के विक्रेता उसमें जुड़ने वाली कीमत पर ही कर देते हैं।
जितनी बार उत्पाद को विक्रय किया जाएगा, उतनी बार उसके बढ़े हुए मूल्य पर टैक्स लगेगा, इसीलिए इसे (Value Added Tax) कहा जाता है।
उत्पादों और सेवाओं के निजी अंतिम उपभोक्ता, खरीद पर VAT को वसूल नहीं करते, लेकिन उद्योग उन माल और सेवाओं पर जिन्हें वे आगे की आपूर्ति या सेवा प्रदान करने के लिए खरीदते हैं, जिसे सीधे या परोक्ष रूप से अंतिम उपयोगकर्ता को बेचा जाएगा, VAT को वसूल सकते हैं। इस तरह, आपूर्ति की आर्थिक शृंखला में प्रत्येक स्तर पर लगाया गया कुल कर, मूल्य का एक निरंतर अंश है, जो एक व्यवसाय द्वारा अपने उत्पादों में जोड़ा जाता है और कर संग्रह की लागत का अधिकांश, राज्य के बजाय कारोबार द्वारा वहन किया जाता है। VAT का आविष्कार इसलिए किया गया, क्योंकि बहुत अधिक बिक्री करों और शुल्कों ने धोखाधड़ी और तस्करी को प्रोत्साहित किया। आलोचकों का कहना है कि इससे मध्यमवर्गीय और कम आय वाले घरों पर असंगत रूप से कर का बोझ बढ़ जाता हैं।
VAT लागू करने के लिए मानक तरीका यह सिद्धांत है कि एक व्यापार उत्पाद की कीमत से पूर्व में चुकाए गए सभी कर को घटाते हुए कुछ प्रतिशत का अधिकार रखता है। यदि VAT दर 10% है, तो एक संतरे का रस निर्माता प्रति गैलन कीमत ₹ 5,000 के 10% (₹ 500) को संतरे के किसान द्वारा पूर्व में भुगतान किए गए कर से घटाकर देगा (शायद ₹ 200)। इस उदाहरण में, संतरे का रस निर्माता ₹ 300 कर देयता होगा। प्रत्येक व्यवसाय के आपूर्तिकर्ताओं के लिए अपने करों का भुगतान करने के लिए एक मजबूत प्रोत्साहन होता है, जिससे एक खुदरा बिक्री कर की तुलना में VAT दर, कम कर चोरी के साथ ऊँची हो जाती है। इस सरल सिद्धांत के पीछे इसके कार्यान्वयन में भिन्नताएँ हैं, जैसा कि आगे चर्चा की गई है।